सुत्तपिटके

संयुत्तनिकायपालि

[हिन्दी-अनुवादसहिता]

सम्पादक

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

बौद्धभारतीग्रन्थमाला–४३
Bauddha Bharati Series-43

सुत्तपिटके

संयुत्तनिकायपालि

[हिन्दी अनुवादसहिता]

(५. महावग्गो)

4

प्रधानसम्पादक
स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

Bauddha Bharati Series-43

The

SAṀYUTTANIKĀYAPĀLI

(4. Mahā Vagga)

with

HINDI TRANSLATION

Vol. - 4

Edited & Translated By

Swāmī Dwārikādās Śāstrī

बौद्धभारती

Varanasi

B. 2543] **2000** [V. 2056

बौद्धभारतीग्रन्थमाला–४३

सुत्तपिटके

संयुत्तनिकायपालि

[हिन्दी अनुवादसहिता]

(४. महावग्गो)

चतुर्थ भाग

सम्पादक एवं अनुवादक

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

बौद्धभारती

वाराणसी

बु० २५४३] सन् २००० ई० [वि० २०५६

प्रकाशक :
बौद्धभारती
पञ्चशील, एस १०/६ ए-२ए,
मकबूल आलम रोड,
(जिला जेल के सामने) वाराणसी-२२१ ००२
फोन : ०५४२-३२९८०४४
मो० : ०९३३६९१२५४७
* * * * * * * * * * * *
पोस्ट बाक्स नं. : १०४९,
वाराणसी-२२१ ००१. (भारत)

Publisher :
Bauddha Bhāratī
S 10/6 A-2A, 'Panchasila'
Maqbool Alam Road,
Opp. Distt. Jail, Varanasi-221 002
Ph. 0542-3298044
Mo. 09336912547
* * * * * * * * * * * *
Post Box No. : 1049,
Varanasi-221 001 (India)

e-mail : bauddhabhrti@satyam.net.in

© स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

© Swami Dwarikadas Shastri

सहसम्पादक :
धर्मकीर्तिशास्त्री
चन्द्रकीर्तिशास्त्री

प्रथम संस्करण : २००० ई.

First Edition : 2000 E.

Price Rs. 2250/- (In 4 Vol's set)

मुद्रक :
साधना प्रेस
वाराणसी-२२१ ००२

Printed By :
Sadhana Press
Varanasi- 221 002

''एसोहं, भन्ते, भगवन्तं सरणं गच्छामि, धम्मं च, भिक्खुसङ्घं च।
उपासकं मं, भन्ते, भगवा धारेतु, अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणङ्गतं'' ति॥

प्रकाशकीय वक्तव्य

''अनुजानामि, भिक्खवे, सकाय निरुत्तिया परियापुणितुं'' ति

—विनयपिटके, भगवा बुद्धो।

सन् १९५८-१९६१ ई० में पालित्रिपिटकप्रकाशनसमिति, नालन्दा द्वारा सम्पूर्ण त्रिपिटक प्रकाशन में कार्य करते समय से ही हमारा यह सङ्कल्प था कि समस्त त्रिपिटक (बुद्धवचन) का हिन्दी-रूपान्तर (अनुवाद) के साथ भी प्रकाशन होना चाहिये, जिससे वह अन्य भाषाओं के विद्वानों के लिये भी उपयोगी हो सके। परन्तु यह कार्य स्वयं में इतना विशाल, गुरुतर एवं बहुजनसाध्य था कि हमारे जैसा अल्पसाधन वाला एकाकी पुरुष इसके प्रकाशन का साहस नहीं कर पा रहा था।

एतदर्थ, हमने विगत पन्द्रह वर्षों में अत्यधिक प्रयास किया; भारत के केन्द्रीय शिक्षामन्त्रालय से, उ०प्र० शासन के शिक्षाविभाग से, भारत के अनेक साधनसम्पन्न प्रकाशकों से तथा धनपतियों एवं बुद्धिजीवियों से इस कार्य के लिये आर्थिक साधन संगृहीत कराने हेतु निवेदन किया; परन्तु किसी ने भी, इस कार्यहेतु, हमारा उत्साहवर्धन नहीं किया।

अन्त में, हमने विवश होकर, अपने अल्प साधनों के बल पर ही इस कार्य को आगे बढ़ाने का निश्चय किया। तदनुसार, सर्वप्रथम सुत्तपिटक का **मज्झिमनिकाय** (सम्पूर्ण) हिन्दी अनुवाद के साथ पाँच भागों में प्रकाशित किया, जो कि पाँच वर्ष में पूर्ण हुआ।

तदनन्तर, हमने सुत्तपिटक का **दीघनिकाय** (सम्पूर्ण) (हिन्दी अनुवाद के साथ) तीन भागों में प्रकाशित करने का सङ्कल्प किया।

इस बार हमने पुन: केन्द्रीय शिक्षामन्त्रालय, नई दिल्ली से (सन् १९९६ ई० में) इस ग्रन्थ के प्रकाशनहेतु आर्थिक अनुदान के लिये आवेदन किया। सौभाग्य से, इस बार हमारा यह आवेदन स्वीकृत हो गया और मुद्रण पर होने वाले समग्र व्यय में से ८० प्रतिशत अंश राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली से प्राप्त होने की स्वीकृति मिली। एतदर्थ हम उक्त मन्त्रालय के आभारी हैं।

इसी क्रम में हमने समस्त **संयुत्तनिकायपालि** का हिन्दी अनुवाद के साथ चार भागों में प्रकाशन करने का सङ्कल्प किया। दो वर्ष के कठिन परिश्रम एवं प्रयास के बाद, यह ग्रन्थ (चार भागों में सम्पूर्ण) आप के सम्मुख प्रस्तुत किया जा रहा है। यह ग्रन्थ २२५० पृष्ठों में पूर्ण हो पाया, अत: ग्रन्थ का कलेवर कुछ विशाल हो गया है। परन्तु हमें इस बात की प्रसन्नता है कि यह ग्रन्थ पालि एवं हिन्दी-दोनों भाषाओं में एक साथ सुलभ हो रहा है। इस

तरह, इस ग्रन्थमाला में त्रिपिटक के **सुत्तनिकाय** का बहुत अंश प्रकाशित हो चुका है। अब **अङ्गुत्तरनिकाय** का अनुवाद कार्य हो रहा है। उसे भी यथासम्भव शीघ्र ही मुद्रित-प्रकाशित कराने का हमारा प्रयास है। अस्तु।

यह इस ग्रन्थ का **५. महावग्ग** नामक चतुर्थ भाग है। इसमें ५६. **सच्चसंयुत्त** तक अन्तिम १२ संयुत्त संगृहीत हैं। 'मज्झिमनिकाय' एवं 'दीघनिकाय' की तरह इसमें भी हमने पालि-पाठ के लिये बर्मा में हुए छट्ठ सङ्गायन पर आधृत, और श्रीलंका, स्याम (थाईलैण्ड) तथा पालिटैक्स्ट सोसाइटी लन्दन के संस्करणों का सहयोग लेकर १९५९ में 'पालि त्रिपिटक प्रकाशन बोर्ड' नालन्दा से प्रकाशित एवं आदरणीय भिक्षु जगदीश काश्यप द्वारा सम्पादित देवनागरी-संस्करण को आदर्श रूप में रखा है। इसमें हमने बहुत कम परिवर्तन किया है। कहीं कहीं मुद्रणाशुद्धियों के संशोधन के अतिरिक्त अधिक कुछ नहीं किया है।

साथ ही हमने उक्त सभी बर्मा, नालन्दा एवं रोमन संस्करणों की पृष्ठ-संख्या भी रोमन अक्षरों में क्रमशः यथास्थान दे दी है। अनुसन्धाता इससे भी लाभान्वित होंगे।

इसमें हमने आचार्य बुद्धघोष की अट्ठकथा को प्रमाण मान कर अपना स्वतन्त्र **हिन्दी अनुवाद** सम्पन्न करते हुए, उसे पालि-पाठ के साथ नीचे दिया है। इससे पाठकों को पालि एवं उसकी हिन्दी—दोनों ही भाषाएँ अत्यन्त सरलता से हृदयङ्गम हो सकेंगी—ऐसा हमारा विश्वास है।

यहाँ हमें एक निवेदन अवश्य करना है कि विषय-वैशद्य (बात को समझाने) के लिये त्रिपिटक में विषय का अनुकूल-प्रतिकूल, या आरोह-अवरोह दोनों क्रमों से विस्तृत (अक्षरशः) वर्णन किया जाता है। इस शैली में भाषाच्छटा तो अवश्य आ जाती है, परन्तु इस शब्द-समूह में फँस कर पाठक से मूल विषय दूर दूर सा होने लगता है। इसके लिये पालि-संग्रहकारों ने ऐसे विशेष स्थानों (जहाँ पाठ पुनः पुनः आवृत्त हो) के लिये '...पे०...' की परम्परा रखी है। इस परम्परा का इससे पहले के संस्करणों में निर्भयता से उपयोग हुआ है। इसे हमने भी अपने हिन्दी-अनुवाद में स्वीकार किया है। परन्तु '...पे०...' का अनुवाद हमने '...पूर्ववत्...' करके दिया है, या प्रायः '...' इस चिह्न का प्रयोग किया है, ताकि पाठक प्रसङ्ग के प्रधान विषय से दूर न हो जाय।

यों हमने एक अभिनव पद्धति में बुद्ध-वचन (त्रिपिटक) का प्रकाशन प्रारम्भ किया है। यदि विद्वानों को यह पद्धति रुचिकर व अनुकूल प्रतीत हुई तो हम आगामी काल में त्रिपिटक के समग्र ग्रन्थों का प्रकाशन इसी पद्धति से करेंगे।

एक कार्य हमने इस प्रसङ्ग में और किया है। ग्रन्थ में वर्णित सूत्रों का संक्षेप हिन्दी, अंग्रेजी दोनों भाषाओं में ग्रन्थ के प्रारम्भ में दे दिया है, जिससे पाठकों को सूत्रों का वर्ण्य विषय एक ही दृष्टि में हृदयङ्गम हो जाय।

इस तरह, हम इस ग्रन्थमाला को पालि-हिन्दी-इंग्लिश तीनों ही भाषाओं के विद्वानों के लिये उपयोगी बना पाये हैं—ऐसा हमारा विश्वास है।

अन्ते च, इस पवित्र ग्रन्थ का यह अनुवाद हमने स्वकीय ज्ञानवृद्धिहेतु लिखा था, लिखने के बाद यह ध्यान में आया कि यह हमारे समानधर्मा अन्य जिज्ञासुओं का भी अर्थसाधक हो सकता है। इसी उद्देश्य से यह प्रकाशित किया जा रहा है।

इतने विस्तृत अनुवाद में, हो सकता है कहीं परम्परा का निर्वाह न हो पाया हो, एतदर्थ हमारा विज्ञ जनों से विनम्र निवेदन है कि हमारे प्रमाद को क्षमा करते हुए हमें सूचित करने का कष्ट करें; जिससे आगामी संस्करण में उस का परिहार किया जा सके।

वसन्तपञ्चमी, २०५६ वि.
वाराणसी

विद्वद्वशंवद
स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

पञ्चम महावग्ग का सार-संक्षेप :

संयुक्तनिकायपालि के

महावग्ग का संक्षिप्त विवरण

इस **संयुक्तनिकाय**पालि का पञ्चम वर्ग **महावग्ग** कहलाता है। यह १२ संयुक्तों में विभक्त है; जैसे—४५. मार्गसंयुक्त, ४६. बोज्झङ्गसंयुक्त, ४७. स्मृतिप्रस्थानसंयुक्त, ४८. इन्द्रियसंयुक्त, ४९. सम्यक्प्रधानसंयुक्त, ५०. बलसंयुक्त, ५१. ऋद्धिपादसंयुक्त, ५२. अनुरुद्धसंयुक्त, ५३. ध्यानसंयुक्त, ५४. आनापानसंयुक्त, ५५. स्रोतआपत्तिसंयुक्त एवं ५६. सत्यसंयुक्त।

यह महावर्ग १२२४ सूत्रों द्वारा व्याख्यात हुआ है।

ग्रन्थ की विषयवस्तु समझने के लिये, संयुक्त क्रम से इस ग्रन्थ का विशेष विवरण यह है—

४५. मार्गसंयुक्त : यह संयुक्त १. अविद्यावर्ग, २. विहारवर्ग, ३. मिथ्यात्ववर्ग, ४. प्रतिपत्तिवर्ग, ५. अन्यतीर्थिकपेय्यालवर्ग, ६. सूर्यपेय्यालवर्ग, ७. प्रथम एकधर्म-पेय्यालवर्ग, ८. द्वितीय एकधर्मपेय्यालवर्ग, ९. गङ्गापेय्यालवर्ग, १०. प्रथम प्राचीननिम्नवर्ग, ११. द्वितीय प्राचीननिम्नवर्ग, १२. अप्रमादवर्ग, १३. बलकरणवर्ग, १४. एषणावर्ग एवं १५. औघवर्ग—इस तरह १५ वर्गों में विभक्त कर व्याख्यात हुआ है।

इस में आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग (सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि) का नानाविध रूपों में विस्तृत व्याख्यान हुआ है।

इस संयुक्त में सब मिला कर १८१ सूत्र हैं॥

४६. बोध्यङ्गसंयुक्त : बोध्यङ्ग सात माने गये हैं; जैसे—१. स्मृतिसम्बोध्यङ्ग, २. धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग, ३. वीर्यसम्बोध्यङ्ग, ४. प्रीतिसम्बोध्यङ्ग, ५. प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग, ६. समाधिसम्बोध्यङ्ग एवं ७. उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। इन्हीं सातों सम्बोध्यङ्गों का इस संयुक्त में विशद वर्णन किया गया है।

यह वर्णन इन वर्गों में विभक्त किया गया है; जैसे—१. पर्वतवर्ग, २. ग्लानवर्ग, ३. उदायिवर्ग, ४. नीवरणवर्ग, ५. चक्रवर्तिवर्ग, ६. षट्कवर्ग, ७. आनापानवर्ग, ८. निरोधवर्ग, ९. गङ्गापेय्यालवर्ग, १०. अप्रमादवर्ग, ११. बलकरणीयवर्ग, १२. एषणावर्ग, १३. औघवर्ग, १४. पुनः गङ्गापेय्यालवर्ग, १५. अप्रमादवर्ग, १६. बलकरणीयवर्ग, १७. पुनः एषणावर्ग, १८. पुनः ओघवर्ग।

इस संयुक्त में १८९ सूत्र परिगणित हैं॥

४७. स्मृतिप्रस्थानसंयुक्त : इस संयुक्त में चारों स्मृतिप्रस्थानों का विशद वर्णन हुआ है; जैसे—१. काय में कायानुपश्यना, २. वेदनाओं में वेदनानुपश्यना, ३. चित्त में चित्तानुपश्यना, एवं ४. धर्म में धर्मानुपश्यना।

इस वर्णन को इन वर्गों से विभक्त किया गया है—१. आम्रपालिवर्ग, २. नालन्दावर्ग, ३. शीलस्थितिवर्ग, ४. अननुश्रुतवर्ग, ५. अमृतवर्ग, ६. गङ्गापेय्यालवर्ग, ७. अप्रमाद, ८. बलकरणीय, ९. एषणा एवं १०. औघवर्ग।

इस संयुक्त का ११० सूत्रों से व्याख्यान हुआ है॥

४८. इन्द्रियसंयुक्त : इस संयुक्त में पाँच इन्द्रियों का व्याख्यान हुआ है। इस शास्त्र में ये इन्द्रियाँ भी मानी गयी हैं—१. श्रद्धेन्द्रिय, २. वीर्येन्द्रिय, ३. स्मृतीन्द्रिय, ४. समाधीन्द्रिय, एवं ५. प्रज्ञेन्द्रिय।

इन इन्द्रियों के व्याख्यान को अधोलिखित वर्गों में विभक्त किया गया है—१. शुद्धिकवर्ग, २. मृदुतरवर्ग, ३. षडिन्द्रियवर्ग, ४. सुखेन्द्रियवर्ग, ५. जरावर्ग, ६. शूकरखतवर्ग, ७. बोधिपक्षीयवर्ग, ८. गङ्गापेय्यालवर्ग, ९. अप्रमादवर्ग, १०. बलकरणीयवर्ग, ११. एषणावर्ग, १२. औघवर्ग, १३. गङ्गापेय्यालवर्ग, १४. औघवर्ग, १५. अप्रमादवर्ग, १६. बलकरणीयवर्ग, १७. एषणावर्ग एवं १८. औघवर्ग।

इस संयुक्त का १८० सूत्रों से वर्णन हुआ है॥

४९. सम्यक्प्रधानसंयुक्त : यहाँ वर्णित सम्यक्प्रधान को ही इस शास्त्र में अन्यत्र 'सम्यग्व्यायाम' भी कहा गया है। दोनों ही शब्द समानार्थक हैं। यह सम्यक्प्रधान चतुर्विध होता है। जैसे—१. संवरप्रधान, २. प्रहाणप्रधान, ३. भावनाप्रधान एवं ४. अनुरक्षणाप्रधान। इन में—

१. संवरप्रधान उसे कहते हैं—जब कोई साधक अनुत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों के अनुत्पाद के लिये इच्छा, प्रयत्न तथा श्रम करता है, चित्त को वश में करता है, निगृहीत करता है—उसका यह प्रयत्न 'संवरप्रधान' कहलाता है।

२. प्रहाणप्रधान उसे कहते हैं, जहाँ कोई साधक उत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों के प्रहाणहेतु इच्छा, प्रयत्न तथा श्रम करता है...तथा उत्पन्न कामवितर्क आदि को स्वीकार नहीं करता, उन को त्याग देता है—ऐसा यह प्रयत्न 'प्रहाणप्रधान' कहलाता है।

३. भावनाप्रधान वह कहलाता है, जहाँ साधक अनुत्पन्न कुशल धर्मों के उत्पादहेतु इच्छा एवं प्रयास करता है, तदर्थ चित्त को निगृहीत करता है—उस का यह प्रयास 'भावनाप्रधान' कहलाता है।

४. अनुरक्षणप्रधान वह कहलाता है, जहाँ साधक उत्पन्न कुशल धर्मों का स्थिति, विपुलता एवं परिपूर्णता के लिये इच्छा एवं प्रयत्न करता है, उधर बढ़ता है, तदर्थ चित्त को निगृहीत करता है—उस का यह प्रयत्न 'अनुरक्षणप्रधान' कहलाता है।

इन संवरप्रधान आदि के विस्तृत एवं विविध व्याख्यान के लिये भी उसी वर्गपद्धति का आश्रय लिया गया है। जैसे—१. गङ्गापेय्यालवर्ग, २. अप्रमादवर्ग, ३. बलकरणीयवर्ग, ४. एषणावर्ग, ५. औघवर्ग।

इस संयुक्त के व्याख्यान में ५५ सूत्रों का उपयोग हुआ है॥

५०. बलसंयुक्त : इस संयुक्त में वर्णित पाँच बलों के नाम ये हैं—१. श्रद्धाबल, २. वीर्यबल, ३. स्मृतिबल, ४. समाधिबल एवं ५. प्रज्ञाबल। ये पाँचों ही बल भावित किये जाने पर साधक को निर्वाण तक पहुँचाने में सहायक होते हैं। इन बलों के विस्तृत व्याख्यानहेतु भी उन्हीं वर्गों की सहायता ली गयी है। जैसे—१. गङ्गापेय्याल, २. अप्रमाद, ३. बलकरणीय, ४. एषणा, ५. औघ, ६. अप्रमाद, ७. बलकरणीय, ८. एषणा एवं ९. औघ।

इस संयुक्त के व्याख्यान में ११० सूत्रों का संग्रह है॥

५१. ऋद्धिपादसंयुक्त : इस संयुक्त में एतच्छास्त्रानुमोदित चार ऋद्धिपादों का वर्णन है। चार ऋद्धिपाद ये हैं—१. छन्दसमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद, २. वीर्यसमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद, ३. चित्तसमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद, एवं ४. मीमांसासमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद।

विस्तृत वर्णन में—ऋद्धि, ऋद्धिपाद, ऋद्धिपादभावना; छन्द, छन्दसमाधि, प्रधानसंस्कार; वीर्य, वीर्यसमाधि, प्रधानसंस्कार; चित्त, चित्तसमाधि, प्रधानसंस्कार; मीमांसा, मीमांसासमाधि, प्रधानसंस्कार आदि सभी शब्दों का स्पष्ट व्याख्यान इसी संयुक्त के विशद वर्णन में समझाया गया है। जिज्ञासु को यह सब वहीं देख लेना चाहिये।

विषय को विस्तृत रूप से समझानेहेतु वर्गपद्धति का आश्रयण लेते हुए १. चापालवर्ग, २. प्रासादकम्पनवर्ग, ३. अयोगुलवर्ग, ४. गङ्गापेय्यालवर्ग, ५. अप्रमादवर्ग, ६. बलकरणीयवर्ग, ७. एषणावर्ग, ८. औघवर्ग—इन आठ वर्गों में इस संयुक्त का व्याख्यान हुआ है।

इस संयुक्त के व्याख्यान में ८९ सूत्रों का उपयोग हुआ है॥

५२. अनुरुद्धसंयुक्त : इस संयुक्त में भी पूर्वोक्त स्मृतिप्रस्थानभावना का ही वर्णन हुआ है। इस में रहोगतवर्ग एवं द्वितीयवर्ग के सहारे से आयुष्मान् अनुरुद्ध, जो कि बुद्धशिष्यों में सर्वश्रेष्ठ महाभिज्ञ (अभिज्ञाप्राप्त) थे, के श्रीमुख से चारों स्मृतिप्रस्थानों का, विविध प्रकार से, माहात्म्य-वर्णन हुआ है।

इस संयुक्त में २४ सूत्र व्याख्यात हैं॥

५३. ध्यानसंयुक्त : शास्त्र में चार ध्यान गिनाये गये हैं; जैसे—१. प्रथम ध्यान, २. द्वितीय ध्यान, ३. तृतीय ध्यान एवं ४. चतुर्थ ध्यान। इन्हीं चारों ध्यानों का वर्णन इस संयुक्त में हुआ है। इस में पाँच वर्ग हैं—१. गङ्गापेय्यालवर्ग, २. अप्रमादवर्ग, ३. बलकरणीयवर्ग, ४. एषणा एवं ५. औघवर्ग।

इस संयुक्त के वर्णन में ५५ सूत्रों का सहारा लिया गया है॥

५४. आनापानस्मृतिसूत्र : इस सूत्र में आनापानस्मृति (श्वासप्रश्वासप्रक्रिया) साधना का वर्णन हुआ है। इस साधना के ज्ञान के लिये इस सूत्र का प्रथम एकधर्मसूत्र का मनन कर ले तो जिज्ञासु को इस आनापानस्मृति के विषय में बहुत कुछ ज्ञात हो जायगा। इस आनापानस्मृति की भावना से साधक के सातों बोध्यङ्ग भावित हो जाते हैं, काया एवं चित्त में स्थिरता (चञ्चलता का अभाव) आ जाती है। इस साधना को ही विद्वान् 'आर्यविहार', 'ब्रह्मविहार' एवं 'तथागतविहार' भी कहते हैं। इसे ही 'शैक्ष्यविहार' भी कहते हैं। इस साधना से चारों स्मृतिप्रस्थानों, सातों बोध्यङ्गों एवं विद्या तथा विमुक्ति की साधना भी पूर्ण हो जाती है। इन्हीं सब बातों का भगवान् ने दो वर्गों एवं तदन्तःपाती २० सूत्रों के माध्यम से उपदेश करते हुए जिज्ञासु भिक्षु को आश्वस्त किया है॥

५५. स्रोतआपत्तिसंयुक्त : भगवान् कहते हैं—"जो साधक बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ में श्रद्धालु है तथा शील का यथाविधि पालन करता है, वह निश्चय ही स्रोतआपन्न हो जाता है, अर्थात् उस को अधिक से अधिक सात जन्म में निर्वाण अधिगत हो जाता है।" इसी को कहते हैं स्रोतआपत्तिफल। इसी स्रोतआपत्ति का इस संयुक्त में विस्तृत वर्णन है। इस संयुक्त में १. वेणुद्वारवर्ग, २. राजकारामवर्ग, ३. शरणानिवर्ग, ४. पुण्याभिष्यन्दवर्ग, ५. सगाथकपुण्याभिष्यन्दवर्ग, ६. सप्रज्ञवर्ग एवं ७. महाप्रज्ञवर्ग—इन सात वर्गों की पद्धति से इस स्रोतआपत्ति मार्ग का विशद वर्णन हुआ है।

इस स्रोतआपत्ति मार्ग की प्राप्ति के चार उपाय बताये हैं—१. सत्पुरुषों की सङ्गति, २. उन से धर्मश्रवण, ३. उन के बताये हुए धर्म का सूक्ष्मचिन्तन एवं ४. उस धर्म के अनुसार अपना जीवनयापन करना। अस्तु।

इस स्रोतआपत्ति का व्याख्यान ७४ सूत्रों में हुआ है॥

५६. सत्यसंयुक्त : यहाँ 'सत्य' शब्द का आर्यसत्यचतुष्टय में अभिप्राय है। 'आर्यसत्यचतुष्टय' से चार 'आर्यसत्य' जाने जाते हैं। जैसे—१. दुःख, २. दुःखसमुदय, ३. दुःखनिरोध एवं ४. दुःखनिरोधगामी मार्ग।

भगवान् बुद्ध के मत में—'यह दुःख है', 'यह दुःख के समुदय में हेतु है', 'यह दुःख का निरोध है' तथा 'यह इस दुःखनिरोध का उपाय (मार्ग) है'—इन्हीं चार आर्यसत्यों पर श्रवण मनन एवं निदिध्यासन करना चाहिये। यह श्रवण मनन एवं निदिध्यासन ही, पूर्ण होने पर, साधक को एक दिन 'निर्वाण' तक पहुँचा देता है, जो कि उस की धर्मसाधना का चरम लक्ष्य है। अतः ये चार, सत्य आर्यश्रवण मनन द्वारा, लक्ष्य तक पहुँचाने में समर्थ हैं।

साधक को यदि अपने उक्त लक्ष्य (निर्वाण) में एकान्त निष्ठा है तो उसे इन निरर्थक बातों पर विचार करने में अपना समय नष्ट नहीं करना चाहिये। जैसे—१. 'यह

लोक शाश्वत है' या २. 'यह लोक अशाश्वत है', ३. 'यह लोक अन्तवान् है' या ४. 'यह लोक अनन्त है', ५. 'वही जीव है वही शरीर है' या ६. 'जीव अन्य है तथा शरीर अन्य', ७. 'तथागत की सत्ता मरणानन्तर भी है' या ८. 'तथागत की सत्ता मरणानन्तर नहीं है', ९. 'तथागत की मरणानन्तर सत्ता होती भी है, नहीं भी होती' या १०. 'तथागत की मरणानन्तर सत्ता नहीं होती, न नहीं ही होती'। इन दश बातों पर चिन्तन करना बौद्धमत में निषिद्ध ही माना गया है; क्यों कि इन बातों पर चिन्तन निर्वाण की अधिगति में कथमपि सहायक नहीं होता। इस के विपरीत साधक को उक्त आर्यसत्यचतुष्टय पर सतत चिन्तन मनन करना चाहिये; क्यों कि वैसा सतत चिन्तन करने से ही साधक निर्वाण तक पहुँचने में समर्थ हो पाता है।

साधक को ऐसी बातों के प्रपञ्च में भी नहीं पड़ना चाहिये जिनके करने से परस्पर विवाद बढ़े, कलह बढ़े; क्यों कि इन से निर्वाण का प्रयोजन कथमपि सिद्ध होने वाला नहीं है। अस्तु।

इस सत्यसंयुक्त का विस्तार भी वर्गपद्धति से ही किया गया है। जैसे—१. समाधिवर्ग, २. धर्मचक्रप्रवर्तनवर्ग, ३. कोटिग्रामवर्ग, ४. शिंशपावनवर्ग, ५. प्रपातवर्ग, ६. अभिसमयवर्ग, ७-८-९-१०. आमकधान्यपेय्यालवर्ग एवं ११. पञ्चगतिपेय्यालवर्ग। इन वर्गों के माध्यम से आर्यसत्यचतुष्टय का १३७ सूत्रों में नाना प्रकार से विशद वर्णन किया गया है।

संक्षेप में, इस अन्तिम संयुक्त के माध्यम से यह सिद्ध किया गया है कि साधक के लिये 'निर्वाण' लक्ष्य तक पहुँचने के लिये यह आर्यसत्यचतुष्टय का चिन्तन मनन ही एकमात्र उपाय है। यही इस विशाल ग्रन्थ **संयुक्तनिकायपालि** का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है।

इस महावर्ग में **१२ संयुक्त** एवं **१२२४ सूत्र** व्याख्यात हैं॥

महावर्ग-संक्षेप सम्पन्न॥

The Saṁyutta Nikāya Pāli

There are altogether 2945 Suttas in the Saṁyutta Nikāya, classed in fifty-six divisions (called *Saṁyuttas*), grouped in five parts (called *Vaggas*), as under :—

(I) Sagātha Vagga

1. Devatā Saṁyutta
2. Devaputta Saṁyutta
3. Kosala Saṁyutta
4. Māra Saṁyutta
5. Bhikkhuni Saṁyutta
6. Brahma Saṁyutta
7. Brāhmaṇa Saṁyutta
8. Vaṅgisa Saṁyutta
9. Vana Saṁyutta
10. Yakkha Saṁyutta
11. Sakka Saṁyutta

(II) Nidāna Vagga

12. Nidāna Saṁyutta
13. Abhisamaya Saṁyutta
14. Dhātu Saṁyutta
15. Anamatagga Saṁyutta
16. Kassapa Saṁyutta
17. Lābhasakkāra Saṁyutta
18. Rāhula Saṁyutta
19. Lakkhaṇa Saṁyutta
20. Opamma Saṁyutta
21. Bhikkhu Saṁyutta

(III) Khandha Vagga

22. Khandha Saṁyutta
23. Rādha Saṁyutta
24. Diṭṭhi Saṁyutta
25. Okkanta Saṁyutta
26. Uppāda Saṁyutta
27. Kilesa Saṁyutta
28. Sāriputta Saṁyutta
29. Nāga Saṁyutta
30. Supaṇṇa Saṁyutta
31. Gandhabbakāya Saṁyutta
32. Valāhaka Saṁyutta
33. Vacchagotta Saṁyutta
34. Jhāna Saṁyutta

(IV) Saḷāyatana Vagga

35. Saḷāyatana Saṁyutta
36. Vedanā Saṁyutta
37. Mātugāma Saṁyutta
38. Jambukhādaka Saṁyutta
39. Sāmaṇḍaka Saṁyutta
40. Moggallāna Saṁyutta
41. Citta Saṁyutta
42. Gāmaṇi Saṁyutta
43. Asaṅkhata Saṁyutta
44. Abyākata Saṁyutta

(V) Mahā Vagga

45. Magga Saṁyutta
46. Bojjhaṅga Saṁyutta
47. Satipaṭṭhāna Saṁyutta
48. Indriya Saṁyutta
49. Sammappadhāna Saṁyutta
50. Bala Saṁyutta
51. Iddhipāda Saṁyutta
52. Anuruddha Saṁyutta
53. Jhāna Saṁyutta
54. Ānāpāna Saṁyutta
55. Sotāpatti Saṁyutta &
56. Sacca Saṁyutta.

The Present Volume

5. MAHĀVAGGA

This Vagga consists of altogether 12 Saṁyuttas devoted to the significant principles of Buddhist religion, philosophy and culture. The following is a brief introductory to some of the Suttas of these—

Avijjā Sutta—There are two paths—right and wrong. Knowledge leads one to follow the former and ignorance to the latter. (45.1.1).

Janussoṇi Brāhmaṇa Sutta—The Brahmaṇa had a very beautiful chariot. The people exclaimed—"This is, as if, Brahmayāna (divine vehicle) itself."

The Buddha preached that the Noble Eight-fold Path is the real Brahma-yāna, or the Dharma-yāna or the Excellent Victory. He said—"Faith, wisdom and righteousness are always yoked in it. Shame from evil is the axel, mind is the reins, and allertness is the driver.

Good conduct is its adornment, meditation is the hub,
Energy is the wheels, and concentration is the rim,
Reflection on transitoriness is the hood.
Love, good will and justice are its weapons.
Forbearance is the armour for protection.
The brave ride this chariot and cross over,
This is their great victory. (45.4.4).

Bala Sutta—As the earth is the basis of all of our activities, so good conduct is the basis of the fulfilment of the Eight-fold Noble Path. (45.149.151).

Ākāsa Sutta—The Noble Eight-fold Path has been compared to the wide free sky. As all sorts of wind blow in the sky so the high qualities—the four ways of mindfulness, the four right efforts...the five faculties, the seven factors conducive to enlightenment—attain perfection in the Path. (45.155.157).

Gilāna Sutta—At that time Venerable Mahā Kassapa was lying ill in the Pippali cave at Rājagaha. The Buddha approached his bed himself and preached on the efficacy of the seven factors conducive to enlightenment. It had, as if it were, a magical effect on him. He got well and stood up from the bed. (46.14.14 & 46.15.16).

Aggi Sutta—One should not practise the factor of tranquility, concentration and equanimity while the mind is sinking within; because, these will not help in raising it up. It is better to practise the following factors at that time—quest after truth, energy and thrill. These will help in raising the mind up.

On the other hand, while the mind is stirred up, one should avoid the practice of the second set of factors and devote himself to the practice of the first, for the same reasons. (46.53.56).

Ambapāli Sutta—The Buddha gave a sermon on the four ways of mindfulness—"Monks, this is but the single path for the purification of beings, to cross grief and lamentation, to put an end to pain and misery, for the attainment of Nibbāna, namely, the four ways of mindfulness—pertaining to the states of body, feelings, mind and Dhamma." (47.1.1).

Cunda Sutta—This Sutta refers to the demise of the Venerable Sāriputta. His relics were brought before the Buddha by the novice Cunda, who waited upon him while he lay seriously ill in the village Nālaka. The Buddha compared this loss of the Saṅgha to the falling down of the biggest branch of a rich banyan tree. (47.13.15).

Indriya Saṁyutta—The Suttas of this saṁyutta deal with the five faculties, the *Pancindriya,* namely—faith, energy, mindfulness, concentration and wisdom. (48).

Moggallāna Sutta—The Sutta refers to a miracle performed by the Venerable Moggallāna, of shaking the grand mansion of Migāramātā with a slight pressure of his toe. (51.14.14).

Ayoguḷa Sutta—The Buddha told Ānanda that he could reach up even to the abode of the Brahmā with his physical body. As an iron-ball, put in fire, gets ablaze, so the Yogi is able to get his body charged with an energy capable of this performance. (51.22.22).

Dhammacakkapavattana Sutta—This is the same First Sermon of the Buddha that occurs in the first chapter of the Mahāvagga, the first book of the Vinaya Pitaka, in which he has preached on the Four Noble Truths and Eight-fold Noble Path to the first five disciples, called the Pacavaggiya. (56.11.11).

संयुत्तनिकायपालि
संयुत्त-वग्ग-सुत्तक्कमो

५. महावग्गो पञ्चमो

	पिट्ठङ्का
४५. मग्गसंयुत्तं	**१६११**
१. अविज्जावग्गो पठमो	**१६११**
१. अविज्जासुत्तं	१६११
२. उपड्ढसुत्तं	१६१२
३. सारिपुत्तसुत्तं	१६१४
४. जाणुस्सोणिब्राह्मणसुत्तं	१६१५
५. किमत्थियसुत्तं	१६१७
६. पठमअञ्ञतरभिक्खुसुत्तं	१६१९
७. दुतियअञ्ञतरभिक्खुसुत्तं	१६१९
८. विभङ्गसुत्तं	१६२०
९. सूकसुत्तं	१६२२
१०. नन्दियसुत्तं	१६२४
२. विहारवग्गो दुतियो	**१६२६**
११. पठमविहारसुत्तं	१६२६
१२. दुतियविहारसुत्तं	१६२७
१३. सेक्खसुत्तं	१६२८
१४. पठमउप्पादसुत्तं	१६२८
१५. दुतियउप्पादसुत्तं	१६२८
१६. पठमपरिसुद्धसुत्तं	१६२९
१७. दुतियपरिसुद्धसुत्तं	१६२९
१८. पठमकुक्कुटारामसुत्तं	१६२९
१९. दुतियकुक्कुटारामसुत्तं	१६३०
२०. ततियकुक्कुटारामसुत्तं	१६३१
३. मिच्छत्तवग्गो ततियो	**१६३३**
२१. मिच्छत्तसुत्तं	१६३३
२२. अकुसलधम्मसुत्तं	१६३३
२३. पठमपटिपदासुत्तं	१६३३
२४. दुतियपटिपदासुत्तं	१६३४
२५. पठमअसप्पुरिससुत्तं	१६३५
२६. दुतियअसप्पुरिससुत्तं	१६३५
२७. कुम्भसुत्तं	१६३६
२८. समाधिसुत्तं	१६३६
२९. वेदनासुत्तं	१६३७
३०. उत्तियसुत्तं	१६३७
४. पटिपत्तिवग्गो चतुत्थो	**१६३९**
३१. पठमपटिपत्तिसुत्तं	१६३९
३२. दुतियपटिपत्तिसुत्तं	१६३९
३३. विरद्धसुत्तं	१६३९
३४. पारङ्गमसुत्तं	१६४०
३५. पठमसामञ्ञसुत्तं	१६४१
३६. दुतियसामञ्ञसुत्तं	१६४२
३७. पठमब्रह्मञ्ञसुत्तं	१६४२
३८. दुतियब्रह्मञ्ञसुत्तं	१६४२
३९. पठमब्रह्मचरियसुत्तं	१६४३
४०. दुतियब्रह्मचरियसुत्तं	१६४३
अञ्ञतित्थियवग्गो	**१६४५**
४१. रागविरागसुत्तं	१६४५
४२-४७. संयोजनप्पहानादि०	१६४५

४८. अनुपादापरिनिब्बानसुत्तं १६४६

सुरियपेय्यालवग्गो १६४८

४९. कल्याणमित्तसुत्तं १६४८

५०-५४. सीलसम्पदादिसुत्त० १६४८

५५. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं १६४९

५६. कल्याणमित्तसुत्तं १६४९

५७-६१. सीलसम्पदादिसुत्त० १६५०

६२. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं १६५०

पठमएकधम्मपेय्यालवग्गो १६५२

६३. कल्याणमित्तसुत्तं १६५२

६४-६८. सीलसम्पदादिसुत्तपञ्चकं १६५२

६९. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं १६५३

७०. कल्याणमित्तसुत्तं १६५३

७१-७५. सीलसम्पदादिसुत्तपञ्चकं १६५३

७६. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं १६५४

दुतियएकधम्मपेय्यालवग्गो १६५५

७७. कल्याणमित्तसुत्तं १६५५

७८-८२. सीलसम्पदादिसुत्तपञ्चकं १६५५

८३. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं १६५६

८४. कल्याणमित्तसुत्तं १६५६

८५-८९. सीलसम्पदादिसुत्तपञ्चकं १६५७

९०. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं १६५७

गङ्गापेय्यालवग्गो १६५९

९१. पठमपाचीननिन्नसुत्तं १६५९

९२-९५. दुतियादिपाचीननिन्न० १६५९

९६. छट्ठपाचीननिन्नसुत्तं १६६०

९७. पठमसमुद्दनिन्नसुत्तं १६६०

९८-१०२. दुतियादिसमुद्दनिन्न० १६६१

पठमपाचीननिन्नवग्गो १६६३

१०३. पठमपाचीननिन्नसुत्तं १६६३

१०४-८. दुतियादिपाचीननिन्न० १६६३

१०९. पठमसमुद्दनिन्नसुत्तं १६६४

११०-१४. दुतियादिसमुद्दनिन्न० १६६४

दुतियपाचीननिन्नवग्गो १६६६

११५. पठमपाचीननिन्नसुत्तं १६६६

११६-२०. दुतियादिपाचीननिन्न० १६६६

१२१. पठमसमुद्दनिन्नसुत्तं १६६७

१२२-२६. दुतियादिसमुद्दनिन्नसुत्तं १६६७

दुतियगङ्गापेय्यालवग्गो १६६९

१२७. पठमपाचीननिन्नसुत्तं १६६९

१२८-३२. दुतियादिपाचीननिन्न० १६६९

१३३. पठमसमुद्दनिन्नसुत्तं १६७०

१३४-३८. दुतियादिसमुद्दनिन्नसुत्तं १६७०

५. अप्पमादवग्गो पञ्चमो १६७२

१३९. तथागतसुत्तं १६७२

१४०. पदसुत्तं १६७४

१४१-४५. कूटादिसुत्तं १६७४

१४६-४८. चन्दिमादिसुत्तं १६७५

६. बलकरणीयवग्गो छट्ठो १६७७

१४९. बलसुत्तं १६७७

१५०. बीजसुत्तं १६७९

१५१. नागसुत्तं १६७९

१५२. रुक्खसुत्तं १६८०

१५३. कुम्भसुत्तं १६८१

१५४. सूकसुत्तं १६८१

१५५. आकाससुत्तं १६८२

१५६. पठममेघसुत्तं १६८३

१५७. दुतियमेघसुत्तं १६८४

१५८. नावासुत्तं १६८४

१५९. आगन्तुकसुत्तं १६८५

१६०. नदीसुत्तं १६८६

७. एसनावग्गो सत्तमो १६८९

१६१. एसनासुत्तं १६८९

१६२. विधासुत्तं १६९१

१६३. आसवसुत्तं १६९१
१६४. भवसुत्तं १६९२
१६५. दुक्खतासुत्तं १६९२
१६६. खिलसुत्तं १६९२
१६७. मलसुत्तं १६९३
१६८. नीघसुत्तं १६९३
१६९. वेदनासुत्तं १६९३
१७०. तण्हासुत्तं १६९४
१७१. तसिनासुत्तं १६९४
८. ओघवग्गो अट्ठमो १६९६
१७२. ओघसुत्तं १६९६
१७३. योगसुत्तं १६९६
१७४. उपादानसुत्तं १६९६
१७५. गन्थसुत्तं १६९७
१७६. अनुसयसुत्तं १६९७
१७७. कामगुणसुत्तं १६९७
१७८. नीवरणसुत्तं १६९८
१७९. उपादानक्खन्धसुत्तं १६९८
१८०. ओरम्भागियसुत्तं १६९९
१८१. उद्धम्भागियसुत्तं १६९९
४६. बोज्झङ्गसंयुत्तं १७०१
१. पब्बतवग्गो पठमो १७०१
१. हिमवन्तसुत्तं १७०१
२. कायसुत्तं १७०२
३. सीलसुत्तं १७०६
४. वत्थसुत्तं १७१०
५. भिक्खुसुत्तं १७१२
६. कुण्डलियसुत्तं १७१२
७. कूटागारसुत्तं १७१७
८. उपवानसुत्तं १७१७
९. पठमउप्पन्नसुत्तं १७१८
१०. दुतियउप्पन्नसुत्तं १७१८
२. गिलानवग्गो दुतियो १७२०
११. पाणसुत्तं १७२०
१२. पठमसुरियूपमसुत्तं १७२०
१३. दुतियसुरियूपमसुत्तं १७२१
१४. पठमगिलानसुत्तं १७२२
१५. दुतियगिलानसुत्तं १७२३
१६. ततियगिलानसुत्तं १७२४
१७. पारङ्गमसुत्तं १७२५
१८. विरद्धसुत्तं १७२६
१९. अरियसुत्तं १७२६
२०. निब्बिदासुत्तं १७२६
३. उदायिवग्गो ततियो १७२८
२१. बोधायसुत्तं १७२८
२२. बोज्झङ्गदेसनासुत्तं १७२८
२३. ठानियसुत्तं १७२८
२४. अयोनिसोमनसिकारसुत्तं १७२९
२५. अपरिहानियसुत्तं १७३०
२६. तण्हक्खयसुत्तं १७३१
२७. तण्हानिरोधसुत्तं १७३२
२८. निब्बेधभागियसुत्तं १७३२
२९. एकधम्मसुत्तं १७३३
३०. उदायिसुत्तं १७३४
४. नीवरणवग्गो चतुत्थो १७३६
३१. पठमकुसलसुत्तं १७३६
३२. दुतियकुसलसुत्तं १७३६
३३. उपक्किलेससुत्तं १७३७
३४. अनुपक्किलेससुत्तं १७३८
३५. अयोनिसोमनसिकारसुत्तं १७३८
३६. योनिसोमनसिकारसुत्तं १७३९
३७. बुद्धिसुत्तं १७३९
३८. आवरणनीवरणसुत्तं १७४०
३९. रुक्खसुत्तं १७४१

४०. नीवरणसुत्तं १७४२
५. चक्कवत्तिवग्गो पञ्चमो १७४५
४१. विधासुत्तं १७४५
४२. चक्कवत्तिसुत्तं १७४५
४३. मारसुत्तं १७४६
४४. दुप्पञ्ञसुत्तं १७४६
४५. पञ्ञवन्तसुत्तं १७४७
४६. दलिद्दसुत्तं १७४७
४७. अदलिद्दसुत्तं १७४८
४८. आदिच्चसुत्तं १७४८
४९. अज्झत्तिकङ्गसुत्तं १७४९
५०. बाहिरङ्गसुत्तं १७४९
६. साकच्छवग्गो छट्ठो १७५१
५१. आहारसुत्तं १७५१
५२. परियायसुत्तं १७५६
५३. अग्गिसुत्तं १७६०
५४. मेत्तासहगतसुत्तं १७६४
५५. सङ्गारवसुत्तं १७७०
५६. अभयसुत्तं १७७५
७. आनापानवग्गो सत्तमो १७७९
५७. अट्ठिकमहप्फलसुत्तं १७७९
५८. अञ्ञतरफलसुत्तं १७७९
५९. महत्थसुत्तं १७८०
६०. योगक्खेमसुत्तं १७८०
६१. संवेगसुत्तं १७८१
६२. फासुविहारसुत्तं १७८१
६३. पुळवकसुत्तं १७८१
६४. विनीलकसुत्तं १७८१
६५. विच्छिद्दकसुत्तं १७८२
६६. उद्धुमातकसुत्तं १७८२
६७. मेत्तासुत्तं १७८२
६८. करुणासुत्तं १७८२
६९. मुदितासुत्तं १७८२
७०. उपेक्खासुत्तं १७८२
७१. आनापानसुत्तं १७८३
८. निरोधवग्गो अट्ठमो १७८४
७२. असुभसुत्तं १७८४
७३. मरणसुत्तं १७८४
७४. आहारेपटिकूलसुत्तं १७८४
७५. अनभिरतिसुत्तं १७८४
७६. अनिच्चसुत्तं १७८४
७७. दुक्खसुत्तं १७८४
७८. अनत्तसुत्तं १७८४
७९. पहानसुत्तं १७८५
८०. विरागसुत्तं १७८५
८१. निरोधसुत्तं १७८५
९. गङ्गापेय्यालवग्गो नवमो १७८७
८२-९३. गङ्गानदीआदिसुत्तं १७८७
१०. अप्पमादवग्गो दसमो १७८८
९४-१०३. तथागतादिसुत्तं १७८८
११.बलकरणीयवग्गो एका० १७८९
१०४-१५. बलादिसुत्तं १७८९
१२. एसनावग्गो द्वादसमो १७९०
११६-२४. एसनादिसुत्तं १७९०
१३. ओघवग्गो तेरसमो १७९१
१२५-३३. ओघादिसुत्तं १७९१
१३४. उद्धम्भागियसुत्तं १७९१
१४. चुद्दसमो वग्गो १७९३
१३५-४६. पुनगङ्गानदीआदिसुत्तं १७९३
१५. पन्नरसमो वग्गो १७९४
१४७-५६. तथागतादिसुत्तं १७९४
१६. सोळसमो वग्गो १७९५
१५७-६८. पुनबलादिसुत्तं १७९५
१७. पुनएसनावग्गो सत्तरसमो १७९६

१६९-७९. पुनएसनादिसुत्तं १७९६

१८.पुनओघवग्गो अट्ठाररसमो १७९७

१८०-८९. पुनओघादिसुत्तं १७९७

४७. सतिपट्ठानसंयुत्तं १७९८

१. अम्बपालिवग्गो पठमो १७९८

१. अम्बपालिसुत्तं १७९८

२. सतिसुत्तं १७९९

३. भिक्खुसुत्तं १८००

४. सालसुत्तं १८०२

५. अकुसलरासिसुत्तं १८०४

६. सकुणग्घिसुत्तं १८०५

७. मक्कटसुत्तं १८०७

८. सूदसुत्तं १८०९

९. गिलानसुत्तं १८१२

१०. भिक्खुनुपस्सयसुत्तं १८१५

२. नालन्दवग्गो दुतियो १८२०

११. महापुरिससुत्तं १८२०

१२. नालन्दसुत्तं १८२१

१३. चुन्दसुत्तं १८२४

१४. उक्कचेलसुत्तं १८२७

१५. बाहियसुत्तं १८२९

१६. उत्तियसुत्तं १८३०

१७. अरियसुत्तं १८३१

१८. ब्रह्मसुत्तं १८३१

१९. सेदकसुत्तं १८३३

२०. जनपदकल्याणीसुत्तं १८३४

३. सीलट्ठितिवग्गो ततियो १८३७

२१. सीलसुत्तं १८३७

२२. चिरट्ठितिसुत्तं १८३८

२३. परिहानसुत्तं १८३९

२४. सुद्धसुत्तं १८४०

२५. अञ्ञतरब्राह्मणसुत्तं १८४०

२६. पदेससुत्तं १८४२

२७. समत्तसुत्तं १८४२

२८. लोकसुत्तं १८४३

२९. सिरिवड्ढसुत्तं १८४४

३०. मानदिन्नसुत्तं १८४६

४. अननुस्सुतवग्गो चतुत्थो १८४७

३१. अननुस्सुतसुत्तं १८४७

३२. विरागसुत्तं १८४८

३३. विरद्धसुत्तं १८४८

३४. भावितसुत्तं १८४९

३५. सतिसुत्तं १८५०

३६. अञ्ञासुत्तं १८५०

३७. छन्दसुत्तं १८५१

३८. परिञ्ञातसुत्तं १८५१

३९. भावनासुत्तं १८५२

४०. विभङ्गसुत्तं १८५३

५. अमतवग्गो पञ्चमो १८५५

४१. अमतसुत्तं १८५५

४२. समुदयसुत्तं १८५५

४३. मग्गसुत्तं १८५६

४४. सतिसुत्तं १८५७

४५. कुसलरासिसुत्तं १८५७

४६. पातिमोक्खसंवरसुत्तं १८५८

४७. दुच्चरितसुत्तं १८५९

४८. मित्तसुत्तं १८६१

४९. वेदनासुत्तं १८६१

५०. आसवसुत्तं १८६२

६. गङ्गापेय्यालवग्गो छट्ठो १८६३

५१-६२. गङ्गानदीआदिसुत्त० १८६३

७. अप्पमादवग्गो सत्तमो १८६४

६३-७२. तथागतादिसुत्तं १८६४

८. बलकरणीयवग्गो अट्ठमो १८६५

७३-८४. बलादिसुत्तं १८६५

९. एसनावग्गो नवमो **१८६६**

८५-९४. एसनादिसुत्तं १८६६

१०. ओघवग्गो दसमो **१८६७**

९५-११०. उद्धम्भागियादिसुत्तं १८६७

४८. इन्द्रियसंयुत्तं **१८६८**

१. सुद्धिकवग्गो पठमो **१८६८**

१. सुद्धिकसुत्तं १८६८

२. पठमसोतापन्नसुत्तं १८६८

३. दुतियसोतापन्नसुत्तं १८६८

४. पठमअरहन्तसुत्तं १८६९

५. दुतियअरहन्तसुत्तं १८६९

६. पठमसमणब्राह्मणसुत्तं १८७०

७. दुतियसमणब्राह्मणसुत्तं १८७०

८. दट्ठब्बसुत्तं १८७१

९. पठमविभङ्गसुत्तं १८७२

१०. दुतियविभङ्गसुत्तं १८७३

२. मुदुतरवग्गो दुतियो **१८७७**

११. पटिलाभसुत्तं १८७७

१२. पठमसङ्खित्तसुत्तं १८७८

१३. दुतियसङ्खित्तसुत्तं १८७८

१४. ततियसङ्खित्तसुत्तं १८७८

१५. पठमवित्थारसुत्तं १८७९

१६. दुतियवित्थारसुत्तं १८८०

१७. ततियवित्थारसुत्तं १८८१

१८. पटिपन्नसुत्तं १८८१

१९. सम्पन्नसुत्तं १८८२

२०. आसवक्खयसुत्तं १८८२

३. छळिन्द्रियवग्गो ततियो **१८८४**

२१. पुनब्भवसुत्तं १८८४

२२. जीवितिन्द्रियसुत्तं १८८४

२३. अञ्ञिन्द्रियसुत्तं १८८४

२४. एकबीजीसुत्तं १८८५

२५. सुद्धकसुत्तं १८८५

२६. सोतापन्नसुत्तं १८८६

२७. अरहन्तसुत्तं १८८६

२८. सम्बुद्धसुत्तं १८८७

२९. पठमसमणब्राह्मणसुत्तं १८८७

३०. दुतियसमणब्राह्मणसुत्तं १८८८

४. सुखिन्द्रियवग्गो चतुत्थो **१८९०**

३१. सुद्धिकसुत्तं १८९०

३२. सोतापन्नसुत्तं १८९०

३३. अरहन्तसुत्तं १८९०

३४. पठमसमणब्राह्मणसुत्तं १८९१

३५. दुतियसमणब्राह्मणसुत्तं १८९१

३६. पठमविभङ्गसुत्तं १८९२

३७. दुतियविभङ्गसुत्तं १८९३

३८. ततियविभङ्गसुत्तं १८९४

३९. कट्ठोपमसुत्तं १८९५

४०. उप्पटिपाटिकसुत्तं १८९७

५. जरावग्गो पञ्चमो **१९०२**

४१. जराधम्मसुत्तं १९०२

४२. उण्णाभब्राह्मणसुत्तं १९०३

४३. साकेतसुत्तं १९०५

४४. पुब्बकोट्ठकसुत्तं १९०७

४५. पठमपुब्बारामसुत्तं १९०८

४६. दुतियपुब्बारामसुत्तं १९०९

४७. ततियपुब्बारामसुत्तं १९१०

४८. चतुत्थपुब्बारामसुत्तं १९११

४९. पिण्डोलभारद्वाजसुत्तं १९११

५०. आपणसुत्तं १९१२

६. सूकरखतवग्गो छट्ठो **१९१६**

५१. सालसुत्तं १९१६

५२. मल्लिकसुत्तं १९१६

५३. सेखसुत्तं १९१८

५४. पदसुत्तं १९२०

५५. सारसुत्तं १९२०

५६. पतिट्ठितसुत्तं १९२१

५७. सहम्पतिब्रह्मसुत्तं १९२२

५८. सूकरखतसुत्तं १९२३

५९. पठमउप्पादसुत्तं १९२५

६०. दुतियउप्पादसुत्तं १९२५

७. बोधिपक्खियवग्गो सत्तमो १९२७

६१. संयोजनसुत्तं १९२७

६२. अनुसयसुत्तं १९२७

६३. परिञ्ञासुत्तं १९२७

६४. आसवक्खयसुत्तं १९२७

६५. पठमफलसुत्तं १९२८

६६. दुतियफलसुत्तं १९२८

६७. पठमरुक्खसुत्तं १९२९

६८. दुतियरुक्खसुत्तं १९२९

६९. ततियरुक्खसुत्तं १९३०

७०. चतुत्थरुक्खसुत्तं १९३०

८. गङ्गापेय्यालवग्गो अट्ठमो १९३२

७१-८२. पाचीनादिसुत्तं १९३२

९. अप्पमादवग्गो नवमो १९३३

१०. बलकरणीयवग्गो दसमो १९३३

११. एसनावग्गो एकादसमो १९३४

१२. ओघवग्गो द्वादसमो १९३५

११६-१२५. ओघादिसुत्तं १९३५

१३. गङ्गापेय्यालवग्गो तेरसमो १९३६

१२६-३७. पाचीनादिसुत्तं १९३६

१७. ओघवग्गो सत्तरसमो १९३७

१७१-८०. ओघादिसुत्तं १९३७

४९. सम्मप्पधानसंयुत्तं १९३८

१. गङ्गापेय्यालवग्गो पठमो १९३८

१-१२. पाचीनादिसुत्तं १९३८

२. अप्पमादवग्गो दुतियो १९४०

३. बलकरणीयवग्गो ततियो १९४१

२३-३४. बलकरणीयादिसुत्तं १९४१

४. एसनावग्गो चतुत्थो १९४३

३५-४५. एसनादिसुत्तं १९४३

५. ओघवग्गो पञ्चमो १९४४

४६-५५. ओघादिसुत्तं १९४४

५०. बलसंयुत्तं १९४५

१. गङ्गापेय्यालवग्गो पठमो १९४५

१-१२. बलादिसुत्तं १९४५

२. अप्पमादवग्गो दुतियो १९४७

३. बलकरणीयवग्गो ततियो १९४७

४. एसनावग्गो चतुत्थो १९४७

५. ओघवग्गो पञ्चमो १९४८

४६-५५. ओघादिसुत्तं १९४८

६. गङ्गापेय्यालवग्गो छट्ठो १९४८

५६-६७. पाचीनादिसुत्तं १९४८

७. अप्पमादवग्गो सत्तमो १९५०

८. बलकरणीयवग्गो अट्ठमो १९५०

९. एसनावग्गो नवमो १९५०

९०-१००. एसनादिसुत्तं १९५०

१०. ओघवग्गो दसमो १९२१

१०१-१०. ओघादिसुत्तं १९५१

५१. इद्धिपादसंयुत्तं १९५२

१. चापालवग्गो पठमो १९५२

१. अपारसुत्तं १९५२

२. विरद्धसुत्तं १९५२

३. अरियसुत्तं १९५३

४. निब्बिदासुत्तं १९५३

५. इद्धिपदेससुत्तं १९५४

६. समत्तसुत्तं १९५४

७. भिक्खुसुत्तं १९५५
८. बुद्धसुत्तं १९५६
९. ञाणसुत्तं १९५६
१०. चेतियसुत्तं १९५८

२. पासादकम्पनवग्गो दुतियो १९६५

११. पुब्बसुत्तं १९६५
१२. महप्फलसुत्तं १९६९
१३. छन्दसमाधिसुत्तं १९७०
१४. मोग्गल्लानसुत्तं १९७१
१५. उण्णाभब्राह्मणसुत्तं १९७४
१६. पठमसमणब्राह्मणसुत्तं १९७७
१७. दुतियसमणब्राह्मणसुत्तं १९७८
१८. भिक्खुसुत्तं १९७९
१९. इद्धादिदेसनासुत्तं १९८०
२०. विभङ्गसुत्तं १९८१

३. अयोगुळवग्गो ततियो १९८७

२१. मग्गसुत्तं १९८७
२२. अयोगुळसुत्तं १९८८
२३. भिक्खुसुत्तं १९९०
२४. सुद्धिकसुत्तं १९९०
२५. पठमफलसुत्तं १९९१
२६. दुतियफलसुत्तं १९९१
२७. पठमआनन्दसुत्तं १९९२
२८. दुतियआनन्दसुत्तं १९९३
२९. पठमभिक्खुसुत्तं १९९४
३०. दुतियभिक्खुसुत्तं १९९४
३१. मोग्गल्लानसुत्तं १९९५
३२. तथागतसुत्तं १९९६

४. गङ्गापेय्यालवग्गो चतुत्थो १९९८

३३-४४. गङ्गानदीआदिसुत्तं १९९८

५. अप्पमादवग्गो पञ्चमो १९९९

६. बलकरणीयवग्गो छट्ठो १९९९

७. एसनावग्गो सत्तमो २०००

८. ओघवग्गो अट्ठमो २०००

७८-८९. ओघादिसुत्तं २०००

५२. अनुरुद्धसंयुत्तं २००२

१. रहोगतवग्गो पठमो २००२

१. पठमरहोगतसुत्तं २००२
२. दुतियरहोगतसुत्तं २००५
३. सुतनुसुत्तं २००६
४. पठमकण्डकीसुत्तं २००६
५. दुतियकण्डकीसुत्तं २००७
६. ततियकण्डकीसुत्तं २००८
७. तण्हक्खयसुत्तं २००८
८. सलळागारसुत्तं २००९
९. अम्बपालिवनसुत्तं २०११
१०. बाळ्हगिलानसुत्तं २०१२

२. दुतियो वग्गो २०१३

११. कप्पसहस्ससुत्तं २०१३
१२. इद्धिविधसुत्तं २०१३
१३. दिब्बसोतसुत्तं २०१४
१४. चेतोपरियसुत्तं २०१४
१५. ठानसुत्तं २०१४
१६. कम्मसमादानसुत्तं २०१४
१७. सब्बत्थगामिनिसुत्तं २०१५
१८. नानाधातुसुत्तं २०१५
१९. नानाधिमुत्तिसुत्तं २०१५
२०. इन्द्रियपरोपरियत्तसुत्तं २०१५
२१. झानादिसुत्तं २०१५
२२. पुब्बेनिवाससुत्तं २०१६
२३. दिब्बचक्खुसुत्तं २०१६
२४. आसवक्खयसुत्तं २०१६

५३. झानसंयुत्तं २०१८

१. गङ्गापेय्यालवग्गो पठमो २०१८

१-१२. झानादिसुत्तं २०१८

२. अप्पमादवग्गो दुतियो २०२०

३. बलकरणीयवग्गो ततियो २०२०

४. एसनावग्गो चतुत्थो २०२१

५. ओघवग्गो पञ्चमो २०२१

४६-५५. ओघादिसुत्तं २०२१

५४. आनापानसंयुत्तं २०२३

१. एकधम्मवग्गो पठमो २०२३

१. एकधम्मसुत्तं २०२३

२. बोज्झङ्गसुत्तं २०२४

३. सुद्धिकसुत्तं २०२५

४. पठमफलसुत्तं २०२६

५. दुतियफलसुत्तं २०२६

६. अरिट्ठसुत्तं २०२७

७. महाकप्पिनसुत्तं २०२८

८. पदीपोपमसुत्तं २०२९

९. वेसालीसुत्तं २०३३

१०. किमिलसुत्तं २०३६

२. वग्गो दुतियो २०४१

११. इच्छानङ्गलसुत्तं २०४१

१२. कङ्खेय्यसुत्तं २०४३

१३. पठमआनन्दसुत्तं २०४५

१४. दुतियआनन्दसुत्तं २०५१

१५. पठमभिक्खुसुत्तं २०५१

१६. दुतियभिक्खुसुत्तं २०५२

१७. संयोजनप्पहानसुत्तं २०५६

१८. अनुसयसमुग्घातसुत्तं २०५६

१९. अद्धानपरिञ्ञासुत्तं २०५६

२०. आसवक्खयसुत्तं २०५७

५५. सोतापत्तिसंयुत्तं २०५८

१. वेळुद्वारवग्गो पठमो २०५८

१. चक्कवत्तिराजसुत्तं २०५८

२. ब्रह्मचरियोगधसुत्तं २०५९

३. दीघावुउपासकसुत्तं २०६०

४. पठमसारिपुत्तसुत्तं २०६३

५. दुतियसारिपुत्तसुत्तं २०६४

६. थपतिसुत्तं २०६५

७. वेळुद्वारेय्यसुत्तं २०७१

८. पठमगिञ्जकावसथसुत्तं २०७६

९. दुतियगिञ्जकावसथसुत्तं २०७९

१०. ततियगिञ्जकावसथसुत्तं २०७९

२. राजकारामवग्गो दुतियो २०८३

११. सहस्सभिक्खुनिसङ्घसुत्तं २०८३

१२. ब्राह्मणसुत्तं २०८३

१३. आनन्दत्थेरसुत्तं २०८४

१४. दुग्गतिभयसुत्तं २०८६

१५. दुग्गतिविनिपातभयसुत्तं २०८७

१६. पठममित्तामच्चसुत्तं २०८७

१७. दुतियमित्तामच्चसुत्तं २०८७

१८. पठमदेवचारिकसुत्तं २०८९

१९. दुतियदेवचारिकसुत्तं २०९०

२०. ततियदेवचारिकसुत्तं २०९१

३. सरणानिवग्गो ततियो २०९३

२१. पठममहानामसुत्तं २०९३

२२. दुतियमहानामसुत्तं २०९५

२३. गोधसक्कसुत्तं २०९६

२४. पठमसरणानिसक्कसुत्तं २०९९

२५. दुतियसरणानिसक्कसुत्तं २१०२

२६. पठमअनाथपिण्डिकसुत्तं २१०६

२७. दुतियअनाथपिण्डिकसुत्तं २१११

२८. पठमभयवेरूपसन्तसुत्तं २११४

२९. दुतियभयवेरूपसन्तसुत्तं २११६

३०. नन्दकलिच्छविसुत्तं २११७

४. पुञ्ञाभिसन्दवग्गो चतुत्थो २११९

३१. पठमपुञ्ञाभिसन्दसुत्तं	२११९
३२. दुतियपुञ्ञाभिसन्दसुत्तं	२११९
३३. ततियपुञ्ञाभिसन्दसुत्तं	२१२०
३४. पठमदेवपदसुत्तं	२१२१
३५. दुतियदेवपदसुत्तं	२१२१
३६. देवसभागतसुत्तं	२१२२
३७. महानामसुत्तं	२१२३
३८. वस्ससुत्तं	२१२४
३९. काळिगोधसुत्तं	२१२५
४०. नन्दियसक्कसुत्तं	२१२६
५. सगाथकपुञ्ञाभिसन्द०	**२१२९**
४१. पठमअभिसन्दसुत्तं	२१२९
४२. दुतियअभिसन्दसुत्तं	२१३०
४३. ततियअभिसन्दसुत्तं	२१३२
४४. पठममहद्धनसुत्तं	२१३२
४५. दुतियमहद्धनसुत्तं	२१३३
४६. सुद्धकसुत्तं	२१३३
४७. नन्दियसुत्तं	२१३४
४८. भद्दियसुत्तं	२१३४
४९. महानामसुत्तं	२१३४
५०. अङ्गसुत्तं	२१३५
६. सप्पञ्ञवग्गो छट्ठो	**२१३६**
५१. सगाथकसुत्तं	२१३६
५२. वस्संवुत्थसुत्तं	२१३७
५३. धम्मदिन्नसुत्तं	२१३८
५४. गिलानसुत्तं	२१४०
५५. सोतापत्तिफलसुत्तं	२१४३
५६. सकदागामिफलसुत्तं	२१४३
५७. अनागामिफलसुत्तं	२१४३
५८. अरहत्तफलसुत्तं	२१४४
५९. पञ्ञापटिलाभसुत्तं	२१४४
६०. पञ्ञावुद्धिसुत्तं	२१४४
६१. पञ्ञावेपुल्लसुत्तं	२१४४
७. महापञ्ञवग्गो सत्तमो	**२१४५**
६२. महापञ्ञासुत्तं	२१४५
६३. पुथुपञ्ञासुत्तं	२१४५
६४. विपुलपञ्ञासुत्तं	२१४५
६५. गम्भीरपञ्ञासुत्तं	२१४५
६६. अप्पमत्तपञ्ञासुत्तं	२१४५
६७. भूरिपञ्ञासुत्तं	२१४५
६८. पञ्ञाबाहुल्लसुत्तं	२१४६
६९. सीघपञ्ञासुत्तं	२१४६
७०. लहुपञ्ञासुत्तं	२१४६
७१. हासपञ्ञासुत्तं	२१४६
७२. जवनपञ्ञासुत्तं	२१४६
७३. तिक्खपञ्ञासुत्तं	२१४६
७४. निब्बेधिकपञ्ञासुत्तं	२१४६
५६. सच्चसंयुत्तं	**२१४८**
१. समाधिवग्गो पठमो	**२१४८**
१. समाधिसुत्तं	२१४८
२. पटिसल्लानसुत्तं	२१४८
३. पठमकुलपुत्तसुत्तं	२१४९
४. दुतियकुलपुत्तसुत्तं	२१५०
५. पठमसमणब्राह्मणसुत्तं	२१५०
६. दुतियसमणब्राह्मणसुत्तं	२१५१
७. वितक्कसुत्तं	२१५२
८. चिन्तसुत्तं	२१५३
९. विग्गाहिककथासुत्तं	२१५३
१०. तिरच्छानकथासुत्तं	२१५४
२. धम्मचक्कप्पवत्तनवग्गो०	**२१५६**
११. धम्मचक्कप्पवत्तनसुत्तं	२१५६
१२. तथागतसुत्तं	२१६१
१३. खन्धसुत्तं	२१६२
१४. अज्झत्तिकायतनसुत्तं	२१६३

१५. पठमधारणसुत्तं २१६४
१६. दुतियधारणसुत्तं २१६५
१७. अविज्जासुत्तं २१६७
१८. विज्जासुत्तं २१६७
१९. सङ्कासनसुत्तं २१६८
२०. तथसुत्तं २१६८

३. कोटिगामवग्गो ततियो २१७०

२१. पठमकोटिगामसुत्तं २१७०
२२. दुतियकोटिगामसुत्तं २१७१
२३. सम्मासम्बुद्धसुत्तं २१७२
२४. अरहन्तसुत्तं २१७३
२५. आसवक्खयसुत्तं २१७३
२६. मित्तसुत्तं २१७४
२७. तथसुत्तं २१७५
२८. लोकसुत्तं २१७५
२९. परिञ्ञेय्यसुत्तं २१७५
३०. गवम्पतिसुत्तं २१७६

४. सीसपावनवग्गो चतुत्थो २१७८

३१. सीसपावनसुत्तं २१७८
३२. खदिरपत्तसुत्तं २१७९
३३. दण्डसुत्तं २१८०
३४. चेलसुत्तं २१८१
३५. सत्तिसतसुत्तं २१८२
३६. पाणसुत्तं २१८३
३७. पठमसुरियसुत्तं २१८३
३८. दुतियसुरियसुत्तं २१८४
३९. इन्दखीलसुत्तं २१८५
४०. वादत्थिकसुत्तं २१८७

५. पपातवग्गो पञ्चमो २१९०

४१. लोकचिन्तासुत्तं २१९०
४२. पपातसुत्तं २१९२
४३. महापरिळाहसुत्तं २१९४
४४. कूटागारसुत्तं २१९६
४५. वालसुत्तं २१९७
४६. अन्धकारसुत्तं २१९९
४७. पठमछिग्गळयुगसुत्तं २२००
४८. दुतियछिग्गळयुगसुत्तं २२०१
४९. पठमसिनेरुपब्बतराजसुत्तं २२०२
५०. दुतियसिनेरुपब्बतराजसुत्तं २२०३

६. अभिसमयवग्गो छट्ठो २२०५

५१. नखसिखसुत्तं २२०५
५२. पोक्खरणीसुत्तं २२०५
५३. पठमसम्भेज्जसुत्तं २२०६
५४. दुतियसम्भेज्जसुत्तं २२०७
५५. पठममहापठवीसुत्तं २२०७
५६. दुतियमहापठवीसुत्तं २२०८
५७. पठममहासमुद्दसुत्तं २२०८
५८. दुतियमहासमुद्दसुत्तं २२०८
५९. पठमपब्बतूपमसुत्तं २२०९
६०. दुतियपब्बतूपमसुत्तं २२०९

७. पठमआमकधञ्ञपेय्यालं २२११

६१. अञ्ञत्रसुत्तं २२११
६२. पच्चन्तसुत्तं २२११
६३. पञ्ञासुत्तं २२१२
६४. सुरामेरयसुत्तं २२१२
६५. ओदकसुत्तं २२१२
६६. मत्तेय्यसुत्तं २२१३
६७. पेत्तेय्यसुत्तं २२१३
६८. सामञ्ञसुत्तं २२१३
६९. ब्रह्मञ्ञसुत्तं २२१३
७०. पचायिकसुत्तं २२१३

८.दुतियआमकधञ्ञपेय्यालं २२१५

७१. पाणातिपातसुत्तं २२१५
७२. अदिन्नादानसुत्तं २२१५

७३. कामेसुमिच्छाचारसुत्तं २२१५
७४. मुसावादसुत्तं २२१५
७५. पेसुञ्ञसुत्तं २२१५
७६. फरुसवाचासुत्तं २२१६
७७. सम्फप्पलापसुत्तं २२१६
७८. बीजगामसुत्तं २२१६
७९. विकालभोजनसुत्तं २२१६
८०. गन्धविलेपनसुत्तं २२१६
९. ततियआमकधञ्ञपेय्याल० २२१८
८१. नच्चगीतसुत्तं २२१८
८२. उच्चासयनसुत्तं २२१८
८३. जातरूपरजतसुत्तं २२१८
८४. आमकधञ्ञसुत्तं २२१८
८५. आमकमंससुत्तं २२१८
८६. कुमारिकसुत्तं २२१९
८७. दासिदाससुत्तं २२१९
८८. अजेळकसुत्तं २२१९
८९. कुक्कुटसूकरसुत्तं २२१९
९०. हत्थिगवस्ससुत्तं २२१९
१०. चतुत्थआमकधञ्ञ० २२२१
९१. खेत्तवत्थुसुत्तं २२२१
९२. कयविक्कयसुत्तं २२२१
९३. दूतेय्यसुत्तं २२२१
९४. तुलाकूटसुत्तं २२२१
९५. उक्कोटनसुत्तं २२२२
९६-१०६. छेदनादिसुत्तं २२२२
११. पञ्चगतिपेय्यालवग्गो० २२२३
१०७. मनुस्सचुतिनिरयसुत्तं २२२३
१०८. मनुस्सचुतितिरच्छानसुत्तं २२२३
१०९. मनुस्सचुतिपेत्तिविसयसुत्तं २२२४
११०-१२. मनुस्सचुतिदेवनिरया० २२२४
११३-१६. देवचुतिनिरयादिसुत्तं २२२४
११७-१९. देवमनुस्सनिरयादि० २२२४
१२०-२२. निरयमनुस्सनिरयादि० २२२५
१२३-२५. निरयदेवनिरयादिसुत्तं २२२५
१२६-२८. तिरच्छानमनुस्सनिर० २२२५
१२९-३१. तिरच्छानदेवनिरयादि० २२२५
१३२-३४. पेत्तिमनुस्सनिरयादि० २२२६
१३५-३६. पेत्तिदेवनिरयादिसुत्तं २२२६
१३७. पेत्तिदेवपेत्तिविसयसुत्तं २२२६

सुत्तपिटके

संयुत्तनिकायपालि

[हिन्दी अनुवादसहिता]

(५. महावग्गो)

* नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स *

संयुत्तनिकायपालि

५. महावग्गो

४५. मग्गसंयुत्तं

१. अविज्जावग्गो पठमो

१. अविज्जासुत्तं

१. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं [N. Vol. IV, 3, B. vol. III, 1, R. vol. V, 1] विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि— ''भिक्खवो'' ति। ''भदन्ते'' ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

''अविज्जा, भिक्खवे, पुब्बङ्गमा अकुसलानं धम्मानं समापत्तिया, अन्वदेव अहिरिकं अनोत्तप्पं। अविज्जागतस्स, भिक्खवे, अविद्दसुनो मिच्छादिट्ठि पहोति; मिच्छादिट्ठिस्स मिच्छासङ्कप्पो पहोति; मिच्छासङ्कप्पस्स मिच्छावाचा पहोति; मिच्छा-

---

* उन भगवान् ज्ञानी सम्यक्सम्बुद्ध को प्रणाम *

संयुक्तनिकायपालि

महावर्ग

४५. मार्गसंयुक्त

१. अविद्यावर्ग प्रथम

१. अविद्यासूत्र : : **पापमूल अविद्या**

१. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **श्रावस्ती के** अनाथपिण्डिकश्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन महाविहार में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ उन्होंने कभी भिक्षुओं को धर्मोपदेशहेतु 'भिक्षुओ!'—कह कर आमन्त्रित किया। वे भिक्षु ''जी हाँ, भन्ते!'' कह कर उन के सम्मुख उपस्थित हुए। उन्हें भगवान् यों बोले—

''भिक्षुओ! अकुशल धर्मों के उत्पाद में अविद्या का अग्रस्थान है। इस (अविद्या) के बाद (पीछे-पीछे) निर्लज्जता एवं (पाप करने में) निर्भयता का स्थान आता है। भिक्षुओ! अविद्याग्रस्त अज्ञ पुरुष को मिथ्यादृष्टि उद्भूत होती है। तथा इस मिथ्यादृष्टि को मिथ्यासङ्कल्प उद्भूत होता है। मिथ्यासङ्कल्प का मिथ्यावाक् होना सहज है। यह मिथ्यावाक्

वाचस्स मिच्छाकम्मन्तो पहोति; मिच्छाकम्मन्तस्स मिच्छाआजीवो पहोति; मिच्छाआजीवस्स मिच्छावायामो पहोति; मिच्छावायामस्स मिच्छासति पहोति; मिच्छासतिस्स मिच्छासमाधि पहोति।

[B.2] "विज्जा च खो, भिक्खवे, पुब्बङ्गमा कुसलानं धम्मानं समापत्तिया, अन्वदेव [R.2] हिरोत्तप्पं। विज्जागतस्स, भिक्खवे, विद्दसुनो सम्मादिट्ठि पहोति; सम्मादिट्ठिस्स सम्मासङ्कप्पो पहोति; सम्मासङ्कप्पस्स सम्मावाचा पहोति; सम्मावाचस्स सम्माकम्मन्तो पहोति; सम्माकम्मन्तस्स सम्माआजीवो पहोति; सम्माआजीवस्स सम्मावायामो पहोति; सम्मावायामस्स सम्मासति पहोति; सम्मासतिस्स सम्मासमाधि पहोती" ति॥ •

२. उपड्ढसुत्तं

[N.4] २. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति नगरकं नाम सक्यानं निगमो। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"उपड्ढमिदं, भन्ते, ब्रह्मचरियं, यदिदं—कल्याणमित्तता कल्याणसहायता कल्याणसम्पवङ्कता" ति।

ही धीरे धीरे मिथ्याकर्मान्त होने लगता है। यह मिथ्याकर्मान्त मिथ्याआजीव हो ही जायगा; मिथ्याआजीव पुरुष मिथ्याव्यायाम करेगा। यों, इस मिथ्याव्यायाम वाले को मिथ्यास्मृति होने लगती है। ऐसे मिथ्यास्मृति वाले की समाधि भी मिथ्या ही होगी।

(इसके विपरीत—) "भिक्षुओ! कुशल धर्मों के उत्पाद में विद्या का अग्रस्थान है। इस (विद्या) के साथ ही लज्जा एवं (पाप करने में) भय का स्थान का आता है। भिक्षुओ! विद्यासम्पन्न ज्ञानी को सम्यग्दृष्टि उद्भूत होती है। तथा इस सम्यग्दृष्टि को सम्यक्सङ्कल्प उद्भूत होने लगते हैं। सम्यक्सङ्कल्प का सम्यग्वाक् होना सहज है। यह सम्यग्वाक् ही धीरे धीरे सम्यक्कर्मान्त होने लगता है। फिर यह सम्यक्कर्मान्त सम्यगाजीव होने लगता है। सम्यगाजीव ही सम्यग्व्यायाम हो जाता है। सम्यग्व्यायामवाले की सम्यक्स्मृति हो जाती है तथा ऐसे सम्यक्स्मृतिसम्पन्न की समाधि भी सम्यक् भावित (अभ्यस्त) ही होगी॥ •

२. उपार्धसूत्र : :कल्याणमित्र से धर्मसाधना में सफलता

२. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्य प्रदेश के **नगरक** नामक शाक्यों के कस्बे में साधनाहेतु विराजमान थे। तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के पास आये, तथा उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द भगवान् से यों निवेदन करने लगे--"भन्ते! धर्मसाधना में कल्याणमित्र का साथ मिलना उस धर्मसाधना का आधा सफल हो जाना है।"

"मा हेवं, आनन्द, मा हेवं, आनन्द! सकलमेविदं, आनन्द, ब्रह्मचरियं, यदिदं—कल्याणमित्तता कल्याणसहायता कल्याणसम्पवङ्कता। कल्याणमित्तस्सेतं, आनन्द, भिक्खुनो पाटिकङ्खं कल्याणसहायस्स कल्याणसम्पवङ्कस्स—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथञ्चानन्द, भिक्खु कल्याणमित्तो कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इधानन्द, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। सम्मासङ्कप्पं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०... सम्मावाचं भावेति...पे०...सम्माकम्मन्तं भावेति...पे०...सम्माआजीवं भावेति...पे०... सम्मावायामं भावेति...पे०...सम्मासतिं भावेति...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, आनन्द, भिक्खु कल्याणमित्तो कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति।

तदमिनापेतं, आनन्द, परियायेन वेदितब्बं यथा सकलमेविदं [B.3, R.3] ब्रह्मचरियं, यदिदं—कल्याणमित्तता कल्याणसहायता कल्याणसम्पवङ्कता! ममं हि, आनन्द, कल्याणमित्तं आगम्म जातिधम्मा सत्ता जातिया परिमुच्चन्ति; जराधम्मा सत्ता जराय परिमुच्चन्ति; मरणधम्मा सत्ता मरणेन परिमुच्चन्ति; सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासधम्मा सत्ता सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासेहि परिमुच्चन्ति। इमिना खो एतं,

---

"ऐसा न कहो, आनन्द, ऐसा न कहो! धर्मसाधना में किसी कल्याणमित्र का मिलना धर्मसाधना का पूर्ण सफल हो जाना ही है; क्योंकि, आनन्द! साधना में साथ मिले कल्याणमित्र से यह आशा की जानी चाहिये कि वह उस के अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना के अभ्यास में सहयोग करेगा, उसे आगे बढ़ायगा। आनन्द! कल्याणमित्रवाला भिक्षु इस अष्टाङ्गिक मार्ग का कैसे अभ्यास करता है? आनन्द! वह भिक्षु विवेक, वैराग्य एवं निरोध की ओर ले जाने वाली सम्यग्दृष्टि का चिन्तन एवं अभ्यास करता है जिससे साधक मुक्ति की ओर अग्रसर होता है। ...सम्यक्सङ्कल्प...सम्यग्वाक्...सम्यक्कर्मान्त...सम्यगाजीव... सम्यग्व्यायाम...सम्यक्स्मृतिः...सम्यक्समाधि का चिन्तन एवं अभ्यास करता है। आनन्द! इस तरह वह कल्याणमित्र वाला भिक्षु इस अष्टाङ्गिक मार्ग का अभ्यास करता है।

"और, आनन्द! यह भी जानना चाहिये कि कल्याणमित्र का मिलन धर्मसाधना का पूर्ण सफल हो जाना ही है। आनन्द! मुझ कल्याणमित्र के पास आकर, इस संसार में जन्म लेने वाले प्राणी जन्मपरम्परा से मुक्त हो जाते हैं। वृद्ध होने वाले प्राणी बुढापे से मुक्त हो

[N.5] आनन्द, परियायेन वेदितब्बं यथा सकलमेविदं ब्रह्मचरियं, यदिदं— कल्याणमित्तता कल्याणसहायता कल्याणसम्पवङ्कता'' ति॥ ●

३. सारिपुत्तसुत्तं

३. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—''सकलमिदं, भन्ते, ब्रह्मचरियं, यदिदं—कल्याणमित्तता कल्याणसहायता कल्याणसम्पवङ्कता'' ति।

''साधु साधु, सारिपुत्त! सकलमिदं, सारिपुत्त, ब्रह्मचरियं, यदिदं—कल्याण-मित्तता कल्याणसहायता कल्याणसम्पवङ्कता। कल्याणमित्तस्सेतं, सारिपुत्त, भिक्खुनो पाटिकङ्खं कल्याणसहायस्स कल्याणसम्पवङ्कस्स—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, सारिपुत्त, भिक्खु कल्याणमित्तो कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं [R.4] बहुलीकरोति? इध, सारिपुत्त, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विराग-निस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, सारिपुत्त, भिक्खु कल्याण-मित्तो कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति।

''तदमिनापेतं, सारिपुत्त, परियायेन वेदितब्बं यथा सकलमिदं ब्रह्मचरियं, [B.4] यदिदं—कल्याणमित्तता कल्याणसहायता कल्याणसम्पवङ्कता। ममं हि, सारिपुत्त, कल्याणमित्तं आगम्म जातिधम्मा सत्ता जातिया परिमुच्चन्ति; जराधम्मा सत्ता जराय

जाते हैं। मरने वाले प्राणी मृत्यु से मुक्त हो जाते हैं। तथा शोक, परिदेवादि से ग्रस्त प्राणी उन पीड़ाओं से मुक्त हो जाते हैं।

''आनन्द! इस तरह समझना चाहिये कि धर्मसाधना में कल्याणमित्र का मिलना मानो उस साधना की पूर्णता की ओर सङ्केत करता है''॥ ●

३. सारिपुत्रसूत्र : : कल्याणमित्र की उपलब्धि धर्मसाधना की द्योतक

३. ...**श्रावस्ती में** ही। ...आयुष्मान् सारिपुत्र...बोले—''भन्ते! यदि किसी को धर्मसाधना में कोई कल्याणमित्र मिल गया तो उसे अपनी धर्मसाधना पूर्ण सफल ही समझनी चाहिये।''

परिमुच्चन्ति; मरणधम्मा सत्ता मरणेन परिमुच्चन्ति; सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सु-पायासधम्मा सत्ता सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासेहि परिमुच्चन्ति। इमिना खो [N.6] एतं, सारिपुत्त, परियायेन वेदितब्बं यथा सकलमिदं ब्रह्मचरियं, यदिदं—कल्याणमित्तता कल्याणसहायता कल्याणसम्पवङ्कता'' ति॥ ●

४. जाणुस्सोणिब्राह्मणसुत्तं

४. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मा आनन्दो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थिं पिण्डाय पाविसि। अद्दसा खो आयस्मा आनन्दो जाणुस्सोणिं ब्राह्मणं सब्बसेतेन वळवाभिरथेन सावत्थिया निय्यायन्तं। सेता सुदं अस्सा युत्ता होन्ति सेतालङ्कारा, सेतो रथो, सेतपरिवारो, सेता रस्मियो, सेता पतोदलट्ठि, सेतं छत्तं, सेतं उण्हीसं, सेतानि वत्थानि, सेता उपाहना, सेताय सुदं वालबीजनिया बीजीयति। तमेनं जनो दिस्वा एवमाह—''ब्रह्मं वत, भो, यानं! ब्रह्मयानरूपं वत, भो'' ति!!

अथ खो आयस्मा आनन्दो सावत्थियं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपात-पटिक्कन्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं [R.5] निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

''इधाहं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थिं पिण्डाय पाविसिं। अद्दसं ख्वाहं, भन्ते, जाणुस्सोणिं ब्राह्मणं सब्बसेतेन वळवाभिरथेन सावत्थिया निय्यायन्तं। सेता सुदं अस्सा युत्ता होन्ति सेतालङ्कारा, सेतो रथो, सेतपरिवारो, सेता रस्मियो, सेता पतोदलट्ठि, सेतं छत्तं, सेतं उण्हीसं, सेतानि वत्थानि, सेता उपाहना, सेताय

''हाँ, सारिपुत्र! यदि...धर्मसाधना पूर्ण सफल ही समझनी चाहिये। ...पूर्ववत्... *(यहाँ भी पूर्वसूत्र का पाठ अविकल दुहरा लें।)* ●

४. जानुश्रोणिब्राह्मणसूत्र : : ब्रह्मयान

४. ...**श्रीवस्ती में** ही...। तब आयुष्मान् आनन्द पूर्वाह्ण में, वस्त्र व्यवस्थित कर, पात्रचीवर ले कर, **श्रावस्ती** में भिक्षाहेतु प्रविष्ट हुए। उस समय उन्होंने जानुश्रोणि ब्राह्मण को सर्वथा श्वेत परिधानयुक्त एवं श्वेत घोड़ी जुते रथ पर बैठ कर श्रावस्ती से निकलते हुए देखा। उस के रथ में श्वेत अलङ्कारों से युक्त, श्वेतवर्ण वाली घोड़ियाँ जुती हुई थीं, रथ भी श्वेत ही था, उस के साथ चलने वाले अङ्गरक्षक भी श्वेतपरिधानयुक्त थे। घोड़ों की लगाम, चाबुक, छत्र, पगड़ी, वस्त्र, जूते—सब कुछ श्वेत था, यहाँ तक पंखा भी श्वेत ही था। यह देख कर दर्शकों के मुख से अकस्मात् निकल जाता था कि ''ब्राह्मण का यान कितना सुन्दर है! मानो ब्रह्मयान हो।''

तब आयुष्मान् आनन्द श्रावस्ती में भिक्षा कर भोजनकर्म से निवृत्त हो कर भगवान्

सुदं वालबीजनिया बीजीयति। तमेनं जनो दिस्वा एवमाह—'ब्रह्मं वत, भो, यानं! ब्रह्मयानरूपं वत, भो' ति!! सक्का नु खो, भन्ते, इमस्मिं धम्मविनये ब्रह्मयानं पञ्ञापेतुं'' ति?

[B.5] ''सक्का, आनन्दा!'' ति भगवा अवोच—''इमस्सेव खो एतं, आनन्द, अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स अधिवचनं—'ब्रह्मयानं' इति पि, 'धम्मयानं' इति पि, 'अनुत्तरो सङ्गामविजयो' इति पी ति।

''सम्मादिट्ठि, आनन्द, भाविता बहुलीकता रागविनयपरियोसाना होति, दोस-[N.7] विनयपरियोसाना होति, मोहविनयपरियोसाना होति। सम्मासङ्कप्पो, आनन्द, भावितो बहुलीकतो रागविनयपरियोसानो होति, दोसविनयपरियोसानो होति, मोहविनयपरियोसानो होति। सम्मावाचा, आनन्द, भाविता बहुलीकता रागविनय-परियोसाना होति...मोहविनयपरियोसाना होति। सम्माकम्मन्तो आनन्द, भावितो बहुलीकतो रागविनयपरियोसानो होति...मोहविनयपरियोसानो होति। सम्माआजीवो, आनन्द, भावितो बहुलीकतो रागविनयपरियोसानो होति... मोहविनयपरियोसानो होति। सम्मावायामो, आनन्द, भावितो बहुलीकतो रागविनयपरियोसानो होति...मोह-विनयपरियोसानो होति। सम्मासति, आनन्द, भाविता बहुलीकता रागविनयपरियोसाना होति...मोहविनयपरियोसाना होति। सम्मासमाधि, आनन्द, भावितो बहुलीकतो [R.6] रागविनयपरियोसानो होति...मोहविनयपरियोसानो होति।

''इमिना खो एतं, आनन्द, परियायेन वेदितब्बं यथा इमस्सेवेतं अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स अधिवचनं—'ब्रह्मयानं' इति पि, 'धम्मयानं' इति पि, 'अनुत्तरो सङ्गामविजयो' इति पी'' ति।

के पास गये तथा जाणुश्रोणि ब्राह्मण की यात्रा का वह अद्भुत वृत्तान्त (पूर्ववत्) सुनाते हुए पूछा—''भन्ते! इस (आप के) धर्मविनय में भी कोई यान है जिसे 'ब्रह्मयान' कहा जा सके?''

''हाँ, हमारे यहाँ भी ऐसा यान है। हमारे इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग को तुम 'ब्रह्मयान' भी कह सकते हो, 'धर्मयान' भी कह सकते हो, 'अनुत्तर संग्रामविजय' भी कह सकते हो।

''आनन्द! सम्यग्दृष्टि के चिन्तन तथा अभ्यास से राग, द्वेष एवं मोह का अन्त हो जाता है। सम्यक्सङ्कल्प के चिन्तन तथा अभ्यास से राग, द्वेष एवं मोह का अन्त हो जाता है। सम्यग्वाक् के...सम्यक्कर्मान्त के...सम्यगाजीव के...सम्यग्व्यायाम के...सम्यक्स्मृति के...सम्यक्समाधि के चिन्तन तथा अभ्यास से राग, द्वेष एवं मोह का अन्त हो जाता है।

५. इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—

"यस्स सद्धा च पञ्ञा च, धम्मा युत्ता सदा धुरं।
हिरी ईसा मनो योत्तं, सति आरक्खसारथि॥
"रथो सीलपरिक्खारो, झानक्खो चक्कवीरियो।
उपेक्खा धुरसमाधि, अनिच्छा परिवारणं॥
"अब्यापादो अविहिंसा, विवेको यस्स आवुधं।
तितिक्खा चम्मसन्नाहो, योगक्खेमाय वत्तति॥
"एतदत्तनि सम्भूतं, ब्रह्मयानं अनुत्तरं। [B.6]
निय्यन्ति धीरा लोकम्हा, अञ्ञदत्थु जयं जयं"॥ ति॥

५. किमत्थियसुत्तं

६. सावत्थिनिदानं। अथ खो सम्बहुला भिक्खू येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु...पे०... एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं— [N.8]

"इध नो, भन्ते, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका अम्हे एवं पुच्छन्ति—'किमत्थियं, आवुसो, समणे गोतमे ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति? एवं पुट्ठा मयं, भन्ते, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरोम—'दुक्खस्स खो, आवुसो, परिञ्ञत्थं

आनन्द! इस दृष्टि से भी समझना चाहिये कि इसी आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग को 'ब्रह्मयान' कहते हैं, धर्मयान भी तथा अनुत्तर संग्रामविजय भी।"

५. भगवान् ने यह कहा। तथा वे गाथाओं के माध्यम से भी यों बोले—

"जिस की धुरी में श्रद्धा एवं प्रज्ञा सम्पृक्त हैं। ह्री ईषा के समान तथा मन योक्त्र (लगाम), एवं स्मृति ही सावधान सारथि है॥

"शील के साधनों वाले रथ में, ध्यान अक्ष, वीर्य चक्र, उपेक्षा समाधि की धुरी, अनित्य बुद्धि (अनिच्छा) परिवारण (ढक्कन) है॥

"अव्यापाद (अद्वेष), अहिंसा, विवेक ही जिस के आयुध हैं। तितिक्षा (सहनशीलता=क्षमा) ही जिस का सन्नद्ध वर्म (कवच) है, जो रक्षा के निमित्त लगा है॥

"इस लोकोत्तर ब्रह्मयान को अपना बना कर धीर पुरुष इस संसार से निकलते हैं तो उन की परम विजय सुनिश्चित है"॥

५. किमर्थियसूत्र : : दुःखज्ञान का मार्ग

६. ...**श्रावस्ती में** ही...। तब बहुत से भिक्षु भगवान् के पास पहुँचे...। एक ओर बैठ कर उन्होंने भगवान् से पूछा—"भन्ते! ये अन्य सम्प्रदायवाले परिव्राजक हम से जब तब पूछते रहते हैं कि आप लोग श्रमण गौतम के अनुशासन में किसलिये धर्मसाधना करते

भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति। कच्चि मयं, भन्ते, एवं पुट्ठा एवं ब्याकरमाना [R.7] वुत्तवादिनो चेव भगवतो होम, न च भगवन्तं अभूतेन अब्भाचिक्खाम, धम्मस्स चानुधम्मं ब्याकरोम, न च कोचि सहधम्मिको वादानुवादो गारय्हं ठानं आगच्छती'' ति?

''तग्घ तुम्हे, भिक्खवे, एवं पुट्ठा एवं ब्याकरमाना वुत्तवादिनो चेव मे होथ, न च मं अभूतेन अब्भाचिक्खथ, धम्मस्स चानुधम्मं ब्याकरोथ, न च कोचि सहधम्मिको वादानुवादो गारय्हं ठानं आगच्छति। दुक्खस्स हि परिञ्ञत्थं मयि ब्रह्मचरियं वुस्सति। सचे वो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—'अत्थि पनावुसो, मग्गो, अत्थि पटिपदा एतस्स दुक्खस्स परिञ्ञाया' ति, एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथ—'अत्थि खो, आवुसो, मग्गो, अत्थि पटिपदा एतस्स दुक्खस्स परिञ्ञाया' ति।

''कतमो च, भिक्खवे, मग्गो, कतमा पटिपदा एतस्स दुक्खस्स परिञ्ञाया ति? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। अयं, भिक्खवे, मग्गो, अयं पटिपदा एतस्स दुक्खस्स परिञ्ञाया ति। एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथा'' ति॥ •

हैं? इस पर हम उन्हें बताते हैं—'आयुष्मानो! दुःख की परिज्ञा (पहचान) हेतु हम लोग वहाँ धर्मसाधना करते हैं'। क्या, भन्ते! ऐसा पूछे जाने पर हमारा यह उत्तर आप भगवान् के अनुकूल ही है ना! ऐसा कह कर हम असत्य तो नहीं बोलते, या आप पर किसी प्रकार का मिथ्या आरोप तो नहीं लगाते? फिर हम यह सब धर्मानुसार ही कहते हैं ना! इस उत्तर से आपकी किसी प्रकार की निन्दा तो नहीं होती?''

''भिक्षुओ! तुम उन्हें इस प्रकार उत्तर दे कर मेरे अनुकूल ही बोलते हो। मुझ पर कोई मिथ्या आरोप नहीं लगाते; क्योंकि, भिक्षुओ! दुःख की पहचान (परिज्ञा) के लिये ही धर्म का पालन किया जाता है। अब यदि वे अन्य सम्प्रदाय के परिव्राजक तुम से इस धर्मसाधना का कोई मार्ग पूछें तो तुम उन्हें यह बताना—''हाँ, आयुष्मानो! इस धर्मसाधना का मार्ग भी है जिस से उस 'दुःख' की पहचान करना सुकर हो जाता है।

''भिक्षुओ! वह मार्ग क्या है जिस पर चलने से इस 'दुःख' का ज्ञान सुकर हो जाता है? यह आर्यअष्टाङ्गिक मार्ग ही वह उपाय है जिस से वह दुःखज्ञान सुकर हो जाता है; जैसे—सम्यग्दृष्टि...पूर्ववत्...सम्यक्समाधि। यही मार्ग (उपाय) उस दुःखज्ञान को सुगम बनाता है। भिक्षुओ! यदि वे अन्य सम्प्रदायवाले परिव्राजक तुम से इस विषय में पूछें तो तुम यही बताना॥'' •

६. पठमअञ्ञतरभिक्खुसुत्तं

७. सावत्थिनिदानं। अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि...[B.7] पे०... एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"'ब्रह्मचरियं, ब्रह्मचरियं' ति, भन्ते, वुच्चति। कतमं नु खो, भन्ते, ब्रह्मचरियं, कतमं ब्रह्मचरियपरियोसानं" ति?

"अयमेव खो, भिक्खु, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो ब्रह्मचरियं, सेय्यथीदं—[R.8] सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। यो खो, भिक्खु, रागक्खयो दोसक्खयो मोहक्खयो—इदं ब्रह्मचरियपरियोसानं" ति॥ •

७. दुतियअञ्ञतरभिक्खुसुत्तं

८. सावत्थिनिदानं। अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि...पे०... एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच— [N.9]

"'रागविनयो दोसविनयो मोहविनयो' ति, भन्ते, वुच्चति। किस्स नु खो एतं, भन्ते, अधिवचनं—'रागविनयो दोसविनयो मोहविनयो'" ति?

"निब्बानधातुया खो एतं, भिक्खु, अधिवचनं—'रागविनयो दोसविनयो मोहविनयो' ति। आसवानं खयो तेन वुच्चती" ति।

एवं वुत्ते सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"'अमतं, अमतं' ति, भन्ते, वुच्चति। कतमं नु खो, भन्ते, अमतं, कतमो अमतगामिमग्गो" ति?

---

६. प्रथम अन्यतरभिक्षुसूत्र : : धर्मसाधना क्या है?

७. ...**श्रावस्ती में** ही...। तब कोई भिक्षु भगवान् के पास आया...पूर्ववत्...यों बोला—"भन्ते! 'धर्मसाधना', 'धर्मसाधना' लोग कहते हैं, भन्ते! यह धर्मसाधना क्या है? तथा इस धर्मसाधना का अन्त कहाँ होता है?"

"भिक्षु! यह आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग धर्मसाधना है; जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। इस साधना से राग, द्वेष एवं मोह का क्षय हो जाने पर इस धर्मसाधना का पर्यवसान (अन्त) मान लिया जाता है"॥ •

७. द्वितीय अन्यतरभिक्षुसूत्र : : अमृत क्या है?

८. ...**श्रावस्ती में** ही...। ..."भन्ते! लोग 'राग, द्वेष एवं मोह का दबाना' कहते रहते हैं, भन्ते! यह 'राग, द्वेष एवं मोह का दबाना' क्या है?"

"भिक्षु! यह 'निर्वाण प्राप्त करना' ही 'राग, द्वेष एवं मोह का दबाना' कहलाता है। अर्थात् चित्तविकारों का क्षय।"

तब वह भिक्षु भगवान् से यों पूछने लगा—"भन्ते! लोग 'अमृत, अमृत' भी कहते रहते हैं, यह 'अमृत' क्या है?"

"यो खो, भिक्खु, रागक्खयो दोसक्खयो मोहक्खयो—इदं वुच्चति अमतं। अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो अमतगामिमग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०... सम्मासमाधी" ति॥ •

८. विभङ्गसुत्तं

९. सावत्थिनिदानं। अरियं वो, भिक्खवे, अट्ठङ्गिकं मग्गं देसेस्सामि विभजिस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

"कतमो च, भिक्खवे, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्मासमाधि।

[B.8] "कतमा च, भिक्खवे, सम्मादिट्ठि? यं खो, भिक्खवे, दुक्खे ञाणं, दुक्खसमुदये [R.9] ञाणं, दुक्खनिरोधे ञाणं, दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय ञाणं—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मादिट्ठि। (१)

"कतमो च, भिक्खवे, सम्मासङ्कप्पो? यो खो, भिक्खवे, नेक्खम्मसङ्कप्पो अब्यापादसङ्कप्पो अविहिंसासङ्कप्पो—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मासङ्कप्पो। (२)

"कतमा च, भिक्खवे, सम्मावाचा? या खो, भिक्खवे, मुसावादा वेरमणी, पिसुणाय वाचाय वेरमणी, फरुसाय वाचाय वेरमणी, सम्फप्पलापा वेरमणी—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मावाचा। (३)

"भिक्षु! यह जो राग, द्वेष एवं मोह का क्षय है इसे ही लोग 'अमृत' कहते हैं। तथा यह आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग उस 'अमृत' की अधिगति का उपाय है। जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि॥ •

८. विभङ्गसूत्र : : आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग

९. ...**श्रावस्ती** जेतवन में...। "भिक्षुओ! मैं तुम्हें आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग का विभागशः उपदेश करूँगा। उसे सुनो, तथा उसे ठीक से मन में बैठा लो।" "अच्छा, भन्ते" कह कर भिक्षुओं ने स्वीकार किया। भगवान् यों बोले—

"भिक्षुओ! आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग क्या होता है? यही सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि।

"भिक्षुओ! यह 'सम्यग्दृष्टि' क्या कहलाती है? दुःख एवं दुःखसमुदय का ज्ञान, दुःखनिरोध एवं दुःखनिरोधगामी मार्ग का ज्ञान। यही सम्यग्दृष्टि कहलाती है। (१)

"भिक्षुओ! 'सम्यक्सङ्कल्प' क्या है? भिक्षुओ! नैष्कर्म्य (त्याग) का सङ्कल्प, तथा वैर एवं हिंसा से दूर रहने का सङ्कल्प—यही 'सम्यक्सङ्कल्प' कहलाता है। (२)

''कतमो च, भिक्खवे, सम्माकम्मन्तो? या खो, भिक्खवे, पाणातिपाता [N.10] वेरमणी, अदिन्नादाना वेरमणी, अब्रह्मचरिया वेरमणी—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्माकम्मन्तो। (४)

''कतमो च. भिक्खवे, सम्माआजीवो? इध, भिक्खवे, अरियसावको मिच्छा-आजीवं पहाय सम्माआजीवेन जीवितं कप्पेति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मा-आजीवो। (५)

''कतमो च, भिक्खवे, सम्मावायामो? इध, भिक्खवे, भिक्खु अनुप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं अनुप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति, उप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय छन्दं जनेति...पे०... अनुप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं उप्पादाय छन्दं जनेति...पे०...उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मावायामो। (६)

''कतमा च, भिक्खवे, सम्मासति? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु वेदनानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं;

''भिक्षुओ! यह 'सम्यग्वाक्' क्या है? भिक्षुओ! असत्यभाषण, चुगली, कटु भाषण तथा गल्प (गप) हाँकने से दूर रहना ही 'सम्यग्वाक्' है। (३)

''भिक्षुओ! यह 'सम्यक्कर्मान्त' क्या है? भिक्षुओ! जीवहिंसा, चौरी एवं व्यभिचार से दूर रहना ही 'सम्यक्कर्मान्त' है। (४)

''भिक्षुओ! यह 'सम्यगाजीव' क्या है? भिक्षुओ! मिथ्या आजीविका से दूर रहते हुए सम्यक् आजीविका से जीवन-व्यवहार चलाना ही 'सम्यगाजीव' है। (५)

''भिक्षुओ! यह 'सम्यग्व्यायाम' क्या है? भिक्षुओ! अनुत्पन्न पापमय, अकुशल धर्मों के अनुत्पाद के लिये इच्छा करना, प्रयत्न करना, उत्साह करना तथा एतदर्थ मन से सावधान रहना; उत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों के प्रहाणहेतु इच्छा करना...; अनुत्पन्न कुशल धर्मों के उत्पादहेतु इच्छा करना; उत्पन्न कुशल धर्मों की स्थिति, वृद्धि तथा पूर्णता के लिये इच्छा करना, प्रयत्न करना, उत्साह करना तथा एतदर्थ मन से सावधान रहना—भिक्षुओ! यही 'सम्यग्व्यायाम' कहलाता है। (६)

''भिक्षुओ! यह 'सम्यक्स्मृति' क्या है? भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर क्लेशों को तपाते हुए स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ हो कर सांसारिक लोभ

[R.10] चित्ते चित्तानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मासति। (७)

[B.9] ''कतमो च, भिक्खवे, सम्मासमाधि? इध, भिक्खवे, भिक्खु विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। पीतिया च विरागा उपेक्खको च विहरति सतो च सम्पजानो, सुखं च कायेन पटिसंवेदेति, यं तं अरिया आचिक्खन्ति—'उपेक्खको सतिमा सुखविहारी' ति ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा [N.11] अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मासमाधी'' ति॥ (८) ●

९. सूकसुत्तं

१०. सावत्थिनिदानं। ''सेय्यथापि, भिक्खवे, सालिसूकं वा यवसूकं वा मिच्छापणिहितं हत्थेन वा पादेन वा अक्कन्तं हत्थं वा पादं वा भिन्दिस्सति, लोहितं वा उप्पादेस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति। तं किस्स हेतु? मिच्छापणिहितत्ता, भिक्खवे, सूकस्स। एवमेव खो, भिक्खवे, सो वत भिक्खु मिच्छापणिहिताय दिट्ठिया मिच्छापणिहिताय मग्गभावनाय अविज्जं भिन्दिस्सति, विज्जं उप्पादेस्सति, निब्बानं

एवं दौर्मनस्य को दबा कर साधना करता है; वेदना में वेदनानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्; चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर; तथा धर्मों में धर्मानुपश्यी होकर...साधना करता है; भिक्षुओ! इन्हीं क्रियाओं को 'सम्यक्स्मृति' कहते हैं। (७)

''भिक्षुओ! यह 'सम्यक्समाधि' क्या होती है? कामभोग एवं अकुशल धर्मों से दूर रहते हुए, वितर्क एवं विचार सहित प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान...पूर्ववत्...द्वितीय ध्यान...तृतीय ध्यान...चतुर्थ ध्यान प्राप्त कर साधना करना ही 'सम्यक्समाधि' है। भिक्षुओ! इसी को 'सम्यक्समाधि' कहते हैं॥ (८)

९. शूकसूत्र : : सम्यक् धारणा से निर्वाणप्राप्ति

१०. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! जैसे कोई शालि एवं यव का शूक (धान का तीक्ष्ण अग्रभाग) ठीक से न रखा गया हो तो हाथ या पैर से स्पर्श करने पर उसे बींध देगा, या उस में से रक्त बहा देगा—यह सम्भव नहीं; क्योंकि वह ठीक ढंग से नहीं रखा गया है। इसी तरह, भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु मिथ्या धारणा का आलम्बन कर, मार्ग

सच्छिकरिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति। तं किस्स हेतु? मिच्छापणिहितत्ता, भिक्खवे, दिट्ठिया।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, सालिसूकं वा यवसूकं वा सम्मापणिहितं हत्थेन वा पादेन वा अक्कन्तं हत्थं वा पादं वा भिन्दिस्सति, लोहितं वा उप्पादेस्सती ति—ठानमेतं विज्जति। तं किस्स हेतु? सम्मापणिहितत्ता, भिक्खवे, सूकस्स। एवमेव खो, [R.11] भिक्खवे, सो वत भिक्खु सम्मापणिहिताय दिट्ठिया सम्मापणिहिताय मग्गभावनाय अविज्जं भिन्दिस्सति, विज्जं उप्पादेस्सति, निब्बानं सच्छिकरिस्सती ति—ठानमेतं विज्जति। तं किस्स हेतु? सम्मापणिहितत्ता, भिक्खवे, दिट्ठिया।

"कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सम्मापणिहिताय दिट्ठिया सम्मापणिहिताय मग्ग-भावनाय अविज्जं भिन्दति, विज्जं उप्पादेति, निब्बानं सच्छिकरोती ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं [B.10] वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोध-निस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सम्मापणिहिताय दिट्ठिया सम्मापणिहिताय मग्गभावनाय अविज्जं भिन्दति, विज्जं उप्पादेति, निब्बानं सच्छिकरोती" ति॥ ●

का अन्यथा पद्धति से अभ्यास कर अपनी अविद्या का नाश कर लेगा, तथा विद्या उत्पन्न कर लेगा—यह सम्भव नहीं; क्योंकि उस ने मिथ्या धारणा का आलम्बन किया है।

"परन्तु, भिक्षुओ! कोई शालि एवं यव का शूक ठीक से रखा गया हो तो वह हाथ या पैर से स्पर्श करने पर उसे बींध देगा, या उस में से रक्त बहा देगा—यह अवश्य सम्भव है; क्योंकि वह ठीक ढंग से रखा गया है। इसी तरह, भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु सम्यग् धारणा (दृष्टि) का आलम्बन कर, मार्ग का सम्यक् पद्धति से अभ्यास कर अपनी अविद्या का नाश कर लेगा तथा विद्या का उत्पाद कर लेगा—यह सम्भव है; क्योंकि उस ने सम्यग्दृष्टि का आलम्बन किया है।

"कैसे, भिक्षुओ! वह साधक भिक्षु सम्यक्प्रणिहित दृष्टि से मार्ग का सम्यग् रीति से अभ्यास करते हुए अपनी अविद्या का प्रहाण एवं विद्या का उत्पाद तथा निर्वाण का साक्षात्कार कर सकता है? भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु सम्यग्दृष्टि का आलम्बन (चिन्तन) कर, विवेक वैराग्य, निरोध एवं त्याग की ओर ले जाने वाले मार्ग (समाधि) का सम्यक् अभ्यास करता है; भिक्षुओ! वही भिक्षु सम्यग्धारणा से युक्त हो कर, अपनी अविद्या का प्रहाण कर, विद्या का उत्पाद कर पाता है तथा निर्वाण का साक्षात्कार कर सकता है"॥●

१०. नन्दियसुत्तं

११. सावत्थिनिदानं। अथ खो नन्दियो परिब्बाजको येन भगवा तेनुपसङ्कमि; [N.12] उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो नन्दियो परिब्बाजको भगवन्तं एतदवोच— "कति नु खो, भो गोतम, धम्मा भाविता बहुलीकता निब्बानङ्गमा होन्ति निब्बानपरायना निब्बानपरियोसाना" ति?

"अट्ठिमे खो, नन्दिय, धम्मा भाविता बहुलीकता निब्बानङ्गमा होन्ति निब्बान-परायना निब्बानपरियोसाना। कतमे अट्ठ? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मा-समाधि। इमे खो, नन्दिय, अट्ठ धम्मा भाविता बहुलीकता निब्बानङ्गमा होन्ति निब्बानपरायना निब्बानपरियोसाना" ति।

एवं वुत्ते नन्दियो परिब्बाजको भगवन्तं एतदवोच—"अभिक्कन्तं, भो गोतम, [R.12] अभिक्कन्तं, भो गोतम...पे०...उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥

अविज्जावग्गो पठमो॥

तस्सुद्दानं

अविज्जं च उपड्ढं च, सारिपुत्तो च ब्राह्मणो।
किमत्थियो च द्वे भिक्खू, विभङ्गो सूकनन्दिया ति॥

---

१०. नन्दियसूत्र : : निर्वाणप्राप्ति के आठ धर्म

११. ...**श्रावस्ती में** ही...। तब नन्दिय परिव्राजक भगवान् के पास गया...एक ओर बैठे हुए उस ने भगवान् से पूछा—"भो गौतम! भली भाँति चिन्तित, साधनाकृत कितने धर्म साधक को निर्वाण की ओर प्रवृत्त करा सकते हैं?"

"नन्दिय! ये आठ धर्म यदि भली भाँति चिन्तित एवं अभ्यस्त किये जायँ, इन की साधना की जाय तो ये साधक भिक्षु को निर्वाण की ओर पहुँचा सकते हैं, उस का साक्षात्कार करा सकते हैं। कौन से आठ? सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि।"

ऐसा कहे जाने पर उस नन्दिय परिव्राजक ने भगवान् से निवेदन किया—"भन्ते! आप ने निर्वाणप्राप्ति का बहुत सुगम मार्ग बताया।...पूर्ववत्...आज से आप मुझे जीवनपर्यन्त अपना उपासक समझें"॥

अविद्यावर्ग प्रथम सम्पन्न॥

इस (अविद्या) वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची— १. अविद्यासूत्र, २. उपार्धसूत्र, ३. सारिपुत्रसूत्र, ४. जानुश्रोणिब्राह्मणसूत्र, ५. किमर्थीयसूत्र, ६. प्रथम अन्यतरभिक्षुसूत्र, ७. द्वितीय अन्यतरभिक्षुसूत्र, ८. विभङ्गसूत्र, ९. शूकसूत्र एवं १०. नन्दियसूत्र॥ •

२. विहारवग्गो दुतियो

११. पठमविहारसुत्तं

१२. सावत्थिनिदानं। "इच्छामहं, भिक्खवे, अड्ढमासं पटिसल्लियितुं। नम्हि [B.11] केनचि उपसङ्कमितब्बो, अञ्ञत्र एकेन पिण्डपातनीहारकेना" ति। "एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पटिस्सुत्वा नास्सुध कोचि भगवन्तं उपसङ्कमति, अञ्ञत्र एकेन पिण्डपातनीहारकेन।

अथ खो भगवा तस्स अड्ढमासस्स अच्चयेन पटिसल्लाना वुट्ठितो भिक्खू आमन्तेसि—"येन स्वाहं, भिक्खवे, विहारेन पठमाभिसम्बुद्धो विहरामि, तस्स पदेसेन विहासिं। सो एवं पजानामि—'मिच्छादिट्ठिपच्चया पि वेदयितं; सम्मादिट्ठिपच्चया पि [N.13] वेदयितं...पे०...मिच्छासमाधिपच्चया पि वेदयितं; सम्मासमाधिपच्चया पि वेदयितं; छन्दपच्चया पि वेदयितं; वितक्कपच्चया पि वेदयितं; सञ्ञापच्चया पि वेदयितं; छन्दो च अवूपसन्तो होति, वितक्को च अवूपसन्तो होति, सञ्ञा च अवूपसन्ता होति, [R.13] तप्पच्चया पि वेदयितं; छन्दो च वूपसन्तो होति, वितक्को च वूपसन्तो होति, सञ्ञा च वूपसन्ता होति, तप्पच्चया पि वेदयितं; अप्पत्तस्स पत्तिया अत्थि आयामं, तस्मिं पि ठाने अनुप्पत्ते तप्पच्चया पि वेदयितं''' ति॥ •

---

२. विहारवर्ग द्वितीय

११. प्रथम विहारसूत्र : : भगवान् बुद्ध का एकान्तवास

१२. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! अब मैं एक मास पन्द्रह दिन (डेढ मास) एकान्त में रह कर ध्यानभावना करना चाहता हूँ। इस अवधि (डेढ मास) में मेरे पास, एक भोजन लाने वाले को छोड़ कर, कोई न आवे।" भिक्षुओं ने "अच्छा, भन्ते!" कह कर भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। तथा इस अवधि में, उन के पास, एक भोजन पहुँचाने वाले को छोड़ कर, कोई भी नहीं गया।

तब डेढ मास की अवधि बीतने के बाद, भगवान् ने ध्यानभावना से उठ कर भिक्षुओं को बुला कर यों धर्मोपदेश किया—"भिक्षुओ! मैं इस अवधि में, उसी ध्यानभावना से साधना कर रहा था जो प्रथम अभिसम्बोधि के समय लगायी थी। उस के आधार पर मुझे यह ज्ञात हुआ है—'मिथ्यादृष्टि के कारण भी वेदना अनुभूत होती है तो सम्यग्दृष्टि के कारण भी वेदना होती है; मिथ्या समाधि तथा सम्यक्समाधि के कारण भी वेदनाएँ होती हैं; छन्द (इच्छा) वितर्क एवं संज्ञा के कारण भी वेदनाएँ होती हैं; अशान्त इच्छा, अशान्त वितर्क एवं अशान्त संज्ञा के कारण भी वेदनाएं होती रहती हैं; (इसी तरह) शान्त इच्छा, शान्त वितर्क एवं शान्त संज्ञा के कारण भी वेदना होती है। अप्राप्त (अर्हत्त्व=निर्वाण) की

१२. दुतियविहारसुत्तं

१३. सावत्थिनिदानं। "इच्छामहं, भिक्खवे, तेमासं पटिसल्लियितुं। नम्हि केनचि उपसङ्कमितब्बो, अञ्ञत्र एकेन पिण्डपातनीहारकेना" ति। "एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पटिस्सुत्वा नास्सुध कोधि भगवन्तं उपसङ्कमति, अञ्ञत्र एकेन पिण्डपातनीहारकेन।

अथ खो भगवा तस्स तेमासस्स अच्चयेन पटिसल्लाना वुट्ठितो भिक्खू आमन्तेसि— "येन स्वाहं, भिक्खवे, विहारेन पठमाभिसम्बुद्धो विहरामि, तस्स पदेसेन विहासिं। सो एवं पजानामि—'मिच्छादिट्ठिपच्चया पि वेदयितं; मिच्छादिट्ठिवूपसमपच्चया पि वेदयितं; सम्मादिट्ठिपच्चया पि वेदयितं; सम्मादिट्ठिवूपसमपच्चया पि वेदयितं...पे०...मिच्छासमाधिपच्चया पि वेदयितं; मिच्छासमाधिवूपसमपच्चया पि वेदयितं; सम्मासमाधिपच्चया पि वेदयितं; सम्मासमाधिवूपसमपच्चया पि वेदयितं; छन्दपच्चया पि वेदयितं; छन्दवूपसमपच्चया पि वेदयितं; वितक्कपच्चया पि वेदयितं; वितक्कवूपसमपच्चया पि वेदयितं; सञ्ञापच्चया पि वेदयितं; सञ्ञावूपसमपच्चया पि वेदयितं; छन्दो च अवूपसन्तो होति, वितक्को च अवूपसन्तो होति, सञ्ञा [B.12, R.14] च अवूपसन्ता होति, तप्पच्चया पि वेदयितं; छन्दो च वूपसन्तो होति, वितक्को च वूपसन्तो होति, सञ्ञा च वूपसन्ता होति, तप्पच्चया पि वेदयितं; अप्पत्तस्स पत्तिया अत्थि आयामं, तस्मिं पि ठाने अनुप्पत्ते तप्पच्चया पि वेदयितं''' ति॥ •

प्राप्तिहेतु कृत प्रयास के कारण भी तथा उस स्थान (अर्हत्त्व) तक न पहुँच पाने के कारण भी वेदना होती है"॥ •

१२. द्वितीय विहारसूत्र : : भगवान् का एकान्तवास

१३. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! अब मैं एक मास पन्द्रह दिन...पूर्ववत्...छोड़ कर कोई भी नहीं गया। तब तीन मास की साधना से उठ कर भगवान् ने भिक्षुओं को यों धर्मोपदेश किया—"भिक्षुओ! मैं उसी ध्यानभावना से साधना कर रहा था, जिस ध्यानभावना के सहारे प्रथम अभिसम्बोधि प्राप्त करते समय साधना की थी। इस से मैं यह जान पाया— मिथ्यादृष्टि के कारण भी, मिथ्यादृष्टि के शान्त होने पर भी; सम्यग्दृष्टि के कारण भी, सम्यग्दृष्टि के शान्त होने पर भी; मिथ्यासमाधि के कारण भी, मिथ्यासमाधि के शान्त होने पर भी; सम्यक्समाधि के कारण भी, सम्यक्समाधि के शान्त होने पर भी; छन्द के कारण भी, छन्द के शान्त होने के कारण भी; वितर्क के कारण भी, वितर्क के शान्त होने पर भी; संज्ञा के कारण भी, संज्ञा के शान्त होने के कारण भी, जब छन्द, वितर्क एवं संज्ञा शान्त न हो जायँ—इस कारण भी, या फिर छन्द, वितर्क एवं संज्ञा शान्त हो जायँ—इस कारण

१३. सेक्खसुत्तं

[N.14] १४. सावत्थिनिदानं। अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि...पे०... एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"'सेक्खो, सेक्खो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, सेक्खो होती" ति?

"इध, भिक्खु, सेक्खाय सम्मादिट्ठिया समन्नागतो होति...पे०...सेक्खेन सम्मा-समाधिना समन्नागतो होति। एत्तावता खो, भिक्खु, सेक्खो होती" ति॥

१४. पठमउप्पादसुत्तं

१५. सावत्थिनिदानं। "अट्ठिमे, भिक्खवे, धम्मा भाविता बहुलीकता अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र तथागतस्स पातुभावा अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। कतमे अट्ठ? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ धम्मा भाविता बहुलीकता अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र तथागतस्स पातुभावा अरहतो सम्मा-सम्बुद्धस्सा" ति॥

१५. दुतियउप्पादसुत्तं

१६. सावत्थिनिदानं। "अट्ठिमे, भिक्खवे, धम्मा भाविता बहुलीकता अनुप्पन्ना [R 15] उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे अट्ठ? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...

भी; अप्राप्त (निर्वाण) की प्राप्तिहेतु कृत प्रयास के कारण भी तथा उस स्थान तक न पहुँच पाने के कारण भी वेदनाएँ होती रहती हैं"॥

: :

१३. शैक्ष्यसूत्र — **शैक्ष्य**

१४. ...**श्रावस्ती में** ही...। तब कोई भिक्षु भगवान् के पास आया...तथा यह पूछने लगा—"भन्ते! लोग 'शैक्ष्य, शैक्ष्य' ऐसा कहते रहते हैं, यह 'शैक्ष्य' कैसे होता है?

"यहाँ कोई साधक भिक्षु शैक्ष्य सम्यग्दृष्टि से युक्त होता है, ...पूर्ववत्...शैक्ष्य समाधि से युक्त होता है, भिक्षु! यही 'शैक्ष्य' कहलाता है॥"

: :

१४. प्रथम उत्पादसूत्र — **बुद्धोत्पत्ति के विना धर्मचिन्तन असम्भव**

१५. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! अर्हत्, सम्यक्सम्बुद्ध तथागत की उत्पत्ति के विना पहले कभी उत्पन्न न हुए इन आठ धर्मों का चिन्तन तथा अभ्यास सम्भव नहीं है। कौन से आठ धर्म? जैसे—१. सम्यग्दृष्टि...पूर्ववत्...८. सम्यक्समाधि। भिक्षुओं! अर्हत्, सम्यक्सम्बुद्ध तथागत के उत्पाद के विना इन आठ धर्मों का चिन्तन तथा अभ्यास सम्भव नहीं है"॥

: :

१५. द्वितीय उत्पादसूत्र — **बुद्धानुशासन विना अभ्यास असम्भव**

१६. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! अर्हत्, सम्यक्सम्बुद्ध तथागत की उत्पत्ति

सम्मासमाधि। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ धम्मा भाविता बहुलीकता अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया'' ति॥ •

१६. पठमपरिसुद्धसुत्तं

१७. सावत्थिनिदानं। ''अट्ठिमे, भिक्खवे, धम्मा परिसुद्धा परियोदाता अनङ्गणा विगतूपक्किलेसा अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र तथागतस्स पातुभावा अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। कतमे अट्ठ? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ धम्मा परिसुद्धा परियोदाता अनङ्गणा विगतूपक्किलेसा [N.15, B.13] अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र तथागतस्स पातुभावा अरहतो सम्मासम्बुद्धस्सा'' ति॥•

१७. दुतियपरिसुद्धसुत्तं

१८. सावत्थिनिदानं। ''अट्ठिमे, भिक्खवे, धम्मा परिसुद्धा परियोदाता अनङ्गणा विगतूपक्किलेसा अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे अट्ठ? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ धम्मा परिसुद्धा परियोदाता अनङ्गणा विगतूपक्किलेसा अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया'' ति॥ •

१८. पठमकुक्कुटारामसुत्तं

१९. एवं मे सुतं। एकं समयं आयस्मा च आनन्दो आयस्मा च भद्दो पाटलिपुत्ते विहरन्ति कुक्कुटारामे। अथ खो आयस्मा भद्दो सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मता आनन्देन सद्धिं सम्मोदि।

तथा उन के उपदेश के विना ये आठ धर्म...पूर्ववत्...चिन्तन तथा अभ्यास सम्भव नहीं है''॥ •

१६. प्रथम परिशुद्धसूत्र : : धर्म बुद्धोत्पत्ति के विना सम्भव नहीं

१७. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! ये आठ परिशुद्ध, पर्यवदात, निर्विकार, निर्दोष तथा पहले कभी उत्पन्न न हुए धर्म उत्पन्न नहीं होते, जब तक कि अर्हत्, सम्यक्सम्बुद्ध का उत्पाद न हो जाय। जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। ...पूर्ववत्... ॥''•

१७. द्वितीय परिशुद्धसूत्र : : धर्म बुद्धानुशासन विना सम्भव नहीं

१८. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! ये आठ परिशुद्ध, पर्यवदात, निर्विकार, निर्दोष तथा पहले कभी न उत्पन्न हुए धर्म बुद्धोपदेश (बुद्धविनय) के विना सम्भव नहीं हैं; जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। ...पूर्ववत्... ॥'' •

१८. प्रथम कुक्कुटारामसूत्र : : मिथ्या धर्मसाधना क्या है?

१९. ऐसा मैंने सुना है। एक समय आयुष्मान् आनन्द एवं आयुष्मान् भद्र **पाटलिपुत्र** के **कुक्कुटाराम** में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब आयुष्मान् भद्र सायङ्काल समाधि भावना से

सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा भद्दो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—

"'अब्रह्मचरियं, अब्रह्मचरियं' ति, आवुसो आनन्द, वुच्चति। कतमं नु खो, आवुसो, अब्रह्मचरियं" ति?

[R.16] "साधु साधु, आवुसो भद्द! भद्दको खो ते, आवुसो भद्द, उम्मङ्गो, भद्दकं पटिभानं, कल्याणी परिपुच्छा। एवं हि त्वं, आवुसो भद्द, पुच्छसि—'अब्रह्मचरियं, अब्रह्मचरियं, ति, आवुसो आनन्द, वुच्चति। कतमं नु खो, आवुसो, अब्रह्मचरियं'" ति?

"एवमावुसो" ति।

"अयमेव खो, आवुसो, अट्ठङ्गिको मिच्छामग्गो अब्रह्मचरियं, सेय्यथीदं— मिच्छादिट्ठि...पे०...मिच्छासमाधी" ति॥ •

१९. दुतियकुक्कुटारामसुत्तं

२०. पाटलिपुत्तनिदानं। "'ब्रह्मचरियं, ब्रह्मचरियं' ति, आवुसो आनन्द, वुच्चति। कतमं नु खो, आवुसो, ब्रह्मचरियं, कतमं ब्रह्मचरियपरियोसानं" ति?

[N.16] "साधु साधु, आवुसो भद्द! भद्दको खो ते, आवुसो भद्द, उम्मङ्गो, भद्दकं पटिभानं, कल्याणी परिपुच्छा। एवं हि त्वं, आवुसो भद्द, पुच्छसि—'ब्रह्मचरियं,

---

उठ कर आयुष्मान् आनन्द के पास गये। उन से सुख समाचार पूछने के बाद एक ओर बैठ गये। तथा उन से पूछा—

"आयुष्मन्! (धर्मोपदेशक) लोग चर्चाओं में 'अब्रह्मचर्य, अब्रह्मचर्य' कहते रहते हैं, आयुष्मन्! यह 'अब्रह्मचर्य' क्या है?"

"बहुत अच्छा प्रश्न किया, भद्रक! बहुत अच्छा चिन्तन किया, इस से तुम्हारा मङ्गल ही होगा कि तुम ऐसा प्रश्न कर रहे हो...पूर्ववत्...। यही न तुम पूछना चाह रहे हो कि यह मिथ्या धर्मसाधना क्या है?"

"हाँ, आयुष्मन्!"

"आयुष्मन्! यह मिथ्या अष्टाङ्गिक मार्ग ही मिथ्या धर्मसाधना है; जैसे— मिथ्यादृष्टि...मिथ्यासमाधि॥" •

१९. द्वितीय कुक्कुटारामसूत्र : : वास्तविक धर्मसाधना क्या है?

२०. ...**पाटलिपुत्र में** ही...। आयुष्मन्! लोग 'ब्रह्मचर्य, ब्रह्मचर्य' ऐसा कहते रहते हैं, आयुष्मन्! यह 'ब्रह्मचर्य' (धर्मसाधना) क्या है? तथा इस धर्मसाधना का उद्देश्य क्या है?

ब्रह्मचरियं ति, आवुसो आनन्द, वुच्चति। कतमं नु खो, आवुसो, ब्रह्मचरिय-[B.14] परियोसानं''' ति?

''एवमावुसो'' ति।

''अयमेव खो, आवुसो, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गा ब्रह्मचरियं, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। यो खो, आवुसो, रागक्खयो दोसक्खयो मोहक्खयो—इदं ब्रह्मचरियपरियोसानं'' ति॥

२०. ततियकुक्कुटारामसुत्तं

२१. पाटलिपुत्तनिदानं।'''ब्रह्मचरियं, ब्रह्मचरियं' ति, आवुसो आनन्द, वुच्चति। कतमं नु खो, आवुसो, ब्रह्मचरियं, कतमो ब्रह्मचारी, कतमं ब्रह्मचरियपरियोसानं'' ति?

''साधु साधु, आवुसो भद्द! भद्दको खो ते, आवुसो भद्द, उम्मङ्गो, भद्दकं [R.17] पटिभानं, कल्याणी परिपुच्छा। एवं हि त्वं, आवुसो भद्द, पुच्छसि—'ब्रह्मचरियं, ब्रह्मचरियं ति, आवुसो आनन्द, वुच्चति। कतमं नु खो, आवुसो, ब्रह्मचरियं, कतमो ब्रह्मचारी, कतमं ब्रह्मचरियपरियोसानं''' ति?

''एवमावुसो'' ति।

''अयमेव खो, आवुसो, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो ब्रह्मचरियं, सेय्यथीदं—

...पूर्ववत्...। तुम यही न पूछ रहे हो—यह धर्मसाधना क्या है, तथा इस धर्मसाधना का उद्देश्य क्या है?''

''हाँ, आयुष्मन्!''

यह आर्यअष्टाङ्गिक मार्ग (की साधना) ही हमारी धर्मसाधना (ब्रह्मचर्य) है। जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। तथा राग, द्वेष एवं मोह का क्षय करना ही इस धर्मसाधना का उद्देश्य है॥

२०. तृतीय कुक्कुटारामसूत्र : :साधना, साधक एवं साधना का उद्देश्य

२१. ...**पाटलिपुत्र में** ही...।''आयुष्मन् आनन्द! लोग 'ब्रह्मचर्य, ब्रह्मचर्य'—ऐसा कहते रहते हैं, यह ब्रह्मचर्य क्या है? ब्रह्मचारी कौन होता है? तथा इस ब्रह्मचर्य का उद्देश्य क्या है?''

''बहुत अच्छा प्रश्न किया...पूर्ववत्...तुम यही न पूछना चाह रहे हो कि यह धर्मसाधना क्या है? इस धर्म का साधक कौन होता है? तथा इस धर्मसाधना का उद्देश्य क्या है?''

''हाँ, आयुष्मन्!''

''आयुष्मन्! इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग को ही 'धर्मसाधना' कहते हैं। जैसे—१.

सम्मादिट्ठि ...पे०...सम्मासमाधि। यो खो, आवुसो, इमिना अरियेन अट्ठङ्गिकेन मग्गेन समन्नागतो—अयं वुच्चति ब्रह्मचारी। यो खो, आवुसो, रागक्खयो दोसक्खयो मोहक्खयो—इदं ब्रह्मचरियपरियोसानं'' ति॥ *(तीणि सुत्तन्तानि एकनिदानानि)* ●

विहारवग्गो दुतियो॥

तस्सुद्दानं

द्वे विहारा च सेक्खो च, उप्पादा अपरे दुवे।
परिसुद्धेन द्वे वुत्ता, कुक्कुटारामेन तयो ति॥ ●

सम्यग्दृष्टि ...८. सम्यक्समाधि। तथा, आयुष्मन्! जो इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना से युक्त होता है वही 'धर्मसाधक' कहलाता है। एवं राग द्वेष और मोह का क्षय करना ही इस धर्मसाधना का चरम लक्ष्य है''॥ ●

[ये तीनों सूत्र एक ही स्थान (पाटलिपुत्र) में कहे गये हैं।]

विहारवर्ग द्वितीय सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. प्रथम विहारसूत्र, २. द्वितीय विहारसूत्र, ३. शैक्ष्यसूत्र, ४. प्रथम उत्पादसूत्र, ५. द्वितीय उत्पादसूत्र, ६. प्रथम परिशुद्धसूत्र, ७. द्वितीय परिशुद्धसूत्र, ८. प्रथम कक्कुटारामसूत्र, ९. द्वितीय कुक्कुटारामसूत्र, १०. तृतीय कुक्कुटारामसूत्र॥●

३. मिच्छत्तवग्गो ततियो

२१. मिच्छत्तसुत्तं

२२. सावत्थिनिदानं। ''मिच्छत्तं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि सम्मत्तं च। [N.17] तं सुणाथ। कतमं च, भिक्खवे, मिच्छत्तं? सेय्यथीदं—मिच्छादिट्ठि [R.18, B.15] ...पे०...मिच्छासमाधि। इदं वुच्चति, भिक्खवे, मिच्छत्तं। कतमं च, भिक्खवे, सम्मत्तं? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। इदं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मत्तं'' ति॥ •

२२. अकुसलधम्मसुत्तं

२३. सावत्थिनिदानं। ''अकुसले च खो, भिक्खवे, धम्मे देसेस्सामि कुसले च धम्मे। तं सुणाथ। कतमे च, भिक्खवे, अकुसला धम्मा? सेय्यथीदं—मिच्छादिट्ठि ...पे०...मिच्छासमाधि। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, अकुसला धम्मा। कतमे च, भिक्खवे, कुसला धम्मा? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, कुसला धम्मा'' ति॥ •

२३. पठमपटिपदासुत्तं

२४. सावत्थिनिदानं। ''मिच्छापटिपदं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि सम्मापटिपदं

---

३. मिथ्यात्ववर्ग तृतीय

२१. मिथ्यात्वसूत्र : : मिथ्यात्व क्या है?

२२. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! मैं तुम्हें 'मिथ्यात्व' एवं 'सम्यक्त्व' के विषय में बताना चाहता हूँ। उसे ध्यानपूर्वक सुनो तथा मन में बैठा लो।

''भिक्षुओ! यह 'मिथ्यात्व' क्या है? यही, जैसे—मिथ्यादृष्टि...मिथ्यासमाधि। भिक्षुओ! इसे ही 'मिथ्यात्व' कहते हैं। अथ च, यह 'सम्यक्त्व' क्या है? यही, जैसे—सम्यग्दृष्टि... सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! इसे ही 'सम्यक्त्व' कहते हैं॥ •

२२. अकुशलधर्मसूत्र : : अकुशल या कुशल धर्म क्या है?

२३. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! मैं तुम्हें अकुशल तथा कुशल धर्मों का उपदेश करूँगा, उसे ध्यानपूर्वक सुनो तथा मन में बैठा लो।

''भिक्षुओ! ये अकुशल धर्म क्या होते हैं? यही मिथ्यादृष्टि...मिथ्यासमाधि। भिक्षुओ! अकुशल धर्म इन्हें ही कहा जाता है। अथ च, ये कुशल धर्म क्या हैं? ये ही सम्यग्दृष्टि... सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! इन्हें कुशल धर्म कहते हैं॥ •

२३. प्रथम प्रतिपदासूत्र : : मिथ्या तथा सम्यक् मार्ग

२४. ...**श्रावस्ती में** ही...। मैं तुम्हें मिथ्याप्रतिपदा, एवं सम्यक्प्रतिपदा के विषय में

च। तं सुणाथ। कतमा च, भिक्खवे, मिच्छापटिपदा? सेय्यथीदं—मिच्छादिट्ठि...पे०... मिच्छासमाधि। अयं वुच्चति, भिक्खवे, मिच्छापटिपदा। कतमा च, भिक्खवे, सम्मापटिपदा? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मापटिपदा'' ति॥

२४. दुतियपटिपदासुत्तं

२५. सावत्थिनिदानं। ''गिहिनो वाहं, भिक्खवे, पब्बजितस्स वा मिच्छापटिपदं न वण्णेमि। गिहि वा, भिक्खवे, पब्बजितो वा मिच्छापटिपन्नो मिच्छापटिपत्ताधि- [R.19] करणहेतु नाराधको होति ञायं धम्मं कुसलं। कतमा च, भिक्खवे, मिच्छा-पटिपदा? सेय्यथीदं—मिच्छादिट्ठि...पे०...मिच्छासमाधि। अयं वुच्चति, भिक्खवे, [N.18] मिच्छापटिपदा। गिहिनो वाहं, भिक्खवे, पब्बजितस्स वा मिच्छापटिपदं न वण्णेमि। गिहि वा, भिक्खवे, पब्बजितो वा मिच्छापटिपन्नो मिच्छापटिपत्ताधिकरणहेतु नाराधको होति ञायं धम्मं कुसलं।

''गिहिनो वाहं, भिक्खवे, पब्बजितस्स वा सम्मापटिपदं वण्णेमि। गिहि वा, भिक्खवे, पब्बजितो वा सम्मापटिपन्नो सम्मापटिपत्ताधिकरणहेतु आराधको होति ञायं धम्मं कुसलं। कतमा च, भिक्खवे, सम्मापटिपदा? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०... सम्मासमाधि। अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मापटिपदा। गिहिनो वाहं, भिक्खवे,

---

उपदेश करूँगा...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! मिथ्याप्रतिपदा क्या है? जैसे—मिथ्यादृष्टि...पूर्ववत्... मिथ्यासमाधि। भिक्षुओ! यह मिथ्याप्रतिपदा कहलाती है। और, भिक्षुओ! सम्यक्प्रतिपदा क्या है? जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! यह सम्यक्प्रतिपदा (सम्यग्मार्ग) कहलाती है॥''

२४. द्वितीय प्रतिपदासूत्र : : सम्यग् मार्ग

२५. ...**श्रावस्ती में** ही...। भिक्षुओ! मैं गृहस्थ या प्रव्रजित के मिथ्यामार्ग को उचित नहीं समझता। क्योंकि मिथ्यामार्ग पर चलनेवाला गृहस्थ या प्रव्रजित, अपने इस मिथ्यामार्ग का ग्रहण के कारण, ज्ञान एवं कुशल धर्मों का लाभ नहीं कर पाता। अत: भिक्षुओ! मैं इन दोनों के ही मिथ्यामार्ग-ग्रहण को उचित नहीं बताता। भिक्षुओ! वह गृहस्थ या प्रव्रजित किस मिथ्यामार्ग का ग्रहण कर ज्ञान एवं कुशल धर्मों का लाभ नहीं कर पाता? यही—मिथ्यादृष्टि...मिथ्यासमाधि। अत: भिक्षुओ! मैं...उचित नहीं बताता।

''भिक्षुओ! गृहस्थ या प्रव्रजित के सम्यग्मार्ग ग्रहण को ही उचित बताता हूँ; क्यों कि ऐसा गृहस्थ या प्रव्रजित ही, सम्यग्मार्ग पर चलते रहने के कारण, ज्ञान एवं कुशल धर्मों को प्राप्त कर पाता है। भिक्षुओ! यह 'सम्यग्मार्ग' क्या है? यही—सम्यग्दृष्टि...पूर्ववत्...

पब्बजितस्स वा सम्मापटिपदं वण्णेमि। गिहि वा, भिक्खवे, पब्बजितो वा [B.16] सम्मापटिपन्नो सम्मापटिपत्ताधिकरणहेतु आराधको होति ञायं धम्मं कुसलं'' ति॥ •

२५. पठमअसप्पुरिससुत्तं

२६. सावत्थिनिदानं। ''असप्पुरिसं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि सप्पुरिसं च। तं सुणाथ। कतमो च, भिक्खवे, असप्पुरिसो? इध, भिक्खवे, एकच्चो मिच्छादिट्ठिको होति मिच्छासङ्कप्पो मिच्छावाचो मिच्छाकम्मन्तो मिच्छाआजीवो मिच्छावायामो मिच्छासति मिच्छासमाधि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, असप्पुरिसो।

''कतमो च, भिक्खवे, सप्पुरिसो? इध, भिक्खवे, एकच्चो सम्मादिट्ठिको [R.20] होति सम्मासङ्कप्पो सम्मावाचो सम्माकम्मन्तो सम्माआजीवो सम्मावायामो सम्मासति सम्मासमाधि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सप्पुरिसो'' ति॥ •

२६. दुतियअसप्पुरिससुत्तं

२७. सावत्थिनिदानं। ''असप्पुरिसं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि असप्पुरिसेन असप्पुरिसतरं च। सप्पुरिसं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि सप्पुरिसेन सप्पुरिसतरं च। तं सुणाथ। कतमो च, भिक्खवे, असप्पुरिसो? इध, भिक्खवे, एकच्चो मिच्छादिट्ठिको होति...पे०... मिच्छासमाधि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, असप्पुरिसो।

''कतमो च, भिक्खवे, असप्पुरिसेन असप्पुरिसतरो? इध, भिक्खवे, एकच्चो

सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! यही सम्यग्मार्ग कहलाता है। इस सम्यग्मार्ग के अधिग्रहण से ही वे गृहस्थ एवं प्रव्रजित ज्ञान एवं कुशल धर्मों को ग्रहण कर सकते हैं''॥ •

२५. प्रथम असत्पुरुषसूत्र : : असत्पुरुष एवं सत्पुरुष

२६. ...**श्रावस्ती में** ही...। भिक्षुओ! अब मैं तुम्हें असत्पुरुषों एवं सत्पुरुषों के विषय में बताऊँगा।...। भिक्षुओ! यहाँ किसी पुरुष की न दृष्टि (धारणा) ठीक होती है, न सङ्कल्प ही; न वाणी ही ठीक होती है, न उस के कर्म ही उचित होते हैं; तथा न उस की आजीविका, न उस का श्रम, न उस की स्मृति या समाधि ही ठीक होती है; ऐसा पुरुष 'असत्पुरुष' कहलाता है।

तथा 'सत्पुरुष' वह कहलाता है जो सम्यग्दृष्टि एवं सम्यक्सङ्कल्प वाला हो, सम्यग्वाक् एवं सम्यक्कर्म वाला भी हो, सम्यगाजीव एवं सम्यग्व्यायाम भी हो तथा सम्यक्स्मृति एवं सम्यक्समाधि भी हो। ऐसा ही पुरुष 'सत्पुरुष' कहलाता है''॥ •

२६. द्वितीय असत्पुरुषसूत्र : : असत्पुरुष एवं सत्पुरुष

२७. ...**श्रावस्ती में** ही...। ...पूर्ववत्...ऐसा पुरुष 'असत्पुरुष' कहलाता है।

''इस असत्पुरुष से भी हीन (निकृष्ट) 'असत्पुरुष' कौन होता है? जो उपर्युक्त

[N.19] मिच्छादिट्ठिको होति...पे०...मिच्छासमाधि मिच्छाञाणी मिच्छाविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, असप्पुरिसेन असप्पुरिसतरो।

"कतमो च, भिक्खवे, सप्पुरिसो? इध, भिक्खवे, एकच्चो सम्मादिट्ठिको होति ...पे०...सम्मासमाधि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सप्पुरिसो।

"कतमो च, भिक्खवे, सप्पुरिसेन सप्पुरिसतरो? इध, भिक्खवे, एकच्चो सम्मादिट्ठिको होति...पे०...सम्मासमाधि सम्माञाणी सम्माविमुत्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सप्पुरिसेन सप्पुरिसतरो" ति॥ ●

२७. कुम्भसुत्तं

[B.17] २८. सावत्थिनिदानं। "सेय्यथापि, भिक्खवे, कुम्भो अनाधारो सुप्पवत्तियो होति, साधारो दुप्पवत्तियो होति; एवमेव खो, भिक्खवे, चित्तं अनाधारं सुप्पवत्तियं [R.21] होति, साधारं दुप्पवत्तियं होति। को च, भिक्खवे, चित्तस्स आधारो? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। अयं चित्तस्स आधारो। सेय्यथापि, भिक्खवे, कुम्भो अनाधारो सुप्पवत्तियो होति, साधारो दुप्पवत्तियो होति; एवमेव खो, भिक्खवे, चित्तं अनाधारं सुप्पवत्तियं होति, साधारं दुप्पवत्तियं होती" ति॥ ●

२८. समाधिसुत्तं

२९. सावत्थिनिदानं। "अरियं वो, भिक्खवे, सम्मासमाधिं देसेस्सामि सउपनिसं

मिथ्यादृष्टि आदि दुर्गुणों से युक्त होता हुआ मिथ्याज्ञान एवं मिथ्याविमुक्ति वाला हो वह उक्त असत्पुरुष से भी हीन तथा निकृष्ट होता है।

"फिर 'सत्पुरुष' कौन होता है? जो उपर्युक्त सम्यग्दृष्टि आदि आठ गुणों से युक्त हो। वह 'सत्पुरुष' कहलाता है।

"फिर इस 'सत्पुरुष' से भी उत्कृष्ट तथा उच्च 'सत्पुरुष' कौन होता है? जो सत्पुरुष उपर्युक्त सम्यग्दृष्टि आदि आठ गुणों के साथ ही सम्यग्ज्ञान एवं सम्यग्विमुक्ति से भी सम्पन्न हो वह 'सत्पुरुषतर' कहलाता है"॥ ●

२७. कुम्भसूत्र : : चित्त का आधार

२८. ...**श्रावस्ती में** ही...।..."जैसे, भिक्षुओ! कोई घट आधार के विना सरलता से इधर उधर लुढक जाता है, परन्तु वही घट, आधार लग जाने पर, कठिनता से लुढकाया जा सकता है।

"भिक्षुओ! चित्त का आधार क्या है? यह आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग (सम्यग्दृष्टि... सम्यक्समाधि) ही भिक्षुओ! चित्त का आधार है"। ...पूर्ववत्...॥ ●

सपरिक्खारं। तं सुणाथ। कतमो च, भिक्खवे, अरियो सम्मासमाधि सउपनिसो सपरिक्खारो? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासति। या खो, भिक्खवे, इमेहि सत्तहङ्गेहि चित्तस्स एकग्गता सपरिक्खारता—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियो सम्मासमाधि सउपनिसो इति पि सपरिक्खारो इति पी'' ति॥ •

२९. वेदनासुत्तं

३०. सावत्थिनिदानं। ''तिस्सो इमा, भिक्खवे, वेदना। कतमा तिस्सो? सुखा वेदना, दुक्खा वेदना, अदुक्खमसुखा वेदना—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो [N.20] वेदना। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं वेदनानं परिञ्ञाय अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो। कतमो अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि [R.22] ...पे०...सम्मासमाधि। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं वेदनानं परिञ्ञाय अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ •

३०. उत्तियसुत्तं

३१. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मा उत्तियो येन भगवा तेनुपसङ्कमि...पे०... एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा उत्तियो भगवन्तं एतदवोच—''इध मय्हं, भन्ते, रहोगतस्स पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को उदपादि—'पञ्च कामगुणा वुत्ता [B.18] भगवता। कतमे नु खो पञ्च कामगुणा वुत्ता भगवता''' ति?

---

२८. समाधिसूत्र : : समाधि

२९. ...**श्रावस्ती में** ही...।''भिक्षुओ! मैं हेतु एवं परिष्कार के साथ सम्यक्समाधि का वर्णन करूँगा। उसे ध्यानपूर्वक सुनो...। भिक्षुओ! यह हेतु एवं परिष्कार सहित सम्यक्समाधि क्या है? भिक्षुओ! सम्यग्दृष्टि से सम्यक्स्मृति तक चित्त की एकाग्रता ही 'सम्यक्समाधि' है। इसी को 'हेतु परिष्कार सहित सम्यक्समाधि' कहते हैं''॥ •

२९. वेदनासूत्र : : वेदना

३०. ...**श्रावस्ती में** ही...।''भिक्षुओ! वेदनाएँ तीन होती हैं। सुखा वेदना, दुःखा वेदना, एवं अदुःखा असुखा वेदना—ये तीन वेदनाएँ हैं। इन तीनों वेदनाओं को भली भाँति जान कर आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये। कौन सा अष्टाङ्गिक मार्ग? सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। ...पूर्ववत्...॥ •

३०. उत्तियसूत्र : : पाँच कामगुण

३१. ...**श्रावस्ती में** ही...। कभी आयुष्मान् उत्तिय भगवान् के पास गये। ...तथा यों निवेदन किया—''भन्ते! आज मैं एकान्त में चिन्तन कर रहा था, तब मुझ को यों

"साधु साधु, उत्तिय! पञ्चिमे खो, उत्तिय, कामगुणा वुत्ता मया। कतमे पञ्च? चक्खुविञ्ञेय्या रूपा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया, सोतविञ्ञेय्या सद्दा...पे०...घानविञ्ञेय्या गन्धा...पे०...जिव्हाविञ्ञेय्या रसा...पे०...कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया—इमे खो, उत्तिय, पञ्च कामगुणा वुत्ता मया। इमेसं खो, उत्तिय, पञ्चन्नं कामगुणानं पहानाय अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो। कतमो अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि ...पे०...सम्मासमाधि। इमेसं खो, उत्तिय, पञ्चन्नं कामगुणानं पहानाय अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो" ति॥ •

मिच्छत्तवग्गो ततियो॥

तस्सुद्दानं

मिच्छत्तं अकुसलं धम्मं, दुवे पटिपदा पि च।
असप्पुरिसेन द्वे कुम्भो, समाधि वेदनुत्तियेना ति॥ •

विचार हुआ—'भगवान् ने पाँच कामगुणों का उपदेश किया है, भगवदुपदिष्ट ये पाँच कामगुण कौन से हैं'?"

"उत्तिय! तुम्हारा प्रश्न बहुत उचित है। अवश्य मैने पाँच कामगुण कहे हैं। कौन से पाँच? चक्षुर्विज्ञेय इष्ट, कान्त, मनोमोहक, प्रिय, कामभोग में उपयुक्त एवं रागसम्पृक्त **रूप**; श्रोत्रविज्ञेय...**शब्द**; घ्राणविज्ञेय...**गन्ध**; जिह्वाविज्ञेय...**रस**; तथा कायविज्ञेय...**स्प्रष्टव्य**। उत्तिय! इन पाँच कामगुणों के प्रहाणहेतु इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करनी चाहिये। जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। यों, उत्तिय! उन पाँच कामगुणों के प्रहाणहेतु इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करनी चाहिये"॥ •

मिथ्यात्ववर्ग तृतीय सम्पन्न॥

इस मिथ्यात्ववर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. मिथ्यात्वसूत्र, २. अकुशलधर्मसूत्र, ३. प्रथम प्रतिपदासूत्र, ४. द्वितीय प्रतिपदासूत्र, ५. प्रथम असत्पुरुषसूत्र, ६. द्वितीय असत्पुरुषसूत्र, ७. कुम्भसूत्र, ८. समाधिसूत्र, ९. वेदनासूत्र एवं १०. उत्तियसूत्र॥ •

४. पटिपत्तिवग्गो चतुत्थो

३१. पठमपटिपत्तिसुत्तं

३२. सावत्थिनिदानं। "मिच्छापटिपत्तिं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि [R.23] सम्मापटिपत्तिं च। तं सुणाथ। कतमा च, भिक्खवे, मिच्छापटिपत्ति? [N.21] सेय्यथीदं—मिच्छादिट्ठि...पे०...मिच्छासमाधि। अयं वुच्चति, भिक्खवे, मिच्छापटिपत्ति। कतमा च, भिक्खवे, सम्मापटिपत्ति? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मापटिपत्ती" ति॥ ●

३२. दुतियपटिपत्तिसुत्तं

३३. सावत्थिनिदानं। "मिच्छापटिपन्नं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि सम्मापटिपन्नं च। तं सुणाथ। कतमो च, भिक्खवे, मिच्छापटिपन्नो? इध, भिक्खवे, एकच्चो मिच्छादिट्ठिको होति...पे०...मिच्छासमाधि। अयं वुच्चति, भिक्खवे, मिच्छा-[B.19] पटिपन्नो। कतमो च, भिक्खवे, सम्मापटिपन्नो? इध, भिक्खवे, एकच्चो सम्मादिट्ठिको होति...पे०...सम्मासमाधि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सम्मापटिपन्नो" ति॥ ●

३३. विरद्धसुत्तं

३४. सावत्थिनिदानं। "येसं केसञ्चि, भिक्खवे, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो विरद्धो,

---

४. प्रतिपत्तिवर्ग चतुर्थ

३१. प्रथम प्रतिपत्तिसूत्र : : मिथ्या मार्ग एवं सम्यग्मार्ग

३२. ...**श्रावस्ती में** ही...।...भिक्षुओ! अब मैं मिथ्या प्रतिपत्ति (मिथ्यामार्ग) एवं सम्यक्प्रतिपत्ति (सम्यग्मार्ग) का वर्णन करूँगा। ...पूर्ववत्...।

"भिक्षुओ! यह जो मिथ्यादृष्टि है यही मिथ्यामार्ग है, तथा यह जो सम्यग्दृष्टि है यही सम्यग्मार्ग है। मिथ्या प्रतिपत्ति क्या है? यही मिथ्यादृष्टि...मिथ्यासमाधि। भिक्षुओ! यह कहलाती है—मिथ्या प्रतिपत्ति। एवं सम्यक्प्रतिपत्ति क्या है? यही सम्यग्दृष्टि ...सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! यह कहलाती है—सम्यक्प्रतिपत्ति"॥ ●

३२. द्वितीय प्रतिपत्तिसूत्र : : मिथ्या प्रतिपन्न एवं सम्यक्प्रतिपन्न

३३. ...**श्रावस्ती में** ही...। भिक्षुओ! अब मैं मिथ्या प्रतिपन्न (मिथ्यामार्गारूढ) एवं सम्यक्प्रतिपन्न (सम्यग्मार्गारूढ) पुरुष का वर्णन करूँगा। ...पूर्ववत्...।

"यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुरुष मिथ्यादृष्टिक होता है...पूर्ववत्...मिथ्यासमाधि। यह कहलाता है, भिक्षुओ! मिथ्याप्रतिपन्न। तथा, भिक्षुओ! सम्यक्प्रतिपन्न कौन होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुरुष सम्यग्दृष्टिक होता है...पूर्ववत्...सम्यक्समाधिक। यह कहलाता है, भिक्षुओ! सम्यक्प्रतिपन्न"॥ ●

विरद्धो तेसं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी। येसं केसञ्चि, भिक्खवे, [R.24] अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो आरद्धो, आरद्धो तेसं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी। कतमो च, भिक्खवे, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। येसं केसञ्चि, भिक्खवे, अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो विरद्धो, विरद्धो तेसं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी। येसं केसञ्चि, भिक्खवे, अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो आरद्धो, आरद्धो तेसं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी'' ति॥ ●

३४. पारङ्गमसुत्तं

३५. सावत्थिनिदानं। ''अट्ठिमे, भिक्खवे, धम्मा भाविता बहुलीकता अपारा पारं गमनाय संवत्तन्ति। कतमे अट्ठ? सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ धम्मा भाविता बहुलीकता अपारा पारं गमनाय संवत्तन्ती'' ति।

[N.22] ३६. इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—

''अप्पका ते मनुस्सेसु, ये जना पारगामिनो।
अथायं इतरा पजा, तीरमेवानुधावति॥ [ध०प० ८५ गा.]

---

३३. विरद्धसूत्र : : आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग

३४. ...**श्रावस्ती में** ही...। ...''जिस किसी साधक की आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना बीच में ही रुक गयी, तो समझो कि उस का सम्यग्दु:खक्षयगामी आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग भी रुक गया। तथा जिस किसी का आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग आरम्भ हो गया उस का सम्यग्दु:खक्षयगामी आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग भी आरम्भ हो गया। भिक्षुओ! यह आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग क्या है? सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! जिस किसी साधक की...पूर्ववत्... अष्टाङ्ग मार्ग भी आरम्भ हो गया''॥ ●

३४. पारङ्गमसूत्र : : पार गमन

३५. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! यदि इन आठ धर्मों की भली भाँति साधना तथा अभ्यास किया जाय तो ये धर्म साधक को (भवसागर के) पार पहुँचाने में समर्थ हैं। कौन से आठ धर्म? सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! इन्हीं आठ धर्मों के चिन्तन एवं अभ्यास से अपार को पार किया जा सकता है।''

३६. भगवान् यह बोले। साथ ही उन्होंने, इन गाथाओं के माध्यम से, यह भी उपदेश किया—

''मनुष्यों में ऐसे लोग अल्प (कम) ही हैं जो (इस भवसागर के) पार जाने वाले हों। शेष अन्य लोग तो किनारे ही किनारे दौड़ने वाले हैं॥

"ये च खो सम्मदक्खाते, धम्मे धम्मानुवत्तिनो।
. ते जना पारमेस्सन्ति, मच्चुधेय्यं सुदुत्तरं॥ [ध०प० ८६ गा.]
"कण्हं धम्मं विप्पहाय, सुक्कं भावेथ पण्डितो।
ओका अनोकमागम्म, विवेके यत्थ दूरमं॥ [ध०प० ८७ गा.]
"तत्राभिरतिमिच्छेय्य, हित्वा कामे अकिञ्चनो।
परियोदपेय्य अत्तानं, चित्तक्लेसेहि पण्डितो॥ [ध०प० ८८ गा.]
"येसं सम्बोधियङ्गेसु, सम्मा चित्तं सुभावितं। [B.20]
आदानपटिनिस्सग्गे, अनुपादाय ये रता॥ [ध०प० ८९ गा.]
खीणासवा जुतिमन्तो, ते लोके परिनिब्बुता"॥ ति॥

३५. पठमसामञ्ञसुत्तं

३७. सावत्थिनिदानं। "सामञ्ञं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि सामञ्ञ- [R.25] फलानि च। तं सुणाथ। कतमं च, भिक्खवे, सामञ्ञं? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। इदं वुच्चति, भिक्खवे, सामञ्ञं।

"परन्तु जो लोग इस भलीभाँति उपदिष्ट धर्म का अनुगमन करते हैं वे लोग इस अत्यन्त कठिनाई से पार जाने योग्य मृत्यु के राज्य के पार चले जायँगें॥

"बुद्धिमान् लोग इस कृष्ण (पापमय) धर्म का परित्याग कर शुक्ल (पुण्यमय) धर्म का आचरण करें। वे गृहस्थधर्म का त्याग कर गृहविहीन अवस्था (प्रव्रज्या) को प्राप्त करें, जिस में विवेकप्राप्ति कठिन होती है॥

"वे बुद्धिमान् मनुष्य कामनाओं का त्याग कर, अकिञ्चन (तुच्छ) बन कर वहाँ रत रहने की इच्छा करें तथा इस प्रकार वह अपने चित्तक्लेशों से स्वयं को दूर करें॥

"जिन लोगों का चित्त सम्बोधि के अङ्गों[१] में भलीभाँति अभ्यस्त हो गया है जो उपादान (ग्रहण) करने में अनासक्त हो कर परिग्रह के परित्याग में रत हैं, जिन के चित्तविकार विगलित हो चुके हैं, तथा जो दीप्तिमान् हैं, ऐसे लोग संसार में निर्वाण प्राप्त कर चुके होते हैं"॥ *(ये पाँचों गाथाएँ **धम्मपद** में भी वर्णित हैं।)*

३५. प्रथम श्रामण्यसूत्र : : श्रामण्य एवं श्रामण्यफल

३७. ...**श्रावस्ती में** ही...। भिक्षुओ! अब मैं तुम्हें श्रामण्य (भिक्षुभाव) एवं उस के फल की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह श्रामण्य कौन सा होता है? यही

---

१. **सम्बोध्यङ्ग** सात होते हैं—१. स्मृतिसम्बोध्यङ्ग (आत्मसंयम), २. धर्मविचय (धर्मान्वेषण), ३. वीर्य (शक्ति), ४. प्रीति (आनन्द), ५. प्रश्रब्धि (शान्ति), ६. समाधि एवं ७. उपेक्षा। (विशेष विस्तार के लिये द्रष्टव्य—दी. नि., द्वि. भा., बौ. भा. सं.)

कतमानि च, भिक्खवे, सामञ्ञफलानि? सोतापत्तिफलं, सकदागामिफलं, अनागामिफलं, अरहत्तफलं—इमानि वुच्चन्ति, भिक्खवे, सामञ्ञफलानी'' ति॥ •

३६. दुतियसामञ्ञसुत्तं

३८. सावत्थिनिदानं। ''सामञ्ञं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि सामञ्ञत्थं च। तं सुणाथ। कतमं च खो, भिक्खवे, सामञ्ञं? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि ...पे०...सम्मासमाधि। इदं वुच्चति, भिक्खवे, सामञ्ञं। कतमो [N.23] च, भिक्खवे, सामञ्ञत्थो? यो खो, भिक्खवे, रागक्खयो दोसक्खयो मोहक्खयो—अयं वुच्चति, भिक्खवे, सामञ्ञत्थो'' ति॥ •

३७. पठमब्रह्मञ्ञसुत्तं

३९. सावत्थिनिदानं। ''ब्रह्मञ्ञं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि ब्रह्मञ्ञफलानि च। तं सुणाथ। कतमं च खो, भिक्खवे, ब्रह्मञ्ञं? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। इदं वुच्चति, भिक्खवे, ब्रह्मञ्ञं। कतमानि [R.26] च, भिक्खवे, ब्रह्मञ्ञफलानि? सोतापत्तिफलं, सकदागामिफलं, अनागामिफलं, अरहत्तफलं—इमानि वुच्चन्ति, भिक्खवे, ब्रह्मञ्ञफलानी'' ति॥ •

३८. दुतियब्रह्मञ्ञसुत्तं

४०. सावत्थिनिदानं। ''ब्रह्मञ्ञं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि ब्रह्मञ्ञत्थं च। तं

आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग; जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। इसे कहते हैं, भिक्षुओ! श्रामण्य। फिर, भिक्षुओ! श्रामण्यफल क्या होता है? १. स्रोतआपत्तिफल, २. सकृदागामिफल, ३. अनागामिफल एवं ४. अर्हत्त्वफल। भिक्षुओ! इन्हें कहा जाता है—श्रामण्यफल''॥ •

३६. द्वितीय श्रामण्यसूत्र : : श्रामण्य एवं श्रामण्य का अर्थ

३८. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! मैं तुम्हें श्रामण्य एवं श्रामण्य के अर्थ की देशना करूँगा। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह श्रामण्य क्या है? यही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग; जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! इसे कहते हैं श्रामण्य। फिर, भिक्षुओ! यह श्रामण्यार्थ (श्रामण्य का प्रयोजन) क्या है? राग, द्वेष एवं मोह का क्षय करना ही श्रामण्यार्थ है''॥ •

३७. प्रथम ब्राह्मण्यसूत्र : : ब्राह्मणत्व

३९. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! मैं तुम्हें अब 'ब्राह्मणत्व' की देशना तथा ब्राह्मणत्व के फल की भी...पूर्ववत्...॥ •

[पूर्वोक्त ३५ श्रामण्यसूत्र के समान ही इस सूत्र का विस्तार कर लें।]

सुणाथ। कतमं च, भिक्खवे, ब्रह्मञ्ञं? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। इदं वुच्चति, भिक्खवे, ब्रह्मञ्ञं। कतमो च, [B.21] भिक्खवे, ब्रह्मञ्ञत्थो? यो खो, भिक्खवे, रागक्खयो दोसक्खयो मोहक्खयो—अयं वुच्चति, भिक्खवे, ब्रह्मञ्ञत्थो'' ति॥ •

३९. पठमब्रह्मचरियसुत्तं

४१. सावत्थिनिदानं। ''ब्रह्मचरियं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि ब्रह्मचरियफलानि च। तं सुणाथ। कतमं च, भिक्खवे, ब्रह्मचरियं? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। इदं वुच्चति, भिक्खवे, ब्रह्मचरियं। कतमानि च, भिक्खवे, ब्रह्मचरियफलानि? सोतापत्तिफलं, सकदागामि-फलं, अनागामिफलं, अरहत्तफलं—इमानि वुच्चन्ति, भिक्खवे, ब्रह्मचरियफलानी'' ति॥ •

४०. दुतियब्रह्मचरियसुत्तं

४२. सावत्थिनिदानं। ''ब्रह्मचरियं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि ब्रह्मचरियत्थं च। तं सुणाथ। कतमं च, भिक्खवे, ब्रह्मचरियं? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, [N.24] सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। इदं वुच्चति, भिक्खवे, ब्रह्मचरियं। [R.27] कतमो च, भिक्खवे, ब्रह्मचरियत्थो? यो खो, भिक्खवे, रागक्खयो दोसक्खयो मोहक्खयो—अयं वुच्चति, भिक्खवे, ब्रह्मचरियत्थो'' ति॥ •

पटिपत्तिवग्गो चतुत्थो॥

---

३८. द्वितीय ब्राह्मण्यसूत्र : : ब्राह्मणत्व एवं उसका प्रयोजन

४०. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! मैं तुम्हें अब...पूर्ववत्...॥ •

[पूर्वोक्त ३६ श्रामण्यसूत्र के समान ही इस सूत्र का विस्तार कर लें।]

३९. प्रथम ब्रह्मचर्यसूत्र : : ब्रह्मचर्य (धर्मसाधना)

४१. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! मैं तुम्हें...पूर्ववत्...॥ •

[पूर्वोक्त ३५ श्रामण्यसूत्र के समान ही इस सूत्र का विस्तार कर लें।]

४०. द्वितीय ब्रह्मचर्यसूत्र : : ब्रह्मचर्य एवं उसका प्रयोजन

४२. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! मैं तुम्हें...पूर्ववत्...॥ •

[पूर्वोक्त ३६ श्रामण्यसूत्र के समान ही इस सूत्र का विस्तार कर लें।]

प्रतिपत्तिवर्ग सम्पन्न॥

तस्सुद्दानं

पटिपत्तिपटिपन्नो च, विरद्धं च पारङ्गमा।
सामञ्ञेन च द्वे वुत्ता, ब्रह्मञ्ञा अपरे दुवे।
ब्रह्मचरियेन द्वे वुत्ता, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥ •

इस प्रतिपत्तिवर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची— १. प्रथम प्रतिपत्तिसूत्र, २. द्वितीय प्रतिपत्तिसूत्र, ३. विरद्धसूत्र, ४. पारङ्गमसूत्र, ५. प्रथम श्रामण्यसूत्र, ६. द्वितीय श्रामण्यसूत्र, ७. प्रथम ब्राह्मण्यसूत्र, ८. द्वितीय ब्राह्मण्यसूत्र, ९. प्रथम ब्रह्मचर्यसूत्र, एवं १०. द्वितीय ब्रह्मचर्यसूत्र॥ •

५. अञ्ञतित्थियपेय्यालवग्गो

४१. रागविरागसुत्तं

४३. सावत्थिनिदानं। ''सचे वो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—'किमत्थियं, आवुसो, समणे गोतमे ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति, एवं पुट्ठा [B.22] तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथ—'रागविरागत्थं खो, आवुसो, भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति। सचे पन वो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—'अत्थि पनावुसो, मग्गो, अत्थि पटिपदा रागविरागाया' ति? एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथ—'अत्थि खो, आवुसो, मग्गो, अत्थि पटिपदा रागविरागाया' ति। कतमो च, [R.28] भिक्खवे, मग्गो, कतमा च पटिपदा रागविरागाय? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। अयं, भिक्खवे, मग्गो, अयं पटिपदा रागविरागाया ति। एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथा'' ति॥ ●

४२-४७. संयोजनप्पहानादिसुत्तछक्कं

४४-४९. सचे वो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—

---

५. अन्यतीर्थिकपेय्यालवर्ग

४१. रागविरागसूत्र : : राग प्रहाण

४३. ...**श्रावस्ती में** ही...।''यदि, भिक्षुओ! दूसरे सम्प्रदाय के परिव्राजक तुम से यह पूछें—'आयुष्मानो! आप लोग श्रमण गौतम के अनुशासन में किसलिये धर्मसाधना करते हैं?' यों पूछे जाने पर तुम्हें उन परिव्राजकों को यह उत्तर देना चाहिये—'आयुष्मानो! हम लोग राग के प्रहाणहेतु भगवान् के अनुशासन में धर्मसाधना करते हैं।' यदि वे परिव्राजक यह पूछें कि इस राग के प्रहाण के लिये कोई धर्मसाधना है? उस का कोई मार्ग है?' तो तुम्हें कहना चाहिये—'हाँ, आयुष्मानो! उस राग के प्रहाण के लिये उपाय (मार्ग) भी है, साधना भी है।' भिक्षुओ! यह मार्ग यह उपाय क्या है उस राग प्रहाण के लिये? यही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग; जैसे—सम्यग्दृष्टि...पूर्ववत् ...सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! उस राग प्रहाणहेतु यही मार्ग है, यही उपाय है। उन अन्य तीर्थिक परिव्राजकों द्वारा इस विषय में पूछे जाने पर तुम्हें यही उत्तर देना चाहिये''॥ ●

४२-४७. संयोजनप्रहाणादिसूत्रषट्क : : संयोजन आदि का प्रहाण

४४-४९. ''यदि, भिक्षुओ! दूसरे सम्प्रदायों के परिव्राजक तुम्हें यों पूछें—'तुम

किमत्थियं, आवुसो, समणे गोतमे ब्रह्मचरियं वुस्सती ? ति, एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथ—संयोजनप्पहानत्थं खो, आवुसो, [N.25] भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती ति...पे०...।

"अनुसयसमुग्घातनत्थं खो, आवुसो, भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती ति...पे०...।

"अद्धानपरिञ्ञत्थं खो, आवुसो, भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती ति...पे०...।

"आसवानं खयत्थं खो, आवुसो, भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती ति...पे०...।

"विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियत्थं खो, आवुसो, भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती ति...पे०...।

"ञाणदस्सनत्थं खो, आवुसो, भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती ति...पे०...॥

४८. अनुपादापरिनिब्बानसुत्तं

[R.29] ५०. सावत्थिनिदानं। "सचे वो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—'किमत्थियं, आवुसो, समणे गोतमे ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति ? एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथ—'अनुपादा-परिनिब्बानत्थं खो, आवुसो, भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती' ति। सचे पन वो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—'अत्थि पनावुसो, मग्गो, अत्थि पटिपदा [B.23] अनुपादापरिनिब्बानाया' ति ? एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथ—'अत्थि खो, आवुसो, मग्गो, अत्थि पटिपदा अनुपादापरिनिब्बानाया' ति। कतमो च, भिक्खवे, मग्गो, कतमा च पटिपदा अनुपादा-

---

श्रमण गौतम के अनुशासन में धर्मसाधना किसलिये करते हो ?' तो तुम्हें कहना चाहिये—'संयोजन (भवबन्धन) के प्रहाणहेतु हम भगवान् के अनुशासन में धर्मसाधना करते हैं'। (१)

...'अनुशय (चित्त की दुष्प्रवृत्ति) को रोकने के लिये हम भगवान् के...। (२)

...'मार्ग का अन्त जानने के लिये हम भगवान् के...। (३)

...'आश्रवों (चित्तविकारों) के क्षय हेतु हम भगवान् के...। (४)

...'विद्याविमुक्ति फल के साक्षात्कार हेतु हम भगवान् के...। (५)

...'ज्ञान के साक्षात्कार हेतु हम भगवान् के अनुशासन में धर्मसाधना करते हैं'। ...पूर्ववत्...॥ (६)

४८. अनुपादायपरिनिर्वाणसूत्र : : उपादानरहित निर्वाण की प्राप्तिहेतु

५०. ...**श्रावस्ती** में ही...। ..."यदि, भिक्षुओ! दूसरे सम्प्रदायों के परिव्राजक...पूर्ववत्...। ...यों कहना चाहिये—'उपादानरहित होकर निर्वाण की प्राप्ति के

परिनिब्बानाय? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०... सम्मासमाधि। अयं, भिक्खवे, मग्गो, अयं पटिपदा अनुपादापरिनिब्बानाया ति। एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथा'' ति॥ •

अञ्ञतित्थियपेय्यालवग्गो॥

तस्सुद्दानं

विरागसंयोजनं अनुसयं, अद्धानं आसवा खया।
विज्जाविमुत्तिञाणं च, अनुपादाय अट्ठमी॥ •

—※—

लिये भगवान् के अनुशासन में रह कर हम धर्मसाधना करते हैं। यदि वे भिक्षु...पूर्ववत्...ऐसा उत्तर तुम्हें देना चाहिये॥'' •

अन्यतीर्थिकपेय्यालवर्ग सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. रागविरागसूत्र, २. संयोजनप्रहाणसूत्र, ३. अनुशयसमुद्घातसूत्र, ४. मार्गपरिज्ञानसूत्र, ५. आश्रवक्षयसूत्र, ६. विद्याविमुक्ति-फलदर्शनसूत्र, ७. ज्ञानदर्शनसूत्र एवं ८. अनुपादायपरिनिर्वाणसूत्र॥ •

—※—

६. सुरियपेय्यालवग्गो

४९. कल्याणमित्तसुत्तं

५१. सावत्थिनिदानं। "सुरियस्स, भिक्खवे, उदयतो एतं पुब्बङ्गमं एतं [R.30, N.26] पुब्बनिमित्तं, यदिदं—अरुणुग्गं; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स उप्पादाय एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्ख—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोध-निस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती" ति॥

•

५०-५४. सीलसम्पदादिसुत्तपञ्चकं

५२-५६. सुरियस्स, भिक्खवे, उदयतो एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—अरुणुग्गं; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स उप्पादाय [B.24] एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—सीलसम्पदा। सीलसम्पन्नस्सेतं,

---

६. सूर्यपेय्यालवर्ग

४९. कल्याणमित्रसूत्र : : कल्याणमित्रता

५१. ...**श्रावस्ती में** ही...। भिक्षुओ! जैसे प्रातःकाल अरुणोदय का होना (आकाश में ललाई छा जाना) सूर्योदय का पूर्वनिमित्त है, वैसे ही भिक्षुओ! किसी कल्याणमित्र का मिलना आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग के लाभ का पूर्व लक्षण है। भिक्षुओ! कल्याणमित्र के मिलने का लाभ यह है कि साधक उस के सहारे से आर्य अष्टाङ्गिक भावना में सरलता से संलग्न हो जाता है। वह उस भावना का अभ्यास सुगमता से आरम्भ कर पाता है। भिक्षुओ! वह साधक भिक्षु कल्याणमित्र की सहायता से विवेक, वैराग्य एवं निरोध की ओर ले जाने वाली सम्यग्दृष्टि का...पूर्ववत्...सम्यक्समाधि का सहज रीति से चिन्तन एवं अभ्यास करता है। इस तरह, भिक्षुओ! वह कल्याणमित्र साधक की साधना तथा अभ्यास में सहायक होता है"॥

•

५०-५४. शीलसम्पदादिसूत्रपञ्चक : : शीलसम्पत्ति आदि

५२-५६. ..."भिक्षुओ! जैसे प्रातःकाल अरुणोदय...पूर्ववत्...**शीलसम्पत्ति**...

भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं...पे०...यदिदं—छन्दसम्पदा...पे०...यदिदं—अत्तसम्पदा ...पे०...यदिदं—दिट्ठि-सम्पदा...पे०...यदिदं—अप्पमादसम्पदा...पे०... ॥ •

५५. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं

५७. ''सुरियस्स, भिक्खवे, उदयतो एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, [R.31] यदिदं—अरुणुग्गं; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स उप्पादाय एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—योनिसोमनसिकारसम्पदा। योनिसोमनसिकारसम्पन्नस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु [N.27] योनिसोमनसिकारसम्पन्नो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती'' ति॥ •

५६. कल्याणमित्तसुत्तं

५८. ''सुरियस्स, भिक्खवे, उदयतो एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—अरुणुग्गं; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स उप्पादाय एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति

छन्दसम्पत्ति...आत्मसम्पत्ति...दृष्टिसम्पत्ति एवं **अप्रमादसम्पत्ति**—ये सम्पत्तियाँ आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग के लाभ के पूर्व निमित्त हैं। इन सम्पत्तियों के मिलने का लाभ यह है कि...पूर्ववत्...अभ्यास में सहायक होती हैं''॥ •

५५. योनिशःमनस्कारसम्पदासूत्र : : सूक्ष्मतया मनन

५७. ''भिक्षुओ! जैसे प्रातःकाल अरुणोदय...वैसे ही योनिशः मनस्कार (धर्मों का सूक्ष्म चिन्तन) सम्पत्ति अष्टाङ्गिक मार्ग के लाभ की पूर्व निमित्त है। इस सम्पत्ति के मिलने का लाभ यह है कि...पूर्ववत्...आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना तथा अभ्यास में सहायक होती हैं॥'' •

रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती'' ति॥ ●

५७-६१. सीलसम्पदादिसुत्तपञ्चकं

[B.25] ५९-६३. ''सुरियस्स, भिक्खवे, उदयतो एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—अरुणुग्गं; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स [R.32] उप्पादाय एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—सीलसम्पदा...पे०...यदिदं—छन्दसम्पदा...पे०...यदिदं—अत्तसम्पदा...पे०...यदिदं—दिट्ठिसम्पदा...पे०...यदिदं—अप्पमादसम्पदा...पे०... ॥ ●

६२. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं

६४. ''यदिदं—योनिसोमनसिकारसम्पदा। योनिसोमनसिकारसम्पन्नस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो अरियं [N.28] अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती'' ति॥ ●

सुरियपेय्यालवग्गो॥

---

५६. कल्याणमित्रसूत्र : : कल्याणमित्रता

५८. ''भिक्षुओ!...पूर्ववत्...राग, द्वेष एवं मोह के क्षय को करने वाली सम्यग्दृष्टि... सम्यक्समाधि (अष्टाङ्गिक मार्ग) का चिन्तन एवं अभ्यास करता है...पूर्ववत्... ॥ ●

५७-६१. शीलसम्पदादिसूत्रपञ्चक : : शीलसम्पत्ति आदि

५९-६३. ''भिक्षुओ! ...पूर्ववत्...वैसे ही शील का आचरण...सत्कर्म में प्रवृत्ति (छन्द) ...आत्मसम्पत्ति (दृढचित्त होना)...दृष्टिसम्पत्ति (सम्यग्दृष्टि)...एवं अप्रमादसम्पत्ति का होना राग, द्वेष एवं मोह के क्षय में सहायक होती हैं...पूर्ववत्... ॥ ●

६२. योनिशःमनस्कारसम्पदासूत्र : : सूक्ष्मचिन्तन

६४. ...''भिक्षुओ! ...पूर्ववत्...वैसे ही राग, द्वेष एवं मोह के क्षय करने में धर्मों का सूक्ष्म चिन्तन एवं अभ्यास भी सहायक होता है''॥ ●

सूर्यपेय्यालवर्ग सम्पन्न॥

तस्सुद्दानं

कल्याणमित्तं सीलं च, छन्दो च अत्तसम्पदा।
दिट्ठि च अप्पमादो च, योनिसो भवति सत्तमं॥ •

—— ※ ——

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. कल्याणमित्रसूत्र, २. शीलसम्पदासूत्र, ३. छन्दसम्पदासूत्र, ४. आत्मसम्पदासूत्र, ५. दृष्टिसम्पदासूत्र, ६. अप्रमादसम्पत्तिसूत्र एवं ७. योनिशोमनस्कारसम्पदासूत्र॥ •

—— ※ ——

७. पठमएकधम्मपेय्यालवग्गो

६३. कल्याणमित्तसुत्तं

६५. सावत्थिनिदानं। ''एकधम्मो, भिक्खवे, बहूपकारो अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स [B.26, R.33] मग्गस्स उप्पादाय। कतमो एकधम्मो? यदिदं—कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्ग-परिणामिं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती'' ति॥ •

६४-६८. सीलसम्पदादिसुत्तपञ्चकं

६६-७०. एकधम्मो, भिक्खवे, बहूपकारो अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स उप्पादाय। कतमो एकधम्मो? यदिदं—सीलसम्पदा...पे०...यदिदं—छन्दसम्पदा ...पे०...यदिदं—अत्तसम्पदा...पे०...यदिदं—दिट्ठिसम्पदा...पे०...यदिदं—अप्पमाद-सम्पदा...पे०... ॥ •

15279

---

७. प्रथम एकधर्मपेय्यालवर्ग

६३. कल्याणमित्रसूत्र : : कल्याणमित्रता

६५. ...**श्रावस्ती में** ही...। भिक्षुओ! आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की अधिगति में यह एक धर्म बहुत ही उपकारक (महत्त्वशाली) है। वह कौन सा एक धर्म? कल्याणमित्रता। कल्याणमित्र से ऐसी आशा की जाती है कि वह साधक को अष्टाङ्गिक मार्ग की उस भावना में पूर्ण सहयोग करेगा जो कि विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग की भावना को बढाने वाली होती है। ...पूर्ववत्... ॥ •

६४-६८. शीलसम्पदादिसूत्रपञ्चक : : सदाचार

६६-७०. ...पूर्ववत्...कौन सा एक धर्म? **शील** का आचरण...पूर्ववत्...।

...पूर्ववत्...कौन सा एक धर्म? **छन्द** (सत्कर्म में लगने की प्रवृत्ति)...।

...पूर्ववत्...कौन सा एक धर्म? **आत्मसम्पत्ति** (चित्त की दृढता)...पूर्ववत्...।

...पूर्ववत्...कौन सा एक धर्म? **दृष्टिसम्पत्ति** (सम्यग्दृष्टि)...पूर्ववत्...।

...पूर्ववत्...कौन सा एक धर्म? **अप्रमाद** का होना...पूर्ववत्... ॥ •

६९. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं

७१. "...यदिदं—योनिसोमनसिकारसम्पदा। योनिसोमनसिकारसम्पन्नस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं [N.29, R.34] अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्ग-परिणामिं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती" ति॥

●

७०. कल्याणमित्तसुत्तं

७२. सावत्थिनिदानं। "एकधम्मो, भिक्खवे, बहूपकारो अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स उप्पादाय। कतमो एकधम्मो? यदिदं—कल्याणमित्तता। कल्याण-[B.27] मित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं ...पे०...सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनय-परियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती" ति॥

●

७१-७५. सीलसम्पदादिसुत्तपञ्चकं

७३-७७. सावत्थिनिदानं। एकधम्मो, भिक्खवे, बहूपकारो अरियस्स

---

६९. योनिशोमनस्कारसूत्र : : सूक्ष्म चिन्तन

७१. ..."भिक्षुओ! आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की अधिगति में यह एक धर्म बहुत अधिक सहायक होता है। वह एक धर्म कौन सा? साधना में धर्मों का सूक्ष्म चिन्तन। ...शेष पूर्ववत्... ॥

●

७०. कल्याणमित्रसूत्र : : कल्याणमित्रता

७२. ..."भिक्षुओ! आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की अधिगति में यह एक धर्म बहूपकारक है। वह एक धर्म कौन? कल्याणमित्रता। इस कल्याणमित्र से आशा की जा सकती है कि वह साधक को, आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करते समय, राग, द्वेष एवं मोह को दबाने (विनय) में सहायता करेगा। ...पूर्ववत्... ॥

●

अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स उप्पादाय। कतमो एकधम्मो? यदिदं—सीलसम्पदा...पे०... [R.35] यदिदं—छन्दसम्पदा...पे०...यदिदं—अत्तसम्पदा...पे०...यदिदं—दिट्ठिसम्पदा ...पे०...यदिदं—अप्पमादसम्पदा...पे०...॥

७६. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं

[N.30] ७८. ..."यदिदं—योनिसोमनसिकारसम्पदा। योनिसोमनसिकारसम्पन्नस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०...सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनय-परियोसानं मोहविनयपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती" ति॥

एकधम्मपेय्यालवग्गो॥

तस्सुद्दानं

कल्याणमित्तं सीलं च, छन्दो च अत्तसम्पदा।
दिट्ठि च अप्पमादो च, योनिसो भवति सत्तमं॥

७१-७५. शीलसम्पदादिसूत्रपञ्चक : : शील आदि सम्पत्तियाँ

७३-७७. ...पूर्ववत्...एक धर्म कौन सा? **शीलसम्पत्ति**...। ...पूर्ववत्...।
...पूर्ववत्...एक धर्म कौन सा? **छन्द** (सत्कर्म में प्रवृत्ति)...पूर्ववत्...।
...पूर्ववत्...एक धर्म कौन सा? **आत्मसम्पत्ति** (चित्त की दृढता)...पूर्ववत्...।
...पूर्ववत्...एक धर्म कौन सा? **दृष्टिसम्पत्ति** (सम्यग्दृष्टि)...पूर्ववत्...।
...पूर्ववत्...एक धर्म कौन सा? **अप्रमाद का होना**...पूर्ववत्...॥

७६. योनिशोमनस्कारसूत्र : : सूक्ष्म चिन्तन

७८. ...पूर्ववत्...एक धर्म कौन सा? साधना के समय धर्मों का सूक्ष्म चिन्तन...पूर्ववत्...॥

एकधर्मपेय्यालवर्ग सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. कल्याणमित्रसूत्र, २. शीलसम्पदासूत्र, ३. छन्दसम्पत्तिसूत्र, ४. आत्मसम्पत्तिसूत्र, ५. दृष्टिसम्पत्तिसूत्र, ६. अप्रमादसूत्र एवं ७. योनिशोमनस्कारसूत्र॥

८. दुतियएकधम्मपेय्यालवग्गो

७७. कल्याणमित्तसुत्तं

७९. सावत्थिनिदानं। ''नाहं, भिक्खवे, अञ्ञं एकधम्मं पि [B.28] समनुपस्सामि, येन अनुप्पन्नो वा अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो उप्पज्जति, उप्पन्नो वा अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावनापारिपूरिं गच्छति, यथयिदं, भिक्खवे, कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं [R.36] च, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती'' ति॥

●

७८-८२. सीलसम्पदादिसुत्तपञ्चकं

८०-८४. नाहं, भिक्खवे, अञ्ञं एकधम्मं पि समनुपस्सामि, येन अनुप्पन्नो वा अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो उप्पज्जति, उप्पन्नो वा अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो [N.31] भावनापारिपूरिं गच्छति, यथयिदं, भिक्खवे, **सीलसम्पदा**...पे०...। यथयिदं, भिक्खवे, **छन्दसम्पदा**...पे०...। यथयिदं, भिक्खवे, **अत्तसम्पदा**...पे०...। यथयिदं, भिक्खवे, **दिट्ठिसम्पदा**...पे०...। यथयिदं, भिक्खवे, **अप्पमादसम्पदा**...पे०...॥

●

द्वितीय एकधर्मपेय्यालवर्ग

७७. कल्याणमित्रसूत्र : : कल्याणमित्रता

७९. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! मैं दूसरा कोई ऐसा एक धर्म नहीं देखता, जो अनुत्पन्न अष्टाङ्गिक मार्गसाधना को उत्पन्न कर सके या फिर इस उत्पन्न मार्गसाधना को वृद्धि एवं विपुलता दे सके; जैसा कि कल्याणमित्रता। शेष पूर्ववत्... ॥

●

७८-८२. शीलसम्पदादिसूत्रपञ्चक : : शीलसम्पदा आदि

८०-८४. ...''भिक्षुओ! मैं ऐसा अन्य कोई एक धर्म नहीं देखता जो अनुत्पन्न (अप्राप्त) आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग भावना को उत्पन्न (प्राप्त) कर सके, या फिर इस उत्पन्न मार्गभावना को वृद्धि एवं विपुलता दे सके। कौन सा एक धर्म? जैसा यह शील (सदाचार) का आचरण...पूर्ववत्...।

...कौन सा एक धर्म? जैसी यह सत्कर्म में लगने की प्रवृत्ति (छन्दसम्पत्ति) ...पूर्ववत्...।

८३. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं

८५. "...यथयिदं, भिक्खवे, योनिसोमनसिकारसम्पदा। योनिसोमनसिकारसम्पन्नस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं [B.29] विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती" ति॥ •

८४. कल्याणमित्तसुत्तं

[R.37] ८६. "नाहं, भिक्खवे, अञ्ञं एकधम्मं पि समनुपस्सामि, येन अनुप्पन्नो वा अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो उप्पज्जति, उप्पन्नो वा अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावनापारिपूरिं गच्छति; यथयिदं, भिक्खवे, कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे,

---

...कौन सा एक धर्म? जैसी यह आत्मसम्पत्ति (चित्त की दृढता)...पूर्ववत्...।

...कौन सा एक धर्म? जैसी यह दृष्टिसम्पत्ति (सम्यग्दृष्टि)...पूर्ववत्...।

...कौन सा एक धर्म? जैसा यह अप्रमाद का होना...पूर्ववत्...॥ •

८३. योनिशोमनस्कारसम्पदासूत्र : : धर्मों का सूक्ष्मचिन्तन

८५. ..."भिक्षुओ! मैं ऐसा अन्य कोई एक धर्म नहीं देखता जो अनुत्पन्न अष्टाङ्गिक मार्गभावना को उत्पन्न कर सके तथा उत्पन्न को वृद्धि एवं विपुलता दे सके। जैसा यह धर्मों का सूक्ष्म चिन्तन। ऐसे सूक्ष्म चिन्तन...पूर्ववत्...अष्टाङ्गिक मार्ग में वृद्धि एवं विपुलता आती है"॥ •

८४. कल्याणमित्रसूत्र : : कल्याणमित्रता

८६. ..."भिक्षुओ! मैं ऐसा एक भी अन्य कोई धर्म नहीं देखता जो अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना में सहायता कर सके जिस से राग, द्वेष एवं मोह के क्षय में सहयोग हो सके। कौन सा एक धर्म? कल्याणमित्रता। यह धर्म कैसे इस मार्ग की साधना में सहायता

भिक्खु कल्याणमित्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती'' ति॥

●

८५-८९. सीलसम्पदादिसुत्तपञ्चकं

८७-९१. नाहं, भिक्खवे, अञ्ञं एकधम्मं पि समनुपस्सामि, येन [N.32] अनुप्पन्नो वा अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो उप्पज्जति, उप्पन्नो वा अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावनापारिपूरिं गच्छति, यथयिदं, भिक्खवे, सीलसम्पदा...पे०...यथयिदं, भिक्खवे, छन्दसम्पदा...पे०...यथयिदं, भिक्खवे, अत्तसम्पदा...पे०...यथयिदं, भिक्खवे, दिट्ठि-सम्पदा...पे०...यथयिदं, भिक्खवे, अप्पमादसम्पदा...पे०...॥

●

९०. योनिसोमनसिकारसम्पदासुत्तं

९२. ''...यथयिदं, भिक्खवे, योनिसोमनसिकारसम्पदा। योनिसोमनसिकार-सम्पन्नस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, [R.38] भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोस-[B.30] विनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमन-सिकारसम्पन्नो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती'' ति॥

●

दुतियएकधम्मपेय्यालवग्गो॥

करता है? यह साधक की सम्यग्दृष्टि को...सम्यक्समाधि को राग, द्वेष एवं मोह को दबाने में सहयोग करता है। इसतरह...पूर्ववत्...॥

●

८५-८९. शीलसम्पदादिसूत्रपञ्चक : : शीलसम्पदादि

८७-९१. ...''भिक्षुओ! मैं ऐसा एक भी कोई अन्य धर्म...पूर्ववत्...जैसा शीलसम्पदा ...पूर्ववत्...छन्दसम्पदा...आत्मसम्पदा...पूर्ववत्...दृष्टिसम्पदा...अप्रमादसम्पदा...पूर्ववत्...॥●

९०. योनिशोमनस्कारसम्पदासूत्र : : सूक्ष्म चिन्तन

९२. ...मैं ऐसा एक भी अन्य कोई धर्म...पूर्ववत्...जैसा यह धर्मों की साधना में मन द्वारा सूक्ष्म चिन्तन। ...पूर्ववत्...॥

●

द्वितीय एकधर्मपेय्यालवर्ग सम्पन्न॥

तस्सुद्दानं

कल्याणमित्तं सीलं च, छन्दो च अत्तसम्पदा।
दिट्ठि च अप्पमादो च, योनिसो भवति सत्तमं॥

—※—

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. कल्याणमित्रसूत्र, २. शीलसूत्र, ३. छन्दसूत्र, ४. आत्मसम्पदासूत्र, ५. दृष्टिसूत्र, ६. अप्रमादसूत्र एवं ७. योनिशोमनस्कार-सूत्र॥

—※—

९. गङ्गापेय्यालवग्गो

९१. पठमपाचीननिन्नसुत्तं

९३. सावत्थिनिदानं। "सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं [N.33] बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो ? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं ...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो" ति॥ •

९२-९५. दुतियादिपाचीननिन्नसुत्तचतुक्कं

९४-९७. सेय्यथापि, भिक्खवे, यमुना नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, अचिरवती नदी [R.39] पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, सरभू नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे

---

९. गङ्गापेय्यालवर्ग

९१. प्रथम प्राचीननिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

९३. ...**श्रावस्ती में** ही...। "जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्व की ओर बहती, पूर्व की ओर बढती है, पूर्व की ओर जाने में अपना ध्यान केन्द्रित रखती है; उसी तरह, भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करता हुआ निर्वाण की ओर ही चलता है, निर्वाण की ओर अग्रसर होता है तथा निर्वाण की ओर बढने में ही अपना ध्यान केन्द्रित रखता है। कैसे, भिक्षुओ! वह आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करता है कि वह निर्वाण की ओर प्रगति कर सके? वह अपनी सम्यग्दृष्टि को...सम्यक्समाधि को विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग की ओर लगाता है। इस तरह, वह अपनी आर्य अष्टाङ्ग मार्ग की भावना को आगे निर्वाण की ओर बढाता है, निर्वाण की तरफ प्रगति करता है"॥

९२-९५. द्वितीयादि प्राचीननिम्नसूत्रचतुष्क : : निर्वाण की ओर प्रगति

९४-९७. जैसे, भिक्षुओ! यमुना नदी पूर्व की ओर...पूर्ववत्...उसी तरह भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना की ओर बढता है...पूर्ववत्...। जैसे,

...पे०... । सेय्यथापि, भिक्खवे, मही नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे...पे०... ॥ ●

९६. छट्ठपाचीननिन्नसुत्तं

[B.31] ९८. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, या काचिमा महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही, सब्बा ता पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...सम्मा समाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति ॥●

९७. पठमसमुद्दनिन्नसुत्तं

[N 34] ९९. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं

भिक्षुओ! अचिरवती नदी...पूर्ववत्...। जैसे, भिक्षुओ! सरयू नदी...पूर्ववत्...। जैसे, भिक्षुओ! मही नदी पूर्व की ओर बढती है, पूर्व की ओर बढने में तत्पर होती है...पूर्ववत्... ॥ ●

९६. षष्ठ प्राचीननिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

९८. ...''जैसे, भिक्षुओ! कोई भी महानदी, फिर भले ही वह गङ्गा हो या यमुना, अचिरवती हो या सरयू, या फिर मही—ये सभी महानदियाँ पूर्व की ओर मुख करती हुई बहती हैं...उसी तरह, भिक्षुओ! यह आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना साधक को निर्वाण की ओर ही बढाती है। कैसे भिक्षुओ! यह मार्गसाधना निर्वाण की ओर बढाती है? यहाँ कोई भिक्षु अपनी सम्यग्दृष्टि साधना को...सम्यक्समाधि की भावना को अपने विवेक, वैराग्य, निरोध तथा त्याग के सहारे निर्वाण की ओर बढाता है...पूर्ववत्... ॥ ●

९७. प्रथम समुद्रनिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

९९. ...''जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी समुद्र की ओर जाने के लिये मुख किये रहती है, समुद्र की ओर ही बढती है, इसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग

भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥

९८-१०२. दुतियादिसमुद्दनिन्नसुत्तपञ्चकं

१००-१०४. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, यमुना नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, अचिरवती नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु [R.40] ...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, सरभू नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, मही नदी समुद्दनिन्ना [B.32] समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, या काचिमा महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही, सब्बा ता समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोध-

---

की भावना करता हुआ निर्वाण की ओर बढता है, निर्वाण की ओर ही प्रगति करता है। कैसे, भिक्षुओ! वह ऐसी प्रगति करता है? यहाँ वह साधक विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागमय भावना से अपनी सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि को निर्वाण की ओर बढाता है—यही उस का निर्वाण की ओर प्रगति करना है॥''

९८-१०२. द्वितीयादि समुद्रनिम्नसूत्रपञ्चक : : निर्वाण की ओर प्रगति

१००-१०४. ...''जैसे, भिक्षुओ! यमुना नदी समुद्र की ओर ही...इसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु आर्य अष्टाङ्ग मार्ग से साधना करता हुआ निर्वाण की ओर बढता है।

जैसे, भिक्षुओ! अचिरवती नदी...पूर्ववत्...।

जैसे, भिक्षुओ! सरयू नदी...पूर्ववत्...।

जैसे, भिक्षुओ! मही नदी...पूर्ववत्...। इसी तरह, भिक्षुओ! ये सभी महानदियाँ;

निस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो [N.35] अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बानंनिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥ •

गङ्गापेय्यालवग्गो॥

तस्सुद्दानं

छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो।
एते द्वे छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥ •

(गङ्गापेय्याली पाचीननिन्नवाचनमगी विवेकनिस्सितं द्वादसकी पठमकी।)

जैसे—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरयू, मही—ये सब समुद्र की ओर ही...इसी तरह साधक भिक्षु अष्टाङ्गिक मार्ग से...निर्वाण की ओर ही बढता है... ॥ •

गङ्गापेय्यालवर्ग सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—छह अपने उद्गम स्थान से पूर्व की ओर, तथा ६. समुद्र की ओर बहने वाली नदियों के दृष्टान्त से इस वर्ग में ६ + ६ = १२ सूत्रों का संग्रह हुआ है॥ •

[यह प्रथम गङ्गापेय्याली 'पूर्व दिशा की ओर बहने वाली' १२ सूत्रों से समन्वित है।]

पठमपाचीननिन्नवग्गो

१०३. पठमपाचीननिन्नसुत्तं

१०५. "सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु [B.33] सम्मादिट्ठिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं ...पे०...सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो" ति॥ •

१०४-१०८. दुतियादिपाचीननिन्नसुत्तपञ्चकं

१०६-११०. सेय्यथापि, भिक्खवे, यमुना नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, अचिरवती नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु ...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, सरभू नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु ...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, मही नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, [N.36] भिक्खवे, या काचिमा महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही,

---

प्रथम प्राचीननिम्नवर्ग

१०३. प्रथम प्राचीननिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर जाना

१०५. "जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्व दिशा की ओर बहती हुई...समुद्र में आ मिलती है; उसी तरह, भिक्षुओ! भिक्षु...निर्वाण की ओर बढता है। ...पूर्ववत्..."॥ •

१०४-१०८. द्वितीयादि प्राचीननिम्नसूत्रपञ्चक : : निर्वाण की ओर प्रगति

१०६-११०. "जैसे, भिक्षुओ! यमुना नदी पूर्व की ओर बहती है...उसी तरह, भिक्षुओ! भिक्षु...निर्वाण की ओर बढता है। ...

जैसे, अचिरवती नदी पूर्व की ओर...।

जैसे, सरयू नदी पूर्व की ओर...।

सब्बा ता पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु ...पे०... ॥ •

१०९. पठमसमुद्दनिन्नसुत्तं

१११. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं...पे०... सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥ •

११०-११४. दुतियादिसमुद्दनिन्नसुत्तपञ्चकं

११२-११६. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, यमुना नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा [B.34] समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, अचिरवती नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु ...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, सरभू नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव

जैसे, मही नदी पूर्व की ओर...। जिस तरह, भिक्षुओ! ये पाँचों महानदियाँ पूर्व की ओर बढती हैं...उसी तरह, भिक्षुओ! भिक्षु...निर्वाण की ओर ही बढता है॥'' •

१०९. प्रथम समुद्रनिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

१११. ''जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी समुद्र की ओर ही बहती है तथा बढती है; उसी तरह, भिक्षुओ! भिक्षु...निर्वाण की ओर ही बढता है।

कैसे, भिक्षुओ! इस मार्गसाधना से निर्वाण की ओर बढता है? यहाँ भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग का आश्रयण कर अपने राग, द्वेष एवं मोह को दबाता हुआ सम्यग्दृष्टि से सम्यक्समाधिपर्यन्त साधना में दत्तचित्त होता है। यही, भिक्षुओ! उस भिक्षु का मार्गसाधना के आश्रयण से निर्वाण की ओर बढना है॥'' •

११०-११४. द्वितीयादिसमुद्रनिम्नसूत्रपञ्चक : : निर्वाण की ओर प्रगति

११२-११६. ''जैसे, भिक्षुओ! यमुना नदी समुद्र की ओर बहती है...पूर्ववत्...।

''जैसे, भिक्षुओ! अचिरवती नदी समुद्र की ओर बहती है...पूर्ववत्...।

''जैसे, भिक्षुओ! सरयू नदी समुद्र की ओर बहती है...पूर्ववत्...।

खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, मही नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, या काचिमा महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही, सब्बा ता समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो ? [N.37] इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनय-परियोसानं मोहविनयपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥ ●

(रागविनयद्वादसकी दुतियकी समुद्दनिन्नं ति।)

''जैसे, भिक्षुओ! मही नदी समुद्र की ओर बहती है...पूर्ववत्...।

''जैसे, भिक्षुओ! जितनी भी महानदियाँ समुद्र की ओर ही बहती हैं...पूर्ववत्...''॥●

[रागविनय आदि का बोधन कराने वाले 'समुद्रनिम्न' द्वादश सूत्रों वाला वर्ग समाप्त।]

दुतियपाचीननिन्नवग्गो

११५. पठमपाचीननिन्नसुत्तं

११७. "सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो" ति॥ •

११६-१२०. दुतियादिपाचीननिन्नसुत्तं

[B.35] ११८-१२२. सेय्यथापि, भिक्खवे, यमुना नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, अचिरवती नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, सरभू नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीन-

---

द्वितीय प्राचीननिम्नवर्ग

११५. प्रथम प्राचीननिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

११७. ..."जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्व दिशा की ओर ही बहती है...उसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग का अभ्यास करता हुआ निर्वाण की ओर अग्रसर होता है। वह कैसे निर्वाण की ओर अग्रसर होता है? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करता हुआ अमृतप्लुत एवं अमृत (निर्वाण) की ओर ले जाने वाली सम्यग्दृष्टि... सम्यक्समाधि की भावना कर निर्वाण की ओर प्रगति करता है। यों, भिक्षुओ! भिक्षु...पूर्ववत्...निर्वाण की ओर बढता है"॥ •

११६-१२०. द्वितीयादि प्राचीननिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

११८-१२२. ..."जैसे, भिक्षुओ! यमुना नदी पूर्व दिशा की ओर ही बहती है...पूर्ववत्...।

..."जैसे, भिक्षुओ! अचिरवती नदी पूर्व दिशा की ओर ही बहती है...पूर्ववत्...।

..."जैसे, भिक्षुओ! सरयू नदी पूर्व दिशा की ओर ही बहती है...पूर्ववत्...।

पब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, मही नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, या काचिमा महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, [N.38] अचिरवती, सरभू, मही, सब्बा ता पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०... ॥ •

१२१. पठमसमुद्दनिन्नसुत्तं

१२३. "सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु [R.41] सम्मादिट्ठिं भावेति अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो" ति ॥ •

१२२-१२६. दुतियादिसमुद्दनिन्नसुत्तं

१२४-१२८. "सेय्यथापि, भिक्खवे, यमुना नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु. पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, अचिरवती नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...।

..."जैसे, भिक्षुओ! मही नदी पूर्व दिशा की ओर ही बहती है...पूर्ववत्...।

..."जैसे, भिक्षुओ! सभी महानदियाँ—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरयू एवं मही—ये सब नदियाँ पूर्व दिशा की ओर ही बहती है...उसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करता हुआ; अमृतप्लुत तथा अमृत (निर्वाण) की ओर प्रवर्तन करने वाली सम्यग्दृष्टि एवं...सम्यक्समाधि की सतत भावना से निर्वाण की ओर प्रवृत्त होता है"॥ •

१२१. प्रथम समुद्रनिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर बढना

१२३. ..."जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी समुद्र की ओर मुख कर के ही बहती है...इसी तरह, भिक्षुओ! भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करता हुआ निर्वाण की ओर बढता है। ...पूर्ववत्... ॥" •

सेय्यथापि, भिक्खवे, सरभू नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, मही नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा [B.36] समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, या काचिमा महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही, सब्बा ता समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, [N.39] भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं ...पे०...सम्मासमाधिं भावेति अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥ •

(अमतोगधद्वादसकी ततियकी)

१२२-१२६. द्वितीयादिसमुद्रनिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

१२४-१२८. ''जैसे, भिक्षुओ! यमुना नदी...अचिरवती नदी...सरयू नदी...मही नदी...या पाँचों महानदियाँ समुद्र की ओर मुख कर के ही बहती हैं, उसी प्रकार, भिक्षुओ! साधक भिक्षु अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करता हुआ अमृतप्लुत एवं अमृत (निर्वाण) की ओर प्रवर्तक सम्यग्दृष्टि...एवं सम्यक्समाधि की भावना करता हुआ निर्वाण की ओर अग्रसर होता है। ...पूर्ववत्... ॥ •

तृतीय अमृतोगधद्वादशिका सम्पन्न ॥

दुतियगङ्गापेय्यालवग्गो

१२७. पठमपाचीननिन्नसुत्तं

१२९. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥

१२८-१३२. दुतियादिपाचीननिन्नसुत्तं

१३०-१३४. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, यमुना नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, अचिरवती नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, सरभू नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, मही नदी [B.37] पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, या काचिमा महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही, सब्बा ता पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, [N.40]

द्वितीय गङ्गापेय्यालवर्ग

१२७. प्रथम प्राचीननिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

१२९. ...''जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्व की ओर बहती है...इसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना एवं अभ्यास करता हुआ निर्वाण की ओर बढता है। भिक्षुओ! वह...कैसे बढता है? यहाँ, भिक्षुओ! साधक भिक्षु निर्वाण की ओर ले जाने वाली सम्यग्दृष्टि एवं सम्यक्समाधि की भावना करता है। ...पूर्ववत्...॥

१२८-१३२. द्वितीयादि प्राचीननिम्नसूत्र: : निर्वाण की ओर प्रगत्र

१३०-१३४. ...''जैसे, भिक्षुओ! यमुना नदी पूर्व की ओर बहती है...अचिरवती नदी...सरयू नदी...मही नदी...ये पाँचों नदियाँ समुद्र की ओर ही बहती हैं; उसी तरह

भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥●

१३३. पठमसमुद्दनिन्नसुत्तं

१३५. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥ ●

१३४-१३८. दुतियादिसमुद्दनिन्नसुत्तं

१३६-१४०. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, यमुना नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, अचिरवती नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, सरभू नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे,

---

भिक्षुओ! भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करता हुआ निर्वाण की ओर ही बढता है। कैसे, भिक्षुओ! वह निर्वाण की ओर...पूर्ववत्...॥ ●

१३३. समुद्रनिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

१३५. ...''जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी समुद्र की ओर ही बहती है...इसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु...पूर्ववत्...निर्वाण की ओर ही बढता है। ...पूर्ववत्...॥ ●

१३४-१३८. द्वितीयादि समुद्रनिम्नसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

१३६-१४०. ...''जैसे, भिक्षुओ! यमुना नदी...अचिरवती नदी...सरयू नदी...मही

भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, मही नदी समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्द-[B.38] पब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, या काचिमा महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही, सब्बा ता [N.41] समुद्दनिन्ना समुद्दपोणा समुद्दपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं ...पे०...सम्मासमाधिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥ ●

दुतियगङ्गापेय्यालवग्गो॥

तस्सुद्दानं

छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो।
एते द्वे छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥ ●

(निब्बाननिन्नो द्वादसकी चतुत्थकी छट्ठा नवकी।)

नदी...या ये पाँचों गङ्गा आदि महानदियाँ समुद्र की ओर ही बहती हैं; उसी प्रकार, भिक्षुओ! साधक भिक्षु...साधना करता हुआ निर्वाण की ओर ही बढता है।...पूर्ववत्...॥●

द्वितीय गङ्गापेय्यालवर्ग निष्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—छह पूर्व की ओर बहने वाली नदियों की उपमा वाले सूत्र, छह समुद्र की ओर बहने वाली नदियों की उपमा वाले सूत्र, यों ६ + ६ = १२—इस तरह १२ सूत्रों से यह वर्ग समन्वित है॥ ●

[निर्वाण की ओर बढने का वर्णन करने वाले १२ सूत्रों का यह चतुर्थ वर्ग है।]

५. अप्पमादवग्गो पञ्चमो

१३९. तथागतसुत्तं

१४१. सावत्थिनिदानं। "यावता, भिक्खवे, सत्ता अपदा वा द्विपदा वा चतुप्पदा [R.42] वा बहुप्पदा वा रूपिनो वा अरूपिनो वा सञ्ञिनो वा असञ्ञिनो वा नेवसञ्ञीनासञ्ञिनो वा, तथागतो तेसं अग्गमक्खायति अरहं सम्मासम्बुद्धो; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि कुसला धम्मा, सब्बे ते अप्पमादमूलका अप्पमादसमोसरणा; [B.39] अप्पमादो तेसं धम्मानं अग्गमक्खायति। अप्पमत्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती ति।

[N.42] "यावता, भिक्खवे, सत्ता अपदा वा द्विपदा वा चतुप्पदा वा बहुप्पदा वा रूपिनो वा अरूपिनो वा सञ्ञिनो वा असञ्ञिनो वा नेवसञ्ञीनासञ्ञिनो वा, तथागतो तेसं अग्गमक्खायति अरहं सम्मासम्बुद्धो; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि कुसला धम्मा, सब्बे ते अप्पमादमूलका अप्पमादसमोसरणा; अप्पमादो तेसं धम्मानं अग्गमक्खायति।

---

५. अप्रमादवर्ग

१३९. तथागतसूत्र : : अप्रमाद का वैशिष्ट्य

१४१. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! संसार में जितने भी विना पैरों वाले, दो पैरों वाले, चार पैरों वाले या बहुत पैरों वाले रूपी, अरूपी, संज्ञी, असंज्ञी, या नैवसंज्ञी नासंज्ञी प्राणी हैं, उन में तथागत (भगवान् बुद्ध) ही श्रेष्ठ कहलाते हैं। इसी तरह, भिक्षुओ! जितने भी कुशल धर्म हैं वे सभी अप्रमादमूलक एवं अप्रमाद पर ही आधृत हैं; अर्थात् अप्रमाद उन सब में श्रेष्ठ है। ऐसे अप्रमादयुक्त भिक्षु से यह आशा की जा सकती है कि वह आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करेगा तथा उस का पूर्णतः अभ्यास करेगा। भिक्षुओ! वह भिक्षु इस मार्ग का कैसे अभ्यास करेगा? भिक्षुओ! वह भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग से समन्वित सम्यग्दृष्टि की...पूर्ववत्... सम्यक्समाधि की भावना करता है। यों, वह अप्रमत्त भिक्षु इस मार्ग की साधना एवं अभ्यास करता है।

"भिक्षुओ! संसार में जितने भी विना पैरों वाले, दो पैरों वाले...पूर्ववत्...अमृत

अप्पमत्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं ...पे०...सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनय-परियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती ति।

''यावता, भिक्खवे, सत्ता अपदा वा द्विपदा वा चतुप्पदा वा बहुप्पदा वा रूपिनो वा अरूपिनो वा सञ्ञिनो वा असञ्ञिनो वा नेवसञ्ञीनासञ्ञिनो वा, तथागतो तेसं अग्गमक्खायति अरहं सम्मासम्बुद्धो; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि कुसला धम्मा, सब्बे ते अप्पमादमूलका अप्पमादसमोसरणा; अप्पमादो तेसं धम्मानं अग्गमक्खायति। अप्पमत्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु [R.43]
सम्मादिट्ठिं भावेति अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु [B.40]
अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती ति।

''यावता, भिक्खवे, सत्ता अपदा वा द्विपदा वा चतुप्पदा वा बहुप्पदा वा रूपिनो वा अरूपिनो वा सञ्ञिनो वा असञ्ञिनो वा नेवसञ्ञीनासञ्ञिनो वा, तथागतो तेसं अग्गमक्खायति अरहं सम्मासम्बुद्धो; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि कुसला धम्मा, सब्बे ते अप्पमादमूलका अप्पमादसमोसरणा; अप्पमादो तेसं धम्मानं अग्गमक्खायति। अप्पमत्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं [N.43]
भावेस्सति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं...पे०... सम्मासमाधिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं। एवं खो, भिक्खवे,

---

(निर्वाण) प्लुत (डूबी हुई), अमृत की ओर पहुँचाने वाली, अमृत की सीमा तक ले जाने वाली सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्...सम्यक्समाधि का अभ्यास करता है।

भिक्खु अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती'' ति।

१४०. पदसुत्तं

१४२. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, यानि कानिचि जङ्गलानं पाणानं पदजातानि सब्बानि 'तानि हत्थिपदे समोधानं गच्छन्ति; हत्थिपदं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—महन्तत्तेन; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि कुसला धम्मा, सब्बे ते अप्पमादमूलका अप्पमादसमोसरणा; अप्पमादो तेसं धम्मानं अग्गमक्खायति। अप्पमत्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०... सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती'' ति।

१४१-१४५. कूटादिसुत्तं

१४३-१४७. सेय्यथापि, भिक्खवे, कूटागारस्स या काचि गोपानसियो सब्बा ता [B.41] कूटङ्गमा कूटनिन्ना कूटसमोसरणा; कूटं तासं अग्गमक्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे,...पे०...(यथा हेट्ठिमसुत्तन्तं एवं वित्थारेतब्बं।)

''भिक्षुओ! संसार में जितने भी विना पैरों वाले, दो पैरों वाले...पूर्ववत्...निर्वाण की ओर बढाने वाली सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि की साधना करता है॥

१४०. पदसूत्र : : अप्रमाद की श्रेष्ठता

१४२. ''जैसे, भिक्षुओ! जितने भी जङ्गल में रहने वाले प्राणी हैं, उन सब के पैर हाथी के पैरों की लम्बाई चौड़ाई में समाहित हो जाते हैं, अत: हाथी का पैर ही जङ्गली प्राणियों के सभी पैरों में श्रेष्ठ कहलाता है; इसी तरह, भिक्षुओ! जितने भी कुशल धर्म हैं; अप्रमाद, उन सभी धर्मों में, श्रेष्ठ कहलाता है। ऐसे अप्रमाद गुण से युक्त साधक भिक्षु से यह आशा की जा सकती है कि वह इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की सम्यक्तया (विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग से समन्वित) साधना करेगा। ...पूर्ववत्...॥

१४१-१४५. कूटादिसूत्र : : अप्रमाद धर्म

१४३-१४७. **कूटागार**—''जैसे, भिक्षुओ! किसी भी कूटागार (शिखरयुक्त भवन) के सभी कूट (धरण=काष्ठ=लम्बे शहतीर) उसी की तरफ अपना मुख किये रहते हैं; कूट

''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि मूलगन्धा, कालानुसारियं तेसं अग्गम-[R.44] क्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे...पे०...।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि सारगन्धा, लोहितचन्दनं तेसं अग्गमक्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे...पे०...।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि पुप्फगन्धा, वस्सिकं तेसं अग्गमक्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे...पे०...।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि कुट्टराजानो, सब्बे ते रञ्ञो चक्कवत्तिस्स [N.44] अनुयन्ता भवन्ति, राजा तेसं चक्कवत्ति अग्गमक्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे ...पे०...॥ •

१४६-१४८. चन्दिमादिसुत्तं

१४८-१५०. सेय्यथापि, भिक्खवे, या काचि तारकरूपानं पभा, सब्बा ता चन्दिमप्पभाय कलं नाग्घन्ति सोळसिं, चन्दप्पभा तासं अग्गमक्खयति; एवमेव खो, भिक्खवे ...पे०...।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, सरदसमये विद्धे विगतवलाहके देवे आदिच्चो नभं

उन का प्रमुख कहलाता है; उसी तरह भिक्षुओ! अप्रमाद सभी धर्मों में प्रमुख कहलाता है। भिक्षुओ! वैसे ही अप्रमाद सभी कुशल धर्मों में श्रेष्ठ कहलाता है॥ •

मूलगन्ध—''भिक्षुओ! जैसे जितने भी मूल में गन्ध वाले क्षुप (छोटे वृक्ष=वनस्पति) हैं उन में खस (कालानुसारिय) का क्षुप सर्वोत्तम गन्ध वाला होता है; वैसे ही अप्रमाद...पूर्ववत्...॥ •

सारगन्ध—''जैसे, भिक्षुओ! जितने भी गन्ध वाले बड़े काष्ठ (सार) वृक्ष हैं उन में लालचन्दन का वृक्ष श्रेष्ठ गन्ध वाला है; उसी तरह अप्रमाद...पूर्ववत्...॥ •

पुष्पगन्ध—''जैसे, भिक्षुओ! जितने भी गन्ध वाले पुष्प वृक्ष हैं उन में वार्षिक (जूही का फूल) सर्वोत्तम गन्ध वाला है; उसी तरह अप्रमाद...पूर्ववत्...॥ •

चक्रवर्ती राजा—''जैसे, भिक्षुओ! छोटे छोटे दुर्गों के राजाओं से चक्रवर्ती राजा श्रेष्ठ होता है, उसी तरह अप्रमाद सब कुशल धर्मों से श्रेष्ठ होता है। ...पूर्ववत्...॥ •

१४६-१४८. चन्द्रमा आदिसूत्र : : अप्रमाद श्रेष्ठ धर्म

१४८-१५०. **चन्द्रमा**—''जैसे, भिक्षुओ! समस्त तारागण का सम्मिलित प्रकाश चन्द्रमा की सोलहवीं कला की समानता नहीं कर पाता; अतः चन्द्र ही वहाँ श्रेष्ठ समझा जाता है; उसी तरह सभी कुशल धर्मों में अप्रमाद धर्म श्रेष्ठ समझा जाता है। ...पूर्ववत्...॥•

सूर्य—''भिक्षुओ! जैसे शरदृतु में आकाश के मेघों से स्वच्छ हो जाने पर सूर्य

अब्भुस्सक्कमानो सब्बं आकासगतं तमगतं अभिविहच्च भासते च तपते च विरोचति च; एवमेव खो, भिक्खवे...पे०...।

[R.45] "सेय्यथापि, भिक्खवे, यानि कानिचि तन्तावुतानं वत्थानं, कासिकवत्थं तेसं अग्गमक्खयति; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि कुसला धम्मा, सब्बे ते अप्पमादमूलका अप्पमादसमोसरणा; अप्पमादो तेसं धम्मानं अग्गमक्खायति। अप्पमत्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेस्सति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०... सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती" ति। *(यदपि तथागतं तदपि वित्थारेतब्बं।)* ॥ •

अप्पमादवग्गो पञ्चमो॥

तस्सुद्दानं

[B.42] तथागतं पदं कूटं, मूलं सारो च वस्सिकं।
राजा चन्दिमसुरिया च, वत्थेन दसमं पदं॥ •

समस्त अन्धकार को नष्ट करने में समर्थ रहता है; अत: वह (सूर्य) ही प्रकाशक पदार्थों में सर्वश्रेष्ठ (अग्र) कहलाता है; उसी तरह अप्रमाद...पूर्ववत्...॥ •

काशी में बना वस्त्र—"भिक्षुओ! जैसे बुने गये सभी वस्त्रों में काशी का बना कौशेय (रेशमी) वस्त्र श्रेष्ठ समझा जाता है; उसी तरह अप्रमाद सभी कुशल धर्मों में प्रमुख समझा जाता है॥ *(तथागतसूत्र के समान ही इन सब सूत्रों का विस्तार कर लें।)* •

अप्रमादवर्ग समाप्त॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. तथागतसूत्र, २. पदसूत्र, ३. कूटागारसूत्र, ४. मूलगन्धसूत्र, ५. सारगन्धसूत्र, ६. पुष्पगन्धसूत्र, ७. चक्रवर्तीसूत्र, ८. चन्द्रमासूत्र, ९. सूर्यसूत्र एवं १०. काशिकेयवस्त्रसूत्र॥ •

६. बलकरणीयवग्गो छट्ठो

१४९. बलसुत्तं

१५१. सावत्थिनिदानं। ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि बलकरणीया कम्मन्ता करीयन्ति, सब्बे ते पठविं निस्साय पठवियं पतिट्ठाय एवमेते बलकरणीया [R.46, N.45] कम्मन्ता करीयन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती ति।

(परगङ्गापेय्यालीवण्णियतो परिपुण्णसुत्तं ति वित्थारमग्गी।)

''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि बलकरणीया कम्मन्ता करीयन्ति, सब्बे ते पठविं निस्साय पठवियं पतिट्ठाय एवमेते बलकरणीया कम्मन्ता करीयन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनय-

---

६. बलकरणीयवर्ग

१४९. बलसूत्र : : **शील का आधार**

१५१. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''जैसे, भिक्षुओ! यहाँ जितने बल (शक्ति=सामर्थ्य) के आधार पर कार्य किये जाते हैं वे सभी पृथ्वी के आधार पर (खड़े हो कर) ही किये जाते हैं। भिक्षुओ! उसी तरह, कोई भी साधक शील के आधार पर प्रतिष्ठित हो कर आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना में समर्थ हो पाता है। कैसे, भिक्षुओ! भिक्षु शील का आधार मान कर, शील पर प्रतिष्ठित हो कर इस अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना में समर्थ होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु शील को आधार मान कर विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागमय सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि की भावना करता है। इस तरह वह शील के आधार पर प्रतिष्ठित हो कर इस मार्ग की भावना करता है।

[पीछे गङ्गापेय्याल में कृत वर्णन के अनुसार यहाँ भी विस्तार कर लेना चाहिये।]

''जैसे, भिक्षुओ! जितने भी बल के आधार पर...पूर्ववत्...कैसे उस मार्ग की

परियोसानं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती ति।

[B.43] "सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि बलकरणीया कम्मन्ता करीयन्ति, सब्बे ते पठविं निस्साय पठवियं पतिट्ठाय एवमेते बलकरणीया कम्मन्ता करीयन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं ...पे०... सम्मासमाधिं भावेति अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती ति।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि बलकरणीया कम्मन्ता करीयन्ति, सब्बे ते पठविं [N.46] निस्साय पठवियं पतिट्ठाय एवमेते बलकरणीया कम्मन्ता करीयन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती" ति॥ ●

साधना में समर्थ होता है? ...शील के आधार पर सम्यग्दृष्टि से राग, द्वेष एवं मोह को दबाता हुआ सम्यक्समाधि तक पहुँच कर साधना करता है। ...पूर्ववत्...।

"जैसे, भिक्षुओ! जितने भी बल के आधार पर...पूर्ववत्...कैसे उस मार्ग की साधना में समर्थ होता है? शील के आधार पर अमृतप्लुत एवं अमृत (निर्वाण) की ओर ले जाने वाली सम्यग्दृष्टि से...सम्यक्समाधि से साधना करता है। ...पूर्ववत्...।

"जैसे, भिक्षुओ! ...जितने भी बल के आधार पर...पूर्ववत्...कैसे उस मार्ग साधना करता है? शील के आधार पर निर्वाण की ओर ले जाने वाली, निर्वाण की ओर बढ़ाने वाली सम्यग्दृष्टि से...सम्यक्समाधि से साधना करता है। ...पूर्ववत्...॥ ●

१५०. बीजसुत्तं

१५२. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचिमे बीजगामभूतगामा वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जन्ति, सब्बे ते पठविं निस्साय पठवियं पतिट्ठाय एवमेते बीजगामभूतगामा वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं पापुणाति धम्मेसु। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो [B.44] वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं पापुणाति धम्मेसु? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं [R.47] निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं पापुणाति धम्मेसू'' ति॥ ●

१५१. नागसुत्तं

१५३. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, हिमवन्तं पब्बतराजं निस्साय नागा कायं वड्ढेन्ति, बलं गाहेन्ति; ते तत्थ कायं वड्ढेत्वा बलं गाहेत्वा कुसोब्भे ओतरन्ति, कुसोब्भे ओतरित्वा महासोब्भे ओतरन्ति, महासोब्भे ओतरित्वा कुन्नदियो ओतरन्ति, कुन्नदियो [N.47] ओतरित्वा महानदियो ओतरन्ति, महानदियो ओतरित्वा महासमुद्दं ओतरन्ति, ते तत्थ महन्तत्तं वेपुल्लत्तं आपज्जन्ति कायेन; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले

---

१५०. बीजसूत्र : : शील का आधार

१५२. ''भिक्षुओ! यहाँ जितने भी बीज से उत्पन्न होने वाले वृक्षसमूह या प्राणिसमूह हैं, वे सभी पृथ्वी को आधार मान कर, पृथ्वी के सहारे से ही उत्पन्न होते हैं, बढते हैं; उसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु शील के आधार पर, शील पर प्रतिष्ठित हो कर इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करता है। कैसे, भिक्षुओ! शील के आधार पर इस मार्ग की साधना करता हुआ कुशल धर्मों का उत्पाद तथा उन की वृद्धि कर पाता है? वह शील के आधार पर विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग से युक्त सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि की भावना करता है। इस तरह यह भिक्षु...पूर्ववत्... साधना में समर्थ हो पाता है''॥ ●

१५१. नागसूत्र : : शील के आधार पर धर्मों की वृद्धि

१५३. भिक्षुओ! हिमालय के आधार पर ही नागों का शरीर बढ़ता है, तथा सबल होता है। सबल होने पर वे छोटी छोटी नालियों में उतर आते हैं, वहाँ से वे बड़े नालों में चले जाते हैं, वहाँ से वे छोटी छोटी नदियों में चले जाते हैं, वहाँ वे बड़े नदियों के सहारे

पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो महन्तत्तं वेपुल्लत्तं पापुणाति धम्मेसु। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो महन्तत्तं वेपुल्लत्तं पापुणाति धम्मेसु? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेक-निस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो महन्तत्तं वेपुल्लत्तं पापुणाति धम्मेसू'' ति॥

१५२. रुक्खसुत्तं

१५४. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, रुक्खो पाचीननिन्नो पाचीनपोणो पाचीनपब्भारो। सो मूलच्छिन्नो कतमेन पपतेय्या'' ति?

[R.48] ''येन, भन्ते, निन्नो येन पोणो येन पब्भारो'' ति।

''एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं [B.45] मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...

से समुद्र में पहुँच जाते हैं। वे वहाँ वृद्धि एवं विपुलता प्राप्त करते हैं। भिक्षुओ! उसी प्रकार, कोई साधक भिक्षु शील के आधार पर आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करता हुआ उस में वृद्धि एवं विपुलता प्राप्त करता है। वह यह सब कैसे प्राप्त करता है? भिक्षुओ! वह भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागयुक्त सम्यग्दृष्टि ...सम्यक्समाधि की भावना करता हुआ इस में विपुलता एवं वृद्धि प्राप्त करता है। इस तरह, भिक्षुओ! वह भिक्षु...पूर्ववत्...वृद्धि प्राप्त करता है''॥

१५२. वृक्षसूत्र : : निर्वाण की ओर झुकाव

१५४. जैसे, भिक्षुओ! कोई वृक्ष पूर्व की ओर झुका हुआ हो तथा उसे जड़ से काट दिया जाय तो वह किधर गिरेगा?

''भन्ते! वह जिधर झुका हुआ है उधर ही गिरेगा।''

''भिक्षुओ! वैसे ही साधक भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करता हुआ, निर्वाण की ओर ही झुकता है, निर्वाण की ओर ही उस की प्रगति होगी।

''भिक्षुओ! निर्वाण की ओर उस की कैसे प्रगति होगी? भिक्षुओ! वह विवेक,

सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥ ●

१५३. कुम्भसुत्तं

१५५. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, कुम्भो निक्कुज्जो वमतेव उदकं, नो पच्चावमति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं [N.48] मग्गं बहुलीकरोन्तो वमतेव पापके अकुसले धम्मे, नो पच्चावमति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो वमतेव पापके अकुसले धम्मे, नो पच्चावमति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो वमतेव पापके अकुसले धम्मे, नो पच्चावमती'' ति॥ ●

१५४. सूकसुत्तं

१५६. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, सालिसूकं वा यवसूकं वा सम्मापणिहितं हत्थेन वा पादेन वा अक्कन्तं हत्थं वा पादं वा भिन्दिस्सति लोहितं वा उप्पादेस्सती ति—ठानमेतं विज्जति। तं किस्स हेतु? सम्मापणिहितत्ता, भिक्खवे, सूकस्स। एवमेव खो, [R.49] भिक्खवे, भिक्खु सम्मापणिहिताय दिट्ठिया सम्मापणिहिताय मग्गभावनाय अविज्जं

वैराग्य, निरोध एवं त्यागयुक्त सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि की भावना करता है, इस तरह निर्वाण की ओर झुकता है तथा उधर ही अग्रसर होता है॥'' ●

१५३. कुम्भसूत्र : : अकुशल धर्मों का त्याग

१५५. ''जैसे, भिक्षुओ! किसी घड़े को उलट देने से उस का समस्त जल नीचे गिर जाता है; भिक्षुओ! वैसे ही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग का सम्यगभ्यासी साधक भिक्षु सभी पापमय अकुशल धर्मों को स्वचित्त से दूर कर देता है, पुनः ग्रहण नहीं करता। ...पूर्ववत्... ॥●

१५४. शूकसूत्र : : निर्वाणप्राप्ति

१५६. ''भिक्षुओ! ऐसा हो सकता है कि ठीक से रखा हुआ कोई शालिधान या यवधान का शूक (ऊपर का तीक्ष्ण किनारा) हाथ या पैर से स्पर्श किये जाने पर उसे काट दे तथा उस से रक्त बहने लगे। भिक्षुओ! ऐसा क्यों होता है? क्यों कि वह शूक ठीक से रखा हुआ है। इसी तरह, भिक्षुओ! दृष्टि के सम्यक् प्रणिहित होने के कारण, मार्गभावना

भिन्दिस्सति, विज्जं उप्पादेस्सति, निब्बानं सच्छिकरिस्सती ति—ठानमेतं विज्जति। तं किस्स हेतु? सम्मापणिहितत्ता, भिक्खवे, दिट्ठिया। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सम्मापणिहिताय दिट्ठिया सम्मापणिहिताय मग्गभावनाय अविज्जं भिन्दति, विज्जं [B.46] उप्पादेति, निब्बानं सच्छिकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोध-निस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सम्मापणिहिताय दिट्ठिया सम्मापणिहिताय मग्गभावनाय अविज्जं भिन्दति, विज्जं उप्पादेति, निब्बानं सच्छिकरोती'' ति॥

१५५. आकाससुत्तं

१५७. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, आकासे विविधा वाता वायन्ति—पुरत्थिमा पि वाता वायन्ति, पच्छिमा पि वाता वायन्ति, उत्तरा पि वाता वायन्ति, दक्खिणा पि वाता [N.49] वायन्ति, सरजा पि वाता वायन्ति, अरजा पि वाता वायन्ति, सीता पि वाता वायन्ति, उण्हा पि वाता वायन्ति, परित्ता पि वाता वायन्ति, अधिमत्ता पि वाता वायन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावयतो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोतो चत्तारो पि सतिपट्ठाना भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, चत्तारो पि सम्मप्पधाना भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, चत्तारो पि इद्धिपादा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, पञ्च पि इन्द्रियानि भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, पञ्च पि बलानि भावनापरिपूरिं गच्छन्ति, सत्त पि

के सम्यक्प्रणिहित होने के कारण अविज्जा नष्ट हो सकती है, विद्या उत्पन्न हो सकती है, निर्वाण का साक्षात्कार हो सकता है—यह सम्भव है। वह कैसे? भिक्षुओ! दृष्टि के सम्यक्प्रणिहित होने के कारण ही ऐसा सम्भव है। कैसे, भिक्षुओ! वह...निर्वाण का साक्षात्कार कर सकता है? जब वह विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागयुक्त सम्यग्दृष्टि... सम्यक्समाधि की भावना पूर्ण कर लेता है। इस तरह, वह सम्यक्प्रणिहित दृष्टि...समाधि से अपनी अविद्या को नष्ट कर लेता है, विद्या उत्पन्न कर लेता है तथा निर्वाण का साक्षात्कार कर लेता है॥

१५५. आकाशसूत्र : : आकाश का दृष्टान्त

१५७. ''जैसे, भिक्षुओ! आकाश में विविध हवाएं चलती रहती हैं—पूर्व की भी, पश्चिम की भी, उत्तर की भी, दक्षिण की भी। धूल भरी आँधी भी, स्वच्छ हवा भी; शीत भी, उष्ण भी; कम भी, अधिक भी हवाएँ चलती रहती हैं; उसी तरह, भिक्षुओ! आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करते हुए भिक्षु के चारों स्मृतिप्रस्थान, चारों सम्यक्प्रधान, चारों ऋद्धिपाद, पाँचों इन्द्रियाँ, पाँचों बल, सातों बोध्यङ्ग भी पूर्ण हो जाते हैं। वह कैसे?

बोज्झङ्गा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खुनो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावयतो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोतो चत्तारो पि सतिपट्ठाना भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, चत्तारो पि सम्मप्पधाना भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, चत्तारो पि इद्धिपादा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, पञ्च पि इन्द्रियानि भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, पञ्च पि बलानि भावनापरिपूरिं गच्छन्ति, सत्त पि बोज्झङ्गा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अरियं [R.50] अट्ठङ्गिकं मग्गं भावयतो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोतो चत्तारो पि सतिपट्ठाना भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, चत्तारो पि सम्मप्पधाना भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, चत्तारो पि इद्धिपादा भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, पञ्च पि इन्द्रियानि भावनापारिपूरिं गच्छन्ति, पञ्च पि बलानि भावनापरिपूरिं गच्छन्ति, सत्त पि बोज्झङ्गा भावनापारिपूरिं गच्छन्ती'' ति॥ •

१५६. पठममेघसुत्तं

१५८. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, गिम्हानं पच्छिमे मासे ऊहतं रजोजल्लं, तमेनं महाअकालमेघो ठानसो अन्तरधापेति वूपसमेति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु [B.47] अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो उप्पन्नुप्पन्ने पापके अकुसले धम्मे ठानसो अन्तरधापेति वूपसमेति; कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो उप्पन्नुप्पन्ने पापके अकुसले धम्मे ठानसो अन्तरधापेति वूपसमेति? इध, भिक्खवे, भिक्खु [N.50] सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोध-निस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो उप्पन्नुप्पन्ने पापके अकुसले धम्मे ठानसो अन्तरधापेति वूपसमेती'' ति॥ •

विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागयुक्त सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि की भावना करने से ये चारों स्मृतिप्रस्थान...सातों बोध्यङ्ग पूर्ण हो जाते हैं॥'' •

१५६. प्रथम मेघसूत्र : : वर्षा की उपमा

१५८. ''भिक्षुओ! जैसे ग्रीष्म ऋतु की आँधी भरी धूलि को वर्षा ऋतु की प्रथम वर्षा ही पूर्णतः दबा देती है, शान्त कर देती है; वैसे ही, भिक्षुओ! साधक भिक्षु इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना से, अपने पूर्वोत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों को पूर्णतः दबा देता है, शान्त कर देता है। वह कैसे? ...पूर्वसूत्रवत्...॥ •

१५७. दुतियमेघसुत्तं

१५९. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, उप्पन्नं महामेघं, तमेनं महावातो अन्तरा येव अन्तरधापेति वूपसमेति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो उप्पन्नुप्पन्ने पापके अकुसले धम्मे अन्तरा येव अन्तरधापेति वूपसमेति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो उप्पन्नुप्पन्ने पापके अकुसले धम्मे अन्तरा येव [R.51] अन्तरधापेति वूपसमेति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०... सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो उप्पन्नुप्पन्ने पापके अकुसले धम्मे अन्तरा येव अन्तरधापेति वूपसमेती'' ति॥ •

१५८. नावासुत्तं

१६०. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, सामुद्दिकाय नावाय वेत्तबन्धनबन्धाय छ मासानि उदके परियादाय हेमन्तिकेन थलं उक्खित्ताय वातातपपरेतानि. बन्धनानि तानि पावुस्सकेन मेघेन अभिप्पवुट्ठानि अप्पकसिरेनेव पटिप्पस्सम्भन्ति, पूतिकानि भवन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावयतो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं [B.48] बहुलीकरोतो अप्पकसिरेनेव संयोजनानि पटिप्पस्सम्भन्ति, पूतिकानि भवन्ति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खुनो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावयतो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोतो अप्पकसिरेनेव संयोजनानि पटिप्पस्सम्भन्ति, पूतिकानि भवन्ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अरियं

---

१५७. द्वितीय मेघसूत्र : : मेघ की उपमा

१५९. ''भिक्षुओ! जैसे वर्षा ऋतु का मेघ धूल भरी आँधी को बीच में ही रोक देता है, शान्त कर देता है, उसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु अपने पूर्वोत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों को आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना से बीच में ही रोक देता है, नष्ट कर देता है। वह कैसे? ...पूर्ववत्...'' *(विस्तार कर लें।)*॥ •

१५८. नौसूत्र : : संयोजनों का नाश

१६०. ''भिक्षुओ! जैसे (नदी या समुद्र के) जल में छह मास तक चलने के बाद, हेमन्त ऋतु में भूमि प्रदेश में रखी हुई किसी नौका के बन्धन निरन्तर जल पड़ने से उस से

अट्ठङ्गिकं मग्गं भावयतो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोतो अप्पकसिरेनेव [N.51] संयोजनानि पटिप्पस्सम्भन्ति, पूतिकानि भवन्ती'' ति॥ •

१५९. आगन्तुकसुत्तं

१६१. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, आगन्तुकागारं। तत्थ पुरत्थिमाय पि दिसाय आगन्त्वा वासं कप्पेन्ति, पच्छिमाय पि दिसाय आगन्त्वा वासं कप्पेन्ति, उत्तराय पि दिसाय आगन्त्वा वासं कप्पेन्ति, दक्खिणाय पि दिसाय आगन्त्वा वासं कप्पेन्ति, खत्तिया पि आगन्त्वा वासं कप्पेन्ति, ब्राह्मणा पि आगन्त्वा वासं कप्पेन्ति, वेस्सा पि [R.52] आगन्त्वा वासं कप्पेन्ति, सुद्दा पि आगन्त्वा वासं कप्पेन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो ये धम्मा अभिञ्ञा परिञ्ञेय्या ते धम्मे अभिञ्ञा परिजानाति...पे०...ये धम्मा अभिञ्ञा पहातब्बा ते धम्मे अभिञ्ञा पजहति, ये धम्मा अभिञ्ञा सच्छिकातब्बा ते धम्मे अभिञ्ञा सच्छिकरोति, ये धम्मा अभिञ्ञा भावेतब्बा ते धम्मे अभिञ्ञा भावेति।

''कतमे च, भिक्खवे, धम्मा अभिञ्ञा परिञ्ञेय्या? पञ्चुपादानक्खन्धा तिस्स वचनीयं। कतमे पञ्च? सेय्यथीदं—रूपुपादानक्खन्धो...पे०...विञ्ञाणुपादानक्खन्धो। इमे, भिक्खवे, धम्मा अभिञ्ञा परिञ्ञेय्या। कतमे च, भिक्खवे, धम्मा अभिञ्ञा पहातब्बा? अविज्जा च भवतण्हा च—इमे, भिक्खवे, धम्मा अभिञ्ञा पहातब्बा। कतमे च, भिक्खवे, धम्मा अभिञ्ञा सच्छिकातब्बा? विज्जा च विमुत्ति च—इमे, भिक्खवे,

---

भीग कर सड़ जाते हैं; वैसे ही भिक्षुओ! आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग का अभ्यास करने वाले भिक्षु के संयोजन (बन्धन) नष्ट हो जाते हैं। ...पूर्ववत्... ॥'' •

१५९. आगन्तुकसूत्र : : धर्मशाला का दृष्टान्त

१६१. ''जैसे, भिक्षुओ! कोई आगन्तुकावास (धर्मशाला) हो। वहाँ पूर्व दिशा से भी, पश्चिम दिशा से भी, उत्तर दिशा से भी या दक्षिण दिशा से भी यात्री आ कर ठहरें। क्षत्रिय भी, ब्राह्मण भी, वैश्य भी, शूद्र भी आ कर उस में विश्राम करें। इसी तरह, भिक्षुओ! भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करता हुआ, उस का अभ्यास करता हुआ, जो धर्म ज्ञानपूर्वक जानने योग्य हैं, उन्हें जान लेता है...पूर्ववत्...जो धर्म जान कर छोड़ने योग्य हैं उन्हें जान कर छोड़ देता है; तथा जो धर्म जान कर साक्षात्करणीय हैं उन का साक्षात्कार करता है; तथा जो धर्म जान कर साधनीय हैं, उन की साधना करता है।

''भिक्षुओ! यहाँ कौन से धर्म ज्ञानपूर्वक जानने योग्य हैं? ये ही रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार एवं विज्ञान—ये पाँच उपादानस्कन्ध। ये धर्म ज्ञानपूर्वक जानने योग्य हैं।

''भिक्षुओ! कौन से धर्म जान कर छोड़ने योग्य हैं? अविद्या एवं भवतृष्णा।

धम्मा अभिञ्ञा सच्छिकातब्बा। कतमे च, भिक्खवे, धम्मा अभिञ्ञा भावेतब्बा? समथो च विपस्सना च—इमे, भिक्खवे, धम्मा अभिञ्ञा भावेतब्बा। कथं च, [B.49] भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो ये धम्मा अभिञ्ञा परिञ्ञेय्या ते धम्मे अभिञ्ञा परिजानाति, ये धम्मा अभिञ्ञा भावेतब्बा ते धम्मे अभिञ्ञा भावेति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं [N.52] अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो ये धम्मा अभिञ्ञा परिञ्ञेय्या ते धम्मे अभिञ्ञा [R.53] परिजानाति, ये धम्मा अभिञ्ञा पहातब्बा ते धम्मे अभिञ्ञा पजहति, ये धम्मा अभिञ्ञा सच्छिकातब्बा ते धम्मे अभिञ्ञा सच्छिकरोति, ये धम्मा अभिञ्ञा भावेतब्बा ते धम्मे अभिञ्ञा भावेती'' ति॥ •

१६०. नदीसुत्तं

१६२. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीन-पब्भारा। अथ महाजनकायो आगच्छेय्य कुदालपिटकं आदाय—'मयं इमं गङ्गं नदिं पच्छानिन्नं करिस्साम पच्छापोणं पच्छापब्भारं' ति। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, अपि नु सो महाजनकायो गङ्गं नदिं पच्छानिन्नं करेय्य पच्छापोणं पच्छापब्भारं'' ति?

''नो हेतं, भन्ते''।

''भिक्षुओ! कौन से धर्म जान कर साक्षात्करणीय हैं? विद्या एवं विमुक्ति।

''भिक्षुओ! कौन से धर्म जान कर साधना करने योग्य हैं? शमथ एवं विपश्यना।

''भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना तथा अभ्यास करता हुआ जानने योग्य धर्मों को...पूर्ववत्...साधनीय धर्मों की साधना करता है? वह विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग युक्त सम्यग्दृष्टि से...पूर्ववत्...सम्यक्समाधि से साधना करता है तो वह...पूर्ववत्... साधनीय धर्मों की साधना कर लेता है''॥ •

१६०. नदीसूत्र : : ज्ञानी का गृहस्थ बनना सम्भव नहीं

१६२. ...''जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्व दिशा की ओर मुख किये हुए ही बहती है, तब कोई विशाल जनसमूह फरसा (फावड़ा) एवं कुदाल हाथ में ले कर, वहाँ एकत्र हो कर यह कहे—'हम इस गङ्गा नदी का प्रवाहमार्ग पश्चिम दिशा की ओर मोड़ देंगे', तो क्या यह सम्भव है?''

''नहीं, भन्ते!''

''तं किस्स हेतु''?

''गङ्गा, भन्ते, नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा। सा न सुकरा पच्छानिन्नं कातुं पच्छापोणं पच्छापब्भारं। यावदेव पन सो महाजनकायो किलमथस्स विघातस्स भागी अस्सा'' ति।

''एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुं अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तं अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तं राजानो वा राजमहामत्ता वा मित्ता वा अमच्चा वा ञाती वा ञातिसालोहिता वा भोगेहि अभिहट्ठुं पवारेय्युं—'एहम्भो पुरिस, किं ते इमे कासावा अनुदहन्ति, किं मुण्डो कपालमनुसञ्चरसि! एहि, हीनायावत्तित्वा भोगे च भुञ्जस्सु पुञ्ञानि च करोही' ति। सो वत, भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेन्तो अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोन्तो सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति। तं किस्स हेतु? यं हि तं, भिक्खवे, चित्तं दीघरत्तं विवेकनिन्नं विवेकपोणं विवेकपब्भारं तं वत हीनायावत्तिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति। कथं च, [R.54] भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोति? इध भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...सम्मासमाधिं [N.53] भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो,

---

''यह क्यों?''

''क्यों कि, भन्ते! यह गङ्गा नदी प्राचीनाभिमुख ही प्रवाहित होती आयी है, वह इतने से साधारण जनसमूह द्वारा पश्चिमाभिमुख नहीं की जा सकती, अपि तु इस अविचारित कर्म से वह जनसमूह ही क्लेश एवं दु:ख का भागी होगा!''

''इसी तरह, भिक्षुओ! किसी साधक भिक्षु को, जो आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना कर रहा हो, उस को राजा या राजमहामात्य, उस का कोई साथी या मित्र, ज्ञाति या परिजन वहाँ आ कर यह कहे—'अरे पुरुष! यहाँ आओ, इन काषाय वस्त्रों में क्या रखा है! तुम सिर मुँडा कर तथा भिक्षापात्र हाथ में ले कर क्या घूम रहे हो! आओ! पुन: गृहस्थ धर्म स्वीकार कर भोगों का उपभोग करो, तथा वहीं रह कर पुण्य करते हुए अपना जीवनयापन करो!' यह सुन कर भी वह साधक उस अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना त्याग कर पुन: गृहस्थ धर्म स्वीकार कर ले—यह सम्भव नहीं। वह क्यों? क्यों कि, भिक्षुओ! उस साधक का चित्त बहुत समय से विवेकाश्रित वैराग्य की ओर ही झुका हुआ है, अत: वह अब पुन: गृहस्थाश्रम में लौटेगा—यह सम्भव नहीं है। कैसे, भिक्षुओ! वह इस अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करता है? यहाँ, भिक्षुओ! वह साधक विवेकाश्रित तथा विवेक की ओर

[B.50] भिक्खवे, भिक्खु अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं भावेति, अरियं अट्ठङ्गिकं मग्गं बहुलीकरोती'' ति॥ *(यदपि बलकरणीयं तदपि वित्थारेतब्बं।)* •

बलकरणीयवग्गो छट्ठो॥

तस्सुद्दानं

बलं बीजं च नागो च, रुक्खो कुम्भेन सूकिया।
आकासेन च द्वे मेघा, नावा आगन्तुका नदी ति॥ •

झुकी हुई अपनी सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि से विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग युक्त साधना कर रहा है॥ *(बलकरणीयवर्ग की तरह यहाँ भी विस्तार कर लें।)* •

बलकरणीयवर्ग षष्ठ सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. बलसूत्र, २. बीजसूत्र, ३. नागसूत्र, ४. वृक्षसूत्र, ५. कुम्भसूत्र, ६. शूकसूत्र, ७. आकाशसूत्र, ८. प्रथम मेघसूत्र, ९. द्वितीय मेघसूत्र, १०. नौसूत्र, ११. आगन्तुकसूत्र एवं १२. नदीसूत्र॥ •

७. एसनावग्गो सत्तमो

१६१. एसनासुत्तं

१६३. सावत्थिनिदानं। "तिस्सो इमा, भिक्खवे, एसना। कतमा तिस्सो? कामेसना, भवेसना, ब्रह्मचरियेसना—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो एसना। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं अभिञ्ञाय अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो। कतमो अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं अभिञ्ञाय अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो ति।

"तिस्सो इमा खो, भिक्खवे, एसना। कतमा तिस्सो? कामेसना, भवेसना, ब्रह्मचरियेसना—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो एसना। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं अभिञ्ञाय अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो। कतमो अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०...सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं अभिञ्ञाय अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो ति।

"तिस्सो इमा खो, भिक्खवे, एसना। कतमा तिस्सो? कामेसना, भवेसना, ब्रह्मचरियेसना—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो एसना। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं अभिञ्ञाय अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो। कतमो अरियो [B.51] अट्ठङ्गिको मग्गो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०...सम्मासमाधिं

---

७. एषणावर्ग

१६१. एषणासूत्र : : त्रिविध एषणा

अभिज्ञा—१६३. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! ये तीन एषणाएँ हैं—१. कामैषणा, २. भवैषणा, एवं ३. मिथ्यादृष्टियुक्त ब्रह्मचर्यैषणा। यों, ये तीन एषणाएँ हैं। इन तीन एषणाओं के भली भाँति अभिज्ञान के लिए, भिक्षुओ! आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये। कौन सा आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागयुक्त सम्यग्दृष्टि ...सम्यक्समाधि की भावना करता है। इन तीन एषणाओं की अभिज्ञा (ज्ञान) के लिये भी इस अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये।

...पूर्ववत्...इन तीनों एषणाओं को जानने के लिये राग, द्वेष एवं मोह को दबाने वाली सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि की भावना करनी चाहिये।

[N.54] भावेति अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं अभिञ्ञाय अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो ति।

"तिस्सो इमा खो, भिक्खवे, एसना। कतमा तिस्सो? कामेसना, भवेसना, ब्रह्मचरियेसना—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो एसना। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं अभिञ्ञाय अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो। कतमो अरियो अट्ठङ्गिको [R.55] मग्गो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०...सम्मासमाधिं भावेति निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं अभिञ्ञाय अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो ति।

"तिस्सो इमा, भिक्खवे, एसना। कतमा तिस्सो? कामेसना, भवेसना, ब्रह्मचरियेसना—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो एसना। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं परिञ्ञाय ...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो ति।

(यदपि अभिञ्ञा तदपि परिञ्ञाय वित्थारेतब्बं।)

"तिस्सो इमा, भिक्खवे, एसना। कतमा तिस्सो? कामेसना, भवेसना, ब्रह्मचरियेसना—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो एसना। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं परिक्खयाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो ति।

(यदपि अभिञ्ञा तदपि परिक्खयाय वित्थारेतब्बं।)

"तिस्सो इमा, भिक्खवे, एसना। कतमा तिस्सो? कामेसना, भवेसना, ब्रह्मचरियेसना—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो एसना। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं पहानाय अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो। कतमो अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं

...पूर्ववत्...इन तीन एषणाओं को जानने के लिये अमृतपदप्रदात्री, अमृत (निर्वाण) पद की ओर झुकाने वाली सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि की भावना करनी चाहिये।

...पूर्ववत्...इन तीन एषणाओं को जानने के लिये निर्वाण की ओर झुकाने वाली तथा निर्वाण तक पहुँचाने वाली सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि की भावना करनी चाहिये।

परिज्ञा—...पूर्ववत्...इन तीन एषणाओं के भली भाँति परिज्ञान के लिये...पूर्ववत्... आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करनी चाहिये।

(ऊपर अभिज्ञा-पाठ के समान इस परिज्ञा-पाठ का भी विस्तार कर लें।)

परिक्षय—...पूर्ववत्...इन तीन एषणाओं के भली भाँति परिक्षय के लिये...पूर्ववत्... आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करनी चाहिये।

(ऊपर अभिज्ञा-पाठ के समान ही इस परिक्षय-पाठ का भी विस्तार कर लेना चाहिये।)

विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं पहानाय अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ •

(यदपि अभिञ्ञा तदपि पहानाय वित्थारेतब्बं।)

१६२. विधासुत्तं

१६४. ''तिस्सो इमा, भिक्खवे, विधा। कतमा तिस्सो? [B.52, R.56, N.55] 'सेय्योहमस्मी' ति विधा, 'सदिसोहमस्मी' ति विधा, 'हीनोहमस्मी' ति विधा—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो विधा। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं विधानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो। कतमो अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं विधानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ •

(यथा एसना एवं वित्थारेतब्बं।)

१६३. आसवसुत्तं

१६५. ''तयोमे, भिक्खवे, आसवा। कतमे तयो? कामासवो, भवासवो, अविज्जासवो—इमे खो, भिक्खवे, तयो आसवा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णन्नं

प्रहाण—...पूर्ववत्...इन तीन एषणाओं के भली भाँति प्रहाण के लिये... पूर्ववत्...आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये''॥ •

(ऊपर अभिज्ञा-पाठ की तरह ही इस प्रहाण-पाठ का भी विस्तार कर लेना चाहिये।)

१६२. विधासूत्र : : तीन अहङ्कार

१६४. ''भिक्षुओ! ये तीन अहङ्कार गिनाये गये हैं। कौन से तीन? 'मैं इन से श्रेष्ठ हूँ'—यह प्रथम अहङ्कार है, 'मैं इस के समान हूँ'—यह दूसरा अहङ्कार है, तथा 'मैं दूसरों से हीन (निकृष्ट) हूँ'—यह तीसरा अहङ्कार होता है। भिक्षुओ! ये तीन अहङ्कार होते हैं। इन तीनों अहङ्कारों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये। ...पूर्ववत्... ॥ •

(एषणासूत्रवत् ही पाठ का विस्तार कर लें।) ॥

१६३. आश्रवसूत्र : : तीन आश्रव

१६५. ''भिक्षुओ! आश्रव (चित्तविकार) तीन होते हैं—१. कामाश्रव, २. भवाश्रव एवं ३. अविद्याश्रव। ये तीन आश्रव होते हैं। भिक्षुओ! इन तीनों आश्रवों के अभिज्ञान,

आसवानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥

१६४. भवसुत्तं

१६६. ''तयोमे, भिक्खवे, भवा। कतमे तयो? कामभवो, रूपभवो, अरूपभवो—इमे खो, भिक्खवे, तयो भवा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णन्नं भवानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥

१६५. दुक्खतासुत्तं

१६७. ''तिस्सो इमा, भिक्खवे, दुक्खता। कतमा तिस्सो? दुक्खदुक्खता, सङ्खारदुक्खता, विपरिणामदुक्खता—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो दुक्खता। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं दुक्खतानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥

१६६. खिलसुत्तं

[R.57] १६८. ''तयोमे, भिक्खवे, खिला। कतमे तयो? रागो खिलो, दोसो खिलो, [N.56, B.53] मोहो खिलो—इमे खो, भिक्खवे, तयो खिला। इमेसं खो, भिक्खवे,

---

परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये साधक को आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करनी चाहिये। ...पूर्ववत्... ॥

१६४. भवसूत्र : : तीन भव

१६६. ''भिक्षुओ! ये तीन भव होते हैं—१. कामभव, २. रूपभव, एवं ३. अरूपभव। यों, ये तीन भव गिनाये गये हैं। इन तीन भवों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये साधक भिक्षु को आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करनी चाहिये। ...पूर्ववत्... ॥

१६५. दुःखतासूत्र : : तीन दुःखताएँ

१६७. ''भिक्षुओ! ये तीन दुःखताएँ होती हैं—१. दुःखदुःखता, २. संस्कारदुःखता, एवं ३. विपरिणामदुःखता। भिक्षुओ! यों, ये तीन दुःखताएँ होती हैं। इन तीनों दुःखताओं के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये साधक भिक्षु को आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये॥

१६६. खिलसूत्र : : तीन बाधाएँ

१६८. ''भिक्षुओ! ये तीन खिल (बाधाएँ) कहे गये हैं—१. राग, २. द्वेष एवं ३. मोह। भिक्षुओ! ये तीन खिल हैं। भिक्षुओ! इन तीन खिलों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय

तिण्णन्नं खिलानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ ●

१६७. मलसुत्तं

१६९. ''तीणिमानि, भिक्खवे, मलानि। कतमानि तीणि? रागो मलं, दोसो मलं, मोहो मलं—इमानि खो, भिक्खवे, तीणि मलानि। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णन्नं मलानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ ●

१६८. नीघसुत्तं

१७०. ''तयोमे, भिक्खवे, नीघा। कतमे तयो? रागो नीघो, दोसो नीघो, मोहो नीघो—इमे खो, भिक्खवे, तयो नीघा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णन्नं नीघानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥

१६९. वेदनासुत्तं

१७१. ''तिस्सो इमा, भिक्खवे, वेदना। कतमा तिस्सो? सुखा वेदना, दुक्खा वेदना, अदुक्खमसुखा वेदना—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो वेदना। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं वेदनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ ●

एवं प्रहाण के लिये साधक भिक्षु को आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करनी चाहिये॥ ...पूर्ववत्...॥ ●

१६७. मलसूत्र : : तीन मल

१६९. ''भिक्षुओ! ये तीन मल कहलाते हैं—१. रागमल, २. द्वेषमल तथा ३. मोहमल। भिक्षुओ! इन तीन मलों को यों जानना चाहिये। इन तीन मलों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये भिक्षु को अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये॥ ...पूर्ववत्...॥ ●

१६८. नीघसूत्र : : दुःखत्रय

१७०. ''भिक्षुओ! इन तीन को 'नीघ' कहा जाता है—१. राग, २. द्वेष एवं ३. मोह। भिक्षुओ! इन तीनों नीघों (दुःखों) के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये॥ ...पूर्ववत्...''॥ ●

१६९. वेदनासूत्र : : तीन वेदनाएँ

१७१. ''भिक्षुओ! वेदना तीन प्रकार की होती हैं—१. सुखावेदना, २. दुःखावेदना, ३. अदुःखाअसुखा वेदना। भिक्षुओ! ये तीन वेदनाएँ होती हैं। इन तीनों वेदनाओं के

१७०. तण्हासुत्तं

[R.58] १७२. ''तिस्सो इमा, भिक्खवे, तण्हा। कतमा तिस्सो? कामतण्हा, भवतण्हा, विभवतण्हा—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो तण्हा। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं तण्हानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो। कतमो अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...सम्मासमाधिं [N.57] भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं तण्हानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ ●

१७१. तसिनासुत्तं

[B.54] १७३. ''तिस्सो इमा, भिक्खवे, तसिना। कतमा तिस्सो? कामतसिना, भवतसिना, विभवतसिना—इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं तसिनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय' पहानाय...पे०...रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं...पे०...अमतोगधं अमतपरायनं अमतपरियोसानं...पे०... निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं तसिनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ ●

एसनावग्गो सत्तमो॥

अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये साधक को आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करनी चाहिये॥ ...पूर्ववत्...''॥ ●

१७०. तृष्णासूत्र : : तीन तृष्णाएँ

१७२. ''भिक्षुओ! तृष्णाएँ तीन हैं—१. कामतृष्णा, २. भवतृष्णा, एवं ३. विभवतृष्णा। भिक्षुओ! ये तीन तृष्णाएँ होती हैं। इन तीनों तृष्णाओं के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये साधक भिक्षु को आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये॥ ...पूर्ववत्... ॥ ●

१७१. तर्षणासूत्र : : तीन तर्षणा (पिपासा)

१७३. ''भिक्षुओ! ये तीन तर्षणाएँ (पिपासा=तृष्णा) होती हैं; जैसे—१. कामतर्षणा, २. भवतर्षणा, एवं ३. विभवतर्षणा। यों, भिक्षुओ! ये तीन तर्षणाएँ कही गयी हैं। इन तीनों तर्षणाओं के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाणहेतु साधक को राग, द्वेष, मोह को दबाने के लिये...पूर्ववत्...अमृतप्लुत, अमृत तक पहुँचाने वाली तथा निर्वाण की ओर

तस्सुद्दानं

एसना विधा आसवो, भवो च दुक्खता खिला।
मलं नीघो च वेदना, द्वे तण्हा तसिनाय चा ति॥ •

झुकनेवाली, निर्वाण तक पहुँचाने वाली सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि तक—इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये। ...पूर्ववत्...''॥ •

एषणावर्ग सप्तम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. एषणासूत्र, २. विधासूत्र, ३. आश्रवसूत्र, ४. भवसूत्र, ५. दुःखतासूत्र, ६. खिलसूत्र, ७. मलसूत्र, ८. नीघसूत्र, ९. वेदनासूत्र एवं १०. तृष्णा एवं ११. तर्षणासूत्र॥ •

८. ओघवग्गो अट्ठमो

१७२. ओघसुत्तं

[R.59] १७४. सावत्थिनिदानं। "चत्तारोमे, भिक्खवे, ओघा। कतमे चत्तारो? कामोघो, भवोघो, दिट्ठोघो, अविज्जोघो—इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो ओघा। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं ओघानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो" ति॥ *(यथा एसना एवं वित्थारेतब्बं।)* •

१७३. योगसुत्तं

१७५. "चत्तारोमे, भिक्खवे, योगा। कतमे चत्तारो? कामयोगो, भवयोगो, दिट्ठियोगो अविज्जायोगो—इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो योगा। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं योगानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो". ति॥ •

१७४. उपादानसुत्तं

[N.58, B.55] १७६. "चत्तारिमानि, भिक्खवे, उपादानानि। कतमानि चत्तारि? कामुपादानं, दिट्ठुपादानं, सीलब्बतुपादानं, अत्तवादुपादानं—इमानि खो, भिक्खवे,

---

८. अष्टम औघवर्ग

१७२. औघसूत्र : : चार औघ (बाढ)

१७४. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! ये चार औघ होते हैं; जैसे—१. कामौघ, २. भवौघ, ३. दृष्ट्यौघ, एवं ४. अविद्यौघ। भिक्षुओ! ये चार औघ होते हैं। इन चारों औघों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये साधक भिक्षु को...इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये॥ ...पूर्ववत्..."॥

(पूर्वोक्त एषणासूत्र की तरह ही विस्तार कर लें।) •

१७३. योगसूत्र : : चार योग

१७५. ..."भिक्षुओ! योग चार होते हैं। कौन से चार? १. कामयोग, २. भवयोग, ३. दृष्टियोग, एवं ४. अविद्यायोग। ...। भिक्षुओ! इन चारों योगों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये...इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये॥ ...पूर्ववत्..."॥ •

१७४. उपादानसूत्र : : चार उपादान

१७६. ..."भिक्षुओ! उपादान (ग्रहण) चतुर्विध होते हैं; जैसे—१. कामोपादान, २. दृष्ट्युपादान, ३. शीलव्रतोपादान एवं ४. आत्मवादोपादान। भिक्षुओ! इस प्रकार ये चार

चत्तारि उपादानानि। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं उपादानानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय ...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ ●

१७५. गन्थसुत्तं

१७७. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, गन्था। कतमे चत्तारो? अभिज्झा कायगन्थो, ब्यापादो कायगन्थो, सीलब्बतपरामासो कायगन्थो, इदं सच्चाभिनिवेसो [R.60] कायगन्थो—इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो गन्था। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं गन्थानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ ●

१७६. अनुसयसुत्तं

१७८. ''सत्तिमे, भिक्खवे, अनुसया। कतमे सत्त? कामरागानुसयो, पटिघानुसयो, दिट्ठानुसयो, विचिकिच्छानुसयो, मानानुसयो, भवरागानुसयो, अविज्जानुसयो—इमे खो, भिक्खवे, सत्तानुसया। इमेसं खो, भिक्खवे, सत्तन्नं अनुसयानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ ●

१७७. कामगुणसुत्तं

१७९. ''पञ्चिमे, भिक्खवे, कामगुणा। कतमे पञ्च? चक्खुविञ्ञेय्या रूपा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया, सोतविञ्ञेय्या सद्दा...पे०...घान-

---

उपादन होते हैं। इन चारों उपादानों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाणहेतु...इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये॥ ...पूर्ववत्...''॥ ●

१७५. ग्रन्थसूत्र : : चार ग्रन्थियाँ (आग्रह)

१७७. ...''भिक्षुओ! ग्रन्थ भी चार होते हैं; जैसे—१. अभिध्या कायग्रन्थ, २. व्यापाद कायग्रन्थ, ३. शीलव्रतपरामर्श कायग्रन्थ, एवं ४. 'यही सत्य है'—ऐसा सत्कायग्रन्थ। इन चारों ग्रन्थों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये साधक को...इस आर्य अप्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये॥ ...पूर्ववत्...''॥ ●

१७६. अनुशयसूत्र : : सात अनुशय (चित्त की दुष्प्रवृत्ति)

१७८. ...''भिक्षुओ! अनुशय सात होते हैं; जैसे—१. कामरागानुशय, २. प्रतिघानुशय, ३. दृष्ट्यनुशय, ४. विचिकित्सानुशय, ५. मानानुशय, ६. भवरागानुशय एवं ७. अविद्यानुशय। भिक्षुओ! यों ये सात अनुशय कहे जाते हैं। ●

१७७. कामगुणसूत्र : : पाँच कामभोग

१७९. ...''भिक्षुओ! कामगुण पाँच होते हैं। कौन से पाँच? जैसे—१. इष्ट, कान्त,

विञ्ञेय्या गन्धा...पे०...जिव्हाविञ्ञेय्या रसा...पे०...कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया—इमे खो, भिक्खवे, पञ्च कामगुणा। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं कामगुणानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ •

१७८. नीवरणसुत्तं

[N.59, B.56] १८०. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, नीवरणानि। कतमानि पञ्च? कामच्छन्द-नीवरणं, ब्यापादनीवरणं, थीनमिद्धनीवरणं, उद्धच्चकुक्कुच्चनीवरणं, विचिकिच्छानी-वरणं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्च नीवरणानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं नीवरणानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ •

१७९. उपादानक्खन्धसुत्तं

१८१. ''पञ्चिमे, भिक्खवे, उपादानक्खन्धा। कतमे पञ्च? सेय्यथीदं—[R.61] रूपुपादानक्खन्धो, वेदनुपादानक्खन्धो, सञ्ञुपादानक्खन्धो, सङ्खारुपादान-क्खन्धो, विञ्ञाणुपादानक्खन्धो। इमे खो, भिक्खवे, पञ्चुपादानक्खन्धा। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उपादानक्खन्धानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०... अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ •

अभीष्ट, प्रिय, कामोपसंहृत, रागमय चतुर्विज्ञेय रूप..., २. ...श्रोत्रविज्ञेय शब्द; ३. ...घ्राण-विज्ञेय गन्ध, ४. ...जिह्वाविज्ञेय रस, एवं ५. ...कायविज्ञेय स्प्रष्टव्य। यों, भिक्षुओ! ये कामगुण पाँच होते हैं। इन पाँचों कामगुणों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये...इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की भावना करनी चाहिये''॥ •

१७८. नीवरणसूत्र : : पाँच नीवरण (बाधा)

१८०. ...''भिक्षुओ! नीवरण पाँच होते हैं। कौन से पाँच? जैसे—१. कामच्छन्दनी-वरण, २. व्यापादनीवरण, ३. स्त्यानमृद्धनीवरण, ४. औद्धत्यकौकृत्यनीवरण, एवं ५. विचिकित्सानीवरण। ये, भिक्षुओ! पाँच नीवरण होते हैं। इन पाँचों नीवरणों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये...पूर्ववत्...इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये''॥ •

१७९. उपादानस्कन्धसूत्र : : पाँच उपादानस्कन्ध

१८१. ...''भिक्षुओ! उपादानस्कन्ध पाँच होते हैं। कौन से पाँच? जैसे—१. रूपोपादानस्कन्ध, २. वेदनोपादानस्कन्ध, ३. संज्ञोपादानस्कन्ध, ४. संस्कारोपादानस्कन्ध

१८०. ओरम्भागियसुत्तं

१८२. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, ओरम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? सक्कायदिट्ठि, विचिकिच्छा, सीलब्बतपरामासो, कामच्छन्दो, ब्यापादो—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चोरम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय...पे०...अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो" ति॥

●

१८१. उद्धम्भागियसुत्तं

१८३. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो। कतमो [N.60] अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...सम्मासमाधिं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं [B.57] अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो ति।

"पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय [R.62] परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो। कतमो

एवं ५. विज्ञानोपादानस्कन्ध। इन पाँच उपादानस्कन्धों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये भिक्षु को...पूर्ववत्...इस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये"॥

१८०. अवरभागीयसूत्र : : पाँच अवरभागीय संयोजन

१८२. ..."भिक्षुओ! ये पाँच अवरभागीय संयोजन कहलाते हैं—१. सत्कायदृष्टि, २. विचिकित्सा, ३. शीलव्रतपरामर्श, ४. कामच्छन्द, एवं ५. व्यापाद। भिक्षुओ! ये पाँच अधोभागीय संयोजन होते हैं। इन पाँच अधोभागीय संयोजनों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये...पूर्ववत्...इस अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये"॥

१८१. ऊर्ध्वभागीयसूत्र : : पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन

१८३. ..."भिक्षुओ! ऊर्ध्वभागीय संयोजन पाँच होते हैं। कौन से पाँच? जैसे—१. रूपराग, २. अरूपराग, ३. मान, ४. औद्धत्य एवं ५. अविद्या। भिक्षुओ! इन पाँच

अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सम्मादिट्ठिं भावेति...पे०... सम्मासमाधिं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं अमतोगधं अमतपरायनं. अमतपरियोसानं निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय अयं अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावेतब्बो'' ति॥ •

ओघवग्गो अट्ठमो॥

तस्सुद्दानं

ओघो योगो उपादानं, गन्थं अनुसयेन च।
कामगुणा नीवरणं, खन्धा ओरुद्धम्भागिया ति॥

वग्गुद्दानं

अविज्जावग्गो पठमो, दुतियं विहारं वुच्चति।
मिच्छत्तं ततियो वग्गो, चतुत्थं पटिपन्नेनेव॥
तित्थियं पञ्चमो वग्गो, चतस्सो सुरियेन च।
बहुकते सत्तमो वग्गो, उप्पादो अट्ठमेन च॥
दिवसवग्गो नवमो, दसमो अप्पमादेन च।
एकादसबलवग्गो, द्वादस एसना पाळियं॥
ओघवग्गो भवति तेरसा ति॥ •

मग्गसंयुत्तं समत्तं॥

संयोजनों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये...पूर्ववत्...आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना करनी चाहिये''॥ •

औघवर्ग अष्टम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. औघसूत्र, २. योगसूत्र, ३. उपादानसूत्र, ४. ग्रन्थसूत्र, ५. अनुशयसूत्र, ६. कामगुणसूत्र, ७. नीवरणसूत्र, ८. उपादानस्कन्धसूत्र, ९. अवरभागीयसूत्र एवं १०. ऊर्ध्वभागीयसूत्र॥ •

मार्गसंयुक्त सम्पन्न॥

इस मार्गसंयुक्त में व्याख्यात वर्गों की सूची—१. अविद्यावर्ग, २. विहारवर्ग, ३. मिथ्यात्ववर्ग, ४. प्रतिपत्तिवर्ग, अन्यतीर्थिकपेय्यालवर्ग, सूर्यपेय्यालवर्ग, प्रथम एकधर्मपेय्यालवर्ग, द्वितीय एकधर्मपेय्यालवर्ग, गङ्गापेय्यालवर्ग, प्रथम प्राचीननिम्नवर्ग, द्वितीय प्राचीननिम्नवर्ग, द्वितीय गङ्गापेय्यालवर्ग, ५. अप्रमादवर्ग, ६. बलकरणीयवर्ग, ७. एषणावर्ग एवं ८. औघवर्ग॥ •

४६. बोज्झङ्गसंयुत्तं

१. पब्बतवग्गो पठमो

१. हिमवन्तसुत्तं

१. सावत्थिनिदानं। "सेय्यथापि, भिक्खवे, हिमवन्तं [N.61, B.58, R.63] पब्बतराजानं निस्साय नागा कायं वड्ढेन्ति, बलं गाहेन्ति; ते तत्थ कायं वड्ढेत्वा बलं गाहेत्वा कुसोब्भे ओतरन्ति, कुसोब्भे ओतरित्वा महासोब्भे ओतरन्ति, महासोब्भे ओतरित्वा कुन्नदियो ओतरन्ति, कुन्नदियो ओतरित्वा महानदियो ओतरन्ति, महानदियो ओतरित्वा महासमुद्दसागरं ओतरन्ति; ते तत्थ महन्तत्तं वेपुल्लत्तं आपज्जन्ति कायेन; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय सत्त बोज्झङ्गे भावेन्तो सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोन्तो महन्तत्तं वेपुल्लत्तं पापुणाति धम्मेसु। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय सत्त बोज्झङ्गे भावेन्तो सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोन्तो महन्तत्तं वेपुल्लत्तं पापुणाति धम्मेसू ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं [R.64] भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं, धम्मविचयसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...विरियसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...पीतिसम्बोज्झङ्गं भावेति ...पे०...पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...समाधिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्ग-

---

४६. बोध्यङ्गसंयुक्त

१. पर्वतवर्ग प्रथम

१. हिमवत् सूत्र : : बोध्यङ्गसाधना से धर्मवृद्धि

१. ...**श्रावस्ती में** ही...। "जैसे, भिक्षुओ! पर्वतराज हिमालय का आधार ले कर नागों के शरीर एवं बल में वृद्धि होती है, वे वहाँ अपने शरीर तथा बल में वृद्धि प्राप्त कर जल के छोटे नालों में उतर जाते हैं, छोटे नालों से बड़े नालों में उतर जाते हैं, बड़े नालों से छोटी नदियों में उतर जाते हैं, छोटी नदियों से बड़ी नदियों में उतर जाते हैं। बड़ी नदियों से वे आगे समुद्र में उतर जाते हैं। इस तरह वे वहाँ (समुद्र में) वृद्धि एवं विपुलता प्राप्त करते हैं। इसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु शील के आधार पर, शील पर प्रतिष्ठित हो कर सात बोध्यङ्गों की साधना तथा उन का अभ्यास करता हुआ धर्मों में वृद्धि एवं विपुलता प्राप्त करता है। कैसे...प्राप्त करता है? यहाँ वह साधक विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग युक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की...धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग की...वीर्यसम्बोध्यङ्ग की...

परिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय सत्त बोज्झङ्गे भावेन्तो सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोन्तो महन्तत्तं वेपुल्लत्तं पापुणाति धम्मेसू'' ति॥ •

२. कायसुत्तं

२. सावत्थिनिदानं। ''सेय्यथापि, भिक्खवे, अयं कायो आहारट्ठितिको, आहारं पटिच्च तिट्ठति, अनाहारो नो तिट्ठति; एवमेव खो, भिक्खवे, पञ्च नीवरणा आहारट्ठितिका, आहारं पटिच्च तिट्ठन्ति, अनाहारा नो तिट्ठन्ति।

[B.59] ''को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा कामच्छन्दस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स [N.62] वा कामच्छन्दस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, सुभनिमित्तं। तत्थ अयोनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा कामच्छन्दस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा कामच्छन्दस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

''को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, पटिघनिमित्तं। तत्थ अयोनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

प्रीतिसम्बोध्यङ्ग की...प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग की...समाधिसम्बोध्यङ्ग की ...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। इस प्रकार वह भिक्षु शील पर आधृत हो कर...पूर्ववत्... धर्मों में वृद्धि एवं विपुलता प्राप्त करता है''॥ •

२. कायसूत्र : : आहार पर अवलम्बित काय

२. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''जैसे, भिक्षुओ! यह शरीर (काय) आहार पर आधृत है, आहार पर प्रतिष्ठित है, यह निराहार नहीं रह सकता; उसी तरह ये पाँचों नीवरण भी आहार पर आधृत हैं, आहार पर प्रतिष्ठित हैं, निराहार नहीं रह सकते।

नीवरण—''भिक्षुओ! अनुत्पन्न कामच्छन्द की उत्पत्ति में, तथा उत्पन्न कामच्छन्द की उन्नति तथा वृद्धि में क्या आहार है? भिक्षुओ! इस शरीर के शुभ (बाह्य सौन्दर्य) को देख कर मुग्ध हो जाना, तथा इस के आन्तरिक घृणित अवयवों का सूक्ष्म निरीक्षण (मनन-चिन्तन) न करना ही अनुत्पन्न कामच्छन्द की उत्पत्ति में तथा उस उत्पन्न कामच्छन्द की वृद्धि एवं विपुलता में आधारभूत है। (१)

और, भिक्षुओ! अनुत्पन्न व्यापाद (द्वेष) की उत्पत्ति में, तथा उत्पन्न व्यापाद की वृद्धि एवं विपुलता में कौन आहार है? तात्कालिक किसी उद्वेगमयी घटना से द्वेषबुद्धि उत्पन्न कर लेना, तथा उस घटना का सूक्ष्म मनन चिन्तन न करना ही इस की उत्पत्ति तथा इस उत्पन्न पटिघच्छन्द की वृद्धि एवं विपुलता में आहार है। (२)

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, अरति तन्दि विजम्भिता भत्तसम्मदो चेतसो च लीनत्तं। तत्थ अयोनिसोमनसिकारबहुलीकारो—[R.65] अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, चेतसो अवूपसमो। तत्थ अयोनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय उप्पादाय, उप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, विचिकिच्छाट्ठानीया धम्मा। तत्थ अयोनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय उप्पादाय, उप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, अयं कायो आहारट्ठितिको, आहारं पटिच्च तिट्ठति, अनाहारो नो तिट्ठति; एवमेव खो, भिक्खवे, इमे पञ्च नीवरणा आहारट्ठितिका, आहारं पटिच्च तिट्ठन्ति, अनाहारा नो तिट्ठन्ति॥

"सेय्यथापि, भिक्खवे, अयं कायो आहारट्ठितिको, आहारं पटिच्च [B.60]

"भिक्षुओ! अनुत्पन्न स्त्यानमृद्ध (आलस्य) तथा उत्पन्न स्त्यानमृद्ध की वृद्धि एवं उन्नति में क्या आहारभूत है? भिक्षुओ! अरति, तन्द्रा, जम्हाई का आना, भोजन का मद तथा तन्द्रा—ये सब अनुत्पन्न एवं उत्पन्न स्त्यानमृद्ध के उत्पाद, उन्नति एवं विपुलता में आहार के रूप में सहायक होते हैं। (३)

"भिक्षुओ! अनुत्पन्न एवं उत्पन्न औद्धत्य कौकृत्य के क्या आहार हैं? चित्त का शान्त न रहना (चञ्चलता) ही...आहार है। (४)

"भिक्षुओ! अनुत्पन्न एवं उत्पन्न विचिकित्सा (सन्देह) के क्या आहार हैं? उस सन्देह के उत्पादक धर्म ही...आहार हैं। (५)

"इसलिये कहा जाता है भिक्षुओ!—'जैसे यह काया आहार पर अवलम्बित है, वैसे इन पाँचों नीवरणों की उत्पत्ति, उन्नति तथा विपुलता भी अपने अपने तथाकथित आहारों पर आधृत है॥

सम्बोध्यङ्ग—"जैसे, भिक्षुओ! हमारी यह काया आहार पर अवलम्बित है, ऐसे

तिट्ठति, अनाहारो नो तिट्ठति; एवमेव खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा आहारट्ठितिका, आहारं पटिच्च तिट्ठन्ति, अनाहारा नो तिट्ठन्ति।

[N.63] ''को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, सति-सम्बोज्झङ्गट्ठानीया धम्मा। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्सं वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

[R.66] ''को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, कुसलाकुसला धम्मा, सावज्जानवज्जा धम्मा हीनपणीता धम्मा, कण्हसुक्क-सप्पटिभागा धम्मा। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

''को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, आरम्भधातु निक्कमधातु परक्कमधातु। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

ही ये सात बोध्यङ्ग भी अपने अपने आहार पर अवलम्बित हैं, आहार के आधार पर ही इन का उत्पाद, उन्नयन तथा वैपुल्य होता है, आहार के विना नहीं।

''तो, भिक्षुओ! अनुत्पन्न **स्मृतिसम्बोध्यङ्ग** की उत्पत्ति में तथा उत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की वृद्धि एवं विपुलता में क्या आहार है? स्मृतिसम्बोध्यङ्गस्थानीय धर्म तथा उन का सूक्ष्म चिन्तन एवं मनन। ...पूर्ववत्...। (१)

''भिक्षुओ! अनुत्पन्न **धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग** के उत्पाद में तथा उस उत्पन्न की वृद्धि एवं विपुलता में क्या आहार है? भिक्षुओ! यहाँ कुशल, अकुशल धर्म भी हैं, प्रशंसनीय एवं निन्दनीय धर्म भी, हीन एवं प्रणीत भी, तथा कृष्ण एवं शुक्ल धर्म भी हैं, इन का सूक्ष्मता से चिन्तन, मनन करना ही अनुत्पन्न धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग का आहार है तथा इस उत्पन्न सम्बोध्यङ्ग की साधना की पूर्ति में सहायक है। (२)

''भिक्षुओ! अनुत्पन्न **वीर्यसम्बोध्यङ्ग** की उत्पत्ति में क्या आहार है? तथा इस उत्पन्न सम्बोध्यङ्ग की वृद्धि एवं विपुलता में क्या आहार है? यहाँ सभी धर्मों का जो

''को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, पीतिसम्बोज्झङ्गट्ठानीया धम्मा। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

''को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, कायपस्सद्धि, चित्तपस्सद्धि। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो [B.61] अनुप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

''को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, [N.64] समथनिमित्तं अब्यग्गनिमित्तं। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

आरम्भ, निष्क्रमण एवं पराक्रमण होता रहता है उस का सूक्ष्म चिन्तन मन ही इस अनुत्पन्न सम्बोध्यङ्ग का आहार है तथा इस उत्पन्न सम्बोध्यङ्ग की वृद्धि एवं विपुलता में सहायक है। (३)

''भिक्षुओ! इस अनुत्पन्न **प्रीतिसम्बोध्यङ्ग** की उत्पत्ति में क्या आहार है? तथा उत्पन्न की वृद्धि एवं विपुलता में क्या आहार है? भिक्षुओ! प्रीतिसम्बोध्यङ्गस्थानीय धर्मों का सूक्ष्म मनन एवं चिन्तन ही इस सम्बोध्यङ्ग का आहार है तथा इन्हीं के सूक्ष्म चिन्तन मनन से इस सम्बोध्यङ्ग की वृद्धि एवं विपुलता होती है। (४)

''भिक्षुओ! अनुत्पन्न **प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग** की उत्पत्ति में तथा इस के उत्पन्न होने पर इस की वृद्धि एवं विपुलता में क्या आहार है? भिक्षुओ! दो प्रकार की प्रश्रब्धि हैं—१. कायप्रश्रब्धि एवं २. चित्तप्रश्रब्धि। इन का सूक्ष्मतः चिन्तन मनन करना ही अनुत्पन्न प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति का तथा इस उत्पन्न सम्बोध्यङ्ग की वृद्धि एवं विपुलता का आहार है। (५)

''भिक्षुओ! अनुत्पन्न **समाधिसम्बोध्यङ्ग** की उत्पत्ति में तथा इस के उत्पन्न होने पर इस की वृद्धि एवं विपुलता में क्या आहार है? भिक्षुओ! समाधि दो प्रकार की होती है—१. शमथ एवं २. विपश्यना। इन दोनों का सूक्ष्म चिन्तन-मनन ही अनुत्पन्न

[R.67] ''को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, उपेक्खासम्बोज्झङ्गट्ठानीया धम्मा। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, अयं कायो आहारट्ठितिको, आहारं पटिच्च तिट्ठति, अनाहारो नो तिट्ठति; एवमेव खो, भिक्खवे, इमे सत्त बोज्झङ्गा आहारट्ठितिका, आहारं पटिच्च तिट्ठन्ति, अनाहारा नो तिट्ठन्ती'' ति॥ ●

३. सीलसुत्तं

३. ''ये ते, भिक्खवे, भिक्खू सीलसम्पन्ना समाधिसम्पन्ना ञाणसम्पन्ना विमुत्तिसम्पन्ना विमुत्तिञाणदस्सनसम्पन्ना, दस्सनम्पाहं, भिक्खवे, तेसं भिक्खूनं बहुकारं वदामि; सवनम्पाहं, भिक्खवे, तेसं भिक्खूनं बहुकारं वदामि; उपसङ्कमनम्पाहं, भिक्खवे, तेसं भिक्खूनं बहुकारं वदामि; पयिरुपासनम्पाहं, भिक्खवे, तेसं भिक्खूनं बहुकारं वदामि; अनुस्सतिम्पाहं, भिक्खवे, तेसं भिक्खूनं बहुकारं वदामि; अनुपब्बजम्पाहं, भिक्खवे, तेसं भिक्खूनं बहुकारं वदामि। तं किस्स हेतु? तथारूपानं,

---

समाधिसम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति का तथा उत्पन्न समाधिसम्बोध्यङ्ग की वृद्धि एवं विपुलता का आहार है। (६)

''भिक्षुओ! अनुत्पन्न **उपेक्षासम्बोध्यङ्ग** की उत्पत्ति में तथा इस के उत्पन्न होने पर इस की वृद्धि एवं विपुलता का क्या आहार है? भिक्षुओ! उपेक्षासम्बोध्यङ्गस्थानीय धर्मों का सूक्ष्म चिन्तन एवं मनन ही अनुत्पन्न उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति का तथा उत्पन्न उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की वृद्धि एवं विपुलता का आहार है। (७)

''जैसे, भिक्षुओ! हमारा यह काय आहार पर अवलम्बित है; इसी प्रकार ये सातों सम्बोध्यङ्ग भी अपने अपने आहार पर अवलम्बित हैं। आहार के आधार पर ही प्रतिष्ठित हैं, ये विना आहार के नहीं हो सकते''॥ ●

३. शीलसूत्र : : बोध्यङ्गभावना के सात फल

३. ''भिक्षुओ! जितने भी शील, समाधि, ज्ञान, विमुक्ति एवं विमुक्तिज्ञानदर्शन से सम्पन्न साधक भिक्षु हैं, उन (के शरीर) का दर्शन भी बहुत उपकारक (धर्म के उत्पाद, वृद्धि एवं विपुलता में सहायक) होता है। उन के उपदेशों को सुनना, उन के पास जाना, उन का सत्सङ्ग करना, उन से शिक्षा लेना, तथा उन से प्रव्रजित होना भी बहुत उपकारक होता है।

भिक्खवे, भिक्खूनं धम्मं सुत्वा द्वयेन वूपकासेन वूपकट्ठो विहरति—कायवूपकासेन च चित्तवूपकासेन च। सो तथा वूपकट्ठो विहरन्तो तं धम्मं अनुस्सरति अनुवितक्केति।

"यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खु तथा वूपकट्ठो विहरन्तो तं धम्मं [B.62] अनुस्सरति अनुवितक्केति, सतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति; [R.68] सतिसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति; सतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। सो तथा सतो विहरन्तो तं धम्मं पञ्ञाय पविचिनति पविचरति परिवीमंसमापज्जति।

"यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खु तथा सतो विहरन्तो तं धम्मं पञ्ञाय [N.65] पविचिनति पविचरति परिवीमंसमापज्जति, धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति; धम्मविचयसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति; धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। तस्स तं धम्मं पञ्ञाय पविचिनतो पविचरतो परिवीमंसमापज्जतो आरद्धं होति विरियं असल्लीनं।

"यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खुनो तं धम्मं पञ्ञाय पविचिनतो पविचरतो परिवीमंसमापज्जतो आरद्धं होति विरियं असल्लीनं, विरियसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति; विरियसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति; विरिय-

---

"वह किसलिये ? वैसे भिक्षुओं से धर्मोपदेश सुन कर शरीर एवं मन—दोनों से दूर (व्यपकृष्ट) हो कर वह साधना में लग जाता है।

इस प्रकार वह साधना करता हुआ धर्म का स्मरण एवं चिन्तन करता है, उस समय, उस के स्मृतिसम्बोध्यङ्ग का आरम्भ होता है। तब वह स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। यों, वह भावना एवं साधना से पूर्ण हो जाता है। वह स्मृतिमान् हो कर साधना करते हुए धर्म को प्रज्ञा से जान और समझ लेता है।

"भिक्षुओ! जिस समय वह भिक्षु ऐसा कर लेता है, उस समय उस के धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग का आरम्भ होता है। उस समय वह धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है, यों वह इस सम्बोध्यङ्ग की भावना एवं साधना से पूर्ण हो जाता है। उस धर्म को प्रज्ञा से जान लेने एवं सब तरह से समझ लेने के बाद साधना करते हुए वह वीर्य (उत्साह)सम्पन्न हो जाता है।

"भिक्षुओ! जिस समय वह भिक्षु ऐसा कर लेता है, उस समय उस के वीर्यसम्बोध्यङ्ग का आरम्भ होता है। तब वह इस वीर्यसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है, यों, वह इस सम्बोध्यङ्ग की भावना एवं साधना से पूर्ण हो जाता है। उस धर्म को प्रज्ञा से

सम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। आरद्धविरियस्स उप्पज्जति पीति निरामिसा।

''यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खुनो आरद्धविरियस्स उप्पज्जति पीति निरामिसा, पीतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति; पीतिसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति; पीतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। पीतिमनस्स कायो पि पस्सम्भति, चित्तं पि पस्सम्भति।

''यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खुनो पीतिमनस्स कायो पि पस्सम्भति चित्तं पि पस्सम्भति, पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति; पस्सद्धि- [R.69] सम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति; पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। पस्सद्धकायस्स सुखिनो चित्तं समाधियति।

''यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खुनो पस्सद्धकायस्स सुखिनो चित्तं समाधियति, [B.63] समाधिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति; समाधिसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति; समाधिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। सो तथासमाहितं चित्तं साधुकं अज्झुपेक्खिता होति।

''यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खु तथासमाहितं चित्तं साधुकं अज्झुपेक्खिता होति, उपेक्खासम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति; उपेक्खासम्बोज्झङ्गं

जान लेने एवं समझ लेने के बाद साधना करते हुए वह अपने में निरामिष प्रीति उत्पन्न कर लेता है।

''भिक्षुओ! जिस समय भिक्षु अपने में यह निरामिष प्रीति उत्पन्न कर लेता है उस समय उसे प्रीतिसम्बोध्यङ्ग आरम्भ होता है। तब वह...पूर्ववत्...। उस धर्म को प्रज्ञा से जान लेने, समझ लेने से उस के शरीर एवं मन—दोनों प्रश्रब्ध (शान्त) हो जाते हैं।

''भिक्षुओ! जिस समय उस के शरीर एवं मन—दोनों ही शान्त हो जाते हैं उस समय उस का प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग आरम्भ होता है। तब वह...पूर्ववत्...। उस धर्म को प्रज्ञा से जान लेने तथा समझ लेने से काया के प्रश्रब्ध होने से उस सुखी का चित्त समाधि की ओर झुक जाता है।

''भिक्षुओ! जिस समय उस प्रश्रब्धकाय भिक्षु का सुखी चित्त समाधि की ओर झुकता है, प्रगति करता है तब उस का समाधिसम्बोध्यङ्ग आरम्भ होता है। तब वह...पूर्ववत्...। तब वह समाहित चित्त के प्रति भली भाँति उपेक्षित हो जाता है।

''भिक्षुओ! ...पूर्ववत्...उस का उपेक्षासम्बोध्यङ्ग आरम्भ होता है। तब वह

तस्मिं समये भिक्खु भावेति; उपेक्खासम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। [N.66]

"एवं भावितेसु खो, भिक्खवे, सत्तसु सम्बोज्झङ्गेसु एवं बहुलीकतेसु सत्त फला सत्तानिसंसा पाटिकङ्खा। कतमे सत्त फला सत्तानिसंसा? १. दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति। २. नो चे दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति, अथ मरणकाले अञ्ञं आराधेति। ३. नो चे दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति, नो चे मरणकाले अञ्ञं आराधेति, अथ पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति। ४. नो चे दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति, नो चे मरणकाले अञ्ञं आराधेति, नो चे पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति, अथ पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया उपहच्चपरिनिब्बायी होति। ५. नो चे दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति, नो चे मरणकाले अञ्ञं आराधेति, नो चे पञ्चन्नं [R.70] ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति, नो चे पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया उपहच्चपरिनिब्बायी होति, अथ पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया असङ्खारपरिनिब्बायी होति। ६. नो चे दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति, नो चे मरणकाले अञ्ञं आराधेति, नो चे पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति, नो चे पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया उपहच्चपरिनिब्बायी होति, नो चे पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया असङ्खारपरिनिब्बायी होति, अथ पञ्चन्नं

...पूर्ववत्...भिक्षुओ! इस प्रकार इन सातों बोध्यङ्गों की भावना एवं अभ्यास पूर्ण हो जाने पर, इस साधना के सात शुभ परिणाम निकलते हैं। कौन से सात परिणाम?

(१-२) "वह इसी जन्म में परम ज्ञान का साक्षात्कार कर लेता है, यदि ऐसा न हो सका तो मरण काल में उसे लाभ होता है।

(३) "यदि वह भी लाभ न मिला तो पाँच अधोभागीय संयोजनों के क्षीण हो जाने से अपने भीतर ही निर्वाण पा लेता है।

(४) "यदि वह भी न पा सके तो पाँच अधोभागीय संयोजनों के क्षीण हो जाने से आगे चल कर निर्वाण पा लेता है।

(५) "यदि वह भी न हो सके तो पाँच अधोभागीय संयोजनों के क्षीण हो जाने से असंस्कार परिनिर्वाण प्राप्त कर लेता है।

(६) "यदि वह भी न पा सके तो पाँच अधोभागीय संयोजनों के क्षीण हो जाने से ससंस्कार परिनिर्वाण प्राप्त कर लेता है।

ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ससङ्खारपरिनिब्बायी होति। ७. नो चे दिट्ठेव धम्मे [B.64] पटिकच्च अञ्ञं आराधेति, नो चे मरणकाले अञ्ञं आराधेति, नो चे पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति, नो चे पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया उपहच्चपरिनिब्बायी होति, नो चे पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया असङ्खारपरिनिब्बायी होति, नो चे पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ससङ्खारपरिनिब्बायी होति, अथ पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी।

एवं भावितेसु खो, भिक्खवे, सत्तसु बोज्झङ्गेसु एवं बहुलीकतेसु इमे सत्त फला सत्तानिसंसा पाटिकङ्खा'' ति॥

४. वत्थसुत्तं

[N.67] ४. एकं समयं आयस्मा सारिपुत्तो सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि—''आवुसो [R.71] भिक्खवो'' ति! ''आवुसो'' ति खो ते भिक्खू आयस्मतो सारिपुत्तस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—

''सत्तिमे, आवुसो, बोज्झङ्गा। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो, धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो, विरियसम्बोज्झङ्गो, पीतिसम्बोज्झङ्गो, पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो, समाधिसम्बोज्झङ्गो, उपेक्खासम्बोज्झङ्गो—इमे खो, आवुसो, सत्त बोज्झङ्गा। इमेसं ख्वाहं, आवुसो, सत्तन्नं बोज्झङ्गानं येन येन बोज्झङ्गेन आकङ्खामि पुब्बण्हसमयं विहरितुं, तेन तेन बोज्झङ्गेन पुब्बण्हसमयं विहरामि; येन येन बोज्झङ्गेन आकङ्खामि मज्झन्हिकं समयं

---

(७) ''यदि वह भी न प्राप्त कर सके तो पाँचों अधोभागीय संयोजनों के क्षीण हो जाने से ऊर्ध्वस्रोतगामी एवं श्रेष्ठ मार्ग पर जाने वाला (अकनिष्ठगामी) हो जाता है।

''भिक्षुओ! सात अङ्गों से भावित एवं अभ्यस्त हो जाने पर उस के ये ही सात शुभ परिणाम होते हैं॥

: :

सात बोध्यङ्ग

४. वस्त्रसूत्र

४. एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र **श्रावस्ती** स्थित अनाथपिण्डिक के जेतवनाराम में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। उस समय आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को अपने पास बुलाया तथा उन्हें यों धर्मोपदेश आरम्भ किया—

''आयुष्मानो! ये सात बोध्यङ्ग होते हैं। कौन से सात? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग... पूर्ववत्... समाधि-सम्बोध्यङ्ग। ये सात सम्बोध्ङ्ग होते हैं। आयुष्मानो! इन सातों बोध्यङ्गों में से

विहरितुं, तेन तेन बोज्झङ्गेन मज्झन्हिकं समयं विहरामि; येन येन बोज्झङ्गेन आकङ्खामि सायन्हसमयं विहरितुं, तेन तेन बोज्झङ्गेन सायन्हसमयं विहरामि। सतिसम्बोज्झङ्गो इति चे मे, आवुसो, होति, 'अप्पमाणो' ति मे होति, 'सुसमारद्धो' ति मे होति, तिट्ठन्तं च नं 'तिट्ठती' ति पजानामि। सचे पि मे चवति, 'इदप्पच्चया मे चवती' ति पजानामि ...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो इति चे मे, आवुसो, होति, 'अप्पमाणो' ति मे होति, 'सुसमारद्धो' ति मे होति, तिट्ठन्तं च नं 'तिट्ठती' ति पजानामि। सचे पि मे चवति, 'इदप्पच्चया मे चवती' ति पजानामि।

"सेय्यथापि, आवुसो, रञ्ञो वा राजमहामत्तस्स वा नानारत्तानं दुस्सानं दुस्सकरण्डको पूरो अस्स। सो यञ्ञदेव दुस्सयुगं आकङ्खेय्य पुब्बण्हसमयं [B.65] पारुपितुं, तं तदेव दुस्सयुगं पुब्बण्हसमयं पारुपेय्य; यञ्ञदेव दुस्सयुगं आकङ्खेय्य मज्झन्हिकं समयं पारुपितुं, तं तदेव दुस्सयुगं मज्झन्हिकं समयं पारुपेय्य; यञ्ञदेव दुस्सयुगं आकङ्खेय्य सायन्हसमयं पारुपितुं, तं तदेव दुस्सयुगं सायन्हसमयं [R.72] पारुपेय्य। एवमेव ख्वाहं, आवुसो, इमेसं सत्तन्नं बोज्झङ्गानं येन येन बोज्झङ्गेन आकङ्खामि पुब्बण्हसमयं विहरितुं, तेन तेन बोज्झङ्गेन पुब्बण्हसमयं विहरामि; येन येन बोज्झङ्गेन आकङ्खामि मज्झन्हिकं समयं विहरितुं, तेन तेन बोज्झङ्गेन मज्झन्हिकं समयं विहरामि; येन येन बोज्झङ्गेन आकङ्खामि सायन्हसमयं विहरितुं, तेन तेन [N.68] बोज्झङ्गेन सायन्हसमयं विहरामि। सतिसम्बोज्झङ्गो इति चे मे, आवुसो, होति, 'अप्पमाणो' ति मे होति, 'सुसमारद्धो' ति मे होति, तिट्ठन्तं च नं 'तिट्ठती' ति पजानामि। सचे पि मे चवति, 'इदप्पच्चया मे चवती' ति पजानामि...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो इति चे मे, आवुसो, होति, 'अप्पमाणो' ति मे होति, 'सुसमारद्धो' ति मे होति, तिट्ठन्तं च नं 'तिट्ठती' ति पजानामि। सचे पि मे चवति, 'इदप्पच्चया मे चवती' ति पजानामी" ति॥●

जिस किसी बोध्यङ्ग से पूर्वाह्न में...मध्याह्न में...सायाह्न में साधना करता रहता हूँ। आयुष्मानो! उस समय यदि मेरे मन में स्मृतिसम्बोध्यङ्ग होता है तो वह अप्रमाण तथा भली भाँति सुसमारब्ध होता है। उस के उपस्थित रहते हुए मैं जानता हूँ—'वह उपस्थित है'। एवं वह जब च्युत होता है तो मैं जान जाता हूँ कि वह इस कारण से च्युत हो रहा है। ...पूर्ववत्...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग...इस कारण से च्युत हो रहा है।

आयुष्मानो! जैसे किसी राजा या उस के महामात्य के पास वस्त्रों से भरी हुई मञ्जूषा (पेटी) हो, तब वह जिस वस्त्र को भी पूर्वाह्न में, मध्याह्न में या सायंकाल में पहनना चाहे पहनता रहता है; इसी तरह, आयुष्मानो! मैं जिस जिस भी बोध्यङ्ग से पूर्वाह्न आदि में साधना करना चाहता हूँ, करता रहता हूँ। ...पूर्ववत्... ॥ ●

५. भिक्खुसुत्तं

५. सावत्थिनिदानं। अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि ...पे०...एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"' बोज्झङ्गा, बोज्झङ्गा' ति, भन्ते, वुच्चन्ति। कित्तावता नु खो, भन्ते 'बोज्झङ्गा' ति वुच्चन्ती" ति?

"बोधाय संवत्तन्ती ति खो, भिक्खु, तस्मा 'बोज्झङ्गा' ति वुच्चन्ति। इध, भिक्खु, सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्ग-परिणामिं...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोध-निस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। तस्सिमे सत्त बोज्झङ्गे भावयतो कामासवा पि चित्तं विमुच्चति, भवासवा पि चित्तं विमुच्चति, अविज्जासवा पि चित्तं विमुच्चति। विमुत्तस्मिं विमुत्तमिति ञाणं होति। 'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया' ति पजानाति। बोधाय संवत्तन्ती ति, भिक्खु, तस्मा 'बोज्झङ्गा' ति वुच्चन्ती" ति॥

●

६. कुण्डलियसुत्तं

[B.66, R.73] ६. एकं समयं भगवा साकेते विहरति अञ्जनवने मिगदाये। अथ खो कुण्डलियो परिब्बाजको येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं

---

५. भिक्षुसूत्र : : 'बोध्यङ्ग' शब्द का अर्थ

५. ...**श्रावस्ती में** ही...। ...तब कोई भिक्षु भगवान् की सेवा में उपस्थित हुआ, तथा उन्हें प्रणाम कर...यों पूछने लगा—"भन्ते! लोग 'बोध्यङ्ग, बोध्यङ्ग' कहते रहते हैं, इस 'बोध्यङ्ग' का क्या अर्थ है?"

"भिक्षु! यह 'बोधि (ज्ञान) के लिये होता है' (अर्थात् ज्ञानप्राप्तिहेतु इस की साधना की जाती है) इसलिये 'ये बोध्यङ्ग' कहलाते हैं। भिक्षु! जब विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग युक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की भावना की जाती है...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना की जाती है तो उस समय उस का चित्त कामाश्रव, भवाश्रव एवं अविद्याश्रव—सभी से मुक्त हो जाता है। उस के मुक्त होने पर 'मैं मुक्त हो गया'—यह भी ज्ञान हो जाता है। साथ ही 'मेरी भवपरम्परा क्षीण हो गयी, अब आगे मेरा कोई कर्तव्य शेष नहीं रहा'—यह भी जान जाता है। इसलिये बोध के लिये इस की साधना किये जाने के कारण इसे 'बोध्यङ्ग' कहते हैं"॥

●

६. कुण्डलियसूत्र : : विद्या एवं विमुक्ति की पूर्णता

६. एक समय भगवान् (बुद्ध) **साकेत** प्रदेश के अञ्जनवन मृगदाव में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय कोई कुण्डलिय नाम का परिव्राजक भगवान् के पास आया...तथा

सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो कुण्डलियो परिब्बाजको भगवन्तं एतदवोच—"अहमस्मि, भो गोतम, आराम-निस्सयी परिसावचरो। तस्स मय्हं, भो गोतम, पच्छाभत्तं भुत्तपातरासस्स [N.69] अयमाचारो होति—आरांमेन आरामं उय्यानेन उय्यानं अनुचङ्कमामि अनुविचरामि। सो तत्थ पस्सामि एके समणब्राह्मणे इतिवादप्पमोक्खानिसंसं चेव कथं कथेन्ते उपारम्भा-निसंसं च। भवं पन गोतमो किमानिसंसो विहरती" ति?

"विज्जाविमुत्तिफलानिसंसो खो, कुण्डलिय, तथागतो विहरती" ति।

"कतमे पन भो गोतम, धम्मा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ती" ति?

"सत्त खो, कुण्डलिय, बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ती" ति।

"कतमे पन, भो गोतम, धम्मा भाविता बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ती" ति?

"चत्तारो खो, कुण्डलिय, सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ती" ति।

उस ने यह प्रश्न किया—"भो गौतम! मैं अपने आश्रम की धर्मपरिषदों में भाग लेता हूँ। वहाँ मैं, भो गौतम! भोजनकृत्य के बाद, नियमपूर्वक किसी न किसी विहार में या उद्यान में टहलता हुआ चला जाता हूँ। मैं वहाँ देखता हूँ कि अनेक श्रमण ब्राह्मण किसी न किसी मत या वाद का सहारा ले कर साधना कर रहे होते हैं। तो, भो गौतम! आप किस मत या वाद का सहारा ले कर साधना करते हैं?"

"विद्या एवं विमुक्ति के शुभ फल से युक्त एवं क्षीणाश्रव हो कर तथागत साधना करते हैं।"

"भो गौतम! किन धर्मों की साधना एवं अभ्यास से विद्या एवं विमुक्ति में पूर्णता आती है?"

"कुण्डलिय! सात बोध्यङ्गों की साधना एवं उन के अभ्यास से विद्या एवं विमुक्ति में पूर्णता आती है।"

"परन्तु, भो गौतम! किन धर्मों की साधना एवं अभ्यास से ये सात बोध्यङ्ग पूर्णता प्राप्त करते हैं?"

"कुण्डलिय! चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना से ये सात बोध्यङ्ग पूर्णता प्राप्त कर लेते हैं।"

"कतमे पन, भो गोतम, धम्मा भाविता, बहुलीकता चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेन्ती" ति ?

"तीणि खो, कुण्डलिय, सुचरितानि भावितानि बहुलीकतानि चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेन्ती" ति।

"कतमे पन, भो गोतम, धम्मा भाविता बहुलीकता तीणि सुचरितानि परिपूरेन्ती" ति ?

[R.74] "इन्द्रियसंवरो खो, कुण्डलिय, भावितो बहुलीकतो तीणि सुचरितानि परिपूरेती" ति।

"कथं भावितो च, कुण्डलिय, इन्द्रियसंवरो कथं बहुलीकतो तीणि सुचरितानि परिपूरेती ति ? इध, कुण्डलिय, भिक्खु चक्खुना रूपं दिस्वा मनापं नाभिज्झति नाभिहंसति, न रागं जनेति। तस्स ठितो च कायो होति, ठितं चित्तं अज्झत्तं सुसण्ठितं सुविमुत्तं। चक्खुना खो पनेव रूपं दिस्वा अमनापं च मङ्कु होति अप्पतिट्ठितचित्तो अदीनमानसो व पन्नचेतसो। तस्स ठितो च कायो होति ठितं चित्तं अज्झत्तं सुसण्ठितं विमुत्तं।

[N.70, B.67] "पुन च परं, कुण्डलिय, भिक्खु सोतेन सद्दं सुत्वा...पे०...घानेन गन्धं घायित्वा...पे०...जिव्हाय रसं सायित्वा...पे०...कायेन फोट्ठब्बं फुसित्वा...पे०...मनसा

"तो फिर, भो गौतम! ये चार स्मृतिप्रस्थान किन धर्मों की साधना से पूर्ण होते हैं ?"

"कुण्डलिय! तीन सुचरितों की साधना करने से ये चार स्मृतिप्रस्थान पूर्ण होते हैं।"

"फिर, भो गौतम! किन धर्मों की साधना से ये तीन सुचरित पूर्ण होते हैं ?"

"कुण्डलिय! इन्द्रियसंयम से ये तीन सुचरित पूर्णता प्राप्त करते हैं।"

"भो गौतम! यह इन्द्रियसंयम, किस प्रकार साधना करने पर, इन तीनों सुचरितों को पूर्ण करता है ?"

"कुण्डलिय! यहाँ कोई भिक्षु चक्षुरिन्द्रिय से प्रिय रूप को देख कर उस के सौन्दर्य के प्रति लोलुप नहीं होता, न उस के प्रति राग ही दिखाता है। इस से उस का काय स्थिर रहता है तथा अध्यात्म चित्त भी स्थिर तथा विकारमुक्त रहता है। इसी तरह चक्षु से अप्रिय रूप को देख कर भी उस का शरीर स्थिर ही रहता है, चित्त भी खिन्न या उदास नहीं होता, तथा अध्यात्म में स्थित एवं विमुक्त ही रहता है।

"फिर, कुण्डलिय! वह भिक्षु श्रोत्रेन्द्रिय से प्रिय शब्द सुन कर...पूर्ववत्...घ्राण से

धम्मं विञ्ञाय मनापं नाभिज्झति नाभिहंसति, न रागं जनेति। तस्स ठितो च कायो होति, ठितं चित्तं अज्झत्तं सुसण्ठितं सुविमुत्तं। मनसा खो पनेव धम्मं विञ्ञाय अमनापं न मङ्कु होति अप्पतिट्ठितचित्तो अदीनमानसो अब्यापन्नचेतसो। तस्स ठितो च कायो होति, ठितं चित्तं अज्झत्तं सुसण्ठितं सुविमुत्तं।

''यतो खो, कुण्डलिय, भिक्खुनो चक्खुना रूपं दिस्वा मनापामनापेसु रूपेसु ठितो च कायो होति, ठितं चित्तं अज्झत्तं सुसण्ठितं सुविमुत्तं। सोतेन सद्दं सुत्वा ...पे०...घानेन गन्धं घायित्वा...पे०...जिव्हाय रसं सायित्वा...पे०...कायेन फोट्ठब्बं फुसित्वा...पे०...मनसा धम्मं विञ्ञाय मनापामनापेसु धम्मेसु ठितो च कायो होति, ठितं चित्तं अज्झत्तं सुसण्ठितं सुविमुत्तं। एवं भावितो खो, कुण्डलिय, इन्द्रियसंवरो [R.75] एवं बहुलीकतो तीणि सुचरितानि परिपूरेति।

''कथं भावितानि च, कुण्डलिय, तीणि सुचरितानि कथं बहुलीकतानि चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेन्ति? इध, कुण्डलिय, भिक्खु कायदुच्चरितं पहाय कायसुचरितं भावेति, वचीदुच्चरितं पहाय वचीसुचरितं भावेति, मनोदुच्चरितं पहाय मनोसुचरितं भावेति। एवं भावितानि खो, कुण्डलिय, तीणि सुचरितानि एवं बहुलीकतानि चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेन्ति।

''कथं भाविता च, कुण्डलिय, चत्तारो सतिपट्ठाना कथं बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे

प्रिय गन्ध सूँघ कर...जिह्वा से स्वादिष्ठ रस चख कर...काया से प्रिय स्प्रष्टव्य का स्पर्श कर...मन से प्रिय धर्मों को जान कर...अप्रिय धर्मों को जान कर भी...स्थित एवं विमुक्त ही रहता है।

''इस तरह, कुण्डलिय! वह भिक्षु चक्षु से प्रिय अप्रिय रूप देख कर...श्रोत्र से प्रिय अप्रिय शब्द सुन कर...घ्राण से प्रिय अप्रिय गन्ध सूँघ कर...जिह्वा से प्रिय अप्रिय रस चख कर... काय से प्रिय अप्रिय स्प्रष्टव्य का स्पर्श कर...मन से प्रिय अप्रिय धर्मों को जान कर भी इस के काय एवं चित्त स्थित ही रहते हैं। इस तरह, कुण्डलिय! वह साधना किया हुआ इन्द्रियसंयम उन तीन सुचरितों को पूर्ण कर देता है।

''कुण्डलिय! कैसे साधित एवं कैसे अभ्यस्त ये तीनों सुचरित चार स्मृतिप्रस्थानों को पूर्ण करते हैं? यहाँ, कुण्डलिय! कोई साधक भिक्षु कायदुश्चरित का त्याग कर कायसुचरित का अभ्यास करता है, वाग्दुश्चरित का त्याग कर वाक्सुचरित का अभ्यास करता है, मनोदुश्चरित का त्याग कर मनःसुचरित का अभ्यास करता है। इस प्रकार अभ्यस्त किये गये ये तीनों सुचरित चार स्मृतिप्रस्थानों को पूर्ण करने में सहायक होते हैं।

''तथा, कुण्डलिय! कैसे साधित एवं कैसे अभ्यस्त ये चारों स्मृतिप्रस्थान सात

परिपूरेन्ति? इध, कुण्डलिय, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एवं भाविता खो, कुण्डलिय, चत्तारो सतिपट्ठाना एवं बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति।

"कथं भाविता च, कुण्डलिय, सत्त बोज्झङ्गा कथं बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ति? इध, कुण्डलिय, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं [B.68] विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं [N.71] भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं भाविता खो, कुण्डलिय, सत्त बोज्झङ्गा एवं बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ती" ति।

एवं वुत्ते कुण्डलियो परिब्बाजको भगवन्तं एतदवोच—"अभिक्कन्तं, भो गोतम, अभिक्कन्तं, भो गोतम! सेय्यथापि, भो गोतम, निक्कुज्जितं वा उक्कुज्जेय्य, पटिच्छन्नं वा विवरेय्य, मूळ्हस्स वा मग्गं आचिक्खेय्य, अन्धकारे वा तेलपज्जोतं धारेय्य, चक्खुमन्तो रूपानि दक्खन्ती ति; एवमेव भोता गोतमेन अनेकपरियायेन धम्मो पकासितो। एसाहं भवन्तं गोतमं सरणं गच्छामि धम्मं च भिक्खुसङ्घं च। उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥ ●

बोध्यङ्गों को पूर्ण करते हैं? कुण्डलिय! यहाँ कोई भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...धर्मों में धर्मानुपश्यी हो कर उद्योग करता हुआ स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ होते हुए, लोक में अभिध्या एवं दौर्मनस्य भाव को स्वचित्त में दबाते हुए, वेदनाओं में...संज्ञाओं में...संस्कारों में...विज्ञान में...साधना करता है। यों, कुण्डलिय! ये साधित एवं अभ्यस्त चारों स्मृतिप्रस्थान सात बोध्यङ्गों की पूर्णता में सहायक होते हैं।

"कुण्डलिय! कैसे भावित एवं कैसे अभ्यस्त ये सातों बोध्यङ्ग विद्या एवं विमुक्ति को पूर्ण करते हैं? कुण्डलिय! कोई भिक्षु विवेक वैराग्य निरोध एवं त्यागयुक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। इस प्रकार, कुण्डलिय! ये सात बोध्यङ्ग भावित एवं अभ्यस्त होने पर विद्या एवं विमुक्ति की पूर्णता में सहायक होते हैं।"

भगवान् के श्रीमुख से यह धर्मदेशना सुनने के बाद कुण्डलिय परिव्राजक ने यह कहा—"भो गौतम!...आप ने धर्म का स्पष्टीकरण बहुत सुगम एवं सरल रीति से किया। इस के प्रभाव से मैं आप की, आप के धर्म एवं सङ्घ की शरण में जाता हूँ। आज से आप मुझे, मेरे प्राण रहने तक, अपना शरणागत समझें"॥ ●

७. कूटागारसुत्तं

७. "सेय्यथापि, भिक्खवे, कूटागारस्स या काचि गोपानसियो, सब्बा ता कूटनिन्ना कूटपोणा कूटपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सत्त बोज्झङ्गे भावेन्तो सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। [R.76] कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सत्त बोज्झङ्गे भावेन्तो सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सति-सम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं ...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सत्त बोज्झङ्गे भावेन्तो सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो" ति॥ •

८. उपवानसुत्तं

८. एकं समयं आयस्मा च उपवानो आयस्मा च सारिपुत्तो कोसम्बियं विहरन्ति घोसितारामे। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनायस्मा उपवानो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मता उपवानेन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं उपवानं एतदवोच—

"जानेय्य नु खो, आवुसो उपवान, भिक्खु 'पच्चत्तं योनिसोमन-[N.72, B.69] सिकारा एवं सुसमारद्धा मे सत्त बोज्झङ्गा फासुविहाराय संवत्तन्ती''' ति?

---

७. कूटागारसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रवृत्ति

७. ..."जैसे, भिक्षुओ! किसी कूटागार में लगी हुई सभी धरणें (काष्ठ) कूट (शिखर) की ओर ही झुकी रहती हैं; इसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु सात बोध्यङ्गों की भावना तथा अभ्यास करता हुआ निर्वाण की ओर ही प्रवृत्त होता है, उधर ही बढता है। यहाँ, भिक्षुओ! वह भिक्षु विवेक...पूर्ववत्...निर्वाण की ओर ही बढता जाता है॥" •

८. उपवाणसूत्र : : बोध्यङ्गसिद्धि का ज्ञान

८. एक समय आयुष्मान् उपवाण तथा आयुष्मान् सारिपुत्र **कौशाम्बी** के घोषिताराम में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। ...पूर्ववत्...आयुष्मान् सारिपुत्र ने आयुष्मान् उपवाण को यों पूछा—

"आयुष्मन् उपवाण! क्या साधक भिक्षु यह जानता है—'मेरे अपने भीतर (प्रत्यात्म) भली भाँति मनन करने से सातों बोध्यङ्ग सिद्ध हो कर सुखपूर्वक साधनायोग्य हो गये हैं'?"

"जानेय्य खो, आवुसो सारिपुत्त, भिक्खु 'पच्चत्तं योनिसोमनसिकारा एवं सुसमारद्धा मे सत्त बोज्झङ्गा फासुविहाराय संवत्तन्ती' ति। सतिसम्बोज्झङ्गं खो, आवुसो, भिक्खु आरब्भमानो पजानाति 'चित्तं च मे सुविमुत्तं, थीनमिद्धं च मे सुसमूहतं, उद्धच्चकुक्कुच्चं च मे सुप्पटिविनीतं, आरद्धं च मे विरियं, अट्ठिं कत्वा मनसि करोमि, नो [R.77] च लीनं' ति...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं, आवुसो, भिक्खु आरब्भमानो पजानाति 'चित्तं च मे सुविमुत्तं, थीनमिद्धं च मे पुसमूहतं, उद्धच्चकुक्कुच्चं च मे सुप्पटिविनीतं, आरद्धं च मे विरियं, अट्ठिं कत्वा मनसि करोमि, नो च लीनं' ति। एवं खो, आवुसो सारिपुत्त, भिक्खु जानेय्य 'पच्चत्तं योनिसोमनसिकारा एवं सुसमारद्धा मे सत्त बोज्झङ्गा फासुविहाराय संवत्तन्ती" ति॥ •

९. पठमउप्पन्नसुत्तं

९. "सत्तिमे, भिक्खवे, बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र तथागतस्स पातुभावा अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो—इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र तथागतस्स पातुभावा अरहतो सम्मासम्बुद्धस्सा" ति॥ •

१०. दुतियउप्पन्नसुत्तं

१०. "सत्तिमे, भिक्खवे, बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो—इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता अनुप्पन्ना उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया" ति॥ •

पब्बतवग्गो पठमो॥

"हाँ, आयुष्मन् सारिपुत्र! वह साधक भिक्षु जानता है...पूर्ववत्...सुखपूर्वक साधनायोग्य हो गये हैं, तथा वह यह भी जानता है कि उस का चित्त (विकारों से) पूर्णतः मुक्त हो गया है, आलस्य समूल नष्ट हो गया है, औद्धत्य कौकृत्य सर्वथा दब गये हैं, मैं सतत उद्योग (वीर्य) कर रहा हूँ। वह परमार्थ का मनन करता है तथा किसी चिन्तन में सङ्कोच नहीं करता। इस तरह, आयुष्मन् सारिपुत्र! भिक्षु जानता है...पूर्ववत्..."॥ •

९. प्रथम उत्पन्नसूत्र : : बुद्धोत्पत्ति से ही सम्भव

९. "भिक्षुओ! भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध की उत्पत्ति के विना सम्भव नहीं है कि सातों अनुत्पन्न बोध्यङ्ग, जो भले ही भावित एवं अभ्यस्त कर लिये गये हों, उत्पन्न हो जायँ। कौन से सात? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...पूर्ववत्...उपेक्षाबोध्यङ्ग। भिक्षुओ! ये अनुत्पन्न सातों बोध्यङ्ग तथागत सम्यक्सम्बुद्ध की उत्पत्ति के विना सम्भव नहीं हैं"॥ •

तस्सुद्दानं

हिमवन्तं कायं सीलं, वत्थं भिक्खु च कुण्डलि।
कूटं च उपवानं च, उप्पन्ना अपरे दुवे ति॥ •

---

१०. द्वितीय उत्पन्नसूत्र : : बुद्धोत्पत्ति से ही सम्भव

१०. ''भिक्षुओ! बुद्ध के उपदेश विना इन अनुत्पन्न सातों बोध्यङ्ग की उत्पत्ति सम्भव नहीं हैं। ...पूर्ववत्...''॥ •

पर्वतवर्ग सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. हिमवत्सूत्र, २. कायसूत्र, ३. शीलसूत्र, ४. वस्त्रसूत्र, ५. भिक्षुसूत्र, ६. कुण्डलियसूत्र, ७. कूटागारसूत्र, ८. उपवाणसूत्र, ९. प्रथम उत्पन्नसूत्र एवं १०. द्वितीय उत्पन्नसूत्र॥ •

२. गिलानवग्गो दुतियो

११. पाणसुत्तं

[N.73, B.70, R.78] ११. "सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि पाणा चत्तारो इरियापथे कप्पेन्ति—कालेन गमनं, कालेन ठानं, कालेन निसज्जं, कालेन सेय्यं, सब्बे ते पठविं निस्साय पठवियं पतिट्ठाय एवमेते चत्तारो इरियापथे कप्पेन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय सत्त बोज्झङ्गे भावेति सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोति।

"कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय सत्त बोज्झङ्गे भावेति सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय सत्त बोज्झङ्गे भावेति सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोती" ति॥ •

१२. पठमसुरियूपमसुत्तं

१२. "सुरियस्स, भिक्खवे, उदयतो एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—अरुणुग्गं; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो सत्तन्नं बोज्झङ्गानं उप्पादाय एतं पुब्बङ्गमं एतं

---

२. ग्लानवर्ग द्वितीय

११. प्राणिसूत्र : : शील का आधार

११. ..."भिक्षुओ! जैसे कोई भी प्राणी अपने चारों ईर्यापथों को, फिर भले ही वह चलना हो या ठहरना, किसी समय लेटना हो या सोना—ये चारों ही ईर्यापथ उस को पृथ्वी का आधार मान कर, पृथ्वी पर प्रतिष्ठित हो कर ही पूर्ण करने होते हैं; उसी तरह किसी भी साधक की सात बोध्यङ्गों की कोई भी साधना शील को आधार मान कर, शील पर प्रतिष्ठित हो कर ही पूर्ण हो सकती है।

"कैसे, भिक्षुओ! यह साधना शील पर प्रतिष्ठित हो कर पूर्ण हो सकती है? यहाँ, भिक्षुओ! यह भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग से युक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की...पूर्ववत्...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की साधना करता है। यों, भिक्षुओ! वह शील को आधार मान कर, शील पर ही प्रतिष्ठित हो कर इन सात बोध्यङ्गों की साधना करता है, इन का अभ्यास करता है"॥ •

१२. प्रथम सूर्योपमसूत्र : : सूर्य का दृष्टान्त

१२. ..."भिक्षुओ! सूर्योदय का यह प्रथम लक्षण है कि उस के उदय से पूर्व आकाश में अरुणोदय (ललाई) होना; इसी तरह इन सातों बोध्यङ्गों के उत्पाद का

निमित्तं, यदिदं—कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—सत्त बोज्झङ्गे भावेस्सति सत बोज्झङ्गे बहुलीकरिस्सति।

"कथं च, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो सत्त बोज्झङ्गे भावेति सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्ग-परिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो सत्त बोज्झङ्गे भावेति सत्त [R.79] बोज्झङ्गे बहुलीकरोती" ति॥ ●

१३. दुतियसुरियूपमसुत्तं

१३. "सुरियस्स, भिक्खवे, उदयतो एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, [B.71] यदिदं—अरुणुग्गं; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो सत्तन्नं बोज्झङ्गानं उप्पादाय [N.74] एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—योनिसोमनसिकारो। योनिसोमनसिकार-सम्पन्नस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—सत्त बोज्झङ्गे भावेस्सति सत बोज्झङ्गे बहुलीकरिस्सति।

"कथं च, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो सत्त बोज्झङ्गे भावेति सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं ...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो सत्त बोज्झङ्गे भावेति सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोती" ति॥ ●

पूर्वनिमित्त है—किसी कल्याणमित्र का अधिगत होना। कल्याणमित्र के मिलने पर ही यह साधना ऐसी बन पाती है कि वह इन सातों बोध्यङ्गों की साधना भली भाँति पूर्ण कर पायगा।

"कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु किसी कल्याणमित्र की सहायता से इन बोध्यङ्गों की साधना पूर्ण करता है? यहाँ, भिक्षुओ! वह भिक्षु विवेक...स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की साधना कल्याणमित्र के कथनानुसार आरम्भ करता है, आगे बढाता है"॥ ●

१३. द्वितीय सूर्योपमसूत्र : : सूर्य का दूसरा दृष्टान्त

१३. ..."भिक्षुओ! सूर्योदय का...पूर्ववत्...; इसी तरह इन सातों बोध्यङ्गों के उत्पाद का यही पूर्व लक्षण है कि (भिक्षु) इन सातों बोध्यङ्गों का सूक्ष्म चिन्तन मनन (योनिश:मनस्कार) करे।

"वह इनका कैसे सूक्ष्म चिन्तन...मनन करता है? ...विवेकनिसृत...पूर्ववत्..."॥ ●

१४. पठमगिलानसुत्तं

१४. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति वेळुवने कलन्दकनिवापे। तेन खो पन समयेन आयस्मा महाकस्सपो पिप्पलिगुहायं विहरति आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो भगवा सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनायस्मा महाकस्सपो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा आयस्मन्तं महाकस्सपं एतदवोच—"कच्चि ते, कस्सप, खमनीयं कच्चि यापनीयं? कच्चि दुक्खा वेदना पटिक्कमन्ति, नो अभिक्कमन्ति; पटिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो अभिक्कमो" ति?

"न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो [R.80] पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो" ति।

"सत्तिमे, कस्सप, बोज्झङ्गा मया सम्मदक्खाता भाविता बहुलीकता अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो खो, कस्सप, मया सम्मदक्खातो भावितो बहुलीकतो अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति...पे०... [B.72] उपेक्खासम्बोज्झङ्गो खो, कस्सप, मया सम्मदक्खातो भावितो बहुलीकतो अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति। इमे खो, कस्सप, सत्त बोज्झङ्गा मया सम्मदक्खाता भाविता बहुलीकता अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ती" ति।

[N.75] "तग्घ, भगवा, बोज्झङ्गा; तग्घ, सुगत, बोज्झङ्गा" ति।

---

१४. प्रथम ग्लानसूत्र : : महाकाश्यप का रुग्ण होना

१४. एक समय भगवान् (बुद्ध) **राजगृह के** वेणुवनस्थित कलन्दकनिवाप में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् महाकाश्यप पिप्पलीगुहा में साधना करते समय अत्यधिक रुग्ण हो गये। भगवान् ने यह सब सुना तो वे सायङ्काल समाधिभावना से उठ कर आयुष्मान् महाकाश्यप के पास गये। वहाँ जा कर एक प्रज्ञप्त आसन पर विराज कर आयुष्मान् महाकाश्यप से कुशलमङ्गल पूछते हुए उन के रोग के विषय में यों पूछने लगे—"कहो, काश्यप! अब तुम्हारा यह रोग तथा इस से होने वाली पीड़ा कुछ कम है? इसे तुम सहन कर पा रहे हो?"

"भन्ते! रोग के कम होने या पीड़ा सहन करने की बात न पूछिये! यह रोग तो बढ़ता ही जा रहा है। इस के बढ़ने के ही लक्षण प्रतीत होते हैं, घटने के तो प्रतीत ही नहीं होते!"

"काश्यप! मैने सात बोध्यङ्ग बताये हैं, जिन की साधना एवं अभ्यास परम ज्ञान एवं निर्वाण की प्राप्ति हो सकती है। कौन से सात? १. स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...पूर्ववत्...७.

१५. इदमवोच भगवा। अत्तमनो आयस्मा महाकस्सपो भगवतो भासितं अभिनन्दि। वुट्ठहि चायस्मा महाकस्सपो तम्हा आबाधा। तथापहीनो चायस्मतो महाकस्सपस्स सो आबाधो अहोसी ति॥ •

१५. दुतियगिलानसुत्तं

१६. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति वेळुवने कलन्दकनिवापे। तेन खो पन समयेन आयस्मा महामोग्गल्लानो गिज्झकूटे पब्बते विहरति आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो भगवा सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनायस्मा महामोग्गल्लानो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा आयस्मन्तं महामोग्गल्लानं एतदवोच—"कच्चि ते, मोग्गल्लान, खमनीयं कच्चि यापनीयं? कच्चि दुक्खा वेदना पटिक्कमन्ति, नो अभिक्कमन्ति; पटिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो अभिक्कमो" ति?

"न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटि-क्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो" ति।

उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। इन सात बोध्यङ्गों की साधना एवं अभ्यास से परम ज्ञान एवं निर्वाण की अधिगति हो सक्ती है।"

"भगवन्! आप ने बोध्यङ्गों के विषय में यथार्थ कहा। सुगत! बोध्यङ्गों की तो यही महिमा है।"

१५. भगवान् ने यों उपदेश किया। तथा इस उपदेश से सन्तुष्ट हो कर आयुष्मान् महाकाश्यप ने उस उपदेश का अभिनन्दन (एवं इन पर आचरण) किया। शनैः शनैः आयुष्मान् महाकाश्यप उस रोग से मुक्त हो कर खड़े हो गये। तथा उन का वह रोग भी क्षीण हो गया॥ •

१५. द्वितीय ग्लानसूत्र : : महामोग्गल्लान का रुग्ण होना

१६. एक समय भगवान् (बुद्ध) **राजगृह में** वेणुवन के कलन्दकनिवाप में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् महामोग्गल्लान गृध्रकूट पर्वत पर साधना करते हुए कुछ रोगग्रस्त हो गये। जब भगवान् ने यह सुना तो वे एक दिन सायङ्काल समाधि से उठ कर आयुष्मान् महामोग्गल्लान के पास गये। वहाँ जा कर उन से कुशलमङ्गल पूछने के बाद उन के रोग के विषय में पूछने लगे—"कहो, मोग्गल्लान! तुम्हारा यह रोग या इस से होने वाली पीड़ा कुछ कम है?"

"भन्ते! आप के रोग क्षीण होने या वेदनाएँ अल्प होने की बात कर रहे हैं! यहाँ तो रोग एवं तज्जन्य पीड़ा क्षण क्षण बढ़ती ही जा रही है!"

"सत्तिमे, मोग्गल्लान, बोज्झङ्गा मया सम्मदक्खाता भाविता बहुलीकता अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो खो, मोग्गल्लान, मया सम्मदक्खातो भावितो बहुलीकतो अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो खो, मोग्गल्लान, मया सम्मदक्खातो भावितो बहुलीकतो अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति। इमे खो, मोग्गल्लान, सत्त बोज्झङ्गा मया सम्मदक्खाता भाविता बहुलीकता अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ती" ति।

"तग्घ, भगवा, बोज्झङ्गा; तग्घ, सुगत, बोज्झङ्गा" ति।

[B.73] १७. इदमवोच भगवा। अत्तमनो आयस्मा महामोग्गल्लानो भगवतो भासितं अभिनन्दि। वुट्ठहि चायस्मा महामोग्गल्लानो तम्हा आबाधा। तथापहीनो चायस्मतो महामोग्गल्लानस्स सो आबाधो अहोसी" ति॥ ●

१६. ततियगिलानसुत्तं

[N.76, R.81] १८. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति वेळुवने कलन्दकनिवापे। तेन खो पन समयेन भगवा आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो आयस्मा महाचुन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं महाचुन्दं भगवा एतदवोच—"पटिभन्तु तं, चुन्द, बोज्झङ्गा" ति।

"सत्तिमे, भन्ते, बोज्झङ्गा भगवता सम्मदक्खाता भाविता बहुलीकता अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो खो, भन्ते, भगवता सम्मदक्खातो भावितो बहुलीकतो अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति

"मोग्गल्लान! मैने सात बोध्यङ्ग...पूर्वसूत्रवत्...।

"सुगत! बोध्यङ्गों की महिमा यथार्थ है।"

१७. भगवान् ने यह उपदेश किया। ...पूर्वसूत्रवत्...। ...वह रोग दूर हो गया॥●

१६. तृतीय ग्लानसूत्र : : भगवान् का रुग्ण होना

१८. एक समय भगवान् (बुद्ध) राजगृह के वेणुवनस्थित कलन्दकनिवाप में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय भगवान् कुछ रुग्ण हो गये। इसी समय कभी आयुष्मान् चुन्द भगवान् के पास गये, उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् महाचुन्द को भगवान् ने यों कहा—"चुन्द! कुछ बोध्यङ्गों के विषय में कहो।"

"भन्ते! आप भगवान् ने सात बोध्यङ्ग बताये हैं, जिन की यदि भली भाँति साधना

...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो खो, भन्ते, भगवता सम्मदक्खातो भावितो बहुलीकतो अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति। इमे खो, भन्ते, सत्त बोज्झङ्गा भगवता सम्मदक्खाता भाविता बहुलीकता अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ती'' ति।

''तग्घ, चुन्द, बोज्झङ्गा; तग्घ, चुन्द, बोज्झङ्गा'' ति।

१९. इदमवोचायस्मा चुन्दो। समनुञ्ञो सत्था अहोसि। वुट्ठहि च भगवा तम्हा आबाधा। तथापहीनो च भगवतो सो आबाधो अहोसी ति॥

१७. पारङ्गमसुत्तं[१]

२०. ''सत्तिमे, भिक्खवे, बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता अपारा पारं गमनाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो...इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता अपारा पारं गमनाय संवत्तन्ती ति।

''अप्पका ते मनुस्सेसु, ये जना पारगामिनो। [B.74, R.82]
अथायं इतरा पजा, तीरमेवानुधावति॥
''ये च खो सम्मदक्खाते, धम्मे धम्मानुवत्तिनो।
ते जना पारमेस्सन्ति, मच्चुधेय्यं सुदुत्तरं॥
''कण्हं धम्मं विप्पहाय, सुक्कं भावेथ पण्डितो। [N.77]
ओका अनोकमागम्म, विवेके यत्थ दूरमं॥
''तत्राभिरतिमिच्छेय्य, हित्वा कामे अकिञ्चनो।
परियोदपेय्य अत्तानं, चित्तक्लेसेहि पण्डितो॥
''येसं सम्बोधियङ्गेसु, सम्मा चित्तं सुभावितं।
आदानप्पटिनिस्सग्गे, अनुपादाय ये रता।
खीणासवा जुतिमन्तो, ते लोके परिनिब्बुता''॥ ति॥

(ध.प., ८५-८९ गा.)

एवं अभ्यास किया जाय तो वे साधक को अभिज्ञान, सम्बोधि एवं निर्वाण की ओर प्रवृत्त कर सकते हैं। कौन से सात? ...पूर्ववत्...।''

''चुन्द! बोध्यङ्ग तो यथार्थ हैं। इन की महिमा भी यथार्थ है।''

१९. आयुष्मान् चुन्द यों बोले। भगवान् ने उन के कथन का अनुमोदन किया। भगवान् उस रोग से मुक्त हो गये। तथा उन का वह रोग भी क्षीण हो गया॥

---

१. यह सूत्र पीछे **४५. मार्गसंयुक्त** के ३४वें सूत्र के रूप में भी वर्णित है, वहाँ भी देखें।

१८. विरद्धसुत्तं

२१. ''येसं केसञ्चि, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा विरद्धा, विरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी। येसं केसञ्चि, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा आरद्धा, आरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गो...येसं केसञ्चि, भिक्खवे, इमे सत्त बोज्झङ्गा विरद्धा, विरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी। येसं केसञ्चि, भिक्खवे, इमे सत्त बोज्झङ्गा आरद्धा, आरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी'' ति॥ ●

१९. अरियसुत्तं

२२. ''सत्तिमे, भिक्खवे, बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता अरिया निय्यानिका नीयन्ति तक्करस्स सम्मा दुक्खक्खयाय। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गो...इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता अरिया निय्यानिका नीयन्ति तक्करस्स सम्मा दुक्खक्खयाया'' ति॥ ●

२०. निब्बिदासुत्तं

[B.75] २३. ''सत्तिमे, भन्ते, बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता एकन्तनिब्बिदाय विरागाय

---

१७. पारङ्गमसूत्र : : **पार गमन**

२०. ...''भिक्षुओ! ये सातों बोध्यङ्ग भली भाँति साधना तथा अभ्यास करने पर अपार से पार पहुँचाने में समर्थ हैं। कौन से सात? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...पूर्ववत्... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। ...पूर्ववत्... ॥ ●

*[यह सूत्र ४५ **मार्गसंयुक्त** के ३४वें सूत्र के रूप में भी वर्णित है। गाथाओं का अनुवाद वहाँ देख लें।]*

१८. विरद्धसूत्र : : **मार्गावरोध**

२१. ...''भिक्षुओ! जिन के सात बोध्यङ्गों की साधना रुक गयी, समझ लो कि उन का आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग भी रुक गया, जो कि दुःखक्षय की ओर भली भाँति ले जाने वाला है। (इस के विपरीत—) जिन के सात बोध्यङ्गों की भावना आरम्भ हो गयी तो समझ लो कि उन का यह दुःखक्षय की ओर ले जाने वाला आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग भी खुल गया। कौन से सात? ...पूर्ववत्... ॥ ●

१९. आर्यसूत्र : : **मोक्षमार्ग**

२२. ...''भिक्षुओ! ये साधनाकृत एवं अभ्यस्त सात बोध्यङ्ग साधक को सम्यग् दुःखक्षय के लिये नैर्यानिक (मोक्ष) मार्ग में प्रवृत्त कराते हैं। कौन से सात...पूर्ववत्... ॥ ●

२०. निर्विदासूत्र : : **निर्वाणप्राप्ति**

२३. ...''भिक्षुओ! इन सात बोध्यङ्गों की साधना एवं अभ्यास से साधक एकान्ततः

निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो...इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय [N.83] सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ती'' ति॥ ●

गिलानवग्गो दुतियो॥

तस्सुद्दानं

पाणा सुरियूपमा द्वे, गिलाना अपरे तयो। [R.83]
पारङ्गामी विरद्धो च, अरियो निब्बिदाय चा ति॥ ●

निर्विदा (ग्लानि=अरुचि), वैराग्य, निरोध, उपशम, अभिज्ञान, सम्बोधि एवं निर्वाण की ओर प्रवृत्त होता है। कौन से सात? ...पूर्ववत्... ॥ ●

ग्लानवर्ग द्वितीय सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. प्राणिसूत्र, २. प्रथम सूर्योपमसूत्र, ३. द्वितीय सूर्योपमसूत्र, ४. प्रथम ग्लानसूत्र, ५. द्वितीय ग्लानसूत्र, ६. तृतीय ग्लानसूत्र, ७. पारङ्गमसूत्र, ८. विरद्धसूत्र, ९. आर्यसूत्र एवं १०. निर्विदासूत्र॥ ●

३. उदायिवग्गो ततियो

२१. बोधायसुत्तं

२४. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि...पे०...एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"'बोज्झङ्गा, बोज्झङ्गा' ति, भन्ते, वुच्चन्ति। कित्तावता नु खो, भन्ते, 'बोज्झङ्गा' ति वुच्चन्ती" ति?

"'बोधाय संवत्तन्ती' ति खो, भिक्खु, तस्मा बोज्झङ्गा ति वुच्चन्ति। इध, भिक्खु, सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। 'बोधाय संवत्तन्ती' ति खो, भिक्खु, तस्मा 'बोज्झङ्गा' ति वुच्चन्ती" ति॥ •

२२. बोज्झङ्गदेसनासुत्तं

२५. "सत्त वो, भिक्खवे, बोज्झङ्गे देसेस्सामि; तं सुणाथ। कतमे च, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा? सतिसम्बोज्झङ्गो...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो...इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा" ति॥ •

२३. ठानियसुत्तं

[B.76, R.84] २६. "कामरागट्ठानियानं, भिक्खवे, धम्मानं मनसिकारबहुलीकारा अनुप्पन्नो चेव कामच्छन्दो उप्पज्जति, उप्पन्नो च कामच्छन्दो भिय्योभावाय वेपुल्लाय

---

३. उदायिवर्ग तृतीय

२१. बोधायसूत्र : : बोध्यङ्ग का अर्थ

२४. ...तब कोई भिक्षु जहाँ भगवान् विराजमान थे, वहाँ गया...पूर्ववत्...एक ओर बैठा वह भिक्षु भगवान् से यों बोला—"भन्ते! लोग 'बोध्यङ्ग, बोध्यङ्ग' ऐसा कहते रहते हैं, भन्ते! इन्हें 'बोध्यङ्ग' क्यों कहा जाता है?

ये बोध्यङ्ग साधक भिक्षु को ज्ञान कराते हैं—इसलिये इन्हें बोध्यङ्ग कहा जाता है। ...पूर्ववत्... ॥ •

२२. बोध्यङ्गदेशनासूत्र : : बोध्यङ्ग का उपदेश

२५. ..."भिक्षुओ! सात बोध्यङ्गों का उपदेश करूँगा, उसे ध्यानपूर्वक सुनो तथा मन में बैठा लो। भिक्षुओ! कौन से सात बोध्यङ्ग? ...पूर्ववत्... ॥ •

२३. स्थानीयसूत्र : : स्थानप्राप्ति से वृद्धि

२६. ..."भिक्षुओ! कामरागस्थानीय धर्मों का अत्यधिक मन में चिन्तन करने से अनुत्पन्न कामराग का उत्पाद हो जाता है, तथा उत्पन्न कामराग की वृद्धि एवं विपुलता

संवत्तति। ब्यापादट्ठानियानं, भिक्खवे, धम्मानं मनसिकारबहुलीकारा अनुप्पन्नो चेव ब्यापादो उप्पज्जति, उप्पन्नो च ब्यापादो भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति। थीनमिद्धट्ठानियानं, भिक्खवे, धम्मानं मनसिकारबहुलीकारा अनुप्पन्नं चेव थीनमिद्धं [N.79] उप्पज्जति, उप्पन्नं च थीनमिद्धं भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति। उद्धच्चकुक्कुच्चट्ठानियानं, भिक्खवे, धम्मानं मनसिकारबहुलीकारा अनुप्पन्नं चेव उद्धच्चकुक्कुच्चं उप्पज्जति, उप्पन्नं च उद्धच्चकुक्कुच्चं भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति। विचिकिच्छाट्ठानियानं, भिक्खवे, धम्मानं मनसिकारबहुलीकारा अनुप्पन्ना चेव विचिकिच्छा उप्पज्जति, उप्पन्ना च विचिकिच्छा भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति।

"सतिसम्बोज्झङ्गट्ठानियानं, भिक्खवे, धम्मानं मनसिकारबहुलीकारा अनुप्पन्नो चेव सतिसम्बोज्झङ्गो उप्पज्जति, उप्पन्नो च सतिसम्बोज्झङ्गो भावनापारिपूरिं गच्छति ...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गट्ठानियानं, भिक्खवे, धम्मानं मनसिकारबहुलीकारा अनुप्पन्नो चेव उपेक्खासम्बोज्झङ्गो उप्पज्जति, उप्पन्नो च उपेक्खासम्बोज्झङ्गो भावनापारिपूरिं गच्छती" ति॥ •

२४. अयोनिसोमनसिकारसुत्तं

२७. "अयोनिसो, भिक्खवे, मनसिकरोतो अनुप्पन्नो चेव कामच्छन्दो उप्पज्जति, उप्पन्नो च कामच्छन्दो भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति; अनुप्पन्नो चेव ब्यापादो [R.85] उप्पज्जति, उप्पन्नो च ब्यापादो भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति; अनुप्पन्नं चेव थीनमिद्धं उप्पज्जति, उप्पन्नं च थीनमिद्धं भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति; अनुप्पन्नं चेव उद्धच्चकुक्कुच्चं उप्पज्जति, उप्पन्नं च उद्धच्चकुक्कुच्चं भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति;

होने लगती है। इसी तरह, भिक्षुओ! व्यापादस्थानीय धर्मों का...पूर्ववत्...स्त्यानमृद्धस्थानीय धर्मों का...औद्धत्यकौकृत्यस्थानीय धर्मों का ...विचिकित्सास्थानीय धर्मों का अत्यधिक मन में चिन्तन करने से अनुत्पन्न विचिकित्सा (शङ्का, सन्देह) उत्पन्न होती हैं तथा उत्पन्न विचिकित्सा में वृद्धि एवं विपुलता होने लगती है।

इसी तरह मन में स्मृतिसम्बोध्यङ्गस्थानीय धर्मों के अत्यधिक चिन्तन करने से अनुत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग उत्पन्न होता है, तथा उत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की वृद्धि एवं विपुलता होने लगती है। ...पूर्ववत्...उपेक्षासम्बोध्यङ्गस्थानीय धर्मों के...पूर्ववत्... ॥ •

२४. अयोनिशःमनस्कारसूत्र : : भली भाँति मनन न करना

२७. ..."भिक्षुओ! भली भाँति चिन्तन मनन न करने से अनुत्पन्न कामच्छन्द उत्पन्न हो जाता है तथा उत्पन्न कामच्छन्द में वृद्धि होती है। ...अनुत्पन्न व्यापाद...उत्पन्न

अनुप्पन्ना चेव विचिकिच्छा उप्पज्जति, उप्पन्ना च विचिकिच्छा भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति; अनुप्पन्नो चेव सतिसम्बोज्झङ्गो नुप्पज्जति, उप्पन्नो च सतिसम्बोज्झङ्गो निरुज्झति...पे०...अनुप्पन्नो चेव उपेक्खासम्बोज्झङ्गो नुप्पज्जति, उप्पन्नो च उपेक्खा-सम्बोज्झङ्गो निरुज्झति।

[B.77] "योनिसो च खो, भिक्खवे, मनसिकरोतो अनुप्पन्नो चेव कामच्छन्दो नुप्पज्जति, उप्पन्नो च कामच्छन्दो पहीयति; अनुप्पन्नो चेव ब्यापादो नुप्पज्जति, उप्पन्नो च ब्यापादो पहीयति; अनुप्पन्नं चेव थीनमिद्धं नुप्पज्जति, उप्पन्नं च थीनमिद्धं पहीयति; अनुप्पन्नं [N.80] चेव उद्धच्चकुक्कुच्चं नुप्पज्जति, उप्पन्नं च उद्धच्चकुक्कुच्चं पहीयति; अनुप्पन्ना चेव विचिकिच्छा नुप्पज्जति, उप्पन्ना च विचिकिच्छा पहीयति।

"अनुप्पन्नो चेव सतिसम्बोज्झङ्गो उप्पज्जति, उप्पन्नो च सतिसम्बोज्झङ्गो भावनापारिपूरिं गच्छति...पे०...अनुप्पन्नो चेव उपेक्खासम्बोज्झङ्गो उप्पज्जति, उप्पन्नो च उपेक्खासम्बोज्झङ्गो भावनापारिपूरिं गच्छती" ति॥ ●

२५. अपरिहानियसुत्तं

[R.86] २८. "सत्त वो, भिक्खवे, अपरिहानिये धम्मे देसेस्सामि; तं सुणाथ। कतमे च, भिक्खवे, सत्त अपरिहानिया धम्मा? यदिदं—सत्त बोज्झङ्गा। कतमे सत्त? सति-सम्बोज्झङ्गो...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो...इमे खो, भिक्खवे, सत्त अपरिहानिया धम्मा" ति॥ ●

व्यापाद...अनुत्पन्न स्त्यानमृद्ध...उत्पन्न स्त्यानमृद्ध...अनुत्पन्न औद्धत्यकौकृत्य...उत्पन्न औद्धत्यकौकृत्य...पूर्ववत्... अनुत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...उत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...अनुत्पन्न उपेक्षासम्बोध्यङ्ग...उत्पन्न उपेक्षासम्बोध्यङ्ग में वृद्धि होती है।

"इसी तरह, भिक्षुओ! भली भाँति चिन्तन मनन करने से अनुत्पन्न कामच्छन्द उत्पन्न नहीं होता, तथा उत्पन्न कामच्छन्द वृद्धि प्राप्त नहीं कर पाता। ...अनुत्पन्न व्यापाद... उत्पन्न व्यापाद...अनुत्पन्न स्त्यानमृद्ध...उत्पन्न स्त्यानमृद्ध...अनुत्पन्न औद्धत्यकौकृत्य...उत्पन्न औद्धत्यकौकृत्य...अनुत्पन्न विचिकित्सा...उत्पन्न विचिकित्सा...अनुत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग... उत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग ...पूर्ववत्...अनुत्पन्न उपेक्षासम्बोध्यङ्ग...उत्पन्न उपेक्षासम्बोध्यङ्ग में वृद्धि होती है"॥ ●

२५. अपरिहाणीयसूत्र : : अक्षय धर्म

२८. ..."भिक्षुओ! सात न क्षीण होने वाले धर्मों की देशना करूँगा...पूर्ववत्...। कौन से वे सात धर्म हैं जो क्षीण नहीं होते? भिक्षुओ! ये ही सात सम्बोध्यङ्ग; जैसे—१. स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...पूर्ववत्...७. उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। भिक्षुओ! ये सात अपरिहाणीय धर्म हैं॥"

२६. तण्हक्खयसुत्तं

२९. ''यो, भिक्खवे, मग्गो या पटिपदा तण्हक्खयाय संवत्तति, तं मग्गं तं पटिपदं भावेथ। कतमो च, भिक्खवे, मग्गो कतमा च पटिपदा तण्हक्खयाय संवत्तति? यदिदं—सत्त बोज्झङ्गा। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो'' ति।

एवं वुत्ते आयस्मा उदायी भगवन्तं एतदवोच—''कथं भाविता नु खो, भन्ते, सत्त बोज्झङ्गा, कथं बहुलीकता तण्हक्खयाय संवत्तन्ती'' ति?

''इध, उदायि, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं विपुलं महग्गतं अप्पमाणं अब्यापज्जं। तस्स सतिसम्बोज्झङ्गं भावयतो विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्ग-परिणामिं विपुलं महग्गतं अप्पमाणं अब्यापज्जं तण्हा पहीयति। तण्हाय पहाना कम्मं पहीयति। कम्मस्स पहाना दुक्खं पहीयति...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेक-निस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं विपुलं महग्गतं [B.78] अप्पमाणं अब्यापज्जं। तस्स उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावयतो विवेकनिस्सितं विराग-निस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं विपुलं महग्गतं अप्पमाणं [N.81, R.87] अब्यापज्जं तण्हा पहीयति। तण्हाय पहाना कम्मं पहीयति। कम्मस्स पहाना दुक्खं पहीयति। इति खो, उदायि, तण्हक्खया कम्मक्खयो, कम्मक्खया दुक्खक्खयो'' ति॥●

---

२६. तृष्णाक्षयसूत्र : : तृष्णाक्षय मार्ग का अभ्यास

२९. ...''भिक्षुओ! जो तृष्णाक्षय का मार्ग या उपाय है उस मार्ग की साधना करनी चाहिये। वह मार्ग या उपाय तृष्णाक्षय का कौन सा है? ये ही सात बोध्यङ्ग। कौन से सात? १. स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...७. उपेक्षासम्बोध्यङ्ग।''

भगवान् के ऐसा धर्मोपदेश करने के बाद आयुष्मान् उदायी ने इसी प्रसङ्ग में भगवान् से प्रश्न किया—''भन्ते! ये सात बोध्यङ्ग कैसे मनन, चिन्तन एवं अभ्यास से तृष्णाक्षय में उपयोगी होते हैं?

(भगवान्—) ''यहाँ, उदायि! वह साधक भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग की ओर ले जाने वाले, विपुल महान्, अप्रमाण एवं व्यापाद रहित स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की साधना करता है जिस से उस का तृष्णाक्षय हो जाता है। तृष्णा के क्षय से कर्म प्रहीण हो जाता है तथा कर्म के प्रहाण से दुःख प्रहीण होता है...पूर्ववत्...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की साधना करता है जिस से उस का तृष्णाक्षय...दुःख प्रहीण होता है। इसी को कहते हैं, उदायि! तृष्णाक्षय से कर्मक्षय, कर्मक्षय से दुःखक्षय''॥ ●

२७. तण्हानिरोधसुत्तं

३०. ''यो, भिक्खवे, मग्गो या पटिपदा तण्हानिरोधाय संवत्तति, तं मग्गं तं पटिपदं भावेथ। कतमो च, भिक्खवे, मग्गो कतमा च पटिपदा तण्हानिरोधाय संवत्तति? यदिदं—सत्त बोज्झङ्गा। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो। कथं भाविता, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा कथं बहुलीकता तण्हानिरोधाय संवत्तन्ति?

''इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं भाविता खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा एवं बहुलीकता तण्हानिरोधाय संवत्तन्ती'' ति॥ •

२८. निब्बेधभागियसुत्तं

३१. ''निब्बेधभागियं वो, भिक्खवे, मग्गं देसेस्सामि; तं सुणाथ। कतमो च, भिक्खवे, निब्बेधभागियो मग्गो? यदिदं—सत्त बोज्झङ्गा। कतमे सत्त? सति-सम्बोज्झङ्गो...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गो'' ति।

एवं वुत्ते आयस्मा उदायी भगवन्तं एतदवोच—''कथं भाविता नु खो, भन्ते, सत्त बोज्झङ्गा कथं बहुलीकता निब्बेधाय संवत्तन्ती'' ति?

''इध, उदायि, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं [R.88] निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं विपुलं महग्गतं अप्पमाणं अब्यापज्जं। सो सतिसम्बोज्झङ्गं भावितेन चित्तेन अनिब्बिद्धपुब्बं अप्पदालितपुब्बं लोभक्खन्धं निब्बिज्झति पदालेति; अनिब्बिद्धपुब्बं अप्पदालितपुब्बं दोसक्खन्धं निब्बिज्झति

---

२७. तृष्णानिरोधसूत्र : : तृष्णाक्षय के मार्ग का अभ्यास

३०. ...''भिक्षुओ! तृष्णानिरोध के मार्ग एवं उपाय का अभ्यास करो...पूर्ववत्... ॥ •

(पूर्वसूत्र का 'तृष्णाक्षय' शब्द हटा कर 'तृष्णानिरोध' शब्द रख कर विस्तार कर लें।)

२८. निर्वेधभागीयसूत्र : : तृष्णा छेदक मार्ग

३१. ...''भिक्षुओ! निर्वेधभागीय (तृष्णा को काट गिराने वाले) उपाय (मार्ग) का उपदेश करूँगा...पूर्ववत्...। यह मार्ग कौन सा है? ये ही सात बोध्यङ्ग। ...''।

भगवान् द्वारा ऐसा कहे जाने पर इस प्रसङ्ग में आयुष्मान् उदायी ने पूछा—''भन्ते! इन सात बोध्यङ्गों का कैसे अभ्यास किया जाय कि ये तृष्णा को काट सकें?''

''यहाँ, उदायि! कोई भिक्षु विवेक...व्यापादरहित स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। स्मृतिसम्बोध्यङ्गभावित चित्त से वह पहले कभी न काटे गये, कुचले गये लोभ

पदालेति; अनिब्बिद्धपुब्बं अप्पदालितपुब्बं मोहक्खन्धं निब्बिज्झति पदालेति...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं [B.79, N.82] वोस्सग्गपरिणामिं विपुलं महग्गतं अप्पमाणं अब्यापज्जं। सो उपेक्खासम्बोज्झङ्ग भावितेन चित्तेन अनिब्बिद्धपुब्बं अप्पदालितपुब्बं लोभक्खन्धं निब्बिज्झति पदालेति; अनिब्बिद्धपुब्बं अप्पदालितपुब्बं दोसक्खन्धं निब्बिज्झति पदालेति; अनिब्बिद्धपुब्बं अप्पदालितपुब्बं मोहक्खन्धं निब्बिज्झति पदालेति। एवं भाविता खो, उदायि, सत्त बोज्झङ्गा एवं बहुलीकता निब्बेधाय संवत्तन्ती'' ति॥ •

२९. एकधम्मसुत्तं

३२. ''नाहं, भिक्खवे, अञ्ञं एकधम्मं पि समनुपस्सामि, यो एवं भावितो बहुलीकतो संयोजनीयानं धम्मानं पहानाय संवत्तति, यथयिदं, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो ति। कथं भाविता च, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा कथं बहुलीकता संयोजनीयानं धम्मानं पहानाय संवत्तन्ति?

''इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्ग-परिणामिं। एवं भाविता खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा एवं बहुलीकता संयोजनीयानं धम्मानं पहानाय संवत्तन्ति।

''कतमे च, भिक्खवे, संयोजनीया धम्मा? चक्खु, भिक्खवे, संयोजनीयो धम्मो। एत्थेते उप्पज्जन्ति संयोजनविनिबन्धा अज्झोसाना...पे०...जिव्हा-[R.89] संयोजनीया धम्मा। एत्थेते उप्पज्जन्ति संयोजनविनिबन्धा अज्झोसाना...पे०...मनो-

---

को, द्वेष को, मोह को काट देता है, कुचल देता है।...पूर्ववत्...। उपेक्षासम्बोध्यङ्ग...मोह को काट देता है, कुचल देता है। उदायि! इस तरह इन सात बोध्यङ्गों की भावना की जाती है''॥ •

२९. एकधर्मसूत्र : : बन्धन में डालने वाले धर्म

३२. ...''भिक्षुओ! मैं सात सम्बोध्यङ्गों के अतिरिक्त ऐसा एक धर्म भी नहीं देखता जो साधना एवं अभ्यास करने पर इन संयोजनीय धर्मों का प्रहाण कर सके। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! कैसे इन सात बोध्यङ्गों की भावना करने से संयोजनीय धर्मों का प्रहाण हो पाता है?

''यहाँ, कोई भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागयुक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है जो कि संयोजनीय धर्मों के प्रहाण में समर्थ है।

''भिक्षुओ! ये संयोजनीय धर्म कौन से हैं? भिक्षुओ! चक्षु वह संयोजनीय धर्म

संयोजनीया धम्मा। एत्थेते उप्पज्जन्ति संयोजनविनिबन्धा अज्झोसाना। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, संयोजनीया धम्मा'' ति॥

३०. उदायिसुत्तं

३३. एकं समयं भगवा सुम्भेसु विहरति सेतकं नाम सुम्भानं निगमो। अथ खो आयस्मा उदायी येन भगवा तेनुपसङ्कमि...पे०...एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा उदायी [N.83] भगवन्तं एतदवोच—''अच्छरियं, भन्ते, अब्भुतं, भन्ते! याव बहुकतं च मे, [B.80] भन्ते, भगवति पेमं च गारवो च हिरी च ओत्तप्पं च। अहं हि, भन्ते, पुब्बे अगारिकभूतो समानो अबहुकतो अहोसिं धम्मेन अबहुकतो सङ्घेन। सो ख्वाहं भगवति पेमं च गारवं च हिरिं च ओत्तप्पं च सम्पस्समानो अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो। तस्स मे भगवा धम्मं देसेसि—'इति रूपं, इति रूपस्स समुदयो, इति रूपस्स अत्थङ्गमो; इति वेदना...पे०...इति सञ्ञा...इति सङ्खारा...इति विञ्ञाणं, इति विञ्ञाणस्स समुदयो, इति विञ्ञाणस्स अत्थङ्गमो' ति। सो ख्वाहं, भन्ते, सुञ्ञागारगतो इमेसं पञ्चुपादानक्खन्धानं [R.90] उक्कुज्जावकुज्जं सम्परिवत्तेन्तो 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं। धम्मो च मे, भन्ते,

---

है। यहीं बन्धन में डालने वाली आसक्ति उत्पन्न होती है। श्रोत्र...घ्राण...जिह्वा...काय...मन वह धर्म है जहाँ बन्धन में डालने वाली आसक्ति उत्पन्न होती है। भिक्षुओ! ये संयोजनीय धर्म कहलाते हैं''॥

३०. उदायिसूत्र : : बोध्यङ्ग साधना से परमार्थप्राप्ति

३३. एक समय भगवान् (बुद्ध) शुम्भ प्रदेश के **श्वेतक** नामक शुम्भों के निगम में साधनाहेतु विराजमान थे। तब आयुष्मान् उदायी ने...भगवान् से यह पूछा—''भन्ते! आश्चर्य है, अद्भुत है! भन्ते! भगवान् के प्रति मेरा अत्यधिक प्रेम, गौरव, लज्जा एवं भय है। भन्ते! जब मैं गृहस्थ था, तब तो मेरे मन में धर्म या सङ्घ के प्रति कोई विशेष सम्मान नहीं था, केवल भगवान् के प्रति प्रेम होने से ही मैंने घर से बेघर हो प्रव्रज्या ली। आप ने मुझ को यह उपदेश किया—'यह रूप है, यह रूप का समुदय है, यह रूप का विनाश है'; 'यह वेदना है' ...पूर्ववत्...'यह संज्ञा है'... 'ये संस्कार हैं'...'यह विज्ञान है, यह विज्ञान का समुदय है, यह विज्ञान का नाश है'। तब, भन्ते! मैंने एकान्त स्थानों (शून्यागारों) में बैठ कर इन पाँचों ही उपादानस्कन्धों को, ऊपर नीचे कर, उलट पलट कर इन पर विचार करते हुए 'यह दुःख है'—यह मैंने भली भाँति जान लिया, 'यह दुःखसमुदय है'...'यह दुःखनिरोध है'...'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—यह मैंने भली भाँति जान लिया।

अभिसमितो, मग्गो च मे पटिलद्धो; यो मे भावितो बहुलीकतो तथा तथा विहरन्तं तथत्ताय उपनेस्सति यथाहं 'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया' ति पजानिस्सामि। सतिसम्बोज्झङ्गो मे, भन्ते, पटिलद्धो, यो मे भावितो बहुलीकतो तथा तथा विहरन्तं तथत्ताय उपनेस्सति यथाहं 'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया' ति पजानिस्सामि...पे०...उपेक्खा-सम्बोज्झङ्गो मे, भन्ते, पटिलद्धो, यो मे भावितो बहुलीकतो तथा तथा विहरन्तं तथत्ताय उपनेस्सति यथाहं 'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया' ति पजानिस्सामि। अयं खो मे, भन्ते, मग्गो पटिलद्धो, यो मे भावितो बहुलीकतो तथा तथा विहरन्तं तथत्ताय उपनेस्सति यथाहं 'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया' ति पजानिस्सामी'' ति।

''साधु साधु, उदायि! एसो हि ते, उदायि, मग्गो पटिलद्धो, यो ते भावितो बहुलीकतो तथा तथा विहरन्तं तथत्ताय उपनेस्सति यथा त्वं 'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया' ति पजानिस्सामी'' ति॥ •

उदायिवग्गो ततियो॥

तस्सुद्दानं

बोधाय देसना ठाना, अयोनिसो चापरिहानी। [N.84,B.81]
खयो निरोधो निब्बेधो, एकधम्मो उदायिना ति॥ •

''भन्ते! मैने जब धर्म को जान लिया, मुझे (मुक्ति—) मार्ग मिल गया। इसी भावना एवं अभ्यास से साधना करते हुए मुझे परमार्थ (निर्वाण) अधिगत हो जायगा। 'मेरी जाति क्षीण हुई, मेरा धर्म पूर्ण हुआ, अब मेरा कोई कर्तव्य शेष नहीं रहा'—ऐसा भी मैं जान लूँगा।''

''साधु, उदायि! साधु! अवश्य तुम ने धर्म जान लिया है...शेष नहीं रहा—ऐसा जान लेगा।'' •

उदायिवर्ग तृतीय सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. बोधायसूत्र, २. बोध्यङ्गदेशनासूत्र, ३. स्थानीयसूत्र, ४. अयोनिशोमनस्कारसूत्र, ५. अपरिहाणीयसूत्र, ६. तृष्णाक्षयसूत्र, ७. तृष्णानिरोधसूत्र, ८. निर्वेधभागीयसूत्र, ९. एकधर्मसूत्र एवं १०. उदायिसूत्र॥ •

४. नीवरणवग्गो चतुत्थो

३१. पठमकुसलसुत्तं

[R.91] ३४. ''ये केचि, भिक्खवे, धम्मा कुसला कुसलभागिया कुसलपक्खिका, सब्बे ते अप्पमादमूलका अप्पमादसमोसरणा; अप्पमादो तेसं धम्मानं अग्गमक्खायति। अप्पमत्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—सत्त बोज्झङ्गे भावेस्सति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरिस्सति।

''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो सत्त बोज्झङ्गे भावेति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं ...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अप्पमत्तो सत्त बोज्झङ्गे भावेति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोती'' ति॥ •

३२. दुतियकुसलसुत्तं

३५. ''ये केचि, भिक्खवे, धम्मा कुसला कुसलभागिया कुसलपक्खिका, सब्बे ते योनिसोमनसिकारमूलका योनिसोमनसिकारसमोसरणा; योनिसोमनसिकारो तेसं धम्मानं अग्गमक्खायति। योनिसोमनसिकारसम्पन्नस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—सत्त बोज्झङ्गे भावेस्सति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरिस्सति।

''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो सत्त बोज्झङ्गे भावेति,

---

४. नीवरणवर्ग चतुर्थ

३१. प्रथम कुशलसूत्र : : अप्रमाद आधार है

३४. ...''भिक्षुओ! जितने भी कुशल (शुभ=पुण्य) पक्ष के, कुशल की ओर प्रवृत्त करने वाले कुशल धर्म हैं, उन सब के मूल में अप्रमाद रहता है, अप्रमाद ही उन का आधार है। उन सभी धर्मों में अप्रमाद ही प्रधान (मुख्य) है। अप्रमत्त से ही, भिक्षुओ! यह आशा की जाती है कि वह इन सातों बोध्यङ्गों की भावना में, अभ्यास में सफल होगा।

''कैसे, भिक्षुओ! वह साधक अप्रमत्त हो कर इन सात बोध्यङ्गों की भावना करता है अभ्यास करता है? यहाँ, भिक्षुओ! साधक विवेक, स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...पूर्ववत्... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। यों, भिक्षुओ! वह साधक अप्रमत्त हो कर...अभ्यास करता है''॥ •

३२. द्वितीय कुशलसूत्र : : भली भाँति मनन करना

३५. ...''भिक्षुओ! जितने भी कुशलपक्ष के कुशलधर्म हैं, वे सब भली भाँति

सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमन-[B.82] सिकारसम्पन्नो सत्त बोज्झङ्गे भावेति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोती'' ति॥ •

३३. उपक्किलेससुत्तं

३६. ''पञ्चिमे, भिक्खवे, जातरूपस्स उपक्किलेसा, येहि [N.85, R.92] उपक्किलेसेहि उपक्किलिट्ठं जातरूपं न चेव मुदु होति न च कम्मनियं, न च पभस्सरं पभङ्गु च, न च सम्मा उपेति कम्माय। कतमे पञ्च? अयो, भिक्खवे, जातरूपस्स उपक्किलेसो, येन उपक्किलेसेन उपक्किलिट्ठं जातरूपं न चेव मुदु होति न च कम्मनियं, न च पभस्सरं पभङ्गु च, न च सम्मा उपेति कम्माय। लोहं, भिक्खवे, जातरूपस्स उपक्किलेसो, येन उपक्किलेसेन उपक्किलिट्ठं जातरूपं...पे०...तिपु, भिक्खवे, जातरूपस्स उपक्किलेसो...पे०...सीसं, भिक्खवे, जातरूपस्स उपक्किलेसो...पे०...सज्झु भिक्खवे, जातरूपस्स उपक्किलेसो, येन उपक्किलेसेन उपक्किलिट्ठं जातरूपं न चेव मुदु होति न च कम्मनियं, न च पभस्सरं पभङ्गु च, न च सम्मा उपेति कम्माय। इमे खो, भिक्खवे, पञ्च जातरूपस्स उपक्किलेसा, येहि उपक्किलेसेहि उपक्किलिट्ठं जातरूपं न चेव मुदु होति न च कम्मनियं, न च पभस्सरं पभङ्गु च, न च सम्मा उपेति कम्माय।

''एवमेव खो, भिक्खवे, पञ्चिमे चित्तस्स उपक्किलेसा, येहि उपक्किलेसेहि उपक्किलिट्ठं चित्तं न चेव मुदु होति न च कम्मनियं, न च पभस्सरं पभङ्गु च, न च सम्मा

मनन करने पर ही आधृत हैं। अतः अच्छी तरह मनन करना—उन धर्मों में मुख्य समझा जाता है। ...पूर्ववत्...। •

(पूर्वसूत्र के समान विस्तार कर लें।)

३३. उपक्लेशसूत्र : : सुवर्णवत् चित्त के पाँच मल

३६. ...''भिक्षुओ! सुवर्ण के ये पाँच मल (विकार) होते हैं, जिन के कारण सुवर्ण न मृदु होता है, न सुन्दर (कमनीय) लगता है, न उस में तब चमक दिखायी देती है, न वह किसी व्यवहार के योग्य ही होता है। कौन से पाँच? (१) अयस् (कृष्ण लौह भाग) सुवर्ण का मल होता है, जिस से मलिन हो कर वह सुवर्ण न मृदु...पूर्ववत्... व्यवहारयोग्य ही होता है। (२) साधारण लोह...(३) त्रपुष् (लाख) सुवर्ण का... (४) सीसा...एवं (५) चाँदी...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! सुवर्ण के ये पाँच मल होते हैं।

इसी तरह, भिक्षुओ! चित्त के भी पाँच मल होते हैं, जिन से चित्त मलिन हो कर न मृदु रहता है, न सुन्दर, न चमक वाला होता है न वह आश्रवों के क्षय करने योग्य ही

समाधियति आसवानं खयाय। कतमे पञ्च? कामच्छन्दो, भिक्खवे, चित्तस्स उपक्किलेसो, येन उपक्किलेसेन उपक्किलिट्ठं चित्तं न चेव मुदु होति न च कम्मनियं, न च [R.93] पभस्सरं पभङ्गु च, न च सम्मा समाधियति आसवानं खयाय...पे०...इमे खो, भिक्खवे, पञ्च चित्तस्स उपक्किलेसा, येहि उपक्किलेसेहि उपक्किलिट्ठं चित्तं न चेव मुदु होति न च कम्मनियं, न च पभस्सरं पभङ्गु च, न च सम्मा समाधियति आसवानं खयाया'' ति॥ •

३४. अनुपक्किलेससुत्तं

३७. ''सत्तिमे, भिक्खवे, बोज्झङ्गा अनावरणा अनीवरणा चेतसो अनुपक्किलेसा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ति। कतमे पञ्च? [B.83] सतिसम्बोज्झङ्गो, भिक्खवे, अनावरणो अनीवरणो चेतसो अनुपक्किलेसो [N.86] भावितो बहुलीकतो विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तति...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गो, भिक्खवे, अनावरणो अनीवरणो चेतसो अनुपक्किलेसो भावितो बहुलीकतो विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तति। इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा अनावरणा अनीवरणा चेतसो अनुपक्किलेसा भाविता बहुलीकता विज्जा-विमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ती'' ति॥ •

३५. अयोनिसोमनसिकारसुत्तं

३८. ''अयोनिसो, भिक्खवे, मनसिकरोतो अनुप्पन्नो चेव कामच्छन्दो उप्पज्जति,

---

रहता है। कौन से पाँच? (१) कामच्छन्द (काम में आसक्ति) चित्त का मल होता है जिस के कारण चित्त न मृदु...पूर्ववत्...। (२) व्यापाद...(३) स्त्यानमृद्ध (आलस्य), (४) औद्धत्यकौकृत्य...एवं (५) विचिकित्सा चित्त का मल होता है जिस के कारण चित्त न मृदु रह पाता है, ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! चित्त के यही पाँच मल होते हैं, जिन के कारण चित्त न मृदु रह जाता है, न कमनीय (सुन्दर) लगता है, न उस में चमक रहती है न कोई व्यवहारयोग्यता॥'' •

३४. अनुपक्लेशसूत्र : : बोध्यङ्गभावना से विमुक्ति

३७. ...''भिक्षुओ! इन आवरण, नीवरण एवं उपक्लेश रहित चित्त द्वारा सात बोध्यङ्गों की भावना तथा अभ्यास करने से विद्या एवं विमुक्ति के फल का साक्षात्कार होता है। कौन से सात? स्मृतिबोध्यङ्ग...उपेक्षाबोध्यङ्ग। ...

''भिक्षुओ! इन्हीं सात बोध्यङ्गों की भावना एवं अभ्यास से विद्या तथा विमुक्ति के फल का साक्षात्कार होता है॥'' •

उप्पन्नो च कामच्छन्दो भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति; अनुप्पन्नो चेव ब्यापादो उप्पज्जति, उप्पन्नो च ब्यापादो भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति; अनुप्पन्नं चेव थीनमिद्धं उप्पज्जति, उप्पन्नं च थीनमिद्धं भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तति; अनुप्पन्नं चेव उद्धच्चकुक्कुच्चं उप्पज्जति, उप्पन्नं च उद्धच्चकुक्कुच्चं भिय्योभावाय वेपुल्लाय [R.94] संवत्तति; अनुप्पन्ना चेव विचिकिच्छा उप्पज्जति उप्पन्ना च विचिकिच्छा भिय्योभावाय वेपुल्लाय संवत्तती'' ति॥ ●

३६. योनिसोमनसिकारसुत्तं

३९. ''योनिसो च खो, भिक्खवे, मनसिकरोतो अनुप्पन्नो चेव सतिसम्बोज्झङ्गो उप्पज्जति, उप्पन्नो च सतिसम्बोज्झङ्गो भावनापारिपूरिं गच्छति...पे०...अनुप्पन्नो चेव उपेक्खासम्बोज्झङ्गो उप्पज्जति, उप्पन्नो च उपेक्खासम्बोज्झङ्गो भावनापारिपूरिं गच्छती'' ति॥ ●

३७. बुद्धिसुत्तं

४०. ''सत्तिमे, भिक्खवे, बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता बुद्धिया अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो। इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता बुद्धिया अपरिहानाय संवत्तन्ती'' ति॥ ●

---

३५. अयोनिशःमनस्कारसूत्र : : भली भाँति मनन न करना

३८. ...''भिक्षुओ! भली भाँति (यथार्थतः) मनन न करने से अनुत्पन्न कामच्छन्द उत्पन्न होता है, तथा उत्पन्न कामच्छन्द में वृद्धि एवं विपुलता आती है।...अनुत्पन्न व्यापाद ...उत्पन्न व्यापाद में...अनुत्पन्न स्त्यानमृद्ध...उत्पन्न स्त्यानमृद्ध में...अनुत्पन्न औद्धत्यकौकृत्य ...उत्पन्न औद्धत्यकौकृत्य में...अनुत्पन्न विचिकित्सा...उत्पन्न विचिकित्सा में वृद्धि एवं विपुलता होती है॥'' ●

३६. योनिशःमनस्कारसूत्र : : भली भाँति मनन करना

३९. ...''भिक्षुओ! भली भाँति मनन करने से अनुत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग उत्पन्न होता है तथा उत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग में वृद्धि एवं विपुलता आती है।...पूर्ववत्...अनुत्पन्न उपेक्षासम्बोध्यङ्ग उत्पन्न होता है तथा उत्पन्न उपेक्षासम्बोध्यङ्ग में वृद्धि एवं विपुलता आती है॥'' ●

३७. वृद्धिसूत्र : : बोध्यङ्गभावना में वृद्धि

४०. ...''भिक्षुओ! ये भावित एवं अभ्यस्त बोध्यङ्ग साधना की वृद्धि में विघ्न बाधा नहीं आने देते। कौन से सात? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। ये भावित एवं अभ्यस्त सात बोध्यङ्ग साधना की वृद्धि में विघ्न बाधा नहीं आने देते॥'' ●

३८. आवरणनीवरणसुत्तं

४१. ''पञ्चिमे, भिक्खवे, आवरणा नीवरणा चेतसो उपक्किलेसा पञ्ञाय [N.87, B.84] दुब्बलीकरणा। कतमे पञ्च? कामच्छन्दो, भिक्खवे, आवरणो नीवरणो चेतसो उपक्किलेसो पञ्ञाय दुब्बलीकरणो। ब्यापादो, भिक्खवे, आवरणो नीवरणो चेतसो उपक्किलेसो पञ्ञाय दुब्बलीकरणो। थीनमिद्धं, भिक्खवे, आवरणं नीवरणं [R.95] चेतसो उपक्किलेसं पञ्ञाय दुब्बलीकरणं। उद्धच्चकुक्कुच्चं, आवरणं नीवरणं चेतसो उपक्किलेसं पञ्ञाय दुब्बलीकरणं। विचिकिच्छा, भिक्खवे, आवरणा नीवरणा चेतसो उपक्किलेसा पञ्ञाय दुब्बलीकरणा। इमे खो, भिक्खवे, पञ्च आवरणा नीवरणा चेतसो उपक्किलेसा पञ्ञाय दुब्बलीकरणा।

''सत्तिमे, भिक्खवे, बोज्झङ्गा अनावरणा अनीवरणा चेतसो अनुपक्किलेसा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो, भिक्खवे, अनावरणो अनीवरणो चेतसो अनुपक्किलेसो भावितो बहुलीकतो विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तति...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो, भिक्खवे, अनावरणो अनीवरणो चेतसो अनुपक्किलेसो भावितो बहुलीकतो विज्जा-विमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तति। इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा अनावरणा अनीवरणा चेतसो अनुपक्किलेसा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ती ति।

''यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको अट्ठिं कत्वा मनसि कत्वा सब्बं चेतसो समन्नाहरित्वा ओहितसोतो धम्मं सुणाति, इमस्स पञ्च नीवरणा तस्मिं समये न होन्ति। सत्त बोज्झङ्गा तस्मिं समये भावनापारिपूरिं गच्छन्ति।

---

३८. आवरणनीवरणसूत्र : : पाँच नीवरण

४१. ...''भिक्षुओ! चित्त के ये पाँच उपक्लेश ज्ञान के आवरण तथा प्रज्ञा को दुर्बल बनाने वाले हैं। कौन पाँच? कामच्छन्द..., व्यापाद...स्त्यानमृद्ध...औद्धत्यकौकृत्य... विचिकित्सा। भिक्षुओ! ये चित्त के पाँच उपक्लेश ज्ञान के आवरण तथा प्रज्ञा को दुर्बल करने वाले हैं।

''भिक्षुओ! चित्त के ये सात अनुपक्लेश अभ्यस्त किये जाने पर ज्ञान को अनावृत तथा प्रज्ञा को दृढ करते हुए विद्या एवं विमुक्ति के फल का साक्षात्कार कराने वाले हैं। कौन से सात? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...पूर्ववत्...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। यों, ये सात बोध्यङ्ग...पूर्ववत्... विमुक्तिफल का साक्षात्कार कराने वाले हैं।

''भिक्षुओ! जिस समय कोई आर्यश्रावक, ध्यान दे कर, मन लगा कर, सब तरफ

''कतमे पञ्च नीवरणा तस्मिं समये न होन्ति, कामच्छन्दनीवरणं तस्मिं समये न होति, ब्यापादनीवरणं तस्मिं समये न होति, थीनमिद्धनीवरणं तस्मिं समये न होति, उद्धच्चकुक्कुच्चनीवरणं तस्मिं समये न होति, विचिकिच्छानीवरणं तस्मिं समये न होति। इमस्स पञ्च नीवरणा तस्मिं समये न होन्ति।

''कतमे सत्त बोज्झङ्गा तस्मिं समये भावनापारिपूरिं गच्छन्ति? सतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भावनापारिपूरिं गच्छति...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भावना-पारिपूरिं गच्छति। इमे सत्त बोज्झङ्गा तस्मिं समये भावनापारिपूरिं गच्छन्ति। [R.96] यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको अट्ठिं कत्वा मनसि कत्वा सब्बं [N.88, B.85] चेतसो समन्नाहरित्वा ओहितसोतो धम्मं सुणाति, इमस्स पञ्च नीवरणा तस्मिं समये न होन्ति। इमे सत्त बोज्झङ्गा तस्मिं समये भावनापारिपूरिं गच्छन्ती'' ति॥ •

३९. रुक्खसुत्तं

४२. ''सन्ति, भिक्खवे, महारुक्खा अणुबीजा महाकाया रुक्खानं अज्झारुहा येहि रुक्खा अज्झारूळ्हा ओभग्गविभग्गा विपतिता सेन्ति। कतमे च ते, भिक्खवे, महारुक्खा अणुबीजा महाकाया रुक्खानं अज्झारुहा येहि रुक्खा अज्झारूळ्हा ओभग्गविभग्गा विपतिता सेन्ति? अस्सत्थो, निग्रोधो, पिलक्खो, उदुम्बरो, कच्छको, कपित्थनो—इमे खो ते, भिक्खवे, महारुक्खा अणुबीजा महाकाया रुक्खानं अज्झारुहा येहि रुक्खा अज्झारूळ्हा ओभग्गविभग्गा विपतिता सेन्ति। एवमेव खो, भिक्खवे,

---

से चित्त को हटा कर, कान खोल कर, धर्मश्रवण करता है, उस समय उस को उक्त पाँच नीवरण उपस्थित नहीं रहते, अपि तु ये सात बोध्यङ्ग पूर्ण होते हैं।

''कौन पाँच नीवरण उस समय नहीं होते? कामच्छन्द, व्यापाद, स्त्यानमृद्ध, औद्धत्यकौकृत्य एवं विचिकित्सा।

''कौन सात बोध्यङ्ग उस समय पूर्ण होते हैं? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...पूर्ववत्... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग—ये सात सम्बोध्यङ्ग उस समय पूर्ण होते हैं। जिस समय, आर्यश्रावक ध्यान दे कर...पूर्ववत्...ये सम्बोध्यङ्ग उस समय पूर्ण होते हैं''॥ •

३९. वृक्षसूत्र : : ज्ञान के पाँच आवरण

४२. ...''भिक्षुओ! ऐसे अतिविशाल ऊँचे एवं महान् वृक्ष भी होते हैं जिन के बीज बहुत छोटे होते हैं, जो दूसरे वृक्षों के खोखले कोटरों में उत्पन्न होते हैं, जिन की लम्बी शाखाएँ या जटाएँ नीचे तक फैली रहती हैं; तथा वे एक दिन उन आधार वृक्षों को ही गिरा देते हैं। भिक्षुओ! ऐसे वृक्ष कौन से हैं? जैसे—वट, पीपल, प्लक्ष (पाकड़), गूलर एवं

इधेकच्चो कुलपुत्तो यादिसके कामे ओहाय अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो होति, सो तादिसकेहि कामेहि ततो वा पापिट्ठतरेहि ओभग्गविभग्गो विपतितो सेति।

"पञ्चिमे, भिक्खवे, आवरणा नीवरणा चेतसो अज्झारुहा पञ्ञाय दुब्बलीकरणा। कतमे पञ्च? कामच्छन्दो, भिक्खवे, आवरणो नीवरणो चेतसो अज्झारुहो पञ्ञाय दुब्बलीकरणो। ब्यापादो, भिक्खवे, आवरणो नीवरणो चेतसो अज्झारुहो पञ्ञाय दुब्बलीकरणो। थीनमिद्धं, भिक्खवे, आवरणं नीवरणं चेतसो अज्झारुहं पञ्ञाय दुब्बलीकरणं। उद्धच्चकुक्कुच्चं, आवरणं नीवरणं चेतसो अज्झारुहं पञ्ञाय [R.97] दुब्बलीकरणं। विचिकिच्छा, भिक्खवे, आवरणा नीवरणा चेतसो अज्झारुहा पञ्ञाय दुब्बलीकरणा। इमे खो, भिक्खवे, पञ्च आवरणा नीवरणा चेतसो अज्झारुहा पञ्ञाय दुब्बलीकरणा।

"सत्तिमे, भिक्खवे, बोज्झङ्गा अनावरणा अनीवरणा चतसो अनज्झारुहा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो, [B.86] भिक्खवे, अनावरणो अनीवरणो चेतसो अनज्झारुहो भावितो बहुलीकतो विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तति...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो, भिक्खवे, [N.89] अनावरणो अनीवरणो चेतसो अनज्झारुहो भावितो बहुलीकतो विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तति। इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा अनावरणा अनीवरणा चेतसो अनज्झारुहा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ती" ति॥ ●

४०. नीवरणसुत्तं

४३. "पञ्चिमे, भिक्खवे, नीवरणा अन्धकरणा अचक्खुकरणा अञ्ञाणकरणा

कपित्थ। ...पूर्ववत्...। इसी तरह, भिक्षुओ! कोई कुलपुत्र कामभोगों का परित्याग करते हुए घर से बेघर हो प्रव्रजित हो जाता है, परन्तु प्रव्रजित होने पर भी पुनः उन्हीं कामभोगों में पूर्वापेक्षया अधिक रूप से उलझ जाते हैं।

"भिक्षुओ! ये चित्त से फूटने वाले पाँच उपक्लेश भी ज्ञान के आवरण एवं प्रज्ञा को दुर्बल करने वाले हैं। कौन से पाँच? कामच्छन्द, व्यापाद, स्त्यानमृद्ध, औद्धत्यकौकृत्य, एवं विचिकित्सा। ...पूर्ववत्...।

"तथा, भिक्षुओ! ये सात बोध्यङ्ग चित्त से न फूटने वाले एवं ज्ञान के आवरक भी नहीं होते, प्रज्ञा को दुर्बल भी नहीं करते, अपि तु ये साधना एवं अभ्यास करने पर, विद्या एवं विमुक्तिफल का साक्षात्कार कराने वाले भी होते हैं। कौन से सात? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग ...पूर्ववत्... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग"॥ ...॥ ●

पञ्ञानिरोधिका विघातपक्खिया अनिब्बानसंवत्तनिका। कतमे पञ्च? कामच्छन्दनीवरणं, भिक्खवे, अन्धकरणं अचक्खुकरणं अञ्ञाणकरणं पञ्ञानिरोधिकं विघातपक्खियं अनिब्बानसंवत्तनिकं। ब्यापादनीवरणं, भिक्खवे...पे०...थीनमिद्धनीवरणं, भिक्खवे...पे०...उद्धच्चकुक्कुच्चनीवरणं, भिक्खवे...पे०...विचिकिच्छानीवरणं, भिक्खवे, अन्धकरणं अचक्खुकरणं अञ्ञाणकरणं पञ्ञानिरोधिकं विघातपक्खियं अनिब्बानसंवत्तनिकं। इमे खो, भिक्खवे, पञ्च नीवरणा अन्धकरणा अचक्खुकरणा अञ्ञाणकरणा पञ्ञानिरोधिका विघातपक्खिया अनिब्बानसंवत्तनिका।

''सत्तिमे, भिक्खवे, बोज्झङ्गा चक्खुकरणा ञाणकरणा पञ्ञावुद्धिया अविघातपक्खिया निब्बानसंवत्तनिका। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो, भिक्खवे, चक्खुकरणो ञाणकरणो पञ्ञावुद्धियो अविघातपक्खियो निब्बानसंवत्तनिको...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो, भिक्खवे, चक्खुकरणो ञाणकरणो पञ्ञावुद्धियो अविघातपक्खियो निब्बानसंवत्तनिको। इमे खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा चक्खुकरणा ञाणकरणा [R.98] पञ्ञावुद्धिया अविघातपक्खिया निब्बानसंवत्तनिका'' ति॥ •

नीवरणवग्गो चतुत्थो॥

तस्सुद्दानं

द्वे कुसला किलेसा च, द्वे योनिसो च बुद्धि च।
आवरणा नीवरणा रुक्खं, नीवरणं च ते दसा ति॥ •

---

४०. नीवरणसूत्र : : पाँच नीवरण

४३. ...''भिक्षुओ! ये पाँच नीवरण (ध्यान आदि में बाधा) हैं, जो कामभोगी पुरुष को अन्धा बना देते हैं, उस के ज्ञानचक्षु (विवेक आदि) हर लेते हैं, अज्ञानी बना देते हैं, प्रज्ञा को उत्पन्न नहीं होने देते, उस की धर्मसाधना में विघ्नकारक हो जाते हैं, उस का निर्वाणमार्ग रोक देते हैं। ये पाँच नीवरण कौन से हैं? कामच्छन्द नीवरण, व्यापाद नीवरण, स्त्यानमृद्ध नीवरण, औद्धत्यकौकृत्य नीवरण एवं विचिकित्सा नीवरण। ये सभी पुरुष को अन्धा बना देते हैं...पूर्ववत्...।

(''इस के विपरीत) भिक्षुओ! ये सात बोध्यङ्ग होते हैं, जिन की साधना से मनुष्य को ज्ञान हो जाता है, संसार की वास्तविकता जान कर उस की आँखें खुल जाती हैं, उस की प्रज्ञा में वृद्धि होती है, उस की धर्मसाधना निर्विघ्न बढ़ती रहती है, तथा उस के लिये

निर्वाण पथ भी निष्कण्टक हो जाता है। कौन से सात ? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। इन सभी की साधना से...पूर्ववत्...निर्वाणपथ भी निष्कण्टक हो जाता है॥'' •

नीवरणवर्ग चतुर्थ सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. प्रथम कुशलसूत्र, २. द्वितीय कुशलसूत्र, ३. उपक्लेशसूत्र, ४. अनुपक्लेशसूत्र, ५. अयोनिशः-मनस्कारसूत्र, ६. योनिशःमनस्कारसूत्र, ७. वृद्धिसूत्र, ८. आवरणनीवरणसूत्र, ९. वृक्षसूत्र एवं १०. नीवरणसूत्र॥ •

५. चक्कवत्तिवग्गो पञ्चमो

४१. विधासुत्तं

४४. सावत्थिनिदानं। ''ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं [N.90, B.87] समणा वा ब्राह्मणा वा तिस्सो विधा पजहिंसु, सब्बे ते सत्तन्नं बोज्झङ्गानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा तिस्सो विधा पजहिस्सन्ति, सब्बे ते सत्तन्नं बोज्झङ्गानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि समणा वा ब्राह्मणा वा तिस्सो विधा पजहन्ति, सब्बे ते सत्तन्नं बोज्झङ्गानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। कतमेसं सत्तन्नं बोज्झङ्गानं? सतिसम्बोज्झङ्गस्स...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स। ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा तिस्सो विधा पजहिंसु...पे०...पजहिस्सन्ति...पे०...पजहन्ति, सब्बे ते इमेसं येव सत्तन्नं बोज्झङ्गानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता'' ति॥ •

४२. चक्कवत्तिसुत्तं

४५. ''रञ्ञो, भिक्खवे, चक्कवत्तिस्स पातुभावा सत्तन्नं रतनानं पातुभावो होति। कतमेसं सत्तन्नं? १. चक्करतनस्स पातुभावो होति, २. हत्थिरतनस्स पातुभावो होति, [R.99] ३. अस्सरतनस्स पातुभावो होति, ४. मणिरतनस्स पातुभावो होति, ५. इत्थिरतनस्स पातुभावो होति, ६. गहपतिरतनस्स पातुभावो होति, ७. परिणायकरतनस्स पातुभावो होति। रञ्ञो, भिक्खवे, चक्कवत्तिस्स पातुभावा इमेसं सत्तन्नं रतनानं पातुभावो होति।

---

५. चक्रवर्तिवर्ग पञ्चम

४१. विधासूत्र : :बोध्यङ्गभावना से वृथाभिमान का त्याग

४४. ...**श्रावस्ती में** ही...।''भिक्षुओ! अतीत काल में जितने भी श्रमण ब्राह्मणों ने तीन विधाओं (वृथाभिमान=घमण्ड) का त्याग किया, तथा भविष्य में भी जो ब्राह्मण तीन विधाओं का त्याग करेंगे; इसी तरह वर्तमान में जो श्रमण ब्राह्मण इन तीन विधाओं का त्याग कर रहे हैं वे सब इन्हीं सात बोध्यङ्गों की सतत साधना तथा अभ्यास के कारण ही ऐसा कर पा रहे हैं। किन सात बोध्यङ्गों का? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...पूर्ववत्...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग का। ...पूर्ववत्...॥ •

४२. चक्रवर्तिसूत्र : : चक्रवर्ती के सात रत्न

४५. ...''भिक्षुओ! किसी चक्रवर्ती राजा के प्रादुर्भाव के साथ ही इन सात रत्नों का भी प्रादुर्भाव हो जाता है। किन सात रत्नों का? (१) चक्ररत्न का, (२) हस्तिरत्न का, (३) अश्वरत्न का, (४) मणिरत्न का, (५) स्त्रीरत्न का, (६) गृहपतिरत्न का एवं (७)

"तथागतस्स, भिक्खवे, पातुभावा अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स सत्तन्नं बोज्झङ्ग-रतनानं पातुभावो होति। कतमेसं सत्तन्नं? सतिसम्बोज्झङ्गस्स रतनस्स पातुभावो होति, ...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स रतनस्स पातुभावो होति। तथागतस्स, भिक्खवे, पातुभावा अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स इमेसं सत्तन्नं बोज्झङ्गरतनानं पातुभावो होती" ति॥●

४३. मारसुत्तं

[B.88] ४६. "मारसेनप्पमद्दनं वो, भिक्खवे, मग्गं देसेस्सामि; तं सुणाथ। कतमो च, भिक्खवे, मारसेनप्पमद्दनो मग्गो? यदिदं—सत्त बोज्झङ्गा। कतमे सत्त? सति-सम्बोज्झङ्गो...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो—अयं खो, भिक्खवे, मारसेनप्पमद्दनो मग्गो" ति॥ ●

४४. दुप्पञ्ञसुत्तं

[N.91] ४७. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि...पे०...एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"'दुप्पञ्ञो एळमूगो, दुप्पञ्ञो एळमूगो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, 'दुप्पञ्ञो एळमूगो' ति वुच्चती" ति?
[R.100] "सत्तन्नं खो, भिक्खु, बोज्झङ्गानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता 'दुप्पञ्ञो

परिणायकरत्न का। यों, भिक्षुओ! इस चक्रवर्ती राजा के प्रादुर्भाव के साथ ही इन सात रत्नों का भी प्रादुर्भाव होता है।

("इसी तरह) भिक्षुओ! ज्ञानी सम्यक्सम्बुद्ध भगवान् (बुद्ध) के प्रादुर्भाव के साथ ही इन सात सम्बोध्यङ्गरत्नों का प्रादुर्भाव होता है। किन सात सम्बोध्यङ्गरत्नों का? स्मृतिसम्बोध्यङ्गरत्न ...पूर्ववत्...उपेक्षासम्बोध्यङ्गरत्न। भिक्षुओ! यों इन सात बोध्यङ्गरत्नों का प्रादुर्भाव भी अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध भगवान् के प्रादुर्भाव के साथ हो जाता है॥" ●

४३. मारसूत्र : : मारसेना के भगाने का मार्ग

४६. ..."भिक्षुओ! अब मैं तुम्हें मारसेना को भगाने का मार्ग (उपाय) बताऊँगा, उसे ध्यानपूर्वक सुनो तथा मन में भली भाँति बैठा लो। भिक्षुओ! इस मारसेना को भगाने का कौन सा मार्ग है? ये ही सात बोध्यङ्ग। कौन से सात? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! इन सात बोध्यङ्गों की भावना करना ही मारसेना को भगाने का एकमात्र उपाय है"॥ ●

४४. दुष्प्रज्ञसूत्र : : 'कुमति' क्यों कहा जाता है?

४७. ...तब कोई भिक्षु भगवान् (बुद्ध) के पास जा कर...यों पूछने लगा—"भन्ते! लोग किसी पुरुष को 'दुष्प्रज्ञ, एडमूक, दुष्प्रज्ञ एडमूक'—ऐसा कहते या बोलते रहते हैं, भन्ते! यह 'दुष्प्रज्ञ, एडमूक' कैसे कहलाता है?

एळमूगो' ति वुच्चति। कतमेसं सत्तन्नं? सतिसम्बोज्झङ्गस्स...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स—इमेसं खो, भिक्खु, सत्तन्नं बोज्झङ्गानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता 'दुप्पञ्ञो एळमूगो' ति वुंच्चती'' ति॥ •

४५. पञ्ञवन्तसुत्तं

४८. "'पञ्ञवा अनेळमूगो, पञ्ञवा अनेळमूगो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, 'पञ्ञवा अनेळमूगो' ति वुच्चती'' ति?

''सत्तन्नं खो, भिक्खु, बोज्झङ्गानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता 'पञ्ञवा अनेळमूगो' ति वुच्चति। कतमेसं सत्तन्नं? सतिसम्बोज्झङ्गस्स...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स—इमेसं खो, भिक्खु, सत्तन्नं बोज्झङ्गानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता 'पञ्ञवा अनेळमूगो' ति वुच्चती'' ति॥ •

४६. दलिद्दसुत्तं

४९. "'दलिद्दो, दलिद्दो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, 'दलिद्दो' ति वुच्चती'' ति?

''सत्तन्नं खो, भिक्खु, बोज्झङ्गानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता 'दलिद्दो' ति

''भिक्षुओ! कोई भी पुरुष जो उन सात बोध्यङ्गों की भावना नहीं करता, उसे ही सामाजिक लोग 'दुष्प्रज्ञ एडमूक' कहते हैं। (दुष्प्रज्ञ=मूढमति, एडमूक=भेड़ की तरह मुँह दबा कर चुप रहने वाला)।

भन्ते! किन सात बोध्यङ्गों की भावना न करने से वह ऐसा कहलाता है? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग ...पूर्ववत्...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। इन सात बोध्यङ्गों की भावना न करने से वह 'दुष्प्रज्ञ एडमूक' कहलाता है''॥ •

४५. प्रज्ञावत्सूत्र : : 'प्रज्ञावान्' क्यों कहा जाता है?

४८. ...(कोई भिक्षु भगवान् के पास जा कर...यों बोला—) ''भन्ते! लोग (बातचीत के प्रसङ्ग में) किसी को 'प्रज्ञावान् एवं मुख बन्द न रखने वाला' कहते रहते हैं, यह 'प्रज्ञावान् एवं मुख बन्द न रखने वाला'—क्यों कहलाता है?''

''भिक्षु! उन सात बोध्यङ्गों की भावना एवं अभ्यास करने से ऐसा विवेकी पुरुष 'प्रज्ञावान् एवं मुख बन्द न रखने वाला' कहा जाता है। कौन सात बोध्यङ्ग? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग ...पूर्ववत्...उपेक्षाबोध्यङ्ग। ...पूर्ववत्...॥ •

४६. दरिद्रसूत्र : : 'दरिद्र' कौन कहलाता है?

४९. ...''भन्ते! कोई 'दरिद्र, दरिद्र'—ऐसा कहा जाता है। भन्ते! क्या कारण है कि लोग इसे ऐसा कहते हैं?''

वुच्चति। कतमेसं सत्तन्नं? सतिसम्बोज्झङ्गस्स...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स—इमेसं खो, भिक्खु, सत्तन्नं बोज्झङ्गानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता 'दलिद्दो' ति वुच्चती'' ति॥ ●

४७. अदलिद्दसुत्तं

[B.89] ५०. '''अदलिद्दो, अदलिद्दो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, 'अदलिद्दो' ति वुच्चती'' ति?

[N.92] ''सत्तन्नं खो, भिक्खु, बोज्झङ्गानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता 'अदलिद्दो' ति वुच्चति। कतमेसं सत्तन्नं? सतिसम्बोज्झङ्गस्स...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स—इमेसं खो, भिक्खु, सत्तन्नं बोज्झङ्गानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता 'अदलिद्दो' ति वुच्चती'' ति॥●

४८. आदिच्चसुत्तं

[R.101] ५१. ''आदिच्चस्स, भिक्खवे, उदयतो एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—अरुणुग्गं। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो सत्तन्नं बोज्झङ्गानं उप्पादाय एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—कल्याणमित्तता। कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—सत्त बोज्झङ्गे भावेस्सति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो सत्त बोज्झङ्गे भावेति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो सत्त बोज्झङ्गे भावेति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोती'' ति॥ ●

''सात बोध्यङ्गों की भावना न करने वाले मनुष्य को लोग 'दरिद्र' कहते हैं। कौन से सात बोध्यङ्ग? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। ...पूर्ववत्...''॥ ●

४७. अरिद्रसूत्र : : 'धनवान्' कौन कहा जाता है?

५०. ...''भन्ते! लोग किसी को 'अदरिद्र (धनी), अदरिद्र' कहते हैं, यह 'अदरिद्र' क्यों कहलाता है?''

''भिक्षु! सात बोध्यङ्गों की भावना तथा सतत अभ्यास करने वाला पुरुष ही लोक में 'अदरिद्र' कहलाता है। कौन से सात? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। ...पूर्ववत्...''॥ ●

४८. आदित्यसूत्र : : बोध्यङ्गोत्पत्ति के पूर्वलक्षण

५१. ...''भिक्षुओ! सूर्य के उदय के पूर्व आकाश में अरुणिमा...पूर्ववत्...।

४९. अज्झत्तिकङ्गसुत्तं

५२. ''अज्झत्तिकं, भिक्खवे, अङ्गं ति करित्वा नाञ्ञं एकङ्गं पि समनुपस्सामि सत्तन्नं बोज्झङ्गानं उप्पादाय, यथयिदं—भिक्खवे, योनिसोमनसिकारो। योनिसोमनसिकारसम्पन्नस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—सत्त बोज्झङ्गे भावेस्सति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो सत्त बोज्झङ्गे भावेति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं, विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु योनिसोमनसिकारसम्पन्नो सत्त बोज्झङ्गे भावेति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोती'' ति॥ •

५०. बाहिरङ्गसुत्तं

५३. ''बाहिरं, भिक्खवे, अङ्गं ति करित्वा नाञ्ञं एकङ्गं पि [B.90, R.102] समनुपस्सामि सत्तन्नं बोज्झङ्गानं उप्पादाय, यथयिदं—भिक्खवे, कल्याण-[N.93] मित्तता। कल्याणमित्तस्सेतं, भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—सत्त बोज्झङ्गे भावेस्सति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरिस्सति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो सत्त बोज्झङ्गे भावेति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो सत्त बोज्झङ्गे भावेति, सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोती'' ति॥ •

चक्कवत्तिवग्गो पञ्चमो॥

(**४५ मार्गसंयुक्त** *के* **प्रथम सूर्योपमसूत्र** *के समान ही यहाँ भी 'बोध्यङ्ग' शब्द लगा कर विस्तार कर लें।)* ॥ •

४९. आध्यात्मिकाङ्गसूत्र : : यथार्थ चिन्तन

५२. ...''भिक्षुओ! यथार्थ चिन्तन को अपना आध्यात्मिक अङ्ग बना लेने के अतिरिक्त मैं कोई अन्य धर्म नहीं देखता जो सात बोध्यङ्गों की उत्पत्ति में सहायक हो। ...। कौन से सात बोध्यङ्ग? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। ...पूर्ववत्... ॥ •

५०. बाह्याङ्गसूत्र : : कल्याणमित्रता

५३. ...''भिक्षुओ! किसी कल्याणमित्र को अपना सहायक बाह्याङ्ग बना लेने के अतिरिक्त मैं दूसरा कोई ऐसा धर्म (उपाय) नहीं देखता जो इन सात बोध्यङ्गों की उत्पत्ति में सहायक हो सके। भिक्षुओ! उस कल्याणमित्र से ऐसी आशा की जा सकती है कि वह

तस्सुद्दानं

विधा चक्कवत्ति मारो, दुप्पञ्ञो पञ्ञवेन च।
दलिद्दो अदलिद्दो च, आदिच्चङ्गेन ते दसा ति॥

हमारे सम्बोध्यङ्गों के उत्पाद में सहायक हो सकेगा। भिक्षुओ! कौन से सात बोध्यङ्ग? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। ...पूर्ववत्..."॥

चक्रवर्तिवर्ग समाप्त॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. विधासूत्र, २. चक्रवर्तिसूत्र, ३. मारसूत्र, ४. दुष्प्रज्ञसूत्र, ५. प्रज्ञावत्सूत्र, ६. दरिद्रसूत्र, ७. अदरिद्रसूत्र, ८. आदित्यसूत्र, ९. आध्यात्मिकाङ्गसूत्र एवं १०. बाह्याङ्गसूत्र॥

६. साकच्छवग्गो छट्ठो

५१. आहारसुत्तं

५४. सावत्थिनिदानं। "पञ्चन्नं च, भिक्खवे, नीवरणानं सत्तन्नं च बोज्झङ्गानं आहारं च अनाहारं च देसेस्सामि; तं सुणाथ।

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा कामच्छन्दस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा कामच्छन्दस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, सुभनिमित्तं। तत्थ [R.103] अयोनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा कामच्छन्दस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा कामच्छन्दस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, पटिघनिमित्तं। तत्थ [B.91] अयोनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, अरति तन्दि विजम्भिता भत्तसम्मदो चेतसो च लीनत्तं। तत्थ अयोनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो

---

६. साक्षात्कारवर्ग

१. आहारसूत्र : : नीवरणों का आहार, अनाहार

५४. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! अब मैं तुम्हें पाँचों नीवरणों का तथा सातों बोध्यङ्गों के आहार (उत्पादक धर्म) तथा अनाहार (अनुत्पादक धर्म) का उपदेश करूँगा। उसे ध्यानपूर्वक सुनो तथा मन में बैठा लो।

*[इसी **बोध्यङ्गसंयुक्त** के **कायसूत्र** में इस प्रकरण का (नीवरणों एवं बोध्यङ्गों के विषय में) अक्षरश: अनुवाद किया जा चुका है, कृपया वहाँ देखें।]*

नीवरणों का अनाहार—"तथा, भिक्षुओ! अनुत्पन्न कामच्छन्द की उत्पत्ति एवं उत्पन्न कामच्छन्द वृद्धि एवं विपुलता न होने देने में क्या अनाहार है? रूप के अशुभ (असौन्दर्य) को देखना, उस का भली भाँति मनन एवं चिन्तन करना—यही कामच्छन्द की अनुत्पत्ति तथा उत्पन्न कामच्छन्द की वृद्धि न होने देने में कारण है। (१)

"...अनुत्पन्न व्यापाद की उत्पत्ति तथा उत्पन्न व्यापाद की वृद्धि न होने देने में क्या 'अनाहार' है? मैत्रीचेतोविमुक्ति। वहाँ सूक्ष्म चिन्तन मनन करना ही...पूर्ववत्...। (२)

"...अनुत्पन्न स्त्यानमृद्ध की उत्पत्ति में, तथा उत्पन्न की वृद्धि में क्या अनाहार है?

अनुप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

[N.94] "को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्प वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, चेतसो अवूपसमो। तत्थ अयोनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय उप्पादाय, उप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, विचिकिच्छाट्ठानीया धम्मा। तत्थ अयोनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय उप्पादाय, उप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, सति- [R.104] सम्बोज्झङ्गट्ठानीया धम्मा। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय,

---

भिक्षुओ! उस की आरम्भ धातु, निष्क्रमण धातु एवं पराक्रम धातु का सूक्ष्म चिन्तन मनन करना ही अनुत्पन्न...पूर्ववत्...। (३)

"तथा, भिक्षुओ! अनुत्पन्न औद्धत्यकौकृत्य की उत्पत्ति में तथा उत्पन्न हुए उस की वृद्धि एवं विपुलता न होने देने में क्या अनाहार है? चित्त की शान्ति ही उस की अनुत्पत्ति एवं उस उत्पन्न की वृद्धि रोकने में 'अनाहार' का रूप लेती है। (४)

"तथा, भिक्षुओ! अनुत्पन्न विचिकित्सा की उत्पत्ति में, एवं उस उत्पन्न की वृद्धि एवं विपुलता न होने देने में क्या 'अनाहार' है? भिक्षुओ! ये जितने भी कुशल एवं अकुशल धर्म हैं, हीन एवं प्रणीत धर्म हैं, प्रशस्य एवं निन्द्य धर्म हैं, कृष्ण (पाप) एवं शुक्ल (पुण्य) धर्म हैं—इन सब का सूक्ष्म चिन्तन मनन करना हो अनुत्पन्न विचिकित्सा की अनुत्पत्ति में, तथा उत्पन्न विचिकित्सा की वृद्धि न होने देने में 'अनाहार' है॥ (५)

सम्बोध्यङ्गों का अनाहार—"भिक्षुओ! अनुत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति में, तथा उत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्गों की वृद्धि में क्या 'अनाहार' है? स्मृतिसम्बोध्यङ्गस्थानीय धर्मों का सूक्ष्म चिन्तन मनन न करना ही अनुत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति में तथा उस उत्पन्न की साधना में वृद्धि न होने देने में 'अनाहार' है। (१)

उप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, कुसलाकुसला धम्मा सावज्जानवज्जा धम्मा हीनपणीता धम्मा कण्हसुक्कसप्पटिभागा धम्मा। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा धम्मविचय-सम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स [B.92] उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, आरम्भधातु निक्कमधातु परक्कमधातु। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, [N.95] पीतिसम्बोज्झङ्गट्ठानीया धम्मा। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

"को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, कायप्पस्सद्धि चित्तप्पस्सद्धि। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो

"भिक्षुओ! अनुत्पन्न धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति में तथा उस उत्पन्न की वृद्धि में क्या 'अनाहार' है? भिक्षुओ! ये जितने भी कुशल, अकुशल धर्म हैं...उपरिवत्...उन पर सूक्ष्म मनन चिन्तन न करना ही अनुत्पन्न धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग उत्पत्ति में तथा उस उत्पन्न की साधना में वृद्धि न होने देने में 'अनाहार' है। (२)

"भिक्षुओ! अनुत्पन्न वीर्यसम्बोध्यङ्ग की...पूर्ववत्...क्या 'अनाहार' है? भिक्षुओ! यहाँ जो ये आरम्भधातु, निष्क्रमणधातु एवं पराक्रमणधातु हैं उनका सूक्ष्म चिन्तन मनन न करना ही उस अनुत्पन्न वीर्यसम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति में, तथा उस उत्पन्न की साधना में वृद्धि न होने देने में 'अनाहार' है। (३)

"भिक्षुओ! अनुत्पन्न प्रीतिसम्बोध्यङ्ग की...पूर्ववत्...क्या 'अनाहार' है? भिक्षुओ! प्रीतिसम्बोध्यङ्गस्थानीय धर्मों का सूक्ष्मतः चिन्तन मनन न करना ही उस अनुत्पन्न प्रीति-सम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति में...पूर्ववत्...'अनाहार' है। (४)

"भिक्षुओ! अनुत्पन्न प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग की...पूर्ववत्...क्या 'अनाहार' हे? भिक्षुओ!

अनुप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

[R.105] ''को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, समथ-निमित्तं अब्यग्गनिमित्तं। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

''को च, भिक्खवे, आहारो अनुप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, उपेक्खा-सम्बोज्झङ्गट्ठानीया धम्मा। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमाहारो अनुप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया॥

''को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नस्स वा कामच्छन्दस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स [B.93] वा कामच्छन्दस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, असुभनिमित्तं। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो अनुप्पन्नस्स वा कामच्छन्दस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा कामच्छन्दस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

''को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, मेत्ताचेतोविमुत्ति। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो अनुप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा ब्यापादस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

''को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, आरम्भधातु निक्कमधातु [N.96, R.106] परक्कमधातु। तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो

कायप्रश्रब्धि एवं चित्तप्रश्रब्धि में से चित्तप्रश्रब्धि का सूक्ष्म चिन्तन, मनन न करना ही उस अनुत्पन्न प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति में...पूर्ववत्...'अनाहार' है। (५)

''भिक्षुओ! अनुत्पन्न समाधिसम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति में...पूर्ववत्...क्या 'अनाहार' है? भिक्षुओ! शमथ एवं विपश्यना का सूक्ष्म चिन्तंन न करना ही अनुत्पन्न समाधिसम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति में...पूर्ववत्...'अनाहार' है। (६)

''भिक्षुओ! अनुत्पन्न उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की उत्पत्ति में...पूर्ववत्...क्या 'अनाहार'

अनुप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा थीनमिद्धस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

''को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नस्स वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, चेतसो वूपसमो, तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो अनुप्पन्नस्स वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स भिय्योभावाय वेपुल्लाय।

''को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय उप्पादाय, उप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय? अत्थि, भिक्खवे, कुसलाकुसला धम्मा, सावज्जानवज्जा धम्मा हीनपणीता धम्मा, कण्हसुक्कसप्पटिभागा धम्मा, तत्थ योनिसोमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो अनुप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय उप्पादाय, उप्पन्नाय वा विचिकिच्छाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय॥

''को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नस्स वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, सतिसम्बोज्झङ्गट्ठानीया धम्मा, तत्थ अमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो अनुप्पन्नस्स वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा सतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

''को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स [B.94] उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, कुसलाकुसला धम्मा, सावज्जानवज्जा धम्मा, हीनपणीता धम्मा, कण्हसुक्कसप्पटिभागा धम्मा, तत्थ अमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो अनुप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

''को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स [R.107] उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, आरम्भधातु, निक्कमधातु, परक्कमधातु; तत्थ अमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो अनुप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा विरियसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

''को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय,

---

है? भिक्षुओ! उपेक्षासम्बोध्यङ्गस्थानीय धर्मों का सूक्ष्म चिन्तन मनन न करना ही उस की उत्पत्ति में...पूर्ववत्...'अनाहार' है। (७)॥ •

[N.97]उप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, पीति-सम्बोज्झङ्गट्ठानीया धम्मा, तत्थ अमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो अनुप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

"को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, काय-प्पस्सद्धि, चित्तप्पस्सद्धि, तत्थ अमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो अनुप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

"को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय उप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, समथनिमित्तं अब्यग्गनिमित्तं, तत्थ अमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो अनुप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया।

"को च, भिक्खवे, अनाहारो अनुप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया? अत्थि, भिक्खवे, उपेक्खा-सम्बोज्झङ्गट्ठानीया धम्मा, तत्थ अमनसिकारबहुलीकारो—अयमनाहारो अनुप्पन्नस्स वा [B.95] उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स उप्पादाय, उप्पन्नस्स वा उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय पारिपूरिया" ति॥

५२. परियायसुत्तं

[R.108] ५५. अथ खो सम्बहुला भिक्खू पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थियं पिण्डाय पविसिंसु। अथ खो तेसं भिक्खूनं एतदहोसि—"अतिप्पगो खो ताव सावत्थियं पिण्डाय चरितुं। यन्नून मयं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यामा" ति।

अथ खो ते भिक्खू येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमिंसु;

---

५२. पर्यायसूत्र : : **धर्मों का द्विगुण होना**

५५. तब बहुत से भिक्षु पूर्वाह्ण में, अपने वस्त्र व्यवस्थित कर, पात्रचीवर ले कर, **श्रावस्ती में** भिक्षाहेतु जाने के लिये सन्नद्ध हुए। कुछ दूर चलने पर उन के मन में यह विचार आया—"अभी तो भिक्षाकाल में बहुत विलम्ब है, तो क्यों न हम इतना समय अन्य सम्प्रदाय के परिव्राजकों के आश्रम में चल कर धर्मचर्चा में बितावें।"

उपसङ्कमित्वा तेहि अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं सम्मोदिंसु। [N.98] सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ने खो ते भिक्खू अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एतदवोचुं—

"समणो, आवुसो, गोतमो सावकानं एवं धम्मं देसेति—'एथ तुम्हे, भिक्खवे, पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे सत्त बोज्झङ्गे यथाभूतं भावेथा' ति। मयं पि खो, आवुसो, सावकानं एवं धम्मं देसेम—'एथ तुम्हे, आवुसो, पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे सत्त बोज्झङ्गे यथाभूतं भावेथा' ति। इध नो, आवुसो, को विसेसो, को अधिप्पयासो, किं नानाकरणं समणस्स वा गोतमस्स अम्हाकं वा, यदिदं—धम्मदेसनाय वा धम्मदेसनं, अनुसासनिया वा अनुसासनिं" ति?

अथ खो ते भिक्खू तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं भासितं नेव अभिनन्दिंसु नप्पटिक्कोसिंसु; अनभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कमिंसु—"भगवतो सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थं आजानिस्सामा" ति। अथ खो ते भिक्खू सावत्थिं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्ता येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो [R.109] ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं—

तब वे भिक्षु अन्य परिव्राजकों के किसी आश्रम में गये। जा कर उन परिव्राजकों से कुशलमङ्गल पूछ कर एक तरफ बैठ गये। एक तरफ बैठे उन भिक्षुओं से परिव्राजकों ने पूछा—"आयुष्मानो! आप लोगों के श्रमण गौतम अपने शिष्यों को यों उपदेश करते हैं—'जाओ; भिक्षुओ! तुम लोग पाँच नीवरणों तथा प्रज्ञा को दुर्बल करने वाले पाँच चित्तोपक्लेशों को छोड़ कर सात बोध्यङ्गों की भली भाँति साधना करो।' हम भी अपने शिष्यों को यही धर्मोपदेश करते हैं। तो इस में क्या भेद है, क्या विशेषता है; क्यों कि श्रमण गौतम भी वही कह रहे हैं जो हम कहते हैं?"

यह सुन कर उन भिक्षुओं ने परिव्राज़कों के इस प्रश्न का न 'हाँ' में उत्तर दिया न 'नाँ' में। और उन्होंने यही निश्चय किया—"भगवान् के पास चल कर उन्हीं से इस का वास्तविक भेद जाना जाय।" तब वे श्रावस्ती में भिक्षा कर पिण्डपातकृत्य (भोजन) करने के बाद भगवान् के सम्मुख गये तथा उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ कर उन्होंने उन अन्य सम्प्रदाय के परिव्राजकों का प्रश्न दोहराया तथा उन के पास आने का कारण बताया। तब भगवान् ने उन को यों समझाया—

[B.96] ''इध मयं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थिं पिण्डाय पविसिम्ह...एवं धम्मं देसेम—एथ तुम्हे, आवुसो, पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे सत्त बोज्झङ्गे यथाभूतं भावेथा ति। इध नो, आवुसो, को विसेसो, को अधिप्पयासो, किं नानाकरणं समणस्स वा गोतमस्स अम्हाकं वा, यदिदं—धम्मदेसनाय वा धम्मदेसनं, अनुसासनिया वा अनुसासनिं ति?

''अथ खो मयं, भन्ते, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं अभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कमिम्ह—'भगवतो सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थं आजानिस्सामा''' ति।

''एवंवादिनो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवमस्सु वचनीया— [N.99] 'अत्थि पनावुसो, परियायो, यं परियायं आगम्म पञ्च नीवरणा दस होन्ति, सत्त बोज्झङ्गा चतुद्दसा' ति। एवं पुट्ठा, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका न चेव सम्पायिस्सन्ति, उत्तरिं च विघातं आपज्जिस्सन्ति। तं किस्स हेतु? यथा तं, भिक्खवे, अविसयस्मिं।

''नाहं तं, भिक्खवे, पस्सामि सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समण-ब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय, यो इमेसं पञ्हानं वेय्याकरणेन चित्तं आराधेय्य, अञ्ञत्र तथागतेन वा तथागतसावकेन वा इतो वा पन सुत्वा।

[B.97, R.110] ''कतमो च, भिक्खवे, परियायो, यं परियायं आगम्म पञ्च नीवरणा दस होन्ति? यदपि, भिक्खवे, अज्झत्तं कामच्छन्दो तदपि नीवरणं, यदपि बहिद्धा कामच्छन्दो तदपि नीवरणं। 'कामच्छन्दनीवरणं' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति। यदपि, भिक्खवे, अज्झत्तं ब्यापादो तदपि नीवरणं,

---

''भिक्षुओ! ऐसा पूछने वाले अन्य सम्प्रदायों के परिव्राजकों को यों उत्तर देना चाहिये—'एक पद्धति है, जिस में पाँच नीवरण ही दस हो जाते हैं तथा चौदह बोध्यङ्ग होते हैं।' ऐसा कहने पर, वे परिव्राजक कोई उत्तर न दे पायँगें, अपि तु वे द्विविधा में पड़ जायँगें। यह क्यों? यह इसलिये कि उन्हें एतद्विषयक ज्ञान ही नहीं है, वे उत्तर क्या देंगे!

''भिक्षुओ! मैं संसार में ऐसा कोई विज्ञ पुरुष नहीं देखता जो इन प्रश्नों का यथार्थ उत्तर दे सके, केवल तथागत एवं तथागत के शिष्य, या इन से सुन कर कोई अन्य विद्वान् ही इन प्रश्नों का यथार्थ उत्तर दे सकता है।

''भिक्षुओ! वह कौन सी पद्धति है, जिस के सहारे ये पाँच नीवरण दश कहलाने लगते हैं? भिक्षुओ! कामच्छन्दनीदरण आन्तर एवं बाह्य भेद से दश प्रकार का होता है।

यदपि बहिद्धा ब्यापादो तदपि नीवरणं। 'ब्यापादनीवरणं' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति। यदपि, भिक्खवे, थीनं तदपि नीवरणं, यदपि मिद्धं तदपि नीवरणं। 'थीनमिद्धनीवरणं' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति। यदपि, भिक्खवे, उद्धच्चं तदपि नीवरणं, यदपि कुक्कुच्चं तदपि नीवरणं। 'उद्धच्चकुक्कुच्चनीवरणं' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति। यदपि, भिक्खवे, अज्झत्तं धम्मेसु विचिकिच्छा तदपि नीवरणं, यदपि बहिद्धा धम्मेसु विचिकिच्छा तदपि नीवरणं। 'विचिकिच्छानीवरणं' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति। अयं खो, भिक्खवे, परियायो, यं परियायं आगम्म पञ्च नीवरणा दस होन्ति॥ (१)

"कतमो च, भिक्खवे, परियायो, यं परियायं आगम्म सत्त बोज्झङ्गा चतुद्दस होन्ति? यदपि, भिक्खवे, अज्झत्तं धम्मेसु सति तदपि सतिसम्बोज्झङ्गो, यदपि बहिद्धा धम्मेसु सति तदपि सतिसम्बोज्झङ्गो। 'सतिसम्बोज्झङ्गो' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति।

"यदपि, भिक्खवे, अज्झत्तं धम्मेसु पञ्ञाय पविचिनति पविचरति [R.111] परिवीमंसमापज्जति तदपि धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो, यदपि बहिद्धा धम्मेसु पञ्ञाय पविचिनति पविचरति परिवीमंसमापज्जति तदपि धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो। [N.100] 'धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति।

"यदपि, भिक्खवे, कायिकं विरियं तदपि विरियसम्बोज्झङ्गो, यदपि चेतसिकं विरियं तदपि विरियसम्बोज्झङ्गो। 'विरियसम्बोज्झङ्गो' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति।

ये दोनों मिल कर साधारणतः लोक में 'कामच्छन्द' ही कहलाते हैं। इसी पद्धति में 'कामच्छन्द' आदि नीवरण दो होते हैं। व्यापाद भी...स्त्यानमृद्ध भी...औद्धत्यकौकृत्य भी...विचिकित्सानीवरण भी इस पद्धति में दो होते हैं। भिक्षुओ! यह वह पद्धति है जिस के सहारे, पाँच नीवरणों को भी दश कहा जा सकता है॥ (१)

"तथा, भिक्षुओ! इस पद्धति से सात बोध्यङ्ग भी चौदह होते हैं। भिक्षुओ! यह जो धर्मों में आन्तरिक स्मृति है, तथा बाह्य स्मृति है—ये दोनों ही स्मृतियाँ होती हैं। इन दोनों स्मृतियों से उत्पन्न स्मृतिसम्बोध्यङ्ग भी दो होंगे।

"भिक्षुओ! जो अध्यात्म धर्मों में प्रज्ञा से चिन्तन मनन करता है, बाह्य धर्मों में प्रज्ञा से चिन्तन करता है, दोनों ही धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग हैं।

"भिक्षुओ! शारीरिक वीर्य एवं मानसिक वीर्य—दोनों ही वीर्यसम्बोध्यङ्ग हैं।

[B.98] "यदपि, भिक्खवे, सवितक्कसविचारा पीति तदपि पीतिसम्बोज्झङ्गो, यदपि अवितक्कअविचारा पीति तदपि पीतिसम्बोज्झङ्गो। 'पीतिसम्बोज्झङ्गो' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति।

"यदपि, भिक्खवे, कायप्पस्सद्धि तदपि पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो, यदपि चित्तप्पस्सद्धि तदपि पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो। 'पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति।

"यदपि, भिक्खवे, सवितक्को सविचारो समाधि तदपि समाधिसम्बोज्झङ्गो, यदपि अवितक्कअविचारो समाधि तदपि समाधिसम्बोज्झङ्गो। 'समाधिसम्बोज्झङ्गो' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति।

"यदपि, भिक्खवे, अज्झत्तं धम्मेसु उपेक्खा तदपि उपेक्खासम्बोज्झङ्गो, यदपि बहिद्धा धम्मेसु उपेक्खा तदपि उपेक्खासम्बोज्झङ्गो। 'उपेक्खासम्बोज्झङ्गो' ति इति हिदं उद्देसं गच्छति। तदमिनापेतं परियायेन द्वयं होति। अयं खो, भिक्खवे, परियायो, यं परियायं आगम्म सत्त बोज्झङ्गा चतुद्दसा" ति॥ ●

५३. अग्गिसुत्तं

[R.112] ५६. अथ खो सम्बहुला भिक्खू पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थियं पिण्डाय पविसिंसु। *(परियायसुत्तसदिसं।)*

"एवंवादिनो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवमस्सु वचनीया—

"भिक्षुओ! जो सवितर्क सविचार प्रीति वह भी, तथा जो अवितर्क अविचार प्रीति है—दोनों ही प्रीतिसम्बोध्यङ्ग हैं।

भिक्षुओ! जो काया की प्रश्रब्धि है तथा जो चित्त की प्रश्रब्धि है—ये दोनों ही प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग हैं।

भिक्षुओ! जो सवितर्क सविचार समाधि है, या जो अवितर्क अविचार समाधि है, दोनों ही समाधिसम्बोध्यङ्ग हैं।

तथा, भिक्षुओ! जो आध्यात्मिक धर्मों में उपेक्षा है या बाह्य धर्मों में उपेक्षा है, वे दोनों ही उपेक्षासम्बोध्यङ्ग हैं।

भिक्षुओ! इस पद्धति से ये सात सम्बोध्यङ्ग चौदह (१४) हो जाते हैं"॥ (२)●

५. अग्निसूत्र : : साधना का अवसर या अनवसर

५६. तब बहुत से भिक्षु पूर्वाह्न में, वस्त्रों को सुव्यवस्थित कर, पात्रचीवर ले कर **श्रावस्ती में** भिक्षाहेतु प्रविष्ट हुए। *(पर्यायसूत्र के समान ही विस्तार कर लें।)*

"...भिक्षुओ! ऐसा पूछने वाले उन अन्य पन्थ के परिव्राजकों को यों पूछना

'यस्मिं, आवुसो, समये लीनं चित्तं होति कतमेसं तस्मिं समये बोज्झङ्गानं अकालो भावनाय, कतमेसं तस्मिं समये बोज्झङ्गानं कालो भावनाय? यस्मिं पनावुसो, समये उद्धतं चित्तं होति कतमेसं तस्मिं समये बोज्झङ्गानं अकालो भावनाय, कतमेसं [N.101] तस्मिं समये बोज्झङ्गानं कालो भावनाया' ति? एवं पुट्ठा, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका न चेव सम्पायिस्सन्ति, उत्तरिं च विघातं आपज्जिस्सन्ति। तं किस्स हेतु? यथा तं, भिक्खवे अविसयस्मिं।

"नाहं तं, भिक्खवे, पस्सामि सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समण-ब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय यो इमेसं पञ्हानं वेय्याकरणेन चित्तं आराधेय्य, [B.99] अञ्ञत्र तथागतेन वा तथागतसावकेन वा इतो वा पन सुत्वा।

"यस्मिं, भिक्खवे, समये लीनं चित्तं होति, अकालो तस्मिं समये पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, अकालो समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, अकालो उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय। तं किस्स हेतु? लीनं, भिक्खवे, चित्तं तं एतेहि धम्मेहि दुस्समुट्ठापयं होति। सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो परित्तं अग्गिं उज्जालितुकामो अस्स। सो तत्थ अल्लानि चेव तिणानि पक्खिपेय्य, अल्लानि च गोमयानि पक्खिपेय्य, अल्लानि च कट्ठानि पक्खिपेय्य, उदकवातं च ददेय्य, पंसुकेन च ओकिरेय्य; [R.113] भब्बो नु खो सो पुरिसो परित्तं अग्गिं उज्जालितुं" ति?

चाहिये—'जिस समय साधक भिक्षु का चित्त लीन (सङ्कुचित) हो तब किन बोध्यङ्गों की साधना का अवसर नहीं होता? तथा जिस समय उस का चित्त उद्धत (उत्तेजित) होता है तब कितने बोध्यङ्गों की साधना का अवसर नहीं होता?' ऐसा पूछे जाने पर वे भिक्षु कोई उत्तर न दे पायँगे तथा द्विविधा में पड़ जायँगे...।

"भिक्षुओ! देव मनुष्यों सहित इस संसार में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं दीखता जो इन प्रश्नों का समुचित उत्तर दे सके। केवल तथागत या तथागत का कोई शिष्य या उन से सुन कर कोई सुविज्ञ पुरुष ही इन का उत्तर देने में समर्थ है।

साधना का अनवसर—"जिस समय साधक भिक्षु का चित्त लीन होता है उस समय उस साधक के लिये प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग, समाधिसम्बोध्यङ्ग एवं उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना का अवसर नहीं होता। वह क्यों? वह इस लिये कि उस समय उस का चित्त लीन (सङ्कुचित) होता है। उस समय उस के चित्त का इन उपर्युक्त तीनों धर्मों के सहारे से उत्थान सम्भव नहीं है। जैसे, भिक्षुओ! कोई पुरुष अग्नि जलाना चाहे, तब वह उस में गीला (आर्द्र) तृण, गोवर, गीला काष्ठ डाले, या उस पर जल की फुहार छोड़े, या उस पर धूल डालने लगे, तब क्या वह उस अग्नि को जला सकेगा?"

"नो हेतं, भन्ते"।

"एवमेव खो, भिक्खवे, यस्मिं समये लीनं चित्तं होति, अकालो तस्मिं समये पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, अकालो समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, अकालो उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय। तं किस्स हेतु? लीनं, भिक्खवे, चित्तं तं एतेहि धम्मेहि दुस्समुट्ठापयं होति।

"यस्मिं च खो, भिक्खवे, समये लीनं चित्तं होति, कालो तस्मिं समये धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, कालो विरियसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, कालो पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय। तं किस्स हेतु? लीनं, भिक्खवे, चित्तं तं एतेहि धम्मेहि सुसमुट्ठापयं होति। सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो परित्तं अग्गिं उज्जालितुकामो अस्स। सो तत्थ सुक्खानि चेव तिणानि पक्खिपेय्य, सुक्खानि च गोमयानि पक्खिपेय्य, सुक्खानि च कट्ठानि पक्खिपेय्य, मुखवातं च ददेय्य, न च पंसुकेन ओकिरेय्य; भब्बो नु [N.102] खो सो पुरिसो परित्तं अग्गिं उज्जालितुं" ति?

"एवं, भन्ते"।

"एवमेव खो, भिक्खवे, यस्मिं समये लीनं चित्तं होति, कालो तस्मिं समये धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, कालो विरियसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, कालो पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय। तं किस्स हेतु? लीनं, भिक्खवे, चित्तं तं एतेहि धम्मेहि सुसमुट्ठापयं होति।

"नहीं, भन्ते!"

"इसी तरह, भिक्षुओ! जिस समय साधक का चित्त लीन होता है उस समय वह उक्त तीनों धर्मों की साधना करने में असमर्थ ही होगा; क्यों कि उस समय उस का चित्त सङ्कुचित (लीन) है।

साधना का अवसर—हाँ, उस के चित्त की इस लीनावस्था में वह धर्मविचय-सम्बोध्यङ्ग एवं वीर्यसम्बोध्यङ्ग तथा प्रीतिसम्बोध्यङ्ग—इन तीन धर्मों की साधना करने में अवश्य समर्थ है; वह क्यों? वह इस लिये कि उस का चित्त लीन होने के कारण इन धर्मों के सहारे उत्थान कर सकता है। जैसे, भिक्षुओ! कोई पुरुष अग्नि जलाना चाहे, वह उस में सूखा तृण-घास डाले, सूखा गोबर या सूखा काष्ठ डाले, मुख से हवा फूँके, उस पर धूलि भी न डाले, क्या ऐसा करने वाला उस अग्नि को जलाने में समर्थ हो सकेगा?"

"अवश्य, भन्ते!"

"इसी तरह, भिक्षुओ! जिस समय साधक का चित्त लीन होता है उस समय वह धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग, वीर्यसम्बोध्यङ्ग एवं प्रीतिसम्बोध्यङ्ग की साधना करने में समर्थ है;

"यस्मिं, भिक्खवे, समये उद्धत्तं चित्तं होति, अकालो तस्मिं समये [B.100] धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, अकालो विरियसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, अकालो पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय। तं किस्स हेतु? उद्धतं, भिक्खवे, चित्तं तं एतेहि [R.114] धम्मेहि दुवूपसमयं होति। सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो महन्तं अग्गिक्खन्धं निब्बापेतु-कामो अस्स। सो तत्थ सुक्खानि चेव तिणानि पक्खिपेय्य, सुक्खानि च गोमयानि पक्खिपेय्य, सुक्खानि च कट्ठानि पक्खिपेय्य, मुखवातं च ददेय्य, न च पंसुकेन ओकिरेय्य; भब्बो नु खो सो पुरिसो महन्तं अग्गिक्खन्धं निब्बापेतुं" ति?

"नो हेतं, भन्ते"।

"एवमेव खो, भिक्खवे, यस्मिं समये उद्धतं चित्तं होति, अकालो तस्मिं समये धम्मविचयसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, अकालो विरियसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, अकालो पीतिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय। तं किस्स हेतु? उद्धतं, भिक्खवे, चित्तं तं एतेहि धम्मेहि दुवूपसमयं होति।

"यस्मिं च खो, भिक्खवे, समये उद्धतं चित्तं होति, कालो तस्मिं समये पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, कालो समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, कालो

क्यों कि उस समय उस का वह लीन चित्त इन तीन धर्मों की आराधना से सरलतापूर्वक उत्थान कर सकता है।

साधना का अनवसर—"भिक्षुओ! जिस समय साधक भिक्षु का चित्त उद्धत होता है, उस समय वह धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग, वीर्यसम्बोध्यङ्ग एवं प्रीतिसम्बोध्यङ्ग की साधना करने में समर्थ नहीं है; क्यों कि उस समय उसका चित्त उद्धत (उत्तेजित) है। अत: उस समय इन धर्मों से उस का उत्थान सम्भव नहीं है। जैसे, भिक्षुओ! कोई विशाल अग्निपुञ्ज को शान्त (बुझाना) करना चाहे और वह उस में सूखा तृण, सूखा गोबर या सूखा काष्ठ डाले, तथा मुँह से फूँक (हवा) दे, उस पर धूलि भी न डाले, तो क्या वह अग्निपुञ्ज बुझ सकेगा?"

"नहीं, भन्ते!"

"इसी तरह, भिक्षुओ! जिस समय भिक्षु का चित्त उद्धत होता है तब वह धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग, वीर्यसम्बोध्यङ्ग एवं प्रीतिसम्बोध्यङ्ग—इन तीनों की ही साधना करने में असमर्थ होता है। वह क्यों? क्यों कि वह इस समय, उद्धत होने के कारण, इन धर्मों से शान्त किया जा सकना असम्भव है।

साधना का अवसर—"भिक्षुओ! जिस समय साधक भिक्षु का चित्त उद्धत होता है, उस समय प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग, समाधिसम्बोध्यङ्ग एवं उपेक्षासम्बोध्यङ्ग—इन तीन

उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय। तं किस्स हेतु? उद्धतं, भिक्खवे, चित्तं तं एतेहि धम्मेहि सुवूपसमयं होति। सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो महन्तं अग्गिक्खन्धं निब्बापेतुकामो अस्स। सो तत्थ अल्लानि चेव तिणानि पक्खिपेय्य, अल्लानि च गोमयानि पक्खिपेय्य, अल्लानि च कट्ठानि पक्खिपेय्य, उदकवातं च ददेय्य, पंसुकेन च ओकिरेय्य; भब्बो नु खो सो पुरिसो महन्तं अग्गिक्खन्धं निब्बापेतुं'' ति?

''एवं, भन्ते''।

[R.115] ''एवमेव खो, भिक्खवे, यस्मिं समये उद्धतं चित्तं होति, कालो तस्मिं समये पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, कालो समाधिसम्बोज्झङ्गस्स भावनाय, कालो [N.103] उपेक्खासम्बोज्झङ्गस्स भावनाय। तं किस्स हेतु? उद्धतं, भिक्खवे, चित्तं तं एतेहि धम्मेहि सुवूपसमयं होति। सतिं च ख्वाहं, भिक्खवे, सब्बत्थिकं वदामी'' ति॥●

५४. मेत्तासहगतसुत्तं

[B.101] ५७. एकं समयं भगवा कोलियेसु विहरति हलिद्दवसनं नाम कोलियानं निगमो। अथ खो सम्बहुला भिक्खू पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय हलिद्दवसनं पिण्डाय पविसिंसु। अथ खो तेसं भिक्खूनं एतदहोसि—''अतिप्पगो खो ताव हलिद्दवसने पिण्डाय चरितुं। यन्नून मयं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यामा'' ति।

धर्मों की साधना का अवसर है। वह किस लिये? क्यों कि उस समय उस भिक्षु का वह उद्धत चित्त इन तीन धर्मों की साधना द्वारा सरलता से शान्त किया जा सकता है। जैसे, भिक्षुओ! कोई पुरुष विशाल अग्निपुञ्ज को बुझाना चाहे, परन्तु वह उस में गीला घास, गीला गोबर या गीला काष्ठ डालता जाय, एवं उस पर जलभरी फुहार भी छोड़ता रहे तो क्या वह अग्निपुञ्ज को शान्त कर सकेगा?'' ''हाँ, भन्ते!''

इसी तरह, भिक्षुओ! जिस समय साधक भिक्षु का चित्त उद्धत होता है, वह समय उस का प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग, समाधिसम्बोध्यङ्ग एवं उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की साधना का अवसर है। वह किस लिये? क्यों कि वह चित्त इन धर्मों की साधना द्वारा सरलतापूर्वक शान्त किया जा सकता है।

स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की साधना तो चित्त की प्रत्येक दशा में उपकारक ही होती है॥●

५४. मैत्रीसहगतचित्तसूत्र : : मैत्री भावना

५७. एक समय भगवान् (बुद्ध) कोलियों के प्रदेश में **हरिद्रवसन** नामक एक कोलिय जाति के कस्बे में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब कभी बहुत से भिक्षु वस्त्र व्यवस्थित कर पात्रचीवर ले कर भिक्षाहेतु हरिद्रवसन में प्रविष्ट हुए। मार्ग में, उन्होंने

अथ खो ते भिक्खू येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा तेहि अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं सम्मोदिंसु। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ने खो ते भिक्खू अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एतदवोचुं—

"समणो, आवुसो, गोतमो सावकानं एवं धम्मं देसेति—'एथं तुम्हे, भिक्खवे, पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे मेत्तासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरथ, तथा दुतियं, तथा ततियं, तथा चतुत्थं; इति उद्धमधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय सब्बावन्तं लोकं मेत्तासहगतेन चेतसा विपुलेन महग्गतेन [R.116] अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्जेन फरित्वा विहरथ। करुणासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरथ, तथा दुतियं, तथा ततियं, तथा चतुत्थं; इति उद्धमधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय सब्बावन्तं लोकं करुणासहगतेन चेतसा विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्जेन फरित्वा विहरथ। मुदितासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरथ, तथा दुतियं, तथा ततियं, तथा चतुत्थं; इति उद्धमधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय सब्बावन्तं लोकं मुदितासहगतेन चेतसा विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्जेन फरित्वा विहरथ। उपेक्खासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरथ, तथा दुतियं, तथा ततियं, तथा चतुत्थं; इति उद्धमधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय [N.104] सब्बावन्तं लोकं उपेक्खासहगतेन चेतसा विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्जेन फरित्वा विहरथा' ति। मयं पि खो, आवुसो, सावकानं एवं धम्मं [B.102] देसेम—'एथ तुम्हे, आवुसो, पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे मेत्तासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरथ...पे०...करुणासहगतेन

सोचा—"भिक्षाकाल में अभी विलम्ब है, क्यों न इतना समय, किसी अन्य सम्प्रदाय के परिव्राजकों के किसी आवास में जा कर, धर्मचर्चा में बिताया जाय।" तब वे भिक्षु परिव्राजकों के किसी आवास में पहुँचे। वहाँ ...पूर्ववत्...परिव्राजकों ने भिक्षुओं से यों पूछा—

"आयुष्मानो! आप के श्रमण गौतम अपने श्रावकों को यों उपदेश करते हैं— 'भिक्षुओ! तुम चित्त को मलिन करने वाले तथा प्रज्ञा को दुर्बल बना देने वाले पाँच नीवरणों को छोड़ कर, मैत्रीसहगत चित्त से एक दिशा को व्याप्त कर साधना करो, वैसे ही दूसरी, तीसरी एवं चौथी दिशा को, ऊपर नीचे, टेढे तिरछे, सभी तरह के सब लोकों की विपुल, महान्, अप्रमाण, वैररहित एवं व्यापादरहित मैत्रीसहगत चित्त से साधना करो।

चेतसा...मुदितासहगतेन चेतसा... उपेक्खासहगतेन चेतसा एकं दिसं फरित्वा विहरथ, तथा दुतियं, तथा ततियं, तथा चतुत्थं; इति उद्धमधो तिरियं सब्बधि सब्बत्तताय सब्बावन्तं लोकं उपेक्खासहगतेन चेतसा विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्जेन फरित्वा विहरथा' ति। इध नो, आवुसो, को विसेसो, को अधिप्पयासो, किं [R.117] नानाकरणं समणस्स वा गोतमस्स अम्हाकं वा, यदिदं—धम्म-देसनाय वा धम्मदेसनं, अनुसासनिया वा अनुसासनिं'' ति?

अथ खो ते भिक्खू तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं भासितं नेव अभिनन्दिंसु नप्पटिक्कोसिंसु। अनभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कमिंसु—''भगवतो सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थं आजानिस्सामा'' ति। अथ खो ते भिक्खू हलिद्दवसने पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्ता येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं—

''इध मयं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय हलिद्दवसने पिण्डाय पविसिम्ह। तेसं नो, भन्ते, अम्हाकं एतदहोसि—'अतिप्पगो खो ताव हलिद्दवसने [B.103, R.188] पिण्डाय चरितुं। यन्नून मयं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यामा' ति...अनभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कमिम्ह—'भगवतो सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थं आजानिस्सामा''' ति।

''एवंवादिनो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवमस्सु वचनीया—'कथं भाविता पनावुसो, मेत्ताचेतोविमुत्ति किङ्गतिका होति किंपरमा किंफला किंपरियोसाना? कथं भाविता पनावुसो, करुणाचेतोविमुत्ति किङ्गतिका होति किंपरमा किंफला किंपरियोसाना? कथं भाविता पनावुसो, मुदिताचेतोविमुत्ति किङ्गतिका होति किंपरमा

इसी तरह...पूर्ववत्...करुणासहगत चित्त से... मुदितासहगत चित्त से...उपेक्षासहगत चित्त से साधना करो।' हम भी अपने श्रावकों को यही धर्मोपदेश करते हैं—...पूर्ववत्...। तो, भिक्षुओ! आप के श्रमण गौतम के तथा हमारे उपदेश में क्या अन्तर है? क्या भेद है? क्या विशेषता है?''

परिव्राजकों का यह प्रश्न सुन कर भिक्षुओं ने न इस का अभिनन्दन किया, न अनुमोदन या न निषेध ही। अपि तु उन्होंने सोचा—'इस का उत्तर भगवान् के पास चल कर उन से पूछना चाहिये'। तथा वे आसन से उठ कर भिक्षाहेतु चल दिये। ...पूर्ववत्...।

''ऐसा कहने वाले उन परिव्राजकों से तुम को यह पूछना चाहिये था—'आयुष्मानो! किस प्रकार भावना की गयी मैत्री से चित्त की विमुक्ति के क्या गति होती है? इस का

किंफला किंपरियोसाना? कथं भाविता पनावुसो, उपेक्खाचेतोविमुत्ति [N.105] किङ्गतिका होति किंपरमा किंफला किंपरियोसाना' ति? एवं पुट्ठा, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका न चेव सम्पायिस्सन्ति, उत्तरिं च विघातं आपज्जिस्सन्ति। तं किस्स हेतु? यथा तं, भिक्खवे, अविसयस्मिं।

"नाहं तं, भिक्खवे, पस्सामि सदेवके लोके समारके सब्रह्मके [B.104] सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय, यो इमेसं पञ्हानं वेय्याकरणेन चित्तं आराधेय्य, अञ्ञत्र तथागतेन वा तथागतसावकेन वा इतो वा पन सुत्वा।

"कथं भाविता च, भिक्खवे, मेत्ताचेतोविमुत्ति किङ्गतिका होति [R.119] किंपरमा किंफला किंपरियोसाना? इध, भिक्खवे, भिक्खु मेत्तासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...मेत्तासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। सो सचे आकङ्खति 'अप्पटिकूले पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति। सचे आकङ्खति 'पटिकूले अप्पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अप्पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति। सचे आकङ्खति 'अप्पटिकूले च पटिकूले च पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति। सचे आकङ्खति 'पटिकूले च अप्पटिकूले च अप्पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अप्पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति। सचे आकङ्खति 'अप्पटिकूलं च पटिकूलं च तदुभयं अभिनिवज्जेत्वा उपेक्खको विहरेय्यं सतो सम्पजानो' ति, उपेक्खको च तत्थ विहरति

फल तथा परिणाम क्या होता है?' ऐसा पूछा जाने पर, अन्य सम्प्रदाय का कोई भी साधु इस का उत्तर न दे सकेगा, अपि तु वह द्विविधा में फँस जायगा...पूर्ववत्...।

"भिक्षुओ! लोक में ऐसा...पूर्ववत्...या उन से सुन कर किसी सुविज्ञ श्रोता को छोड़ कर।

"भिक्षुओ! किस प्रकार भावना की गयी मैत्री से चित्त की क्या गति, क्या फल, क्या परिणाम होते हैं? भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु मैत्रीसहगत स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है...मैत्रीसहगत उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है, जो विवेक वैराग्य तथा निरोध की ओर ले जाता है, जिस से मुक्ति सिद्ध होती है। यदि वह चाहता है— 'अप्रतिकूल में प्रतिकूल की संज्ञा से साधना करूँ', तो वह वैसी ही साधना करता है। यदि वह चाहता है—'प्रतिकूल में अप्रतिकूल की संज्ञा से साधना करूँ' तो वह वैसी ही साधना करता है। यदि वह चाहता है—'अप्रतिकूल एवं प्रतिकूल में प्रतिकूल की संज्ञा से साधना करूँ' तो वह वैसी ही साधना करता है। यदि वह चाहता है—'प्रतिकूल एवं अप्रतिकूल में अप्रतिकूल की संज्ञा से साधना करूँ' तो वह वैसी साधना करता है। यदि

सतो सम्पजानो, सुभं वा खो पन विमोक्खं उपसम्पज्ज विहरति। सुभपरमाहं, भिक्खवे, मेत्ताचेतोविमुत्तिं वदामि इधपञ्ञस्स भिक्खुनो उत्तरिविमुत्तिं अप्पटिविज्झतो।

"कथं भाविता च, भिक्खवे, करुणाचेतोविमुत्ति किङ्गतिका होति किंपरमा किंफला किंपरियोसाना? इध, भिक्खवे, भिक्खु करुणासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...करुणासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। सो सचे आकङ्खति 'अप्पटिकूले पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति...पे०...सचे आकङ्खति 'अप्पटिकूलं च पटिकूलं च तदुभयं अभिनिवज्जेत्वा उपेक्खको विहरेय्यं सतो सम्पजानो' ति, उपेक्खको तत्थ विहरति सतो सम्पजानो। सब्बसो वा पन रूपसञ्ञानं समतिक्कमा [N.106] पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। आकासानञ्चायतनपरमाहं, भिक्खवे, [B.105, R.120] करुणाचेतोविमुत्तिं वदामि इधपञ्ञस्स भिक्खुनो उत्तरिविमुत्तिं अप्पटिविज्झतो।

"कथं भाविता च, भिक्खवे, मुदिताचेतोविमुत्ति किङ्गतिका होति किंपरमा किंफला किंपरियोसाना? इध, भिक्खवे, भिक्खु मुदितासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...मुदितासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं

वह चाहता है—'प्रतिकूल एवं अप्रतिकूल—दोनों संज्ञाओं को छोड़ कर, उपेक्षापूर्वक स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ हो कर साधना करूँ' तो वह वैसी ही साधना करता है। शुभ या विमोक्ष को प्राप्त करता है। भिक्षुओ! मैत्री से चित्त की विमुक्ति शुभ पर्यन्त ही है, इस का साधक इस से ऊपर की विमुक्ति प्राप्त करने में असमर्थ होता है। (१)

"भिक्षुओ! किस प्रकार साधना की गयी करुणा से चित्त की विमुक्ति के क्या गति, क्या फल, क्या परिणाम होते हैं?

"भिक्षुओ! यदि वह साधक भिक्षु करुणासहगत स्मृतिसम्बोध्यङ्ग से...पूर्ववत्...। यदि वह चाहता है—अप्रतिकूल संज्ञा तथा प्रतिकूल संज्ञा—दोनों को छोड़ कर उपेक्षापूर्वक स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ हो कर, रूपसंज्ञाओं का सर्वथा अतिक्रमण कर, तथा प्रतिघसंज्ञाओं के अस्त हो जाने से, नानात्वसंज्ञाओं का मन में ध्यान न करने से 'अनन्त आकाश'—इस आकाशानन्त्यायन की साधना करता है। इस साधक की भी आकाशानन्त्यायतन तक ही पहुँच होती है। भिक्षु इस से ऊपर की चेतोविमुक्ति नहीं प्राप्त कर सकता—ऐसा मैं कहता हूँ। (२)

"भिक्षुओ! किस तरह साधना की गयी मुदितासहगत चेतोविमुक्ति की क्या गति,

निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। सो सचे आकङ्खति 'अप्पटिकूले पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति...पे०...सचे आकङ्खति 'अप्पटिकूलं च पटिकूलं च तदुभयं अभिनिवज्जेत्वा उपेक्खको विहरेय्यं सतो सम्पजानो' ति, उपेक्खको तत्थ विहरति सतो सम्पजानो। सब्बसो वा पन आकासनञ्चायतनं समतिक्कम्म 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। विञ्ञाण-ञ्चायतनपरमाहं, भिक्खवे, मुदिताचेतोविमुत्तिं वदामि इधपञ्ञस्स भिक्खुनो उत्तरि-विमुत्तिं अप्पटिविज्झतो।

"कथं भाविता च, भिक्खवे, उपेक्खाचेतोविमुत्ति किङ्गतिका होति किंपरमा किंफला किंपरियोसाना? इध, भिक्खवे, भिक्खु उपेक्खासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०... उपेक्खासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोध-निस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। सो सचे आकङ्खति 'अप्पटिकूले पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति। सचे आकङ्खति 'पटिकूले अप्पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अप्पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति। सचे आकङ्खति 'अप्पटिकूले च पटिकूले च पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति। सचे आकङ्खति 'पटिकूले च अप्पटिकूले च अप्पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अप्पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति। सचे आकङ्खति 'अप्पटिकूलं च पटिकूलं च तदुभयं अभिनिवज्जेत्वा उपेक्खको विहरेय्यं सतो सम्पजानो' ति, उपेक्खको तत्थ विहरति सतो [R.121] सम्पजानो। सब्बसो वा पन विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। आकिञ्चञ्ञायतनपरमाहं, भिक्खवे, उपेक्खा-चेतोविमुत्तिं वदामि इधपञ्ञस्स भिक्खुनो उत्तरिविमुत्तिं अप्पटिविज्झतो" ति॥ •

फल एवं परिणाम होते हैं? भिक्षुओ! यदि वह साधक...पूर्ववत्...आकाशानन्त्यायतन का सर्वथा अतिक्रमण कर 'विज्ञान अनन्त है'—ऐसे विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है तो उस की इस मुदिता से चित्त की विमुक्ति विज्ञानानन्त्यायतन तक ही होती है, आगे नहीं—ऐसा मैं कहता हूँ। (३)

"भिक्षुओ! किस तरह साधना की गयी उपेक्षासहगत चेतोविमुक्ति के भी क्या गति, क्या फल एवं परिणाम हो सकते हैं? भिक्षुओ! इस विज्ञानानन्त्यायतन का सर्वथा अतिक्रमण कर 'कुछ नहीं है'—ऐसे आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। उस की इस उपेक्षा से चित्त की विमुक्ति 'आकिञ्चन्यायतन' तक ही होती है, आगे नहीं। ऐसा मैं कहता हूँ"॥ •

५५. सङ्गारवसुत्तं

[N.107, B.106] ५८. सावत्थिनिदानं। अथ खो सङ्गारवो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सङ्गारवो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच–

"को नु खो, भो गोतम, हेतु को पच्चयो येनेकदा दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति, पगेव असज्झायकता? को पन, भो गोतम, हेतु को पच्चयो येनेकदा दीघरत्तं असज्झायकता पि मन्ता पटिभन्ति, पगेव सज्झायकता" ति?

"यस्मिं खो, ब्राह्मण, समये कामरागपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति कामरागपरेतेन, उप्पन्नस्स च कामरागस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति, परत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति, उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति; दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति, पगेव असज्झायकता। सेय्यथापि, ब्राह्मण, उदपत्तो संसट्ठो लाखाय वा हलिद्दिया वा नीलिया वा मञ्जिट्ठाय वा। तत्थ चक्खुमा पुरिसो सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो यथाभूतं न जानेय्य न पस्सेय्य। एवमेव खो, ब्राह्मण, यस्मिं समये [R.122]कामरागपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति कामराग परेतेन, उप्पन्नस्स च कामरागस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति,

---

५५. सङ्गारवसूत्र : : मन्त्र का ध्यान में न आना

५८. ...**श्रावस्ती में** ही...तब कोई सङ्गारव नामक ब्राह्मण भगवान् के पास आया, तथा उन से कुशलमङ्गल पूछते हुए एक तरफ बैठ कर वह भगवान् से यों बोला–

"भो गौतम! क्या हेतु तथा प्रत्यय है कि कभी कभी बहुत दिनों तक अभ्यस्त मन्त्र भी समय पर ध्यान (स्मरण) में नहीं आते; उन का तो कहना ही क्या, जिन का अभ्यास न किया गया हो?"

मन्त्रों का ध्यान में न आना—"जिस समय साधक का चित्त कामराग से अभिभूत होता है, उत्पन्न कामराग से मुक्ति को भी यथार्थतः नहीं जानता या देखता। उस समय वह अपना अर्थ (हित) यथार्थतः नहीं जान या देख पाता, दूसरे का अर्थ भी यथार्थतः...दोनों का अर्थ भी यथार्थतः नहीं जान या देख पाता। उस समय उस के दीर्घकाल तक अभ्यस्त किये गये मन्त्र भी ध्यान में नहीं आते, अनभ्यस्त की तो बात ही क्या! जैसे, ब्राह्मण! कोई जलपात्र, जिस में लाख, या हल्दी, या नील या मंजीठ लगा हो, उस में कोई पुरुष अपनी छाया (प्रतिबिम्ब) देखना चाहे तो यथार्थतः (स्पष्ट) नहीं देख पाता; उसी तरह, ब्राह्मण,

परत्थं पि...उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति; दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति, पगेव असज्झायकता।

"पुन च परं, ब्राह्मण, यस्मिं समये ब्यापादपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति ब्यापादपरेतेन, उप्पन्नस्स च ब्यापादस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति, परत्थं पि...पे०...उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति; दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति, [B.107] पगेव असज्झायकता। सेय्यथापि, ब्राह्मण, उदपत्तो अग्गिना सन्तत्तो पक्कुथितो उस्मुदकजातो। तत्थ चक्खुमा पुरिसो सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो [N.108] यथाभूतं न जानेय्य न पस्सेय्य। एवमेव खो, ब्राह्मण, यस्मिं समये ब्यापादपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति ब्यापादपरेतेन, उप्पन्नस्स च ब्यापादस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति, परत्थं पि तस्मिं समये ...पे०...उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति; दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति, पगेव असज्झायकता।

"पुन च परं, ब्राह्मण, यस्मिं समये थीनमिद्धपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति थीनमिद्धपरेतेन, उप्पन्नस्स च थीनमिद्धस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति, परत्थं पि...पे०...उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति; दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति, पगेव असज्झायकता। सेय्यथापि, ब्राह्मण, उदपत्तो सेवालपणकपरियोनद्धो। तत्थ [R.123] चक्खुमा पुरिसो सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो यथाभूतं न जानेय्य न पस्सेय्य। एवमेव खो, ब्राह्मण, यस्मिं समये थीनमिद्धपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति थीनमिद्धपरेतेन, उप्पन्नस्स च थीनमिद्धस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये

जिस समय साधक का चित्त कामराग से अभिभूत हो...पूर्ववत्...अनभ्यस्त की तो बात ही क्या!

"जिस समय साधक का चित्त व्यापाद से अभिभूत रहता है...उस समय...पूर्ववत्...। जैसे कोई जलपात्र अग्नि से सन्तप्त हो, जल खौल रहा हो, उस में से भाप निकल रही हो, उस में कोई अपना प्रतिबिम्ब देखना चाहे तो ठीक से नहीं देख सकता। ब्राह्मण! वैसे ही, जिस समय उस का चित्त व्यापाद राग से अभिभूत हो...। ...पूर्ववत्...। अनभ्यस्त की तो बात ही क्या!

"ब्राह्मण! जिस समय भिक्षु का चित्त स्त्यानमृद्ध (आलस्य) से अभिभूत हो

यथाभूतं न जानाति न पस्सति, परत्थं पि...पे०...उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति; दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति, पगेव असज्झायकता।

"पुन च परं, ब्राह्मण, यस्मिं समये उद्धच्चकुक्कुच्चपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति उद्धच्चकुक्कुच्चपरेतेन, उप्पन्नस्स च उद्धच्चकुक्कुच्चस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति, परत्थं पि...पे०...उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति; दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति, पगेव असज्झायकता। सेय्यथापि, ब्राह्मण, उदपत्तो वातेरितो चलितो भन्तो ऊमिजातो। [B.108] तत्थ चक्खुमा पुरिसो सकं मुख निमित्तं पच्चवेक्खमानो यथाभूतं न जानेय्य न पस्सेय्य। एवमेव खो, ब्राह्मण, यस्मिं समये उद्धच्चकुक्कुच्चपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति उद्धच्चकुक्कुच्चपरेतेन, उप्पन्नस्स च उद्धच्चकुक्कुच्चस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति, [N.109] अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति, परत्थं पि ...पे०...उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति; दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति, पगेव असज्झायकता।

"पुन च परं, ब्राह्मण, यस्मिं समये विचिकिच्छापरियुट्ठितेन चेतसा विहरति विचिकिच्छापरेतेन, उप्पन्नस्स च विचिकिच्छाय निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति, परत्थं पि...पे०...उभयत्थं पि...दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति, पगेव असज्झायकता। सेय्यथापि, ब्राह्मण, उदपत्तो आविलो लुळितो कललीभूतो अन्धकारे निक्खितो। तत्थ चक्खुमा पुरिसो सकं मुख- [R.124] निमित्तं पच्चवेक्खमानो यथाभूतं न जानेय्य न पस्सेय्य। एवमेव खो, ब्राह्मण, यस्मिं समये विचिकिच्छापरियुट्ठितेन चेतसा विहरति विचिकिच्छापरेतेन, उप्पन्नाय च विचिकिच्छाय निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति, परत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति, उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं न जानाति न पस्सति; दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति,

---

...पूर्ववत्... ब्राह्मण! जैसे कोई जलपात्र सेवाल एवं पङ्क से भरा हो, उस में...। ...पूर्ववत्...अनभ्यस्त की तो बात ही क्या!

"ब्राह्मण! जिस समय भिक्षु का चित्त औद्धत्यकौकृत्य से अभिभूत हो...पूर्ववत्...। ब्राह्मण! जैसे कोई जलपात्र वायु के वेग से तरङ्गायित कर दिया गया हो, चलायमान हो, उस में ...पूर्ववत्...अनभ्यस्त की तो बात ही क्या!

"ब्राह्मण! जिस समय भिक्षु का चित्त विचिकित्सा से ग्रस्त हो...पूर्ववत्...। ब्राह्मण!

पगेव असज्झायकता। अयं खो, ब्राह्मण, हेतु अयं पच्चयो येनेकदा दीघरत्तं सज्झायकता पि मन्ता नप्पटिभन्ति, पगेव असज्झायकता।

"यस्मिं च खो, ब्राह्मण, समये न कामरागपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति न कामरागपरेतेन, उप्पन्नस्स च कामरागस्स निस्सरणं यथाभूतं पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, परत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति; दीघरत्तं असज्झायकता पि मन्ता पटिभन्ति, पगेव सज्झायकता। सेय्यथापि, ब्राह्मण, उदपत्तो असंसट्ठो लाखाय [B.109] वा हलिद्दिया वा नीलिया वा मञ्जिट्ठाय वा। तत्थ चक्खुमा पुरिसो सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो यथाभूतं जानेय्य पस्सेय्य। एवमेव खो, ब्राह्मण, यस्मिं समये न कामरागपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति न कामरागपरेतेन, उप्पन्नस्स च कामरागस्स निस्सरणं यथाभूतं पजानाति...पे०...।

"पुन च परं, ब्राह्मण, यस्मिं समये न ब्यापादपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति न ब्यापादपरेतेन, उप्पन्नस्स च ब्यापादस्स निस्सरणं यथाभूतं पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, परत्थं पि...पे०...उभयत्थं पि...दीघरत्तं असज्झायकता पि मन्ता पटिभन्ति, पगेव सज्झायकता। सेय्यथापि, ब्राह्मण, उदपत्तो न [N.110] अग्गिना सन्तत्तो न पक्कुथितो न उस्सुदकजातो, तत्थ चक्खुमा पुरिसो सकं [R.125] मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो यथाभूतं जानेय्य पस्सेय्य; एवमेव खो, ब्राह्मण, यस्मिं समये न ब्यापादपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति न ब्यापादपरेतेन, उप्पन्नस्स च ब्यापादस्स निस्सरणं यथाभूतं पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, परत्थं पि...पे०...उभयत्थं पि...पे०...दीघरत्तं असज्झायकता पि मन्ता पटिभन्ति, पगेव सज्झायकता।

"पुन च परं, ब्राह्मण, यस्मिं समये न थीनमिद्धपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति न

जैसे कोई गन्दला जलपात्र अन्धकार में रखा हुआ हो उस में...पूर्ववत्...। उस समय दीर्घकाल के अभ्यस्त मन्त्र भी स्मरण नहीं आते, अनभ्यस्त मन्त्रों की तो बात ही क्या!

मन्त्रों का ध्यान में आना—"परन्तु, ब्राह्मण! जिस समय उस साधक भिक्षु का चित्त कामराग से अभिभूत (उद्वेलित) न हो रहा हो, उत्पन्न कामराग के मोक्ष को यथार्थतः जानता है; उस समय वह अपना अर्थ भी...दूसरे का अर्थ भी...दोनों का अर्थ भी यथार्थतः जानता है, उस समय वह दीर्घकाल तक अभ्यस्त न किये गये मन्त्र भी तत्काल ध्यान में ले आता है, दीर्घकाल तक अभ्यस्त मन्त्रों की तो बात की क्या!

थीनमिद्धपरेतेन, उप्पन्नस्स च थीनमिद्धस्स निस्सरणं यथाभूतं पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, परत्थं पि...पे०...उभयत्थं पि..दीघरत्तं असज्झायकता पि मन्ता पटिभन्ति, पगेव सज्झायकता। सेय्यथापि, ब्राह्मण, उदपत्तो न सेवालपणकपरियोनद्धो। तत्थ चक्खुमा पुरिसो सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो यथाभूतं जानेय्य पस्सेय्य। एवमेव खो, ब्राह्मण, यस्मिं समये न थीनमिद्धपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति न थीनमिद्धपरेतेन, उप्पन्नस्स च थीनमिद्धस्स निस्सरणं यथाभूतं पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, परत्थं पि...पे०...उभयत्थं पि...दीघरत्तं असज्झायकता पि मन्ता पटिभन्ति, पगेव सज्झायकता।

[B.110] ''पुन च परं, ब्राह्मण, यस्मिं समये न उद्धच्चकुक्कुच्चपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति उद्धच्चकुक्कुच्चपरेतेन, उप्पन्नस्स च उद्धच्चकुक्कुच्चस्स निस्सरणं यथाभूतं पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, परत्थं पि...पे०...उभयत्थं पि...दीघरत्तं असज्झायकता पि मन्ता पटिभन्ति, पगेव सज्झायकता। सेय्यथापि, ब्राह्मण, उदपत्तो न वातेरितो न चलितो न भन्तो न ऊमिजातो। तत्थ चक्खुमा पुरिसो सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो यथाभूतं जानेय्य पस्सेय्य। एवमेव खो, ब्राह्मण, यस्मिं समये न उद्धच्चकुक्कुच्चपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति न उद्धच्चकुक्कुच्चपरेतेन, उप्पन्नस्स च उद्धच्चकुक्कुच्चस्स निस्सरणं यथाभूतं पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, परत्थं पि...पे०...उभयत्थं पि... दीघरत्तं असज्झायकता पि मन्ता पटिभन्ति, पगेव सज्झायकता।

[N.111] ''पुन च परं, ब्राह्मण, यस्मिं समये न विचिकिच्छापरियुट्ठितेन चेतसा विहरति न विचिकिच्छापरेतेन, उप्पन्नाय च विचिकिच्छाय निस्सरणं यथाभूतं पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, परत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति; दीघरत्तं असज्झायकता पि मन्ता पटिभन्ति, पगेव सज्झायकता। सेय्यथापि, ब्राह्मण, उदपत्तो अच्छो विप्पसन्नो अनाविलो आलोके निक्खित्तो। तत्थ चक्खुमा पुरिसो सकं मुखनिमित्तं पच्चवेक्खमानो यथाभूतं जानेय्य पस्सेय्य। एवमेव खो, ब्राह्मण, यस्मिं समये न विचिकिच्छापरियुट्ठितेन चेतसा विहरति न विचिकिच्छापरेतेन, उप्पन्नाय च विचिकिच्छाय निस्सरणं यथाभूतं

(इसी तरह—) जब साधक का चित्त व्यापाद...स्त्यानमृद्ध...औद्धत्यकौकृत्य... विचिकित्सा से अभिभूत न हो रहा हो, उत्पन्न...दीर्घकाल तक अभ्यस्त मन्त्रों की तो बात ही क्या!

पजानाति, अत्तत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, परत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति, उभयत्थं पि तस्मिं समये यथाभूतं जानाति पस्सति; दीघरत्तं असज्झायकता पि मन्ता पटिभन्ति, पगेव सज्झाय-[R.126] कता। अयं खो, ब्राह्मण, हेतु अयं पच्चयो येनेकदा दीघरत्तं असज्झायकता पि मन्ता पटिभन्ति, पगेव सज्झायकता।

"सत्तिमे, ब्राह्मण, बोज्झङ्गा अनावरणा अनीवरणा चेतसो अनुपक्किलेसा [B.111] भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सतिसम्बोज्झङ्गो खो, ब्राह्मण, अनावरणो अनीवरणो चेतसो अनुपक्किलेसो भावितो बहुलीकतो विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तति...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गो खो, ब्राह्मण, अनावरणो अनीवरणो चेतसो अनुपक्किलेसो भावितो बहुलीकतो विज्जा-विमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तति। इमे खो, ब्राह्मण, सत्त बोज्झङ्गा अनावरणा अनीवरणा चेतसो अनुपक्किलेसा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ती" ति।

एवं वुत्ते सङ्गारवो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—"अभिक्कन्तं, भो गोतम...पे०... उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥ ●

५६. अभयसुत्तं

५९. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा राजगहे विहरति गिज्झकूटे पब्बते। अथ खो अभयो राजकुमारो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं [N.112]

ब्राह्मण! यही हेतु है, यही प्रत्यय है कि कभी कोई पुरुष दीर्घकाल तक अभ्यस्त मन्त्रों को तत्काल स्मरण नहीं कर पाता, ध्यान में नहीं ला पाता, अनभ्यस्त मन्त्रों की तो बात ही क्या!

सात बोध्यङ्गों का अभ्यास विद्याविमुक्तिफलदायक—"ब्राह्मण! इन सात आवरणरहित नीवरणरहित, चित्त के उपक्लेशों से रहित बोध्यङ्गों की साधना से विद्या एवं विमुक्ति के फल का साक्षात्कार होता है। कौन से सात? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...पूर्ववत्... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग"।

भगवान् के यह कहने पर सङ्गारव ब्राह्मण बोला—"आश्चर्य है, भन्ते!...पूर्ववत्... आज से मुझे अपना उपासक स्वीकार करें॥ ●

५६. अभयसूत्र : : परमज्ञान के दर्शन में हेतु

५९. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **राजगृह** के गृध्रकूट पर्वत पर

अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो अभयो राजकुमारो भगवन्तं एतदवोच—"पूरणो, भन्ते, कस्सपो एवमाह—'नत्थि हेतु नत्थि पच्चयो अञ्ञाणाय अदस्सनाय। अहेतु अप्पच्चयो अञ्ञाणं अदस्सनं होति। नत्थि हेतु नत्थि पच्चयो ञाणाय दस्सनाय। अहेतु अप्पच्चयो ञाणं दस्सनं होती' ति। इध भगवा किमाहा" ति?

"अत्थि, राजकुमार, हेतु अत्थि पच्चयो अञ्ञाणाय अदस्सनाय। सहेतु [R.127] सप्पच्चयो अञ्ञाणं अदस्सनं होति। अत्थि, राजकुमार, हेतु अत्थि पच्चयो ञाणाय दस्सनाय। सहेतु सप्पच्चयो ञाणं दस्सनं होती" ति।

"कतमो पन, भन्ते, हेतु कतमो पच्चयो अञ्ञाणाय अदस्सनाय? कथं सहेतु सप्पच्चयो अञ्ञाणं अदस्सनं होती" ति?

"यस्मिं खो, राजकुमार, समये कामरागपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति [B.112] कामरागपरेतेन, उप्पन्नस्स च कामरागस्स निस्सरणं यथाभूतं न जानाति न पस्सति—अयं पि खो, राजकुमार, हेतु अयं पच्चयो अञ्ञाणाय अदस्सनाय। एवं पि सहेतु सप्पच्चयो अञ्ञाणं अदस्सनं होति। पुन च परं, राजकुमार, यस्मिं समये ब्यापादपरियुट्ठितेन चेतसा .विहरति ब्यापादपरेतेन...पे०...थीनमिद्धपरियुट्ठितेन... उद्धच्चकुक्कुच्चपरियुट्ठितेन...विचिकिच्छापरियुट्ठितेन चेतसा विहरति विचिकिच्छापरेतेन,

---

साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय अभय राजकुमार भगवान् के पास आया। आ कर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उसने भगवान् से यों पूछा—"भन्ते! पूरण काश्यप का यह कहना है—'अज्ञान एवं अदर्शन का कोई हेतु या प्रत्यय नहीं होता, ये दोनों तो निर्हेतुक एवं निष्कारण ही होते हैं। इसी तरह, ज्ञान एवं दर्शन का भी कोई हेतु या प्रत्यय नहीं है। ये दोनों भी निर्हेतुक एवं निष्प्रत्यय ही होते हैं।' भन्ते! आप का इस विषय में क्या मत है?"

"हाँ, राजकुमार! अज्ञान एवं अदर्शन का भी कोई न कोई हेतु या प्रत्यय होता ही है। ये निर्हेतुक या निष्प्रत्यय नहीं होते। इसी तरह, ज्ञान एवं दर्शन का भी हेतु या प्रत्यय होता है। ये भी सहेतुक या सप्रत्यय ही होते हैं।"

"तो, भन्ते! इस अज्ञान एवं अदर्शन का क्या हेतु है, क्या प्रत्यय है? कैसे ये दोनों सप्रत्यय या सहेतुक होते हैं?"

"जिस समय, राजकुमार! साधक का चित्त कामराग से अभिभूत होता है, उस उत्पन्न कामराग से मुक्ति को भी वह यथार्थतः नहीं जानता या देखता; राजकुमार! अज्ञान एवं अदर्शन में यह हेतु या यह प्रत्यय है। फिर, राजकुमार! व्यापाद से चित्त अभिभूत... स्त्यानमृद्ध से अभिभूत चित्त...औद्धत्यकौकृत्य से अभिभूत चित्त...विचिकित्सा से अभिभूत

उप्पन्नाय च विचिकिच्छाय निस्सरणं यथाभूतं न जानाति न पस्सति—अयं पि खो, राजकुमार, हेतु अयं पच्चयो अञ्ञाणाय अदस्सनाय। एवं पि सहेतु सप्पच्चयो अञ्ञाणं अदस्सनं होती'' ति।

''को नामायं, भन्ते, धम्मपरियायो'' ति?

''नीवरणा नामेते, राजकुमारा'' ति।

''तग्घ, भगवा, नीवरणा; तग्घ, सुगत, नीवरणा! एकमेकेन पि खो, भन्ते, नीवरणेन अभिभूतो यथाभूतं न जानेय्य न पस्सेय्य, को पन वादो पञ्चहि नीवरणेहि!

''कतमो पन, भन्ते, हेतु कतमो पच्चयो ञाणाय दस्सनाय? कथं सहेतु सप्पच्चयो ञाणं दस्सनं होती'' ति?

''इध, राजकुमार, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं [R.128] विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। सो सतिसम्बोज्झङ्गं भावितेन चित्तेन यथाभूतं जानाति पस्सति—अयं पि खो, राजकुमार, हेतु अयं पच्चयो ञाणाय दस्सनाय। एवं पि सहेतु सप्पच्चयो ञाणं दस्सनं होति। पुन च परं, राजकुमार, [N.113] भिक्खु...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। सो उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावितेन चित्तेन यथाभूतं जानाति पस्सति—अयं पि खो, राजकुमार, हेतु अयं पच्चयो ञाणाय दस्सनाय। एवं पि सहेतु सप्पच्चयो ञाणं दस्सनं होती'' ति।

चित्त से साधना करता है तथा उत्पन्न विचिकित्सा से मुक्ति का उपाय भी वह यथार्थतः नहीं जानता; राजकुमार! यह भी उस अज्ञान एवं अदर्शन का हेतु एवं प्रत्यय है। इस तरह वह अज्ञान तथा अदर्शन सहेतुक तथा सप्रत्यय है।''

''भन्ते! इस धर्मपर्याय को (आप के धर्मविनय में) क्या कहते हैं?''

''राजकुमार! इन्हें 'नीवरण' कहा जाता है।

''भगवन्! ये तो यथार्थ में नीवरण ही हैं, सुगत! ये यथार्थतः नीवरण ही हैं। इन में से, भन्ते! एक नीवरण से अभिभूत चित्त ही यथार्थ को नहीं जान सकेगा, यदि ये पाँचों नीवरण एक साथ एकत्र हो जायँ तो फिर उस साधक के सङ्कट की बात ही क्या है!

''भन्ते! उस ज्ञान के अदर्शन के हेतु क्या हैं, प्रत्यय क्या हैं? कैसे यह ज्ञानदर्शन सहेतु एवं सप्रत्यय होता है?''

''यहाँ, राजकुमार! कोई भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागयुक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की साधना करता है। वह उस साधना के अभ्यास से यथार्थ को जान लेता है—

"को नामायं, भन्ते, धम्मपरियायो" ति? "बोज्झङ्गा नामेते, राजकुमारा" ति।

"तग्घ, भगवा, बोज्झङ्गा; तग्घ, सुगत, बोज्झङ्गा! एकमेकेन पि खो, भन्ते, बोज्झङ्गेन समन्नागतो यथाभूतं जानेय्य पस्सेय्य, को पन वादो सत्तहि बोज्झङ्गेहि! यो पि [B.113] मे, भन्ते, गिज्झकूटं पब्बतं आरोहन्तस्स कायकिलमथो चित्तकिलमथो, सो पि मे पटिप्पस्सद्धो, धम्मो च मे अभिसमितो" ति॥ •

साकच्छवग्गो छट्ठो॥

तस्सुद्दानं

आहारा परियायमग्गि, मेत्तं सङ्गारवेन च।
अभयो पुच्छितो पञ्हं, गिज्झकूटम्हि पब्बते ति॥ •

राजकुमार! यों भी ज्ञानदर्शन सहेतुक एवं सप्रत्यय होता है। ...पूर्ववत्...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की साधना करता है...यों भी ज्ञानदर्शन सहेतुक एवं सप्रत्यय होता है।"

"भन्ते! इस धर्मपर्याय का आप के धर्मविनय में क्या नाम है?"

"राजकुमार! इन्हें 'बोध्यङ्ग' कहा जाता है।"

"भन्ते! भगवन्! ये तो यथार्थ में ही 'बोध्यङ्ग' हैं, सुगत! ये तो वस्तुतः बोध्यङ्ग हैं। भन्ते! इन में से एक एक बोध्यङ्ग से ही साधक यथार्थ को जानने में समर्थ हैं, फिर सातों अङ्गों की तो बात ही क्या! भन्ते! मुझे यह धर्मोपदेश सुनने से पूर्व, यहाँ आते हुए गृध्रकूट पर्वत पर चढ़ने से कायक्लेश हो रहा था, वह भी इस धर्मोपदेश के श्रवणमात्र से शान्त हो गया। धर्म को भी जान लिया—यह अतिरिक्त लाभ हुआ!"॥ •

षट्कवर्ग (साक्षाद्वर्ग) सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. आहारवर्ग, २. पर्यायसूत्र, ३. अग्निसूत्र, ४. मैत्रीसहगतचित्तसूत्र, ५. सङ्गारवसूत्र एवं ६. अभयसूत्र॥ •

७. आनापानवग्गो सत्तमो

५७. अट्ठिकमहप्फलसुत्तं

६०. सावत्थिनिदानं। "अट्ठिकसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता [R.129] महप्फला होति महानिसंसा। कथं भाविता च, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञा कथं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा? इध, भिक्खवे, भिक्खु अट्ठिकसञ्ञासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...अट्ठिकसञ्ञासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं भाविता खो, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञा एवं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा" ति॥ ●

५८. अञ्ञतरफलसुत्तं

६१. "अट्ठिकसञ्ञाय, भिक्खवे, भाविताय बहुलीकताय द्विन्नं फलानं अञ्ञतरं फलं पाटिकङ्खं—दिट्ठेव धम्मे अञ्ञा, सति वा उपादिसेसे अनागामिता। कथं [N.114] भाविताय च खो, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञाय कथं बहुलीकताय द्विन्नं फलानं अञ्ञतरं फलं पाटिकङ्खं—दिट्ठेव धम्मे अञ्ञा, सति वा उपादिसेसे अनागामिता? इध, भिक्खवे, भिक्खु अट्ठिकसञ्ञासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...अट्ठिकसञ्ञासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं भाविताय खो, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञाय एवं बहुलीकताय द्विन्नं [B.114]

---

७. आनापानवर्ग सप्तम

५७. अस्थिकमहाफलसूत्र : : अस्थिकभावना

६०. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! (कायानुपश्यना के समय) अस्थिसंज्ञा की भावना एवं उस का अभ्यास अत्यधिक फलदायक एवं अतिमहत्त्वयुक्त होता है। ऐसा कैसे होता है? भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागमय अस्थिकसंज्ञायुक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है...पूर्ववत्...अस्थिकसंज्ञासहगत उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। इस तरह अस्थिकसंज्ञा की भावना विपुल फलदायक एवं अतिमहत्त्वयुक्त होती है॥ ●

५८. अन्यतरफलसूत्र : : परमज्ञान

६१. ..."भिक्षुओ! अस्थिकसंज्ञा की भावना करने से दो फलों में से एक फल अवश्य प्राप्त होता है—१. या तो इसी जन्म में परम ज्ञानप्राप्ति, या फिर २. प्रारब्ध शेष हों तो अनागामिता। यह कैसे होगा? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु...पूर्ववत्...अस्थिसंज्ञायुक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। यों वह यह भावना करता हुआ

फलानं अञ्ञतरं फलं पाटिकङ्खं—दिट्ठेव धम्मे अञ्ञा, सति वा उपादिसेसे अनागामिता'' ति॥ ●

५९. महत्थसुत्तं

[R.130] ६२. ''अट्ठिकसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महतो अत्थाय संवत्तति। कथं भाविता च, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञा कथं बहुलीकता महतो अत्थाय संवत्तति? इध, भिक्खवे, भिक्खु अट्ठिकसञ्ञासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...अट्ठिकसञ्ञासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं भाविता खो, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञा एवं बहुलीकता महतो अत्थाय संवत्तती'' ति॥ ●

६०. योगक्खेमसुत्तं

६३. ''अट्ठिकसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महतो योगक्खेमाय संवत्तति। कथं भाविता च, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञा कथं बहुलीकता महतो योगक्खेमाय संवत्तति? इध, भिक्खवे, भिक्खु अट्ठिकसञ्ञासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...अट्ठिकसञ्ञासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं भाविता खो, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञा एवं बहुलीकना महतो योगक्खेमाय संवत्तती'' ति॥ ●

इन दोनों में से कोई एक फल अवश्य प्राप्त करता है, जैसे—१. परमज्ञान, या फिर २. अनागामिता''॥ ●

५९. महार्थसूत्र : : महान् अर्थसाधक

६२. ...''भिक्षुओ! इस अस्थिसंज्ञा की भावना करने से यह बहुत अर्थ की साधिका होती है। वह कैसे? भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु...पूर्ववत्...अस्थिसंज्ञायुक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...अस्थिसंज्ञायुक्त उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। इस तरह, वह इस को अपने लिये यह भावना करता हुआ बहुत अर्थकरी सिद्ध पाता है''॥ ●

६०. योगक्षेमसूत्र : : योगक्षेम की पूर्णता

६३. ...''भिक्षुओ! इस अस्थिसंज्ञा की भावना से यह हमारे योग (अप्राप्त की प्राप्ति) एवं क्षेम (प्राप्त की रक्षा) की अधिगति में बहुत अधिक सहायक होती है। वह कैसे? यहाँ कोई भिक्षु...पूर्ववत्...अस्थिसंज्ञायुक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की...अस्थिसंज्ञायुक्त उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। इस तरह, वह अस्थिसंज्ञा की भावना बहुत अधिक योग एवं क्षेम के उत्पाद में सहायक होती है॥'' ●

६१. संवेगसुत्तं

६४. ''अट्ठिकसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महतो संवेगाय संवत्तति। कथं भाविता च, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञा कथं बहुलीकता महतो संवेगाय संवत्तति? इध, भिक्खवे, भिक्खु अट्ठिकसञ्ञासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...[N.115] अट्ठिकसञ्ञासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं भाविता खो, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञा एवं बहुलीकता महतो संवेगाय संवत्तती'' ति॥ ●

६२. फासुविहारसुत्तं

६५. ''अट्ठिकसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महतो [B.115, R.131] फासुविहाराय संवत्तति। कथं भाविता च, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञा कथं बहुलीकता महतो फासुविहाराय संवत्तति? इध, भिक्खवे, भिक्खु अट्ठिकसञ्ञासहगतं सति-सम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...अट्ठिकसञ्ञासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेक-निस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं भाविता खो, भिक्खवे, अट्ठिकसञ्ञा एवं बहुलीकता महतो फासुविहाराय संवत्तती'' ति॥ ●

६३. पुळवकसुत्तं

६६. पुळवकसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता...पे०...॥ ●

६४. विनीलकसुत्तं

६७. विनीलकसञ्ञा, भिक्खवे...पे०...॥ ●

---

६१. संवेगसूत्र : : महान् संवेग (वैराग्य)

६४. ...''भिक्षुओ! यह अस्थिसंज्ञा की भावना हमारे संवेग (वैराग्य) में अत्यधिक सहयोगकारक है। वह कैसे? यहाँ कोई भिक्षु...पूर्ववत्...अस्थिसंज्ञायुक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। इससे यह अस्थिसंज्ञा की भावना संवेगप्राप्ति में बहुत सहायक होती है॥'' ●

६२. स्पर्शविहारसूत्र : : सहज साधना में सहायक

६५. ''भिक्षुओ! यह अस्थिसंज्ञा की भावना हमारी सहजसाधना (स्पर्शविहार) में अत्यधिक सहायक होती है...पूर्ववत्...''॥ ●

६३. पुळवकसूत्र : : पुळवकभावना

६६. ''भिक्षुओ! पुळवक (मल का कीट) संज्ञा भावना करने से...पूर्ववत्...॥●

६५. विच्छिद्दकसुत्तं

६८. विच्छिद्दकसञ्ञा, भिक्खवे...पे०... ॥ ●

६६. उद्धुमातकसुत्तं

६९. उद्धुमातकसञ्ञा, भिक्खवे...पे०... ॥ ●

६७. मेत्तासुत्तं

७०. मेत्ता, भिक्खवे, भाविता...पे०... ॥ ●

६८. करुणासुत्तं

७१. करुणा, भिक्खवे, भाविता...पे०... ॥ ●

६९. मुदितासुत्तं

[N.116] ७२. मुदिता, भिक्खवे, भाविता...पे०... ॥ ●

७०. उपेक्खासुत्तं

[B.116] ७३. उपेक्खा, भिक्खवे, भाविता...पे०... ॥ ●

---

६४. विनीलकसूत्र : : विनीलकभावना

६७. ''भिक्षुओ! विनीलक (नीले पड़ गये मृतशव में कीट) संज्ञा की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥ ●

६५. विच्छिद्रकसूत्र : : विच्छिद्रकभावना

६८. ''भिक्षुओ! विच्छिद्रक (छिन्न विच्छिन्न हुए शव) संज्ञा की भावना करने से ...पूर्ववत्... ॥ ●

६६. उद्धूमातकसूत्र : : उद्धूमातकभावना

६९. ''भिक्षुओ! उद्धूमातक (फूले हुए शव) संज्ञा की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥●

६७. मैत्रीसूंत्र : : मैत्रीभावना

७०. ''भिक्षुओ! मैत्रीसहगत चित्तविमुक्ति की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥ ●

६८. करुणासूत्र : : करुणाभावना

७१. ''भिक्षुओ! करुणासहगत चित्तविमुक्ति की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥●

६९. मुदितासूत्र : : मुदिताभावना

७२. ''भिक्षुओ! मुदितासहगत चित्तविमुक्ति की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥●

७०. उपेक्षासूत्र : : उपेक्षाभावना

७३. ''भिक्षुओ! उपेक्षासहगत चित्तविमुक्ति की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥●

७१. आनापानस्सतिसुत्तं

७४. आनापानस्सति, भिक्खवे, भाविता...पे०... ॥ [R.132] ●

आनापानवग्गो सत्तमो ॥

तस्सुद्दानं

अट्ठिकपुळवकं विनीलकं विच्छिद्दकं, उद्धुमातेन पञ्चमं।
मेत्ता करुणा मुदिता उपेक्खा, आनापानेन ते दसा ति॥ ●

---

७१. आनापानसूत्र : : आनापानभावना

७४. ''भिक्षुओ! आनापानस्मृति (आश्वासप्रश्वासस्मृति) की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥ ●

आनापानवर्ग सप्तम सम्पन्न ॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. अस्थिकसूत्र, २. पुळवकसूत्र, ३. विनीलकसूत्र, ४. विच्छिद्रकसूत्र, ५. उद्धमातसूत्र, ६. मैत्रीसूत्र, ७. करुणासूत्र, ८. मुदितासूत्र, ९. उपेक्षासूत्र एवं १०. आनापानसूत्र॥ ●

८. निरोधवग्गो अट्ठमो

७२. असुभसुत्तं

७५. असुभसञ्ञा, भिक्खवे...पे०... ॥ •

७३. मरणसुत्तं

७६. मरणसञ्ञा, भिक्खवे...पे०... ॥ •

७४. आहारेपटिकूलसुत्तं

७७. आहारे पटिकूलसञ्ञा, भिक्खवे...पे०... ॥ •

७५. अनभिरतिसुत्तं

७८. सब्बलोके अनभिरतिसञ्ञा, भिक्खवे...पे०... ॥ •

७६. अनिच्चसुत्तं

७९. अनिच्चसञ्ञा, भिक्खवे...पे०... ॥ •

७७. दुक्खसुत्तं

८०. अनिच्चं दुक्खसञ्ञा, भिक्खवे...पे०... ॥ •

७८. अनत्तसुत्तं

[N.117, B.117, R.133] ८१. दुक्खे अनत्तसञ्ञा, भिक्खवे...पे०... ॥ •

---

८. निरोधवर्ग अष्टम

७२. अशुभसूत्र : : (शरीर में) अशुभसंज्ञा

७५. "भिक्षुओ! काया में अशुभसंज्ञा की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥ •

७३. मरणसूत्र : : मरणसंज्ञा

७६. "भिक्षुओ! मरणसंज्ञा की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥ •

७४. 'आहार में प्रतिकूल' सूत्र : : आहार में प्रतिकूलभावना

७७. "भिक्षुओ! आहार में प्रतिकूलसंज्ञा की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥ •

७५. अनभिरतिसूत्र : : अनभिरतिभावना

७८. "भिक्षुओ! समस्त संसार में अनासक्ति (अनभिरति) रखने से...पूर्ववत्... ॥•

७६. अनित्यसूत्र : : अनित्यसंज्ञाभावना

७९. "भिक्षुओ! 'अनित्य' संज्ञा की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥ •

७७. दुःखसूत्र : : दुःखसंज्ञाभावना

८०. "भिक्षुओ! 'दुःख' संज्ञा की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥ •

७८. अनात्मसूत्र : : अनात्मसंज्ञाभावना

८१. "भिक्षुओ! 'अनात्म' संज्ञा की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥ •

७९. पहानसुत्तं

८२. पहानसञ्ञा, भिक्खवे...पे०... ॥ •

८०. विरागसुत्तं

८३. विरागसञ्ञा, भिक्खवे...पे०... ॥ •

८१. निरोधसुत्तं

८४. "निरोधसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा। कथं भाविता च, भिक्खवे, निरोधसञ्ञा कथं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा? इध, भिक्खवे, भिक्खु निरोधसञ्ञासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...निरोध-सञ्ञासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं भाविता खो, भिक्खवे, निरोधसञ्ञा एवं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा ति।

"निरोधसञ्ञाय, भिक्खवे, भाविताय बहुलीकताय द्विन्नं फलानं अञ्ञतरं फलं पाटिकङ्खं—दिट्ठेव धम्मे अञ्ञा, सति वा उपादिसेसे अनागामिता। कथं भाविताय, भिक्खवे, निरोधसञ्ञाय कथं बहुलीकताय द्विन्नं फलानं अञ्ञतरं फलं पाटिकङ्खं—दिट्ठेव धम्मे अञ्ञा, सति वा उपादिसेसे अनागामिता? इध, भिक्खवे, भिक्खु निरोधसञ्ञासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...निरोधसञ्ञासहगतं उपेक्खा-सम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं।

---

७९. प्रहाणसूत्र : : प्रहाणसंज्ञाभावना

८२. "भिक्षुओ! 'प्रहाण' संज्ञा की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥ •

८०. विरागसूत्र : : विरागसंज्ञाभावना

८३. "भिक्षुओ! 'वैराग्य' संज्ञा की भावना करने से...पूर्ववत्... ॥ •

८१. निरोधसूत्र : : निरोधसंज्ञाभावना

८४. "भिक्षुओ! निरोधसंज्ञा की भावना तथा अभ्यास करने से वह बहुत फलदायी होती है। वह कैसे? यहाँ, भिक्षुओ! विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागयुक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग ...पूर्ववत्... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करने से, यह भावना बहुत फलदायी एवं बहुत गुणों का प्रसार करने वाली है।

"निरोधसंज्ञा की भावना एवं अभ्यास से दो फलों की सम्भावना की जा सकती है; जैसे—१. इसी जन्म में परम ज्ञान, या प्रारब्धवश वह मिलना असम्भव हो तो २. अनागामिता। वह कैसे? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु...निरोधसंज्ञासहगत स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। उस से उसे दो ही फलों की सम्भावना करनी

एवं भाविताय खो, भिक्खवे, निरोधसञ्ञाय एवं बहुलीकताय द्विन्नं फलानं अञ्ञतरं फलं पाटिकङ्खं—दिट्ठेव धम्मे अञ्ञा, सति वा उपादिसेसे अनागामिता ति॥

"निरोधसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महतो अत्थाय संवत्तति, महतो योगक्खेमाय संवत्तति, महतो संवेगाय संवत्तति, महतो फासुविहाराय संवत्तति। कथं [N.118, B.118, R.134] भाविता च, भिक्खवे, निरोधसञ्ञा कथं बहुलीकता महतो अत्थाय संवत्तति, महतो योगक्खेमाय संवत्तति, महतो संवेगाय संवत्तति, महतो फासुविहाराय संवत्तति? इध, भिक्खवे, भिक्खु निरोधसञ्ञासहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...निरोधसञ्ञासहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विराग-निस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं भाविता खो, भिक्खवे, निरोधसञ्ञा एवं बहुलीकता महतो अत्थाय संवत्तति, महतो योगक्खेमाय संवत्तति, महतो संवेगाय संवत्तति, महतो फासुविहाराय संवत्तति" ति॥

निरोधवग्गो अट्ठमो॥

तस्सुद्दानं

असुभमरणआहारे, पटिकूलअनभिरतेन।
अनिच्चदुक्खअनत्तपहानं, विरागनिरोधेन ते दसा॥ ति॥

—※—

चाहिये; जैसे—१. इसी जन्म में परम ज्ञान, या फिर वह प्रारब्धवश न मिले तो २. अनागामिता (अपर जन्म का न होना)।

"निरोधसंज्ञा के अभ्यास से महान् योगक्षेम, महान् संवेग, महती सहजसाधना प्रादुर्भूत हो जाती है। वह कैसे? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग युक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। यह भावना तथा इस का अभ्यास महान् अर्थसाधक, महान् संवेगकारक तथा अत्यधिक सहज साधना में बहुत उपयोगी होते हैं॥"

निरोधवर्ग अष्टम समाप्त॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. अशुभसूत्र, २. मरणसूत्र, ३. आहार में प्रतिकूलसूत्र, ४. अनभिरतिसूत्र, ५. अनित्यसूत्र, ६. दुःखसूत्र, ७. अनात्मसूत्र, ८. प्रहाणसूत्र, ९. विरागसूत्र एवं १०. निरोधसूत्र॥

—※—

९. गङ्गापेय्यालवग्गो नवमो

८२-९३ गङ्गानदीआदिसुत्तं

८५-९५. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सत्त बोज्झङ्गे भावेन्तो सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सत्त बोज्झङ्गे भावेन्तो सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्ग-परिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सत्त बोज्झङ्गे भावेन्तो सत्त बोज्झङ्गे बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति। ●

(याव एसना पालि वित्थारेतब्बा।) ॥

गङ्गापेय्यालवग्गो नवमो ॥

तस्सुद्दानं

छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो। [B.119, R.135]
द्वेते छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥ ●

---

९. गङ्गापेय्यालवर्ग नवम

८२-९३. गङ्गानदीआदिसूत्र (प्राचीनसूत्र) : : निर्वाण की ओर बढ़ना

८५-९६. जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्व की ओर ही बहती है, पूर्व की ओर ही बढती है, पूर्व की ओर ही उस का झुकाव रहता है; उसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु सात बोध्यङ्गों की भावना करता हुआ निर्वाण की ओर ही बढता हैं, निर्वाण की ओर ही प्रगति करता है, निर्वाण की ओर ही उस का झुकाव रहता है। वह कैसे? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग युक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है...पूर्ववत्...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है; यों वह निर्वाण की ओर बढता है, निर्वाण की ओर प्रगति करता है, निर्वाण की ओर ही उस का झुकाव रहता है॥'' ●

[उपरिदर्णित गङ्गापेय्यालवर्ग के एषणासूत्र तक यहाँ विस्तार कर लेना चाहिये।]

गङ्गापेय्यालवर्ग नवम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—छह सूत्र पूर्व की ओर का वर्णन करने वाले तथा छह सूत्र समुद्र की ओर का वर्णन करने वाले; इस तरह बारह सूत्रों का यहाँ वर्णन है॥ ●

१०. अप्पमादवग्गो दसमो

९४-१०३. तथागतादिसुत्तं

९६-१०६. यावता, भिक्खवे, सत्ता अपदा वा द्विपदा वा चतुप्पदा वा बहुप्पदा वा ति *(वित्थारेतब्बं)* ॥ •

अप्पमादवग्गो दसमो ॥

तस्सुद्दानं

[N.119] तथागतं पदं कूटं, मूलं सारेन वस्सिकं।
राजा चन्दिमसुरिया च, वत्थेन दसमं पदं ति॥ •

(अप्पमादवग्गो बोज्झङ्गसंयुत्तस्स बोज्झङ्गवसेन वित्थारेतब्बो।)

---

१०. अप्रमादवर्ग दशम

९४-१०३. तथागतादिसूत्र : : अप्रमाद ही साधना का आधार है

९७-१०६. ''भिक्षुओ! संसार में जितने भी प्राणी, विना पैरों वाले, दो पैरों वाले, चार पैरों वाले या बहुत से पैरों वाले...पूर्ववत्... ॥ •

अप्रमादवर्ग दशम सम्पन्न ॥

[बोध्यङ्ग लगाकर समस्त अप्रमादवर्ग के सूत्रों का विस्तार यहाँ कर लेना चाहिये।]

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. तथागतसूत्र, २. पदसूत्र, ३. कूटागारसूत्र ४. मूलगन्धसूत्र, ५. सारगन्धसूत्र, ६. पुष्पगन्धसूत्र, ७. चक्रवर्तिसूत्र, ८. चन्द्रमासूत्र, ९. सूर्यसूत्र एवं १०. काशिकेय वस्त्रसूत्र ॥ •

११. बलकरणीयवग्गो एकादसमो

१०४-११५. बलादिसुत्तं

१०७-११८. सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि बलकरणीया कम्मन्ता करीयन्ती ति *(वित्थारेतब्बं)* ॥ ●

बलकरणीयवग्गो एकादसमो ॥

तस्सुद्दानं

बलं बीजं च नागो च, रुक्खो कुम्भेन सूकिया। [R.136]
आकासेन च द्वे मेघा, नावा आगन्तुका नदी ति॥ ●

(बलकरणीयवग्गो बोज्झङ्गसंयुत्तस्स बोज्झङ्गवसेन वित्थारेतब्बो)

---

११. बलकरणीयवर्ग

१०४-११५. बलादिसूत्र : : बल

१०७-११८. जैसे, भिक्षुओ! यहाँ जितने भी कार्य बल के आधार पर किये जाते हैं वे सभी पृथ्वी के आधार पर ही किये जाते हैं...पूर्ववत्... ॥ ●

बलकरणीयवर्ग एकादश सम्पन्न ॥

[पूर्ववर्णित बलकरणीयवर्ग का बोध्यङ्ग लगाकर विस्तार कर लेना चाहिये।]

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. बलसूत्र, २. बीजसूत्र, ३. नागसूत्र, ४. वृक्षसूत्र, ५. कुम्भसूत्र, ६. शूकसूत्र, ७. आकाशसूत्र, ८. प्रथम मेघसूत्र, ९. द्वितीय मेघसूत्र, १०. नौसूत्र, ११. आगन्तुकसूत्र एवं १२. नदीसूत्र॥ ●

१२. एसनावग्गो द्वादसमो

११६-१२४. एसनादिसुत्तं

[B.120] ११९-१२७. तिस्सो इमा, भिक्खवे, एसना। कतमा तिस्सो? कामेसना, भवेसना, ब्रह्मचरियेसना ति *(वित्थारेतब्बं)*॥

एसनावग्गो द्वादसमो॥

तस्सुद्दानं

एसना विधा आसवो, भवे च दुक्खता तिस्सो।
खिलं मलं च नीघो च, वेदना तण्हा तसिनाय चा ति॥

(बोज्झङ्गसंयुत्तस्स एसना पेय्यालं विवेकनिस्सिततो वित्थारेतब्बं।)

---

१२. एषणावर्ग

११६-१२४. एषणादिसूत्र : : त्रिविध एषणा

११९-१२७. ''भिक्षुओ! एषणाएँ तीन हैं। कौन सी तीन? जैसे—१. कामैषणा, २. भवैषणा एवं ३. ब्रह्मचर्यैषणा। ...पूर्ववत्...॥

[समस्त एषणावर्ग का बोध्यङ्ग लगाकर विस्तार कर लेना चाहिये।]

एषणावर्ग द्वादश सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची— १. एषणासूत्र, २. विधासूत्र, ३. आश्रवसूत्र, ४. भवसूत्र, ५. दु:खतासूत्र, ६. खिलसूत्र, ७. मलसूत्र, ८. नीघसूत्र, ९. वेदनासूत्र, १०. तृष्णासूत्र एवं ११. तर्षणसूत्र॥

१३. ओघवग्गो तेरसमो

१२५-१३३. ओघादिसुत्तं

१२८-१३६. चत्तारोमे, भिक्खवे, ओघा। कतमे चत्तारो? कामोघो, भवोघो, दिट्ठोघो, अविज्जोघो ति *(वित्थारेतब्बं)*॥ •

१३४. उद्धम्भागियसुत्तं

१३७. सावत्थिनिदानं। ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—[N.120, R.137] इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय सत्त बोज्झङ्गा भावेतब्बा। कतमे सत्त? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं अमतोगधं अमत-परायनं अमतपरियोसानं...निब्बाननिन्नं निब्बानपोणं निब्बानपब्भारं। इमेसं खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय इमे सत्त बोज्झङ्गा भावेतब्बा'' ति॥ •

ओघवग्गो तेरसमो॥

---

१३. ओघवर्ग त्रयोदश

१२५-१३३. ओघादिसूत्र : : चार औघ (बाढ)

१२८-१३६. ...भिक्षुओ! ये चार औघ हैं। कौन से चार? कामौघ, भवौघ, दृष्ट्यौघ एवं अविद्यौघ। ...पूर्ववत्... ॥ *(विस्तार कर लें।)* •

१३४. ऊर्ध्वभागीयसूत्र : : ऊपरिभाग के संयोजन

१३७. ...**श्रावस्ती में** ही...। भिक्षुओ! ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। कौन से पाँच? जैसे—१. रूपराग, २. अरूपराग, ३. मान, ४. औद्धत्य एवं ५. अविद्या। भिक्षुओ! ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। इन पाँचों ऊर्ध्वभागीय संयोजनों को जानने, परिज्ञात करने, परिक्षीण करने एवं प्रहाण के लिये सात बोध्यङ्गों की भावना करनी चाहिये। कौन से सात? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग। यहाँ, भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु विवेक...राग द्वेष एवं मोह की निवृत्ति के लिये अमृतमय, अमृत तक पहुँचाने वाले तथा निर्वाणमय, निर्वाण तक पहुँचाने वाले स्मृतिसम्बोध्यङ्ग ...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। यों, भिक्षुओ! इन पाँच संयोजनों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये इन सात बोध्यङ्गों की भावना करनी चाहिये'' •

औघवर्ग त्रयोदश सम्पन्न॥

तस्सुद्दानं

[B.121] ओघो योगो उपादानं, गन्था अनुसयेन च।
कामगुणा नीवरणा, खन्धा ओरुद्धम्भागियानी॥ ति॥ •

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. औघसूत्र, २. योगसूत्र, ३. उपादानसूत्र, ४. ग्रन्थसूत्र, ५. अनुशयसूत्र, ६. कामगुणसूत्र, ७. नीवरणसूत्र, ८. उपादानस्कन्धसूत्र, ९. अवरभागीयसूत्र एवं १०. ऊर्ध्वभागीयसूत्र॥ •

१४. पुनगङ्गापेय्यालवग्गो चुद्दसमो

१३५-१४६. पुनगङ्गानदीआदिसुत्तं

वग्गो चुद्दसमो॥

उद्दानं

छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो। [R.138]
द्वेते छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥ ●

(बोज्झङ्गसंयुत्तस्स गङ्गापेय्यालं रागवसेन वित्थारेतब्बं।)

---

१४. गङ्गापेय्यालवर्ग चतुर्दश

१३५-१४६. पुनः गङ्गानदीआदिसूत्र : : निर्वाण की ओर बढ़ना

[इस वर्ग का **मार्गसंयुक्त** *में पठित इस नाम के वर्ग के समान ही यहाँ भी 'रागवश' के सहारे से अविकल विस्तार कर लेना चाहिये।]* ●

गङ्गापेय्यालवर्ग चतुर्दश सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—छह 'पूर्व की ओर' तथा छह 'समुद्र की ओर' इस तरह बारह सूत्रों का वर्णन इस वर्ग में हुआ है॥ ●

१५. अप्पमादवग्गो पन्नरसमो

१४७-१५६. तथागतादिसुत्तं

वग्गो पन्नरसमो॥

उद्दानं

तथागतं पदं कूटं, मूलं सारेन वस्सिकं।
राजा चन्दिमसुरिया च, वत्थेन दसमं पदं ति॥

(अप्पमादवग्गो रागवसेन वित्थारेतब्बो।)

---

१५. अप्रमादवर्ग पञ्चदश

१४७-१५६. तथागतादिसूत्र : : **बल का आधार**

[बोध्यङ्गसंयुक्त के इस अप्रमादवर्ग के सभी सूत्रों का 'रागादिवश' लगा कर यहाँ भी मार्गसंयुक्त के अप्रमादवर्ग के सूत्रों के समान विस्तार कर लेना चाहिये।]

अप्रमादवर्ग पञ्चदश सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची— १. तथागतसूत्र, २. पदसूत्र, ३. कूटागारसूत्र, ४. मूलगन्धसूत्र, ५. सारगन्धसूत्र, ६. पुष्पगन्धसूत्र, ७. चक्रवर्तिसूत्र, ८. चन्द्रमासूत्र, ९. सूर्यसूत्र एवं १०. काशिकेय वस्त्रसूत्र॥

१६. बलकरणीयवग्गो सोलसमो

१५७-१६८. पुनबलादिसुत्तं [N.121]

वग्गो सोळसमो॥

उद्दानं

बलं बीजं च नागो च, रुक्खो कुम्भेन सूकिया। [B.122]
आकासेन च द्वे मेघा, नावा आगन्तुका नदी ति॥ •

(बोज्झङ्गसंयुत्तस्स बलकरणीयवग्गो रागवसेन वित्थारेतब्बो।)

---

१६. बलकरणीयवर्ग षोडश

१५७-१६८. पुनः बलादिसूत्र : : शील का आधार

[इस बलकरणीय वर्ग के सूत्रों का भी **मार्गसंयुक्त** *के बलकरणीय वर्ग के समान ही अविकल विस्तार कर लेना चाहिये।]* •

बलकरणीयवर्ग षोडश सम्पन्न॥

इस सूत्र में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. बलसूत्र, २. बीजसूत्र, ३. नागसूत्र, ४. वृक्षसूत्र, ५. कुम्भसूत्र, ६. शूकसूत्र, ७. आकाशसूत्र, ८. प्रथम मेघसूत्र, ९. द्वितीय मेघसूत्र, १०. नौसूत्र, ११. आगन्तुकसूत्र एवं १२. नदीसूत्र॥ •

१७. पुनएसनावग्गो सत्तरसमो

१६९-१७९. पुनएसनादिसुत्तं

पुनएसनावग्गो सत्तरसमो॥

उद्दानं

[R.139] एसना विधा आसवो, भवो च दुक्खता तिस्सो।
खिलं मलं च नीघो च, वेदना तण्हा तसिनाय चा ति॥ ●

---

१७. पुनः एषणावर्ग सप्तदश

१६९-१७९. पुनःएषणादिसूत्र : : त्रिविध एषणा आदि

[इस एषणावर्ग के सभी सूत्रों का भी मार्गसंयुक्त में वर्णित एषणावर्ग के सूत्रों के समान अविकल अनुवाद समझना चाहिये।] ●

पुनःएषणावर्ग सप्तदश सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. एषणासूत्र, २. विधासूत्र, ३. आश्रवसूत्र, ४. भवसूत्र, ५. दुःखतासूत्र, ६. खिलसूत्र, ७. मलसूत्र, ८. नीघसूत्र, ९. वेदनासूत्र, १०. तृष्णासूत्र एवं ११. तर्षणासूत्र॥ ●

१८. पुनओघवग्गो अट्ठारसमो

१८०-१८९. पुनओघादिसुत्तं

बोज्झङ्गसंयुत्तस्स पुनओघवग्गो अट्ठारसमो॥

उद्दानं

ओघो • योगो उपादानं, गन्था अनुसयेन च। [R.140]
कामगुणा नीवरणा, खन्धा ओरुद्धम्भागियानी ति॥ ●

(रागविनयपरियोसान-दोसविनयपरियोसान-मोहविनयपरियोसानवग्गो वित्थारेतब्बो।)

(यदपि मग्गसंयुत्तं वित्थारेतब्बं तदपि बोज्झङ्गसंयुत्तं वित्थारेतब्बं।)

बोज्झङ्गसंयुत्तं समत्तं॥

---

१८. पुनः ओघादिवर्ग अष्टादश

१६९-१८९. पुनःओघादिसूत्र : : चार औघ आदि

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. औघसूत्र, २. योगसूत्र, ३. उपादानसूत्र, ४. ग्रन्थसूत्र, ५. अनुशयसूत्र, ६. कामगुणसूत्र, ७. नीवरणसूत्र, ८. उपादानस्कन्धसूत्र, ९. अवरभागीयसूत्र एवं १०. ऊर्ध्वभागीयसूत्र॥ ●

[जैसा मार्गसंयुक्त में कह आये हैं तदनुसार यहाँ भी सम्बद्ध सूत्रों का विस्तार 'रागविनय' आदि लगा कर कर लेना चाहिये॥]

बोध्यङ्गसंयुक्त समाप्त॥

४७. सतिपट्ठानसंयुत्तं

१. अम्बपालिवग्गो पठमो

१. अम्बपालिसुत्तं

[N.122, B.123, R.141] १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति अम्बपालिवने। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"भिक्खवो" ति। "भदन्ते" ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

"एकायन्वायं, भिक्खवे, मग्गो सत्तानं विसुद्धिया, सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय, दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय, ञायस्स अधिगमाय, निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना। कतमे चत्तारो। इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु वेदनानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; चित्ते चित्तानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झा-दोमनस्सं; धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एकायन्वायं, भिक्खवे, मग्गो सत्तानं विसुद्धिया, सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय, दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय, ञायस्स अधिगमाय, निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना" ति।

---

४७. स्मृतिप्रस्थानसंयुक्त

१. आम्रपालिवर्ग प्रथम

१. आम्रपालिसूत्र : : चार स्मृतिप्रस्थान

१. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **वैशाली के** आम्रपालिवन में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ, भगवान् ने भिक्षुओं को यों कहा—"भिक्षुओ! प्राणियों की चित्तविशुद्धि के लिये, उन के शोक, परिदेव आदि के प्रशमनहेतु, दुःख एवं दौर्मनस्य के नाशहेतु, ज्ञानप्राप्तिहेतु एवं निर्वाण के साक्षात्कारहेतु एकमात्र यही उपाय (मार्ग) बताया गया है; जैसे—चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना करना। कौन से चार? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर साधना करता है स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ हो कर, सांसारिक लोभ एवं दौर्मनस्य को तथा अभिध्या एवं दौर्मनस्य को दबा कर। इसी तरह, (२) वेदना में वेदनानुपश्यी हो कर, (३) चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर तथा (४) धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर स्मृतिमान्...पूर्ववत्...दौर्मनस्य को दबा कर। भिक्षुओ! यही

२. इदमवोच भगवा। अत्तमना ते भिक्खू भगवतो भासितं अभिनन्दुं ति॥ •

२. सतिसुत्तं

३. एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति अम्बपालिवने। तत्र खो भगवा [R.142] भिक्खू आमन्तेसि—"भिक्खवो" ति। "भदन्ते" ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

"सतो, भिक्खवे, भिक्खु विहरेय्य सम्पजानो। अयं वो अम्हाकं अनुसासनी। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सतो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये [B.124] कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो [N.123] सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सतो होति।

"कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सम्पजानो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु अभिक्कन्ते पटिक्कन्ते सम्पजानकारी होति, आलोकिते विलोकिते सम्पजानकारी होति, सम्मिञ्जिते पसारिते सम्पजानकारी होति, सङ्घाटिपत्तचीवरधारणे सम्पजानकारी होति, असिते पीते खायिते सायिते सम्पजानकारी होति, उच्चारपस्सावकम्मे सम्पजानकारी होति, गते ठिते निसिन्ने सुत्ते जागरिते भासिते तुण्हीभावे सम्पजानकारी होति। एवं खो, भिक्खवे,

---

एकमात्र मार्ग जिस से प्राणियों की चित्तविशुद्धि हो सकती है...निर्वाण का साक्षात्कार हो सकता है कि इन चार स्मृतिप्रस्थानों की साधना की जाय।"

२. भगवान् ने यों कहा, तथा भिक्षुओं ने उन के भाषण का अभिनन्दन किया॥ •

२. स्मृतिसूत्र : : स्मृतिपूर्वक साधना

३. एक समय...पूर्ववत्...भिक्षुओं को यों कहा—

"भिक्षुओ! साधक भिक्षु को स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ रहते हुए साधना करनी चाहिये। यही हमारा उपदेश है, यही हमारा आदेश है। भिक्षुओ! भिक्षु कैसे स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ रह कर साधना करे? भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु काय में कायानुपश्यी हो कर...वेदना में वेदनानुपश्यी हो कर...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...एवं धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...। यों साधना करने वाला भिक्षु 'स्मृतिमान्' कहलाता है।

"तथा भिक्षुओ! वह 'सम्प्रज्ञ' कैसे कहलाता है? भिक्षुओ! यहाँ वह भिक्षु 'सम्प्रज्ञ' कहलाता है जो भिक्षु आते जाते, देखते भालते, समेटते पसारते, संघाटी एवं पात्रचीवर को धारण करते हुए जानता रहता है; इसी तरह खाते पीते, चबाते चाटते, मलोत्सर्ग या मूत्रोत्सर्ग करते हुए... इसी तरह, चलते ठहरते, सोते जागते, बैठते ऊठते,

भिक्खु सम्पजानकारी होति। सतो, भिक्खवे, भिक्खु विहरेय्य सम्पजानो। अयं वो अम्हाकं अनुसासनी'' ति॥ •

३. भिक्खुसुत्तं

४. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''साधु मे, [R.143] भन्ते, भगवा सङ्खित्तेन धम्मं देसेतु, यमहं भगवतो धम्मं सुत्वा एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरेय्यं'' ति।

''एवमेव पनिधेकच्चे मोघपुरिसा मञ्चेव अज्झेसन्ति, धम्मे च भासिते ममेव अनुबन्धितब्बं मञ्ञन्ती'' ति।

''देसेतु मे, भन्ते, भगवा सङ्खित्तेन धम्मं, देसेतु सुगतो सङ्खित्तेन धम्मं। अप्पेव नामाहं भगवतो भासितस्स अत्थं जानेय्यं, अप्पेव नामाहं भगवतो भासितस्स दायादो अस्सं'' ति।

''तस्मातिह त्वं, भिक्खु, आदिमेव विसोधेहि कुसलेसु धम्मेसु। को चादि

बोलते चुप रहते हुए भी इन क्रियाओं पर ध्यान रखता है। भिक्षुओ! ऐसा करता हुआ वह भिक्षु 'सम्प्रज्ञ' कहलाता है। इस तरह, भिक्षुओ! तुम्हें साधना करनी चाहिये। यही हमारा तुम को उपदेश है, यही हमारा अनुशासन (आदेश) है''॥ •

३. भिक्षुसूत्र : : चार स्मृतिप्रस्थान

४. एक समय भगवान् **श्रावस्ती के** जेतवन में साधनाहेतु विराजमान थे। तब कोई भिक्षु भगवान् के पास आया, तथा भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठा हुआ वह भिक्षु भगवान् से यों निवेदन करने लगा—''अच्छा होता, भन्ते! कि भगवान् मुझे कुछ ऐसा संक्षिप्त धर्मोपदेश करते, जिस के आधार पर मैं एकान्त में रह कर अप्रमत्त एवं उद्योगी बन कर इन्द्रियसंवरण के साथ अपनी साधना को आगे बढा पाता।''

''कुछ मूर्खजन मेरी ही आज्ञा की प्रतीक्षा करते रहते हैं, या फिर धर्मोपदेश कर देने के बाद भी मेरे ही पीछे लगे रहते हैं!''

''भन्ते! आप मुझ पर, अनुकम्पा कर मुझे धर्मोपदेश करें, जिस से मैं आप के उस उपदेश के आश्रय से, उस का अर्थ भली भाँति जान कर साधना कर सकूँ, जिस के फलस्वरूप आप का धार्मिक उत्तराधिकारी बन सकूँ।''

''भिक्षु! यदि ऐसी बात है तो तुम सर्वप्रथम कुशल धर्मों के आदि की ही शुद्धि

कुसलानं धम्मानं? सीलं च सुविसुद्धं, दिट्ठि च उजुका। यतो खो ते, भिक्खु, सीलं च सुविसुद्धं भविस्सति दिट्ठि च उजुका, ततो त्वं, भिक्खु, सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय चत्तारो सतिपट्ठाने तिविधेन भावेय्यासि।' कतमे चत्तारो? इध त्वं, भिक्खु, [B.125] अज्झत्तं वा काये कायानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; बहिद्धा वा काये कायानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो [N.124] सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; अज्झत्तबहिद्धा वा काये कायानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। अज्झत्तं वा वेदनासु...बहिद्धा वा वेदनासु...अज्झत्तबहिद्धा वा वेदनासु वेदनानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। अज्झत्तं वा चित्ते... बहिद्धा वा चित्ते...अज्झत्तबहिद्धा वा चित्ते चित्तानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। अज्झत्तं वा धम्मेसु...बहिद्धा वा धम्मेसु... अज्झत्तबहिद्धा वा धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। यतो खो त्वं, भिक्खु, सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय इमे चत्तारो सतिपट्ठाने एवं तिविधेन भावेस्ससि, ततो तुय्हं, भिक्खु, या रत्ति वा दिवसो वा आगमिस्सति वुद्धि येव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानी'' ति।

करो। यह 'कुशलधर्मों का आदि' क्या है? सुविशुद्ध शील (आचार) एवं सरल (ऋजु) दृष्टि (धारणा)। भिक्षु! जब तुम्हारा यह शील भली भाँति शुद्ध हो जायगा तथा तुम्हारी यह दृष्टि सरल हो जायगी तो तुम, भिक्षु! इस शील के आधार पर, शील पर प्रतिष्ठित हो कर चारों स्मृतिप्रस्थानों की त्रिविध साधना करने में समर्थ हो सकोगे। कौन से चार? ''भिक्षु! यहाँ तुम आध्यात्मिक काया में कायानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...बाह्य काया में कायानुपश्यी हो कर...या फिर अध्यात्म एवं बाह्य दोनों तरह से काया में कायानुपश्यी हो कर स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ रहते हुए सांसारिक द्वेष एवं दौर्मनस्य को दबाते हुए इन्द्रियसंयम के साथ साधना में लगो। इसी तरह से पूर्वोक्त तीन वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...तथा इसी पूर्वोक्त तीन तरह से चित्त में चित्तानुपश्यी...एवं धर्म में धर्मानुपश्यी अपने सांसारिक द्वेष लोभ को दबाते हुए इन्द्रियसंयम के साथ साधना में लग जाओ। इस तरह, भिक्षु! तुम शील पर प्रतिष्ठित हो कर, शील को आधार मान कर इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की यह पूर्वोक्त त्रिविध साधना करोगे तो तुम्हारा आगे आने वाला दिन या आने वाली रात्रि—उन में तुम्हारी इन कुशलधर्मों में वृद्धि ही होगी, हानि की तो कोई सम्भावना ही नहीं।''

[R.144] अथ खो सो भिक्खु भगवतो भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि। अथ खो सो भिक्खु एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो नचिरस्सेव—यस्सत्थाय कुलपुत्ता सम्मदेव अगारस्मा अनगारियं पब्बजन्ति, तदनुत्तरं—ब्रह्मचरियपरियोसानं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। ''खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया'' ति अब्भञ्ञासि। अञ्ञतरो च पन सो भिक्खु अरहतं अहोसी ति॥

●

४. सालसुत्तं

५. एकं समयं भगवा कोसलेसु विहरति सालाय ब्राह्मणगामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि...पे०...एतदवोच—''ये ते, भिक्खवे, भिक्खू नवा अचिरपब्बजिता अधुनागता इमं धम्मविनयं, ते वो, भिक्खवे, भिक्खू चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावनाय [B.126] समादपेतब्बा निवेसेतब्बा पतिट्ठापेतब्बा। कतमेसं चतुन्नं? एथ तुम्हे, आवुसो, काये कायानुपस्सिनो विहरथ आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता एकग्गचित्ता, कायस्स यथाभूतं ञाणाय; वेदनासु वेदनानुपस्सिनो विहरथ

तब वह भिक्षु, भगवान् के इस भाषण का अभिनन्दन अनुमोदन करऽ उन्हें प्रणाम-प्रदक्षिणा कर (साधनाहेतु) चल दिया। तब वह भिक्षु एकान्त में, अप्रमत्त हो कर उत्साहपूर्वक साधना में उद्यम करता हुआ शीघ्र ही उस धर्मसाधना का अन्त पाने में सफल हो गया, जिस के लिये कोई भी कुलपुत्र घर से बेघर हो प्रव्रजित हुआ करते हैं। तथा इसी जन्म में स्वयं जान कर उस का साक्षात्कार कर साधना में ही लगा रहा; क्यों कि उसे यह अभिज्ञान हो गया—'मेरी जाति क्षीण हो चुकी है, मेरी धर्मसाधना पूर्ण हो गयी है, अब मेरा कोई कर्तव्य शेष नहीं है'। एक दिन उस भिक्षु की श्रेष्ठ अर्हतों में गणना होने लगी॥

●

४. शालासूत्र : : चार स्मृतिप्रस्थान

५. एक समय भगवान् (बुद्ध) कोसल प्रदेश के **शाला** नामक ब्राह्मणग्राम में साधनाहेतु विराजमान थे। उस अवसर पर भगवान् ने भिक्षुओं को यों उपदेश किया—''भिक्षुओ! तुम्हें इन नवप्रव्रजित भिक्षुओं को, जो अभी धर्म में दीक्षित हुए हैं उन को, चार स्मृतिप्रस्थानों के विषय में बताना चाहिये तथा उन को इस साधना में प्रवृत्त करना चाहिये, प्रतिष्ठित करना चाहिये। कौन से चार? 'आयुष्मानो! तुम काया में कायानुपश्यी हो कर साधना करो, क्लेशों को क्षीण करते हुए, स्मृतिमान्, सम्प्रज्ञ एवं एकाग्रचित्त रहते हुए श्रद्धायुक्त चित्त से समाहित हो जाओ, जिस के फलस्वरूप तुम्हें काया का यथार्थ ज्ञान

आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता एकग्गचित्ता, [N.125] वेदनानं यथाभूतं ञाणाय; चित्ते चित्तानुपस्सिनो विहरथ आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता एकग्गचित्ता, चित्तस्स यथाभूतं ञाणाय; धम्मेसु धम्मानुपस्सिनो विहरथ आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता एकग्गचित्ता, धम्मानं यथाभूतं ञाणाय।

"ये पि ते, भिक्खवे, भिक्खू सेखा अप्पत्तमानसा अनुत्तरं योगक्खेमं [R.145] पत्थयमाना विहरन्ति, ते पि काये कायानुपस्सिनो विहरन्ति आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता एकग्गचित्ता, कायस्स परिञ्ञाय; वेदनासु वेदनानुपस्सिनो विहरन्ति आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता एकग्गचित्ता, वेदनानं परिञ्ञाय; चित्ते चित्तानुपस्सिनो विहरन्ति आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता एकग्गचित्ता, चित्तस्स परिञ्ञाय; धम्मेसु धम्मानुपस्सिनो विहरन्ति आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता एकग्गचित्ता, धम्मानं परिञ्ञाय।

"ये पि ते, भिक्खवे, भिक्खू अरहन्तो खीणासवा वुसितवन्तो कतकरणीया ओहितभारा अनुप्पत्तसदत्था परिक्खीणभवसंयोजना सम्मदञ्ञा विमुत्ता, ते पि काये कायानुपस्सिनो विहरन्ति आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता एकग्गचित्ता, कायेन विसंयुत्ता; वेदनासु वेदनानुपस्सिनो विहरन्ति आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता एकग्गचित्ता, वेदनाहि विसंयुत्ता; चित्ते चित्तानुपस्सिनो विहरन्ति आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता

हो जाय। वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर साधना करो...पूर्ववत्...धर्म का यथार्थ ज्ञान हो जाय।

"भिक्षुओ! जो शैक्ष्य भिक्षु अनुपम निर्वाण लाभ की साधना में लगे हुए हैं, वे भी काया में कायानुपश्यी हो कर ही साधना कर रहे हैं...जिस से काया को यथार्थतः जान लें। वेदना में वेदनानुपश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...धर्मों में धर्मानुपश्यी हो कर साधना कर रहे हैं... जिस से धर्मों को यथार्थतः जान लें।...

"भिक्षुओ! जो अर्हत्, क्षीणास्रव, धर्मसाधना पूर्ण कर लेने वाले, कृतकृत्य, भार उतार कर फेंक देने वाले, परमार्थ (निर्वाण) प्राप्त, क्षीण भवसंयोजन, परमज्ञानी एवं विमुक्ति प्राप्त कर चुके हैं वे भी काया में कायानुपश्यी...काय से विसंयुक्त रहते हुए...वेदनाओं

एकग्गचित्ता, चित्तेन विसंयुत्ता; धम्मेसु धम्मानुपस्सिनो विहरन्ति आतापिनो सम्पजाना एकोदिभूता विप्पसन्नचित्ता समाहिता एकग्गचित्ता, धम्मेहि विसंयुत्ता।

''ये पि ते, भिक्खवे, भिक्खू नवा अचिरपब्बजिता अधुनागता इमं धम्मविनयं, ते वो, भिक्खवे, भिक्खू इमेसं चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावनाय समादपेतब्बा निवेसेतब्बा पतिट्ठापेतब्बा'' ति॥

५. अकुसलरासिसुत्तं

[B.127] ६. सावत्थिनिदानं। तत्र खो भगवा एतदवोच—'''अकुसलरासी' ति, भिक्खवे, वदमानो पञ्च नीवरणे सम्मा वदमानो वदेय्य। केवलो हायं, भिक्खवे, [N.126, R.146] अकुसलरासि, यदिदं—पञ्च नीवरणा। कतमे पञ्च? कामच्छन्द-नीवरणं, ब्यापादनीवरणं, थीनमिद्धनीवरणं, उद्धच्चकुक्कुच्चनीवरणं, विचिकिच्छा-नीवरणं। 'अकुसलरासी' ति, भिक्खवे, वदमानो इमे पञ्च नीवरणे सम्मा वदमानो वदेय्य। केवलो हायं, भिक्खवे, अकुसलरासि, यदिदं—पञ्च नीवरणा।

'''कुसलरासी' ति, भिक्खवे, वदमानो चत्तारो सतिपट्ठाने सम्मा वदमानो वदेय्य। केवलो हायं, भिक्खवे, कुसलरासि, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा,

---

में वेदनानुपश्यी...वेदना से विसंयुक्त रहते हुए...चित्त में चित्तानुपश्यी...चित्त से विसंयुक्त रहते हुए...धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर साधना कर रहे हैं; धर्म में अनासक्त रहते हुए।

''अतः, भिक्षुओ! इस धर्मविनय में नवप्रव्रजित हुए भिक्षुओं को इन्हीं चारों स्मृतिप्रस्थानों के विषय में शिक्षित करो तथा प्रेरित करो कि वे इन की साधना में तत्पर हो जायँ तथा प्रतिष्ठित हो जायँ॥''

५. अकुशलराशिसूत्र : : पाँच नीवरण

६. ...**श्रावस्ती में** ही...। तब भगवान् यों बोले—'अकुशलराशि' की चर्चा में यदि कोई पाँच नीवरणों को 'अकुशल' कहता है तो वह उचित ही कहता है। भिक्षुओ! ये पाँच नीवरण समस्त अकुशलों की राशि हैं। कौन से पाँच? (१) कामच्छन्दनीवरण, (२) व्यापादनीवरण, (३) स्त्यानमृद्धनीवरण, (४) औद्धत्यकौकृत्यनीवरण, एवं (५) विचिकित्सानीवरण। भिक्षुओ! 'अकुशलराशि' की चर्चा में यदि कोई इन पाँच नीवरणों को सम्मिलित करता है तो वह उचित ही करता है; क्यों कि केवल ये पाँच नीवरण ही 'अकुशलराशि' हैं।

(इस के विपरीत—) यदि कोई 'कुशलराशि' के नाम पर चार स्मृतिप्रस्थानों की चर्चा करे तो वह उचित ही करता है; क्यों कि ये चार स्मृतिप्रस्थान ही एकान्ततः

विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। 'कुसलरासी' ति, भिक्खवे, वदमानो इमे चत्तारो सतिपट्ठाने सम्मा वदमानो वदेय्य। केवलो हायं, भिक्खवे, कुसलरासि, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना'' ति॥ •

६. सकुणग्घिसुत्तं

७. ''भूतपुब्बं, भिक्खवे, सकुणग्घि लापं सकुणं सहसा अज्झप्पत्ता अग्गहेसि। अथ खो, भिक्खवे, लापो सकुणो सकुणग्घिया हरियमानो एवं परिदेवेसि—'मयमेवम्ह अलक्खिका, मयं अप्पपुञ्ञा, ये मयं अगोचरे चरिम्ह परविसये। सचेज्ज मयं गोचरे चरेय्याम सके पेत्तिके विसये, न म्यायं, सकुणग्घि, अलं अभविस्स, यदिदं—युद्धाया' ति।

'को पन ते, लाप, गोचरो सको पेत्तिको विसयो' ति?

'यदिदं—नङ्गलकट्ठकरणं लेड्डुट्ठानं' ति।

''अथ खो, भिक्खवे, सकुणग्घि सके बले अपत्थद्धा सके बले [R.147]

कुशलराशि हैं। कौन से चार? यहाँ, भिक्षुओ! कोई (१) काया में कायानुपश्यी हो कर...(२) वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...(३) चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...एवं (४) धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर उत्साही, सम्प्रज्ञ, स्मृतिमान् होता हुआ लौकिक अभिध्या-दौर्मनस्य को दबाता हुआ साधना करता है। अत: भिक्षुओ! चार स्मृतिप्रस्थानों को कुशलराशि का पर्याय बताने वाला उचित ही कहता है; क्यों कि ये चार स्मृतिप्रस्थान एकमात्र 'कुशलराशि' हैं॥ •

६. शकुनघ्नसूत्र : : स्थान त्याग कर अस्थान में वास

७. भिक्षुओ! किसी बाज (चिड़ीमार) पक्षी ने किसी चिड़िया को असावधान पाया तो उस को झपट कर पकड़ लिया। उस बाज द्वारा पकड़ी गयी वह चिड़िया यों विलाप करने लगी—''अरे! मैं बहुत मन्दभाग्य एवं अल्पपुण्य हूँ कि मैने दूसरे के स्थान में प्रविष्ट हो कर दाना चुगने का प्रयास किया! यदि आज मैं अपने (ही परिचित) स्थान पर दाना चुगती होती तो क्या यह बाज मुझे पकड़ पाने में समर्थ होता! यदि यह पक्षी मुझ से वहाँ युद्ध भी करता तो मुझ पर विजय पाने में यह असमर्थ ही होता।''

बाज ने पूछा—''चिड़िया! तुम्हारा अपना 'दाना चुगने का स्थान' कहाँ है?''

चिड़िया—''यह हल से जोता हुआ ढेलों से युक्त खेत ही मेरा 'दाना चुगने का स्थान' है।

असंवदमाना लापं सकुणं पमुञ्चि—'गच्छ खो त्वं, लाप, तत्र पि मे गन्त्वा न मोक्खसी' ति।

[B.128] "अथ खो, भिक्खवे, लापो सकुणो नङ्गलकट्ठकरणं लेड्डुट्ठानं गन्त्वा महन्तं लेड्डुं अभिरुहित्वा सकुणग्घिं वदमानो अट्ठासि—'एहि खो दानि मे, सकुणग्घि, एहि खो दानि मे, सकुणग्घी' ति। अथ खो सा, भिक्खवे, सकुणग्घि सके बले अपत्थद्धा सके बले असंवदमाना उभो पक्खे संनय्ह लापं सकुणं सहसा अज्झप्पत्ता। यदा खो, [N.127] भिक्खवे, अञ्ञासि लापो सकुणो 'बहुआगतो खो म्यायं सकुणग्घी' ति, अथ तस्सेव लेड्डुस्स अन्तरं पच्चुपादि। अथ खो, भिक्खवे, सकुणग्घि तत्थेव उरं पच्चताळेसि। एवं हि तं, भिक्खवे, होति यो अगोचरे चरति परविसये।

"तस्मातिह, भिक्खवे, मा अगोचरे चरित्थ परविसये। अगोचरे, भिक्खवे, चरतं परविसये लच्छति मारो ओतारं, लच्छति मारो आरम्मणं। को च, भिक्खवे, भिक्खुनो अगोचरो परविसयो? यदिदं—पञ्च कामगुणा। कतमे पञ्च? चक्खुविञ्ञेय्या रूपा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया, सोतविञ्ञेय्या सद्दा...पे०...घान-विञ्ञेय्या गन्धा...जिव्हाविञ्ञेय्या रसा...कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया—अयं, भिक्खवे, भिक्खुनो अगोचरो परविसयो।

तब वह बाज अपनी चतुराई की डींग मारता हुआ यों बोला—"तो जाओ! मैं तुम्हें अभी छोड़ देता हूँ। मैं तुम्हारे अपने दाना चुगने के स्थान पर ही पहुँचूँगा, देखूँ, तुम मुझ से वहाँ कैसे बच पाओगी!"

तब वह चिड़िया उस से छूट कर अपने हल से जुते हुए ढेलों के खेत में जा कर एक बड़े ढेले पर बैठ गयी और उस बाज को ललकारने लगी—"आ, रे बाज! आ, मैं देखूँ, तूँ मुझे कैसे पकड़ता है!" तब वह बाज अपनी चतुराई तथा बल की डींग मारते हुए वहाँ भी उस चिड़िया पर झपटा तो चिड़िया तत्काल उस ढेले के नीचे छिप गयी, तथा बाज तेजी से झपटने के कारण उस ढेले से टकरा कर आहत हो गया। भिक्षुओ! यही दशा होती है—दूसरे के स्थान पर जा कर अपना बल प्रदर्शन करने वाले की।

"अतः दूसरे द्वारा अधिकृत स्थान में जा कर अपना वास न बनाओ। भिक्षुओ! ऐसा करने से मार को अवसर मिलेगा, उस को एक आलम्बन मिलेगा तुम को पराजित करने का। भिक्षुओ! भिक्षु का ऐसा अगोचर (परस्थान) विषय क्या है? ये ही पाँच कामभोग। कौन से पाँच? चक्षुर्विज्ञेय इष्ट कान्त प्रिय, मन को ललचाने वाले सुन्दर रूप...श्रोत्रविज्ञेय शब्द...घ्राणविज्ञेय गन्ध..जिह्वाविज्ञेय रस...कायविज्ञेय स्प्रष्टव्य...। भिक्षुओ! यह भिक्षु का परविषय है।

''गोचरे, भिक्खवे, चरथ सके पेत्तिके विसये। गोचरे, भिक्खवे, चरतं सके पेत्तिके विसये न लच्छति मारो ओतारं, न लच्छति मारो आरम्मणं। को च, भिक्खवे, भिक्खुनो गोचरो सको पेत्तिको विसयो? यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना। कतमे [R.148] चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं—अयं, भिक्खवे, भिक्खुनो गोचरो सको पेत्तिको विसयो'' ति॥ ●

७. मक्कटसुत्तं

८. ''अत्थि, भिक्खवे, हिमवतो पब्बतराजस्स दुग्गा विसमा देसा, यत्थ नेव मक्कटानं चारी न मनुस्सानं। अत्थि, भिक्खवे, हिमवतो पब्बतराजस्स दुग्गा [B.129] विसमा देसा, यत्थ मक्कटानं हि खो चारी, न मनुस्सानं। अत्थि, भिक्खवे, हिमवतो पब्बतराजस्स समा भूमिभागा रमणीया, यत्थ मक्कटानं चेव चारी, मनुस्सानं च। तत्र, भिक्खवे, लुद्दा मक्कटवीथीसु लेपं ओड्डेन्ति मक्कटानं बाधनाय।

''तत्र, भिक्खवे, ये ते मक्कटा अबालजातिका अलोलजातिका, ते तं लेपं दिस्वा आरका परिवज्जन्ति। यो पन सो होति मक्कटो बालजातिको लोलजातिको, सो तं लेपं

''अपि तु, भिक्षुओ! अपने पैतृक (सम्प्रदायसम्मत) विषयों पर ही ध्यान देना चाहिये। तुम्हारे ऐसे स्थानों पर ही रहने से मार को तुम पर आक्रमण करने का कोई आश्रय या आलम्बन नहीं मिलेगा। भिक्षुओ! तुम्हारे पैतृक गोचरस्थान क्या हैं? ये ही चारों स्मृतिप्रस्थान। कौन से चार? (१) यहाँ कोई भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर...(२) वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...(३) चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...एवं (४) धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...साधना करता है। भिक्षुओ! यही तुम्हारा पैतृकविषय गोचरस्थान (=साधनाक्षेत्र) है''॥ ●

७. मर्कटसूत्र : : वानर की उपमा

८. (१) ''भिक्षुओ! पर्वतराज हिमालय पर ऐसे भी बीहड़ स्थान हैं जहाँ न मनुष्य या बन्दर—कोई भी नहीं जा सकता। (२) भिक्षुओ! उसी पर्वतराज हिमालय में ऐसे भी स्थान हैं जहाँ केवल बन्दर जा सकते हैं, मनुष्य नहीं। (३) एवं उसी पर्वतराज हिमालय में ऐसे भी सुरम्य स्थल हैं जहाँ मनुष्य एवं बन्दर—दोनों ही जा सकते हैं। भिक्षुओ! इसी तीसरे स्थान में मनुष्य उन बन्दरों को पकड़ने के लिये जाल फैलाते हैं।

''वहाँ, भिक्षुओ! जो बन्दर चतुर हैं, निर्लोभ हैं, वे उस जाल को दूर से ही देख

[N.128] उपसङ्कमित्वा हत्थेन गण्हाति। सो तत्थ बज्झति। 'हत्थं मोचेस्सामी' ति दुतियेन हत्थेन गण्हाति। सो तत्थ बज्झति। 'उभो हत्थे मोचेस्सामी' ति पादेन गण्हाति। सो तत्थ बज्झति। 'उभो हत्थे मोचेस्सामि पादं चा' ति दुतियेन पादेन गण्हाति। सो तत्थ बज्झति। 'उभो हत्थे मोचेस्सामि पादे चा' ति तुण्डेन गण्हाति। सो तत्थ बज्झति। एवं [R.149] हि सो, भिक्खवे, मक्कटो पञ्चोड्डितो थुनं सेति अनयं आपन्नो ब्यसनं आपन्नो यथाकामकरणीयो लुद्दस्स। तमेनं, भिक्खवे, लुद्दो विज्झित्वा तस्मिं येव कट्ठकतङ्गारे अवस्सज्जेत्वा येन कामं पक्कमति। एवं सो तं, भिक्खवे, होति यो अगोचरे चरति परविसये।

"तस्मातिह, भिक्खवे, मा अगोचरे चरित्थ परविसये। अगोचरे, भिक्खवे, चरतं परविसये लच्छति मारो ओतारं, लच्छति मारो आरम्मणं। को च, भिक्खवे, भिक्खुनो अगोचरो परविसयो? यदिदं—पञ्च कामगुणा। कतमे पञ्च? चक्खुविञ्ञेय्या रूपा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया, सोतविञ्ञेय्या सद्दा...पे०...घान-विञ्ञेय्या गन्धा...जिव्हाविञ्ञेय्या रसा...कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया—अयं, भिक्खवे, भिक्खुनो अगोचरो परविसयो।

"गोचरे, भिक्खवे, चरथ सके पेत्तिके विसये। गोचरे, भिक्खवे, चरतं सके पेत्तिके विसये न लच्छति मारो ओतारं, न लच्छति मारो आरम्मणं। को च, भिक्खवे, [B.130] भिक्खुनो गोचरो सको पेत्तिको विसयो? यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। अयं, भिक्खवे, भिक्खुनो गोचरो सको पेत्तिको विसयो" ति॥ ●

कर वहाँ से हट जाते हैं। परन्तु उन में जो बन्दर मूर्ख एवं जिह्वालोलुप हैं, वे उस जाल के पास जाते हैं वहाँ पड़े दानों को चुगने के प्रयास में स्वयं उस जाल में हाथ डालते हैं तो वे उस जाल में फँस जाते हैं। इतना ही नहीं, वहाँ अपना एक हाथ छुड़ाने के प्रयास में दूसरा हाथ भी फँसा बैठते हैं। इसी तरह, दूसरा हाथ छुड़ाने के प्रयास में अपना एक पैर या दोनों पैर फँसा बैठते हैं। यों करते करते वे अन्त में अपनी गर्दन (ग्रीवा) भी फँसा बैठते हैं। यों पाँच स्थानों से बँधा हुआ वह मूर्ख बन्दर चिल्लाने लगता है, कष्ट पाता है तथा उस लुब्धक के स्वार्थ को पूर्ण करने वाला बन जाता है। इस तरह, भिक्षुओ! वह लुब्धक उसे मार कर आग में जला कर खा जाता है, तथा वहाँ से चल देता है।

८. सूदसुत्तं

९. "सेय्यथापि, भिक्खवे, बालो अब्यत्तो अकुसलो सूदो राजानं वा राजमहामत्तं वा नानच्चयेहि सूपेहि पच्चुपट्ठितो अस्स—अम्बिलग्गेहि पि तित्तकग्गेहि पि, [N.129] कटुकग्गेहि पि, मधुरग्गेहि पि, खारिकेहि पि, अखारिकेहि पि, लोणिकेहि पि, अलोणिकेहि पि।

"स खो सो, भिक्खवे, बालो अब्यत्तो अकुसलो सूदो सकस्स भत्तु [R.150] निमित्तं न उग्गण्हाति—'इदं वा मे अज्ज भत्तु सूपेय्यं रुच्चति, इमस्स वा अभिहरति, इमस्स वा बहुं गण्हाति, इमस्स वा वण्णं भासति। अम्बिलग्गं वा मे अज्ज भत्तु सूपेय्यं रुच्चति, अम्बिलग्गस्स वा अभिहरति, अम्बिलग्गस्स वा बहुं गण्हाति, अम्बिलग्गस्स वा वण्णं भासति। तित्तकग्गं वा मे अज्ज...कटुकग्गं वा मे अज्ज...मधुरग्गं वा मे अज्ज...खारिकं वा मे अज्ज...अखारिकं वा मे अज्ज...लोणिकं वा मे अज्ज...अलोणिकं वा मे अज्ज भत्तु सूपेय्यं रुच्चति, अलोणिकस्स वा अभिहरति, अलोणिकस्स वा बहुं गण्हाति, अलोणिकस्स वा वण्णं भासती' ति।

"स खो सो, भिक्खवे, बालो अब्यत्तो अकुसलो सूदो न चेव लाभी होति अच्छादनस्स, न लाभी वेतनस्स, न लाभी अभिहारानं। तं किस्स हेतु? तथा हि खो, भिक्खवे, बालो अब्यत्तो अकुसलो सूदो सकस्स भत्तु निमित्तं न उग्गण्हाति। एवमेव

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम भी स्वस्थान को छोड़ कर दूसरे के आपत्तिजनक स्थान में न जाना, अन्यथा तुम्हारी भी यही दशा होगी। ...पूर्ववत्... ॥ •

(शेष अंश का ऊपर के सूत्र की तरह ही विस्तार कर लें।)

८. सूदसूत्र : : स्मृतिप्रस्थान

९. ..."जैसे, भिक्षुओ! कोई मूर्ख, अकुशल पाचक (रसोइया) राजा या किसी राजमहामात्य को विविध पक्वान्न या सूप परोसे, जिस में खट्टा भी हो, तिक्त भी हो, कटु भी हो, मीठा भी हो, क्षार भी हो, नमकीन भी हो या विना नमक वाला भी हो।

"भिक्षुओ! जैसे वह मूर्ख अकुशल पाचक उस भोजन के विषय में अपने स्वामी के भावों को समझने का प्रयास नहीं करता—'आज का यह मेरा बनाया भोजन कैसा है? स्वामी को इस में कौन सा व्यञ्जन रुचिकर लगता है? किस व्यञ्जन की प्रशंसा करते हैं, किस को बार बार माँगते हैं, इन्हें खट्टा स्वीकार है या मीठा, ये किस की प्रशंसा अधिक कर रहे हैं, या किस को सर्वथा नहीं मांग रहे हैं'—आदि।

"भिक्षुओ! ऐसा वह मूर्ख पाचक अप्रसन्न स्वामी द्वारा कभी पुरस्कारस्वरूप न वस्त्र पाता है, न समय पर वेतन, न अन्य कोई पारितोषिक आदि; क्यों कि वह स्वामी की

खो, भिक्खवे, इधेकच्चो बालो अब्यत्तो अकुसलो भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स काये कायानुपस्सिनो विहरतो चित्तं न समाधियति, उपक्किलेसा न पहीयन्ति। सो तं निमित्तं न [B.131] उग्गण्हाति। वेदनासु वेदनानुपस्सी विहरति...पे०...चित्ते चित्तानुपस्सी विहरति ...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स धम्मेसु धम्मानुपस्सिनो विहरतो चित्तं न समाधियति, उपक्किलेसा न पहीयन्ति। सो तं निमित्तं न उग्गण्हाति।

''स खो सो, भिक्खवे, बालो अब्यत्तो अकुसलो भिक्खु न चेव लाभी होति [R.151] दिट्ठेव धम्मे सुखविहारानं, न लाभी सतिसम्पजञ्ञस्स। तं किस्स हेतु? तथा हि सो, भिक्खवे, बालो अब्यत्तो अकुसलो भिक्खु सकस्स चित्तस्स निमित्तं न उग्गण्हाति। (१)

''सेय्यथापि, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो सूदो राजानं वा राजमहामत्तं वा [N.130] नानच्चयेहि सूपेहि पच्चुपट्ठितो अस्स—अम्बिलग्गेहि पि तित्तकग्गेहि पि, कटुकग्गेहि पि, मधुरग्गेहि पि, खारिकेहि पि, अखारिकेहि पि, लोणिकेहि पि, अलोणिकेहि पि।

''स खो सो, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो सूदो सकस्स भत्तु निमित्तं न उग्गण्हाति—'इदं वा मे अज्ज भत्तु सूपेय्यं रुच्चति, इमस्स वा अभिहरति, इमस्स वा बहुं

रुचि का ध्यान नहीं रखता, अत: स्वामी भी उस के प्रति कोई प्रसन्नता प्रकट नहीं करता। इसी तरह, भिक्षुओ! यहाँ कोई मूर्ख एवं साधना में अकुशल भिक्षु काय में कायानुपश्यना की साधना करता है, तो भी न उस का चित्त समाहित होता है, न उस के उपक्लेश ही प्रहीण होते हैं। वह इस का कारण भी नहीं समझ पाता; वेदनाओं में वेदनानुपश्यना की...चित्त में चित्तानुपश्यना की साधना करता है...धर्मों में धर्मानुप्रश्यना की साधना करता है, परन्तु न उस का चित्त समाहित होता है, न उस के उपक्लेश ही शान्त हो पाते हैं। वह इस का कारण भी नहीं समझ पाता।

''भिक्षुओ! ऐसा वह मूर्ख एवं अकुशल भिक्षु इस जन्म में न सहजसाधना (सुखविहार) का लाभी होता है तथा न स्मृति या सम्प्रजन्य का। वह क्यों? क्यों कि वह मूर्ख भिक्षु अपने चित्त की वास्तविक स्थिति को नहीं जान पाता।

(दूसरा पक्ष—) ''भिक्षुओ! जैसे कोई बुद्धिमान् चतुर पाचक राजा या राजमहामात्य को विविध व्यञ्जन परोसे...पूर्ववत्...नमक वाला भी हो।

गण्हाति, इमस्स वा वण्णं भासति। अम्बिलग्गं वा मे अज्ज भत्तु सूपेय्यं रुच्चति, अम्बिलग्गस्स वा अभिहरति, अम्बिलग्गस्स वा बहुं गण्हाति, अम्बिलग्गस्स वा वण्णं भासति। तित्तकग्गं वा मे अज्ज...कटुकग्गं वा मे अज्ज...मधुरग्गं वा मे अज्ज...खारिकं वा मे अज्ज...अखारिकं वा मे अज्ज...लोणिकं वा मे अज्ज...अलोणिकं वा मे अज्ज भत्तु सूपेय्यं रुच्चति, अलोणिकस्स वा अभिहरति, अलोणिकस्स वा बहुं गण्हाति, अलोणिकस्स वा वण्णं भासती' ति।

"स खो सो, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो सूदो लाभी चेव होति अच्छादनस्स, लाभी वेतनस्स, लाभी अभिहारानं। तं किस्स हेतु? तथा हि सो, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो सूदो सकस्स भत्तु निमित्तं उग्गण्हाति। एवमेव खो, भिक्खवे, इधेकच्चो पण्डितो ब्यत्तो कुसलो भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स काये कायानुपस्सिनो विहरतो चित्तं समाधियति, उपक्किलेसा पहीयन्ति। सो तं निमित्तं उग्गण्हाति। [R.152] वेदनासु वेदनानुपस्सी विहरति...पे०...चित्ते चित्तानुपस्सी विहरति...धम्मेसु [B.133] धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स धम्मेसु धम्मानुपस्सिनो विहरतो चित्तं समाधियति, उपक्किलेसा पहीयन्ति। सो तं निमित्तं उग्गण्हाति।

"स खो सो, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो भिक्खु लाभी चेव होति दिट्ठेव धम्मे सुखविहारानं, लाभी सतिसम्पजञ्ञस्स। तं किस्स हेतु? तथा हि सो, भिक्खवे, पण्डितो ब्यत्तो कुसलो भिक्खु सकस्स चित्तस्स निमित्तं उग्गण्हाती" ति॥ •

"वह बुद्धिमान् कुशल पाचक अपने स्वामी के मनोभावों का ध्यान रखता है कि आज का यह मेरा बनाया भोजन कैसा है? ...पूर्ववत्...।

"भिक्षुओ! ऐसा वह कुशल पाचक, इस से प्रसन्न हुए स्वामी से समय समय पर नये वस्त्र पाता है, वेतनवृद्धि पाता है, तथा विविध पुरस्कार भी; क्यों कि वह स्वामी की रुचि का ध्यान रखता है।

"इसी तरह, भिक्षुओ! कोई बुद्धिमान् एवं साधनाकुशल भिक्षु काय में कायानुपश्यना स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ हो कर करता है। उस के ऐसा करने से चित्त समाहित होता है, तथा उस के चित्तोपक्लेश प्रहीण हो जाते हैं। वह उस के कारण को भली भाँति जानता है।

"ऐसा भिक्षु इसी जन्म में सहज साधना का लाभी भी हो सकता है तथा स्मृति एवं सम्प्रजन्य का भी। वह किस लिये? वह इस लिये कि वह अपने चित्त को भली भाँति समझ चुका है"॥ •

९. गिलानसुत्तं

१०. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति वेळुवगामके। तत्र खो [N.131] भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"एथ तुम्हे, भिक्खवे, समन्ता वेसालिया यथामित्तं यथासन्दिट्ठं यथासम्भत्तं वस्सं उपेथ। इधेवाहं वेळुवगामके वस्सं उपगच्छामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पटिस्सुत्वा समन्ता वेसालिया यथामित्तं यथासन्दिट्ठं यथासम्भत्तं वस्सं उपगच्छुं। भगवा पन तत्थेव वेळुवगामके वस्सं उपगच्छि।

अथ खो भगवतो वस्सूपगतस्स खरो आबाधो उप्पज्जि, बाळ्हा वेदना वत्तन्ति मारणन्तिका। तत्र सुदं भगवा सतो सम्पजानो अधिवासेसि अविहञ्ञमानो। अथ खो भगवतो एतदहोसि—"न खो मे तं पतिरूपं योहं अनामन्तेत्वा उपट्ठाके अनपलोकेत्वा भिक्खुसङ्घं परिनिब्बायेय्यं। यन्नूनाहं इमं आबाधं विरियेन पटिपणामेत्वा जीवितसङ्खारं [R.153] अधिट्ठाय विहरेय्यं" ति। अथ खो भगवा तं आबाधं विरियेन पटिपणामेत्वा जीवितसङ्खारं अधिट्ठाय विहासि। अथ खो भगवतो सो आबाधो पटिप्पस्सम्भि। अथ खो भगवा गिलानवुट्ठितो अचिरवुट्ठितो गेलञ्ञा विहारा निक्खमित्वा विहारपच्छायायं पञ्ञत्ते आसने निसीदि। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि;

---

९. ग्लानसूत्र : : स्वयं पर विश्वास करना

१०. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली के वेलुवग्राम में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ, भगवान् ने भिक्षुओं को बुला कर आदेश दिया—"जाओ, वैशाली के चारों तरफ जहाँ तुम्हारे पुराने मित्र, परिचित या उपासक हैं वहाँ जा कर वर्षावास करो; मैं इस वेलुवग्राम में ही वर्षावास करूँगा। "अच्छा, भन्ते!" कह कर भिक्षुओं ने भगवान् का आदेश शिरोधार्य किया और वे वैशाली के चारों ओर वर्षावास करने हेतु चले गये। परन्तु भगवान् उसी वेलुवग्राम में ही वर्षावासहेतु विराजमान रहे।

तब भगवान् को वर्षावास के समय कभी तीव्र रोग उत्पन्न हुआ, उस से उन्हें भयङ्कर प्राणान्तक वेदना होने लगी। उस वेदना को उन्होंने स्मृति एवं सम्प्रजन्य पूर्वक सहन किया।

उस समय भगवान् को यह विचार हुआ—"यह मेरे लिये उचित नहीं होगा कि अपने उपस्थायकों को विना बताये या भिक्षुसङ्घ को विना दर्शन दिये मैं अपना यह शरीर त्याग दूँ। अत: क्यों न मैं इस रोग को बलपूर्वक शान्त कर जीवित संस्कारों को एकत्र रखूँ (जीवित रहूँ) तथा साधना में लगा रहूँ।" तब भगवान् ने अपने उस रोग को अपनी अलौकिक शक्ति से दबा दिया। कुछ समय बाद, भगवान् उस रोग से मुक्त हो कर, विहार

उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो [B.133] आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"दिट्ठो मे, भन्ते, भगवतो फासु; दिट्ठं, भन्ते, भगवतो खमनीयं; दिट्ठं, भन्ते, भगवतो यापनीयं। अपि च मे, भन्ते, मधुरकजातो विय कायो, दिसा पि मे न पक्खायन्ति, धम्मा पि मं नप्पटिभन्ति भगवतो गेलञ्ञेन। अपि च मे, भन्ते, अहोसि काचिदेव अस्सासमत्ता—'न ताव भगवा परिनिब्बायिस्सति, न याव भगवा भिक्खुसङ्घं आरब्भ किञ्चिदेव उदाहरती''' ति।

"किं पन दानि, आनन्द, भिक्खुसङ्घो मयि पच्चासीसति? देसितो, आनन्द, मया धम्मो अनन्तरं अबाहिरं करित्वा। नत्थानन्द, तथागतस्स धम्मेसु आचरियमुट्ठि। यस्स नून, आनन्द, एवमस्स—'अहं भिक्खुसङ्घं परिहरिस्सामी' ति वा, 'ममुद्देसिको भिक्खुसङ्घो' ति वा, सो नून, आनन्द, भिक्खुसङ्घं आरब्भ किञ्चिदेव [N.132] उदाहरेय्य। तथागतस्स खो, आनन्द, न एवं होति—'अहं भिक्खुसङ्घं परिहरिस्सामी' ति वा, 'ममुद्देसिको भिक्खुसङ्घो' ति वा। स किं, आनन्द, तथागतो भिक्खुसङ्घं आरब्भ किञ्चिदेव उदाहरिस्सति! एतरहि खो पनाहं, आनन्द, जिण्णो वुड्ढो महल्लको अद्धगतो वयोअनुप्पत्तो। आसीतिको मे वयो वत्तति। सेय्यथापि, आनन्द, जज्जरसकटं

से निकल कर विहार के पीछे छाया में प्रज्ञप्त आसन पर विराजे। तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के पास आ कर उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठ कर, आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यों निवेदन किया—"आज मैं भगवान् को सहज स्वस्थ अवस्था में देख रहा हूँ, इस से मुझे बहुत सान्त्वना मिली। भन्ते! मैं तो आप को रोगी सुन कर उद्विग्न (व्यग्र) हो गया था, मेरा शरीर स्तब्ध रह गया, मुझे सभी दिशाएँ अन्धकारावृत लग रही थी, धर्मसाधना में भी मेरा मन नहीं लग रहा था। हाँ, मुझे इतना आश्वासन अवश्य था कि भगवान् जब तक भिक्षुसङ्घ को कुछ उपदेश (पच्छिमा वाचा) न कर लें तब तक परिनिर्वाण नहीं कर सकते"।

"आनन्द! अभी मुझ से भिक्षुसङ्घ क्या प्रत्याशा कर रहा है! आनन्द! मैंने तो उस को आन्तर एवं बाह्य—दोनों तरह से धर्म का उपदेश भली भाँति कर दिया। मैंने धर्म की कोई आचार्यमुष्टि (गुप्त बात) सङ्घ से नहीं छिपायी। आनन्द! जिस शास्ता के मन में यह विचार हो—'मैं भिक्षुसङ्घ को चला रहा हूँ' या 'भिक्षुसङ्घ मेरे सहारे से चल रहा है' वैसा शास्ता भिक्षुसङ्घ से ऐसे समय में बात करने की सोचे, उन से कुछ कहे, सुने। आनन्द! तथागत बुद्ध के मन में ऐसा कुछ नहीं है, तब भला मैं उन से क्या कुछ कहने सुनने का अवसर खोजूँगा!

"आनन्द! इस समय मैं वृद्ध, पुराण, महल्लक एवं अवस्थाप्राप्त हो चुका हूँ। मेरी

वेखमिस्सकेन यापेति; एवमेव खो, आनन्द, वेखमिस्सकेन मञ्ञे तथागतस्स कायो यापेति।

[R.154] "यस्मिं, आनन्द, समये तथागतो सब्बनिमित्तानं अमनसिकारा एकच्चानं वेदनानं निरोधा अनिमित्तं चेतोसमाधिं उपसम्पज्ज विहरति, फासुतरो, आनन्द, तस्मिं समये तथागतस्स कायो होति। तस्मातिहानन्द, अत्तदीपा विहरथ अत्तसरणा अनञ्ञसरणा, धम्मदीपा धम्मसरणा अनञ्ञसरणा।

"कथं चानन्द, भिक्खु अत्तदीपो विहरति अत्तसरणो अनञ्ञसरणो, धम्मदीपो धम्मसरणो अनञ्ञसरणो? इधानन्द, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०... [B.134] धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एवं खो, आनन्द, भिक्खु अत्तदीपो विहरति अत्तसरणो अनञ्ञसरणो, धम्मदीपो धम्मसरणो अनञ्ञसरणो। ये हि केचि, आनन्द, एतरहि वा ममच्चये वा अत्तदीपा विहरिस्सन्ति अत्तसरणा अनञ्ञसरणा, धम्मदीपा धम्मसरणा अनञ्ञसरणा; तमतग्गे मेते, आनन्द, भिक्खू भविस्सन्ति ये केचि सिक्खाकामा" ति॥ •

आयु अस्सी वर्ष के समीप हो गयी है। जैसे, आनन्द! पुराने शकट (गाड़ी) को रस्सियों से बाँध कर, जोड़ कर चलाया जाता है, वही स्थिति मेरे शरीर की है।

"आनन्द! जिस समय तथागत समग्र निमित्तों को मन से हटा कर वेदना के निरुद्ध हो जाने से अनिमित्त चित्तसमाधि प्राप्त कर लेते हैं, तब वे बहुत ही सहज साधना से विहार करते हैं।

"अतः, आनन्द! तुम लोग (भिक्षुसङ्घ) अपने आप निर्भर होओ, अपना शरणस्थल स्वयं बनो, किसी दूसरे के आधार (भरोसे) पर न रहो; धर्म पर ही निर्भर रहो, धर्म को ही अपना शरणस्थल बनाओ, किसी अन्य की शरण में विश्वास न करो।

"आनन्द! भिक्षु अपने आप पर कैसे निर्भर होता है? अपनी शरण स्वयं कैसे बनता है? ... ? यहाँ, आनन्द! भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर साधना करता है, इसी तरह, आनन्द! अपने आप पर निर्भर हो जाता है...दूसरे पर वह भरोसे की आशा नहीं रखत॥

"आनन्द! जो भी इस तरह साधना करते हुए आत्मदीप, आत्मशरण बनेंगे, धर्मदीप एवं धर्मशरण बनेंगे, वे ही शिक्षाकामी भिक्षु मेरे बाद इस सङ्घ में अग्र (श्रेष्ठ) होंगे"॥ •

१०. भिक्खुनुपस्सयसुत्तं

११. अथ खो आयस्मा आनन्दो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन अञ्ञतरो भिक्खुनुपस्सयो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। अथ खो सम्बहुला भिक्खुनियो येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ता भिक्खुनियो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोचुं—''इध, भन्ते आनन्द, सम्बहुला भिक्खुनियो [N.133] चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्ता विहरन्तियो उळारं पुब्बेनापरं विसेसं सञ्जानन्ती'' ति।

''एवमेतं, भगिनियो, एवमेतं, भगिनियो! यो हि कोचि, भगिनियो, [R.155] भिक्खु वा भिक्खुनी वा चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्तो विहरति, तस्सेतं पाटिकङ्खं—'उळारं पुब्बेनापरं विसेसं सञ्जानिस्सती''' ति।

अथ खो आयस्मा आनन्दो ता भिक्खुनियो धम्मिया कथाय सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा सम्पहंसेत्वा उट्ठायासना पक्कामि। अथ खो आयस्मा सावत्थियं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—''इधाहं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन अञ्ञतरो भिक्खुनुपस्सयो तेनुपसङ्कमिं; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदिं। अथ

---

१०. भिक्षुण्युपाश्रयसूत्र : : स्मृतिप्रस्थानों की भावना

११. ...तब आयुष्मान् आनन्द पूर्वाह्न में, वस्त्र व्यवस्थित कर, पात्रचीवर ले कर किसी भिक्षुणीउपाश्रय में पहुँचे। पहुँच कर प्रज्ञप्त आसन पर बैठे। तब बहुत सी भिक्षुणियाँ आयुष्मान् आनन्द के पास आयीं, तथा उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गयीं। एक ओर बैठी उन भिक्षुणियों ने आयुष्मान् आनन्द से यों कहा—

''यहाँ, भन्ते आनन्द! बहुत सी भिक्षुणियाँ चारों स्मृतिप्रस्थानों में सुप्रतिष्ठितचित्त हो कर साधना करती हुई अधिक से अधिक विशेषता प्राप्त कर रही हैं।''

''हाँ, बहनो! ऐसी ही बात है! बहनो! यहाँ कोई भी भिक्षु या भिक्षुणी चारों स्मृतिप्रस्थानों में सुप्रतिष्ठित चित्त हो जाती हैं, उन से यही आशा की जाती है कि वे दिनानुदिन उस में अधिक से अधिक विशेषताएँ प्राप्त करती जायँगीं।''

तब आयुष्मान् आनन्द उन भिक्षुणियों को धार्मिक कथाएँ सुना कर धर्मसाधना में प्रोत्साहित करते हुए आसन से उठ कर चले आये। तब आयुष्मान् आनन्द श्रावस्ती में भिक्षाकृत्य से निवृत्त हो कर भगवान् के पास गये, उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गये।

खो, भन्ते, सम्बहुला भिक्खुनियो येनाहं तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा [B.135] एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो, भन्ते, ता भिक्खुनियो मं एतदवोचुं—'इध, भन्ते आनन्द, सम्बहुला भिक्खुनियो चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्ता विहरन्तियो उळारं पुब्बेनापरं विसेसं सञ्जानन्ती' ति। एवं वुत्ताहं, भन्ते, ता भिक्खुनियो एतदवोचं—'एवमेतं, भगिनियो, एवमेतं भगिनियो! यो हि कोचि, भगिनियो, भिक्खु वा भिक्खुनी वा चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्तो विहरति, तस्सेतं पाटिकङ्खं—'उळारं पुब्बेनापरं विसेसं सञ्जानिस्सती''' ति।

''एवमेतं, आनन्द, एवमेतं आनन्द! यो हि कोचि, आनन्द, भिक्खु वा भिक्खुनी वा चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्तो विहरति, तस्सेतं पाटिकङ्खं—'उळारं पुब्बेनापरं विसेसं सञ्जानिस्सति'।

''कतमेसु चतूसु? इधानन्द, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी [R.156] सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स काये कायानुपस्सिनो विहरतो कायारम्मणो वा उप्पज्जति कायस्मिं परिळाहो, चेतसो वा लीनत्तं, [N.134] बहिद्धा वा चित्तं विक्खिपति। तेनानन्द, भिक्खुना किस्मिञ्चिदेव पसादनीये निमित्ते चित्तं पणिदहितब्बं। तस्स किस्मिञ्चिदेव पसादनीये निमित्ते चित्तं पणिदहतो पामोज्जं जायति। पमुदितस्स पीति जायति। पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति। पस्सद्धकायो सुखं वेदयति। सुखिनो चित्तं समाधियति। सो इति पटिसञ्चिक्खति—'यस्स

एक ओर बैठे उन्होंने भगवान् से यों निवेदन किया—''भन्ते! आज मैं प्रात:काल ...पूर्ववत्...अधिक से अधिक विशेषता प्राप्त करती जायँगीं।''

''यही बात है, आनन्द! तुम ठीक कह रहे हो...करती जायँगीं। कौन से चार? यहाँ, आनन्द! कोई भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर उत्साही एवं सम्प्रज्ञ होता हुआ लौकिक अभिध्या एवं दौर्मनस्य को दबा कर साधना करता है। उस काया में कायानुपश्यी को काया एक आलम्बन हो जाता है। काया में क्लेश उत्पन्न होने लगते हैं, चित्त लीन (सङ्कुचित) हो जाता है, चञ्चल हो जाता है। आनन्द! तब उस भिक्षु को किसी श्रद्धोत्पादक आलम्बन पर अपना चित्त लगाना चाहिये। ऐसा करने से उस को प्रमोद (हर्ष) होता है। प्रमोद से प्रीति उत्पन्न होती है। प्रीतियुक्त होने से उस का काय प्रश्रब्ध (स्थिर) हो जाता है। काया के प्रश्रब्ध हो जाने से वह सुखानुभव करता है। इस सुखानुभव से उस का चित्त समाहित हो जाता है। तब वह यों चिन्तन करता है—'जिस उद्देश्य से मैंने चित्त को समाहित किया था वह उद्देश्य सिद्ध हो गया। अब मैं अपने चित्त को यहाँ से खींच लेता

ख्वाहं अत्थाय चित्तं पणिदहिं, सो मे अत्थो अभिनिप्फन्नो। हन्द, दानि पटिसंहरामी' ति। सो पटिसंहरति चेव न च वितक्केति न च विचारेति। 'अवितक्कोम्हि अविचारो, अज्झत्तं सतिमा सुखमस्मी' ति पजानाति।

"पुन च परं, आनन्द, भिक्खु वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स धम्मेसु धम्मानुपस्सिनो विहरतो धम्मारम्मणो वा उप्पज्जति कायस्मिं परिळाहो, चेतसो वा लीनत्तं, बहिद्धा वा चित्तं विक्खिपति। तेनानन्द, भिक्खुना किस्मिञ्चिदेव पसादनीये निमित्ते चित्तं पणिदहितब्बं। तस्स किस्मिञ्चिदेव पसादनीये निमित्ते चित्तं [B.136] पणिदहतो पामोज्जं जायति। पमुदितस्स पीति जायति। पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति। पस्सद्धकायो सुखं वेदयति। सुखिनो चित्तं समाधियति। सो इति पटिसञ्चिक्खति— 'यस्स ख्वाहं अत्थाय चित्तं पणिदहिं, सो मे अत्थो अभिनिप्फन्नो। हन्द, दानि पटिसंहरामी' ति। सो पटिसंहरति चेव न च वितक्केति न च विचारेति। 'अवितक्कोम्हि अविचारो, अज्झत्तं सतिमा सुखमस्मी' ति पजानाति।

"एवं खो, आनन्द, पणिधाय भावना होति। (१)

"कथं चानन्द, अप्पणिधाय भावना होति? बहिद्धा, आनन्द, भिक्खु [R.157] चित्तं अप्पणिधाय 'अप्पणिहितं मे बहिद्धा चित्तं' ति पजानाति। अथ पच्छापुरे 'असङ्खित्तं विमुत्तं अप्पणिहितं' ति पजानाति। अथ च पन 'काये कायानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा सुखमस्मी' ति पजानाति। बहिद्धा, आनन्द, भिक्खु चित्तं अप्पणिधाय 'अप्पणिहितं मे बहिद्धा चित्तं' ति पजानाति। अथ पच्छापुरे 'असङ्खित्तं विमुत्तं अप्पणिहितं' ति पजानाति। अथ च पन 'वेदनासु वेदनानुपस्सी विहरामि

हूँ'। और वह अपना चित्त वहाँ से हटा लेता है। क्लेशों पर न वितर्क करता है, न विचार। यों, वह 'वितर्क विचार रहित हो कर अपने भीतर ही भीतर सुखपूर्वक विहार करता हूँ'—ऐसा जान लेता है।

"फिर, आनन्द! वह भिक्षु वेदनाओं में वेदनानुपश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी...धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...सुखपूर्वक विहार करता हूँ—ऐसा जान लेता है।

"आनन्द! इस प्रकार प्रणिधान (दृढ सङ्कल्प) से साधना होती है॥ (१)

"आनन्द! भिक्षु, बाहर में कहीं चित्त का प्रणिधान न कर, जानता है कि मेरा चित्त कहीं बाहर में प्रणिहित नहीं है। आगे पीछे कहीं बँधा नहीं है, विमुक्त एवं अप्रणिहित है—ऐसा जानता हैं। तब 'काया में कायानुपश्यी हो कर साधना कर रहा हूँ'...पूर्ववत्...ऐसा जानता है।

आतापी सम्पजानो सतिमा सुखमस्मी' ति पजानाति। बहिद्धा, आनन्द, भिक्खु चित्तं अप्पणिधाय 'अप्पणिहितं मे बहिद्धा चित्तं' ति पजानाति। अथ पच्छापुरे 'असङ्खित्तं [N.135] विमुत्तं अप्पणिहितं' ति पजानाति। अथ च पन 'चित्ते चित्तानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा सुखमस्मी' ति पजानाति। बहिद्धा, आनन्द, भिक्खु चित्तं अप्पणिधाय 'अप्पणिहितं मे बहिद्धा चित्तं' ति पजानाति। अथ पच्छापुरे 'असङ्खित्तं विमुत्तं अप्पणिहितं' ति पजानाति। अथ च पन 'धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा सुखमस्मी' ति पजानाति।

''एवं खो, आनन्द, अप्पणिधाय भावना होति। (२)

''इति खो, आनन्द, देसिता मया पणिधाय भावना, देसिता अप्पणिधाय भावना। अयं आनन्द, सत्थारा करणीयं सावकानं हितेसिना अनुकम्पकेन अनुकम्पं उपादाय, कतं वो तं मया। एतानि, आनन्द, रुक्खमूलानि, एतानि सुञ्ञागारानि! झायथानन्द, मा पमादत्थ; मा पच्छा विप्पटिसारिनो अहुवत्थ! अयं वो अम्हाकं अनुसासनी'' ति।

१२. इदमवोच भगवा। अत्तमनो आयस्मा आनन्दो भगवतो भासितं अभिनन्दी ति॥ •

अम्बपालिवग्गो पठमो॥

तस्सुद्दानं

[B.137, R.158] अम्बपालि सतो भिक्खु, साला कुसलरासि च।
सकुणग्घि मक्कटो सूदो, गिलानो भिक्खुनुपस्सयो ति॥ •

''फिर, आनन्द! भिक्षु वेदना में वेदनानुपश्यी हो कर...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...विहार करता हूँ—ऐसा जानता है।

''आनन्द! इस प्रकार अप्रणिधान से साधना होती है॥ (२)

''आनन्द! इस तरह मैने तुम लोगों को बता दिया कि प्रणिधान या अप्रणिधान से कैसे भावना होती है। आनन्द! अपने श्रावकों के हितैषी तथा उन पर दयालु मैंने (शास्ता तथागत ने) श्रावकों के लिये जो कुछ करना चाहिये, दया कर के वह सब कुछ कर दिया। आनन्द! अब ये रम्य वृक्षमूल हैं, ये एकान्त शून्यगृह हैं, इन का आश्रय ले कर ध्यान करो। प्रमाद न करो। ऐसा न हो कि (उस प्रमाद के कारण) आगे चल कर तुम्हें पछताना पड़े। तुम्हारे लिये मेरी यही शिक्षा है, यही उपदेश है॥''

१२. भगवान् यह बोले। सन्तुष्ट हो कर आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् के कथन का अभिनन्दन अनुमोदन किया॥ ●

आम्रपालिवर्ग प्रथम निष्पन्न॥

इस आम्रपालिवर्ग में इतने सूत्र व्याख्यात हुए हैं—१. आम्रपालिसूत्र, २. स्मृतिसूत्र, ३. भिक्षुसूत्र, ४. शालासूत्र, ५. अकुशलराशिसूत्र, ६. शकुंनघ्रसूत्र, ७. मर्कटसूत्र, ९. सूदसूत्र, १०. ग्लानसूत्र एवं ११. भिक्षुण्युपाश्रयसूत्र॥ ●

२. नालन्दवग्गो दुतियो

११. महापुरिससुत्तं

१३. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—"'महापुरिसो, महापुरिसो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, महापुरिसो होती" ति?

"विमुत्तचित्तत्ता ख्वाहं, सारिपुत्त, 'महापुरिसो' ति वदामि। अविमुत्तचित्तत्ता 'नो महापुरिसो' ति वदामि।

"कथं च, सारिपुत्त, विमुत्तचित्तो होति? इध, सारिपुत्त, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। [N.136] तस्स काये कायानुपस्सिनो विहरतो चित्तं विरज्जति, विमुच्चति अनुपादाय आसवेहि। वेदनासु...पे०... चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स धम्मेसु धम्मानुपस्सिनो विहरतो चित्तं विरज्जति, विमुच्चति अनुपादाय आसवेहि। एवं खो, सारिपुत्त, विमुत्तचित्तो होति। विमुत्तचित्तत्ता ख्वाहं, सारिपुत्त, 'महापुरिसो' ति वदामि। अविमुत्तचित्तत्ता 'नो महापुरिसो' ति वदामी" ति॥ •

---

२. नालन्दवर्ग द्वितीय

११. महापुरुषसूत्र : : महापुरुष

१३. ...**श्रावस्ती में** ही...। तब आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् के पास आये। आ कर उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् सारिपुत्र ने भगवान् से यों पूछा—"भन्ते! लोक में 'महापुरुष, महापुरुष'—ऐसा बोलते हैं, यह 'महापुरुष' कौन होता है?"

'विमुक्तचित्त' को ही मैं 'महापुरुष' कहता हूँ। अविमुक्तचित्त को मैं 'महापुरुष' कभी नहीं मानता। सारिपुत्र! यह 'विमुक्तचित्त' कैसे होता है? यहाँ, सारिपुत्र! भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर...काया के आधार पर साधना करता हुआ चित्त को (संसार से) विरक्त (रागरहित) करता है, विरक्त हो कर उपादानों का त्याग करता हुआ उस भिक्षु का चित्त आश्रवों से मुक्त हो जाता है। वेदना में वेदनानुपश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी...धर्म में धर्मानुपश्यी...पूर्ववत्... आश्रवों से मुक्त हो जाता है। सारिपुत्र! इस तरह साधना कर के विमुक्तचित्तवाला ही 'महापुरुष' होता है। अतः इस विमुक्तचित्तता के कारण ऐसा पुरुष 'महापुरुष' कहलाता है। अविमुक्तचित्त 'महापुरुष' नहीं कहला सकता"॥ •

१२. नालन्दसुत्तं

१४. एकं समयं भगवा नालन्दायं विहरति पावारिकम्बवने। अथ खो [R.159] आयस्मा सारिपुत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं एतदवोच— ''एवंपसन्नो अहं, भन्ते, भगवति! न चाहु, न च भविस्सति, न चेतरहि विज्जति [B.138] अञ्ञो समणो वा ब्राह्मणो वा भगवता भिय्योभिञ्ञतरो, यदिदं—सम्बोधियं'' ति।

''उळारा खो त्यायं, सारिपुत्त, आसभी वाचा भासिता, एकंसो गहितो, सीहनादो नदितो—'एवंपसन्नो अहं, भन्ते, भगवति! न चाहु...भगवता भिय्योभिञ्ञतरो, यदिदं—सम्बोधियं'' ति।

''किं नु ते, सारिपुत्त, ये ते अहेसुं अतीतमद्धानं अरहन्तो सम्मासम्बुद्धा, सब्बे ते भगवन्तो चेतसा चेतो परिच्च विदिता—'एवंसीला ते भगवन्तो अहेसुं' इति वा, 'एवंधम्मा ते भगवन्तो अहेसुं' इति वा, 'एवंपञ्ञा ते भगवन्तो अहेसुं' इति वा, 'एवंविहारिनो ते भगवन्तो अहेसुं' इति वा, 'एवंविमुत्ता ते भगवन्तो अहेसुं' इति वा'' ति?

''नो हेतं, भन्ते''!

''किं पन ते, सारिपुत्त, ये ते भविस्सन्ति अनागतमद्धानं अरहन्तो सम्मासम्बुद्धा, सब्बे ते भगवन्तो चेतसा चेतो परिच्च विदिता—'एवंसीला ते भगवन्तो भविस्सन्ति' इति वा, 'एवंधम्मा ते भगवन्तो भविस्सन्ति' इति वा, 'एवंपञ्ञा ते भगवन्तो

---

१२. नालन्दसूत्र : : तथागत अतुलनीय

१४. एक समय भगवान् **नालन्दा के** प्रावारिकाम्रवन में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् के पास गये। जा कर उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। ...यों बोले—''भन्ते! आप भगवान् पर मेरी दृढ़ आस्था हो गयी है; क्यों कि, भन्ते! ज्ञान (सम्बोधि) में आप भगवान् से बढ़ कर कोई श्रमण या ब्राह्मण न हुआ है, न. आगे होगा, न अभी वर्तमान में है।''

''सारिपुत्र! तुम ने निर्भयता से बहुत ऊँची (महत्त्वपूर्ण) बात कह दी है। एक ही वाक्य में सब को समेट लिया। तथा यह सिंहनाद कर रहे हो—'भन्ते! आप भगवान् पर मेरी दृढ़ श्रद्धा हो गयी है...पूर्ववत्...न अभी वर्तमान में है?''

''ऐसी बात नहीं है, भन्ते!''

''तो क्या, सारिपुत्र! अतीत में हुए सभी अर्हत् सम्यक्सम्बुद्धों के विषय में

भविस्सन्ति' इति वा, 'एवंविहारिनो ते भगवन्तो भविस्सन्ति' इति वा, 'एवंविमुत्ता ते [R.160] भगवन्तो भविस्सन्ति' इति वा'' ति?

''नो हेतं, भन्ते''!

[N.137] ''किं पन त्याहं, सारिपुत्त, एतरहि, अरहं सम्मासम्बुद्धो चेतसा चेतो परिच्च विदितो—'एवंसीलो भगवा' इति वा, 'एवंधम्मो भगवा' इति वा, 'एवंपञ्ञो भगवा' इति वा, 'एवंविहारी भगवा' इति वा, 'एवंविमुत्तो भगवा' इति वा'' ति?

''नो हेतं, भन्ते''!

''एत्थ च ते, सारिपुत्त, अतीतानागतपच्चुप्पन्नेसु अरहन्तेसु सम्मासम्बुद्धेसु चेतोपरियञाणं नत्थि। अथ किञ्चरहि त्यायं, सारिपुत्त, उळारा आसभी वाचा भासिता, एकंसो गहितो, सीहनादो नदितो—'एवंपसन्नो अहं, भन्ते, भगवति! न चाहु, न च भविस्सति, न चेतरहि विज्जति अञ्ञो समणो वा ब्राह्मणो वा भगवता भिय्योभिञ्ञतरो, यदिदं—सम्बोधियं''' ति?

[B.139] ''न खो मे, भन्ते, अतीतानागतपच्चुप्पन्नेसु अरहन्तेसु सम्मासम्बुद्धेसु चेतोपरियञाणं अत्थि, अपि च मे धम्मन्वयो विदितो। सेय्यथापि, भन्ते, रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं दळ्हुद्धापं दळ्हपाकारतोरणं एकद्वारं। तत्रस्स दोवारिको पण्डितो ब्यत्तो

स्वचित्त से जान लिया है कि वे भगवान् ऐसे शील वाले, ऐसे धर्म वाले, ऐसी प्रज्ञा वाले तथा ऐसी साधना करने वाले या ऐसे विमुक्त थे?''

''नहीं, भन्ते!''

''तो क्या, सारिपुत्र! भविष्य में जो अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध थे उन के विषय में...पूर्ववत्...विमुक्त थे?''

''नहीं, भन्ते!''

''तो क्या, सारिपुत्र! जो वर्तमान में जो अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध है उन के विषय में स्वचित्त से यह जान लिया है कि वे भगवान् ऐसे शील वाले, ऐसे धर्म वाले, ऐसी प्रज्ञा वाले तथा ऐसी साधना करने वाले एवं ऐसे विमुक्त थे?''

''नहीं, भन्ते!''

''तो, सारिपुत्र! जब तुम अतीत, अनागत एवं वर्तमान अर्हत् सम्यक्सम्बुद्धों को अपने चित्त से नहीं जान पाये हो, तब क्यों निर्भय हो कर यह इतनी ऊँची बात कह रहे हो, एक ही वाक्य में सब को समेट रहे हो, तथा यह सिंहनाद कर रहे हो?''

''भन्ते! मैंने अतीत, अनागत एवं वर्तमान के अर्हत् सम्यक्सम्बुद्धों को तो अपने चित्त से नहीं जाना है, किन्तु इन के 'धर्मविनय' को भली भाँति समझ लिया है। जैसे,

मेधावी अञ्ञातानं निवारेता ञातानं पवेसेता। सो तस्स नगरस्स समन्ता अनुपरियायपथं अनुक्कममानो न पस्सेय्य पाकारसन्धिं वा पाकारविवरं वा, अन्तमसो बिळारनिक्खमनमत्तं पि। तस्स एवमस्स—'ये खो केचि ओळारिका पाणा इमं नगरं पविसन्ति वा निक्खमन्ति वा, सब्बे ते इमिना व द्वारेन पविसन्ति वा निक्खमन्ति वा' ति। एवमेव खो मे, भन्ते, धम्मन्वयो विदितो—'ये पि ते, भन्ते, अहेसुं अतीतमद्धानं अरहन्तो सम्मासम्बुद्धा, सब्बे ते भगवन्तो पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय [R.161] दुब्बलीकरणे चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्ता सत्त बोज्झङ्गे यथाभूतं भावेत्वा अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुज्झिंसु। ये पि ते, भन्ते, भविस्सन्ति अनागतमद्धानं अरहन्तो सम्मासम्बुद्धा, सब्बे ते भगवन्तो पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्ता सत्त बोज्झङ्गे यथाभूतं भावेत्वा अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुज्झिस्सन्ति। भगवा पि, भन्ते, एतरहि अरहं सम्मासम्बुद्धो पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे [N.138] चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्तो सत्त बोज्झङ्गे यथाभूतं भावेत्वा अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो'' ति।

''साधु साधु, सारिपुत्त! तस्मातिह त्वं, सारिपुत्त, इमं धम्मपरियायं अभिक्खणं भासेय्यासि भिक्खूनं भिक्खुनीनं उपासकानं उपासिकानं। येसं पि हि, सारिपुत्त,

---

भन्ते! किसी राजा का कोई सीमान्त नगर हो जिस के द्वार पर परकोटे सुदृढ हों, जिस के अन्दर जाने के लिये एक ही द्वार हो। उस पर नियुक्त द्वारपाल चतुर एवं बुद्धिमान् हो, जो अज्ञात लोगों को उस में न जाने दे तथा ज्ञात लोगों को ही अन्दर आने दे। वह उस नगर के परकोटे के चारों तरफ घूम कर जाँच ले, परख ले कि उस में कहीं भी ऐसा कोई छिद्र या द्वार न हो, जिस में से बिल्ली भी अन्दर आ सके! तब उस (द्वारपाल) की यह धारणा बने—'जितने भी छोटे या बड़े प्राणी हैं वे इसी मुख्य द्वार से इस नगर में आते जाते हैं'; इसी तरह, भन्ते! मैंने इस धर्मविनय को जान लिया है कि जितने भी अतीत सम्यक्सम्बुद्ध हुए हैं वे सभी भगवान् तथागत अपने पाँचों नीवरणों का प्रहाण कर, चित्तोपक्लेशों को प्रज्ञा से दुर्बल कर, चारों स्मृतिप्रस्थानों की भावना द्वारा सुप्रतिष्ठितचित्त हो कर सात बोध्यङ्गों की यथार्थतः भावना कर के ही लोकोत्तर सम्यक्सम्बोधि को प्राप्त हुए हैं। इसी तरह जो अनागत में सम्यक्सम्बुद्ध होंगे वे भी इसी प्रकार अपने पाँच...पूर्ववत्... सम्यक्सम्बोधि को प्राप्त करेंगे। आप भगवान् ने भी इन्हीं पाँच नीवरणों का प्रहाण कर...पूर्ववत्... सम्यक्सम्बोधि प्राप्त की है।''

''साधु, साधु, सारिपुत्र! साधु! तो सारिपुत्र! तुम इसी धर्मविनय को इन भिक्षु,

मोघपुरिसानं भविस्सति तथागते कङ्खा वा विमति वा, तेसंपिमं धम्मपरियायं सुत्वा या तथागते कङ्खा वा विमति वा सा पहीयिस्सती'' ति॥ ●

१३. चुन्दसुत्तं

१५. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। [B.140] तेन खो पन समयेन आयस्मा सारिपुत्तो मगधेसु विहरति नालकगामके आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। चुन्दो च समणुद्देसो आयस्मतो सारिपुत्तस्स उपट्ठाको होति।

अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो तेनेव आबाधेन परिनिब्बायि। अथ खो चुन्दो समणुद्देसो आयस्मतो सारिपुत्तस्स पत्तचीवरमादाय येन सावत्थि जेतवनं अनाथपिण्डिकस्स आरामो येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं [R.162] अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो चुन्दो समणुद्देसो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—''आयस्मा, भन्ते, सारिपुत्तो परिनिब्बुतो। इदमस्स पत्तचीवरं'' ति।

''अत्थि खो इदं, आवुसो चुन्द, कथापाभतं भगवन्तं दस्सनाय। आयामावुसो चुन्द, येन भगवा तेनुपसङ्कमिस्साम; उपसङ्कमित्वा भगवतो एतमत्थं आरोचेस्सामा'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो चुन्दो समणुद्देसो आयस्मतो आनन्दस्य पच्चस्सोसि।

भिक्षुणी, उपासक, उपासिकाओं को भी विस्तारपूर्वक बताते रहना। सारिपुत्र! जिन अज्ञजनों को भगवान् तथागत के विषय में विमति (सन्देह) या शङ्का होगी वह इस धर्मविनय को सुनने के बाद स्वत: दूर हो जायगी''॥ ●

१३. चुन्दसूत्र : : आयुष्मान् सारिपुत्र का परिनिर्वाण

१५. एक समय भगवान् **श्रावस्ती के** जेतवन महाविहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् सारिपुत्र मगध प्रदेश के नालकग्राम में साधनाकाल में किसी भयङ्कर रोग से पीड़ित हो कर कष्ट सह रहे थे। चुन्द श्रामणेर उस समय आयुष्मान् की सेवा (रोगपरिचर्या) कर रहे थे।

जब आयुष्मान् सारिपुत्र का उस रोग से देहपात (परिनिर्वाण) हो गया, तब चुन्द श्रामणेर आयुष्मान् सारिपुत्र के पात्रचीवर ले कर श्रावस्ती के जेतवन में आयुष्मान् आनन्द के पास गये, जा कर उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठ कर वे आयुष्मान् आनन्द से यों बोले—''भन्ते! आयुष्मान् सारिपुत्र का परिनिर्वाण हो गया है। ये उन के पात्रचीवर हैं।''

''आयुष्मन् चुन्द! यह बात भगवान् को बताने हेतु हम लोगों को उन के पास

अथ खो आयस्मा च आनन्दो चुन्दो च समणुद्देसो येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"अयं, भन्ते, चुन्दो समणुद्देसो एवमाह—'आयस्मा, भन्ते, सारिपुत्तो परिनिब्बुतो; इदमस्स पत्तचीवरं' ति। अपि च मे, भन्ते, मधुरकजातो विय कायो, दिसा पि मे न पक्खायन्ति, धम्मा पि मं नप्पटिभन्ति [N.139] 'आयस्मा सारिपुत्तो परिनिब्बुतो' ति सुत्वा"।

"किं नु खो ते, आनन्द, सारिपुत्तो सीलक्खन्धं वा आदाय परिनिब्बुतो, समाधिक्खन्धं वा आदाय परिनिब्बुतो, पञ्ञाक्खन्धं वा आदाय परिनिब्बुतो, विमुत्तिक्खन्धं वा आदाय परिनिब्बुतो, विमुत्तिञाणदस्सनक्खन्धं वा आदाय परिनिब्बुतो" ति?

"न च खो मे, भन्ते, आयस्मा सारिपुत्तो सीलक्खन्धं वा आदाय परिनिब्बुतो, समाधिक्खन्धं वा...पे०...पञ्ञाक्खन्धं वा...पे०...विमुत्तिक्खन्धं वा...पे०...विमुत्तिञाणदस्सनक्खन्धं वा आदाय परिनिब्बुतो। अपि च मे, भन्ते, आयस्मा सारिपुत्तो ओवादको अहोसि ओतिण्णो विञ्ञापको सन्दस्सको समादपको समुत्तेजको सम्प-

---

चलना चाहिये। चलो, आयुष्मन्! उन्हें यह बात बता दी जाय।"

"ठीक है, भन्ते!" कह कर आयुष्मन् चुन्द ने स्वीकार किया।

तब वे दोनों भगवान् के पास पहुँचे। पहुँच कर उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठ कर आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यों निवेदन किया—"भन्ते! यह चुन्द श्रामणेर बता रहा है कि आयुष्मान् सारिपुत्र का परिनिर्वाण हो चुका है। यह उस के पात्र एवं चीवर हैं। भन्ते! आयुष्मान् सारिपुत्र के इस दुःखद समाचार को सुन कर मेरे शरीर में अत्यधिक विकलता हो रही है। दिशाओं में मुझे कुछ नहीं सूझ रहा है। सब तरफ केवल अन्धकार ही दिखायी दे रहा है। यह समाचार सुन कर मेरा धर्मसाधना में भी मन नहीं लग रहा है"।

"आनन्द! क्या सारिपुत्र ने शीलस्कन्ध का या समाधिस्कन्ध का या प्रज्ञास्कन्ध, या विमुक्तिज्ञानदर्शनस्कन्ध का आश्रयण ले कर परिनिर्वाण नहीं पाया है?"

"भन्ते! मुझ को इस लिये दुःख नहीं है कि आयुष्मान् सारिपुत्र ने शील...समाधि...प्रज्ञा...या विमुक्तिज्ञानदर्शन का आश्रयण ले कर परिनिर्वाण पाया है, अपि तु मैं इस बात से दुःखी हूँ कि आयुष्मान् सारिपुत्र मेरे धर्मोपदेशक थे, मार्गदर्शक थे, धर्ममार्ग के बोधक, धर्ममार्ग पर चलने हेतु उत्साह एवं प्रेरणा देने वाले तथा धर्मश्रावण कर चित्त को प्रसन्न कर देने वाले थे। धर्म की ग्रन्थियों को समझाने में उन्हें कोई क्लेश,

हंसको, अकिलासु धम्मदेसनाय, अनुग्गाहको सब्रह्मचारीनं। तं मयं आयस्मतो सारिपुत्तस्स धम्मोजं धम्मभोगं धम्मानुग्गहं अनुस्सरामा'' ति।

[B.141] ''ननु तं, आनन्द, मया पटिकच्चेव अक्खातं—'सब्बेहि पियेहि मनापेहि [R.163] नानाभावो विनाभावो अञ्ञथाभावो। तं कुतेत्थ, आनन्द, लब्भा! यं तं जातं भूतं सङ्खतं पलोकधम्मं, तं वत मा पलुज्जी ति—नेतं ठानं विज्जति। सेय्यथापि, आनन्द, महतो रुक्खस्स तिट्ठतो सारवतो यो महन्ततरो खन्धो सो पलुज्जेय्य; एवमेव खो आनन्द, महतो भिक्खुसङ्घस्स तिट्ठतो सारवतो सारिपुत्तो परिनिब्बुतो। तं कुतेत्थ, आनन्द, लब्भा! यं तं जातं भूतं सङ्खतं पलोकधम्मं, तं वत मा पलुज्जी ति—नेतं ठानं विज्जति। तस्मातिहानन्द, अत्तदीपा विहरथ अत्तसरणा अनञ्ञसरणा, धम्मदीपा धम्मसरणा अनञ्ञसरणा।

''कथं चानन्द, भिक्खु अत्तदीपो विहरति अत्तसरणो अनञ्ञसरणो, धम्मदीपो धम्मसरणो अनञ्ञसरणो? इधानन्द, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एवं खो, आनन्द, भिक्खु अत्तदीपो विहरति अत्तसरणो अनञ्ञसरणो, धम्मदीपो धम्मसरणो अनञ्ञसरणो। ये हि केचि, आनन्द, एतरहि वा ममच्चये वा अत्तदीपा

श्रम या आलस्य नहीं होता था। वे सभी सब्रह्मचारियों पर अनुग्रह रखते थे। मैं इस समय आयुष्मान् सारिपुत्र की धर्म के प्रति की गयी सेवाओं तथा उन के कार्यों को स्मरण कर उन का कृतज्ञ हूँ, अनुगृहीत हूँ''।

''आनन्द! क्या मैने तुम को पहले ही यह नहीं समझा दिया था प्रिय एवं अभीष्ट पदार्थों से भी एक दिन वियोग होना ही है, उन से विछुड़ना ही है। संसार का यही नियम है। जो उत्पन्न हुआ है, उस में किसी न किसी दिन अन्यथाभाव आयगा ही, वह विनष्ट होगा ही। आनन्द! जैसे किसी बड़े वृक्ष की विशाल दृढ़ शाखा भी कभी न कभी उस से टूट कर गिर ही जाती है; इसी तरह समझो कि इस विशाल भिक्षुसङ्घ की शाखाभूत सारिपुत्र का परिनिर्वाण हो गया है। क्या यह सम्भव है कि जो उत्पन्न हुआ है, संस्कृत हुआ है, नाश स्वभाव वाला है, वह कभी नष्ट ही न हो! यह सम्भव नहीं है। अत: तुम स्वयं पर निर्भर बनो, अपनी शरण स्वयं बनो; किसी दूसरे पर आश्रित न रहो, उस से आशा न करो कि वह सदा तुम्हारा साथ देगा! धर्म से प्रकाश लो, धर्म की शरण में जाओ। उसी को अपना शरणस्थल समझो। किसी अन्य पर विश्वास न करो।

विहरिस्सन्ति अत्तसरणा अनञ्ञसरणा, धम्मदीपा धम्मसरणा अनञ्ञसरणा; [N.140] तमतग्गे मेते, आनन्द, भिक्खू भविस्सन्ति ये केचि सिक्खाकामा'' ति॥ •

१४. उक्कचेलसुत्तं

१६. एकं समयं भगवा वज्जीसु विहरति उक्कचेलायं गङ्गाय नदिया तीरे महता भिक्खुसङ्घेन सद्धिं अचिरपरिनिब्बुतेसु सारिपुत्तमोग्गल्लानेसु। तेन खो पन समयेन भगवा भिक्खुसङ्घपरिवुतो अज्झोकासे निसिन्नो होति।

अथ खो भगवा तुण्हीभूतं भिक्खुसङ्घं अनुविलोकेत्वा भिक्खू आमन्तेसि— ''अपिम्यायं, भिक्खवे, परिसा सुञ्ञा विय खायति परिनिब्बुतेसु सारिपुत्त-[R.164] मोग्गल्लानेसु। असुञ्ञा मे, भिक्खवे, परिसा होति, अनपेक्खा तस्सं दिसायं [B.142] होति यस्सं दिसायं सारिपुत्तमोग्गल्लाना विहरन्ति। ये हि ते, भिक्खवे, अहेसुं अतीत-मद्धानं अरहन्तो सम्मासम्बुद्धा, तेसं पि भगवन्तानं एतप्परमं येव सावकयुगं अहोसि; सेय्यथापि मय्हं सारिपुत्तमोग्गल्लाना। ये पि ते, भिक्खवे, भविस्सन्ति अनागतमद्धानं अरहन्तो सम्मासम्बुद्धा, तेसं पि भगवन्तानं एतप्परमं येव सावकयुगं भविस्सति; सेय्यथापि मय्हं सारिपुत्तमोग्गल्लाना। अच्छरियं, भिक्खवे, सावकानं! अब्भुतं, भिक्खवे,

---

कैसे, आनन्द! कोई स्वयं पर निर्भर बनता है, कैसे कोई अपनी शरण स्वयं बनता है? ...पूर्ववत्...। *[पीछे ग्लानसूत्र का अन्तिम अंश देखें।]*॥ •

१४. उल्काचेलसूत्र : : अग्रश्रावकों के विना भिक्षुसङ्घ शून्य

१६. एक समय भगवान् (बुद्ध) वज्जिप्रदेश के उल्काचेल ग्राम में गङ्गा नदी के किनारे पर वृहत् भिक्षुसङ्घ के साथ साधनाहेतु विराजमान थे, जबकि आयुष्मान् सारिपुत्र एवं आयुष्मान् महामोग्गल्लान का परिनिर्वाण हुए कुछ ही समय बीता था। उस समय भगवान् खुले आकाश के नीचे भिक्षुसङ्घ से घिरे हुए बैठे थे।

तब भगवान्, भिक्षुसङ्घ को मौन देख कर, भिक्षुसङ्घ पर दृष्टिपात करते हुए भिक्षुओं से यों बोले—''भिक्षुओ! आज मुझे यह भिक्षुपरिषद् शून्यवत् प्रतीत हो रही है। जब सारिपुत्र एवं मोग्गल्लान इस परिषद् में रहते थे तो यही परिषद् अशून्य (भरी हुई) लगती थी। वे जिस समय जिस दिशा में धर्मोपदेशहेतु निकलते थे उस समय वह दिशा अनपेक्ष (दूसरे की अपेक्षा न रखने वाली) होती थी। भिक्षुओ! अतीत काल में भी जो भी अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध हुए हैं उन भगवानों का भी इतनी ही उत्तम (श्रेष्ठ) श्रावकों का युगल (जोड़ी) था, जैसे कि ये मेरे सारिपुत्र मोग्गल्लान। इसी तरह, जो भी अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध भविष्यकाल में होंगे उन भगवानों का भी ऐसा ही उत्तम अग्रश्रावकयुगल होगा जैसे कि ये मेरे सारिपुत्र मोग्गल्लान। यह आश्चर्य है, यह अद्भुत है उन श्रावकों के लिये जो शास्ता

सावकानं! सत्थु च नाम सासनकरा भविस्सन्ति ओवादप्पटिकरा, चतुन्नं च परिसानं पिया भविस्सन्ति मनापा गरुभावनीया च! अच्छरियं, भिक्खवे, तथागतस्स, अब्भुतं, भिक्खवे, तथागतस्स! एवरूपे पि नाम सावकयुगे परिनिब्बुते नत्थि तथागतस्स सोको वा परिदेवो वा! तं कुतेत्थ, भिक्खवे, लब्भा! यं तं जातं भूतं सङ्खतं पलोकधम्मं, तं वत मा पलुज्जी ति—नेतं ठानं विज्जति। सेय्यथापि, भिक्खवे, महतो रुक्खस्स तिट्ठतो सारवतो ये महन्ततरो खन्धा ते पलुज्जेय्युं; एवमेव खो, भिक्खवे, महतो भिक्खुसङ्घस्स तिट्ठतो सारवतो सारिपुत्तमोग्गल्लाना परिनिब्बुता। तं कुतेत्थ, भिक्खवे, लब्भा! यं तं जातं भूतं सङ्खतं पलोकधम्मं, तं वत मा पलुज्जी ति—नेतं ठानं विज्जति। तस्मातिह, भिक्खवे, अत्तदीपा विहरथ अत्तसरणा अनञ्ञसरणा, धम्मदीपा धम्मसरणा अनञ्ञसरणा।

[N.141] ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु अत्तदीपो विहरति अत्तसरणो अनञ्ञसरणो, धम्मदीपो धम्मसरणो अनञ्ञसरणो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०... चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु अत्तदीपो विहरति अत्तसरणो [R.165] अनञ्ञसरणो, धम्मदीपो धम्मसरणो अनञ्ञसरणो। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि वा ममच्चये वा अत्तदीपा विहरिस्सन्ति अत्तसरणा अनञ्ञसरणा, धम्मदीपा धम्मसरणा अनञ्ञसरणा; तमतग्गे मेते, भिक्खवे, भिक्खू भविस्सन्ति ये केचि सिक्खाकामा'' ति॥ •

के धर्म के भी श्रेष्ठ प्रचारक होंगे तथा समस्त (चारों) धर्मपरिषदों के भी वे प्रिय होंगे, सम्मानास्पद होंगे। भिक्षुओ! तथागत के लिये भी यह आश्चर्यमय एवं अद्भुत बात है कि इस प्रकार के श्रावकों के युगल के परिनिर्वाण के बाद भी तथागत को न कोई शोक है न परिदेव! भिक्षुओ! वह मिलेगा भी कहाँ से; क्यों कि जो कुछ जात, भूत, संस्कृत है, वह सब विनाशवान् है, वह विनष्ट न हो, यह कैसे सम्भव है! जैसे, भिक्षुओ! किसी बड़े वृक्ष की कोई बड़ी शाखा कभी न कभी टूट कर गिर जाय, उसी तरह, तथागत के इस महान् भिक्षुसङ्घ के सारिपुत्र एवं मोग्गल्लान परिनिर्वृत हो गये। जो जात, भूत, संस्कृत है वह विनष्ट न हो—यह कैसे सम्भव है। इस लिये, भिक्षुओ! तुम आत्मदीप, आत्मशरण बनो, अन्यशरण नहीं; धर्मदीप, धर्मशरण बनो, धर्म के अतिरिक्त किसी अन्य को अपना शरणस्थल न मानो।

भिक्षुओ! कैसे कोई भिक्षु आत्मदीप, आत्मशरण... ? ...पूर्ववत्...''॥ •

[उपर्युक्त ग्लानसूत्र में वर्णित एतत्सम्बद्ध अंश को यहाँ भी पढ़ लें।]

१५. बाहियसुत्तं

१७. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मा बाहियो येन भगवा तेनुप-[B.143] सङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा बाहियो भगवन्तं एतदवोच—"साधु मे, भन्ते, भगवा सङ्खित्तेन धम्मं देसेतु, यमहं भगवतो धम्मं सुत्वा एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरेय्यं" ति।

"तस्मातिह त्वं, बाहिय, आदिमेव विसोधेहि कुसलेसु धम्मेसु। को चादि कुसलानं धम्मानं? सीलं च सुविसुद्धं, दिट्ठि च उजुका। यतो च खो ते, बाहिय, सीलं च सुविसुद्धं भविस्सति, दिट्ठि च उजुका, ततो त्वं, बाहिय, सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय चत्तारो सतिपट्ठाने भावेय्यासि।

"कतमे चत्तारो? इध, त्वं, बाहिय, काये कायानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। यतो खो त्वं, बाहिय, सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय इमे चत्तारो सतिपट्ठाने एवं भावेस्ससि, ततो तुय्हं, बाहिय, या रत्ति वा दिवसो वा आगमिस्सति, वुद्धि येव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानी" ति।

अथ खो आयस्मा बाहियो भगवतो भासितं अभिनन्दित्वा [N.142, R.166]

---

१५. बाहियसूत्र : : कुशलधर्मों का आदि

१७. ...**श्रावस्ती में** ही...। तब आयुष्मान् बाहिय भगवान् के पास गये, जा कर उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठ कर उन्होंने भगवान् से यों निवेदन किया—"अच्छा हो, भन्ते कि आप मुझे संक्षेप में ऐसा धर्मोपदेश करें कि उसे सुन कर एकान्त में बैठ कर सफल साधना कर सकूँ।"

"बाहिय! तुम अपने कुशल धर्मों के आदि का ही विशोधन करो। यह कुशल धर्मों का 'आदि' क्या है? सुविशुद्ध शील एवं सरल दृष्टि। बाहिय! जब तुम्हारा शील सर्वथा शुद्ध होगा तथा दृष्टि सरल हो जायगी तो, बाहिय! तूँ उस शील के आधार चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना कर पायगा।

कौन से चार? यहाँ तूँ काया में कायानुपश्यी हो कर...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...वेदना में वेदनानुपश्यी हो कर...धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर, उत्साहसम्पन्न, स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ बन कर, लौकिक अभिध्या एवं दौर्मनस्य को दबा कर साधना कर। जब तूँ बाहिय! इस प्रकार साधना करेगा तो तेरी आगामी रात्रि एवं दिन कल्याणमय ही होंगे। इस से तेरे कुशल धर्मों में वृद्धि ही होगी, हानि की कोई सम्भावना नहीं है।"

अनुमोदित्वा उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि। अथ खो आयस्मा बाहियो एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो नचिरस्सेव—यस्सत्थाय कुलपुत्ता सम्मदेव अगारस्मा अनगारियं पब्बजन्ति, तदनुत्तरं—ब्रह्मचरिय-परियोसानं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहासि। "खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया" ति अब्भञ्ञासि। अञ्ञतरो च पनायस्मा बाहियो अरहतं अहोसी ति॥ ●

१६. उत्तियसुत्तं

१८. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मा उत्तियो येन भगवा तेनुपसङ्कमि...पे०... [B.144] एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा उत्तियो भगवन्तं एतदवोच—"साधु मे, भन्ते, भगवा सङ्खित्तेन धम्मं देसेतु, यमहं भगवतो धम्मं सुत्वा एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरेय्यं" ति।

"तस्मातिह त्वं, उत्तिय, आदिमेव विसोधेहि कुसलेसु धम्मेसु। को चादि कुसलानं धम्मानं? सीलं च सुविसुद्धं, दिट्ठि च उजुका। यतो च खो ते, उत्तिय, सीलं च सुविसुद्धं भविस्सति, दिट्ठि च उजुका, ततो त्वं, उत्तिय, सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय चत्तारो सतिपट्ठाने भावेय्यासि।

"कतमे चत्तारो? इध त्वं, उत्तिय, काये कायानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। यतो खो त्वं, उत्तिय, सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय इमे चत्तारो सतिपट्ठाने एवं भावेस्ससि, ततो त्वं, उत्तिय, गमिस्ससि मच्चुधेय्यस्स पारं" ति।

अथ खो आयस्मा उत्तियो भगवतो भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि। अथ खो आयस्मा उत्तियो एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो नचिरस्सेव—यस्सत्थाय कुलपुत्ता

तब वह आयुष्मान् बाहिय भगवान् के भाषण का अभिनन्दन अनुमोदन कर आसन से उठ कर साधनाहेतु चल दिये। तथा वे एकान्त में...पूर्ववत्...शीघ्र ही अर्हतों में एक गिने जाने लगे॥ ●

१६. उत्तियसूत्र : : कुशल धर्मों का आदि

१८. ...**श्रावस्ती में** ही...। ...पूर्वसूत्रवत्...। तो आयुष्मान् उत्तिय! तुम मृत्यु के पार चले जाओगे।

सम्मदेव अगारस्मा अनगारियं पब्बजन्ति, तदनुत्तरं—ब्रह्मचरियपरियोसानं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहासि। ''खीणा जाति, वुसितं [N.143] ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया'' ति अब्भञ्ञासि। अञ्ञतरो च पनायस्मा उत्तियो अरहतं अहोसी ति॥ •

१७. अरियसुत्तं

१९. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता अरिया निय्यानिका निय्यन्ति तक्करस्स सम्मा दुक्खक्खयाय। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो सतिपट्ठाना [R.167] भाविता बहुलीकता अरिया निय्यानिका निय्यन्ति तक्करस्स सम्मा दुक्खक्खयाया'' ति॥

१८. ब्रह्मसुत्तं

२०. एकं समयं भगवा उरुवेलायं विहरति नज्जा नेरञ्जराय तीरे [B.145] अजपालनिग्रोधे पठमाभिसम्बुद्धो। अथ खो भगवतो रहोगतस्स पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को उदपादि—''एकायन्वायं मग्गो सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना।

तब आयुष्मान् उत्तिय...अर्हतों में एक गिने जाने लगे॥ •

१७. आर्यसूत्र : : स्मृतिप्रस्थान की भावना से दुःखक्षय

१९. ...''भिक्षुओ! इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना एवं अभ्यास करने से दुःखों का सर्वथा क्षय हो जाता है। कौन से चार? भिक्षुओ! यहाँ कोई साधक काय में कायानुपश्यना... वेदनाओं में वेदनानुपश्यना...चित्त में चित्तानुपश्यना..., एवं धर्म में धर्मानुपश्यना...। भिक्षुओ! ये चार स्मृतिप्रस्थान, साधना एवं अभ्यास किये जाने पर, मुक्ति की ओर बढ़ाने वाले तथा समस्त दुःखों के क्षयकारक ही होंगे''॥ •

१८. ब्रह्मसूत्र : : चित्तविशुद्धि का एकमात्र मार्ग

२०. एक समय भगवान् (बुद्ध) निरञ्जना नदी के तट पर अजपाल नामक न्यग्रोधवृक्ष के नीचे बैठे हुए सम्बोधिप्राप्त्यनन्तर समाधिसुख का अनुभव कर रहे थे। तब एकान्त में विराजमान भगवान् के चित्त में यह विचार उठा—''प्राणियों की विशुद्धिहेतु, शोकपरिदेव आदि के समतिक्रमणहेतु, दुःख एवं दौर्मनस्य के नाशहेतु, ज्ञान की प्राप्तिहेतु तथा निर्वाण

"कतमे चत्तारो? काये वा भिक्खु कायानुपस्सी विहरेय्य आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु वा भिक्खु...पे०...चित्ते वा भिक्खु...धम्मेसु वा भिक्खु धम्मानुपस्सी विहरेय्य आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एकायन्वायं मग्गो सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना" ति।

अथ खो ब्रह्मा सहम्पति भगवतो चेतसा चेतोपरिवितक्कमञ्ञाय—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—ब्रह्मलोके अन्तरहितो भगवतो पुरतो पातुरहोसि। अथ खो ब्रह्मा सहम्पति [N.144] एकंसं उत्तरासङ्गं करित्वा येन भगवा तेनञ्जलिं पणामेत्वा भगवन्तं एतदवोच— "एवमेतं, भगवा, एवमेतं, सुगत! एकायन्वायं, भन्ते, मग्गो सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना।

"कतमे चत्तारो? काये वा, भन्ते, भिक्खु कायानुपस्सी विहरेय्य आतापी [R.168] सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु वा, भन्ते, भिक्खु...पे०...चित्ते वा, भन्ते, भिक्खु...धम्मेसु वा, भन्ते, भिक्खु धम्मानुपस्सी विहरेय्य आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एकायन्वायं, भन्ते, मग्गो सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स [B.146] अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना" ति।

२१. इदमवोच ब्रह्मा सहम्पति। इदं वत्वा अथापरं एतदवोच—

"एकायनं जातिखयन्तदस्सी, मग्गं पजानाति हितानुकम्पी।
एतेन मग्गेन तरिंसु पुब्बे, तरिस्सन्ति ये च तरन्ति ओघं॥" ति॥ •

के साक्षात्कारहेतु ये चार स्मृतिप्रस्थान ही श्रेष्ठ हैं। कौन से चार? काय में कायानुपश्यना ...वेदना में वेदनानुपश्यना...चित्त में चित्तानुपश्यना...एवं धर्म में धर्मानुपश्यना... ये चार स्मृतिप्रस्थान हैं।

तब ब्रह्मा सहम्पति भगवान् के चित्त को स्वचित्त से जान कर...पूर्ववत्...भगवान् से यों बोले—"भन्ते! आप जो कह रहे हैं, यही उचित है कि ये स्मृतिप्रस्थान ही मुक्ति की ओर बढाने वाले निर्वाण का साक्षात्कार कराने वाले तथा समस्त दु:खक्षयकारक हैं।

"कौन से चार? ...पूर्ववत्...ये चार स्मृतिप्रस्थान हैं।"

२१. ब्रह्मा सहम्पति यों बोले। तथा गाथा के माध्यम से उन्होंने यह भी कहा—

१९. सेदकसुत्तं

२२. एकं समयं भगवा सुम्भेसु विहरति सेदकं नाम सुम्भानं निगमो। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"भूतपुब्बं, भिक्खवे, चण्डालवंसिको चण्डालवंसं उस्सापेत्वा मेदकथालिकं अन्तेवासिं आमन्तेसि—'एहि त्वं, सम्म मेदकथालिके, चण्डालवंसं अभिरुहित्वा मम उपरिखन्धे तिट्ठाही' ति। 'एवं, आचरिया' ति खो, भिक्खवे, मेदकथालिका अन्तेवासी चण्डालवंसिकस्स पटिस्सुत्वा चण्डालवंसं अभिरुहित्वा आचरियस्स उपरिखन्धे अट्ठासि। अथ खो, भिक्खवे, चण्डालवंसिको मेदकथालिकं अन्तेवासिं एतदवोच—'त्वं, सम्म मेदकथालिके, ममं रक्ख, [R.169] अहं तं रक्खिस्सामि। एवं मयं अञ्ञमञ्ञं गुत्ता अञ्ञमञ्ञं रक्खिता सिप्पानि चेव दस्सेस्साम, लाभं च लच्छाम, सोत्थिना च चण्डालवंसा ओरोहिस्सामा' ति। एवं वुत्ते, भिक्खवे, मेदकथालिका अन्तेवासी चण्डालवंसिकं एतदवोच—'न खो पनेतं, [N.145] आचरिय, एवं भविस्सति। त्वं, आचरिय, अत्तानं रक्ख, अहं अत्तानं रक्खिस्सामि। एवं मयं अत्तगुत्ता अत्तरक्खिता सिप्पानि चेव दस्सेस्साम, लाभं च लच्छाम, सोत्थिना च चण्डालवंसा ओरोहिस्सामा' ति।

"प्राणियों के हितैषी तथा उन पर दयालु आप ही इस जाति एवं दु:खक्षय के नाशक एकमात्र मार्ग को जानते हैं। इस एकमात्र मार्ग का आश्रयण करने वाले अतीत में जन्मे तथा भविष्य में होने वाले प्राणी ही इस जन्म मरण की बाढ को पार करने में समर्थ हो सके हैं॥"

●

१९. स्वेदकसूत्र : : स्मृतिप्रस्थान की भावना

२२. एक समय भगवान् (बुद्ध) शुम्भ जनपद के **स्वेदक** नामक शुम्भों के कस्बे में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को आमन्त्रित किया, तथा यों उपदेश किया—पूर्वकाल में, भिक्षुओ! कोई चण्डालवंशिक नाम का नट अपने हाथ में एक बहुत लम्बा बाँस उठा कर अपने शिष्य मेदकथालिक से कहने लगा—'अरे ओ मेदकथालिक! तूँ इस लम्बे बाँस पर चढ़ तथा वहाँ से मेरे कन्धे पर कूद कर खड़ा हो।' 'ठीक है, आचार्य!'—यों कहते हुए उस मेदकथालिक ने ऐसा ही किया और वह बाँस पर चढ़ कर वहाँ से कूद कर उस के कन्धे पर कूद कर खड़ा हो गया। तब उस चण्डालवंशिक ने कहा—'सौम्य मेदकथालिक! इस तरह तूँ मेरी रक्षा कर! मैं तेरी रक्षा करूँगा। इस तरह, हम दोनों परस्पर सुरक्षित रहते हुए लोगों को अपनी कला भी दिखायँगे तथा हमें कुछ धनप्राप्ति भी हो जायगी एवं सुखपूर्वक इस बाँस पर उतार-चढाव भी कर सकेंगे।' ऐसा कहे जाने पर, भिक्षुओ! उस मेदकथालिक शिष्य ने चण्डालवंशिक

"सो तत्थ ञायी," ति भगवा एतदवोच, "यथा मेदकथालिका अन्तेवासी आचरियं अवोच। 'अत्तानं, भिक्खवे, रक्खिस्सामी' ति सतिपट्ठानं सेवितब्बं; 'परं रक्खिस्सामी' ति सतिपट्ठानं सेवितब्बं। अत्तानं, भिक्खवे, रक्खन्तो परं रक्खति, परं रक्खन्तो अत्तानं रक्खति।

[B.147] "कथं च, भिक्खवे, अत्तानं रक्खन्तो परं रक्खति? आसेवनाय, भावनाय, बहुलीकम्मेन—एवं खो, भिक्खवे, अत्तानं रक्खन्तो परं रक्खति। कथं च, भिक्खवे, परं रक्खन्तो अत्तानं रक्खति? खन्तिया, अविहिंसाय, मेत्तचित्तताय, अनुद्दयताय—एवं खो, भिक्खवे, परं रक्खन्तो अत्तानं रक्खति। अत्तानं, भिक्खवे, रक्खिस्सामी ति सतिपट्ठानं सेवितब्बं; परं रक्खिस्सामी ति सतिपट्ठानं सेवितब्बं। अत्तानं, भिक्खवे, रक्खन्तो परं रक्खति, परं रक्खन्तो अत्तानं रक्खती" ति॥

२०. जनपदकल्याणीसुत्तं

२३. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सुम्भेसु विहरति सेदकं नाम सुम्भानं निगमो। [R.170] तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"भिक्खवो" ति। "भदन्ते" ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

"सेय्यथापि, भिक्खवे, 'जनपदकल्याणी, जनपदकल्याणी' ति खो, भिक्खवे,

---

से यों कहा—'परन्तु परस्पर सुरक्षा वाली बात नहीं चल सकेगी, आप अपनी रक्षा करेंगे, मैं अपनी रक्षा करूँगा। यों, हम दोनों अपनी अपनी रक्षा करते हुए ही कलाप्रदर्शन कर सकेंगे, धनप्राप्ति भी कर सकेंगे तथा इस बाँस पर सुखपूर्वक चढ उतर सकेंगे।'

भगवान् बोले—"उन दोनों में वह मेदकथालिक ही बुद्धिमान् (समझदार) था; जिसे रक्षा का उचित उपाय ज्ञात था। भिक्षुओ! 'अपनी रक्षा करूँगा'—ऐसे स्मृतिप्रस्थान की भावना करनी चाहिये, 'पर की रक्षा करूँगा'—ऐसे स्मृतिप्रस्थान की भावना करनी चाहिये; क्यों कि अपनी रक्षा करता हुआ ही कोई दूसरे की रक्षा कर सकता है, या पर की रक्षा करता हुआ अपनी रक्षा कर सकता है।

"कैसे, भिक्षुओ! अपनी रक्षा करता हुआ पर की रक्षा कर सकता है? गुरुमुख से श्रवण से, साधना से तथा अभ्यास से। यों भिक्षुओ! अपनी रक्षा करता हुआ पर की रक्षा करता है। और कैसे, भिक्षुओ! पर की रक्षा करता हुआ स्व की रक्षा करता है? क्षान्ति से, अहिंसा से तथा मैत्रीचित्त से एवं दया से—यों, भिक्षुओ! पर की रक्षा करता हुआ स्व की रक्षा करता है। अतः स्व तथा पर—दोनों की रक्षा के लिये स्मृतिप्रस्थान का अभ्यास करना चाहिये। तभी स्व की रक्षा करता हुआ कोई पर की रक्षा कर सकता है तथा पर की रक्षा करता हुआ स्व की रक्षा कर सकता है"॥

महाजनकायो सन्निपतेय्य। 'सा खो पनस्स जनपदकल्याणी परमपासाविनी नच्चे परमपासाविनी गीते, 'जनपदकल्याणी नच्चति गायती' ति खो, भिक्खवे, भिय्यो-सोमत्ताय महाजनकायो सन्निपतेय्य। अथ पुरिसो आगच्छेय्य जीवितुकामो अमरितुकामो सुखकामो दुक्खप्पटिकूलो। तमेनं एवं वदेय्य—'अयं ते, अम्भो पुरिस, समतित्तिको तेलपत्तो अन्तरेन च महासमज्जं अन्तरेन च जनपदकल्याणिया परिहरितब्बो। पुरिसो च ते उक्खित्तासिको पिट्ठितो पिट्ठितो अनुबन्धिस्सति। यत्थेव नं थोकं पि छड्डेस्सति तत्थेव ते सिरो पातेस्सती' ति। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, अपि नु सो पुरिसो अमुं तेलपत्तं अमनसिकरित्वा बहिद्धा पमादं आहरेय्या'' ति? [N.146]

''नो हेतं, भन्ते!'' •

''उपमा खो म्यायं, भिक्खवे, कता अत्थस्स विञ्ञापनाय। अयं चेवेत्थ अत्थो—समतित्तिको तेलपत्तो ति खो, भिक्खवे, कायगताय एवं सतिया अधिवचनं। तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं—'कायगता सति नो भाविता भविस्सति [B.148] बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा' ति। एवं हि खो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं'' ति॥ •

नालन्दवग्गो दुतियो॥

---

२०. जनपदकल्याणीसूत्र : : जनपदकल्याणी (वेश्या) का दृष्टान्त

२३. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) शुम्भ जनपद के **स्वेदक** नाम के किसी शुम्भों के ग्राम में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को उपदेश देते हुए यह कहा—

''जैसे, भिक्षुओ! किसी जनपदकल्याणी के आने की बात सुन कर लोग एकत्र हो जायँ। किसी जनपदकल्याणी के विषय में यह सुन कर कि वह नृत्य एवं गीत में बहुत कुशल है—लोग एकत्र हो ही जाते हैं। वहाँ कोई ऐसा पुरुष आये जो जीना चाहता हो, मरना न चाहता हो, सुखी रहना चाहता हो, दु:खी नहीं। उसे यह कहा जाय—'अरे पुरुष! तुम्हें यह तैलपूर्ण पात्र ले कर जनपदकल्याणी एवं इस जनसम्मर्द (=लोगों की भीड़) के मध्य से जाना होगा। तुम्हारे पीछे एक खड्गधारी योद्धा रहेगा जो तुम से तैल का एक बिन्दु भी पृथ्वी पर गिरते ही तुम्हारा शिर ग्रीवा से पृथक् कर देगा'। भिक्षुओ! तो तुम क्या समझते हो, वह पुरुष तैल का एक बिन्दु भी पात्र से बाहर गिरने देगा?''

''नहीं, भन्ते!''

''भिक्षुओ! मैंने तुम को यह एक दृष्टान्त दिया है अपनी बात को समझाने के लिये। वह समझाना यों है—यहाँ तैलपूर्ण पात्र ही इस कायगतास्मृति को समझो। तथा

तस्सुद्दानं

[R.171] महापुरिसो नालन्दं, चुन्दो चेलं च बाहियो।
उत्तियो अरियो ब्रह्मा, सेदकं जनपदेन चा॥ ति॥ •

उस से तुम यह शिक्षा ग्रहण करो—'मैं कायगतास्मृति की भावना करूँगा, उस का अभ्यास करूँगा, आत्मसात् कर लूँगा, उसे सिद्ध कर लूँगा, अनुष्ठित कर लूँगा, परिचित कर लूँगा। उसे भली भाँति आरम्भ कर लूँगा।' भिक्षुओ! ऐसा तुम्हें सीखना चाहिये''॥ •

नालन्दवर्ग द्वितीय सम्पन्न॥

इस नालन्दवर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. महापुरुषसूत्र, २. नालन्दसूत्र, ३. चुन्दसूत्र, ४. उल्काचेलसूत्र, ५. बाहियसूत्र, ६. उत्तियसूत्र, ७. आर्यसूत्र, ८. ब्रह्मसूत्र, ९. स्वेदकसूत्र एवं १०. जनपदकल्याणीसूत्र॥ •

३. सीलट्ठितिवग्गो ततियो

२१. सीलसुत्तं

२४. एवं मे सुत्तं। एकं समयं आयस्मा च आनन्दो आयस्मा च भद्दो पाटलिपुत्ते विहरन्ति कुक्कुटारामे। अथ खो आयस्मा भद्दो सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मता आनन्देन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा भद्दो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—"यानिमानि, आवुसो आनन्द, कुसलानि सीलानि वुत्तानि भगवता, इमानि कुसलानि सीलानि किमत्थियानि वुत्तानि भगवता" ति?

"साधु साधु, आवुसो भद्द! भद्दको खो ते, आवुसो भद्द, उम्मङ्गो, भद्दकं पटिभानं, कल्याणी परिपुच्छा। एवं हि त्वं, आवुसो भद्द, पुच्छसि—'यानिमानि, आवुसो आनन्द, कुसलानि सीलानि वुत्तानि भगवता, इमानि कुसलानि सीलानि किमत्थियानि वुत्तानि भगवता'" ति?

"एवमावुसो" ति।

"यानिमानि, आवुसो भद्द, कुसलानि सीलानि वुत्तानि भगवता, इमानि कुसलानि सीलानि यावदेव चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावनाय वुत्तानि भगवता। कतमेसं [N.147] चतुन्नं? इधावुसो, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा,

---

३. शीलस्थितिवर्ग

२१. शीलसूत्र : : स्मृतिप्रस्थान भावनाहेतु कुशल शील

२४. ऐसा मैंने सुना है। एक समय आयुष्मान् आनन्द एवं आयुष्मान् भद्र **पाटलिपुत्र** के कुक्कुटाराम में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब कभी आयुष्मान् भद्र सायङ्कालीन साधना से विरत हो कर आयुष्मान् आनन्द के पास गये। कुशलमङ्गल जानने के बाद आयुष्मान् भद्र ने आयुष्मान् आनन्द से यह पूछा—"आयुष्मन् आनन्द! भगवान् ने कुशल शीलों का व्याख्यान किस लिये किया है?"

"बहुत अच्छा प्रश्न किया, आयुष्मन् भद्र! तुम्हारा उत्साह तथा तुम्हारी यह पिपृच्छा—दोनों ही शुभ हैं। आयुष्मन् भद्र! तुम यही न पूछना चाह रहे हो—'आयुष्मन् आनन्द! भगवान् ने ये जो कुशल शील हम लोगों को बताये हैं वे किस लिये बताये हैं?'"

"हाँ, आयुष्मन्!"

"आयुष्मन् भद्र! भगवान् द्वारा बताये गये सभी कुशल शील चारों स्मृतिप्रस्थानों

[B.149] विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी [R.172] विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। यानिमानि, आवुसो भद्द, कुसलानि सीलानि वुत्तानि भगवता, इमानि कुसलानि सीलानि यावदेव इमेसं चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावनाय वुत्तानि भगवता'' ति॥ ●

२२. चिरट्ठितिसुत्तं

२५. तंयेव निदानं। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा भद्दो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—''को नु खो, आवुसो आनन्द, हेतु को पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होति? को पनावुसो आनन्द, हेतु को पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होती'' ति?

''साधु साधु, आवुसो भद्द! भद्दको खो ते, आवुसो भद्द, उम्मङ्गो, भद्दकं पटिभानं, कल्याणी परिपुच्छा। एवं हि त्वं, आवुसो भद्द, पुच्छसि—'को, नु, खो, आवुसो आनन्द, हेतु को पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होति? को पनावुसो आनन्द, हेतु को पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मे चिरट्ठितिको होती''' ति?

''एवमावुसो'' ति।

की साधना में दृढ़ता लाने में सहायक होते हैं? कौन से चार? यहाँ, आयुष्मन्! काया में कायानुपश्यी... वेदना में वेदनानुपश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी...एवं धर्म में धर्मानुपश्यी... पूर्ववत्...। ...ये सभी कुशल शील भगवान् ने स्मृतिप्रस्थानों में दृढता लाने के लिये बतलाये हैं''॥ ●

२२. चिरस्थितिसूत्र : : धर्म की चिरस्थायिता

२५. उसी (पाटलिपुत्र के कुक्कुटाराम) स्थान में...। ...एक ओर बैठे आयुष्मान् भद्र ने आयुष्मान् आनन्द से यों पूछा—''आयुष्मन् आनन्द! क्या हेतु या क्या प्रत्यय है कि तथागत के परिनिर्वाण के बाद (हमारा यह) सद्धर्म चिरकाल तक स्थिर नहीं रह पाता? या फिर वे कौन से हेतु या प्रत्यय हैं जिन से यह सद्धर्म, भगवान् के परिनिर्वृत होने पर भी, चिरकाल तक स्थिर रहता है?''

''आयुष्मन् भद्र! तुम्हारा यह उत्साह, तुम्हारी यह सूझ तथा तुम्हारी यह परिपृच्छा—तीनों ही बहुत शुभ हैं। आयुष्मन् भद्र! तुम यही पूछ रहे हो ना कि कभी तथागत के परिनिर्वृत होने पर यह धर्म चिरकाल तक नहीं ठहरता, तथा कभी उन के परिनिर्वृत होने पर भी चिरकाल तक ठहरा रहता है—इस में क्या कारण है?''

''हाँ, आयुष्मन्!''

"चतुन्नं खो, आवुसो, सतिपट्ठानानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होति। चतुन्नं च खो, आवुसो, सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होति।

"कतमेसं चतुन्नं? इधावुसो, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होति। इमेसं च खो, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होती" ति॥ ●

२३. परिहानसुत्तं

२६. एकं समयं आयस्मा च आनन्दो आयस्मा च भद्दो [N.148, B.150, R.173] पाटलिपुत्ते विहरन्ति कुक्कुटारामे। अथ खो आयस्मा भद्दो सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मता आनन्देन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा भद्दो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—"को नु खो, आवुसो आनन्द, हेतु को पच्चयो येन सद्धम्मपरिहानं होति? को नु खो, आवुसो आनन्द, हेतु को पच्चयो येन सद्धम्मअपरिहानं होती" ति?

"साधु साधु, आवुसो भद्द! भद्दको खो ते, आवुसो भद्द, उम्मङ्गो, भद्दकं

"आयुष्मन् भद्र! चार स्मृतिप्रस्थानों की भिक्षुओं द्वारा यथार्थतः साधना न करने से यह धर्म चिरस्थितिक नहीं होता। तथा इन्हीं चारों स्मृतिप्रस्थानों की भिक्षुओं द्वारा यथार्थतः भावना करने से यह धर्म चिरस्थितिक रह जाता है।

"किन चार स्मृतिप्रस्थानों की? काया में कायानुपश्यना...वेदना में वेदनानुपश्यना... चित्त में चित्तानुपश्यना...एवं धर्म में धर्मानुपश्यना...।...पूर्ववत्...। इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की भिक्षुओं द्वारा भावना न करने से धर्म चिरकाल तक नहीं ठहर पाता। तथा इन्हीं चारों की यथार्थ भावना करने से यही धर्म चिरकाल तक ठहरने में समर्थ हो जाता है"॥ ●

२३. परिहाणसूत्र : : सद्धर्म का परिहाण

२६. एक समय...पूर्वसूत्रवत्...। "आयुष्मन् आनन्द! क्या हेतु क्या प्रत्यय है कि सद्धर्म की परिहाणि हो जाती है? तथा क्या हेतु क्या प्रत्यय है कि सद्धर्म की परिहाणि नहीं भी होती?" ...पूर्ववत्...।

पटिभानं, कल्याणी परिपुच्छा। एवं हि त्वं, आवुसो भद्द, पुच्छसि—'को, नु, खो, आवुसो आनन्द, हेतु को पच्चयो येन सद्धम्मपरिहानं होति? को पनावुसो आनन्द, हेतु को पच्चयो येन सद्धम्मअपरिहानं होती''' ति?

''एवमावुसो'' ति।

''चतुन्नं खो, आवुसो, सतिपट्ठानानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता सद्धम्मपरिहानं होति। चतुन्नं च खो, आवुसो, सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता सद्धम्मअपरिहानं होति।

''कतमेसं चतुन्नं? इधावुसो, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता सद्धम्मपरिहानं होति। इमेसं च खो, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता सद्धम्म-अपरिहानं होती'' ति॥

२४. सुद्धसुत्तं

२७. सावत्थिनिदानं। ''चत्तारोमे, भिक्खवे, सतिपट्ठाना। कतमे चत्तारो? इध, [N.149, R.174] भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो [B.151] सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो सतिपट्ठाना'' ति॥

२५. अञ्ञतरब्राह्मणसुत्तं

२८. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने

''आयुष्मन्! चारों स्मृतिप्रस्थानों की भिक्षुओं द्वारा यथाविधि भावना न करने से सद्धर्म की परिहाणि हो जाती है...तथा...यथाविधि भावना करने से सद्धर्म में स्थायिता (अपरिहाणि) आ जाती है''॥

२४. शुद्धसूत्र : : चार स्मृतिप्रस्थान

२७. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! ये चार स्मृतिप्रस्थान हैं। कौन से चार? काया में कायानुपश्यी... वेदनाओं में वेदनानुपश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी...धर्मों में धर्मानुपश्यी...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! ये चार स्मृतिप्रस्थान हैं''॥

२५. अन्यतरब्राह्मणसूत्र : : धर्म की चिरस्थायिता में हेतु

२८. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **श्रावस्ती के** जेतवन में

अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो अञ्ञतरो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—"को नु खो, भो गोतम, हेतु को पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होति? को पन, भो गोतम, हेतु को पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होती" ति?

"चतुन्नं खो, ब्राह्मण, सतिपट्ठानानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होति; चतुन्नं च खो, ब्राह्मण, सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होति।

"कतमेसं चतुन्नं? इध, ब्राह्मण, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, ब्राह्मण, चतुन्नं सतिपट्ठानानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होति। इमेसं च खो, ब्राह्मण, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होती" ति।

एवं वुत्ते सो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—"अभिक्कन्तं, भो गोतम...पे०... उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥ ●

साधनाहेतु विराजमान थे। तब कोई ब्राह्मण भगवान् के पास आया, तथा उन से कुशलप्रश्नानन्तर, एक ओर बैठते हुए उस ने यों पूछा—"भो श्रमण गौतम! कौन हेतु या कौन प्रत्यय है कि यह धर्म तथागत के परिनिर्वृत होने पर चिरस्थायी नहीं रह पाता? तथा कौन हेतु या कौन प्रत्यय है कि यह धर्म...चिरस्थायी रह भी जाता है?"

"ब्राह्मण! चार स्मृतिप्रस्थानों की भली भाँति साधना एवं अभ्यास न करने से, यह धर्म तथागत के परिनिर्वृत होने पर, चिरकाल तक स्थायी नहीं रहता। तथा इन्हीं चारों स्मृतिप्रस्थानों की भली भाँति साधना एवं अभ्यास करने से, तथागत के परिनिर्वाण के बाद भी, यह धर्म चिरस्थायी रह जाता है।

"किन चार की? यहाँ, ब्राह्मण! साधक भिक्षु काय में कायानुपश्यी...पूर्ववत्...यह सद्धर्म चिरस्थितिक होता है।"

भगवान् द्वारा ऐसा कहे जाने पर—भगवान् के इस उपदेश से प्रभावित हो कर वह ब्राह्मण बोला—"बहुत अच्छा कहा, भो गौतम! ...पूर्ववत्...आज से आप मुझे, मेरे प्राण रहने तक, अपना शरणागत उपासक समझें"॥ ●

पटिभानं, कल्याणी परिपुच्छा। एवं हि त्वं, आवुसो भद्द, पुच्छसि—'को, नु, खो, आवुसो आनन्द, हेतु को पच्चयो येन सद्धम्मपरिहानं होति? को पनावुसो आनन्द, हेतु को पच्चयो येन सद्धम्मअपरिहानं होती''' ति?

''एवमावुसो'' ति।

''चतुन्नं खो, आवुसो, सतिपट्ठानानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता सद्धम्मपरिहानं होति। चतुन्नं च खो, आवुसो, सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता सद्धम्मअपरिहानं होति।

''कतमेसं चतुन्नं? इधावुसो, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता सद्धम्मपरिहानं होति। इमेसं च खो, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता सद्धम्म-अपरिहानं होती'' ति॥ •

२४. सुद्धसुत्तं

२७. सावत्थिनिदानं। ''चत्तारोमे, भिक्खवे, सतिपट्ठाना। कतमे चत्तारो? इध, [N.149, R.174] भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो [B.151] सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो सतिपट्ठाना'' ति॥ •

२५. अञ्ञतरब्राह्मणसुत्तं

२८. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने

''आयुष्मन्! चारों स्मृतिप्रस्थानों की भिक्षुओं द्वारा यथाविधि भावना न करने से सद्धर्म की परिहाणि हो जाती है...तथा...यथाविधि भावना करने से सद्धर्म में स्थायिता (अपरिहाणि) आ जाती है''॥ •

२४. शुद्धसूत्र : : चार स्मृतिप्रस्थान

२७. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! ये चार स्मृतिप्रस्थान हैं। कौन से चार? काया में कायानुपश्यी... वेदनाओं में वेदनानुपश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी...धर्मों में धर्मानुपश्यी...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! ये चार स्मृतिप्रस्थान हैं''॥ •

२५. अन्यतरब्राह्मणसूत्र : : धर्म की चिरस्थायिता में हेतु

२८. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **श्रावस्ती के** जेतवन में

अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो अञ्ञतरो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—"को नु खो, भो गोतम, हेतु को पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होति? को पन, भो गोतम, हेतु को पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होती" ति?

"चतुन्नं खो, ब्राह्मण, सतिपट्ठानानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होति; चतुन्नं च खो, ब्राह्मण, सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होति।

"कतमेसं चतुन्नं? इध, ब्राह्मण, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, ब्राह्मण, चतुन्नं सतिपट्ठानानं अभावितत्ता अबहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होति। इमेसं च खो, ब्राह्मण, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होती" ति।

एवं वुत्ते सो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—"अभिक्कन्तं, भो गोतम...पे०... उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥ •

साधनाहेतु विराजमान थे। तब कोई ब्राह्मण भगवान् के पास आया, तथा उन से कुशलप्रश्नानन्तर, एक ओर बैठते हुए उस ने यों पूछा—"भो श्रमण गौतम! कौन हेतु या कौन प्रत्यय है कि यह धर्म तथागत के परिनिर्वृत होने पर चिरस्थायी नहीं रह पाता? तथा कौन हेतु या कौन प्रत्यय है कि यह धर्म...चिरस्थायी रह भी जाता है?"

"ब्राह्मण! चार स्मृतिप्रस्थानों की भली भाँति साधना एवं अभ्यास न करने से, यह धर्म तथागत के परिनिर्वृत होने पर, चिरकाल तक स्थायी नहीं रहता। तथा इन्हीं चारों स्मृतिप्रस्थानों की भली भाँति साधना एवं अभ्यास करने से, तथागत के परिनिर्वाण के बाद भी, यह धर्म चिरस्थायी रह जाता है।

"किन चार की? यहाँ, ब्राह्मण! साधक भिक्षु काय में कायानुपश्यी...पूर्ववत्...यह सद्धर्म चिरस्थितिक होता है।"

भगवान् द्वारा ऐसा कहे जाने पर—भगवान् के इस उपदेश से प्रभावित हो कर वह ब्राह्मण बोला—"बहुत अच्छा कहा, भो गौतम! ...पूर्ववत्...आज से आप मुझे, मेरे प्राण रहने तक, अपना शरणागत उपासक समझें"॥ •

२६. पदेससुत्तं

[N.150, B.152] २९. एकं समयं आयस्मा च सारिपुत्तो आयस्मा च महामोग्गलानो आयस्मा च अनुरुद्धो साकेते विहरन्ति कण्डकीवने। अथ खो आयस्मा च सारिपुत्तो आयस्मा च महामोग्गल्लानो सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठिता येनायस्मा अनुरुद्धो [R.175] तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मता अनुरुद्धेन सद्धिं सम्मोदिंसु। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोच—"'सेखो, सेखो' ति, आवुसो अनुरुद्ध, वुच्चति। कित्तावता नु खो, आवुसो, सेखो होती" ति?

"चतुन्नं खो, आवुसो, सतिपट्ठानानं पदेसं भावितत्ता सेखो होति। कतमेसं चतुन्नं? इधावुसो, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं पदेसं भावितत्ता सेखो होती" ति॥ ●

२७. समत्तसुत्तं

३०. तंयेव निदानं। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं अनुरुद्धं

---

२६. प्रदेशसूत्र : : **शैक्ष्य कौन?**

२९. एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र, आयुष्मान् महामोग्गल्लान एवं आयुष्मान् अनुरुद्ध साकेत प्रदेश के **कण्डकीवन** में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब कभी आयुष्मान् सारिपुत्र एवं आयुष्मान् महामोग्गल्लान सायङ्काल, जहाँ आयुष्मान् अनुरुद्ध साधना कर रहे थे, वहाँ पहुँचे तथा कुशलमङ्गल पूछने के बाद एक तरफ बैठ कर आयुष्मान् सारिपुत्र ने आयुष्मान् अनुरुद्ध से यों पूछा—"आयुष्मन् अनुरुद्ध! लोग 'शैक्ष्य, शैक्ष्य' ऐसा कहते रहते हैं, यह 'शैक्ष्य' कौन होता है?"

"आयुष्मन्! चारों स्मृतिप्रस्थानों की एक अंश (प्रदेश) से साधना कर लेने से भी साधक 'शैक्ष्य' कहलाने लगता है। कौन से चार? आयुष्मन्! यहाँ साधक भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर...। इस तरह इन स्मृतिप्रस्थानों की एक अंश से भी साधना करने वाला पुरुष 'शैक्ष्य' कहलाने का अधिकारी हो जाता है"॥ ●

२७. समस्तसूत्र : : **अशैक्ष्य कौन?**

३०. वहीं **कण्डकीवन** में ही...। एक ओर बैठे आयुष्मान् सारिपुत्र ने आयुष्मान्

एतदवोच—"'असेखो, असेखो' ति, आवुसो अनुरुद्ध, वुच्चति। कित्तावता नु खो, आवुसो, असेखो होती" ति?

"चतुन्नं खो, आवुसो, सतिपट्ठानानं समत्तं भावितत्ता असेखो होति। कतमेसं चतुन्नं? इधावुसो, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, [B.153] आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं समत्तं भावितत्ता असेखो होती" ति॥ •

२८. लोकसुत्तं

३१. तंयेव निदानं। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं [N.151] अनुरुद्धं एतदवोच—"कतमेसं, आवुसो अनुरुद्ध, धम्मानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं पत्तो" ति?

"चतुन्नं, आवुसो, सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं [R.176] पत्तो। कतमेसं चतुन्नं? इधाहं, आवुसो, काये कायानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं ख्वाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं पत्तो। इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता सहस्सं लोकं अभिजानामी" ति॥

अनुरुद्ध से यों पूछा—"आयुष्मन्! लोग 'अशैक्ष्य, अशैक्ष्य' यों बोलते रहते हैं। यह 'अशैक्ष्य' कौन और कैसे होता है?"

"आयुष्मन्! चार स्मृतिप्रस्थानों की समस्त भावना न करने से वैसा साधक 'अशैक्ष्य' कहलाता है। किन चार की? काय में कायानुपश्यना...वेदनाओं में वेदनानुपश्यना ...चित्त में चित्तानुपश्यना...एवं धर्मों में धर्मानुपश्यना...पूर्ववत्...। इन चार स्मृतिप्रस्थानों की समस्त भावना न करने से साधक 'अशैक्ष्य' कहलाता है"॥ •

२८. लोकसूत्र : : ज्ञानी होने में हेतु

३१. वहीं कण्डकीवन में...। एक ओर बैठे आयुष्मान् सारिपुत्र ने आयुष्मान् अनुरुद्ध को यों पूछा—"किन धर्मों की भावना तथा अभ्यास करने से आप इतने महाभिज्ञ (ज्ञानी) हुए हैं?"

"आयुष्मन्! चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना तथा अभ्यास करने से ही मैं ऐसा महान् ज्ञानी हुआ हूँ। कौन से चार? काया में कायानुपश्यी हो कर...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...तथा धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...।

२९. सिरिवड्ढसुत्तं

३२. एकं समयं आयस्मा आनन्दो राजगहे विहरति वेळुवने कलन्दकनिवापे। तेन खो पन समयेन सिरिवड्ढो गहपति आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो सिरिवड्ढो गहपति अञ्ञतरं पुरिसं आमन्तेसि—"एहि त्वं, अम्भो पुरिस, येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मम वचनेन आयस्मतो आनन्दस्स पादे सिरसा वन्द—'सिरिवड्ढो, भन्ते, गहपति आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। सो आयस्मतो आनन्दस्स पादे सिरसा वन्दती' ति। एवं च वदेहि—'साधु किर, भन्ते, आयस्मा आनन्दो येन सिरिवड्ढस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया'" ति। "एवं, भन्ते" ति खो सो पुरिसो सिरिवड्ढस्स गहपतिस्स पटिस्सुत्वा येनायस्मा आनन्दो [B.154] तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो पुरिसो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—"सिरिवड्ढो, भन्ते, गहपति आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो, सो आयस्मतो आनन्दस्स पादे सिरसा वन्दति। एवं च वदेति—'साधु किर, भन्ते, आयस्मा आनन्दो येन सिरिवड्ढस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया'" ति।

[N.152, R.177] अधिवासेसि खो आयस्मा आनन्दो तुण्हीभावेन।

अथ खो आयस्मा आनन्दो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन

आयुष्मानो! इन्हीं चार प्रस्थानों की भावना तथा अभ्यास करने से मैं सहस्रलोकधातुओं का ज्ञान रखता हूँ"॥ •

२९. श्रीवर्धसूत्र : : श्रीवर्ध का रुग्ण होना

३२. एक समय आयुष्मान् आनन्द **राजगृह** के वेणुवनस्थित कलन्दकनिवाप में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। उस समय श्रीवर्ध गृहपति किसी रोगबाधा से आक्रान्त हो गया। तब उस ने अपने किसी अनुचर पुरुष को बुला कर कहा—'अरे पुरुष! मेरे कहने से तुम आयुष्मान् आनन्द के पास जाओ, वहाँ जा कर तुम उन्हें, मेरी ओर से, पैरों में प्रणाम कर यों कहना—'भन्ते! श्रीवर्द्ध गृहपति अत्यन्त रुग्ण है, वह आप आयुष्मान् आनन्द के चरणों में शिर से प्रणाम करता है; तथा वह यों कहता है—यदि आप श्रीवर्ध गृहपति के घर पर कृपा कर पधारें।' तब उस पुरुष ने आयुष्मान् आनन्द के पास जा कर उन्हें श्रीवर्ध गृहपति का 'उस के आवास पर आने' का सन्देश कह दिया। आयुष्मान् आनन्द ने भी श्रीवर्ध के आवास पर जाना मौन भाव से स्वीकार कर लिया।

तब आयुष्मान् आनन्द पूर्वाह्ण में...पूर्ववत्...श्रीवर्ध गृहपति के घर पहुँचे, तथा वहाँ

सिरिवड्ढस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो आयस्मा आनन्दो सिरिवड्ढं गहपतिं एतदवोच—"कच्चि ते, गहपति, खमनीयं कच्चि यापनीयं, कच्चि दुक्खा वेदना पटिक्कमन्ति, नो अभिक्कमन्ति; पटिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो अभिक्कमो" ति?

"न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो" ति।

"तस्मातिह ते, गहपति, एवं सिक्खितब्बं—'काये कायानुपस्सी विहरिस्सामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते... धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरिस्सामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं' ति। एवं हि ते, गहपति, सिक्खितब्बं" ति।

"येमे, भन्ते, भगवता चत्तारो सतिपट्ठाना देसिता संविज्जन्ति, ते धम्मा मयि, अहं च तेसु धम्मेसु सन्दिस्सामि। अहं हि, भन्ते, काये कायानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। यानि चिमानि, भन्ते, भगवता पञ्चोरम्भागियानि संयोजनानि देसितानि, नाहं, भन्ते, तेसं किञ्चि अत्तनि अप्पहीनं समनुपस्सामी" ति।

"लाभा ते, गहपति, सुलद्धं ते, गहपति! अनागामिफलं तया, गहपति, ब्याकतं" ति॥

प्रज्ञप्त आसन पर बैठ गये। बैठ कर आयुष्मान् आनन्द ने गृहपति से पूछा—"आयुष्मन्! तुम्हारा रोग कैसा है? तुम अपने को कुछ स्वस्थ अनुभव कर रहे हो? वेदनाएँ कुछ कम हो रही हैं?"

"नहीं, भन्ते! मेरा चित्त ठीक नहीं है। मेरा रोग बढ़ता ही जा रहा है। उस से प्राणान्तक कष्ट हो रहा है, इस से वेदनाएँ बढ़ती ही जा रही हैं!"

"तो गृहपति! तुम्हें ऐसा सीखना चाहिये—'काया में कायानुपश्यी हो कर साधना करूँगा...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर साधना करूँगा...पूर्ववत्...।' यों, गृहपति! तुम्हें सीखना चाहिये।"

"भन्ते! भगवान् ने जो चार स्मृतिप्रस्थानों की साधना कही है, भन्ते! मैं उन धर्मों को धारण कर चुका हूँ। मैं काया में...पूर्ववत्...साधना करता हूँ। तथा भगवान् ने जो पाँच अवरभागीय संयोजन बताये हैं उन का कुछ भी अंश अब मेरे चित्त में हो—ऐसा मुझे नहीं लगता।"

२९. सिरिवड्ढसुत्तं

३२. एकं समयं आयस्मा आनन्दो राजगहे विहरति वेळुवने कलन्दकनिवापे। तेन खो पन समयेन सिरिवड्ढो गहपति आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो सिरिवड्ढो गहपति अञ्ञतरं पुरिसं आमन्तेसि—"एहि त्वं, अम्भो पुरिस, येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मम वचनेन आयस्मतो आनन्दस्स पादे सिरसा वन्द—'सिरिवड्ढो, भन्ते, गहपति आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। सो आयस्मतो आनन्दस्स पादे सिरसा वन्दती' ति। एवं च वदेहि—'साधु किर, भन्ते, आयस्मा आनन्दो येन सिरिवड्ढस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया''' ति। "एवं, भन्ते" ति खो सो पुरिसो सिरिवड्ढस्स गहपतिस्स पटिस्सुत्वा येनायस्मा आनन्दो [B.154] तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो पुरिसो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—"सिरिवड्ढो, भन्ते, गहपति आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो, सो आयस्मतो आनन्दस्स पादे सिरसा वन्दति। एवं च वदेति—'साधु किर, भन्ते, आयस्मा आनन्दो येन सिरिवड्ढस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया''' ति।

[N.152, R.177] अधिवासेसि खो आयस्मा आनन्दो तुण्हीभावेन।

अथ खो आयस्मा आनन्दो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन

आयुष्मानो! इन्हीं चार प्रस्थानों की भावना तथा अभ्यास करने से मैं सहस्रलोकधातुओं का ज्ञान रखता हूँ"॥

●

२९. श्रीवर्धसूत्र : : श्रीवर्ध का रुग्ण होना

३२. एक समय आयुष्मान् आनन्द **राजगृह** के वेणुवनस्थित कलन्दकनिवाप में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। उस समय श्रीवर्ध गृहपति किसी रोगबाधा से आक्रान्त हो गया। तब उस ने अपने किसी अनुचर पुरुष को बुला कर कहा—'अरे पुरुष! मेरे कहने से तुम आयुष्मान् आनन्द के पास जाओ, वहाँ जा कर तुम उन्हें, मेरी ओर से, पैरों में प्रणाम कर यों कहना—'भन्ते! श्रीवर्द्ध गृहपति अत्यन्त रुग्ण है, वह आप आयुष्मान् आनन्द के चरणों में शिर से प्रणाम करता है; तथा वह यों कहता है—यदि आप श्रीवर्ध गृहपति के घर पर कृपा कर पधारें।' तब उस पुरुष ने आयुष्मान् आनन्द के पास जा कर उन्हें श्रीवर्ध गृहपति का 'उस के आवास पर आने' का सन्देश कह दिया। आयुष्मान् आनन्द ने भी श्रीवर्ध के आवास पर जाना मौन भाव से स्वीकार कर लिया।

तब आयुष्मान् आनन्द पूर्वाह्ण में...पूर्ववत्...श्रीवर्ध गृहपति के घर पहुँचे, तथा वहाँ

सिरिवड्ढस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो आयस्मा आनन्दो सिरिवड्ढं गहपतिं एतदवोच—"कच्चि ते, गहपति, खमनीयं कच्चि यापनीयं, कच्चि दुक्खा वेदना पटिक्कमन्ति, नो अभिक्कमन्ति; पटिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो अभिक्कमो" ति ?

"न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो" ति।

"तस्मातिह ते, गहपति, एवं सिक्खितब्बं—'काये कायानुपस्सी विहरिस्सामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते... धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरिस्सामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं' ति। एवं हि ते, गहपति, सिक्खितब्बं" ति।

"येमे, भन्ते, भगवता चत्तारो सतिपट्ठाना देसिता संविज्जन्ति, ते धम्मा मयि, अहं च तेसु धम्मेसु सन्दिस्सामि। अहं हि, भन्ते, काये कायानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। यानि चिमानि, भन्ते, भगवता पञ्चोरम्भागियानि संयोजनानि देसितानि, नाहं, भन्ते, तेसं किञ्चि अत्तनि अप्पहीनं समनुपस्सामी" ति।

"लाभा ते, गहपति, सुलद्धं ते, गहपति! अनागामिफलं तया, गहपति, ब्याकतं" ति॥

●

प्रज्ञप्त आसन पर बैठ गये। बैठ कर आयुष्मान् आनन्द ने गृहपति से पूछा—"आयुष्मन्! तुम्हारा रोग कैसा है ? तुम अपने को कुछ स्वस्थ अनुभव कर रहे हो ? वेदनाएँ कुछ कम हो रही हैं ?"

"नहीं, भन्ते! मेरा चित्त ठीक नहीं है। मेरा रोग बढ़ता ही जा रहा है। उस से प्राणान्तक कष्ट हो रहा है, इस से वेदनाएँ बढ़ती ही जा रही हैं!"

"तो गृहपति! तुम्हें ऐसा सीखना चाहिये—'काया में कायानुपश्यी हो कर साधना करूँगा...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर साधना करूँगा...पूर्ववत्...।' यों, गृहपति! तुम्हें सीखना चाहिये।"

"भन्ते! भगवान् ने जो चार स्मृतिप्रस्थानों की साधना कही है, भन्ते! मैं उन धर्मों को धारण कर चुका हूँ। मैं काया में...पूर्ववत्...साधना करता हूँ। तथा भगवान् ने जो पाँच अवरभागीय संयोजन बताये हैं उन का कुछ भी अंश अब मेरे चित्त में हो—ऐसा मुझे नहीं लगता।"

३०. मानदिन्नसुत्तं

[B.155, R.178] ३३. तंयेव निदानं। तेन खो पन समयेन मानदिन्नो गहपति आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो मानदिन्नो गहपति अञ्ञतरं पुरिसं [N.153] आमन्तेसि—"एहि त्वं, अम्भो पुरिस...पे०...न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो ति। एवरूपाय चाहं, भन्ते, दुक्खाय वेदनाय फुट्ठो समानो काये कायानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमां, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। यानि चिमानि, भन्ते भगवता पञ्चोरम्भागियानि संयोजनानि देसितानि, नाहं, भन्ते, तेसं किञ्चि अत्तनि अप्पहीनं समनुपस्सामी" ति।

"लाभा ते, गहपति, सुलद्धं ते, गहपति! अनागामिफलं तया, गहपति, ब्याकतं" ति॥ ●

सीलट्ठितिवग्गो ततियो॥

तस्सुद्दानं

सीलं ठिति परिहानं, सुद्धं ब्राह्मणपदेसं।
समत्तं लोको सिरिवड्ढो, मानदिन्नेन ते दसा॥ ति॥ ●

—※—

"गृहपति! तुम ने बहुत बड़ी उपलब्धि प्राप्त कर ली। जैसा तुम कह रहे हो—तदनुसार तुम ने तो अनागामिफल प्राप्त कर लिया है॥" ●

३०. मानदत्तसूत्र : : मानदत्त का अनागामी होना

३३. उसी (राजगृह) नगर में...। उस समय मानदत्त गृहपति...पूर्ववत्...॥

(श्रीवर्ध सूत्रवत् ही इस सूत्र का भी 'श्रीवर्ध' के स्थान पर 'मानदत्त' शब्द जोड़ कर विस्तार कर लें।) ●

शीलस्थितिवर्ग तृतीय समाप्त॥

इस शीलस्थितिवर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. शीलसूत्र, २. चिरस्थितिसूत्र, ३. परिहाणसूत्र, ४. शुद्धसूत्र, ५. अन्यतरब्राह्मणसूत्र, ६. प्रदेशसूत्र, ७. समस्तसूत्र, ८. लोकसूत्र, ९. श्रीवर्धसूत्र, एवं १०. मानदत्तसूत्र॥ ●

—※—

४. अननुस्सुतवग्गो चतुत्थो

३१. अननुस्सुतसुत्तं

३४. सावत्थिनिदानं। "'अयं काये कायानुपस्सना' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा [R.179] उदपादि, आलोको उदपादि। 'सा खो पनायं काये कायानुपस्सना भावेतब्बा' ति मे, भिक्खवे...पे०...'सा खो पनायं काये कायानुपस्सना भाविता' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। [B.156]

"'अयं वेदनासु वेदनानुपस्सना' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'सा खो पनायं वेदनासु वेदनानुपस्सना भावेतब्बा' ति मे, भिक्खवे...पे०...'सा खो पनायं वेदनासु वेदनानुपस्सना भाविता' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।

"'अयं चित्ते चित्तानुपस्सना' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु [N.154] धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'सा खो पनायं चित्ते चित्तानुपस्सना भावेतब्बा' ति मे, भिक्खवे...पे०...'सा खो पनायं चित्ते चित्तानुपस्सना भाविता' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।

---

४. अननुश्रुतवर्ग चतुर्थ

३१. अननुश्रुतसूत्र : : पहले कभी न सुनी गयी बातें

३४. ...**श्रावस्ती में** ही...। 'यह काया में कायानुपश्यना'—ऐसा, भिक्षुओ! मुझे पहले कभी न सुने गये धर्मों के विषय में धर्मचक्षु उत्पन्न हुआ, ज्ञान उत्पन्न हुआ, प्रज्ञा उत्पन्न हुई, विद्या उत्पन्न हुई, आलोक उत्पन्न हुआ। 'उस कायानुपश्यना की मुझे साधना करनी चाहिये'... 'उस कायानुपश्यना की मैं साधना कर चुका'—ऐसा पहले न सुने गये धर्मों के विषय में मुझे चक्षु ...पूर्ववत्...आलोक उत्पन्न हुआ।

'यह वेदनाओं में वेदनानुपश्यना'—ऐसा...'उस वेदनानुपश्यना की मुझे साधना करनी चाहिये'—ऐसा...'उस वेदनानुपश्यना की साधना कर चुका'—ऐसा चक्षु उत्पन्न हुआ...आलोक उत्पन्न हुआ।

'यह चित्त में चित्तानुपश्यना'—ऐसा...'उस चित्तानुपश्यना की साधना करनी

"''अयं धम्मेसु धम्मानुपस्सना' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'सा खो पनायं धम्मेसु धम्मानुपस्सना भावेतब्बा' ति मे, भिक्खवे...पे०...'सा खो पनायं धम्मेसु धम्मानुपस्सना भाविता' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादी'' ति॥ ●

३२. विरागसुत्तं

३५. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ति। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ती'' ति॥ ●

३३. विरद्धसुत्तं

[B.157] ३६. ''येसं केसञ्चि, भिक्खवे, चत्तारो सतिपट्ठाना विरद्धा, विरद्धो तेसं अरियो [R.180] मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी। येसं केसञ्चि, भिक्खवे, चत्तारो सतिपट्ठाना आरद्धा, आरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी।

चाहिये'—ऐसा...'उस चित्तानुपश्यना की साधना कर चुका'—ऐसा पहले न सुने गये धर्मों के विषय में चक्षु ...आलोक उत्पन्न हुआ।

'यह धर्मों में धर्मानुपश्यना'—ऐसा...'उस धर्मानुपश्यना की साधना करनी चाहिये'—ऐसा...'इस धर्मानुपश्यना की साधना कर चुका'—ऐसा पहले न सुने गये धर्मों के विषय में चक्षु उत्पन्न हो गया...आलोक उत्पन्न हो गया''॥ ●

३२. विरागसूत्र : : स्मृतिप्रस्थान भावना से निर्वाण

३५. ''भिक्षुओ! इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना एवं अभ्यास से एकान्ततः निर्विदा, वैराग्य, निरोध, उपशय, अभिज्ञा, सम्बोधि एवं निर्वाण का उत्पाद सम्भव है। कौन से चार? भिक्षुओ! यहाँ, भिक्षु काया में कायानुपश्यना...वेदना में वेदनानुपश्यना...चित्त में चित्तानुपश्यना...धर्म में धर्मानुपश्यना की साधना एवं अभ्यास से एकान्ततः निर्विदा... निर्वाण का उत्पाद सम्भव है''॥ ●

३३. विरद्धसूत्र : : मार्ग में बाधा

३६. ''भिक्षुओ! जिस किसी भिक्षु के ये चारों स्मृतिप्रस्थान सिद्ध नहीं हुए या

''कतमे चत्तारो ? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति [N.155] आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते... धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झा-दोमनस्सं। येसं केसञ्चि, भिक्खवे, इमे चत्तारो सतिपट्ठाना विरद्धा, विरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी।

''येसं केसञ्चि, भिक्खवे, इमे चत्तारो सतिपट्ठाना आरद्धा, आरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी'' ति॥

●

३४. भावितसुत्तं

३७. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता अपारा पारं गमनाय संवत्तन्ति।

''कतमे चत्तारो ? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता अपारा पारं गमनाय संवत्तन्ती'' ति॥

●

अवरुद्ध हो गये हैं तो समझ लो कि उस का सम्यक् प्रकार से दुःख का क्षय करने वाला आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग अवरुद्ध हो गया है।

''कौन से चार ? यहाँ, भिक्षुओ ! कोई भिक्षु काय में कायानुपश्यना...पूर्ववत्...धर्म में धर्मानुपश्यना की साधना करता है, अभ्यास करता है...।

''भिक्षुओ ! जिस ने इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की भावना सिद्ध कर ली है, अभ्यस्त कर ली है, उस के लिये इस दुःखक्षयगामी आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग का द्वार, समझ लो, सदा के लिये खुल गया है''॥

●

३४. भावितसूत्र : : भव पारगमन

३७. ''भिक्षुओ ! ये चार स्मृतिप्रस्थान समाहित किये जाने पर, अभ्यस्त किये जाने पर भिक्षु इन के द्वारा अपार के पार चला जाने में समर्थ हो जाता है।

कौन से चार ? यहाँ, भिक्षुओ ! कोई भिक्षु काय में कायानुपश्यी...पूर्ववत्...धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर...। भिक्षुओ ! ये चार स्मृतिप्रस्थान साधक को अपार के पार पहुँचाने में समर्थ हैं''॥

●

३५. सतिसुत्तं

३८. सावत्थिनिदानं। ''सतो, भिक्खवे, भिक्खु विहरेय्य सम्पजानो। अयं वो अम्हाकं अनुसासनी।

''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सतो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; [B.158] वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सतो होति।

''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सम्पजानो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो विदिता [R.181] वेदना उप्पज्जन्ति, विदिता उपट्ठहन्ति, विदिता अब्भत्थं गच्छन्ति। विदिता [N.156] वितक्का उप्पज्जन्ति, विदिता उपट्ठहन्ति, विदिता अब्भत्थं गच्छन्ति। विदिता सञ्ञा उप्पज्जन्ति, विदिता उपट्ठहन्ति, विदिता अब्भत्थं गच्छन्ति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सम्पजानो होति। सतो, भिक्खवे, भिक्खु विहरेय्य सम्पजानो। अयं वो अम्हाकं अनुसासनी'' ति॥ •

३६. अञ्ञासुत्तं

३९. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, सतिपट्ठाना। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झा-दोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो

---

३५. स्मृतिसूत्र : : स्मृतिपूर्वक साधना

३८. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! भिक्षु को स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ हो कर साधना करनी चाहिये—यही हमारा उपदेश है, आदेश है''।

स्मृतिमान—''भिक्षुओ! भिक्षु कैसे 'स्मृतिमान्' रहे? यहाँ, भिक्षुओ! वह भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...धर्मों में धर्मानुपश्यी हो कर...साधना करे—ऐसे वह 'स्मृतिमान्' हो सकता है।

सम्प्रज्ञ—''भिक्षुओ! वह भिक्षु 'सम्प्रज्ञ' कैसे रहे? उस भिक्षु को जानते हुए ही उस के चित्त में वेदनाएँ उठें, रहें तथा नष्ट हों; वितर्क उठें, रहें तथा विनष्ट हों; संज्ञाएँ उठें, रहें, विनष्ट हों—इस तरह, भिक्षुओ! वह भिक्षु 'सम्प्रज्ञ' कहलाता है।

अतः मैं कहता हूँ कि भिक्षु को 'स्मृतिमान्' एवं 'सम्प्रज्ञ' रहते हुए ही साधना करनी चाहिये''॥ •

३६. आज्ञासूत्र : : स्मृतिप्रस्थान से परम ज्ञान

३९. ...''भिक्षुओ! ये चार स्मृतिप्रस्थान हैं। कौन से चार? ...पूर्ववत्...तब उस

सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो सतिपट्ठाना। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता द्विन्नं फलानं अञ्ञतरं फलं पाटिकङ्खं—दिट्ठेव धम्मे अञ्ञा, सति वा उपादिसेसे अनागामिता'' ति॥ ●

३७. छन्दसुत्तं

४०. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, सतिपट्ठाना। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स काये कायानुपस्सिनो विहरतो यो कायस्मिं छन्दो सो पहीयति। छन्दस्स पहाना अमतं सच्छिकतं होति।

''वेदनासु वेदनानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स वेदनासु वेदनानुपस्सिनो विहरतो यो वेदनासु छन्दो सो पहीयति। छन्दस्स पहाना अमतं सच्छिकतं होति।

''चित्ते चित्तानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, [B.159, R.182] विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स चित्ते चित्तानुपस्सिनो विहरतो यो चित्तम्हि छन्दो सो पहीयति। छन्दस्स पहाना अमतं सच्छिकतं होति।

''धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स धम्मेसु धम्मानुपस्सिनो विहरतो यो धम्मेसु छन्दो [N.157] सो पहीयति। छन्दस्स पहाना अमतं सच्छिकतं होती'' ति॥ ●

३८. परिञ्ञातसुत्तं

४१. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, सतिपट्ठाना। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झा-

---

के लिये यही सम्भव है कि वह या तो इसी जन्म में निर्वाण प्राप्त कर ले। अन्यथा अनागामिता तो पा ही लेगा''॥ ●

३७. छन्दसूत्र : : स्मृतिप्रस्थान भावना से तृष्णाक्षय

४०. ...''भिक्षुओ! ये चार स्मृतिप्रस्थान हैं। कौन से चार?

१. काया में कायानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...साधना करता है...। इस तरह उस का छन्द प्रहीण हो जाता है। छन्द के प्रहीण होने से वह अमृतत्व प्राप्त कर लेता है।

२. वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...साधना करता है...। ...।

३. चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...साधना करता है...। ...।

४. धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...साधना करता है...प्राप्त कर लेता है''॥ ●

दोमनस्सं। तस्स काये कायानुपस्सिनो विहरतो कायो परिञ्ञातो होति। कायस्स परिञ्ञातत्ता अमतं सच्छिकतं होति।

"वेदनासु वेदनानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स वेदनासु वेदनानुपस्सिनो विहरतो वेदना परिञ्ञाता होन्ति। वेदनानं परिञ्ञातत्ता अमतं सच्छिकतं होति।

"चित्ते चित्तानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स चित्ते चित्तानुपस्सिनो विहरतो चित्तं परिञ्ञातं होति। चित्तस्स परिञ्ञातत्ता अमतं सच्छिकतं होति।

"धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तस्स धम्मेसु धम्मानुपस्सिनो विहरतो धम्मा परिञ्ञाता होन्ति। धम्मानं परिञ्ञातत्ता अमतं सच्छिकतं होती" ति॥ ●

३९. भावनासुत्तं

[B.160] ४२. "चतुन्नं, भिक्खवे, सतिपट्ठानानं भावनं देसेस्सामि। तं सुणाथ।

"कतमा, भिक्खवे, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावना? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; [R.183] वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो

---

३८. परिज्ञातसूत्र : : काया आदि का परिज्ञान

४१. ..."भिक्षुओ! स्मृतिप्रस्थान चार हैं। कौन से चार?

१. "यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर साधना करता है...। इस प्रकार साधना करने से वह काया को सब तरह से जान लेता है। ऐसा जान लेने से उस को निर्वाण का साक्षात्कार हो जाता है। २. वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...। ३. चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर साधना करता है...पूर्ववत्...। ४. धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर साधना करता है। ऐसा करने से वह धर्मों को जान लेता है तथा इन धर्मों को यथार्थतः जान लेने पर उसे निर्वाण का साक्षात्कार हो जाता है"॥ ●

३९. भावनासूत्र : : स्मृतिप्रस्थानों की भावना

४२. ..."भिक्षुओ! मैं तुम्हें चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना का उपदेश करूँगा, उसे ध्यानपूर्वक सुनो।

"भिक्षुओ! इन चार स्मृतिप्रस्थानों की साधना कैसे होती है?

१. "यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु लौकिक अभिध्या एवं दौर्मनस्य दबाता हुआ, स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ हो कर काय में कायानुपश्यना की साधना करता है। २. ...वेदनाओं

सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। अयं खो, भिक्खवे, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावना'' ति॥ •

४०. विभङ्गसुत्तं

४३. ''सतिपट्ठानं च वो, भिक्खवे, देसेस्सामि सतिपट्ठानभावनं च [N.158] सतिपट्ठानभावनागामिनिं च पटिपदं। तं सुणाथ।

''कतमं च, भिक्खवे, सतिपट्ठानं? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु वेदनानुपस्सी विहरति...पे०...चित्ते चित्तानुपस्सी विहरति...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इदं वुच्चति, भिक्खवे, सतिपट्ठानं।

''कतमा च, भिक्खवे, सतिपट्ठानभावना? इध, भिक्खवे, भिक्खु समुदय-धम्मानुपस्सी कायस्मिं विहरति, वयधम्मानुपस्सी कायस्मिं विहरति, समुदयवय-धम्मानुपस्सी कायस्मिं विहरति, आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झा-दोमनस्सं। समुदयधम्मानुपस्सी वेदनासु विहरति...पे०...समुदयधम्मानुपस्सी चित्ते विहरति...समुदयधम्मानुपस्सी धम्मेसु विहरति, वयधम्मानुपस्सी धम्मेसु विहरति,

---

में वेदनानुपश्यना की साधना करता है। ३. ...चित्त में चित्तानुपश्यना की साधना करता है। ४. एवं...धर्मों में धर्मानुपश्यना की साधना करता है। यों, भिक्षुओ! चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना होती है''॥ •

४०. विभङ्गसूत्र : : स्मृतिप्रस्थान एवं तत्प्राप्त्युपाय

४३. ...''भिक्षुओ! मैं तुम्हें स्मृतिप्रस्थान, उन की भावना तथा उन की प्राप्ति का मार्ग—यह सब बताऊँगा। उसे तुम ध्यानपूर्वक सुनो।

(१) ''भिक्षुओ! **स्मृतिप्रस्थान क्या होता है?** यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु लोक में अभिध्या एवं दौर्मनस्य को दबाता हुआ, उत्साहपूर्वक स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ हो कर काया में कायानुपश्यना की साधना करता है; वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...; ...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...। ...धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर साधना करता है। भिक्षुओ! यह 'स्मृतिप्रस्थान' कहलाता है।

(२) ''भिक्षुओ! **स्मृतिप्रस्थान भावना कैसे होती है?** यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु समुदयधर्म को देखता हुआ काया में साधना करता है, व्यय (नाश) धर्म को देखता हुआ, समुदयव्ययधर्म को देखता स्मृतिमान् सम्प्रज्ञ हो कर काया में साधना करता है लौकिक अभिध्या एवं दौर्मनस्य को दबाते हुए। ...वेदनाओं में साधना करता है। ...चित्त में साधना

समुदयवयधम्मानुपस्सी धम्मेसु विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। अयं वुच्चति, भिक्खवे, सतिपट्ठानभावना।

"कतमा च, भिक्खवे, सतिपट्ठानभावनागामिनी पटिपदा? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि, सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा, सम्माकम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मावायामो, सम्मासति, सम्मासमाधि। अयं वुच्चति, भिक्खवे, सतिपट्ठानभावनागामिनी पटिपदा" ति॥ •

अननुस्सुतवग्गो चतुत्थो॥

तस्सुद्दानं

[B.161, R.184] अननुस्सुतं विरागो, विरहो भावना सति।
अञ्ञा छन्दं परिञ्ञाय, भावना विभङ्गेन चा॥ ति॥ •

करता है।...धर्मों में साधना करता है लौकिक अभिध्यादौर्मनस्य को दबाते हुए। भिक्षुओ! यह 'स्मृतिप्रस्थान भावना' कहलाती है।

(३) "**स्मृतिप्रस्थानभावना की प्राप्ति का मार्ग** (उपाय) **क्या है**? यही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग; जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! यह कहलाता है—'स्मृतिप्रस्थानभावना की प्राप्ति का मार्ग' (उपाय)"॥ •

अननुश्रुतवर्ग चतुर्थ सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. अननुश्रुतसूत्र, २. विरागसूत्र, ३. विरद्धसूत्र, ४. भावनासूत्र, ५. स्मृतिसूत्र, ६. आज्ञासूत्र, ७. छन्दसूत्र, ८. परिज्ञानसूत्र, ९. भावनासूत्र, एवं १०. विभङ्गसूत्र॥ •

५. अमतवग्गो पञ्चमो

४१. अमतसुत्तं

४४. सावत्थिनिदानं। ''चतूसु, भिक्खवे, सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्ता विहरथ। मा वो अमतं पनस्स।

''कतमेसु चतूसु? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति [N.159] आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते... धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झा-दोमनस्सं। इमेसु, भिक्खवे, चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्ता विहरथ। मा वो अमतं पनस्सा'' ति॥ ●

४२. समुदयसुत्तं

४५. ''चतुन्नं, भिक्खवे, सतिपट्ठानानं समुदयं च अत्थङ्गमं च देसेस्सामि। तं सुणाथ।

''को च, भिक्खवे, कायस्स समुदयो? आहारसमुदया कायस्स समुदयो; आहारनिरोधा कायस्स अत्थङ्गमो। फस्ससमुदया वेदनानं समुदयो; फस्सनिरोधा

---

५. अमृतवर्ग पञ्चम

४१. अमृतसूत्र : : अमृत-प्राप्ति

४४. ...**श्रावस्ती में** ही...। ''भिक्षुओ! तुम चारों स्मृतिप्रस्थानों में सुप्रतिष्ठित रूप से अपना चित्त लगा कर उन की साधना करो। तब यों समझो कि अमृत (निर्वाण) तुम्हारे समीप ही दिखायी देगा।

किन चारों में? काया में...वेदनाओं में...चित्त में...धर्मों में धर्मानुपश्यी हो कर लौकिक अभिध्या एवं दौर्मनस्य को दबाते हुए, उत्साहपूर्वक स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ रहते हुए सुप्रतिष्ठितचित्त रहते हुए साधना करो तो अमृत (निर्वाण) तुम्हारा अपना ही होगा— ऐसा समझो''॥ ●

४२. समुदयसूत्र : : उत्पत्ति एवं विलय

४५. ...''भिक्षुओ! मैं तुम्हें स्मृतिप्रस्थानों के समुदय एवं विलय के विषय में बताऊँगा। उसे ध्यानपूर्वक सुनो।

''भिक्षुओ! काया का समुदय कैसे होता है? आहार के समुदय से काय का समुदय (उत्पत्ति) होता है तथा आहार के निरोध से काय का अस्त (विलय=नाश) हो जाता है। स्पर्श के समुदय से वेदनाओं का समुदय एवं स्पर्श के निरोध से वेदनाओं का

वेदनानं अत्थङ्गमो। नामरूपसमुदया चित्तस्स समुदयो; नामरूपनिरोधा चित्तस्स अत्थङ्गमो। मनसिकारसमुदया धम्मानं समुदयो; मनसिकारनिरोधा धम्मानं अत्थङ्गमो'' ति॥ •

४३. मग्गसुत्तं

[R.185] ४६. सावत्थिनिदानं। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''एकमिदाहं, भिक्खवे, समयं उरुवेलायं विहरामि नज्जा नेरञ्जराय तीरे अजपालनिग्रोधे पठमाभिसम्बुद्धो। तस्स मय्हं, भिक्खवे, रहोगतस्स पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को [B.162] उदपादि—'एकायन्वायं मग्गो सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना। कतमे चत्तारो? काये वा भिक्खु कायानुपस्सी विहरेय्य आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु वा भिक्खु वेदनानुपस्सी विहरेय्य...पे०...चित्ते वा भिक्खु चित्तानुपस्सी विहरेय्य...धम्मेसु वा भिक्खु धम्मानुपस्सी विहरेय्य आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एकायन्वायं मग्गो सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना' ति।

[N.160] ''अथ खो, भिक्खवे, ब्रह्मा सहम्पति मम चेतसा चेतोपरिवितक्कमञ्ञाय—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—ब्रह्मलोके अन्तरहितो मम पुरतो पातुरहोसि। अथ खो, भिक्खवे, ब्रह्मा सहम्पति एकंसं उत्तरासङ्गं करित्वा येनाहं तेनञ्जलिं पणामेत्वा मं एतदवोच—'एवमेतं, भगवा, एवमेतं, सुगत! एकायन्वायं, भन्ते, मग्गो सत्तानं विसुद्धिया [R.186] सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना। कतमे चत्तारो? काये वा, भन्ते, भिक्खु कायानुपस्सी विहरेय्य आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके

निरोध (अस्त) होता है। नामरूप के समुदय से चित्त का समुदय एवं नामरूप के निरोध से चित्त का निरोध (अस्त) होत. है। (इसी तरह) मनस्कार (चिन्तन) के समुदय से धर्मों का समुदय एवं मनस्कार के निरोध से धर्मों का निरोध (अस्त) होता है''॥ •

४३. मार्गसूत्र : : विशुद्धि का एकमात्र मार्ग

४६. ...**श्रावस्ती में** ही...। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को यों सम्बोधन किया—

अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु वा...पे०...चित्ते वा...धम्मेसु वा, भन्ते, भिक्खु धम्मानुपस्सी विहरेय्य आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एकायन्वायं, भन्ते, मग्गो सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्ख-दोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं— चत्तारो सतिपट्ठाना' ति।

४७. ''इदमवोच, भिक्खवे, ब्रह्मा सहम्पति। इदं वत्वा अथापरं एतदवोच—

'एकायनं जातिखयन्तदस्सी, मग्गं पजानाति हितानुकम्पी।

एतेन मग्गेन तरिंसु पुब्बे, तरिस्सन्ति ये च तरन्ति ओघं''' ति॥ •

४४. सतिसुत्तं

४८. ''सतो, भिक्खवे, भिक्खु विहरेय्य। अयं वो अम्हाकं अनुसासनी॥[B.163]

''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सतो होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सतो होति। [N.161] सतो, भिक्खवे, भिक्खु विहरेय्य। अयं वो अम्हाकं अनुसासनी'' ति॥ •

४५. कुसलरासिसुत्तं

४९. '''कुसलरासी' ति, भिक्खवे, वदमानो चत्तारो सतिपट्ठाने सम्मा वदमानो वदेय्य। केवलो हायं, भिक्खवे, कुसलरासि, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना।

''भिक्षुओ! एक समय, मैं उरुवेला में निरञ्जना नदी के तट पर अजपाल न्यग्रोध के नीचे अभिसम्बुद्ध हो कर समाधिसुख का अनुभव कर रहा था। उस समय...पूर्ववत्...''॥ •

*(पीछे **इसी संयुत्त** में वर्णित १८. **ब्रह्मसूत्र** के समस्त पाठ का विस्तार यहाँ भी कर लें।)*

४४. स्मृतिसूत्र : : स्मृतिपूर्वक साधना

४८. ...''भिक्षुओ! भिक्षु को स्मृतिमान् हो कर साधना करनी चाहिये। यही हमारा उपदेश है, आदेश है।

''भिक्षुओ! वह भिक्षु कैसे स्मृतिमान् रहे? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...धर्मों में धर्मानुपश्यी हो कर स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ रहता हुआ अपने अभिध्या, दौर्मनस्य को दूर हटा कर साधना करे। यही हमारा आदेश है''॥ •

४५. कुशलराशिसूत्र : : कुशलराशि

४९. ...''भिक्षुओ! कोई भी विद्वान् इन चारों स्मृतिप्रस्थानों का नाम बता कर ही

[R.187] "कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते... धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झा-दोमनस्सं। 'कुसलरासी' ति, भिक्खवे, वदमानो इमे चत्तारो सतिपट्ठाने सम्मा वदमानो वदेय्य। केवलो हायं, भिक्खवे, कुसलरासि, यदिदं—चत्तारो सतिपट्ठाना" ति॥ •

४६. पातिमोक्खसंवरसुत्तं

५०. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि...पे०...एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—

"साधु मे, भन्ते, भगवा सङ्खित्तेन धम्मं देसेतु, यमहं भगवतो धम्मं सुत्वा एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरेय्यं" ति।

"तस्मातिह त्वं, भिक्खु, आदिमेव विसोधेहि कुसलेसु धम्मेसु। को चादि कुसलानं धम्मानं? इध त्वं, भिक्खु, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहराहि आचारगोचर-सम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खस्सु सिक्खापदेसु। यतो खो [B.164] त्वं, भिक्खु, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरिस्ससि आचारगोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खिस्ससि सिक्खापदेसु; ततो त्वं, भिक्खु, सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय चत्तारो सतिपट्ठाने भावेय्यासि।

'कुशलराशि' शब्द की उचित (यथार्थ) व्याख्या कर सकेगा। ये चारों स्मृतिप्रस्थान ही समग्र कुशल धर्मों की राशि है। कौन से चार? काय में कायानुपश्यी...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी...धर्मों में धर्मानुपश्यी...। 'कुशलराशि' शब्द के व्याख्यान में इन चारों स्मृतिप्रस्थानों को बताना ही इस का उचित (यथार्थ) व्याख्यान है"॥ •

४६. प्रातिमोक्षसंवरसूत्र : : कुशल धर्मों का आदि (आरम्भ)

५०. तब कोई भिक्षु भगवान् के सम्मुख आया...एक ओर बैठे हुए उस ने भगवान् से यों निवेदन किया—"अच्छा हो, भन्ते! आप मुझ को संक्षेप में ऐसा धर्मोपदेश करें कि मैं उस के आधार पर एकान्त में जा कर इन्द्रियसंयमपूर्वक सावधानी से साधना में प्रवृत्त हो जाऊँ।"

तो तुम, भिक्षु! सर्वप्रथम कुशल धर्मों के आदि (आरम्भ) का ही विशोधन करो। यह कुशल धर्मों का आदि क्या है? भिक्षु तुम प्रातिमोक्षसंवर का पालन करते हुए यों साधना करो—आचार विचार से सम्पन्न रहो, अल्पमात्र भी वर्ज्य (निन्दनीय) कर्मों के

"कतमे चत्तारो? इध त्वं, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झा-[N.162] दोमनस्सं। यतो खो त्वं, भिक्खु, सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय इमे चत्तारो सतिपट्ठाने भावेस्ससि, ततो तुय्हं, भिक्खु, या रत्ति वा दिवसो वा आगमिस्सति वुद्धि येव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानी" ति।

अथ खो सो भिक्खु भगवतो भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि। अथ खो सो भिक्खू एको [R.188] वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो नचिरस्सेव—यस्सत्थाय कुलपुत्ता सम्मदेव अगारस्मा अनगारियं पब्बजन्ति, तदनुत्तरं—ब्रह्मचरियपरियोसानं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। "खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया" ति अब्भञ्ञासि। अञ्ञतरो च पन सो भिक्खु अरहतं अहोसी ति॥

४७. दुच्चरितसुत्तं

५१. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि...पे०...साधु मे, भन्ते,

---

करने से भय मानो। तथा शिक्षापदों का पूर्णत: पालन करो। भिक्षु इस प्रकार...तुम शील पर प्रतिष्ठित हो कर चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना कर सकोगे।

कौन से चार? यहाँ तूँ, भिक्षु! काय में कायानुपश्यी...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी...धर्मों में धर्मानुपश्यी...पूर्ववत्...। भिक्षु! इस तरह तूँ शील पर प्रतिष्ठित हो कर, शील को आधार मान कर इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना करेगा तो यह निश्चित है, भिक्षु! तुम्हारी आने वाली रात्रिं या आगामी दिन तुम्हारी साधना में वृद्धि ही लायँगें, तुम्हारे कुशलधर्म बढेंगे ही, कहीं से उन की हानि नहीं होगी।"

तब वह भिक्षु भगवान् के भाषण का अभिनन्दन अनुमोदन कर उन्हें प्रणाम-प्रदक्षिणा कर एकान्त में जा कर उत्साहपूर्वक इन्द्रियसंयम के साथ अप्रमत्त रहता हुआ साधना करने लगा। तथा शीघ्र ही उस परमार्थ को प्राप्त हो गया, जिस के लिये अनेक कुलपुत्र घर से बेघर हो कर इसी जन्म में स्वयं जान कर साक्षात्कार कर साधना किया करते हैं। तथा वह यह भी जान गया कि उस की जन्मपरम्परा (जाति) क्षीण हो चुकी है, धर्मसाधना पूर्ण हो चुकी है...। अथ च, एक समय आया कि उस भिक्षु की गणना अर्हतों में होने लगी"॥

भगवा सङ्खित्तेन धम्मं देसेतु, यमहं भगवतो धम्मं सुत्वा एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरेय्यं'' ति।

''तस्मातिह त्वं, भिक्खु, आदिमेव विसोधेहि कुसलेसु धम्मेसु। को चादि कुसलानं धम्मानं? इध त्वं, भिक्खु, कायदुच्चरितं पहाय, कायसुचरितं भावेस्ससि। वचीदुच्चरितं पहाय वचीसुचरितं भावेस्ससि। मनोदुच्चरितं पहाय मनोसुचरितं भावेस्ससि। यतो खो त्वं, भिक्खु, कायदुच्चरितं पहाय, कायसुचरितं भावेस्ससि, वचीदुच्चरितं पहाय वचीसुचरितं भावेस्ससि, मनोदुच्चरितं पहाय मनोसुचरितं भावेस्ससि, ततो त्वं, भिक्खु, सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय चत्तारो सतिपट्ठाने भावेय्यासि।

[B.165] ''कतमे चत्तारो? इध त्वं, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहराहि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। [N.163] यतो खो त्वं, भिक्खु, सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय इमे चत्तारो सतिपट्ठाने भावेस्ससि, ततो तुय्हं, भिक्खु, या रत्ति वा दिवसो वा आगमिस्सति वुद्धि येव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानी'' ति...पे०...अञ्ञतरो च पन सो भिक्खु अरहतं अहोसी ति॥ ●

---

४७. दुश्चरितसूत्र : : दुश्चरित कर्मों का त्याग

५१. ...तब कोई भिक्षु भगवान् के पास आया, तथा यों निवेदन करने लगा— ...पूर्ववत्...।

''तो, भिक्षु! तुम पहले कुशलधर्मों के आदि (आरम्भ) को ही शुद्ध करो। यह कुशलधर्मों का आदि क्या है? यहाँ तुम, भिक्षु! कायदुश्चरित कर्मों को छोड़ कर कायसुचरित कर्मों का अभ्यास करो; वाग्दुश्चरित कर्मों को छोड़ कर वाक्सुचरित कर्मों का ही अभ्यास करो। इसी तरह, मनोदुश्चरित कर्मों को त्याग कर मन:सुचरित कर्मों का ही अभ्यास करो। यदि तुम इस तरह से आचरण का अभ्यास करोगे तो भिक्षु! तुम शील के आधार पर, शील पर प्रतिष्ठित हो कर इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना कर सकोगे।

''कौन से चार? काया में कायानुपश्यी...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी...धर्मों में धर्मानुपश्यी...। भिक्षु! इस तरह साधना किये जाने पर तुम्हारी आगे आने वाली रात्रि या दिन सुखमय ही बीतेंगे। तथा तुम्हारे कुशलधर्मों की वृद्धि ही होगी, हानि तो कथमपि नहीं। ...पूर्ववत्...इस प्रकार, समय आने पर उस भिक्षु की अर्हतों में भी गणना होने लगी''॥ ●

४८. मित्तसुत्तं

५२. "ये, भिक्खवे, अनुकम्पेय्याथ, ये च खो सोतब्बं मञ्ञेय्युं मित्ता [R.189] वा अमच्चा वा ञाती वा सालोहिता वा, ते वो, भिक्खवे, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावनाय समादपेतब्बा निवेसेतब्बा पतिट्ठापेतब्बा।

"कतमेसं, चतुन्नं? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। ये, भिक्खवे, अनुकम्पेय्याथ, ये च सोतब्बं मञ्ञेय्युं मित्ता वा अमच्चा वा ञाती वा सालोहिता वा, ते वो, भिक्खवे, इमेसं चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावनाय समादपेतब्बा निवेसेतब्बा पतिट्ठापेतब्बा" ति॥ •

४९. वेदनासुत्तं

५३. "तिस्सो इमा, भिक्खवे, वेदना। कतमा तिस्सो? सुखा वेदना, दुक्खा वेदना, अदुक्खमसुखा वेदना—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो वेदना। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं वेदनानं परिञ्ञाय चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा।

"कतमे चत्तारो? इध भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु

---

४८. मित्रसूत्र : :मित्र को स्मृतिप्रस्थानसाधना में लगाना

५२. "भिक्षुओ! जिन पर तुम अनुकम्पा करना चाहते हो, या जो तुम्हारी बात को मानते हों, तुम्हारी बात को सुनना चाहते हों, फिर भले ही वे तुम्हारे मित्र हों, साथी हों, परिजन हों या रक्तसम्बन्धी हों; उन्हें, भिक्षुओ! तुम इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की भावना में लगाओ, इस का अभ्यास कराओ। इस भावना में प्रोत्साहित करो, उत्तेजित करो, प्रतिष्ठित करो।

"किन चारों की? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु काय में कायानुपश्यी...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी ...धर्मों में धर्मानुपश्यी...द्वेष, दौर्मनस्य को दबाते हुए। इस तरह भिक्षुओ! जिन पर तुम अनुकम्पा करना चाहते हो...पूर्ववत्...इस भावना में प्रोत्साहित करो, उत्तेजित करो, प्रतिष्ठित करो।"॥ •

४९. वेदनासूत्र : : तीन वेदनाएँ

५३. ..."भिक्षुओ! वेदनाएँ तीन होती हैं। कौन सी तीन? सुखावेदना, दुःखावेदना एवं अदुःखासुखा वेदना—ये तीन वेदनाएँ होती हैं। भिक्षुओ! इन तीनों वेदनाओं के परिज्ञान (स्थिर ज्ञान) के आधार पर चारों स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये।

धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं वेदनानं परिञ्ञाय इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा'' ति॥ ●

५०. आसवसुत्तं

[B.166] ५४. ''तयोमे, भिक्खवे आसवा। कतमे तयो? कामासवो, भवासवो, [R.190, N.164] अविज्जासवो—इमे खो, भिक्खवे, तयो आसवा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णन्नं आसवानं पहानाय चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा।

''कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णन्नं आसवानं पहानाय इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा'' ति॥ ●

अमतवग्गो पञ्चमो॥

तस्सुद्दानं

अमतं समुदयो मग्गो, सति कुसलरासि च।
पातिमोक्खं दुच्चरितं, मित्तवेदना आसवेन चा॥ ति॥ ●

कौन से चार? काय में कायानुपश्यना...वेदनाओं में वेदनानुपश्यना...चित्त में चित्तानुपश्यना...धर्मों में धर्मानुपश्यना...पूर्ववत्...इन चारों की भावना करनी चाहिये''॥ ●

५०. आश्रवसूत्र : : **आश्रवत्रय**

५४. ...''भिक्षुओ! ये तीन आश्रव (चित्तविकार) होते हैं। कौन से तीन? कामाश्रव, भवाश्रव एवं अविद्याश्रव—ये तीन आश्रव होते हैं। भिक्षुओ! इन तीन आश्रवों के प्रहाण के लिये चारों स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये।

कौन से चार? यहाँ, भिक्षुओ! साधक भिक्षु काया में कायानुपश्यी...वेदनाओं में वेदनानु-पश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी...धर्मों में धर्मानुपश्यी...पूर्ववत्...। इन तीन आश्रवों के प्रहाण के लिये चारों स्मृतिप्रस्थानों की भावना करनी चाहिये''॥ ●

अमृतवर्ग पञ्चम समाप्त॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. अमृतसूत्र, २. समुदयसूत्र, ३. मार्गसूत्र, ४. स्मृतिसूत्र, ५. कुशलराशिसूत्र, ६. प्रातिमोक्षसंवरसूत्र, ७. दुश्चरितसूत्र, ८. मित्रसूत्र, ९. वेदनासूत्र, एवं १०. आश्रवसूत्र॥ ●

६. गङ्गापेय्यालवग्गो छट्ठो

५१-६२. गङ्गानदीआदिसुत्तद्वादसकं

५५-६६. "सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो सतिपट्ठाने भावेन्तो चत्तारो सतिपट्ठाने बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो।

"कथं च, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो सतिपट्ठाने भावेन्तो चत्तारो सतिपट्ठाने बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके [B.167] अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो सतिपट्ठाने भावेन्तो चत्तारो सतिपट्ठाने बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो" ति *(वित्थारेतब्बं)*॥ ●

गङ्गापेय्यालवग्गो छट्ठो॥

तस्सुद्दानं

छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो।
एते द्वे छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥ ●

---

६. गङ्गापेय्यालवर्ग षष्ठ

५१-६२. गङ्गानदीआदिसूत्र द्वादशक : : निर्वाण की ओर बढना

५५-६६. ...जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्व दिशा की ओर झुकी हुई पूर्व दिशा की ओर ही बहती है; उसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु भी चारों स्मृतिप्रस्थानों की भावना एवं अभ्यास करता हुआ निर्वाण की ओर झुका हुआ, निर्वाण की ओर ही प्रवृत्त होता है।

कैसे भिक्षुओ! वह भिक्षु चारों स्मृतिप्रस्थानों की...निर्वाण की ओर बढ़ता है? यहाँ, भिक्षु काय में कायानुपश्यना...वेदनाओं में वेदनानुपश्यना...चित्त में चित्तानुपश्यना...धर्मों में धर्मानुपश्यना करता हुआ साधना करता है तो ऐसा भिक्षु निर्वाण की ओर झुकता है, निर्वाण की ओर बढता है"॥ ●

(इसी तरह सब सूत्रों का उपरिवर्णित गङ्गापेय्यालवर्गवत् विस्तार कर लें।)

गङ्गापेय्यालवर्ग **षष्ठ सम्पन्न**॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—छह पूर्व की ओर बहती हुई तथा छह समुद्र की ओर बहती हुई, यों १२ नदियों की उपमा से बारह सूत्र इस वर्ग में व्याख्यात हुए हैं॥●

७. अप्पमादवग्गो सत्तमो

६३-७२. तथागतादिसुत्तं

[N.165] ६७-७६. यावता, भिक्खवे, सत्ता अपदा व द्विपदा वा चतुप्पदा वा बहुप्पदा वा ति *(वित्थारेतब्बं)* ॥ •

अप्पमादवग्गो सत्तमो ॥

तस्सुद्दानं

[R.191] तथागतं पदं कूटं, मूलं सारो च वस्सिकं।
राजा चन्दिमसुरिया, वत्थेन दसमं पदं ति॥ •

---

७. अप्रमादवर्ग सप्तम

६३-७२. तथागतादिसूत्र : : अप्रमाद का आधार

६७-७६. "भिक्षुओ! संसार में विना पैर वाले, दो पैर वाले तथा चार पैर वाले या बहुत पैर वाले जितने भी प्राणी हैं, उन में भगवान् बुद्ध ही...पूर्ववत्..." ॥ •

(पीछे मार्गसंयुक्त के अप्रमादवर्ग में वर्णित सभी सूत्रों का व्याख्यान कर लें।)

अप्रमादवर्ग सप्तम सम्पन्न ॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची— १. तथागतसूत्र, २. पदसूत्र, ३. कूटसूत्र, ४. मूलगन्धसूत्र, ५. सारगन्धसूत्र, ६. वर्षिकसूत्र, ७. राजासूत्र, ८. चन्द्रमासूत्र, ९. सूर्यसूत्र, एवं १०. काशिकेयवस्त्रसूत्र ॥ •

८. बलकरणीयवग्गो अट्ठमो

७३-८४. बलादिसुत्तं

७७-८८. सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि बलकरणीया कम्मन्ता करीयन्ती ति *(वित्थारेतब्बं)* ॥ ●

बलकरणीयवग्गो अट्ठमो ॥

तस्सुद्दानं

बलं बीजं च नागो च, रुक्खो कुम्भेन सूकिया। [B.168]
आकासेन च द्वे मेघा, नावा आगन्तुका नदी ति ॥ ●

---

८. बलकरणीय वर्ग अष्टम

७३-८४. बलादिंसूत्र : : बल

७७-८८. "भिक्षुओ! यहाँ जो भी बलपूर्वक कार्य किये जाते हैं वे सब ...पूर्ववत्..." ॥ ●

(उपरि (मार्गसंयुक्त में) वर्णित समस्त बलकरणीयवर्ग का यहाँ भी विस्तार कर लें।)

९. एसनावग्गो नवमो

८५-९४. एसानादिसुत्तं

८९-९८. तिस्सो इमा, भिक्खवे, एसना। कतमा तिस्सो? कामेसना, भवेसना, ब्रह्मचरियेसना ति *(वित्थारेतब्बं)*॥ •

एसनावग्गो नवमो॥

तस्सुद्दानं

एसना विधा आसवो, भवो च दुक्खता तिस्सो।
खिलं मलं च नीघो च, वेदना तण्हा तसिनाय चा ति॥ •

---

९. एषणावर्ग नवम

८५-९४. एषणादिसूत्र : : त्रिविध एषणा

८९-९८. ''भिक्षुओ! एषणाएँ तीन होती हैं। कौन सी तीन? (१) कामैषणा, (२) भवैषणा, (३) ब्रह्मचर्यैषणा। ...पूर्ववत्...॥ •

(मार्गसंयुक्त में आये समस्त एषणावर्ग का यहाँ विस्तार कर लें।)

इस सूत्र में व्याख्या सूत्रों की सूची—१. एषणासूत्र, २. विधासूत्र, ३. आश्रवसूत्र, ४. भवसूत्र, ५. दुःखतासूत्र, ६. खिलसूत्र, ७. मलसूत्र, ८. नीघसूत्र, ९. वेदनासूत्र, १०. तृष्णासूत्र एवं ११. तर्षणासूत्र॥ •

१०. ओघवग्गो दसमो

९५-११०. उद्धम्भागियादिसुत्तं

९९-११४. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि खो, [N.166, R.192] भिक्खवे, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा।

''कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति [B.169] आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते... धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय इमे चत्तारो सतिपट्ठाना भावेतब्बा'' ति॥ •

(यथा मग्गसंयुत्तं तथा सतिपट्ठानसंयुत्तं वित्थारेतब्बं।)

ओघवग्गो दसमो॥

तस्सुद्दानं

ओघो योगो उपादानं, गन्था अनुसयेन च।
कामगुणा नीवरणा, खन्धा ओरुद्धम्भागिया ति॥ •

सतिपट्ठानसंयुत्तं समत्तं॥

---

१०. औघवर्ग दशम

९५-११०. ऊर्ध्वभागीयादिसूत्र : : चार बाढ

(मार्गसंयुक्त में वर्णित इस वर्ग का यहाँ स्मृतिसंयुक्त में भी विस्तार कर लें।) •

औघवर्ग दशम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. औघसूत्र, २. योगसूत्र, ३. उपादानसूत्र, ४. ग्रन्थसूत्र, ५. अनुशयसूत्र, ६. कामगुणसूत्र, ७. नीवरणसूत्र, ८. उपादानस्कन्धसूत्र, ९. अवरभागीयसूत्र एवं १०. ऊर्ध्वभागीयसूत्र॥ •

स्मृतिप्रस्थानसंयुक्त समाप्त॥

४८. इन्द्रियसंयुत्तं

१. सुद्धिकवग्गो पठमो

१. सुद्धिकसुत्तं

[N.167, B.170, R.193] १. सावत्थिनिदानं। "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं, विरियिन्द्रियं, सतिन्द्रियं, समाधिन्द्रियं, पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानी" ति॥ •

२. पठमसोतापन्नसुत्तं

२. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं, विरियिन्द्रियं, सतिन्द्रियं, समाधिन्द्रियं, पञ्ञिन्द्रियं। यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको इमेसं पञ्चन्नं इन्द्रियानं अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं पजानाति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियसावको सोतापन्नो अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो" ति॥•

३. दुतियसोतापन्नसुत्तं

३. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं, विरियिन्द्रियं, सतिन्द्रियं, समाधिन्द्रियं, पञ्ञिन्द्रियं। यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको इमेसं पञ्चन्नं [R.194] इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं

---

४८. इन्द्रियसंयुक्त

१. शुद्धिकवर्ग प्रथम

१. शुद्धिकसूत्र : : पाँच इन्द्रिय

१. ...**श्रावस्ती में** ही...। वहाँ भगवान् (बुद्ध) ने यों उपदेश किया—"भिक्षुओ! ये इन्द्रियाँ पाँच होती हैं। कौन सी पाँच? श्रद्धेन्द्रिय, वीर्येन्द्रिय, स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय एवं प्रज्ञेन्द्रिय। यों, भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ होती हैं"॥ •

२. प्रथम स्रोतआपन्नसूत्र : : स्रोतआपन्न

२. ..."भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच होती हैं...पूर्ववत्...। जो आर्यश्रावक इन पाँचों इन्द्रियों के आस्वाद को, आदीनव को, मोक्ष को यथार्थतः जान लेता है, वह (आर्यश्रावक) स्रोतआपन्न एवं असम्भव च्युति वाला होता है तथा उस का परम पद (निर्वाण) प्राप्त करना अतिसुगम है"॥ •

३. द्वितीय स्रोतआपन्नसूत्र : : स्रोतआपन्न

३. ..."भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच होती हैं। ...पूर्ववत्...। जो आर्यश्रावक इन पाँचों इन्द्रियों के उत्पाद एवं विनाश को, आस्वाद आदीनव एवं मोक्ष को यथार्थतः जान लेता

पजानाति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियसावको सोतापन्नो अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो'' ति॥

४. पठमअरहन्तसुत्तं

४. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं, विरियिन्द्रियं, सतिन्द्रियं, समाधिन्द्रियं, पञ्ञिन्द्रियं। यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको इमेसं पञ्चन्नं इन्द्रियानं अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं विदित्वा [N.168, B.171] अनुपादाविमुत्तो होति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञा विमुत्तो'' ति॥

५. दुतियअरहन्तसुत्तं

५. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं, विरियिन्द्रियं, सतिन्द्रियं, समाधिन्द्रियं, पञ्ञिन्द्रियं। यतो खो, भिक्खवे, भिक्खु इमेसं पञ्चन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं विदित्वा अनुपादाविमुत्तो होति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञा विमुत्तो'' ति॥

है वह स्रोतआपन्न, असम्भव च्युति वाला एवं परम पद (निर्वाण) को अवश्य ही प्राप्त करने वाला होता है''॥

४. प्रथम अर्हत्सूत्र : : अर्हत् (ज्ञानी)

४. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच होती हैं। ...पूर्ववत्...। जो आर्यश्रावक इन पाँचों इन्द्रियों के आस्वाद, आदीनव एवं त्याग को यथार्थतः जान लेता है भिक्षुओ! वह अर्हत्, क्षीणास्रव, पूर्ण धर्मसाधना वाला, कृतकृत्य, भार को कन्धों से उतार कर फेंक देने वाला, परमार्थ (निर्वाण) प्राप्त, क्षीणभवसंयोजन हो जाता है एवं सम्यग्ज्ञान को प्राप्त कर विमुक्ति पा लेता है''॥

५. द्वितीय अर्हत्सूत्र : : अर्हत् (ज्ञानी)

५. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच होती हैं। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! जब साधक भिक्षु इन पाँचों इन्द्रियों के उत्पाद एवं विनाश को, आस्वाद, आदीनव एवं त्याग को यथार्थतः जान कर, अनुपादान के कारण, विमुक्त हो जाता है तब भिक्षुओ! यह भिक्षु अर्हत्, क्षीणास्रव, पूर्ण धर्मसाधना वाला, कृतकृत्य, सांसारिक भार को अपने कन्धों से उतार फेंकने वाला, परमार्थप्राप्त, क्षीणभवसंयोजन वाला कहलाता है। तथा सम्यग्ज्ञान प्राप्त कर विमुक्ति पा लेता है''॥

६. पठमसमणब्राह्मणसुत्तं

६. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं। ये हि केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा इमेसं पञ्चन्नं इन्द्रियानं अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं नप्पजानन्ति, न मे ते, भिक्खवे, समणा वा [R.195] ब्राह्मणा वा समणेसु वा समणसम्मता ब्राह्मणेसु वा ब्राह्मणसम्मता, न च पनेते आयस्मन्तो सामञ्ञत्थं वा ब्राह्मञ्ञत्थं वा दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति।

''ये च खो केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा इमेसं पञ्चन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं पजानन्ति, ते खो मे, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु चेव समणसम्मता ब्राह्मणेसु वा ब्राह्मणसम्मता; ते च पनायस्मन्तो सामञ्ञत्थं च ब्रह्मञ्ञत्थं च दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ती'' ति॥

७. दुतियसमणब्राह्मणसुत्तं

७. ''ये हि केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा सद्धिन्द्रियं नप्पजानन्ति, [N.169] सद्धिन्द्रियसमुदयं नप्पजानन्ति, सद्धिन्द्रियनिरोधं नप्पजानन्ति, सद्धिन्द्रिय-[B.172] निरोधगामिनिं पटिपदं नप्पजानन्ति; विरियिन्द्रियं नप्पजानन्ति...पे०...सतिन्द्रियं

---

६. प्रथम श्रमणब्राह्मणसूत्र : : श्रमण एवं ब्राह्मण कौन?

६. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच हैं। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण इन पाँचों इन्द्रियों के आस्वाद, आदीनव (दोष) एवं निःसरण (त्याग) को यथार्थतः नहीं जान पाते, भिक्षुओ! वे श्रमण ब्राह्मण श्रमणों में श्रमण एवं ब्राह्मणों में ब्राह्मण कहलाने योग्य नहीं होते। अथ च, वे इस जन्म में स्वयं जान कर साक्षात्कार कर प्राप्त कर साधनायोग्य भी नहीं होते।

परन्तु, भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण इन पाँचों इन्द्रियों के उत्पाद-विनाश को, आस्वाद, आदीनव एवं निःसरण को यथार्थतः जान लेते हैं वे श्रमणों में श्रमण एवं ब्राह्मणों में ब्राह्मण कहलाने योग्य हैं; तथा वे आयुष्मान् श्रामण्य एवं ब्राह्मण्य को इसी जन्म में, स्वयं जान कर, साक्षात्कार कर, प्राप्त कर साधना करने में समर्थ हो जाते हैं''॥

७. द्वितीय श्रमणब्राह्मणसूत्र : : श्रमण एवं ब्राह्मण कौन?

७. ...''भिक्षुओ! जो भी श्रमण ब्राह्मण श्रद्धेन्द्रिय को, श्रद्धेन्द्रिय के उत्पाद को, श्रद्धेन्द्रिय के निरोध को नहीं जानते तथा श्रद्धेन्द्रियनिरोधगामी मार्ग को नहीं जानते;

नप्पजानन्ति...पे०...समाधिन्द्रियं नप्पजानन्ति...पञ्ञिन्द्रियं नप्पंजानन्ति, पञ्ञिन्द्रिय-समुदयं नप्पजानन्ति, पञ्ञिन्द्रियनिरोधं नप्पजानन्ति, पञ्ञिन्द्रियनिरोधगामिनिं पटिपदं नप्पजानन्ति, न मे ते, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु वा समणसम्मता ब्राह्मणेसु वा ब्राह्मणसम्मता, न च पनेते आयस्मन्तो सामञ्ञत्थं वा ब्रह्मञ्ञत्थं वा दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति।

''ये च खो केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा सद्धिन्द्रियं पजानन्ति, सद्धिन्द्रियसमुदयं पजानन्ति, सद्धिन्द्रियनिरोधं पजानन्ति, सद्धिन्द्रियनिरोधगामिनिं पटिपदं पजानन्ति, विरियिन्द्रियं पजानन्ति...पे०...सतिन्द्रियं पजानन्ति...पे०...[R.196] समाधिन्द्रियं पजानन्ति...पे०...पञ्ञिन्द्रियं पजानन्ति, पञ्ञिन्द्रियसमुदयं पजानन्ति, पञ्ञिन्द्रियनिरोधं पजानन्ति, पञ्ञिन्द्रियनिरोधगामिनिं पटिपदं पजानन्ति, ते खो मे, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु चेव समणसम्मता ब्राह्मणेसु च ब्राह्मणसम्मता, ते च पनायस्मन्तो सामञ्ञत्थं च ब्रह्मञ्ञत्थं च दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ती'' ति॥ •

८. दट्ठब्बसुत्तं

८. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं। कत्थ च, भिक्खवे, सद्धिन्द्रियं दट्ठब्बं? चतूसु सोतापत्तियङ्गेसु—एत्थ

वीर्येन्द्रिय को...पूर्ववत्...स्मृतीन्द्रि को...समाधीन्द्रिय को...प्रज्ञेन्द्रिय को...प्रज्ञेन्द्रिय के समुदय को...प्रज्ञेन्द्रिय के निरोध को...एवं प्रज्ञेन्द्रियनिरोधगामी मार्ग को नहीं जानते; भिक्षुओ! मेरी दृष्टि में न वे श्रमण 'श्रमण' कहलाने योग्य हैं और न वे ब्राह्मण 'ब्राह्मण' कहलाने योग्य। तथा न वे इस जन्म में श्रामण्य एवं ब्राह्मण्य की प्राप्तिहेतु जान कर, साक्षात्कार कर उपसम्पन्न हो कर साधना करने में ही समर्थ हैं।

''परन्तु, भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण श्रद्धेन्द्रिय को...वीर्येन्द्रिय को...स्मृतीन्द्रिय को... समाधीन्द्रिय को...प्रज्ञेन्द्रिय को, प्रज्ञेन्द्रिय के समुदय को, प्रज्ञेन्द्रिय के निरोध को एवं प्रज्ञेन्द्रियनिरोधगामी मार्ग को यथार्थतः जानते हैं; भिक्षुओ! वे ही श्रमण ब्राह्मण श्रमणों में 'श्रमण' एवं ब्राह्मणों में 'ब्राह्मण' कहलाने योग्य हैं तथा वे इस श्रामण्य एवं ब्राह्मण्य को इसी जन्म में स्वयं जान कर, साक्षात्कार कर प्राप्त कर साधना करने में समर्थ हैं''॥ •

८. द्रष्टव्यसूत्र : : इन्द्रियों के देखने का स्थान

८. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच होती हैं। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! श्रद्धेन्द्रिय को कहाँ देखना चाहिये? चार स्रोतआपत्ति अङ्गों में—यहाँ श्रद्धेन्द्रिय को देखना चाहिये।

सद्धिन्द्रियं दट्ठब्बं। कत्थ च, भिक्खवे, विरियन्द्रियं दट्ठब्बं? चतूसु सम्मप्पधानेसु—एत्थ विरियिन्द्रियं दट्ठब्बं। कत्थ च, भिक्खवे, सतिन्द्रियं दट्ठब्बं? चतूसु सतिपट्ठानेसु—एत्थ सतिन्द्रियं दट्ठब्बं। कत्थ च, भिक्खवें, समाधिन्द्रियं दट्ठब्बं? चतूसु झानेसु—एत्थ समाधिन्द्रियं दट्ठब्बं। कत्थ च, भिक्खवे, पञ्ञिन्द्रियं दट्ठब्बं? चतूसु अरियसच्चेसु—एत्थ पञ्ञिन्द्रियं दट्ठब्बं। इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानी'' ति॥ •

९. पठमविभङ्गसुत्तं

[N.170] ९. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... [R.197] पञ्ञिन्द्रियं। कतमं च, भिक्खवे, सद्धिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको [B.173] सद्धो होति, सद्दहति तथागतस्स बोधिं—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सद्धिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, विरियिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु—इदं वुच्चति, भिक्खवे, विरियिन्द्रियं।

भिक्षुओ! वीर्येन्द्रिय को कहाँ देखना चाहिये? चार सम्यक्प्रधानों में—यहाँ वीर्येन्द्रिय को देखना चाहिये। भिक्षुओ! स्मृतीन्द्रिय को कहाँ देखना चाहिये? चार स्मृतिप्रस्थानों में—यहाँ स्मृतीन्द्रिय को देखना चाहिये। भिक्षुओ! समाधीन्द्रिय को कहाँ देखना चाहिये? चार ध्यानों में—यहाँ समाधीन्द्रिय को देखना चाहिये। तथा, भिक्षुओ! प्रज्ञेन्द्रिय कहाँ देखना चाहिये? चार आर्यसत्यों में—यहाँ प्रज्ञेन्द्रिय को देखना चाहिये। भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ हैं''॥ •

९. प्रथम विभङ्गसूत्र : : पाँच इन्द्रियाँ

९. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच होती हैं। ...पूर्ववत्...। १. भिक्षुओ! श्रद्धेन्द्रिय क्या है? भिक्षुओ! जो आर्यश्रावक श्रद्धालु होता है तथा भगवान् (बुद्ध) पर यों श्रद्धा रखता है—'वे भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध, विद्याचरणसम्पन्न, सुगत, लोकविद्, अनुत्तर, पुरुषों के दमन (अनुशासन) में सारथितुल्य, देवमनुष्यों के शास्ता वे बुद्ध भगवान् हैं'—भिक्षुओ! यह 'श्रद्धेन्द्रिय' कहलाती है।

२. भिक्षुओ! 'वीर्येन्द्रिय' किसे कहते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक अकुशल धर्मों के प्रहाणहेतु तथा कुशल धर्मों के उत्पादहेतु वीर्य (प्रयास) आरम्भ करता है, वहाँ बलपूर्वक दृढ पराक्रम करता है, जो कुशल धर्मों की प्राप्ति में साहस (हिम्मत) नहीं छोड़ता—भिक्षुओ! इसको 'वीर्येन्द्रिय' कहते हैं।

''कतमं च, भिक्खवे, सतिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको सतिमा होति परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सतिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, समाधिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको वोस्सग्गारम्मणं करित्वा लभति समाधिं, लभति चित्तस्स एकग्गतं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, समाधिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, पञ्ञिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय, सम्मा दुक्खक्खय-गामिनिया—इदं वुच्चति, भिक्खवे, पञ्ञिन्द्रियं। इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानी'' ति॥

●

१०. दुतियविभङ्गसुत्तं

१०. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं। कतमं च, भिक्खवे, सद्धिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको सद्धो होति, सद्दहति तथागतस्स बोधिं—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सद्धिन्द्रियं। [R.198]

''कतमं च, भिक्खवे, विरियिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको आरद्ध-

---

३. ''भिक्षुओ! 'स्मृतीन्द्रिय' किसे कहते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक परम स्मृति से युक्त स्मृतिमान् होता है, बहुत पहले किये हुए एवं बोले हुए को भी स्मरण रखने वाला होता है; भिक्षुओ! यही 'स्मृतीन्द्रिय' कहलाती है।

४. ''भिक्षुओ! 'समाधीन्द्रिय' क्या है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक व्यवसर्ग (त्याग) का आलम्बन कर चित्त को समाहित कर लेता है, चित्त की एकाग्रता प्राप्त कर लेता है—भिक्षुओ! इसे कहते हैं 'समाधीन्द्रिय'।

५. ''भिक्षुओ! फिर यह 'प्रज्ञेन्द्रिय' क्या है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक प्रज्ञावान् होता है, उत्पाद एवं नाश की बोधक ऐसी आर्य प्रज्ञा से युक्त होता है, जो लक्ष्य तक पहुँचाने वाली तथा दुःखक्षय का मार्ग बताने वाली है—इसे कहते हैं, भिक्षुओ! प्रज्ञेन्द्रिय। भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ होती हैं''॥

●

१०. द्वितीय विभङ्गसूत्र : : पाँच इन्द्रियों का कार्य विभाजन

१०. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच होती हैं। ...पूर्ववत्...।

१. भिक्षुओ! श्रद्धेन्द्रिय कौन सी होती है? ...पूर्वसूत्रवत्...।

[N.171] विरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु। सो अनुप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं अनुप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति [B.174] पदहति; उप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं अनुप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति; अनुप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं उप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति; उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, विरियिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, सतिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको सतिमा होति परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो, चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता। सो काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सतिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, समाधिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको वोस्सग्गारम्मणं करित्वा लभति समाधिं, लभति चित्तस्स एकग्गतं। सो विवेच्चेव

---

२. भिक्षुओ! वीर्येन्द्रिय क्या होती है? भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक अकुशल धर्मों के प्रहाण के लिये तथा कुशल धर्मों के उत्पाद के लिये प्रयास करता है, वहाँ बलपूर्वक दृढ पराक्रम करता है, जो कुशल धर्मों की प्राप्ति में साहस नहीं त्यागता। वह अनुत्पन्न अकुशल धर्मों के अनुत्पाद के लिये तथा उत्पन्न अकुशल धर्मों के प्रहाण के लिये, अनुत्पन्न कुशल धर्मों के उत्पाद के लिये तथा उत्पन्न कुशल धर्मों की स्थिति, वृद्धि, भावना एवं पूर्णता के लिये प्रयास करता है, पराक्रम करता है, तथा तदर्थ चित्त लगाता है—भिक्षुओ! इसे कहते हैं—'वीर्येन्द्रिय'।

३. भिक्षुओ! 'स्मृतीन्द्रिय' किसे कहते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक परम स्मृति से युक्त स्मृतिमान् होता है, बहुत समय पहले किये या बोले हुए को स्मरण रखता है—भिक्षुओ! यही 'स्मृतीन्द्रिय' कहलाती है। वह काय में कायानुपश्यी हो कर...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...तथा धर्मों में धर्मानुपश्यी हो कर ...साधना करता है—भिक्षुओ! इसे कहते हैं—'स्मृतीन्द्रिय'।

४. भिक्षुओ! 'समाधीन्द्रिय' किसे कहते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक व्यवसर्ग का आलम्बन कर चित्त को समाहित कर लेता है, चित्त की एकाग्रता प्राप्त कर

कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। पीतिया च विरागा उपेक्खको च विहरति सतो च सम्पजानो सुखं च कायेन पटिसंवेदेति यं तं अरिया आचिक्खन्ति 'उपेक्खको सतिमा सुखविहारी' ति ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, समाधिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, पञ्ञिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको [R.199] पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय, [N.172] सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। सो 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं [B.175] दुक्खसमुदयो' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, पञ्ञिन्द्रियं। इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानी'' ति॥ •

सुद्धिकवग्गो पठमो॥

लेता है। वह कामभोगों एवं अकुशल धर्मों का त्याग कर वितर्क विचार सहित विवेकजन्य प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान को उपसम्पन्न कर साधना करता है। तथा वितर्क विचारों के शान्त हो जाने के बाद, आध्यात्मिक सम्प्रसाद, चित्त की एकाग्रता, अवितर्क अविचारमय समाधिजन्य प्रीतिसुखमय द्वितीय ध्यान को उपसम्पन्न कर साधना करता है। प्रीति से भी वैराग्य होने पर...पूर्ववत्...तृतीय ध्यान को उपसम्पन्न कर साधना करता है। तथा सुख दुःख के प्रहाण से पूर्व ही सौमनस्य एवं दौर्मनस्य के नष्ट हो जाने से अदुःख-असुखमय स्मृतिपरिशुद्धि युक्त चतुर्थ ध्यान को उपसम्पन्न कर साधना करता है—भिक्षुओ! इसे कहते हैं 'समाधीन्द्रिय'।

५. ''फिर, भिक्षुओ! 'प्रज्ञेन्द्रिय' किसे कहते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक प्रज्ञावान् होता है, उत्पाद एवं नाश की बोधिका ऐसी आर्यप्रज्ञा से युक्त होता है जो लक्ष्य तक पहुँचाने वाली तथा दुःखक्षय का मार्ग बताने वाली है। वह 'यह दुःख है'—ऐसा यथार्थतः जान लेता है, 'यह दुःखसमुदय है'—ऐसा, 'यह दुःखनिरोध है'—ऐसा, 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—ऐसा यथार्थतः जान लेता है—इसे कहते हैं भिक्षुओ! 'प्रज्ञेन्द्रिय'। भिक्षुओ! यों ये पाँच इन्द्रियाँ होती हैं''॥ •

शुद्धिकवर्ग प्रथम सम्पन्न॥

तस्सुद्दानं

सुद्धिकं चेव द्वे सोता, अरहन्ता अपरे दुवे।
समणब्राह्मणा दट्ठब्बं, विभङ्गा अपरे दुवे ति॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. शुद्धिकसूत्र, २. प्रथम स्रोतआपन्नसूत्र, ३. द्वितीय स्रोतआपन्नसूत्र, ४. प्रथम अर्हत्सूत्र, ५. द्वितीय अर्हत्सूत्र, ६. प्रथम श्रमणब्राह्मणसूत्र, ७. द्वितीय श्रमणब्राह्मणसूत्र, ८. द्रष्टव्यसूत्र, ९. प्रथम विभङ्गसूत्र, एवं १०. द्वितीय विभङ्गसूत्र॥

२. मुदुतरवग्गो दुतियो

११. पटिलाभसुत्तं

११. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। कतमं च, भिक्खवे, सद्धिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको सद्धो होति, सद्दहति तथागतस्स बोधिं—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सद्धिन्द्रियं।

"कतमं च, भिक्खवे, विरियिन्द्रियं? यं खो, भिक्खवे, चत्तारो सम्मप्पधाने आरब्भ विरियं पटिलभति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, विरियिन्द्रियं।

"कतमं च, भिक्खवे, सतिन्द्रियं? यं खो, भिक्खवे, चत्तारो सतिपट्ठाने [R.200] आरब्भ सतिं पटिलभति—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सतिन्द्रियं।

"कतमं च, भिक्खवे, समाधिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको वोस्सग्गारम्मणं करित्वा लभति समाधिं, लभति चित्तस्स एकग्गतं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, समाधिन्द्रियं।

"कतमं च, भिक्खवे, पञ्ञिन्द्रियं? इध, भिक्खवे, अरियसावको पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय, सम्मा दुक्खक्खय-

---

२. मृदुतरवर्ग द्वितीय

११. प्रतिलाभसूत्र : : पाँच इन्द्रिय

११. ..."भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ हैं। कौन सी पाँच? श्रद्धेन्द्रिय...प्रज्ञेन्द्रिय। ...इन में श्रद्धेन्द्रिय क्या है? भिक्षुओ! यहाँ कोई आर्यश्रावक तथागत के प्रति श्रद्धालु होता है, तथा उन के ज्ञान के प्रति अपनी श्रद्धा यों प्रकट करता है—'ऐसे वे भगवान्...पूर्ववत्...बुद्ध हैं'। भिक्षुओ! इसे कहते हैं 'श्रद्धेन्द्रिय'।

"भिक्षुओ! यह वीर्येन्द्रिय क्या है? भिक्षुओ! वह चारों सम्यक्प्रधानों को आरम्भ कर वीर्यलाभ करता है—इसे कहते हैं 'वीर्येन्द्रिय'।

"भिक्षुओ! स्मृतीन्द्रिय क्या है? भिक्षुओ! चार स्मृतिप्रधानों को आरम्भ कर स्मृति प्राप्त करता है—यही कहलाती है 'स्मृतीन्द्रिय'।

"भिक्षुओ! समाधीन्द्रिय क्या है? भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक व्यवसर्ग को आलम्बन कर समाधि प्राप्त करता है—इसे कहते हैं भिक्षुओ! 'समाधीन्द्रिय'।

"भिक्षुओ! प्रज्ञेन्द्रिय क्या है? भिक्षुओ! यहाँ कोई आर्यश्रावक उत्पाद-विनाश

गामिनिया—इदं वुच्चति, भिक्खवे, पञ्ञिन्द्रियं। इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानी'' ति॥ •

१२. पठमसङ्खित्तसुत्तं

[N.173, B.176] १२. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं ...पे०...पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं समत्ता परिपूरत्ता अरहं होति, ततो मुदुतरेहि अनागामी होति, ततो मुदुतरेहि सकदागामी होति, ततो मुदुतरेहि सोतापन्नो होति, ततो मुदुतरेहि धम्मानुसारी होति, ततो मुदुतरेहि सद्धानुसारी होती'' ति॥ •

१३. दुतियसङ्खित्तसुत्तं

१३. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं समत्ता परिपूरत्ता अरहं होति, ततो मुदुतरेहि अनागामी होति, ततो मुदुतरेहि सकदागामी होति, ततो मुदुतरेहि सोतापन्नो होति, ततो मुदुतरेहि धम्मानुसारी होति, ततो मुदुतरेहि सद्धानुसारी होति। इति खो, भिक्खवे, इन्द्रियवेमत्तता फलवेमत्तता होति, फलवेमत्तता पुग्गलवेमत्तता'' ति॥ •

१४. ततियसङ्खित्तसुत्तं

[R.201] १४. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०...

की आर्यप्रज्ञा से युक्त होता हुआ, जो कि निर्वाण तक पहुँचाती है तथा दु:खक्षय का ज्ञान कराती है, प्रज्ञावान् होता है—भिक्षुओ! इसे कहते हैं 'प्रज्ञेन्द्रिय'।

भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ कहलाती हैं''॥ •

१२. प्रथम संक्षिप्तसूत्र : : पाँचों इन्द्रियों का पूर्ण होना

१२. ...''भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ होती हैं। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! इन पाँचों इन्द्रियों का मृदुत्व समाप्त हो जाने से, इन के पूर्ण हो जाने से साधक अर्हत् हो जाता है। यदि वह प्रारब्ध-वश अर्हत् न हो पाया तो अनागामी हो जाता है। यदि प्रारब्धवश वह भी न हुआ तो सकृदागामी हो जाता है। और वह भी न हुआ तो वह स्रोतआपन्न होता है। यदि वह भी न हो पाया तो धर्मानुसारी, और वह भी न हुआ तो उस के श्रद्धानुसारी होने में तो कोई सन्देह ही नहीं है''॥ •

१३. द्वितीय संक्षिप्तसूत्र : : पुरुषेन्द्रियों की भिन्नता से साधनाभेद

१३. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच हैं...पूर्वसूत्रवत्...। इन इन्द्रियों की भिन्नता से फल में भिन्नता आती है। फल में भेद से पुरुषों में भेद स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगता है''॥•

पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं समत्ता परिपूरत्ता अरहं होति, ततो मुदुतरेहि अनागामी होति, ततो मुदुतरेहि सकदागामी होति, ततो मुदुतरेहि सोतापन्नो होति, ततो मुदुतरेहि धम्मानुसारी होति, ततो मुदुतरेहि सद्धानुसारी होति। इति खो, भिक्खवे, परिपूरं परिपूरकारी आराधेति, पदेसं पदेसकारी आराधेति। 'अवञ्झानि त्वेवाहं, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानी' ति वदामी'' ति॥ •

१५. पठमवित्थारसुत्तं

१५. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? [N.174, B.177] सद्धिन्द्रियं ...पे०...पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं समत्ता परिपूरत्ता अरहं होति, ततो मुदुतरेहि अन्तरा-परिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि उपहच्चपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि

---

१४. तृतीय संक्षिप्तसूत्र : : इन्द्रियों में विफलता नहीं

१४. ...''भिक्षुओ! ये इन्द्रियाँ पाँच हैं।...पूर्ववत्...। इन पाँचों इन्द्रियों के आराधन से... श्रद्धानुसारी होने में तो कोई सन्देह नहीं है। यों इन इन्द्रियों की साधना पूर्ण करने वाला धर्मसाधना पूर्ण कर लेता है तथा इन की आधी अधूरी (प्रदेशमात्र) साधना करने वाले की धर्मसाधना भी आधी ही रह जाती है। परन्तु इस पुरुष की कमी से इन इन्द्रियों में कोई कमी—ऐसा मैं नहीं मानता। कमी पुरुष में ही होती, इन्द्रियों में नहीं। ये पाँचों इन्द्रियाँ तो अवन्ध्य (सफल) हैं''॥ •

१५. प्रथम विस्तारसूत्र : : इन्द्रियों की पूर्णता से अर्हत्त्व

१५. ...''भिक्षुओ! ये इन्द्रियाँ पाँच हैं।...पूर्ववत्...। इन पाँचों इन्द्रियों की साधना के समस्त होने से, परिपूर्ण होने से साधक अर्हत्त्व प्राप्त कर लेता है; परन्तु इन में साधना की कुछ मृदुता (कमी) रह जाने से बीच में निर्वाण पाने वाला (=अन्तरापरिनिब्बायी[1]) होता है। उस से भी कम साधना से उपहत्य परिनिर्वायी (=उपहच्च परिनिब्बायी[2]) होता है। उस से भी मृदु साधना से असंस्कारपरिनिर्वायी (=असङ्खारपरिनिब्बायी[3]) होता है।

---

१. जो साधक पाँच अध: संयोजनों के नष्ट हो जाने पर अनागामी हो कर शुद्धावास ब्रह्मलोक में उत्पन्न होने के बाद ही अथवा मध्य आयु से पूर्व ही ऊपरी संयोजनों को नष्ट करने के लिये आर्यमार्ग को उत्पन्न कर लेता है उसे '**अन्तरापरिनिब्बायी**' कहते हैं।

२. जो साधक अनागामी हो कर शुद्धावास ब्रह्मलोक में उत्पन्न हो मध्य आयु के बीत जाने पर अथवा काल करने (मृत्यु) के समय ऊपरी संयोजनों को नष्ट करने के लिये आर्यमार्ग को उत्पन्न कर लेता है, उसे '**उपहच्च परिनिब्बायी**' कहते हैं।

३. जो साधक अनागामी हो कर शुद्धावास ब्रह्मलोक में उत्पन्न होता है और अल्प प्रयत्न से ही ऊपरी संयोजनों को नष्ट करने के लिये आर्यमार्ग को उत्पन्न कर लेता है, उसे '**असङ्खारपरिनिब्बायी**' कहते हैं।

असङ्खारपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि ससङ्खारपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी, ततो मुदुतरेहि सकदागामी होति, ततो मुदुतरेहि सोतापन्नो होति, ततो मुदुतरेहि धम्मानुसारी होति, ततो मुदुतरेहि सद्धानुसारी होती'' ति॥ •

१६. दुतियवित्थारसुत्तं

१६. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं समत्ता परिपूरत्ता अरहं होति, ततो मुदुतरेहि अन्तरापरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि उपहच्चपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि असङ्खारपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि ससङ्खारपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी, ततो मुदुतरेहि सकदागामी होति, ततो मुदुतरेहि सोतापन्नो होति, ततो मुदुतरेहि धम्मानुसारी होति, ततो

उस की अपेक्षा अधिक मृदुता से ससंस्कारपरिनिर्वायी (=ससङ्खारपरिनिब्बायी[1]) होता है। उस की भी अपेक्षा अधिक मृदुता से ऊर्ध्वस्रोत अकनिष्ठगामी (=उद्धंसोतो अकनिट्ठगामी[2]) होता है। उस की भी अधिक मृदुता से सकृदागामी (सकदागामी) होता है। उस की भी अपेक्षा कम मृदुता से धर्मानुसारी (=धम्मानुसारी[3]) होता है। तथा उस की भी अपेक्षा कम मृदुता से श्रद्धानुसारी (=सद्धानुसारी[4]) होता है''॥ •

१६. द्वितीय विस्तारसूत्र : : पुरुषभेद से साधनाभेद

१६. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच हैं।...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! इन पाँचों इन्द्रियों की समग्र, पूर्ण साधना से साधक अर्हत्त्व प्राप्त कर लेता है। उस की अपेक्षा इन की मृदु साधना से अन्तरापरिनिर्वायी...उपहत्य परिनिर्वायी...असंस्कारपरिनिर्वायी...ससंस्कार-परिनिर्वायी...ऊर्ध्वस्रोत अकनिष्ठगामी...सकृदागामी...स्रोतआपन्न...धर्मानुसारी...श्रद्धानुसारी

---

१. जो साधक अनागामी हो कर शुद्धावास ब्रह्मलोक में उत्पन्न होता है और वह बड़े दुःख के साथ कठिनाई से ऊपरी संयोजनों को नष्ट करने के लिये आर्यमार्ग को उत्पन्न करता है, उसे '**ससङ्खार-परिनिब्बायी**' कहते हैं।

२. जो साधक अनागामी हो कर शुद्धावास ब्रह्मलोक में उत्पन्न होता है और वह अविह ब्रह्मलोक से च्युत होकर अतप्प ब्रह्मलोक को जाता है, अतप्प से च्युत हो कर सुदस्स ब्रह्मलोक को जाता है, वहाँ से च्युत होकर सुदस्सी ब्रह्मलोक को जाता है और वहाँ से च्युत हो अकनिष्ठ ब्रह्मलोक में जा कर ऊपरी संयोजनों को नष्ट करने के लिए आर्यमार्ग उत्पन्न करता है, उसे '**उद्धंसोतो अकनिट्ठगामी**' कहते हैं।

३. स्रोतआपत्तिफल प्राप्त करने में लगे हुए जिस साधक की प्रज्ञेन्द्रिय प्रबल होती है और प्रज्ञा को आगे कर जो आर्यमार्ग की भावना करता है, उसे '**धर्मानुसारी**' कहते हैं।

४. स्रोतआपत्तिफल प्राप्त करने में लगे हुए जिस साधक की श्रद्धेन्द्रिय प्रबल होती है और श्रद्धा को आगे कर के आर्यमार्ग की भावना करता है, उसे '**श्रद्धानुसारी**' कहते हैं।

मुदुतरेहि सद्धानुसारी होति। इति खो, भिक्खवे, इन्द्रियवेमत्तता फलवेमत्तता होति, फलवेमत्तता पुग्गलवेमत्तता होती'' ति॥ •

१७. ततियवित्थारसुत्तं

१७. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं [R.202] ...पे०...पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं समत्ता परिपूरत्ता अरहं होति, ततो मुदुतरेहि अन्तरापरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि उपहच्चपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि असङ्खारपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि ससङ्खारपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी, ततो मुदुतरेहि सकदागामी होति, ततो मुदुतरेहि सोतापन्नो होति, ततो मुदुतरेहि धम्मानुसारी होति, ततो मुदुतरेहि सद्धानुसारी होति। इति खो, भिक्खवे, परिपूरं [B.178, N.175] परिपूरकारी आराधेति, पदेसं पदेसकारी आराधेति। 'अवञ्झानि त्वेवाहं, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानी' ति वदामी'' ति॥ •

१८. पटिपन्नसुत्तं

१८. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं समत्ता परिपूरत्ता अरहं होति, ततो मुदुतरेहि अरहत्तफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो होति, ततो मुदुतरेहि अनागामी होति, ततो मुदुतरेहि अनागामिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो

होता है। यों, भिक्षुओ! इस तरह साधक पुरुष द्वारा कृत साधना की भिन्नता से इन्द्रियों की, फल की, बल की एवं पुरुषों की भिन्नता हो जाने से ही ऐसा होता है''॥ •

१७. तृतीय विस्तारसूत्र : : यह इन्द्रियों की विफलता नहीं होतीं

१७. ...''भिक्षुओ! ...पूर्वसूत्रवत्...। इस तरह इन इन्द्रियां की साधना पूर्ण करने वाला अपनी धर्मसाधना पूर्ण कर लेता है, तथा कुछ ही प्रदेश (अंश) की साधना करने वाला कुछ दूर तक ही धर्मसाधना पूर्ण कर पाता है। इतने पर भी, ये इन्द्रियाँ विफल नहीं होतीं, वे तो सफल (अवन्ध्य) ही हैं; अपि तु पुरुष की साधना में मृदुता ही पुरुष को विफल करती हैं—ऐसा मैं मानता हूँ''॥ •

१८. प्रतिपन्नसूत्र : : इन्द्रियसाधना से रहित ही 'अज्ञ' है

१८. ...''भिक्षुओ! ...पूर्वसूत्रवत्...। भिक्षुओ! इन पाँचों इन्द्रियों की समग्र एवं परिपूर्ण साधना से साधक को अर्हत्त्व प्राप्त हो जाता है। इस की अपेक्षा अधिक मृदु साधना से वह अर्हत्त्वफल के साक्षात्कार से युक्त (प्रतिपन्न) हो जाता है। ...अनागामी... अनागामिफलसाक्षात्कार ...सकृदागामी...सकृदागामिफलसाक्षात्कार...स्रोतआपन्न...स्रोत-

होति, ततो मुदुतरेहि सकदागामी होति, ततो मुदुतरेहि सकदागामिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो होति, ततो मुदुतरेहि सोतापन्नो होति, ततो मुदुतरेहि सोतापत्तिफल-सच्छिकिरियाय पटिपन्नो होति। यस्स खो, भिक्खवे, इमानि पञ्चिन्द्रियानि सब्बेन सब्बं सब्बथा सब्बं नत्थि, तमहं 'बाहिरो पुथुज्जनपक्खे ठितो' ति वदामी'' ति॥ ●

१९. सम्पन्नसुत्तं

१९. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—

'''इन्द्रियसम्पन्नो, इन्द्रियसम्पन्नो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भन्ते, इन्द्रियसम्पन्नो होती'' ति?

[R.203] ''इध, भिक्खु, भिक्खु सद्धिन्द्रियं भावेति उपसमगामिं सम्बोधगामिं, विरियिन्द्रियं भावेति उपसमगामिं सम्बोधगामिं, सतिन्द्रियं भावेति उपसमगामिं सम्बोधगामिं, समाधिन्द्रियं भावेति उपसमगामिं सम्बोधगामिं, पञ्ञिन्द्रियं भावेति उपसमगामिं सम्बोधगामिं। एत्तावता खो, भिक्खु, भिक्खु इन्द्रियसम्पन्नो होती'' ति॥●

२०. आसवक्खयसुत्तं

२०. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... [N.176, B.179] पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। इमेसं खो,

---

आपन्नफलसाक्षात्कार से युक्त होता है। हाँ, जिस ने इन इन्द्रियों की साधना किसी भी तरह से कुछ भी, कैसे भी या कभी भी पूर्ण नहीं की है उस साधक को मैं इस धर्मविनय से बाहर एक पृथग्जन (अज्ञ) के रूप में ही देखता हूँ, समझता हूँ''॥ ●

१९. सम्पन्नसूत्र : : इन्द्रियसाधनासम्पन्नता

१९. ...तब कोई भिक्षु भगवान् के पास आया। आ कर, भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस ने भगवान् से अपनी जिज्ञासा यों प्रकट की—

''भन्ते! लोग धर्मचर्चा में 'इन्द्रियसम्पन्न, इन्द्रियसम्पन्न'—ऐसा कहते रहते हैं। कोई साधक 'इन्द्रियसम्पन्न' कैसे होता है?

''भिक्षु! यहाँ कोई साधक भिक्षु उपशम (चित्तशान्ति) की ओर प्रवृत्त करने वाली, ज्ञान प्राप्त कराने वाली श्रद्धेन्द्रिय की भावना करता है, ...वीर्येन्द्रिय की...स्मृतीन्द्रिय की...समाधीन्द्रिय की...प्रज्ञेन्द्रिय की भावना करता है तो, भिक्षु! केवल इतना करने से भी वह साधक 'इन्द्रियसम्पन्न' कहलाने योग्य है''॥ ●

२०. आश्रवक्षयसूत्र : : आश्रवों का क्षय

२०. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच हैं। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! इन पाँच इन्द्रियों की

भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता भिक्खु आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती'' ति॥ ●

मुदुतरवग्गो दुतियो॥

तस्सुद्दानं

पटिलाभो तयो सङ्खित्ता, वित्थारा अपरे तयो।
पटिपन्नो च सम्पन्नो, दसमं आसवक्खयं॥ ति॥ ●

भावना तथा अभ्यास से साधक आश्रवों के क्षय से चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में प्राप्त कर स्वयं जान कर एवं साक्षात्कार कर उपसम्पन्न हो कर साधना करता है''॥ ●

मृदुतरवर्ग द्वितीय सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. प्रतिलाभसूत्र, २. प्रथम संक्षिप्तसूत्र, ३. द्वितीय संक्षिप्तसूत्र, ४. तृतीय संक्षिप्तसूत्र, ५. प्रथम विस्तारसूत्र, ६. द्वितीय विस्तारसूत्र, ७. तृतीय विस्तारसूत्र, ८. प्रतिपन्नसूत्र, ९. सम्पन्नसूत्र एवं १०. आश्रवक्षयसूत्र॥ ●

३. छळिन्द्रियवग्गो ततियो

२१. पुनब्भवसुत्तं

२१. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं। यावकीवञ्चाहं, भिक्खवे, इमेसं पञ्चन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च [R.204] अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं नाब्भञ्ञासिं, नेंव तावाहं, भिक्खवे, सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय 'अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो' ति पच्चञ्ञासिं। यतो च ख्वाहं, भिक्खवे, इमेसं पञ्चन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं अब्भञ्ञासिं, अथाहं, भिक्खवे, सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय 'अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो' ति पच्चञ्ञासिं। ञाणं च पन मे दस्सनं उदपादि—'अकुप्पा मे विमुत्ति, अयमन्तिमा जाति, नत्थिदानि पुनब्भवो'' ति॥ •

२२. जीवितिन्द्रियसुत्तं

२२. ''तीणिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि तीणि? इत्थिन्द्रियं, पुरिसिन्द्रियं, जीवितिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, तीणि इन्द्रियानी'' ति॥ •

२३. अञ्ञिन्द्रियसुत्तं

[N.177, B.180] २३. ''तीणिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि तीणि?

---

३. षडिन्द्रियवर्ग तृतीय

२१. पुनर्भवसूत्र : : इन्द्रिय ज्ञानानन्तर बुद्धत्व का विश्वास

२१. ...''भिक्षुओ! ये इन्द्रियाँ पाँच हैं। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! जब तक मुझे इन पाँचों इन्द्रियों के समुदय, नाश, आस्वाद, आदीनव एवं निःसरण के विषय में यथार्थ ज्ञान नहीं हुआ तब तक मैने देवताओं सहित इस मनुष्य लोक की मार, ब्रह्मा या श्रमण ब्राह्मणों सहित प्रजा के सम्मुख यह विश्वास कभी प्रकट नहीं किया कि मुझे बुद्धत्व प्राप्त होने जा रहा है। हाँ, जब मुझे इन पाँचों...यथार्थ ज्ञान हो गया तब मैंने देवताओं सहित...प्रजा के सम्मुख यह दृढ विश्वास प्रकट कर दिया कि मुझे बुद्धत्व प्राप्त हो गया है। उस समय मुझे यह ज्ञानदर्शन भी हो गया—'मेरा चित्त सर्वथा मुक्त हो गया है, यही मेरा अन्तिम जन्म है, अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा''॥ •

२२. जीवितेन्द्रियसूत्र : : तीन इन्द्रियाँ

२२. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियॉ तीन हैं। कौन सी तीन? (१) स्त्रीन्द्रिय, (२) पुरुषेन्द्रिय एवं (३) जीवितेन्द्रिय। भिक्षुओ! ये तीन इन्द्रियाँ होती हैं''॥ •

अनञ्ञातञ्ञस्सामीतिन्द्रियं, अञ्ञिन्द्रियं, अञ्ञाताविन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, तीणि इन्द्रियानी'' ति॥ ●

२४. एकबीजीसुत्तं

२४. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं समत्ता परिपूरत्ता अरहं होति, ततो मुदुतरेहि अन्तरापरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि उपहच्चपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि असङ्खारपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि ससङ्खारपरिनिब्बायी होति, ततो मुदुतरेहि उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी, ततो [R.205] मुदुतरेहि सकदागामी होति, ततो मुदुतरेहि एकबीजी होति, ततो मुदुतरेहि कोलङ्कोलो होति, ततो मुदुतरेहि सत्तक्खत्तुपरमो होति, ततो मुदुतरेहि धम्मानुसारी होति, ततो मुदुतरेहि सद्धानुसारी होती'' ति॥ ●

२५. सुद्धकसुत्तं

२५. ''छयिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि छ? चक्खुन्द्रियं, सोतिन्द्रियं,

---

२३. आज्ञेन्द्रियसूत्र : : तीन इन्द्रियाँ

२३. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ तीन हैं। कौन सी तीन? 'अनाज्ञात को जानूँगा'—यह इन्द्रिय, आज्ञेन्द्रिय (ज्ञानेन्द्रिय) तथा आज्ञातेन्द्रिय (परमज्ञानेन्द्रिय)—भिक्षुओ! ये तीन इन्द्रियाँ होती हैं''॥ ●

२४. एकबीजीसूत्र : : पाँच इन्द्रियाँ

२४. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच होती हैं। कौन सी पाँच? श्रद्धेन्द्रिय...पूर्ववत्... प्रज्ञेन्द्रिय। ...। इन पाँचों इन्द्रियों समग्र परिपूर्णता से अर्हत्त्व प्राप्त हो जाता है। उस की अपेक्षा अधिक मृदुता से अन्तरापरिनिर्वायी...उपहत्य परिनिर्वायी...असंस्कारपरिनिर्वायी... संस्कारपरिनिर्वायी...ऊर्ध्वंस्रोत अकनिट्ठगामी...सकृदागामी...एकबीजी...कोलङ्कोल... सप्तकृत्वःपरम...धर्मानुसारी...श्रद्धानुसारी होता है''॥ ●

---

१. जो स्रोतआपत्तिफल प्राप्त साधक केवल एक बार ही मनुष्यलोक में उत्पन्न हो कर निर्वाण पा लेता है, उसे '**एकबीजी**' कहते हैं।

२. जो स्रोतआपत्तिफल प्राप्त साधक दो या तीन बार जन्म ले कर निर्वाण प्राप्त करता है, उसे '**कोलङ्कोल**' कहते हैं।

३. जो स्रोतआपत्तिफल प्राप्त साधक सात बार देवलोक तथा मनुष्यलोक में जन्म ले कर निर्वाण प्राप्त करता है, उसे '**सत्तक्खत्तुपरम**' (=सात बार परम) कहते हैं।

घानिन्द्रियं, जिव्हिन्द्रियं, कायिन्द्रियं, मनिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, छ इन्द्रियानी'' ति॥

२६. सोतापन्नसुत्तं

२६. ''छयिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि छ? चक्खुन्द्रियं...पे०... मनिन्द्रियं। यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको इमेसं छन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं पजानाति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियसावको सोतापन्नो अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो'' ति॥

२७. अरहन्तसुत्तं

[N.178, B.181] २७. ''छयिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि छ? चक्खुन्द्रियं, सोतिन्द्रियं, घानिन्द्रियं, जिव्हिन्द्रियं, कायिन्द्रियं, मनिन्द्रियं। यतो खो, भिक्खवे, भिक्खु इमेसं छन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं विदित्वा अनुपादाविमुत्तो होति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञा विमुत्तो''' ति॥

---

२५. शुद्धकसूत्र : : छह इन्द्रियाँ

२५. ...''भिक्षुओ! ये छह इन्द्रियाँ हैं। कौन सी छह? चक्षुरिन्द्रिय, श्रोत्रेन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय, कायेन्द्रिय एवं मन इन्द्रिय। भिक्षुओ! ये छह इन्द्रियाँ होती हैं''॥

२६. स्रोतआपन्नसूत्र : : स्रोतआपन्न

२६. ...''भिक्षुओ! ये छह इन्द्रियाँ होती हैं। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! जब कोई आर्यश्रावक इन छह इन्द्रियों को यथार्थत: जान लेता है, इन के उत्पाद-विनाश, आस्वाद, आदीनव एवं नि:सरण को जान लेता है; ऐसा आर्यश्रावक स्रोतआपन्न कहा जाता है। वह अब इस स्थिति से च्युत नहीं हो सकता, अब परम ज्ञान (सम्बोधि) प्राप्त करना अब उस के लिये निश्चित है''॥

२७. अर्हत्सूत्र : : अर्हत् (ज्ञानी)

२७. ...''भिक्षुओ! ये छह इन्द्रियाँ हैं। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! जो भिक्षु इन छह इन्द्रियों के उत्पाद-विनाश को...पूर्ववत्...। प्राप्त कर विमुक्त हो जाता है वह 'अर्हत्' कहा जाता है; क्यों कि वह क्षीणास्रव हो चुका है, उस की धर्मसाधना पूर्ण हो चुकी है। वह कृतकृत्य, भारयुक्त, परमार्थप्राप्त एवं क्षीणभवसंयोजन हो चुका है। जो परम ज्ञान प्राप्त कर विमुक्त हो चुका है''॥

२८. सम्बुद्धसुत्तं

२८. ''छयिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि छ? चक्खुन्द्रियं, सोतिन्द्रियं, [R.206] घानिन्द्रियं, जिव्हिन्द्रियं, कायिन्द्रियं, मनिन्द्रियं। यावकीवञ्चाहं, भिक्खवे, इमेसं छन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं नाब्भञ्ञासिं, नेव तावाहं, भिक्खवे, सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय 'अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो' ति पच्चञ्ञासिं। यतो च ख्वाहं, भिक्खवे, इमेसं छन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं अब्भञ्ञासिं, अथाहं, भिक्खवे, सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय 'अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो' ति पच्चञ्ञासिं। ञाणं च पन मे दस्सनं उदपादि— 'अकुप्पा मे विमुत्ति, अयमन्तिमा जाति, नत्थिदानि पुनब्भवो'' ति॥ •

२९. पठमसमणब्राह्मणसुत्तं

२९. ''छयिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि छ? चक्खुन्द्रियं, सोतिन्द्रियं, घानिन्द्रियं, जिव्हिन्द्रियं, कायिन्द्रियं, मनिन्द्रियं। ये हि केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा इमेसं छन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं नप्पजानन्ति, न मे ते, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु वा समणसम्मता ब्राह्मणेसु वा ब्राह्मणसम्मता, न च पनेते आयस्मन्तो [N.179, B.182] सामञ्ञत्थं वा ब्रह्मञ्ञत्थं वा दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति।

''ये च खो केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा इमेसं छन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं पजानन्ति, ते खो मे, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु चेव समणसम्मता ब्राह्मणेसु च ब्राह्मणसम्मता।

---

२८. सम्बुद्धसूत्र : : बुद्धत्वप्राप्ति सुनिश्चित

२८. ...''भिक्षुओ! ये छह इन्द्रियाँ हैं। ...पूर्ववत्...। जब तक, भिक्षुओ! मैंने इन छह इन्द्रियों का...पूर्ववत्...(पुनर्भवसूत्र के समान) मेरा पुनर्जन्म सम्भव नहीं है''॥ •

२९. प्रथम श्रमणब्राह्मणसूत्र : : इन्द्रियज्ञान से श्रमणत्व एवं ब्राह्मणत्व

२९. ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण इन छह इन्द्रियों के समुदय एवं विनाश को, आस्वाद आदीनव एवं मोक्ष को यथार्थतः नहीं जानते वे...इस जन्म में श्रामण्य एवं ब्राह्मण्य की प्राप्ति के लिये साधना नहीं कर सकते।

ते च पनायस्मन्तो सामञ्ञत्थं च ब्रह्मञ्ञत्थं च दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ती'' ति॥

३०. दुतियसमणब्राह्मणसुत्तं

३०. ''ये हि केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा चक्खुन्द्रियं नप्पजानन्ति, चक्खुन्द्रियसमुदयं नप्पजानन्ति, चक्खुन्द्रियनिरोधं नप्पजानन्ति, चक्खुन्द्रियनिरोधगामिनिं पटिपदं नप्पजानन्ति, सोतिन्द्रियं...पे०...घानिन्द्रियं...पे०...जिव्हिन्द्रियं...पे०...कायिन्द्रियं...पे०... मनिन्द्रियं नप्पजानन्ति, मनिन्द्रियसमुदयं नप्पजानन्ति, मनिन्द्रियनिरोधं नप्पजानन्ति, मनिन्द्रियनिरोधगामिनिं पटिपदं नप्पजानन्ति, न मे ते, भिक्खवे ...पे०...सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति।

[R.207] ''ये च खो केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा चक्खुन्द्रियं पजानन्ति, चक्खुन्द्रियसमुदयं पजानन्ति, चक्खुन्द्रियनिरोधं पजानन्ति, चक्खुन्द्रियनिरोधगामिनिं पटिपदं पजानन्ति, सोतिन्द्रियं...पे०...घानिन्द्रियं...पे०...जिव्हिन्द्रियं...पे०...कायिन्द्रियं ...पे०...मनिन्द्रियं पजानन्ति, मनिन्द्रियसमुदयं पजानन्ति, मनिन्द्रियनिरोधं पजानन्ति, मनिन्द्रियनिरोधगामिनिं पटिपदं पजानन्ति, ते खो मे, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु चेव समणसम्मता ब्राह्मणेसु च ब्राह्मणसम्मता, ते च पनायस्मन्तो सामञ्ञत्थं च ब्रह्मञ्ञत्थं च दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ती'' ति॥

छळिन्द्रियवग्गो ततियो॥

तस्सुद्दानं

पुनब्भवो जीवितञ्ञाय, एकबीजी च सुद्धकं।
सोतो अरहसम्बुद्धो, द्वे च समणब्राह्मणा॥ ति॥

''परन्तु जो इन छह इन्द्रियों के उत्पाद-विनाश को...यथार्थत: जान लेते हैं...वे इसी जन्म में श्रामण्य, ब्राह्मण्य को जान कर साक्षात्कार कर धर्मसाधना कर सकते हैं''॥

३०. द्वितीय श्रमणब्राह्मणसूत्र : : इन्द्रियज्ञान से श्रामण्य एवं ब्राह्मण्य

३०. ...''भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण चक्षुरिन्द्रिय को, इस के उत्पाद को, इस के निरोध को, इस के निरोधगामी मार्ग को, श्रोत्रेन्द्रिय को...घ्राणेन्द्रिय को...जिह्वेन्द्रिय को...कायेन्द्रिय को...मनइन्द्रिय को...मनइन्द्रियनिरोधगामी मार्ग को यथार्थत: नहीं जानते, वे इसी जन्म में...साधना नहीं कर सकते।

''परन्तु भिक्षुओ! जो चक्षुरिन्द्रिय को...पूर्ववत्...मनइन्द्रियनिरोधगामी मार्ग को यथार्थत: जान लेते हैं वे इसी जन्म में...साधना कर पाते हैं''॥ •

षडिन्द्रियवर्ग तृतीय सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. पुनर्भवसूत्र, २. जीवितेन्द्रियसूत्र, ३. आज्ञेन्द्रियसूत्र, ४. एकबीजीसूत्र, ५. शुद्धकसूत्र, ६. स्रोतआपन्नसूत्र, ७. अर्हत्सूत्र, ८. सम्बुद्धसूत्र, ९. प्रथम श्रमणब्राह्मणसूत्र एवं १०. द्वितीय श्रमणब्राह्मणसूत्र॥ •

४. सुखिन्द्रियवग्गो चतुत्थो

३१. सुद्धिकसुत्तं

[N.180, B.183] ३१. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सुखिन्द्रियं, दुक्खिन्द्रियं, सोमनस्सिन्द्रियं, दोमनस्सिन्द्रियं, उपेक्खिन्द्रियं--इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानी" ति॥ ●

३२. सोतापन्नसुत्तं

३२. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सुखिन्द्रियं, दुक्खिन्द्रियं, सोमनस्सिन्द्रियं, दोमनस्सिन्द्रियं, उपेक्खिन्द्रियं। यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको इमेसं पञ्चन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं पजानाति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियसावको सोतापन्नो अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो" ति॥ ●

३३. अरहन्तसुत्तं

[R.208] ३३. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सुखिन्द्रियं, दुक्खिन्द्रियं, सोमनस्सिन्द्रियं, दोमनस्सिन्द्रियं, उपेक्खिन्द्रियं। यतो खो, भिक्खवे, भिक्खु इमेसं पञ्चन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं विदित्वा अनुपादाविमुत्तो होति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञा विमुत्तो" ति॥ ●

---

४. सुखेन्द्रियवर्ग चतुर्थ

३१. शुद्धिकसूत्र : : पाँच इन्द्रियाँ

३१. ..."भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ हैं। कौन सी पाँच? सुखेन्द्रिय, दु:खेन्द्रिय, सौमनस्येन्द्रिय, दौर्मनस्येन्द्रिय एवं उपेक्षेन्द्रिय। भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ हैं"॥ ●

३२. स्रोतआपन्नसूत्र : : स्रोतआपन्न

३२. ..."भिक्षुओ! ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! जो आर्यश्रावक इन पाँचों इन्द्रियों के उत्पादविनाश को...पूर्ववत्...वह आर्यश्रावक स्रोतआपन्न...कहलाता है"॥ ... ●

३३. अर्हत्सूत्र : : ज्ञानी

३३. ..."भिक्षुओ! ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! जो भिक्षु इन पाँचों इन्द्रियों के उत्पाद विनाश आस्वाद आदीनव एवं निस्सरण को यथार्थत: जान कर उपादानरहित हो कर विमुक्त हो गया है, भिक्षुओ! वह भिक्षु अर्हत् क्षीणाश्रव, सफल धर्मसाधक कृतकृत्य, भारमुक्त, सदर्थप्राप्त, क्षीणभवबन्धन एवं परम ज्ञानी हो जाता है"॥ ●

३४. पठमसमणब्राह्मणसुत्तं

३४. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सुखिन्द्रियं, दुक्खिन्द्रियं, सोमनस्सिन्द्रियं, दोमनस्सिन्द्रियं, उपेक्खिन्द्रियं। ये हि केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा इमेसं पञ्चन्नं इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं नप्पजानन्ति, न मे ते, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु वा समणसम्मता ब्राह्मणेसु वा ब्राह्मणसम्मता, न च पनेते आयस्मन्तो सामञ्ञत्थं वा ब्रह्मञ्ञत्थं वा दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति।

"ये च खो केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा इमेसं पञ्चन्नं [N.181, B.184] इन्द्रियानं समुदयं च अत्थङ्गमं च अस्सादं च आदीनवं च निस्सरणं च यथाभूतं पजानन्ति, ते खो मे, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु चेव समणसम्मता ब्राह्मणेसु च ब्राह्मणसम्मता, ते च पनायस्मन्तो सामञ्ञत्थं च ब्रह्मञ्ञत्थं च दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ती" ति॥ •

३५. दुतियसमणब्राह्मणसुत्तं

३५. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सुखिन्द्रियं, दुक्खिन्द्रियं, सोमनस्सिन्द्रियं, दोमनस्सिन्द्रियं, उपेक्खिन्द्रियं। ये हि केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा सुखिन्द्रियं नप्पजानन्ति, सुखिन्द्रियसमुदयं नप्पजानन्ति, सुखिन्द्रियनिरोधं नप्पजानन्ति, सुखिन्द्रियनिरोधगामिनिं पटिपदं नप्पजानन्ति, दुक्खिन्द्रियं नप्पजानन्ति...पे०...सोमनस्सिन्द्रियं नप्पजानन्ति...पे०...दोमनस्सिन्द्रियं

---

३४. प्रथम श्रमणब्राह्मणसूत्र : : इन्द्रियज्ञान से श्रमणत्व एवं ब्राह्मणत्व

३४. ..."भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ हैं। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! जो भी श्रमण ब्राह्मण इन पाँचों इन्द्रियों के उत्पाद विनाश को...यथार्थत: नहीं जानते; भिक्षुओ! वे श्रमण ब्राह्मण...पूर्ववत्... साधना नहीं कर सकते।

"हाँ, जो श्रमण ब्राह्मण इन पाँचों इन्द्रियों के उत्पाद विनाश को...यथार्थत: जान चुके हैं वे ही...पूर्ववत्...साधना कर सकते हैं"॥ •

३५. द्वितीय श्रमणब्राह्मणसूत्र : : इन्द्रियज्ञान से श्रमणत्व-ब्राह्मणत्व

३५. ..."भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच होती हैं। ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण सुखेन्द्रिय को, सुखेन्द्रिय के उत्पाद को, इस के निरोध को, इस के निरोध की ओर ले जाने वाले मार्ग को नहीं जानते; दु:खेन्द्रिय को...सौमनस्येन्द्रिय को...दौर्मनस्येन्द्रिय

नप्पजानन्ति...पे०...उपेक्खिन्द्रियं नप्पजानन्ति, उपेक्खिन्द्रियसमुदयं नप्पजानन्ति, [R.209] उपेक्खिन्द्रियनिरोधं नप्पजानन्ति, उपेक्खिन्द्रियनिरोधगामिनिं पटिपदं नप्पजानन्ति; न मे ते, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु वा समणसम्मता ब्राह्मणेसु वा ब्राह्मणसम्मता, न च पनेते आयस्मन्तो सामञ्ञत्थं वा ब्रह्मञ्ञत्थं वा दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति।

"ये च खो केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा सुखिन्द्रियं पजानन्ति, सुखिन्द्रियसमुदयं पजानन्ति, सुखिन्द्रियनिरोधं पजानन्ति, सुखिन्द्रियनिरोधगामिनिं पटिपदं पजानन्ति, दुक्खिन्द्रियं पजानन्ति...पे०...सोमनस्सिन्द्रियं पजानन्ति...पे०... दोमनस्सिन्द्रियं पजानन्ति...पे०...उपेक्खिन्द्रियं पजानन्ति, उपेक्खिन्द्रियसमुदयं पजानन्ति, उपेक्खिन्द्रियनिरोधं पजानन्ति, उपेक्खिन्द्रियनिरोधगामिनिं पटिपदं पजानन्ति, ते च खो मे, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु चेव समणसम्मता ब्राह्मणेसु च ब्राह्मणसम्मता, ते च पनायस्मन्तो सामञ्ञत्थं च ब्रह्मञ्ञत्थं च दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ती" ति॥

३६. पठमविभङ्गसुत्तं

[N.182] ३६. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सुखिन्द्रियं, दुक्खिन्द्रियं, सोमनस्सिन्द्रियं, दोमनस्सिन्द्रियं, उपेक्खिन्द्रियं।

[B.185] कतमं च, भिक्खवे, सुखिन्द्रियं? यं खो, भिक्खवे, कायिकं सुखं, कायिकं सातं, कायसम्फस्सजं सुखं सातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सुखिन्द्रियं।

को...उपेक्षेन्द्रिय को, उपेक्षेन्द्रिय के उत्पाद को, उस के निरोध को तथा इस निरोध की ओर ले जाने वाले मार्ग को नहीं जानते; भिक्षुओ! ऐसे श्रमण ब्राह्मण श्रमणों में 'श्रमण' एवं ब्राह्मणों में 'ब्राह्मण' कहलाने योग्य नहीं रहते, अथ च ये लोग श्रामण्य एवं ब्राह्मण्य के लिये इसी जन्म में स्वयं जान कर साक्षात्कार कर उपसम्पन्न हो कर साधना करने में समर्थ नहीं हो सकते।

"हाँ, भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण सुखेन्द्रिय को...पूर्ववत्...उपेक्षेन्द्रियनिरोधगामी मार्ग को भली भाँति जानते हैं वे ही श्रमणों में 'श्रमण' एवं ब्राह्मणों में 'ब्राह्मण' कहलाने योग्य हैं, तथा वे ही लोग श्रामण्य एवं ब्राह्मण्य के लिये...साधना करने में समर्थ हो सकते हैं"॥

३६. प्रथम विभङ्गसूत्र : : पाँचों इन्द्रियों का विश्लेषण

३६. ..."भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच हैं...पूर्ववत्...।

''कतमं च, भिक्खवे, दुक्खिन्द्रियं? यं खो, भिक्खवे, कायिकं दुक्खं, कायिकं असातं, कायसम्फस्सजं दुक्खं असातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, सोमनस्सिन्द्रियं? यं खो, भिक्खवे, चेतसिकं सुखं, चेतसिकं सातं, मनोसम्फस्सजं सुखं सातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सोमनस्सिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, दोमनस्सिन्द्रियं? यं खो, भिक्खवे, चेतसिकं दुक्खं, चेतसिकं असातं, मनोसम्फस्सजं दुक्खं असातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दोमनस्सिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, उपेक्खिन्द्रियं? यं खो, भिक्खवे, कायिकं वा चेतसिकं वा नेवसातं नासातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, उपेक्खिन्द्रियं। इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानी'' ति॥ •

३७. दुतियविभङ्गसुत्तं

३७. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सुखिन्द्रियं, दुक्खिन्द्रियं, सोमनस्सिन्द्रियं, दोमनस्सिन्द्रियं, उपेक्खिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, सुखिन्द्रियं? यं खो, भिक्खवे, कायिकं सुखं, [R.210] कायिकं सातं, कायसम्फस्सजं सुखं सातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सुखिन्द्रियं।

''भिक्षुओ! इन में सुखेन्द्रिय क्या है? भिक्षुओ! यह जो कायिक सुख एवं आनन्द है या कायसंस्पर्शज सुखानुभूति एवं आनन्दानुभूति है—इसी को 'सुखेन्द्रिय' कहते हैं।

''भिक्षुओ! यह दु:खेन्द्रिय क्या है? भिक्षुओ! यह जो कायिक दु:ख है, कष्ट है या कायसंस्पर्शजन्य दु:खानुभूति एवं कष्टानुभूति है—इसी को 'दु:खेन्द्रिय' कहते हैं।

''भिक्षुओ! यह सौमनस्येन्द्रिय क्या है? भिक्षुओ! यह जो चैतसिक सुख या आनन्द है या मन:संस्पर्शज सुख या आनन्द है—इसी को 'सौमनस्येन्द्रिय' कहते हैं।

''भिक्षुओ! यह दौर्मनस्येन्द्रिय क्या है? भिक्षुओ! यह जो चैतसिक दु:ख या कष्ट है या मन:संस्पर्शज दु:खानुभूति या कष्टानुभूति है—इसी को 'दौर्मनस्येन्द्रिय' कहते हैं।

''भिक्षुओ! यह उपेक्षेन्द्रिय क्या है? भिक्षुओ! यह जो काय की न सुख न दु:ख की अवस्था है, या जो चित्त की न सुख न दु:ख की अनुभूतिअवस्था है—इसी को, भिक्षुओ! 'उपेक्षेन्द्रिय' कहते हैं। भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ हैं''॥ •

३७. द्वितीय विभङ्गसूत्र : : पाँच इन्द्रियाँ

३७. ...''भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ हैं। ...पूर्वसूत्रवत्...।

''कतमं च, भिक्खवे, दुक्खिन्द्रियं ? यं खो, भिक्खवे, कायिकं दुक्खं, कायिकं असातं, कायसम्फस्सजं दुक्खं असातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, सोमनस्सिन्द्रियं ? यं खो, भिक्खवे, चेतसिकं सुखं, चेतसिकं सातं, मनोसम्फस्सजं सुखं सातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सोमनस्सिन्द्रियं।

[N.183, B.186] ''कतमं च, भिक्खवे, दोमनस्सिन्द्रियं ? यं खो, भिक्खवे, चेतसिकं दुक्खं, चेतसिकं असातं, मनोसम्फस्सजं दुक्खं असातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दोमनस्सिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, उपेक्खिन्द्रियं ? यं खो, भिक्खवे, कायिकं वा चेतसिकं वा नेवसातं नासातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, उपेक्खिन्द्रियं।

''तत्र, भिक्खवे, यं च सुखिन्द्रियं यं च सोमनस्सिन्द्रियं, सुखा सा वेदना दट्ठब्बा। तत्र, भिक्खवे, यं च दुक्खिन्द्रियं यं च दोमनस्सिन्द्रियं, दुक्खा सा वेदना दट्ठब्बा। तत्र, भिक्खवे, यदिदं उपेक्खिन्द्रियं, अदुक्खमसुखा सा वेदना दट्ठब्बा। इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानी'' ति॥

३८. ततियविभङ्गसुत्तं

३८. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च ? सुखिन्द्रियं, दुक्खिन्द्रियं, सोमनस्सिन्द्रियं, दोमनस्सिन्द्रियं, उपेक्खिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, सुखिन्द्रियं ? यं खो, भिक्खवे, कायिकं सुखं, कायिकं सातं, कायसम्फस्सजं सुखं सातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सुखिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, दुक्खिन्द्रियं ? यं खो, भिक्खवे, कायिकं दुक्खं, कायिकं असातं, कायसम्फस्सजं दुक्खं असातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खिन्द्रियं।

''कतमं च, भिक्खवे, सोमनस्सिन्द्रियं ? यं खो, भिक्खवे, चेतसिकं सुखं,

---

भिक्षुओ ! इन में सुखेन्द्रिय और सौमनस्येन्द्रिय को उन की वेदना सुखमय होती है। तथा जो दुःखेन्द्रिय एवं दौर्मनस्येन्द्रिय हैं उन की वेदना दुःखमय होती है। तथा जो उपेक्षेन्द्रिय है उस की वेदना अदुःख-असुखमय होती है। भिक्षुओ ! ये ही पाँच इन्द्रियाँ हैं॥''

३८. तृतीय विभङ्गसूत्र : : **पाँच से तीन**

३८. ...''भिक्षुओ ! इन्द्रियाँ पाँच हैं। ...पूर्वसूत्रवत्... । इस तरह, भिक्षुओ ! ये पाँच इन्द्रियाँ यथार्थ में तीन ही रह जाती हैं—

चेतसिकं सातं, मनोसम्फस्सजं सुखं सातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, सोमनस्सिन्द्रियं।

"कतमं च, भिक्खवे, दोमनस्सिन्द्रियं? यं खो, भिक्खवे, चेतसिकं [R.211] दुक्खं, चेतसिकं असातं, मनोसम्फस्सजं दुक्खं असातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दोमनस्सिन्द्रियं।

"कतमं च, भिक्खवे, उपेक्खिन्द्रियं? यं खो, भिक्खवे, कायिकं वा चेतसिकं वा नेव सातं नासातं वेदयितं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, उपेक्खिन्द्रियं।

"तत्र, भिक्खवे, यं च सुखिन्द्रियं यं च सोमनस्सिन्द्रियं, सुखा सा वेदना [N.184] दट्ठब्बा। तत्र, भिक्खवे, यं च दुक्खिन्द्रियं यं च दोमनस्सिन्द्रियं, दुक्खा सा [B.187] वेदना दट्ठब्बा। तत्र, भिक्खवे, यदिदं उपेक्खिन्द्रियं, अदुक्खमसुखा सा वेदना दट्ठब्बा। इति खो, भिक्खवे, इमानि पञ्चिन्द्रियानि पञ्च हुत्वा तीणि होन्ति, तीणि हुत्वा पञ्च होन्ति परियायेना" ति॥ •

३९. कट्ठोपमसुत्तं

३९. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सुखिन्द्रियं, दुक्खिन्द्रियं, सोमनस्सिन्द्रियं, दोमनस्सिन्द्रियं, उपेक्खिन्द्रियं। सुखवेदनियं, भिक्खवे, फस्सं पटिच्च उप्पज्जति सुखिन्द्रियं। सो सुखितो व समानो 'सुखितोस्मी' ति पजानाति। तस्सेव सुखवेदनियस्स फस्सस्स निरोधा 'यं तज्जं वेदयितं सुखवेदनियं फस्सं पटिच्च उप्पन्नं सुखिन्द्रियं तं निरुज्झति, तं वूपसम्मती' ति पजानाति।

"दुक्खवेदनियं, भिक्खवे, फस्सं पटिच्च उप्पज्जति दुक्खिन्द्रियं। सो दुक्खितो व समानो 'दुक्खितोस्मी' ति पजानाति। तस्सेव दुक्खवेदनियस्स फस्सस्स निरोधा 'यं

सुखेन्द्रिय, सौमनस्येन्द्रिय = सुखावेदना। (१)
दुःखेन्द्रिय, दौर्मनस्येन्द्रिय= दुःखावेदना। (२)
उपेक्षावेदना = अदुःखा असुखावेदना॥ (३) •

३९. काष्ठोपमसूत्र : : इन्द्रियों की उत्पत्ति के हेतु

३९. ..."भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ हैं।...पूर्ववत्...। इन में, भिक्षुओ! सुखवेदनीय स्पर्श की अपेक्षा से सुखेन्द्रिय उत्पन्न होती है। उस से वह सुख अनुभव करता हुआ 'मैं सुखी हूँ'—ऐसा जानता है। 'उस सुखवेदनीय स्पर्श के निरोध से, उस से उत्पन्न सुखेन्द्रिय निरुद्ध हो जाती है, शान्त हो जाती है'—ऐसा भी वह जानता है।

"भिक्षुओ! दुःखवेदनीय स्पर्श की अपेक्षा से दुःखेन्द्रिय उत्पन्न होती है...पूर्ववत्...।

[R.212] तज्जं वेदयितं दुक्खवेदनियं फस्सं पटिच्च उप्पन्नं दुक्खिन्द्रियं तं निरुज्झति, तं वूपसम्मती' ति पजानाति।

"सोमनस्सवेदनियं, भिक्खवे, फस्सं पटिच्च उप्पज्जति सोमनस्सिन्द्रियं। सो सुमनो व समानो 'सुमनोस्मी' ति पजानाति। तस्सेव सोमनस्सवेदनियस्स फस्सस्स निरोधा 'यं तज्जं वेदयितं सोमनस्सवेदनियं फस्सं पटिच्च उप्पन्नं सोमनस्सिन्द्रियं तं निरुज्झति, तं वूपसम्मती' ति पजानाति।

"दोमनस्सवेदनियं, भिक्खवे, फस्सं पटिच्च उप्पज्जति दोमनस्सिन्द्रियं। सो दुम्मनो व समानो 'दुम्मनोस्मी' ति पजानाति। तस्सेव दोमनस्सवेदनियस्स फस्सस्स निरोधा 'यं तज्जं वेदयितं दोमनस्सवेदनियं फस्सं पटिच्च उप्पन्नं दोमनस्सिन्द्रियं तं निरुज्झति, तं वूपसम्मती' ति पजानाति।

"उपेक्खावेदनियं, भिक्खवे, फस्सं पटिच्च उप्पज्जति उपेक्खिन्द्रियं। सो उपेक्खो व समानो 'उपेक्खकोस्मी' ति पजानाति। तस्सेव उपेक्खावेदनियस्स फस्सस्स निरोधा 'यं तज्जं वेदयितं उपेक्खावेदनियं फस्सं पटिच्च उप्पन्नं उपेक्खिन्द्रियं तं निरुज्झति, तं वूपसम्मती' ति पजानाति।

[N.185] "सेय्यथापि, भिक्खवे, द्विन्नं कट्ठानं सङ्घट्टनसमोधाना उस्मा जायति, तेजो अभिनिब्बत्तति; तेसं येव कट्ठानं नानाभावाविनिक्खेपा या तज्जा उस्मा सा निरुज्झति सा [B.188] वूपसम्मति; एवमेव खो, भिक्खवे, सुखवेदनियं फस्सं पटिच्च उप्पज्जति सुखिन्द्रियं। सो सुखितो व समानो 'सुखितोस्मी' ति पजानाति। तस्सेव सुखवेदनियस्स [R.213] फस्सस्स निरोधा 'यं तज्जं वेदयितं सुखवेदनियं फस्सं पटिच्च उप्पज्जति सुखिन्द्रियं तं निरुज्झति, तं वूपसम्मती' ति पजानाति।

"भिक्षुओ! सौमनस्यवेदनीय स्पर्श की अपेक्षा से सौमनस्येन्द्रिय उत्पन्न होती है...पूर्ववत्...।

"भिक्षुओ! दौर्मनस्यवेदनीय स्पर्श की अपेक्षा से दौर्मनस्येन्द्रिय उत्पन्न होती है...पूर्ववत्...।

"भिक्षुओ! उपेक्षावेदनीय स्पर्श की अपेक्षा से उपेक्षेन्द्रिय की उत्पत्ति होती है...पूर्ववत्...।

"भिक्षुओ! जैसे काष्ठों के सङ्घर्ष (रगड़ खाने) से अग्नि उत्पन्न होती है, तथा उन काष्ठों को दूर दूर रख देने से उस काष्ठयुगल की अग्नि शान्त हो जाती है, निरुद्ध हो जाती है। इसी तरह, भिक्षुओ! सुखवेदनीय स्पर्श की अपेक्षा से सुखेन्द्रिय उत्पन्न होती है, उस से वह सुखानुभव करता हुआ 'मैं सुखी हूँ'—ऐसा जानता है; परन्तु उसी सुखवेदनीय

''दुक्खवेदनियं, भिक्खवे, फस्सं पटिच्च...पे०...सोमनस्सवेदनियं, भिक्खवे, फस्सं पटिच्च...पे०...दोमनस्सवेदनियं, भिक्खवे, फस्सं पटिच्च...पे०...उपेक्खा-वेदनियं, भिक्खवे, फस्सं पटिच्च उप्पज्जति उपेक्खिन्द्रियं। सो उपेक्खो व समानो 'उपेक्खकोस्मी' ति पजानाति। तस्सेव उपेक्खावेदनियस्स फस्सस्स निरोधा 'यं तज्जं वेदयितं उपेक्खावेदनियं फस्सं पटिच्च उप्पज्जति उपेक्खिन्द्रियं तं निरुज्झति, तं वूपसम्मती' ति पजानाती'' ति॥ ●

४०. उप्पटिपाटिकसुत्तं

४०. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? दुक्खिन्द्रियं, दोमनस्सिन्द्रियं, सुखिन्द्रियं, सोमनस्सिन्द्रियं, उपेक्खिन्द्रियं। इध, भिक्खवे, भिक्खुनो अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो उप्पज्जति दुक्खिन्द्रियं। सो एवं पजानाति—'उप्पन्नं खो मे इदं दुक्खिन्द्रियं, तं च खो सनिमित्तं सनिदानं ससङ्खारं सप्पच्चयं। तं च अनिमित्तं अनिदानं असङ्खारं अप्पच्चयं दुक्खिन्द्रियं उप्पज्जिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति'। सो दुक्खिन्द्रियं च पजानाति, दुक्खिन्द्रियसमुदयं च पजानाति, दुक्खिन्द्रियनिरोधं च पजानाति, यत्थ चुप्पन्नं दुक्खिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति तं च पजानाति।

''कत्थ चुप्पन्नं दुक्खिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति? इध, भिक्खवे, भिक्खु विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति, एत्थ चुप्पन्नं दुक्खिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति। अयं

स्पर्श के निरोध हो जाने से तज्जन्य स्पर्श की अपेक्षा से उत्पन्न सुखेन्द्रिय भी निरुद्ध हो जाती है, शान्त हो जाती है—ऐसा भी जानता है।

भिक्षुओ! दुःखवेदनीय स्पर्श की अपेक्षा से दुःखेन्द्रिय उत्पन्न होती है...पूर्ववत्... उपेक्षेन्द्रिय भी शान्त हो जाती है निरुद्ध हो जाती है—ऐसा भी जानता है''॥ ●

४०. उत्प्रतिपत्तिकसूत्र : : इन्द्रियनिरोध

४०. ...''भिक्षुओ! इन्द्रियाँ पाँच हैं—१. दुःखेन्द्रिय, २. दौर्मनस्येन्द्रिय, ३. सुखेन्द्रिय, ४. सौमनस्येन्द्रिय, ५. उपेक्षेन्द्रिय। यहाँ, भिक्षुओ! किसी उद्योगी, अप्रमत्त एवं सावहितेन्द्रिय हो कर साधक भिक्षु को दुःखेन्द्रिय उत्पन्न होती है। वह ऐसा जानता है—'मुझे दुःखेन्द्रिय उत्पन्न हुई है! वह निमित्त, निदान, संस्कार एवं प्रत्यय से ही उत्पन्न होती है। ऐसा सम्भव नहीं कि वह, विना किसी निमित्त आदि के, उत्पन्न हो जाय'। वह दुःखेन्द्रिय को, उस के समुदय को, उस के निरोध को तथा उस के निरोधक मार्ग (उपाय) को भी जानता है।

''भिक्षुओ! यह उत्पन्न दुःखेन्द्रिय कहाँ सर्वथा निरुद्ध होती है? भिक्षुओ!

[N.186] वुच्चति, भिक्खवे, 'भिक्खु अञ्ञासि दुक्खिन्द्रियस्स निरोधं, तदत्थाय चित्तं उपसंहरति'। (१)

"इध पन, भिक्खवे, भिक्खुनो अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो [R.214] उप्पज्जति दोमनस्सिन्द्रियं। सो एवं पजानाति—'उप्पन्नं खो मे इदं दोमनस्सिन्द्रियं, तं च खो सनिमित्तं सनिदानं ससङ्खारं सप्पच्चयं। तं च अनिमित्तं अनिदानं असङ्खारं अप्पच्चयं दोमनस्सिन्द्रियं उप्पज्जिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति'। सो [B.189] दोमनस्सिन्द्रियं च पजानाति, दोमनस्सिन्द्रियसमुदयं च पजानाति, दोमनस्सिन्द्रियनिरोधं च पजानाति, यत्थ चुप्पन्नं दोमनस्सिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति तं च पजानाति।

"कत्थ चुप्पन्नं दोमनस्सिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति? इध, भिक्खवे, भिक्खु वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति, एत्थ चुप्पन्नं दोमनस्सिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'भिक्खु अञ्ञासि दोमनस्सिन्द्रियस्स निरोधं, तदत्थाय चित्तं उपसंहरति'। (२)

"इध पन, भिक्खवे, भिक्खुनो अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो उप्पज्जति सुखिन्द्रियं। सो एवं पजानाति—'उप्पन्नं खो मे इदं सुखिन्द्रियं, तं च खो

भिक्षु...पूर्ववत्... प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है, यहीं वह उत्पन्न दुःखेन्द्रिय सर्वथा निरुद्ध हो जाती है। भिक्षुओ! इसी को कहते हैं—'भिक्षु ने दुःखेन्द्रिय के निरोध को जान लिया तथा उस के लिये स्वचित्त को लगा दिया। (१)

"भिक्षुओ! यहाँ किसी प्रयत्नशील, अप्रमत्त एवं सावहितेन्द्रिय हो कर साधक भिक्षु को दौर्मनस्येन्द्रिय उत्पन्न होती है। वह ऐसा जानता है—'मुझे दौर्मनस्येन्द्रिय उत्पन्न हुआ है...पूर्ववत्... विना किसी निमित्त आदि के उत्पन्न हो जाय'। वह दौर्मनस्येन्द्रिय को, उस के समुदय (उत्पाद) को, उस के निरोध को तथा उस के निरोधक मार्ग (उपाय) को भी जानता है।

"भिक्षुओ! यह उत्पन्न दौर्मनस्येन्द्रिय कहाँ सर्वथा निरुद्ध होती है? यहाँ, भिक्षुओ! वह भिक्षु...पूर्ववत्...द्वितीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। भिक्षुओ! इसी को कहते हैं कि उस भिक्षु ने दौर्मनस्येन्द्रिय के निरोध को जान लिया तथा स्वचित्त को उस के लिये लगा दिया। (२)

"भिक्षुओ! यहाँ किसी प्रयत्नवान्, अप्रमत्त एवं सावहितेन्द्रिय भिक्षु को सुखेन्द्रिय उत्पन्न होती है। वह ऐसा जानता है—'मुझे सुखेन्द्रिय उत्पन्न हुई है...पूर्ववत्...विना किसी

सनिमित्तं सनिदानं ससङ्खारं सप्पच्चयं। तं च अनिमित्तं अनिदानं असङ्खारं अप्पच्चयं सुखिन्द्रियं उप्पज्जिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति'। सो सुखिन्द्रियं च पजानाति, सुखिन्द्रियसमुदयं च पजानाति, सुखिन्द्रियनिरोधं च पजानाति, यत्थ चुप्पन्नं सुखिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति तं च पजानाति।

कत्थ चुप्पन्नं सुखिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति? इध, भिक्खवे, भिक्खु पीतिया च विरागा उपेक्खको च विहरति सतो च सम्पजानो सुखं च कायेन पटिसंवेदेति यं तं अरिया आचिक्खन्ति—'उपेक्खको सतिमा सुखविहारी' ति ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति, एत्थ चुप्पन्नं सुखिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'भिक्खु अञ्ञासि सुखिन्द्रियस्स निरोधं, तदत्थाय चित्तं उपसंहरति'। (३)

''इध पन, भिक्खवे, भिक्खुनो अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स [R.215] विहरतो उप्पज्जति सोमनस्सिन्द्रियं। सो एवं पजानाति—'उप्पन्नं खो मे इदं [N.187] सोमनस्सिन्द्रियं, तं च खो सनिमित्तं सनिदानं ससङ्खारं सप्पच्चयं। तं च अनिमित्तं अनिदानं असङ्खारं अप्पच्चयं सोमनस्सिन्द्रियं उप्पज्जिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति'। सो सोमनस्सिन्द्रियं च पजानाति, सोमनस्सिन्द्रियसमुदयं च पजानाति, सोमनस्सिन्द्रिय-निरोधं च पजानाति, यत्थ चुप्पन्नं सोमनस्सिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति तं च पजानाति।

''कत्थ चुप्पन्नं सोमनस्सिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा

निमित्त आदि के उत्पन्न हो जाय'। वह सुखेन्द्रिय को, उस के समुदय को, उस के निरोध को तथा उस के निरोधक मार्ग (उपाय) को भी जानता है।

''भिक्षुओ! यह उत्पन्न सुखेन्द्रिय सर्वथा कहाँ निरुद्ध होती है? यहाँ, भिक्षुओ! वह भिक्षु ...पूर्ववत्...तृतीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। भिक्षुओ! इसी को कहते हैं—'उस भिक्षु ने सुखेन्द्रिय के निरोध को जान लिया तथा स्वचित्त को उस के लिये लगा दिया।

''भिक्षुओ! यहाँ किसी प्रयत्नवान्, अप्रमत्त एवं सावधान इन्द्रियों वाले भिक्षु को सौमनस्येन्द्रिय उत्पन्न होती है। वह ऐसा जानता है—'मुझे सौमनस्येन्द्रिय उत्पन्न हुई है ...पूर्ववत्...विना किसी निमित्त आदि के उत्पन्न हो जाय'। वह सौमनस्येन्द्रिय को, उस के उत्पाद (समुदय) को, उस के निरोध को तथा उस के निरोधक मार्ग (उपाय) को भी जानता है। (३)

''भिक्षुओ! यह उत्पन्न सौमनस्येन्द्रिय कैसे सर्वथा निरुद्ध होती है? यहाँ, भिक्षुओ!

अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति, एत्थ चुप्पन्नं सोमनस्सिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'भिक्खु अञ्ञासि सोमनस्सिन्द्रियस्स निरोधं, तदत्थाय चित्तं उपसंहरति'। (४)

[B.190] "इध पन, भिक्खवे, भिक्खुनो अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो उप्पज्जति उपेक्खिन्द्रियं। सो एवं पजानाति—'उप्पन्नं खो मे इदं उपेक्खिन्द्रियं, तं च खो सनिमित्तं सनिदानं ससङ्खारं सप्पच्चयं। तं च अनिमित्तं अनिदानं असङ्खारं अप्पच्चयं उपेक्खिन्द्रियं उप्पज्जिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति'। सो उपेक्खिन्द्रियं च पजानाति, उपेक्खिन्द्रियसमुदयं च पजानाति, उपेक्खिन्द्रियनिरोधं च पजानाति, यत्थ चुप्पन्नं उपेक्खिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति तं च पजानाति।

"कत्थ चुप्पन्नं उपेक्खिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति, [R.216] एत्थ चुप्पन्नं उपेक्खिन्द्रियं अपरिसेसं निरुज्झति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'भिक्खु अञ्ञासि उपेक्खिन्द्रियस्स निरोधं, तदत्थाय चित्तं उपसंहरती''' ति॥ (५)●

सुखिन्द्रियवग्गो चतुत्थो॥

तस्सुद्दानं

सुद्धिकं च सोतो अरहा, दुवे समणब्राह्मणा।
विभङ्गेन तयो वुत्ता, कट्ठो उप्पटिपाटिकं॥ ति॥ ●

वह भिक्षु...पूर्ववत्...चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। भिक्षुओ! इसी को कहते हैं—'उस भिक्षु ने सौमनस्येन्द्रिय के निरोध को जान लिया तथा स्वचित्त को उस के लिये लगा दिया।

"भिक्षुओ! यहाँ किसी प्रयत्नवान्, अप्रमत्त एवं सावहितेन्द्रिय भिक्षु को उपेक्षेन्द्रिय उत्पन्न होती है। वह ऐसा जानता है—'मुझे उपेक्षेन्द्रिय उत्पन्न हुई है। ...पूर्ववत्...विना किसी निमित्त आदि के उत्पन्न हो जाय'। वह इस उपेक्षेन्द्रिय को, उस के उत्पाद को, उस के निरोध को तथा उस के निरोधक मार्ग (उपाय) को भी जानता है। (४)

"भिक्षुओ! यह उत्पन्न उपेक्षेन्द्रिय कैसे सर्वथा निरुद्ध होती है? यहाँ, भिक्षुओ! वह भिक्षु सर्वथा नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को समतिक्रान्त कर संज्ञावेदयितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है। इस साधना के बल पर, उस भिक्षु की उत्पन्न हुई उपेक्षेन्द्रिय सर्वथा

निरुद्ध हो जाती है। भिक्षुओ! इसी को कहते हैं—'उस भिक्षु ने उपेक्षेन्द्रिय के निरोध को सर्वथा जान लिया तथा स्वचित्त को उस के लिये लगा दिया''॥ (५) •

सुखेन्द्रियवर्ग चतुर्थ निष्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. शुद्धिकसूत्र, २. स्रोतआपन्नसूत्र, ३. अर्हत्सूत्र, ४. प्रथम श्रमणब्राह्मणसूत्र, ५. द्वितीय श्रमणब्राह्मणसूत्र, ६. प्रथम विभङ्गसूत्र, ७. द्वितीय विभङ्गसूत्र, ८. तृतीय विभङ्गसूत्र, ९. काष्ठोपमसूत्र एवं १०. उत्प्रतिपत्तिकसूत्र॥ •

५. जरावग्गो पञ्चमो

४१. जराधम्मसुत्तं

[N.188] ४१. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति पुब्बारामे मिगारमातुपासादे। तेन खो पन समयेन भगवा सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो पच्छातपे निसिन्नो होति पिट्ठिं ओतापयमानो।

अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा भगवतो गत्तानि पाणिना अनोमज्जन्तो भगवन्तं एतदवोच—"अच्छरियं, भन्ते, अब्भुतं, भन्ते! न चेवं दानि, भन्ते, भगवतो ताव परिसुद्धो छविवण्णो परियोदातो, [B.191] सिथिलानि च गत्तानि सब्बानि वलियजातानि, पुरतो पब्भारो च कायो, दिस्सति च इन्द्रियानं अञ्ञथत्तं—चक्खुन्द्रियस्स सोतिन्द्रियस्स घानिन्द्रियस्स जिव्हिन्द्रियस्स कायिन्द्रियस्सा" ति।

[R.217] "एवं हेतं, आनन्द, होति—जराधम्मो योब्बञ्ञे, ब्याधिधम्मो आरोग्ये, मरणधम्मो जीविते। न चेव ताव परिसुद्धो होति छविवण्णो परियोदातो, सिथिलानि च होन्ति गत्तानि सब्बानि वलियजातानि, पुरतो पब्भारो च कायो, दिस्सति च इन्द्रियानं अञ्ञथत्तं—चक्खुन्द्रियस्स सोतिन्द्रियस्स घानिन्द्रियस्स जिव्हिन्द्रियस्स कायिन्द्रियस्सा" ति।

---

५. जरावर्ग पञ्चम

४१. जराधर्मसूत्र : : यौवन में वार्धक अन्तर्गूढ

४१. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **श्रावस्ती के** पूर्वाराम के, मृगारमातृप्रासाद में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय किसी दिन सायङ्काल भगवान् समाधि से उठ कर पश्चिम की ओर पीठ किये धूप ले रहे थे।

उसी समय आयुष्मान् आनन्द, भगवान् को प्रणाम कर उन के शरीर को हाथों से दबाते हुए यों बोले—"आश्चर्य है, भन्ते! अद्भुत है, भन्ते! अब आप के शरीर की कान्ति पूर्ववत् नहीं रह गयी, आप के शरीर के सभी अवयव शिथिल पड़ गये। इतना ही नहीं, समस्त शरीर में झुर्रियाँ भी पड़ गयी हैं, शरीर आगे की ओर झुक गया है, ये इन्द्रियाँ भी पूर्वापेक्षया विकृत ही होती जा रही हैं, जैसे—चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा एवं कायेन्द्रिय।"

"हाँ, आनन्द! ऐसा ही होता है जब यौवन (जवानी) पर बुढापा, आरोग्य पर रोग एवं जीवन पर मृत्यु आरूढ हो जाती है। उस समय किसी के शरीर की कान्ति पूर्ववत् (युवावस्थातुल्य) नहीं रह जाती, सभी गात्र शिथिल हो जाते हैं, उन में झुर्रियाँ पड़ जाती

४२. इदमवोच भगवा। इदं वत्वा च सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—

"धी तं जम्मि जरे अत्थु, दुब्बण्णकरणी जरे।
ताव मनोरमं बिम्बं, जराय अभिमद्दितं॥
"यो पि वस्ससतं जीवे, सो पि मच्चुपरायणो।
न किञ्चि परिवज्जेति, सब्बमेवाभिमद्दती" ति॥

४२. उण्णाभब्राह्मणसुत्तं

४३. सावत्थिनिदानं। अथ खो उण्णाभो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा [N.189] एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो उण्णाभो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—

"पञ्चिमानि, भो गोतम, इन्द्रियानि नानाविसयानि नानागोचरानि, न अञ्ञ-मञ्ञस्स गोचरविसयं पच्चनुभोन्ति। कतमानि पञ्च? चक्खुन्द्रियं, सोतिन्द्रियं, [R.218] घानिन्द्रियं, जिव्हिन्द्रियं, कायिन्द्रियं। इमेसं नु खो, भो गोतम, पञ्चन्नं इन्द्रियानं नाना-विसयानं नानागोचरानं न अञ्ञमञ्ञस्स गोचरविसयं पच्चनुभोन्तानं किं पटिसरणं, को च नेसं गोचरविसयं पच्चनुभोती" ति?

हैं, शरीर भी आगे की ओर झुक जाता है। सभी इन्द्रियों में, जैसे—चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा एवं काय—इन सभी में पहले की अपेक्षा से अब विवर्णता (विरूपता) दिखायी देने लगती है।"

४२. भगवान् ने यह कहा। अथ च, गाथाओं के माध्यम से यों बोले—

"अरी ओ वृद्धावस्था! तुझे धिक्कार है! तुम शरीर की सुन्दरता को नष्ट कर देती हो। कोई भी शरीर तभी तक सुन्दर लगता है जब तक कि वह तुम्हारे द्वारा अभिमर्दित न कर दिया जाय (मसल न डाला जाय)॥

अधिक से अधिक जो सौ वर्ष जीवित रहता है, वह भी एक न एक दिन मृत्यु द्वारा गृहीत हो ही जाता है। वह (मृत्यु) किसी को नहीं छोड़ती। सभी को एक न एक दिन मसल देती है, पीस डालती है"॥

४२. ऊर्णाभब्राह्मणसूत्र : : मन ही इन्द्रियों का प्रतिशरण

४३. ...**श्रावस्ती में** ही...। तब ऊर्णाभ ब्राह्मण भगवान् के पास आया। आ कर उन से कुशलमङ्गल पूछ कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस ने भगवान् से यह पूछा—

"भो गौतम! चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा एवं काय—इन पाँच इन्द्रियों का अपना अपना भिन्न विषय है, वे परस्पर एक दूसरे के विषय का अनुभव नहीं कर पातीं, तब इन

"पञ्चिमानि, ब्राह्मण, इन्द्रियानि नानाविसयानि नानागोचरानि न अञ्ञमञ्ञस्स [B.192] गोचरविसयं पच्चनुभोन्ति। कतमानि पञ्च? चक्खुन्द्रियं, सोतिन्द्रियं, घानिन्द्रियं, जिव्हिन्द्रियं, कायिन्द्रियं। इमेसं खो, ब्राह्मण, पञ्चन्नं इन्द्रियानं नानाविसयानं नानागोचरानं न अञ्ञमञ्ञस्स गोचरविसयं पच्चनुभोन्तानं मनो पटिसरणं, मनो व नेसं गोचरविसयं पच्चनुभोती" ति।

"मनस्स पन, भो गोतम, किं पटिसरणं" ति?

"मनस्स खो, ब्राह्मण, सति पटिसरणं" ति।

"सतिया पन, भो गोतम, किं पटिसरणं" ति?

"सतिया खो, ब्राह्मण, विमुत्ति पटिसरणं" ति।

"विमुत्तिया पन, भो गोतम, किं पटिसरणं" ति?

"विमुत्तिया खो, ब्राह्मण, निब्बानं पटिसरणं" ति।

"निब्बानस्स पन, भो गोतम, किं पटिसरणं" ति?

"अच्चयासि, ब्राह्मण, पञ्हं, नासक्खि पञ्हस्स परियन्तं गहेतुं। निब्बानोगधं हि, ब्राह्मण, ब्रह्मचरियं वुस्सति निब्बानपरायणं निब्बानपरियोसानं" ति।

अथ खो उण्णाभो ब्राह्मणो भगवतो भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि।

का ऐसा का कौन सहायक (प्रतिशरण) है जो एक दूसरे के विषय का एक दूसरे को अनुभव करा कर उन्हें सुखानुभव कराता है?"

"ब्राह्मण! चक्षु...पूर्ववत्...इन का ऐसा सहायक मन ही है जो इन इन्द्रियों के विषय का एक दूसरे को ज्ञान करा कर इन्हें सुखानुभव कराता है।"

"तब, भो गौतम! मन का कौन प्रतिशरण है?"

"स्मृति ही इस मन का प्रतिशरण है।"

"स्मृति का भो गौतम! कौन प्रतिशरण है?"

"स्मृति की विमुक्ति प्रतिशरण है।"

"विमुक्ति का, भो गौतम! कौन प्रतिशरण है?"

"विमुक्ति का, निर्वाण प्रतिशरण है।"

"निर्वाण का भो गौतम! कौन प्रतिशरण है?"

"बस! ब्राह्मण! अब तुम प्रश्नप्रक्रिया की सीमा का उल्लङ्घन कर रहे हो! निर्वाण ही ब्राह्मण! इस धर्मसाधना का अन्तिम लक्ष्य है।"

अथ खो भगवा अचिरपक्कन्ते उण्णाभे ब्राह्मणे भिक्खू आमन्तेसि—"सेय्यथापि, भिक्खवे, कूटागारे वा कूटागारसालायं वा पाचीनवातपाना सुरिये उग्गच्छन्ते [N.190] वातपानेन रस्मियो पविसित्वा काय पतिट्ठिता" ति? "पच्छिमायं, भन्ते, भित्तियं" ति।

"एवमेव खो, भिक्खवे, उण्णाभस्स ब्राह्मणस्स तथागते सद्धा निविट्ठा मूल-जाता पतिट्ठिता दळ्हा असंहारिया समणेन वा ब्राह्मणेन वा देवेन वा मारेन वा ब्रह्मुना वा केनचि वा लोकस्मिं। इमम्हि चे, भिक्खवे, समये उण्णाभो ब्राह्मणो कालं करेय्य, नत्थि संयोजनं येन संयोजनेन संयुत्तो उण्णाभो ब्राह्मणो पुन इमं लोकं आगच्छेय्या" ति॥ ●

४३. साकेतसुत्तं

४४. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा साकेते विहरति अञ्जनवने मिगदाये। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"अत्थि नु खो, भिक्खवे, परियायो यं परियायं [B.193] आगम्म यानि पञ्चिन्द्रियानि तानि पञ्च बलानि होन्ति, यानि पञ्च बलानि तानि पञ्चिन्द्रियानि होन्ती" ति?

"भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा भगवन्नेत्तिका भगवम्पटिसरणा। साधु वत, भन्ते, भगवन्तं येव पटिभातु एतस्स भासितस्स अत्थो। भगवतो सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती" ति।

तब वह ऊर्णनाभ ब्राह्मण भगवान् के भाषण का अभिनन्दन एवं अनुमोदन कर, भगवान् को प्रणाम प्रदक्षिणा कर वहाँ से चला गया।

तब, उस ब्राह्मण के चले जाने के बाद, भगवान् ने भिक्षुओं को अपने पास बुला कर यों उपदेश किया—"भिक्षुओ! किसी कूटागार या कूटागारशाला की पूर्व दिशा के झरोखे से आने वाली धूप कहाँ पड़ेगी?"

"पश्चिम दिशा की दीवार पर, भन्ते!"

"इसी तरह, भिक्षुओ! ऊर्णाभ ब्राह्मण की भी तथागत के प्रति ऐसी दृढ श्रद्धा हो गयी है कि अब उस श्रद्धा को कोई श्रमण, ब्राह्मण, देव, मार या ब्रह्मा या अन्य कोई भी विचलित करने में समर्थ नहीं है। भिक्षुओ! यदि ऊर्णाभ ब्राह्मण की इस समय मृत्यु हो जाय तो उसे संसार का कोई बन्धन बाँध कर पुनर्जन्म के लिये प्रेरित नहीं कर सकता"॥ ●

४३. साकेतसूत्र : : इन्द्रियाँ ही बल हैं

४४. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) साकेत प्रदेश के **अञ्जनवन** मृगदाव में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को यों उपदेश किया—"भिक्षुओ! क्या कोई ऐसी पद्धति है जिस से पाँच इन्द्रियाँ पाँच बल हो जाती हों, या फिर पाँच बल पाँच इन्द्रियाँ हो जाते हों?"

"अत्थि, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म यानि पञ्चिन्द्रियानि तानि पञ्च बलानि होन्ति, यानि पञ्च बलानि तानि पञ्चिन्द्रियानि होन्ति। कतमो च, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म यानि पञ्चिन्द्रियानि तानि पञ्च बलानि होन्ति, यानि पञ्च बलानि तानि पञ्चिन्द्रियानि होन्ति ? यं, भिक्खवे, सद्धिन्द्रियं तं सद्धाबलं, यं सद्धाबलं तं सद्धिन्द्रियं; यं विरियिन्द्रियं तं विरियबलं, यं विरियबलं तं विरियिन्द्रियं; यं सतिन्द्रियं तं सतिबलं, यं सतिबलं तं सतिन्द्रियं; यं समाधिन्द्रियं तं समाधिबलं, यं समाधिबलं तं समाधिन्द्रियं; यं पञ्ञिन्द्रियं तं पञ्ञाबलं, यं पञ्ञाबलं तं पञ्ञिन्द्रियं। सेय्यथापि, भिक्खवे, नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा, तस्स मज्झे दीपो। अत्थि, [N.191] भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म तस्सा नदिया एको सोतो त्वेव सङ्ख्यं गच्छति। अत्थि पन, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म तस्सा नदिया द्वे सोतानि त्वेव सङ्ख्यं गच्छति।

[R.220] "कतमो च, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म तस्सा नदिया एको सोतो त्वेव सङ्ख्यं गच्छति ? यं च, भिक्खवे, तस्स दीपस्स पुरिमन्ते उदकं, यं च पच्छिमन्ते उदकं—अयं खो, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म तस्सा नदिया एको सोतो त्वेव सङ्ख्यं गच्छति।

"भन्ते ! धर्म के विश्लेषण में हम आप को ही प्रमाण मानते हैं...आप जैसा बतावेंगे वैसे ही उसे हम शिरोधार्य कर लेंगे।"

"तो भिक्षुओ ! सुनो। ऐसी भी एक पद्धति है जिस के सहारे से पाँच इन्द्रियाँ पाँच बल या फिर पाँच बल पाँच इन्द्रियाँ हो जाते हैं। भिक्षुओ ! वह पद्धति कौन सी है जिस के सहारे से... ? भिक्षुओ ! वह पद्धति यह है—श्रद्धेन्द्रिय है वही श्रद्धाबल है, तथा जो श्रद्धाबल है वही श्रद्धेन्द्रिय है। इसी तरह, जो वीर्येन्द्रिय है वही वीर्यबल है, तथा जो वीर्यबल है वही वीर्येन्द्रिय है। इसी तरह, जो स्मृतीन्द्रिय है वही स्मृतिबल है, तथा जो स्मृतिबल है वही स्मृतीन्द्रिय है। इसी तरह, जो समाधीन्द्रिय है वही समाधिबल है, तथा जो समाधिबल है वही समाधीन्द्रिय है। इसी तरह जो प्रज्ञेन्द्रिय है वही प्रज्ञाबल है, तथा जो प्रज्ञाबल है वही प्रज्ञेन्द्रिय है। भिक्षुओ ! जैसे कोई पूर्व दिशा की ओर बहने वाली पूर्व दिशा की ओर झुकी हुई नदी हो। उस के बीच में कोई द्वीप हो। तो वहाँ ऐसी कोई पद्धति है जिस से उस नदी की धारा एक ही समझी जा सकती है; तथा दूसरी पद्धति से उसी धारा को दो समझा जा सकता है।

भिक्षुओ ! वह पहली पद्धति कौन सी है जिस से नदी की समस्त धारा को एक ही समझा जाय ? भिक्षुओ ! द्वीप के आगे एवं पीछे का जल एक ही धारा बनाते हैं, अतः इस पद्धति से वह धारा एक ही समझी जाती है।

"कतमो च, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म तस्सा नदिया द्वे सोतानि त्वेव सङ्ख्यं गच्छन्ति? यं च, भिक्खवे, तस्स दीपस्स उत्तरन्ते उदकं, यं च दक्खिणन्ते उदकं—अयं खो, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म तस्सा नदिया द्वे सोतानि त्वेव सङ्ख्यं गच्छन्ति। एवमेव खो, भिक्खवे, यं सद्धिन्द्रियं तं सद्धाबलं, यं सद्धाबलं तं सद्धिन्द्रियं; यं विरियिन्द्रियं तं विरियबलं, यं विरियबलं तं विरियिन्द्रियं; यं [B.194] सतिन्द्रियं तं सतिबलं, यं सतिबलं तं सतिन्द्रियं; यं समाधिन्द्रियं तं समाधिबलं, यं समाधिबलं तं समाधिन्द्रियं; यं पञ्ञिन्द्रियं तं पञ्ञाबलं, यं पञ्ञाबलं तं पञ्ञिन्द्रियं।

पञ्चन्नं, भिक्खवे, इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता भिक्खु आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती" ति॥ •

४४. पुब्बकोट्ठकसुत्तं

४५. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति पुब्बकोट्ठके। तत्र खो भगवा आयस्मन्तं सारिपुत्तं आमन्तेसि—"सद्दहसि त्वं, सारिपुत्त—सद्धिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं" ति?

"न ख्वाहं एत्थ, भन्ते, भगवतो सद्धाय गच्छामि—सद्धिन्द्रियं...पे०...[R.221]

"तब, भिक्षुओ! दूसरी पद्धति कौन सी है जिस से उस नदी की दो धारा समझी जायँ? भिक्षुओ! द्वीप के उत्तर तथा दक्षिण दिशा का जल—ये दोनों पृथक् पृथक् समझे जाने से 'उस नदी की दो धाराएँ हैं'—ऐसा भी कहा जा सकता है। इसी तरह, भिक्षुओ! जो श्रद्धेन्द्रिय है वही श्रद्धाबल है, तथा जो श्रद्धाबल है वही श्रद्धेन्द्रिय है। ...पूर्ववत्...। जो प्रज्ञेन्द्रिय है वही प्रज्ञाबल है, तथा जो प्रज्ञाबल है वही प्रज्ञेन्द्रिय है।

भिक्षुओ! इन पाँचों इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास के सहारे से आश्रवों का क्षय कर, अनाश्रव चेतोविमुक्ति को प्रज्ञाविमुक्ति को भिक्षु इसी जीवन में स्वयं जान कर, उस का साक्षात्कार कर, प्राप्त कर साधना कर सकता है"॥ •

४४. पूर्वकोष्ठकसूत्र : : इन्द्रियभावना से निर्वाणप्राप्ति

४५. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **श्रावस्ती के** पूर्वकोष्ठक में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने आयुष्मान् सारिपुत्र से यों पूछा—"क्या तुम्हें (मेरी) इस बात पर श्रद्धा है—'श्रद्धेन्द्रिय की भावना एवं अभ्यास से अमृत (निर्वाण) सिद्ध होता है...पूर्ववत्...प्रज्ञेन्द्रिय की भावना एवं अभ्यास से अमृत (निर्वाण) सिद्ध होता है?"

पञ्ञिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं। येसं हेतं, भन्ते, अञ्ञातं अस्स अदिट्ठं अविदितं असच्छिकतं अफस्सितं पञ्ञाय, ते तत्थ [N.192] परेसं सद्धाय गच्छेय्युं—सद्धिन्द्रियं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं। येसं च खो एतं, भन्ते, ञातं दिट्ठं विदितं सच्छिकतं फस्सितं पञ्ञाय, निक्कङ्खा ते तत्थ निब्बिचिकिच्छा—सद्धिन्द्रियं ...पे०...पञ्ञिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं। मय्हं च खो एतं, भन्ते, ञातं दिट्ठं विदितं सच्छिकतं फस्सितं पञ्ञाय। निक्कङ्खाहं तत्थ निब्बिचिकिच्छो—सद्धिन्द्रियं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं'' ति।

''साधु साधु, सारिपुत्त! येसं हेतं, सारिपुत्त, अञ्ञातं अस्स अदिट्ठं अविदितं असच्छिकतं अफस्सितं पञ्ञाय, ते तत्थ परेसं सद्धाय गच्छेय्युं—सद्धिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं। येसं च खो एतं, सारिपुत्त, [B.195] ञातं दिट्ठं विदितं सच्छिकतं फस्सितं पञ्ञाय, निक्कङ्खा ते तत्थ निब्बि- [R.222] चिकिच्छा—सद्धिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं'' ति॥ ●

४५. पठमपुब्बारामसुत्तं

४६. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति पुब्बारामे मिगार-

---

''भन्ते! भगवान् के प्रति श्रद्धा होने से ही मैं ऐसा कुछ नहीं मानता। भन्ते! जिन साधकों ने इसे प्रज्ञा से न देखा, न जाना, न साक्षात्कार किया, न अनुभव किया, वे भले ही इसे श्रद्धा के आधार पर मान लें; भन्ते! किन्तु जिन्होंने इस को प्रज्ञा से देख लिया है, जान लिया है, इस का साक्षात्कार कर लिया है, अनुभव कर लिया है, उन्हें इस में न कोई सन्देह है, न शङ्का है कि श्रद्धेन्द्रिय...प्रज्ञेन्द्रिय की भावना तथा अभ्यास से अमृत (निर्वाण) सिद्ध हो जाता है। भन्ते! मैंने भी इस को प्रज्ञा से देख लिया है...अनुभव कर लिया है। अत: इस विषय में मुझ को न कोई शङ्का है और न सन्देह है कि श्रद्धेन्द्रिय...प्रज्ञेन्द्रिय की भावना तथा अभ्यास से निर्वाण (अमृत) प्राप्त किया जा सकता है।

''ठीक है, सारिपुत्र! ठीक है। जिन साधक भिक्षुओं ने इसे प्रज्ञा से...पूर्ववत्...प्रज्ञेन्द्रिय की भावना तथा अभ्यास से निर्वाण प्राप्त किया जा सकता है''॥ ●

मातुपासादे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"कतिनं नु खो, भिक्खवे, इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी''' ति?

"भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा...पे०..."।

"एकस्स खो, भिक्खवे, इन्द्रियस्स भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। कतमस्स एकस्स? पञ्ञिन्द्रियस्स पञ्ञवतो, भिक्खवे, अरियसावकस्स तदन्वया सद्धा सण्ठाति, तदन्वयं विरियं सण्ठाति, तदन्वया सति [N.193] सण्ठाति, तदन्वयो समाधि सण्ठाति। इमस्स खो, भिक्खवे, एकस्स इन्द्रियस्स भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी''' ति॥ •

४६. दुतियपुब्बारामसुत्तं

४७. तंयेव निदानं। "कतिनं नु खो, भिक्खवे, इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी''' ति?

"भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा...पे०..."।

---

४५. प्रथम पूर्वारामसूत्र : : प्रज्ञेन्द्रिय की साधना से निर्वाणप्राप्ति

४६. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **श्रावस्ती** के पूर्वाराम विहारस्थित मृगारमातृप्रासाद में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं से पूछा—"भिक्षुओ! किन इन्द्रियों की साधना एवं अभ्यास से किसी क्षीणाश्रव भिक्षु को यह ज्ञान हो सकता है—'मेरी जाति क्षीण हो चुकी, मेरी धर्मसाधना पूर्ण हो गयी, मैं कृतकृत्य हो चुका। अब मेरा कोई कर्तव्य अवशिष्ट नहीं है'?"

"भन्ते! धर्म के विश्लेषण में आप ही हमारे लिये प्रमाण हैं...पूर्ववत्...।"

"भिक्षुओ! एक इन्द्रिय की सम्यक् भावना एवं अभ्यास से यह ज्ञान हो सकता है—'मेरी जाति क्षीण हो गयी...पूर्ववत्...'। भिक्षुओ! किस एक इन्द्रिय की साधना तथा अभ्यास से यह ज्ञान हो सकता है? भिक्षुओ! किसी प्रज्ञावान् आर्यश्रावक की प्रज्ञेन्द्रिय के विषय में श्रद्धा होती है, फिर वह उस के लिये प्रयास करता है, उस से स्मृति एवं उस स्मृति से वह समाधि स्थिति तक पहुँचता है। यों, भिक्षुओ! एक इन्द्रिय की साधना एवं अभ्यास से उस क्षीणाश्रव भिक्षु को यह ज्ञान हो जाता है—'मेरी जाति क्षीण हो गयी...पूर्ववत्...मेरा कोई कर्तव्य शेष नहीं रह गया है'॥" •

[R.223] ''द्विन्नं खो, भिक्खवे, इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। कतमेसं द्विन्नं ? अरियाय च पञ्ञाय, अरियाय च विमुत्तिया। या हिस्स, भिक्खवे, अरिया पञ्ञा तदस्स पञ्ञिन्द्रियं। या हिस्स, भिक्खवे, अरिया विमुत्ति तदस्स समाधिन्द्रियं। इमेसं खो, भिक्खवे, द्विन्नं इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो [B.196] भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी''' ति॥

४७. ततियपुब्बारामसुत्तं

४८. तंयेव निंदानं। ''कतिनं नु खो, भिक्खवे, इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी''' ति ?

''भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा...पे०...।

''चतुन्नं खो, भिक्खवे, इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। कतमेसं चतुन्नं ? विरियिन्द्रियस्स, सतिन्द्रियस्स, समाधिन्द्रियस्स, [N.194] पञ्ञिन्द्रियस्स—इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी''' ति॥

---

४६. द्वितीय पूर्वारामसूत्र : : आर्य प्रज्ञा एवं आर्य विमुक्ति

४७. ...उसी स्थान पर...। ...पूर्ववत्...। ''भिक्षुओ ! दो इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास से भिक्षु को उस की जातिक्षीणता का ज्ञान हो जाता है। किन दो इन्द्रियों की ? आर्य प्रज्ञा एवं आर्य विमुक्ति। उस की वह प्रज्ञा ही प्रज्ञेन्द्रिय है तथा उस की वह विमुक्ति ही समाधीन्द्रिय है। इन दों इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास से उस क्षीणाश्रव भिक्षु को यह ज्ञान हो जाता है—'मेरी जाति क्षीण हो गयी...मेरा कोई कर्तव्य शेष नहीं रहा'॥''

४७. तृतीय पूर्वारामसूत्र : : चार इन्द्रियों की भावना

४८. ...उसी स्थान पर...। ...पूर्ववत्...। ''भिक्षुओ ! चार इन्द्रियों की भावना से, अभ्यास से भिक्षु को उस की जातिक्षीणता आदि का ज्ञान हो जाता है। कौन सी चार इन्द्रियाँ ? वीर्येन्द्रिय, स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय ऐवं प्रज्ञेन्द्रिय। भिक्षुओ ! इन चार इन्द्रियों की भावना से, अभ्यास से कोई भी क्षीणाश्रव भिक्षु यह जानने में समर्थ हो जाता है कि

४८. चतुत्थपुब्बारामसुत्तं

४९. तंयेव निदानं। ''कतिनं नु खो, भिक्खवे, इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी''' ति? ''भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा...पे०...।

''पञ्चन्नं खो, भिक्खवे, इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। कतमेसं पञ्चन्नं? सद्धिन्द्रियस्स, विरियिन्द्रियस्स, सतिन्द्रियस्स, [R.224] समाधिन्द्रियस्स, पञ्ञिन्द्रियस्स—इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता खीणासवो भिक्खु अञ्ञं ब्याकरोति—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी''' ति॥ •

४९. पिण्डोलभारद्वाजसुत्तं

५०. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा कोसम्बियं विहरति घोसितारामे। तेन खो पन समयेन आयस्मता पिण्डोलभारद्वाजेन अञ्ञा ब्याकता होति—''खीणा [B.197] जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी'' ति। अथ खो सम्बहुला भिक्खू येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं—''आयस्मता, भन्ते, पिण्डोलभारद्वाजेन अञ्ञा ब्याकता—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं

उस की जाति क्षीण हो गयी, धर्मसाधना पूर्ण हो गयी, वह कृतकृत्य हो गया, अब उस का पुनर्जन्म नहीं होगा'॥'' •

४८. चतुर्थ पूर्वारामसूत्र : : पाँच इन्द्रियों की भावना

४९. ...उसी स्थान पर...। ...पूर्ववत्...। ''पाँच इन्द्रियों की साधना एवं अभ्यास से क्षीणाश्रव भिक्षु को यह ज्ञान हो जाता है—'मेरी जाति क्षीण हो चुकी...पूर्ववत्...अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा'॥'' •

४९. पिण्डोलभारद्वाजसूत्र : : पिण्डोल भारद्वाज को अर्हत्त्व

५०. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **कौशाम्बी नगर के** घोषिताराम में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् पिण्डोल भारद्वाज ने अपना यह विश्वास साथी भिक्षुओं को सुनाया—''मेरी जाति (भवपरम्परा) क्षीण हो चुकी है, धर्मसाधना पूर्ण हो चुकी है, मैं कृतकृत्य हो चुका हूँ, अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा—ऐसा मैंने जान लिया'' यह सुन कर वे भिक्षु भगवान् के सम्मुख गये तथा उन्हें प्रणाम कर एक तरफ बैठ गये। एक तरफ बैठ कर वे बोले—''भन्ते! आयुष्मान् पिण्डोल भारद्वाज ने अपना परम

करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। किं नु खो, भन्ते, अत्थवसं सम्पस्समानेन आयस्मता पिण्डोलभारद्वाजेन अञ्ञा ब्याकता—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी''' ति?

[N.195] ''तिण्णन्नं खो, भिक्खवे, इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता पिण्डोलभारद्वाजेन भिक्खुना अञ्ञा ब्याकता—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। कतमेसं तिण्णन्नं? सतिन्द्रियस्स, समाधिन्द्रियस्स, पञ्ञिन्द्रियस्स—इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णन्नं इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता पिण्डोलभारद्वाजेन भिक्खुना अञ्ञा ब्याकता—'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी' ति। इमानि च, भिक्खवे, तीणिन्द्रियानि किमन्तानि? खयन्तानि। किस्स खयन्तानि? जातिजरामरणस्स। 'जातिजरामरणं खयं' ति खो, भिक्खवे, सम्पस्समानेन पिण्डोलभारद्वाजेन भिक्खुना अञ्ञा ब्याकता—[R.225] 'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया ति पजानामी''' ति॥

५०. आपणसुत्तं

५१. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा अङ्गेसु विहरति आपणं नाम अङ्गानं निगमो। तत्र खो भगवा आयस्मन्तं सारिपुत्तं आमन्तेसि—''यो सो, सारिपुत्त, अरियसावको तथागते एकन्तगतो अभिप्पसन्नो, न सो तथागते वा तथागतसासने वा कङ्खेय्य वा विचिकिच्छेय्य वा'' ति?

ज्ञान यों घोषित किया है—'मेरी जाति क्षीण हुई...ऐसा मैने जान लिया!' भन्ते! किस कारण से इन आयुष्मान् ने ऐसा ज्ञान घोषित किया?''

''भिक्षुओ! तीन इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास से इस ने अपना यह परम ज्ञान घोषित किया है...। किन तीन की? स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय एवं प्रज्ञेन्द्रिय।...। भिक्षु इन तीन इन्द्रियों की सीमा कहाँ तक है? क्षयपर्यन्त सीमा है। किस के क्षयपर्यन्त? जाति एवं जरामरण के। भिक्षुओ! अपने जाति एवं जरामरण का क्षय देखते समझते हुए इस पिण्डोल भारद्वाज ने अपना यह परम ज्ञान घोषित किया है...पूर्ववत्...ऐसा मैं जानता हूँ'॥''

५०. आपणसूत्र : : बुद्ध में श्रद्धालु को धर्म में शङ्का नहीं

५०. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) अङ्ग देश के **आपण** नामक कस्बे में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ कभी भगवान् ने आयुष्मान् सारिपुत्र से यह

"यो सो, भन्ते, अरियसावको तथागते एकन्तगतो अभिप्पसन्नो, न सो तथागते वा तथागतसासने वा कङ्खेय्य वा विचिकिच्छेय्य वा। सद्धस्स हि, भन्ते, [B.198] अरियसावकस्स एतं पाटिकङ्खं यं आरद्धविरियो विहरिस्सति—अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु। यं हिस्स, भन्ते, विरियं तदस्स विरियिन्द्रियं।

"सद्धस्स हि, भन्ते, अरियसावकस्स आरद्धविरियस्स एतं पाटिकङ्खं यं सतिमा भविस्सति, परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो, चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता। या हिस्स, भन्ते, सति तदस्स सतिन्द्रियं।

"सद्धस्स हि, भन्ते, अरियसावकस्स आरद्धविरियस्स उपट्ठितस्सतिनो एतं पाटिकङ्खं यं वोस्सग्गारम्मणं करित्वा लभिस्सति समाधिं, लभिस्सति चित्तस्स [N.196] एकग्गतं। यो हिस्स, भन्ते, समाधि तदस्स समाधिन्द्रियं।

"सद्धस्स हि, भन्ते, अरियसावकस्स आरद्धविरियस्स उपट्ठितस्सतिनो [R.226] समाहितचित्तस्स एतं पाटिकङ्खं यं एवं पजानिस्सति—'अनमतग्गो खो संसारो। पुब्बा कोटि न पञ्ञायति अविज्जानीवरणानं सत्तानं तण्हासंयोजनानं सन्धावतं संसरतं।

पूछा—"सारिपुत्र! जो तथागत में श्रद्धालु हैं क्या उस को तथागत में तथागतद्वारा प्रतिपादित धर्म में कोई शङ्का या सन्देह रह जाता है?"

"भन्ते! जो आर्यश्रावक तथागत या तथागतप्रतिपादित धर्म के प्रति श्रद्धालु है उस को उन में कैसे कोई शङ्का या सन्देह रह जायगा। भन्ते! श्रद्धालु एवं प्रयत्नशील आर्यश्रावक से यही आशा की जाती है कि वह प्रयत्नवान् हो कर ऐसी साधना करेगा कि उस के अकुशल धर्मों का प्रहाण होने लगे तथा कुशल धर्मों का उत्पाद होने लगे। वह स्थिर हो कर एतदर्थ प्रयत्नशील रहे, साधना की कठिनाइयों को सहने की क्षमता रखे। भन्ते! इस में जो उस का यह वीर्य है यही—'वीर्येन्द्रिय' है।

"ऐसी स्थिति में पहुँचने पर, भन्ते! उस से यह भी आशा की जा सकती है कि वह स्मृतिमान् रहेगा, बहुत समय पहले हुए किया हुआ कार्य या बोला हुआ वचन भी उस को स्मरण रहेगा। भन्ते! ऐसी स्मृति ही उस की स्मृतीन्द्रिय है।

"तथा भन्ते! अब उस से यह भी आशा की जाती है कि वह व्यवसर्ग का आलम्बन कर, समाधि तथा चित्त की एकाग्रता प्राप्त कर लेगा। भन्ते! यह समाधि ही उस की समाधीन्द्रिय है।

"तथा भन्ते! उस से यह भी आशा की जा सकती है कि वह यह समझ लेगा कि यह संसार अनादि है। अविद्या के बन्धन (नीवरण) में बँधे हुए को इस का पूर्व भाग

अविज्जाय त्वेव तमोकायस्स असेसविरागनिरोधो सन्तमेतं पदं पणीतमेतं पदं, यदिदं—सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं। या हिस्स, भन्ते, पञ्ञा तदस्स पञ्ञिन्द्रियं।

"सद्धो सो, भन्ते, अरियसावको एवं पदहित्वा पदहित्वा एवं सरित्वा सरित्वा एवं समादहित्वा समादहित्वा एवं पजानित्वा पजानित्वा एवं अभिसद्दहति—'इमे खो ते धम्मा ये मे पुब्बे सुता अहेसुं। तेनाहं एतरहि कायेन च फुसित्वा विहरामि पञ्ञाय च अतिविज्झ पस्सामी' ति। या हिस्स, भन्ते, सद्धा तदस्स सद्धिन्द्रियं" ति।

"साधु साधु, सारिपुत्त! यो सो, सारिपुत्त, अरियसावको तथागते एकन्तगतो अभिप्पसन्नो, न सो तथागते वा तथागतसासने वा कङ्खेय्य वा विचिकिच्छेय्य वा। [B.199] सद्धस्स हि, सारिपुत्त, अरियसावकस्स एवं पाटिकङ्खं यं आरद्धविरियो विहरिस्सति—अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु। यं हिस्स, सारिपुत्त, विरियं तदस्स विरियिन्द्रियं।

"सद्धस्स हि, सारिपुत्त, अरियसावकस्स आरद्धविरियस्स एतं पाटिकङ्खं यं सतिमा भविस्सति, परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो, चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता। या हिस्स, सारिपुत्त, सति तदस्स सतिन्द्रियं।

"सद्धस्स हि, सारिपुत्त, अरियसावकस्स आरद्धविरियस्स उपट्ठितस्सतिनो एतं पाटिकङ्खं यं वोस्सग्गारम्मणं करित्वा लभिस्सति समाधिं, लभिस्सति चित्तस्स एकग्गतं। यो हिस्स, सारिपुत्त, समाधि तदस्स समाधिन्द्रियं।

[N.197] "सद्धस्स हि, सारिपुत्त, अरियसावकस्स आरद्धविरियस्स उपट्ठितस्सतिनो

जाना नहीं जाता। तृष्णासंयोजनों में जकड़े हुए, आवागमन के संवरण में पड़े प्राणियों को उसी अविद्या के निरोध से वह शान्त पद—सभी संस्कारों का दब जाना, सभी उपाधियों से मुक्ति, तृष्णाक्षय, विराग, निरोध, निर्वाण—सिद्ध हो जाता है। भन्ते! उस की यह प्रज्ञा ही प्रज्ञेन्द्रिय है।

"भन्ते! वह श्रद्धालु आर्यश्रावक यों प्रयत्न एवं उद्योग करते हुए, स्मृति रखते हुए, समाधिभावना करते हुए तथा ऐसा ज्ञान रखते हुए यह श्रद्धा करता है—'मैंने जिन धर्मों को पहले सुना ही था उन्हें आज स्वयं साधना करते हुए अनुभव कर रहा हूँ। उन का प्रज्ञापूर्वक अन्वीक्षण कर रहा हूँ।' भन्ते! उस की यह श्रद्धा ही श्रद्धेन्द्रिय है।"

"साधु! साधु सारिपुत्र! जो आर्यश्रावक तथागत या तथागतप्रतिपादित धर्म के प्रति

समाहितचित्तस्स एतं पाटिकङ्खं यं एवं पजानिस्सति—'अनमतग्गो खो संसारो। पुब्बा कोटि न पञ्ञायति अविज्जानीवरणानं सत्तानं तण्हासंयोजनानं सन्धावतं संसरतं। अविज्जाय त्वेव तमोकायस्स असेसविरागनिरोधो सन्तमेतं पदं पणीतमेतं पदं, यदिदं—सब्बसङ्खारसमथो सब्बूपधिपटिनिस्सग्गो तण्हाक्खयो विरागो निरोधो निब्बानं। या हिस्स, सारिपुत्त, पञ्ञा तदस्स पञ्ञिन्द्रियं।

''सद्धो सो, सारिपुत्त, अरियसावको एवं पदहित्वा पदहित्वा एवं सरित्वा सरित्वा एवं समादहित्वा समादहित्वा एवं पजानित्वा पजानित्वा एवं अभिसद्दहति—'इमे खो ते धम्मा ये मे पुब्बे सुता अहेसुं। तेनाहं एतरहि कायेन च फुसित्वा [R.227] विहरामि, पञ्ञाय च अतिविज्झ पस्सामी' ति। या हिस्स, सारिपुत्त, सद्धा तदस्स सद्धिन्द्रियं'' ति॥ •

जरावग्गो पञ्चमो॥

तस्सुद्दानं

जरा उण्णाभो ब्राह्मणो, साकेतो पुब्बकोट्ठको।
पुब्बारामे च चत्तारि, पिण्डोलो आपणेन चा ति॥ •

श्रद्धालु है...पूर्ववत्...*(सारिपुत्रकथित पाठ की आवृत्ति कर लें)* यह श्रद्धा ही श्रद्धेन्द्रिय है''॥ •

जरावर्ग पञ्चम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. जराधर्मसूत्र, २. ऊर्णाभब्राह्मणसूत्र, ३. साकेतसूत्र, ४. पूर्वकोष्ठकसूत्र, ५. प्रथम पूर्वारामसूत्र, ६. द्वितीय पूर्वारामसूत्र, ७. तृतीय पूर्वारामसूत्र, ८. चतुर्थ पूर्वारामसूत्र, ९. पिण्डोलभारद्वाजसूत्र एवं १०. आपणसूत्र॥ •

६. सूकरखतवग्गो छट्ठो

५१. सालसुत्तं

[B.200] ५२. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा कोसलेसु विहरति सालाय ब्राह्मणगामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि तिरच्छानगता पाणा, सीहो मिगराजा तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—थामेन जवेन सूरेन; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाय।

"कतमे च, भिक्खवे, बोधिपक्खिया धम्मा? सद्धिन्द्रियं, भिक्खवे, बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति; विरियिन्द्रियं, बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति; सतिन्द्रियं, बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति; समाधिन्द्रियं, बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति; पञ्ञिन्द्रियं, बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय [R.228, N.198] संवत्तति। सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि तिरच्छानगता पाणा, सीहो मिगराजा तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—थामेन जवेन सूरेन; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाया" ति॥●

५२. मल्लिकसुत्तं

५३. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा मल्लिकेसु विहरति उरुवेलकप्पं नाम

---

६. शूकरक्षतवर्ग षष्ठ

५१. शालासूत्र : : प्रज्ञेन्द्रिय की श्रेष्ठता

५२. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) कोसल प्रदेश के **शाला** नामक ब्राह्मणग्राम में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को यों उपदेश किया— "जैसे, भिक्षुओ! सभी पशुओं में मृगराज सिंह श्रेष्ठ (प्रधान) कहलाता है—बल में भी, वेग में भी और शौर्य में भी; उसी तरह ज्ञानप्राप्ति में, बोधिपक्षीय धर्मों में प्रज्ञेन्द्रिय सर्वश्रेष्ठ है।

"भिक्षुओ! बोधिपक्षीय धर्म कौन से हैं? भिक्षुओ! श्रद्धेन्द्रिय बोधिपक्षीय धर्म है, उस की साधना ज्ञानप्राप्ति में सहायक होती है। वीर्येन्द्रिय, स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय, प्रज्ञेन्द्रिय भी बोधिपक्षीय धर्म हैं, ये भी ज्ञानप्राप्ति में अत्यधिक सहायक होते हैं। जैसे, भिक्षुओ! सभी पशुओं में मृगराज सिंह श्रेष्ठ होता है—बल, वेग एवं शौर्य में; इसी तरह ये जितने भी बोधिपक्षीय धर्म हैं उन में प्रज्ञेन्द्रिय सर्वश्रेष्ठ है"॥ ●

५२. मल्लिकसूत्र : : इन्द्रियों की स्वस्थानस्थिति

५३. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) मल्लिक जनपद में **ऊरुवेलकप्प**

मल्लिकानं निगमो। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''यावकीवञ्च, भिक्खवे, अरियसावकस्स अरियञाणं न उप्पन्नं होति नेव ताव चतुन्नं इन्द्रियानं सण्ठिति होति, नेव ताव चतुन्नं इन्द्रियानं अवट्ठिति होति। यतो च खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स अरियञाणं उप्पन्नं होति, अथ चतुन्नं इन्द्रियानं सण्ठिति होति, अथ चतुन्नं इन्द्रियानं अवट्ठिति होति।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, यावकीवञ्च कूटागारस्स कूटं न उस्सितं होति, नेव ताव गोपानसीनं सण्ठिति होति, नेव ताव गोपानसीनं अवट्ठिति होति। यतो च खो, भिक्खवे, कूटागारस्स कूटं उस्सितं होति, अथ गोपानसीनं सण्ठिति होति, अथ [B.201] गोपानसीनं अवट्ठिति होति। एवमेव खो, भिक्खवे, यावकीवञ्च अरियसावकस्स अरियञाणं न उप्पन्नं होति, नेव ताव चतुन्नं इन्द्रियानं सण्ठिति होति, नेव ताव चतुन्नं इन्द्रियानं अवट्ठिति होति। यतो च खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स अरियञाणं उप्पन्नं होति, अथ चतुन्नं इन्द्रियानं...पे०...अवट्ठिति होति।

''कतमेसं चतुन्नं? सद्धिन्द्रियस्स, विरियिन्द्रियस्स, सतिन्द्रियस्स, [R.229] समाधि-न्द्रियस्स। पञ्ञवतो, भिक्खवे, अरियसावकस्स तदन्वया सद्धा सण्ठाति, तदन्वयं विरियं सण्ठाति, तदन्वया सति सण्ठाति, तदन्वयो समाधि सण्ठाती'' ति॥ •

नामक मल्लों के कस्बे में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ उन्होंने भिक्षुओं को यों उपदेश किया—''भिक्षुओ! किसी आर्यश्रावक को जब तक आर्यज्ञान उत्पन्न नहीं होता, तब तक चारों इन्द्रियों की स्थिति, अवस्थिति (स्व स्व स्थान पर स्थिर रहना) नहीं होती। तथा जब उस को आर्यज्ञान उत्पन्न हो जाता है तब इन चारों इन्द्रियों की भी स्थिति, अवस्थिति बन जाती है।

''जैसे, भिक्षुओ! जब तक कूटागार का कूट उठा नहीं दिया जाता, तब तक धरणें नहीं टिक पातीं। यदि कूटागार का कूट उठा दिया जाता है तब उन धरणों की भी स्थिति एवं अवस्थिति बन जाती है। इसी तरह, भिक्षुओ! जब तक आर्यश्रावक को ज्ञान उत्पन्न नहीं होता तब तक इन इन्द्रियों की स्थिति भी नहीं बनती। तथा जब उस को ज्ञान उत्पन्न हो जाता है तब इन इन्द्रियों की स्थिति, अवस्थिति बन जाती है।

किन चारों (इन्द्रियों) की? श्रद्धेन्द्रिय, वीर्येन्द्रिय, समाधीन्द्रिय एवं प्रज्ञेन्द्रिय। भिक्षुओ! प्रज्ञावान् आर्यश्रावक को प्रज्ञा से श्रद्धा स्थिर होती है, उस श्रद्धा से वीर्य स्थिर होता है। उस वीर्य के सहारे स्मृति स्थिर होती है तथा उस स्मृति के आश्रय से स्थिर समाधिभावना हो पाती है''॥

•

५३. सेखसुत्तं

५४. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा कोसम्बियं विहरति घोसितारामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''अत्थि नु खो, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म [N.199] सेखो भिक्खु सेखभूमियं ठितो 'सेखोस्मी' ति पजानेय्य, असेखो भिक्खु असेखभूमियं ठितो 'असेखोस्मी' ति पजानेय्या'' ति?

भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा...पे०...।

''अत्थि, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म सेखो भिक्खु सेखभूमियं ठितो 'सेखोस्मी' ति पजानेय्य, असेखो भिक्खु असेखभूमियं ठितो 'असेखोस्मी' ति पजानेय्य। कतमो च, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म सेखो भिक्खु सेखभूमियं ठितो 'सेखोस्मी' ति पजानाति? इध, भिक्खवे, सेखो भिक्खु 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति—अयं पि खो, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म सेखो भिक्खु सेखभूमियं ठितो 'सेखोस्मी' ति पजानाति।

''पुन च परं, भिक्खवे, सेखो भिक्खु इति पटिसञ्चिक्खति—'अत्थि नु खो इतो बहिद्धा अञ्ञो समणो वा ब्राह्मणो वा यो एवं भूतं तच्छं तथं धम्मं देसेति यथा भगवा'

---

५३. शैक्ष्यसूत्र : : शैक्ष्य या अशैक्ष्य जानने की विधि

५४. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) कौशाम्बी के घोषिताराम में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को यों उपदेश किया—''भिक्षुओ! क्या ऐसी कोई सरणि है, पद्धति है जिस से शैक्ष्य भिक्षु शैक्ष्यभूमि में स्थित हो कर यह जान सके कि मैं शैक्ष्य हो गया हूँ। या अशैक्ष्य भिक्षु यह जान सके कि मैं अभी अशैक्ष्य ही हूँ?''

''भन्ते! हमारे लिये धर्म के उपदेशक तो आप ही हैं...पूर्ववत्...।

''हाँ, भिक्षुओ! ऐसी पद्धति है, जिस से शैक्ष्य भिक्षु जान सके कि वह शैक्ष्य हो गया है। या अशैक्ष्य भिक्षु जान सके कि वह अभी अशैक्ष्य ही है। भिक्षुओ! वह कौन सी पद्धति है... ? यहाँ, भिक्षुओ! कोई शैक्ष्य भिक्षु 'यह दु:ख है'—ऐसा भली भाँति जानता है, 'यह दु:खसमुदय है'—यह भली भाँति जानता है. 'यह दु:खनिरोध है'—...'यह दु:खनिरोधगामी मार्ग है'—यह भली भाँति जानता है; भिक्षुओ! यह एक पद्धति है जिस के सहारे से, वह शैक्ष्य भिक्षु जान जाता है कि वह शैक्ष्यभूमि में पहुँच चुका है। (१)

''तब, भिक्षुओ! वह शैक्ष्य भिक्षु यह चिन्तन करता है—'क्या इस (धर्मविनय)

ति? सो एवं पजानाति—'नत्थि खो इतो बहिद्धा अञ्ञो समणो वा [B.202, R.230] ब्राह्मणो वा यो एवं भूतं तच्छं तथं धम्मं देसेति यथा भगवा' ति। अयं पि खो, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म सेखो भिक्खु सेखभूमियं ठितो 'सेखोस्मी' ति पजानाति।

''पुन च परं, भिक्खवे, सेखो भिक्खु पञ्चिन्द्रियानि पजानाति—सद्धिन्द्रियं, विरियिन्द्रियं, सतिन्द्रियं, समाधिन्द्रियं, पञ्ञिन्द्रियं—यंगतिकानि यंपरमानि यंफलानि यंपरियोसानानि। न हेव खो कायेन फुसित्वा विहरति; पञ्ञाय च अतिविज्झ पस्सति। अयं पि खो, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म सेखो भिक्खु सेखभूमियं ठितो 'सेखोस्मी' ति पजानाति।

''कतमो च, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म असेखो भिक्खु असेख-भूमियं ठितो 'असेखोस्मी' ति पजानाति? इध, भिक्खवे, असेखो भिक्खु पञ्चिन्द्रियानि पजानाति—सद्धिन्द्रियं, विरियिन्द्रियं, सतिन्द्रियं, समाधिन्द्रियं, पञ्ञिन्द्रियं—यंगति-कानि यंपरमानि यंफलानि यंपरियोसानानि। कायेन च फुसित्वा विहरति; पञ्ञाय च अतिविज्झ पस्सति। अयं पि खो, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म [N.200] असेखो भिक्खु असेखभूमियं ठितो 'असेखोस्मी' ति पजानाति।

''पुन च परं, भिक्खवे, असेखो भिक्खु छ इन्द्रियानि पजानाति। 'चक्खुन्द्रियं, सोतिन्द्रियं, घानिन्द्रियं, जिव्हिन्द्रियं, कायिन्द्रियं, मनिन्द्रियं—इमानि खो छ इन्द्रियानि

से बाहर भी ऐसा कोई श्रमण या ब्राह्मण है जो ऐसा यथार्थ सत्य उपदेश करता हो, जैसा भगवान् करते हैं?' तब वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है—'नहीं, इस (धर्मविनय) से बाहर ऐसा कोई श्रमण ब्राह्मण नहीं है जो ऐसा उपदेश कर सके, जैसा भगवान् करते हैं? भिक्षुओ! यह भी एक पद्धति है, जिस के सहारे से...पूर्ववत्...। (२)

''फिर, भिक्षुओ! वह भिक्षु श्रद्धेन्द्रिय, वीर्येन्द्रिय, स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय, प्रज्ञेन्द्रिय—इन पाँचों इन्द्रियों के विषय में चिन्तन करता है—इन का उद्देश्य क्या है? इन का फल क्या है? तथा अन्त क्या है? अत: वह उन की साधना ही नहीं करता, अपि तु वह प्रज्ञा से उन के अन्तस्तल तक प्रविष्ट हो जाता है। भिक्षुओ! यह भी एक पद्धति है, जिस से वह भिक्षु जान लेता है—'मैं शैक्ष्य भूमि में स्थित हूँ, शैक्ष्य हो चुका हूँ।' (३)

''भिक्षुओ! ...पूर्ववत्...वह अशैक्ष्य भिक्षु भी उन्हीं पाँचों इन्द्रियों के विषय में...पूर्ववत्... जान लेता है कि वह अभी अशैक्ष्य भूमि में ही स्थित है, तथा 'अशैक्ष्य' ही है। (४)

''फिर, भिक्षुओ! वह अशैक्ष्य भिक्षु इन छह इन्द्रियों को जानता है—चक्षु, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, काय एवं मन। उस की ये छह इन्द्रियाँ सर्वथा, सब तरह से, पूर्णत: निरुद्ध

सब्बेन सब्बं सब्बथा सब्बं अपरिसेसं निरुज्झिस्सन्ति, अञ्ञानि च छ इन्द्रियानि न कुहिञ्चि किस्मिञ्चि उप्पज्जिस्सन्ती' ति पजानाति। अयं पि खो, भिक्खवे, परियायो यं परियायं आगम्म असेखो भिक्खु असेखभूमियं ठितो 'असेखोस्मी' ति पजानाती'' ति॥

५४. पदसुत्तं

[R.231] ५५. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, यानि कानिचि जङ्गलानं पाणानं पदजातानि सब्बानि तानि हत्थिपदे समोधानं गच्छन्ति, हत्थिपदं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं— [B.203] महन्तत्तेन; एवमेव खो, भिक्खवे, यानि कानिचि पदानि बोधाय संवत्तन्ति, पञ्ञिन्द्रियं पदं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाय। कतमानि च, भिक्खवे, पदानि बोधाय संवत्तन्ति? सद्धिन्द्रियं, भिक्खवे, पदं, तं बोधाय संवत्तति; विरियिन्द्रियं पदं, तं बोधाय संवत्तति; सतिन्द्रियं पदं, तं बोधाय संवत्तति; समाधिन्द्रियं पदं, तं बोधाय संवत्तति; पञ्ञिन्द्रियं पदं, तं बोधाय संवत्तति। सेय्यथापि, भिक्खवे, यानि कानिचि जङ्गलानं पाणानं पदजातानि सब्बानि तानि हत्थिपदे समोधानं गच्छन्ति, हत्थिपदं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—महन्तत्तेन; एवमेव खो, भिक्खवे, यानि कानिचि पदानि बोधाय संवत्तन्ति, पञ्ञिन्द्रियं पदं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाया'' ति॥ •

५५. सारसुत्तं

५६. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि सारगन्धा, लोहितचन्दनं तेसं

हो जायँगी तथा अन्य छह इन्द्रियाँ कहीं भी, किसी में भी उत्पन्न न होंगी—यह जानता है। भिक्षुओ! यह भी एक पद्धति है, जिस के सहारे से वह अशैक्ष्य भिक्षु अशैक्ष्य भूमि में स्थित रह कर 'मैं अशैक्ष्य हूँ'—ऐसा जान लेता है।'' (५) •

५४. पदसूत्र : : प्रज्ञेन्द्रिय की श्रेष्ठता

५५. ...''जैसे, भिक्षुओ! जितने भी जङ्गल में रहने वाले प्राणी हैं, उन सब के पैर हाथी के पैर से छोटे ही होते हैं। हाथी का पैर ही उन सब के पैरों से बड़ा (महान्) होता है। इसी तरह, भिक्षुओ! जितने भी बोधि के लिये आवश्यक पद हैं, उन में प्रज्ञेन्द्रिय सर्वश्रेष्ठ कहलाती है। भिक्षुओ! ये बोधि के लिये आवश्यक पद कौन से हैं? भिक्षुओ! श्रद्धेन्द्रिय, वीर्येन्द्रिय, स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय एवं प्रज्ञेन्द्रिय—ये बोधि के आवश्यक पद हैं जो कि ज्ञान में अत्यधिक सहायक हैं। जैसे, भिक्षुओ! जङ्गली प्राणियों के पैरों में सब से महान् पैर हाथी का होता है, अत: वही सर्वश्रेष्ठ कहलाता है; उसी तरह जितने भी बोध के लिये पद (शब्द) हैं उन में 'प्रज्ञेन्द्रिय' पद सर्वश्रेष्ठ है; क्यों कि उसी के सहारे परम ज्ञान की प्राप्ति होती है''॥ •

अग्गमक्खायति; एवमेव खो भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाय। कतमे च, भिक्खवे, बोधिपक्खिया. धम्मा? सद्धिन्द्रियं, भिक्खवे, बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति। विरियिन्द्रिय [N.201] ...पे०...सतिन्द्रियं...पे०...समाधिन्द्रियं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति। सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि सारगन्धा, लोहितचन्दनं तेसं अग्गमक्खायति; एवमेव खो भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाया'' ति॥ ●

५६. पतिट्ठितसुत्तं

५७. ''एकधम्मे पतिट्ठितस्स, भिक्खवे, भिक्खुनो पञ्चिन्द्रियानि भावितानि [R.232] होन्ति सुभावितानि। कतमस्मिं एकधम्मे? अप्पमादे। कतमो च भिक्खवे, अप्पमादो? इध, भिक्खवे, भिक्खु चित्तं रक्खति आसवेसु च सासवेसु च धम्मेसु। तस्स चित्तं रक्खतो आसवेसु च सासवेसु च धम्मेसु सद्धिन्द्रियं पि भावनापारिपूरिं गच्छति। विरियिन्द्रियं पि भावनापारिपूरिं गच्छति। सतिन्द्रियं पि भावनापारिपूरिं गच्छति। समाधिन्द्रियं पि भावनापारिपूरिं गच्छति। पञ्ञिन्द्रियं पि भावनापारिपूरिं गच्छति। एवं पि खो, भिक्खवे, एकधम्मे पतिट्ठितस्स भिक्खुनो पञ्चिन्द्रियानि भावितानि होन्ति सुभावितानी'' ति॥ ●

---

५५. सारसूत्र : : प्रज्ञेन्द्रिय की अग्रता

५६. ...''भिक्षुओ! लोक में जितने भी गन्धमय काष्ठ वाले वृक्ष हैं, उन में रक्तचन्दन प्रधान (श्रेष्ठ) कहलाता है, उसी तरह, भिक्षुओ! जितने भी बोधिपक्षीय धर्म हैं उन में प्रज्ञेन्द्रिय श्रेष्ठ है। भिक्षुओ! ये बोधिपक्षीय धर्म कौन कौन हैं? श्रद्धेन्द्रिय, जो कि ज्ञानप्राप्ति में उपयोगी है, वीर्येन्द्रिय, स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय एवं प्रज्ञेन्द्रिय—ये बोधिपक्षीय धर्म हैं। जैसे, भिक्षुओ! गन्धमय काष्ठ वाले वृक्षों में रक्तचन्दन सर्वश्रेष्ठ होता है; इसी तरह बोधिपक्षीय धर्मों में प्रज्ञेन्द्रिय सर्वश्रेष्ठ है''॥ ●

५६. प्रतिष्ठितसूत्र : : अप्रमाद

५७. एक धर्म में प्रतिष्ठित रहने वाले साधक भिक्षु की पाँचों इन्द्रियाँ भावित एवं अभ्यस्त हो जाती हैं। किस एक धर्म में? अप्रमाद में। भिक्षुओ! यह 'अप्रमाद' क्या है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु आश्रव एवं आश्रवयुक्त धर्मों में लगने से स्वचित्त की रक्षा करता है (उन से दूर रखता है), इस तरह उस के द्वारा स्वचित्त की रक्षा करते हुए श्रद्धेन्द्रिय की भावना पूर्ण हो जाती है। वीर्येन्द्रिय की भी...स्मृतीन्द्रिय की भी...समाधीन्द्रिय की भी...एवं प्रज्ञेन्द्रिय की भी भावना पूर्ण हो जाती है। इस तरह, भिक्षुओ! इस एक धर्म

५७. सहम्पतिब्रह्मसुत्तं

[B.204] ५८. एकं समयं भगवा उरुवेलायं विहरति नज्जा नेरञ्जराय तीरे अजपालनिग्रोधे पठमाभिसम्बुद्धो। अथ खो भगवतो रहोगतस्स पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को उदपादि—"पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि अमतोगधानि होन्ति अमतपरायणानि अमतपरियोसानानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं। विरियिन्द्रियं...पे०...सतिन्द्रियं...पे०... समाधिन्द्रियं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं। इमानि पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि अमतोगधानि होन्ति अमतपरायणानि अमतपरियोसानानी" ति।

अथ खो ब्रह्मा सहम्पति भगवतो चेतसा चेतोपरिवितक्कमञ्ञाय—सेय्यथापि [N.202] नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य; [R.233] एवमेव ब्रह्मलोके अन्तरहितो भगवतो पुरतो पातुरहोसि। अथ खो ब्रह्मा सहम्पति एकंसं उत्तरासङ्गं करित्वा येन भगवा तेनञ्जलिं पणामेत्वा भगवन्तं एतदवोच—"एवमेतं, भगवा, एवमेतं सुगत! पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि अमतोगधानि होन्ति अमतपरायणानि अमतपरियोसानानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं भावितं बहुलीकतं अमतोगधं होति अमतपरायणं अमतपरियोसानं। इमानि पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि अमतोगधानि होन्ति अमतपरायणानि अमतपरियोसानानि।

(अप्रमाद) में प्रतिष्ठित रहते हुए भिक्षु की इन पाँचों इन्द्रियों की भावना पूर्ण हो जाती है"॥

५७. सहम्पतिब्रह्मसूत्र : : इन्द्रियसाधना से निर्वाणप्राप्ति

५८. एक समय भगवान् **ऊरुवेला में** निरञ्जना नदी के तट पर बुद्धत्वलाभ करने के बाद, अजपालन्यग्रोध के नीचे समाधिसुख का अनुभव कर रहे थे। तब एकान्त में ध्यान करते समय भगवान् के मन में ऐसा विचार उठा—"पाँचों इन्द्रियों की भावना करने से अमृत (निर्वाण) सिद्ध होता है। कौन सी पाँच इन्द्रियाँ? श्रद्धेन्द्रिय...वीर्येन्द्रिय...स्मृतीन्द्रिय... समाधीन्द्रिय...एवं प्रज्ञेन्द्रिय...। इन पाँचों इन्द्रियों के सुसमाहित एवं स्वभ्यस्त हो जाने से अमृत (निर्वाण) की प्राप्ति असन्दिग्ध हो जाती है।"

तब ब्रह्मा सहम्पति भगवान् के चित्तविचार को स्वचित्त से जान कर, किसी बलवान् पुरुष के हाथ पसारने एवं सिकोड़ने की तरह सरलतापूर्वक ब्रह्मलोक से अन्तर्हित हो कर भगवान् के सम्मुख प्रकट हुए। तब ब्रह्मा सहम्पति, दुपट्टे को एक कन्धे पर कर,

"भूतपुब्बाहं, भन्ते, कस्सपे सम्मासम्बुद्धे ब्रह्मचरियं अचरिं। तत्र पि मं एवं जानन्ति—'सहको भिक्खु, सहको भिक्खू' ति। सो ख्वाहं, भन्ते, इमेसं येव पञ्चन्नं इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता कामेसु कामच्छन्दं विराजेत्वा कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं ब्रह्मलोकं उपपन्नो। तत्र पि मं एवं जानन्ति—'ब्रह्मा सहम्पति, ब्रह्मा सहम्पती' ति।

"एवमेतं, भगवा, एवमेतं सुगत! अहमेतं जानामि, अहमेतं पस्सामि यथा इमानि पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि अमतोगधानि होन्ति अमतपरायणानि अमत-परियोसानानी" ति॥ •

५८. सूकरखतसुत्तं

५९. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति गिज्झकूटे पब्बते सूकरखतायं। [B.205] तत्र खो भगवा आयस्मन्तं सारिपुत्तं आमन्तेसि—"किं नु खो, सारिपुत्त, अत्थवसं सम्पस्समानो खीणासवो भिक्खु तथागते वा तथागतसासने वा परमनिपच्चकारं पवत्तमानो पवत्तती" ति?

"अनुत्तरं हि, भन्ते, योगक्खेमं सम्पस्समानो खीणासवो भिक्खु तथागते [R.234] वा तथागतसासने वा परमनिपच्चकारं पवत्तमानो पवत्तती" ति।

भगवान् की ओर करबद्ध प्रणाम-मुद्रा में, यों बोले—"भगवान् ने अभी जो कहा वही उचित है। पाँचों इन्द्रियाँ ...पूर्ववत्...निर्वाण प्राप्त हो जाता है।

"भन्ते! पहले कभी मैं भगवान् काश्यप सम्यक्सम्बुद्ध के समय धर्मसाधना में लगा था। उस समय लोग मुझे 'सहक भिक्षु' नाम से जानते थे। उस समय मैंने इन्हीं पाँचों इन्द्रियों की भावना तथा अभ्यास किया, मरणानन्तर मैं सुगतिमय ब्रह्मलोक में उत्पन्न हुआ। वहाँ भी मुझे वहाँ के वासी 'ब्रह्मा सहम्पति' नाम से जानते हैं। अतः, भगवन्! आप का कथन सर्वथा उचित है। मैं इसे जानता हूँ, मैं इसे देखता हूँ कि कैसे पाँचों इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास से निर्वाण सिद्ध होता है॥" •

५८. शूकरक्षतसूत्र : : अनुत्तर योगक्षेम

५९. एक समय भगवान् (बुद्ध) **राजगृह के** गृध्रकूट पर्वत पर शूकरक्षत गुफा में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने सारिपुत्र से यों पूछा—"सारिपुत्र! क्या कारण है या क्या देख कर, क्षीणाश्रव भिक्षु तथागत एवं तथागतप्रोक्त धर्म के लिये अपना शिर झुकाते हैं?"

"भन्ते! इस में अपने अद्वितीय योगक्षेम को देखते हुए क्षीणाश्रव भिक्षु तथागत एवं तथागतप्रोक्त धर्म के प्रति अपना शिर झुकाते हैं।"

"साधु साधु, सारिपुत्त! अनुत्तरं हि, सारिपुत्त, योगक्खेमं सम्पस्समानो खीणासवो भिक्खु तथागते वा तथागतसासने वा परमनिपच्चकारं पवत्तमानो पवत्तती ति।

"कतमो च, सारिपुत्त, अनुत्तरो योगक्खेमो यं सम्पस्समानो खीणासवो भिक्खु [N.203] तथागते वा तथागतसासने वा परमनिपच्चकारं पवत्तमानो पवत्तती" ति?

"इध, भन्ते, खीणासवो भिक्खु सद्धिन्द्रियं भावेति उपसमगामिं सम्बोधगामिं, विरियिन्द्रियं भावेति...पे०...सतिन्द्रियं भावेति...समाधिन्द्रियं भावेति...पञ्ञिन्द्रियं भावेति उपसमगामिं सम्बोधगामिं। अयं खो, भन्ते, अनुत्तरो योगक्खेमो यं सम्पस्समानो खीणासवो भिक्खु तथागते वा तथागतसासने वा परमनिपच्चकारं पवत्तमानो पवत्तती" ति।

"साधु साधु, सारिपुत्त! एसो हि, सारिपुत्त, अनुत्तरो योगक्खेमो यं सम्पस्समानो खीणासवो भिक्खु तथागते वा तथागतसासने वा परमनिपच्चकारं पवत्तमानो पवत्तती ति। कतमो च, सारिपुत्त, परमनिपच्चकारो यं खीणासवो भिक्खु तथागते वा तथागतसासने वा परमनिपच्चकारं पवत्तमानो पवत्तती" ति?

"इध, भन्ते, खीणासवो भिक्खु सत्थरि सगारवो विहरति सप्पतिस्सो, धम्मे सगारवो विहरति सप्पतिस्सो, सङ्घे सगारवो विहरति सप्पतिस्सो, सिक्खाय सगारवो विहरति सप्पतिस्सो, समाधिस्मिं सगारवो विहरति सप्पतिस्सो। अयं खो, भन्ते, परमनिपच्चकारो यं खीणासवो भिक्खु तथागते वा तथागतसासने वा परमनिपच्चकारं [B.206, R.235] पवत्तमानो पवत्तती" ति।

"ठीक है, सारिपुत्र ठीक है! अनुत्तर योगक्षेम के उद्देश्य से ही वे...शिर झुकाते हैं। तो, सारिपुत्र! यह अनुत्तर योगक्षेम क्या है?"

"भन्ते! क्षीणाश्रव भिक्षु शान्ति तथा ज्ञान की ओर प्रवृत्त करने वाली श्रद्धेन्द्रिय की भावना करता है, वीर्येन्द्रिय की...स्मृतीन्द्रिय की...समाधीन्द्रिय की...एवं प्रज्ञेन्द्रिय की भावना करता है। भन्ते! इस अनुत्तर योगक्षेम प्राप्तिहेतु वह तथागत एवं तथागतप्रोक्त धर्म के प्रति शिर झुकाता है।"

"ठीक है, सारिपुत्र! ठीक है। यही अनुत्तर योगक्षेम है जिसे देखता हुआ क्षीणाश्रव भिक्षु ...शिर झुकाता है। परन्तु यहाँ वह 'शिर झुकाना'...क्या है?"

"भन्ते! यहाँ कोई क्षीणाश्रव भिक्षु तथागत के प्रति गौरव एवं सम्मान रखता हुआ साधना करता है, धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति...शिक्षा के प्रति...समाधि में गौरव एवं सम्मान रखता हुआ साधना करता है—भन्ते! यही यहाँ 'शिर झुकाना' है।"

"साधु साधु, सारिपुत्त! एसो हि, सारिपुत्त, परमनिपच्चकारो यं खीणासवो भिक्खु तथागते वा तथागतसासने वा परमनिपच्चकारं पवत्तमानो पवत्तती" ति॥ •

५९. पठमउप्पादसुत्तं

६०. सावत्थिनिदानं। "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि अनुप्पन्नानि उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र तथागतस्स पातुभावा अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं, विरियिन्द्रियं, सतिन्द्रियं, समाधिन्द्रियं, पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि अनुप्पन्नानि उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र तथागतस्स पातुभावा अरहतो सम्मासम्बुद्धस्सा" ति॥ •

६०. दुतियउप्पादसुत्तं

६१. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि [N.204] अनुप्पन्नानि उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं, विरियिन्द्रियं, सतिन्द्रियं, समाधिन्द्रियं, पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुली-कतानि अनुप्पन्नानि उप्पज्जन्ति, नाञ्ञत्र सुगतविनया" ति॥ •

सूकरखतवग्गो छट्ठो॥

तस्सुद्दानं

सालं मल्लिकं सेखो च, पदं सारं पतिट्ठितं।
ब्रह्मसूकरखतायो, उप्पादा अपरे दुवे ति॥ •

"साधु, सारिपुत्र! साधु। यही कारण है कि क्षीणाश्रव भिक्षु भी तथागत एवं तथागतप्रोक्त धर्म के प्रति शिर झुकाता है"॥ •

५९. प्रथमोत्पादसूत्र : : पाँच इन्द्रियाँ

६०. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध भगवान् के प्रादुर्भाव के विना इन पाँच इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास करने से भी ये अनुत्पन्न इन्द्रियाँ उत्पन्न नहीं हो पातीं। कौन सी पाँच? १. श्रद्धेन्द्रिय, २. वीर्येन्द्रिय, ३. स्मृतीन्द्रिय, ४. समाधीन्द्रिय एवं ५. प्रज्ञेन्द्रिय। ये अनुत्पन्न पाँचों इन्द्रियाँ, भावना तथा अभ्यास करने पर भी, अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध भगवान् के प्रादुर्भाव के विना उत्पन्न नहीं हो पातीं॥" •

६०. द्वितीय उत्पादसूत्र : : पाँच इन्द्रियाँ

६१. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! विना बुद्धविनय (धर्मानुशासन) के उत्पन्न हुए ये अनुत्पन्न पाँचों इन्द्रियाँ उत्पन्न नहीं हो पातीं"॥ *(पूर्वसूत्रवत्)* •

शूकरक्षतवर्ग षष्ठ सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची— १. शालासूत्र, २. मल्लिकसूत्र, ३. शैक्ष्यसूत्र, ४. पदसूत्र, ५. सारसूत्र, ६. प्रतिष्ठितसूत्र, ७. सहम्पतिब्रह्मसूत्र, ८. शूकरक्षतसूत्र, ९. प्रथम उत्पादसूत्र एवं १०. द्वितीय उत्पादसूत्र॥ •

७. बोधिपक्खियवग्गो सत्तमो

६१. संयोजनसुत्तं

६२. सावत्थिनिदानं। "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि भावितानि [R.236] बहुलीकतानि संयोजनप्पहानाय संवत्तन्ति। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि संयोजनप्पहानाय संवत्तन्ती" ति॥ [B.207] ●

६२. अनुसयसुत्तं

६३. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि अनुसय-समुग्घाताय संवत्तन्ति। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि अनुसयसमुग्घाताय संवत्तन्ती" ति॥ ●

६३. परिञ्ञासुत्तं

६४. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि अद्धान-परिञ्ञाय संवत्तन्ति। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि अद्धानपरिञ्ञाय संवत्तन्ती" ति॥ ●

६४. आसवक्खयसुत्तं

६५. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि आस-[N.205] वानं खयाय संवत्तन्ति। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि आसवानं खयाय संवत्तन्ती ति।

---

७. बोधिपक्षीयवर्ग सप्तम

६१. संयोजनसूत्र : : संयोजन (बन्धन)

६२. ...श्रावस्ती में ही...। "भिक्षुओ! इन पाँच इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास से संयोजनों का प्रहाण हो जाता है। कौन सी पाँच? श्रद्धेन्द्रिय...प्रज्ञेन्द्रिय। भिक्षुओ! इन पाँच इन्द्रियों की साधना एवं अभ्यास से संयोजनों का प्रहाण (नाश) हो जाता है॥ ●

६२. अनुशयसूत्र : : अनुशय

६३. ..."भिक्षुओ! इन पाँच इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास से अनुशय (चित्त की कुमार्ग में प्रवृत्ति) का नाश (समुद्घात) होता है। ...पूर्ववत्..."॥ ●

६३. परिज्ञासूत्र : : परिज्ञा (स्थिर ज्ञान)

६४. ..."भिक्षुओ! इन पाँच इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास से मार्गज्ञान होता है। ...पूर्ववत्..."॥ ●

"पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि संयोजनप्पहानाय संवत्तन्ति, अनुसयसमुग्घाताय संवत्तन्ति, अद्धानपरिञ्ञाय संवत्तन्ति, आसवानं खयाय संवत्तन्ति। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि भावितानि बहुलीकतानि संयोजनप्पहानाय संवत्तन्ति, अनुसयसमुग्घाताय संवत्तन्ति, अद्धानपरिञ्ञाय संवत्तन्ति, आसवानं खयाय संवत्तन्ती" ति॥ •

६५. पठमफलसुत्तं

६६. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता द्विन्नं फलानं अञ्ञतरं फलं पाटिकङ्खं—दिट्ठेव धम्मे अञ्ञा, सति वा उपादिसेसे अनागामिता" ति॥ •

६६. दुतियफलसुत्तं

[B.208, R.237] ६७. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, इन्द्रियानि। कतमानि पञ्च? सद्धिन्द्रियं ...पे०...पञ्ञिन्द्रियं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चिन्द्रियानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता सत्त फला सत्तानिसंसा पाटिकङ्खा। कतमे सत्त फला सत्तानिसंसा? दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति नो चे दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति, अथ मरणकाले अञ्ञं आराधेति। नो चे दिट्ठेव धम्मे अञ्ञं आराधेति, नो चे मरणकाले अञ्ञं आराधेति, अथ पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया

---

६४. आश्रवक्षयसूत्र : : आश्रवक्षय

६५. ..."भिक्षुओ! इन पाँच इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास से आश्रवों का क्षय होता है। ...पूर्ववत्... ॥

"भिक्षुओ! इन पाँच इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास से संयोजनों का प्रहाण, अनुशयों का समुद्घात एवं मार्ग का परिज्ञान तथा आश्रवों का क्षय होता है। ...पूर्ववत्... ॥•

६५. प्रथम फलसूत्र : : फलद्वयप्राप्ति

६६. ..."भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ हैं। ...पूर्ववत्...। इन पाँच इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास से दो फलों में से कोई एक फल अवश्य मिलता है; जैसे—इसी जन्म में ज्ञान, या फिर प्रारब्ध अवशिष्ट हों तो अनागामिता"॥ •

६६. द्वितीय फलसूत्र : : फलद्वयप्राप्ति

६७. ..."भिक्षुओ! ये पाँच इन्द्रियाँ हैं। ...पूर्ववत्...। इन पाँच इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास से सात गुणों वाले सात फल प्राप्त होने सम्भव हैं। कौन से सात फल? (१) वह साधक इसी जन्म में परम ज्ञान प्राप्त कर लेता है। (२) यदि इसी जन्म में यह ज्ञान

अन्तरापरिनिब्बायी होति, उपहच्चपरिनिब्बायी होति, असङ्खारपरिनिब्बायी [N.206] होति, ससङ्खारपरिनिब्बायी होति, उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं इन्द्रियानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता इमे सत्त फला सत्तानिसंसा पाटिकङ्खा'' ति॥●

६७. पठमरुक्खसुत्तं

६८. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि जम्बुदीपका रुक्खा, जम्बू तेसं अग्गमक्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाय। कतमे च, भिक्खवे, बोधिपक्खिया धम्मा? सद्धिन्द्रियं, भिक्खवे, बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति। विरियिन्द्रियं...पे०... सतिन्द्रियं...समाधिन्द्रियं...पञ्ञिन्द्रियं बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति। सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि जम्बुदीपका रुक्खा, जम्बू तेसं अग्गमक्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाया'' ति॥ ●

६८. दुतियरुक्खसुत्तं

६९. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि देवानं तावतिंसानं रुक्खा, पारिछत्तको तेसं अग्गमक्खायति; एवमेव खो भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाय। कतमे च, भिक्खवे, बोधिपक्खिया धम्मा? [R.238] सद्धिन्द्रियं, भिक्खवे, बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति। विरियिन्द्रियं...पे०... सतिन्द्रियं...समाधिन्द्रियं...पञ्ञिन्द्रियं बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय [B.209] संवत्तति। सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि देवानं तावतिंसानं रुक्खा, पारिछत्तको तेसं

(किसी प्रारब्धवश) न मिले तो मरते समय यह परम ज्ञान हो जाता है। (३) यदि किसी कारणवश यह न मिले तो पाँच अधोभागीय संयोजनों के क्षय से बीच में परिनिर्वाण प्राप्त कर लेता है। (४) ...उपहत्यपरिनिर्वायी...। (५) असंस्कारपरिनिर्वायी...। (६) ससंस्कारपरिनिर्वायी...। (७) ऊर्ध्वस्रोत अकनिष्ठगामी होता है। ...पूर्ववत्...॥ ●

(विशेष ज्ञान हेतु पृ० १८७९ पर प्रथम विस्तारसूत्र देखें।)

६७. प्रथम वृक्षसूत्र : : ज्ञानपक्षीय मार्ग

६८. ...''भिक्षुओ! जैसे जम्बूद्वीप में उत्पन्न सभी वृक्षों में जम्बू वृक्ष प्रधान होता है, उसी प्रकार, भिक्षुओ! ज्ञानपक्ष के जितने भी धर्म हैं उन में ज्ञानसाधनहेतु प्रज्ञेन्द्रिय सर्वश्रेष्ठ धर्म कहलाता है। भिक्षुओ! ये ज्ञानपक्षीय धर्म कौन से हैं? भिक्षुओ! श्रद्धेन्द्रिय, वीर्येन्द्रिय, स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय एवं प्रज्ञेन्द्रिय—ये ज्ञानपक्ष के धर्म हैं''। ...पूर्ववत्... ॥●

अग्गमक्खायति; एवमेव खो भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाया'' ति॥ •

६९. ततियरुक्खसुत्तं

[N.207] ७०. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि असुरानं रुक्खा, चित्तपाटलि तेसं अग्गमक्खायति; एवमेव खो भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाय। कतमे च, भिक्खवे, बोधिपक्खिया धम्मा? सद्धिन्द्रियं, भिक्खवे, बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति...पे०...पञ्ञिन्द्रियं बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति। सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि असुरानं रुक्खा, चित्तपाटलि तेसं अग्गमक्खायति; एवमेव खो भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाया'' ति॥ •

७०. चतुत्थरुक्खसुत्तं

७१. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि सुपण्णानं रुक्खा, कूटसिम्बली तेसं अग्गमक्खायति; एवमेव खो भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं [R.239] अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाय। कतमे च, भिक्खवे, बोधिपक्खिया धम्मा? सद्धिन्द्रियं, भिक्खवे, बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति...पे०...पञ्ञिन्द्रियं बोधिपक्खियो धम्मो, तं बोधाय संवत्तति। सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि सुपण्णानं रुक्खा, कूटसिम्बली तेसं अग्गमक्खायति; एवमेव खो, भिक्खवे, ये केचि बोधिपक्खिया धम्मा, पञ्ञिन्द्रियं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं—बोधाया'' ति॥ •

बोधिपक्खियवग्गो सत्तमो॥

---

६८. द्वितीय वृक्षसूत्र : : ज्ञानपक्षीय धर्म

६९. ...''भिक्षुओ! जैसे त्रायस्त्रिंश देवलोक में उत्पन्न सभी वृक्षों में पारिजात (पारिच्छत्रक =कल्पतरु वृक्ष) श्रेष्ठ होता है; उसी तरह, भिक्षुओ! ...उपरिसूत्रवत्... ॥''•

६९. तृतीय वृक्षसूत्र : : ज्ञानपक्षीय धर्म

७०. ...''भिक्षुओ! जैसे असुरलोक में उत्पन्न सभी वृक्षों में चित्रपाटली वृक्ष श्रेष्ठ होता है; उसी तरह, भिक्षुओ! ...उपरिसूत्रवत्... ॥'' •

७०. चतुर्थ वृक्षसूत्र : : ज्ञानपक्षीय धर्म

७१. ...''भिक्षुओ! जैसे सुपर्णलोक में उत्पन्न सभी वृक्षों में कूटशिम्बली वृक्ष श्रेष्ठ होता है, उसी प्रकार ज्ञानपक्ष के धर्मों में प्रज्ञेन्द्रिय प्रधान होता है। ...उपरिसूत्रवत्... ॥''•

बोधिपक्षीयवर्ग सप्तम समाप्त॥

तस्सुद्दानं

संयोजना अनुसया, परिञ्ञा आसवक्खया।
द्वे फला चतुरो रुक्खा, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. संयोजनसूत्र, २. अनुशयसूत्र, ३. परिज्ञासूत्र, ४. आश्रवक्षयसूत्र, ५. प्रथम फलसूत्र, ६. द्वितीय फलसूत्र, ७-१०. प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ वृक्षसूत्र॥

८. गङ्गापेय्यालवग्गो अट्ठमो

७१-८२. पाचीनादिसुत्तं

[B.210] ७२-८३. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चिन्द्रियानि भावेन्तो पञ्चिन्द्रियानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चिन्द्रियानि भावेन्तो पञ्चिन्द्रियानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो [N.208] निब्बानपब्भारो ? इध, भिक्खवे, भिक्खु सद्धिन्द्रियं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं, विरियिन्द्रियं...पे०...सतिन्द्रियं... समाधिन्द्रियं...पञ्ञिन्द्रियं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चिन्द्रियानि भावेन्तो पञ्चिन्द्रियानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥ •

गङ्गापेय्यालवग्गो अट्ठमो॥

तस्सुद्दानं

[R.240] छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो।
द्वेते छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥ •

---

८. गङ्गापेय्यालवर्ग अष्टम

७१-८२. प्राचीनादिसूत्र : : निर्वाण की ओर अग्रसर होना

७२-८३. ...''जैसे, भिक्षुओ ! गङ्गा नदी पूर्व दिशा की ओर मुख कर के बहती है, उधर ही अग्रसर होती है; इसी प्रकार, भिक्षुओ ! साधक भिक्षु पाँचों इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास करता हुआ निर्वाण की ओर ही अग्रसर होता है, उधर ही प्रगति करता है। यह कैसे करता है ? यहाँ, भिक्षुओ ! वह भिक्षु विवेक वैराग्य निरोध एवं त्याग के साथ श्रद्धेन्द्रिय की भावना करता है, वीर्येन्द्रिय की...स्मृतीन्द्रिय की...समाधीन्द्रिय की...प्रज्ञेन्द्रिय की भावना एवं उस का अभ्यास करता है तो वह निर्वाण की ओर ही अग्रसर होता है, उधर ही प्रगति करता है''॥ •

गङ्गापेय्यालवर्ग अष्टम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—छह पूर्व की ओर बहने वाली नदियों का तथा छह समुद्र की ओर बहने वाली नदियों की उपमा के साथ बारह सूत्र व्याख्यात हुए हैं॥ •

९. अप्पमादवग्गो नवमो

(अप्पमादवग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

तथागतं पदं कूटं, मूलं सारेन वस्सिकं।
राजा चन्दिमसुरिया, वत्थेन दसमं पदं ति॥

१०. बलकरणीयवग्गो दसमो

(बलकरणीयवग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

बलं बीजं च नागो च, रुक्खो कुम्भेन सूकिया।
आकासेन च द्वे मेघा, नावा, आगन्तुका नदी ति॥

---

९. अप्रमादवर्ग नवम

[अप्रमादवर्ग का पूर्ववत् विस्तार कर लें।]

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. तथागतसूत्र, २. पदसूत्र, ३. कूटसूत्र, ४. मूलसूत्र, ५. सारसूत्र, ६. वर्षिकसूत्र, ७. राजासूत्र, ८. चन्द्रमासूत्र, ९. सूर्यसूत्र एवं १०. काशिकेयवस्त्रसूत्र॥

१०. बलकरणीयवर्ग दशम

[पीछे आये बलकरणीयवर्ग के समान ही यहाँ भी विस्तार कर लें।]

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. बलसूत्र, २. बीजसूत्र, ३. नागसूत्र, ४. वृक्षसूत्र, ५. कुम्भसूत्र, ६. शूकसूत्र, ७. आकाशसूत्र, ८. प्रथम मेघसूत्र, ९. द्वितीय मेघसूत्र, १०. नौसूत्र, ११. आगन्तुकसूत्र एवं नदीसूत्र॥

११. एसनावग्गो एकादसमो

(एसनावग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

[B.211] एसना विधा आसवो, भवो च दुक्खता तिस्सो।
खिलं मलं च नीघो च, वेदना तण्हा तसिना चा ति॥ •

---

११. एषणावर्ग एकादश

[पीछे वर्णित एषणावर्ग के समान ही यहाँ भी विस्तार कर लें।]

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. एषणासूत्र, २. विधासूत्र, ३. आश्रवसूत्र, ४. भवसूत्र, ५. दुःखतासूत्र, ६. खिलसूत्र, ७. मलसूत्र, ८. नीघसूत्र, ९. वेदनासूत्र, १०. तृष्णासूत्र एवं ११. तर्षणसूत्र॥ •

१२. ओघवग्गो द्वादसमो

११६-१२५. ओघादिसुत्तं

[R.241,N.209] ११७-१२६. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय पञ्चिन्द्रियानि भावेतब्बानि। कतमानि पञ्च? इध, भिक्खवे, भिक्खु सद्धिन्द्रियं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं ...पे०...पञ्ञिन्द्रियं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोध-निस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय इमानि पञ्चिन्द्रियानि भावेतब्बानी" ति॥

(यथा मग्गसंयुत्तं तथा वित्थारेतब्बं।) ●

ओघवग्गो द्वादसमो॥

तस्सुद्दानं

ओघो योगो उपादानं, गन्था अनुसयेन च।
कामगुणा नीवरणा, खन्धा ओरुद्धम्भागिया ति॥ ●

---

१२. औघवर्ग द्वादश

११६-१२५. औघादिसूत्र : : **औघ**

११७-१२६. ..."भिक्षुओ! ऊर्ध्वभागीयसंयोजन पाँच होते हैं। कौन से पाँच? रूपराग, अरूपराग, मान, औद्धत्य एवं अविद्या—भिक्षुओ! ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। भिक्षुओ! इन पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजनों को जानने, समझने, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये उन पाँच इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास करना चाहिये। वे इन्द्रियाँ पाँच कौन सी हैं? भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्याग युक्त श्रद्धेन्द्रिय...वीर्येन्द्रिय...स्मृतीन्द्रिय...समाधीन्द्रिय...प्रज्ञेन्द्रिय की भावना एवं अभ्यास करता है। यों, भिक्षुओ! इन पाँच संयोजनों के...प्रहाण के लिये पाँचों इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास करना चाहिये"॥

[इस वर्ग का मार्गसंयुक्त में व्याख्यान हो चुका है, तदनुसार ही यहाँ भी विस्तार कर लें।] ●

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. ओघसूत्र, २. योगसूत्र, ३. उपादानसूत्र, ४. ग्रन्थसूत्र, ५. अनुशयसूत्र, ६. कामगुणसूत्र, ७. नीवरणसूत्र, ८. स्कन्धसूत्र, ९. अवर-भागीयसूत्र एवं १०. ऊर्ध्वभागीयसूत्र॥ ●

१३. गङ्गापेय्यालवग्गो तेरसमो

१२६-१३७. पाचीनादिसुत्तं

[B.212] १२७-१३८. "सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चिन्द्रियानि भावेन्तो पञ्चिन्द्रियानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चिन्द्रियानि भावेन्तो पञ्चिन्द्रियानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सद्धिन्द्रियं भावेति रागविनय-परियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं भावेति राग-विनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्चिन्द्रियानि भावेन्तो पञ्चिन्द्रियानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो" ति॥ ●

गङ्गापेय्यालवग्गो तेरसमो॥

तस्सुद्दानं

[R.242] छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो।
द्वेते छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥

(अप्पमादवग्ग-बलकरणीयवग्ग-एसनावग्गा वित्थारेतब्बा।) ●

---

१३. गङ्गापेय्यालवर्ग त्रयोदश

१२६-१३७. प्राचीनादिसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

१२७-१३८. ..."जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्व की ओर मुख किये हुए ही बहती है, उधर ही उस की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है; उसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु पाँच इन्द्रियों की भावना एवं अभ्यास करता हुआ निर्वाण की ओर ही अग्रसर होता है, उधर ही अभिमुख होता है। वह कैसे... ? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु राग द्वेष एवं मोह को दबाता हुआ श्रद्धेन्द्रिय ...पूर्ववत्...प्रज्ञेन्द्रिय की भावना एवं अभ्यास करता है। इस प्रकार, वह निर्वाण की ओर अग्रसर होता है"॥ ●

गङ्गापेय्यालवर्ग त्रयोदश निष्ठित हुआ॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—इस वर्ग में छह पूर्वाभिमुख नदियों की एवं छह समुद्राभिमुख नदियों की उपमा से बारह सूत्रों का व्याख्यान हुआ है॥ ●

(यहाँ भी पूर्ववर्णित समस्त १४. अप्रमाद, १५. बलकरणीय एवं १६. एषणा— तीनों ही वग्गों का भी विस्तार कर लेना चाहिये।)

१७. ओघवग्गो सत्तरसमो

१७१-१८०. ओघादिसुत्तं

१७२-१८१. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। [N.210] कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय पञ्चिन्द्रियानि भावेतब्बानि। कतमानि पञ्च? इध, भिक्खवे, भिक्खु सद्धिन्द्रियं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनय-[B.213] परियोसानं मोहविनयपरियोसानं। विरियिन्द्रियं...पे०...सतिन्द्रियं...समाधि-[R.243] न्द्रियं...पञ्ञिन्द्रियं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनय-परियोसानं। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय इमानि पञ्चिन्द्रियानि भावेतब्बानी" ति॥ ●

ओघवग्गो सत्तरसमो॥

तस्सुद्दानं

ओघो योगो उपादानं, गन्था अनुसयेन च।
कामगुणा नीवरणा, खन्धा ओरुद्धम्भागिया ति॥ ●

इन्द्रियसंयुत्तं समत्तं॥

---

१७. औघवर्ग सप्तदश

१७१-१८०. औघादिसूत्र : : औघ

१७२-१८१. ..."भिक्षुओ! ऊर्ध्वभागीय संयोजन पांच होते हैं। कौन से पाँच? रूपराग, अरूपराग, मान, औद्धत्य एवं अविद्या। भिक्षुओ! ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन होते हैं। इन संयोजनों के अभिज्ञान...पूर्ववत्...प्रहाण हेतु पाँच इन्द्रियों की भावना तथा अभ्यास करना चाहिये... ॥ ●

औघवर्ग सप्तदश सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. ओघसूत्र, २. योगसूत्र, ३. उपादानसूत्र, ४. ग्रन्थसूत्र, ५. अनुशयसूत्र, ६. कामगुणसूत्र, ७. नीवरणसूत्र, ८. उपादानस्कन्धसूत्र, ९. अवरभागीयसूत्र एवं १०. ऊर्ध्वभागीयसूत्र॥ ●

इन्द्रियसंयुक्त समाप्त॥

●

४९. सम्मप्पधानसंयुत्तं

१. गङ्गापेय्यालवग्गो पठमो

१-१२. पाचीनादिसुत्तं

[N.211; B.214, R.244] १-१२. सावत्थिनिदानं। तत्र खो भगवा एतदवोच— "चत्तारोमे, भिक्खवे, सम्मप्पधाना। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु अनुप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं अनुप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। उप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। अनुप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं उप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो सम्मप्पधाना ति।

---

४९. सम्यक्प्रधानसंयुक्त

१. गङ्गापेय्यालवर्ग प्रथम

१-१२. प्राचीनादिसूत्र : : **चार सम्यक्प्रधान**

१-१२. ...**श्रावस्ती में** ही...। भगवान् ने भिक्षुओं को यों उपदेश किया—"भिक्षुओ! सम्यक्प्रधान ये चार होते हैं। कौन से चार? यहाँ भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु (१) अनुत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों के अनुत्पादहेतु प्रयत्न करता है, श्रम करता है, चित्त को वश में करता है, उस को निगृहीत करता है—यह प्रथम सम्यक्प्रधान है (जिसे 'संवरप्रधान' कहते हैं)। (२) उत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों के प्रहाण (नाश) के लिये प्रयत्न करता है, श्रम करता है, चित्त को वश में करता है, उसे निगृहीत करता है—यह द्वितीय सम्यक्प्रधान है (जिसे 'प्रहाणप्रधान' कहते हैं)। (३) तथा अनुत्पन्न कुशल धर्मों के उत्पादहेतु इच्छा तथा प्रयत्न करता है, उधर बढ़ता है; चित्त को वश में करता है उसे निगृहीत करता है—यह तृतीय सम्यक्प्रधान है (जिसे 'भावनाप्रधान' कहते हैं)। (४) एवं उत्पन्न कुशल धर्मों की स्थिति, विपुलता एवं परिपूर्णताहेतु इच्छा तथा प्रयास करता है, उधर बढ़ता है, तदर्थ चित्त को वश में करता है, निगृहीत करता है—यह चतुर्थ सम्यक्प्रधान है (जिसे 'अनुरक्षणप्रधान' कहते हैं)। भिक्षुओ! यों ये चार सम्यक्प्रधान होते हैं।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो सम्मप्पधाने भावेन्तो चत्तारो सम्मप्पधाने बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो सम्मप्पधाने भावेन्तो चत्तारो सम्मप्पधाने बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु अनुप्पन्नानं [R.245] पापकानं अकुसलानं धम्मानं अनुप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। उप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। अनुप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं उप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो सम्मप्पधाने भावेन्तो चत्तारो सम्मप्पधाने बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥ •

गङ्गापेय्यालवग्गो पठमो॥

तस्सुद्दानं

छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो। [N.212, B.215]
द्वेते छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥

(सम्मप्पधानसंयुत्तस्स गङ्गापेय्याली सम्मप्पधानवसेन वित्थारेतब्बा।) •

''जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्वाभिमुख हो कर ही बहती है, उधर ही बढती है; उसी तरह, भिक्षुओ! इन चारों सम्यक्प्रधानों की भावना तथा अभ्यास करने वाला भिक्षु निर्वाण की ओर ही बढता है, उधर ही प्रगति करता है। कैसे भिक्षुओ! इन चारों सम्यक्प्रधानों की भावना करता हुआ निर्वाण की बढता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु...पूर्ववत्...। इस तरह, भिक्षुओ! कोई भिक्षु इन चारों सम्यक्प्रधानों की भावना करने से निर्वाण की ओर प्रगति करता है''॥ •

गङ्गापेय्यालवर्ग प्रथम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—इस वर्ग में छह पूर्वाभिमुख नदियों की एवं छह समुद्राभिमुख नदियों की उपमा का आश्रयण कर बारह सूत्रों का व्याख्यान हुआ है॥

[सम्यक्प्रधानसंयुक्त की इस गङ्गापेय्याली का 'सम्यक्प्रधान' शब्द लगा कर पूर्ववर्णित गङ्गापेय्याली के समान ही यहाँ विस्तार कर लेना चाहिये।] •

२. अप्पमादवग्गो दुतियो

तस्सुद्दानं

तथागतं पदं कूटं, मूलं सारेन वस्सिकं।
राजा चन्दिमसुरिया, वत्थेन दसमं पदं ति॥

(अप्पमादवग्गो सम्मप्पधानवसेन वित्थारेतब्बो।) •

---

२. अप्रमादवर्ग द्वितीय

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. तथागतसूत्र, २. पदसूत्र, ३. कूटसूत्र, ४. मूलसूत्र, ५. सारसूत्र, ६. वर्षिकसूत्र, ७. राजासूत्र, ८. चन्द्रमासूत्र, ९. सूर्यसूत्र एवं १०. काशिकेयवस्त्रसूत्र॥

[यह अप्रमादवर्ग भी 'सम्यक्प्रधान' शब्द लगा कर पूर्ववर्णित अप्रमादवर्ग के सम्पूर्ण पाठ के साथ विस्तार कर पढा जाय।] •

३. बलकरणीयवग्गो ततियो

२३-३४. बलकरणीयादिसुत्तं

[R.246] २३-३४. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, ये केचि बलकरणीया कम्मन्ता कयिरन्ति सब्बे ते पठविं निस्साय पठवियं पतिट्ठाय एवमेते बलकरणीया कम्मन्ता कयिरन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय चत्तारो सम्मप्पधाने भावेति, चत्तारो सम्मप्पधाने बहुलीकरोति। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय सीले पतिट्ठाय चत्तारो सम्मप्पधाने भावेति, चत्तारो सम्मप्पधाने बहुलीकरोति? इध, भिक्खवे, भिक्खु अनुप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं अनुप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति...पे०...उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु सीलं निस्साय [B.216] सीले पतिट्ठाय चत्तारो सम्मप्पधाने भावेति, चत्तारो सम्मप्पधाने बहुलीकरोती'' ति॥●

(एवं बलकरणीयवग्गो सम्मप्पधानवसेन वित्थारेतब्बो।)

बलकरणीयवग्गो ततियो॥

तस्सुद्दानं

बलं बीजं च नागो च, रुक्खो कुम्भेन सूकिया।
आकासेन च द्वे मेघा, नावा आगन्तुका नदी ति॥ ●

---

३. बलकरणीयवर्ग तृतीय

२३-३४. बलकरणीयादिसूत्र : : पाँच बल

२३-३४. ...''जैसे, भिक्षुओ! जो कुछ भी बलसाध्य कर्म हैं वे सभी पृथ्वी का आधार ले कर पृथ्वी पर आश्रित हो कर ही किये जाते हैं; इसी तरह, भिक्षुओ! शील को आधार मान कर, कोई भी साधक भिक्षु, शील पर प्रतिष्ठित हो कर इन चारों सम्यक्प्रधानों की भावना करता है। वह कैसे...भावना करता है? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु अनुत्पन्न अकुशल धर्मों की अनुत्पत्ति के लिये...पूर्ववत्...उत्पन्न कुशल धर्मों की स्थिति, विपुलता एवं वृद्धि के लिये सम्यक्प्रधानों की भावना करता हुआ प्रयत्न करता है, उद्योग करता है, चित्त को वश में करता है, उसे निगृहीत करता है। यों, भिक्षुओ! वह भिक्षु अपने शील को आधार बना कर इन चारों सम्यक्प्रधानों की भावना करता है, अभ्यास करता है॥''

[यह बलकरणीयवर्ग भी 'सम्यक्प्रधान' शब्द लगा कर पूर्व में मार्गसंयुक्त में आगत बलकरणीयवर्ग के समान विस्तृत कर लें।] •

बलकरणीयवर्ग तृतीय समाप्त॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. बलसूत्र, २. बीजसूत्र, ३. नागसूत्र, ४. वृक्षसूत्र, ५. कुम्भसूत्र, ६. शूकसूत्र, ७. आकाशसूत्र, ८. प्रथम मेघसूत्र, ९. द्वितीय मेघसूत्र, १०. नौसूत्र, ११. आगन्तुकसूत्र एवं १२. नदीसूत्र॥ •

४. एसनावग्गो चतुत्थो

३५-४५. एसनादिसुत्तं

३५-४५. ''तिस्सो इमा, भिक्खवे, एसना। कतमा तिस्सो ? कामेसना, [N.213] भवेसना, ब्रह्मचरियेसना—इमा खो, भिक्खवे, तिस्सो एसना। इमासं खो, [R.247] भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय चत्तारो सम्मप्पधाना भावेतब्बा। कतमे चत्तारो ? इध, भिक्खवे, भिक्खु अनुप्पन्नानं...पे०... उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। इमासं खो, भिक्खवे, तिस्सन्नं एसनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय इमे चत्तारो सम्मप्पधाना भावेतब्बा'' ति *(वित्थारेतब्बं।)* ॥ ●

एसनावग्गो चतुत्थो ॥

तस्सुद्दानं

एसना विधा आसवो, भवो च दुक्खता तिस्सो।
खिलं मलं च नीघो च, वेदना तण्हा तसिना चा ति॥ ●

---

४. एषणावर्ग चतुर्थ

३५-४५. एषणादिसूत्र : : त्रिविध एषणा

३५-४५. ...''भिक्षुओ ! एषणा त्रिविध होती हैं। कौन सी तीन ? कामैषणा, भवैषणा, ब्रह्मचर्यैषणा—भिक्षुओ ! ये तीन एषणा होती हैं। भिक्षुओ ! इन तीन एषणाओं की अभिज्ञा, परिज्ञा, परिक्षय एवं परिहाण हेतु इन चार सम्यक्प्रधानों की भावना तथा अभ्यास करना चाहिये। कौन से चार ? ...पूर्ववत्...। *(विस्तार कर लें।)* ॥ ●

एषणावर्ग चतुर्थ सम्पन्न ॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. एषणासूत्र, २. विधासूत्र, ३. आश्रवसूत्र, ४. भवसूत्र, ५. दुःखतासूत्र, ६. खिलसूत्र, ७. मलसूत्र, ८. नीघसूत्र, ९. वेदनासूत्र, १०. तृष्णासूत्र एवं ११. तर्षणासूत्र ॥ ●

५. ओघवग्गो पञ्चमो

४६-५५. ओघादिसुत्तं

[B.217] ४६-५५. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय चत्तारो सम्मप्पधाना भावेतब्बा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु अनुप्पन्नानं...पे०...उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय [R.248] भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय इमे चत्तारो सम्मप्पधाना भावेतब्बा" ति *(वित्थारेतब्बो)*॥

•

ओघवग्गो पञ्चमो॥

तस्सुद्दानं

ओघो योगो उपादानं, गन्था अनुसयेन च।
कामगुणा नीवरणा, खन्धा ओरुद्धम्भागिया ति॥

•

सम्मप्पधानसंयुत्तं समत्तं॥

---

५. औघवर्ग पञ्चम

४६-५५. औघादिसूत्र : : औघ (बाढ)

४६-५५. ..."भिक्षुओ! ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। कौन से पाँच? रूपराग, अरूपराग, मान, औद्धत्य एवं अविद्या—ये, भिक्षुओ! पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। इन पाँचों ऊर्ध्वभागीय संयोजनों की अभिज्ञा, परिज्ञा, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये चारों सम्यक्प्रधानों की भावना करनी चाहिये। कौन से चार सम्यक्प्रधान? यहाँ, भिक्षुओ! अनुत्पन्न अकुशल धर्मों के अनुत्पाद के लिये...पूर्ववत्...उत्पन्न कुशल धर्मों की स्थिति, वृद्धि, विपुलता एवं असम्मोष के लिये...पूर्ववत्...चारों सम्यक्प्रधानों की भावना करनी चाहिये"॥ *(पूर्ववत् समस्तवर्ग का विस्तार कर लें।)*

•

औघवर्ग पञ्चम परिसमाप्त॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. ओघ, २. योग, ३. उपादान, ४. ग्रन्थ, ५. अनुशय, ६. कामगुण, ७. नीवरण, ८. स्कन्ध, ९. अवरभागीय एवं १०. ऊर्ध्वभागीय-सूत्र॥

•

सम्यक्प्रधानसंयुक्त समाप्त॥

५०. बलसंयुत्तं

१. गङ्गापेय्यालवग्गो पठमो

१-१२. बलादिसुत्तं

१-१२. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, बलानि। कतमानि [N.214, B.218, R.249] पञ्च? सद्धाबलं, विरियबलं, सतिबलं, समाधिबलं, पञ्ञाबलं—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्च बलानी ति। सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गानदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्च बलानि भावेन्तो पञ्च बलानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु पञ्च बलानि भावेन्तो पञ्च बलानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सद्धाबलं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं, विरियबलं...पे०...सतिबलं... समाधिबलं...पञ्ञाबलं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्च बलानि भावेन्तो पञ्च बलानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो" ति॥ •

गङ्गापेय्यालवग्गो पठमो॥

---

५०. बलसंयुक्त

१. गङ्गापेय्यालवग्गो पठमो

१-१२. बलादिसूत्र : : पाँच बल

१-१२. "भिक्षुओ! ये पाँच बल हैं। कौन से पाँच? श्रद्धाबल, वीर्यबल, स्मृतिबल, समाधिबल एवं प्रज्ञाबल—भिक्षुओ! ये पाँच बल हैं। जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्वाभिमुख हो कर बहती है, उधर ही वह बढती है; इसी तरह, भिक्षुओ! कोई भिक्षु इन पाँच बलों की भावना एवं अभ्यास करता हुआ निर्वाणाभिमुख ही होता है, उधर ही बढता है। भिक्षुओ! यह कैसे होता है? यहाँ वह भिक्षु विवेक वैराग्य निरोध एवं त्याग का आश्रय ले कर श्रद्धाबल की...वीर्यबल की...स्मृतिबल की...समाधिबल की...प्रज्ञाबल की भावना करता है, अभ्यास करता है तो वह उस के सहारे से निर्वाण की ओर बढता है, उधर ही प्रगति करता है। यों, भिक्षुओ! ...निर्वाण की ओर बढता है"॥ *(पूर्ववत् विस्तार कर लें।)*

गङ्गापेय्यालवर्ग प्रथम सम्पन्न॥

तस्सुद्दानं

[R.250] छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो।
द्वेते छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—छह पूर्वाभिमुख तथा छह समुद्राभिमुख बहने वाली नदियों की उपमा से बारह सूत्रों का व्याख्यान इस वर्ग में है॥

२. अप्पमादवग्गो दुतियो

(अप्पमादवग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

तथागतं पदं कूटं, मूलं सारेन वस्सिकं।
राजा चन्दिमसुरिया, वत्थेन दसमं पदं ति॥ •

३. बलकरणीयवग्गो ततियो

(बलकरणीयवग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

बलं बीजं च नागो च, रुक्खो कुम्भेन सूकिया। [B.219]
आकासेन च द्वे मेघा, नावा आगन्तुका नदी ति॥ •

४. एसनावग्गो चतुत्थो

(एसनावग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

एसना विधा आसवो, भवो च दुक्खता तिस्सो। [N.215]
खिलं मलं च नीघो च, वेदना तण्हा तसिना चा ति॥ •

---

२. अप्रमादवर्ग द्वितीय

(पूर्ववत् अप्रमादवर्ग का विस्तार कर लें।)

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. तथागतसूत्र, २. पदसूत्र, ३. कूटसूत्र, ४. मूलगन्धसूत्र, ५. सारगन्धसूत्र, ६. वर्षिकसूत्र, ७. राजासूत्र, ८. चन्द्रमासूत्र, ९. सूर्यसूत्र एवं १०. काशिकेयवस्त्रसूत्र॥ •

३. बलकरणीयवर्ग तृतीय

(इस वर्ग का भी पूर्ववत् विस्तार कर लें।) •

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. बलसूत्र, २. बीजसूत्र, ३. नागसूत्र, ४. वृक्षसूत्र, ५. कुम्भसूत्र, ६. शूकसूत्र, ७. आकाशसूत्र, ८. प्रथम मेघसूत्र, ९. द्वितीय मेघसूत्र, १०. आगन्तुकसूत्र एवं ११. नदीसूत्र॥ •

४. एषणावर्ग चतुर्थ

(इस एषणावर्ग का भी पूर्ववत् विस्तार कर लें।) •

इस एषणावर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. एषणासूत्र, २. विधासूत्र, ३. आश्रवसूत्र, ४. भवसूत्र, ५. दुःखतासूत्र, ६. खिलसूत्र, ७. मलसूत्र, ८. नीघसूत्र, ९. वेदनासूत्र, १०. तृष्णासूत्र एवं ११. तर्षणासूत्र॥ •

५. ओघवग्गो पञ्चमो

४६-५५. ओघादिसुत्तं

[R.251] ४६-५५. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय पञ्च बलानि भावेतब्बानि। कतमानि पञ्च? इध, भिक्खवे, भिक्खु सद्धाबलं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं, विरियबलं...पे०...सतिबलं...समाधिबलं...पञ्ञाबलं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय इमानि पञ्च बलानि भावेतब्बानी" ति *(एवं वित्थारेतब्बा)*॥ •

६. गङ्गापेय्यालवग्गो षष्ठो

५६-६७. पाचीनादिसुत्तं

[B.220] ५६-६७. "सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा [R.252] पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्च बलानि भावेन्तो पञ्च बलानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु पञ्च बलानि भावेन्तो पञ्च बलानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति

---

५. औघवर्ग पञ्चम

४६-५५. ऊर्ध्वभागीयादिसूत्र : : ऊर्ध्वभागीय संयोजन

४६-५५. ..."भिक्षुओ! पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। कौन से पाँच? रूपराग, अरूपराग, मान, औद्धत्य एवं अविद्या—ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। भिक्षुओ! इन पाँचों ऊर्ध्वभागीय संयोजनों की अभिज्ञा, परिज्ञा, परिक्षय एवं प्रहाणहेतु उक्त पाँचों बलों की भावना करनी चाहिये। कौन से पाँच? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागयुक्त श्रद्धाबल...वीर्यबल ...स्मृतिबल...समाधिबल...एवं प्रज्ञाबल की भावना करता है...पूर्ववत्...॥

(इसी तरह समस्त वर्ग का विस्तार कर लें।) •

६. गङ्गापेय्यालवर्ग षष्ठ

५६-६७. प्राचीनादिसूत्र : : निर्वाण की ओर बढना

५६-६७. ..."जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्वाभिमुख बहती है, उसी तरह, भिक्षुओ!

निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु सद्धाबलं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पञ्च बलानि भावेन्तो पञ्च बलानि बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति *(वित्थारेतब्बा)*॥ •

गङ्गापेय्यालवग्गो छट्ठो॥

तस्सुद्दानं

छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो।
द्वेते छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥ •

भिक्षु पाँच बलों की भावना करता हुआ निर्वाण की ओर बढता है। वह कैसे? भिक्षुओ! वह भिक्षु राग द्वेष एवं मोह को निगृहीत करता हुआ श्रद्धाबल...प्रज्ञाबल की भावना करता है तो उस की निर्वाण की ओर ही प्रगति होती है''॥ •

(समस्त वर्ग का पूर्ववत् विस्तार कर लें।)

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—छह पूर्वाभिमुख एवं छह समुद्राभिमुख नदियों के दृष्टान्त से इस वर्ग में बारह सूत्रों का वर्णन है॥ •

७. अप्पमादवग्गो सत्तमो

८. बलकरणीयवग्गो अट्ठमो

(अप्पमाद-बलकरणीयवग्गा बलवसेन वित्थारेतब्बा।)

९. एसनावग्गो नवमो

९०-१००. एसनादिसुत्तं

[N.216] ९०-१००. (एवं एसनापालि वित्थारेतब्बा—रागविनयपरियोसानं दोस-विनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं।)

एसनावग्गो नवमो॥

तस्सुद्दानं

एसना विधा आसवो, भवो च दुक्खता तिस्सो।
खिलं मलं च नीघो च, वेदना तण्हा तसिना चा ति॥

---

७. अप्रमादवर्ग सप्तम

८. बलकरणीयवर्ग अष्टम

(इन दोनों वर्गों का भी पूर्ववत् विस्तार कर लें।)

९. एषणावर्ग नवम

(इस वर्ग का भी पूर्ववत् विस्तार कर लें।)

एषणावर्ग नवम सम्पन्न॥

९०-१००. एषणादिसूत्र : : त्रिविध एषणा

९०-१००. *(इस एषणापालि का 'राग द्वेष एवं मोह का निग्रह' लगा कर पूर्ववत् विस्तार कर लेना चाहिये।)*

इस एषणावर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—उपरिवत् (१. एषणासूत्र... ११. तर्षणासूत्र)॥

१०. ओघवग्गो दसमो

१०१-११०. ओघादिसुत्तं

१००-११०. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि खो, [B.221, R.253] भिक्खवे, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय पञ्च बलानि भावेतब्बानि। कतमानि पञ्च? इध, भिक्खवे, भिक्खु सद्धाबलं भावेति...पे०...पञ्ञाबलं भावेति रागविनयपरियोसानं दोसविनयपरियोसानं मोहविनयपरियोसानं। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय। इमानि पञ्च बलानि भावेतब्बानी" ति॥ ●

ओघवग्गो दसमो॥

तस्सुद्दानं

ओघो योगो उपादानं, गन्था अनुसयेन च।
कामगुणा नीवरणा, खन्धा ओरुद्धम्भागिया ति॥ ●

बलसंयुत्तं समत्तं॥

---

१०. औघवर्ग दशम

१०१-११०. औघादिसूत्र : : औघ (बाढ)

१०१-११०. ..."भिक्षुओ! ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। कौन से पाँच? रूपराग, अरूपराग, मान, औद्धत्य एवं अविद्या। भिक्षुओ! इन पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजनों की अभिज्ञा, परिज्ञा, परिक्षय एवं प्रहाणहेतु पाँच बलों की भावना एवं अभ्यास करना चाहिये। कौन से पाँच? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु राग द्वेष एवं मोह को निगृहीत करता हुआ श्रद्धाबल...पूर्ववत्... प्रज्ञाबल की भावना करता है उन संयोजनों की अभिज्ञा, परिज्ञा, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये। ...इन पाँच बलों का भावना करनी चाहिये"॥ ●

औघवर्ग दशम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. ओघसूत्र, २. योगसूत्र, ३. उपादानसूत्र, ४. ग्रन्थसूत्र, ५. अनुशयसूत्र, ६. कामगुणसूत्र, ७. नीवरणसूत्र, ८. स्कन्धसूत्र, ९. अवर-भागीयसूत्र एवं १०. ऊर्ध्वभागीयसूत्र॥ ●

बलसंयुक्त सम्पन्न॥

५१. इद्धिपादसंयुत्तं

१. चापालवग्गो पठमो

१. अपारसुत्तं

[N.217, B.222, R.254] १. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, इद्धिपादा भाविता बहुलीकता अपारा पारं गमनाय संवत्तन्ति। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधान-सङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, चित्तसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खार-समन्नागतं इद्धिपादं भावेति। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता अपारा पारं गमनाय संवत्तन्ती'' ति॥ ●

२. विरद्धसुत्तं

२. ''येसं केसञ्चि, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा विरद्धा, विरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी। येसं केसञ्चि, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा आरद्धा, आरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु

---

५१. ऋद्धिपादसंयुक्त

१. चापालवर्ग प्रथम

१. अपारसूत्र : : चार ऋद्धिपाद

१. ...''भिक्षुओ! इन चार ऋद्धिपादों की भावना तथा अभ्यास किये जाने से साधक भिक्षु अनन्त (अपार) से अन्त (पार) की ओर बढने लगता है। कौन से चार? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु छन्दसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है; (२) कोई वीर्यसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है; (३) कोई चित्तसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है; तथा (४) कोई मीमांसासमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है। भिक्षुओ! ये चार ऋद्धिपाद, भावित एवं अभ्यस्त किये जाने पर, अनन्त से अन्त की ओर पहुँचाने में समर्थ होते हैं''॥ ●

२. विरद्धसूत्र : : चार ऋद्धिपाद

२. ...''भिक्षुओ! जिस किसी भिक्षु के द्वारा इन चारों ऋद्धिपादों की भावना एवं अभ्यास में कोई बाधा (प्रमाद) पड़ गयी तो समझ लो कि उस का सम्यक् दुःखक्षयकारक आर्यमार्ग ही अवरुद्ध हो गया। तथा जिसने इन की भावना तथा अभ्यास विना किसी विघ्न बाधा या प्रमाद के पूर्ण कर लिये तो उस को समझ लो कि वह सम्यक् दुःखक्षयकारक

छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि ...पे०...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। येसं केसञ्चि, [R.255] भिक्खवे, इमे चत्तारो इद्धिपादा विरद्धा, विरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खय-गामी। येसं केसञ्चि, भिक्खवे, इमे चत्तारो इद्धिपादा आरद्धा, आरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी'' ति॥ ●

३. अरियसुत्तं

३. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, इद्धिपादा भाविता बहुलीकता अरिया निय्यानिका निय्यन्ति तक्करस्स सम्मा दुक्खक्खयाय। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि ...पे०...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। इमे [N.218, B.223] खो, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता अरिया निय्यानिका निय्यन्ति तक्करस्स सम्मा दुक्खक्खयाया'' ति॥ ●

४. निब्बिदासुत्तं

४. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, इद्धिपादा भाविता बहुलीकता एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ति। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति,

---

आर्यमार्ग पर चल पड़ा। कौन से चार? यहाँ कोई भिक्षु छन्दसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त...पूर्ववत्...मीमांसासमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है। अतः भिक्षुओ! जिस भिक्षु ने इन चारों ऋद्धिपादों की भावना तथा अभ्यास पूर्ण कर लिया तो उस के लिये समझ लो कि वह आर्यमार्ग पर भली भाँति चल पड़ा''॥ ●

३. आर्यसूत्र : : ऋद्धिपाद दुःखक्षयकारक

३. ...''भिक्षुओ! इन चारों ऋद्धिपादों की भली भाँति साधना तथा अभ्यास करने से ये दुःखक्षय में सर्वथा समर्थ होते हैं। कौन से चार? छन्दसमाधि...वीर्यसमाधि... चित्तसमाधि...मीमांसासमाधि...पूर्ववत्। भिक्षुओ! ये चार ऋद्धिपाद इस प्रकार साधक का दुःखक्षय करने में सर्वथा समर्थ हो जाते हैं''॥ ●

४. निर्विदासूत्र : : ऋद्धिपाद निर्वाणदायक

४. ...''भिक्षुओ! ये चारों ऋद्धिपाद सम्यक्तया साधना तथा अभ्यास करने से साधक को एकान्ततः संसार के प्रति अरुचि (ग्लानि), वैराग्य, निरोध, शान्ति, अभिज्ञा, सम्बोधि एवं निर्वाण तक पहुँचाने में समर्थ होते हैं। कौन से चार? छन्दसमाधि...

विरियसमाधि...पे०... चित्तसमाधि...पे०...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धि-पादं भावेति। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ती'' ति॥ ●

५. इद्धिपदेससुत्तं

[R.256] ५. ''ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा इद्धिपदेसं अभिनिप्फादेसुं सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा इद्धिपदेसं अभिनिप्फादेस्सन्ति सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि समणा वा ब्राह्मणा वा इद्धिपदेसं अभिनिप्फादेन्ति सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुली-कतत्ता। कतमेसं चतुन्नं? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...पे०...वीमंसासमाधिप्पधान-सङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा इद्धिपदेसं अभिनिप्फादेसुं सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा इद्धिपदेसं अभिनिप्फादेस्सन्ति सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि समणा वा ब्राह्मणा वा इद्धिपदेसं अभिनिप्फादेन्ति सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता'' ति॥ ●

६. समत्तसुत्तं

[N.219, B.224] ६. ''ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा समत्तं

वीर्यसमाधि...चित्तसमाधि... मीमांसासमाधि...। ये चारों ऋद्धिपाद...पूर्ववत्...समर्थ हो जाते हैं''॥ ●

५. ऋद्धिप्रदेशसूत्र : : ऋद्धिपाद की आंशिक साधना

५. ...''भिक्षुओ! अतीत (भूत) काल में जो भी कोई श्रमण ब्राह्मण किसी ऋद्धि का अपने लिये कुछ भी उत्पादन कर पाया तो वह केवल इन ऋद्धिपादों की साधना एवं अभ्यास से। अनागत (भविष्य) काल में भी कोई श्रमण ब्राह्मण अपने लिये किसी ऋद्धि का कुछ भी उत्पादन कर सकेंगे वह भी इन्हीं ऋद्धिपादों की भावना तथा अभ्यास से। तथा वर्तमानकाल में भी जो कोई श्रमण ब्राह्मण अपने लिये कुछ भी ऋद्धि का उत्पाद कर रहे हैं वे भी इन ऋद्धिपादों की भावना तथा अभ्यास से ही प्राप्त कर रहे हैं। किन चार की? छन्दसमाधि...वीर्यसमाधि... चित्तसमाधि...मीमांसासमाधि...पूर्ववत्''॥ ●

इद्धिं अभिनिप्फादेसुं सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा समत्तं इद्धिं अभिनिप्फादेस्सन्ति सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि समणा वा ब्राह्मणा वा समत्तं इद्धिं अभिनिप्फादेन्ति सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। कतमेसं चतुन्नं? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...पे०...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा समत्तं इद्धिं अभिनिप्फादेसुं सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा समत्तं इद्धिं अभिनिप्फादेस्सन्ति सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि समणा वा ब्राह्मणा वा समत्तं इद्धिं अभिनिप्फादेन्ति सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता'' ति॥ ●

७. भिक्खुसुत्तं

७. ''ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं भिक्खू आसवानं खया [R.257] अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरिंसु सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं भिक्खू आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरिस्सन्ति सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता

---

६. समस्तसूत्र : : ऋद्धिपाद की पूर्ण साधना

६. ...''भिक्षुओ! जिन श्रमण ब्राह्मणों ने अतीत काल में जो भी ऋद्धि प्राप्त की है वह इन चारों ऋद्धिपादों की समस्त साधना एवं अभ्यास से ही प्राप्त की है; अनागत काल में भी...ऋद्धि प्राप्त करेंगे वह इन चारों ऋद्धिपादों की समस्त साधना से ही प्राप्त होती है; तथा वर्तमान काल में जिन श्रमण ब्राह्मणों ने कोई ऋद्धि प्राप्त की है वह इन चारों ऋद्धिपादों की समस्त साधना से ही प्राप्त हुई है। किन चार की? छन्दसमाधि...वीर्यसमाधि... चित्तसमाधि...मीमांसासमाधि...। यों, भिक्षुओ! अतीत...अनागत...वर्तमान काल में...समस्त साधना से ही प्राप्त हुई है''॥ ●

७. भिक्षुसूत्र : : ऋद्धिपाद की साधना से अर्हत्त्व

७. ...''भिक्षुओ! जिन भिक्षुओं ने अतीत में आश्रवों के क्षय से अनाश्रव चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जान कर साक्षात्कार कर, प्राप्त कर साधना की थी, उन सभी ने इन्हीं ऋद्धिपादों की भावना एवं अभ्यास द्वारा ही की थी; अनागत में...साधना

बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि भिक्खू आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति सब्बे [B.225] ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। कतमेसं चतुन्नं? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि ...पे०... [N.220] चित्तसमाधि...पे०...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं भिक्खू आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरिंसु सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं भिक्खू आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरिस्सन्ति सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि भिक्खू आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता'' ति॥ ●

८. बुद्धसुत्तं

८. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, इद्धिपादा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि ...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता तथागतो 'अरहं सम्मासम्बुद्धो' ति वुच्चती'' ति॥ ●

९. ञाणसुत्तं

[R.258] ९. '''अयं छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो' ति मे, भिक्खवे,

---

करेंगे वे सभी...करेंगे; तथा वर्तमान काल में भी...कर रहे हैं...कर रहे हैं। किन चारों की? छन्दसमाधि...वीर्यसमाधि...चित्तसमाधि...मीमांसासमाधि...। ...पूर्ववत्...''॥ ●

८. बुद्धसूत्र : : ऋद्धिपादों की साधना से बुद्धत्व

८. ...''भिक्षुओ! ये चार ऋद्धिपाद हैं। कौन से चार? छन्दसमाधि...वीर्यसमाधि... चित्तसमाधि...मीमांसासमाधि...। भिक्षुओ! ये चार ऋद्धिपाद हैं। इन चारों की समस्त साधना एवं अभ्यास के बाद ही तथागत को 'अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध'—ऐसा कहा जाता है''॥ ●

९. ज्ञानसूत्र : :

९. ...''भिक्षुओ! 'यह छन्दसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद है'—ऐसा

पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'सो खो पनायं छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो भावेतब्बो' ति मे, भिक्खवे...'भावितो' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।

"'अयं विरियसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो' ति मे, [B.226] भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'सो खो पनायं विरियसमाधिप्पधानसङ्खार-समन्नागतो इद्धिपादो भावेतब्बो' ति मे, भिक्खवे...'भावितो' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा [N.221] उदपादि, आलोको उदपादि।

"'अयं चित्तसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'सो खो पनायं चित्तसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो भावेतब्बो' ति मे, भिक्खवे...'भावितो' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।

मुझे पहले न सुने गये धर्मों के विषय में चक्षु उत्पन्न हुआ, ज्ञान उत्पन्न हुआ, प्रज्ञा उत्पन्न हुई, विद्या उत्पन्न हुई, आलोक उत्पन्न हुआ; फिर, भिक्षुओ! 'इस छन्दसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करनी चाहिये'—ऐसा मुझे पहले न सुने गये धर्मों के विषय में चक्षु...ज्ञान...प्रज्ञा...विद्या...आलोक उत्पन्न हुआ; फिर, भिक्षुओ! 'मैं इस छन्दसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना पूर्ण कर चुका हूँ'—ऐसा मुझे पहले न सुने गये धर्मों के विषय में चक्षु...ज्ञान...प्रज्ञा...विद्या...आलोक उत्पन्न हुआ।

"भिक्षुओ! 'यह वीर्यसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद है'—ऐसा मुझे ...पूर्ववत्...; 'इस वीर्यसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की मुझे भावना करनी चाहिये'—ऐसा मुझे...पूर्ववत्...; 'इस वीर्यसमाधि...की मैंने भावना पूर्ण कर ली है'—ऐसा मुझे पहले न सुने गये धर्मों के विषय में चक्षु...ज्ञान...प्रज्ञा...विद्या...आलोक उत्पन्न हुआ।

"भिक्षुओ! 'यह चित्तसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद है'—ऐसा मुझे ...पूर्ववत्...; 'इस चित्तसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की मुझे भावना करनी चाहिये'—ऐसा मुझे...; 'इस चित्तसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की मैंने भावना

"'' अयं वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'सो खो पनायं वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो भावेतब्बो' ति मे, भिक्खवे...'भावितो' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादी'' ति॥

१०. चेतियसुत्तं[1]

१०. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावनं कूटागारसालायं। [R.259] अथ खो भगवा पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय वेसालिं पिण्डाय पाविसि। वेसालियं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—''गण्हाहि, आनन्द, निसीदनं। येन चापालं चेतियं तेनुपसङ्कमिस्साम दिवाविहाराया'' ति। ''एवं भन्ते'' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा [B.227] निसीदनं आदाय भगवन्तं पिट्ठितो पिट्ठितो अनुबन्धि। अथ खो भगवा येन चापालं चेतियं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। आयस्मा पि खो

पूर्ण कर ली है'—ऐसा मुझे पहले न सुने गये धर्मों के विषय में चक्षु...ज्ञान...प्रज्ञा... विद्या...आलोक उत्पन्न हुआ।

''भिक्षुओ! 'यह मीमांसासमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद है'—ऐसा मुझे...पूर्ववत्...; 'इस मीमांसासमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की मुझे भावना करनी चाहिये'—ऐसा मुझे...; 'इस मीमांसासमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की मैने भावना पूर्ण कर ली है'—ऐसा मुझे पहले न सुने गये धर्मों के विषय में चक्षु...ज्ञान... प्रज्ञा...विद्या...आलोक उत्पन्न हुआ''॥

१०. चैत्यसूत्र : : भगवान् द्वारा जीवन-शक्ति का त्याग

१०. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **वैशाली के** महावन में स्थित कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजमान थे। तब किसी दिन पूर्वाह्न में भगवान् वस्त्र व्यवस्थित कर, पात्रचीवर ले कर, भिक्षाहेतु वैशाली नगर में प्रविष्ट हुए। भिक्षा के अनन्तर, भोजन कृत्य कर, भगवान् ने आयुष्मान् आनन्द को आदेश दिया—''आनन्द! आसन उठाओ। चलो, दैवसिक साधना के लिये चापाल चैत्य चलें।'' ''अच्छा, भन्ते!'' कह कर आनन्द ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य कर आसन ले कर भगवान् का अनुगमन किया। तब

---

१. सुत्तमिदं **दीघनिकाये** महापरिनिब्बानसुत्ते पि सङ्खेपेन वण्णितं ति तत्थापि ओलोकेतब्बं। —सं०

आनन्दो भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं आनन्दं भगवा एतदवोच–

"रमणीया, आनन्द, वेसाली, रमणीयं उदेनं चेतियं, रमणीयं गोतमकं चेतियं, रमणीयं सत्तम्बं चेतियं, रमणीयं बहुपुत्तं चेतियं, रमणीयं सारन्ददं चेतियं, [N.222] रमणीयं चापालं चेतियं। यस्स कस्सचि, आनन्द, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा सो आकङ्खमानो कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसं वा। तथागतस्स खो, आनन्द, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा। आकङ्खमानो, आनन्द, तथागतो कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसं वा" ति।

एवं पि खो आयस्मा आनन्दो भगवता ओळारिके निमित्ते कयिरमाने ओळारिके ओभासे कयिरमाने नासक्खि पटिविज्झितुं; न भगवन्तं याचि–"तिट्ठतु, भन्ते, भगवा कप्पं, तिट्ठतु सुगतो कप्पं बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं" ति, यथा तं मारेन परियुट्ठितचित्तो।

दुतियं पि खो भगवा...पे०...ततियं पि खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं [R.260]

भगवान् चापाल चैत्य पहुँचे तथा आयुष्मान् आनन्द द्वारा विछाये हुए आसन पर विराजे। आयुष्मान् आनन्द भी भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् आनन्द को भगवान् ने यह कहा–

महापरिनिर्वाण का सङ्केत–"आनन्द! यह वैशाली नगर स्वत: शोभासम्पन्न अतएव रमणीय है। इस में उदयन चैत्य, सप्ताम्र चैत्य, बहुपुत्र चैत्य, सारन्दद चैत्य एवं चापाल चैत्य तो अत्यधिक रमणीय हैं। आनन्द! जिस किसी भी साधक भिक्षु ने चारों ऋद्धिपादों को भली भाँति साधना पूर्ण कर ली है, वह चाहे तो कल्प भर यहाँ जीवित रह कर ठहर सकता है या कल्प के कुछ भाग तक। आनन्द! तथागत ने (मैंने) इन ऋद्धिपादों की साधना भली भाँति पूर्ण कर ली है, अत: तथागत जितना चाहें–कल्पपर्यन्त या कल्प के कुछ भाग तक, जीवित रहते हुए ठहर सकते हैं।"

भगवान् द्वारा अपने जीवन का इतना स्पष्ट सङ्केत देने पर भी, भगवान् का यह सङ्केत आयुष्मान् आनन्द के समझ में न आया। तथा वे यह प्रमाद कर बैठे कि भगवान् से उन्होंने यह निवेदन नहीं किया–"भन्ते! भगवान् बहुजनहिताय बहुजनसुखाय कल्पपर्यन्त यहाँ विराजें। इस से आप की लोक पर अनुकम्पा होगी। इतने समय तक आप का यहाँ विराजना धर्मप्रेमी जनता के लिये हितकर एवं सुखकर ही होगा।" ऐसा अनुमान होता है कि उस समय आयुष्मान् आनन्द के चित्त पर पापी मार ने अपना प्रभाव जमा लिया था।

आमन्तेसि—"रमणीया, आनन्द, वेसाली, रमणीयं उदेनं चेतियं, रमणीयं गोतमकं [N.222] चेतियं, रमणीयं सत्तम्बं चेतियं, रमणीयं बहुपुत्तं चेतियं, रमणीयं सारन्ददं चेतियं, रमणीयं चापालं चेतियं। यस्स कस्सचि, आनन्द, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा सो आकङ्खमानो कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसं वा। तथागतस्स खो, आनन्द, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा। आकङ्खमानो, आनन्द, तथागतो कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसं वा" ति।

[B.228] एवं पि खो आयस्मा आनन्दो भगवता ओळारिके निमित्ते कयिरमाने ओळारिके ओभासे कयिरमाने नासक्खि पटिविज्झितुं; न भगवन्तं याचि—"तिट्ठतु, भन्ते, भगवा कप्पं, तिट्ठतु सुगतो कप्पं बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं" ति यथा तं मारेन परियुट्ठितचित्तो।

अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—"गच्छ खो त्वं, आनन्द, यस्स दानि कालं मञ्ञसी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा [N.223] उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा अविदूरे अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले निसीदि।

अथ खो मारो पापिमा, अचिरपक्कन्ते आयस्मन्ते आनन्दे, येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं एतदवोच—"परिनिब्बातु दानि, भन्ते, भगवा,

---

दूसरी बार भी भगवान्...पूर्ववत्...तीसरी बार भी भगवान् ने आयुष्मान् आनन्द से भगवान् ने कहा—"आनन्द! यह वैशाली नगर स्वत: शोभासम्पन्न है...पूर्ववत्...कल्प के कुछ भाग तक, अपनी इच्छानुसार ठहर सकते हैं।"

तब भी भगवान् का यह स्पष्ट सङ्केत आयुष्मान् आनन्द समझ नहीं सके, मानो उस समय पापी मार उन के चित्त पर अधिष्ठित हो गया। इसी लिये वे भगवान् से यह निवेदन भी न कर पाये कि भगवान् यहाँ बहुजनहिताय बहुजनसुखाय कल्पपर्यन्त विराजमान रहें। यही देवमनुष्यों के लिये अत्यधिक हितकर एवं सुखकर होगा।

एतदनन्तर (जब आयुष्मान् आनन्द भगवान् का स्पष्ट सङ्केत भी न समझ पाने के कारण उन से यहाँ ठहरने के विषय में कोई निवेदन न कर पाये, तब) भगवान् ने आयुष्मान् आनन्द से कहा—"आनन्द! मुझे जो कहना था, कह चुका, अब तुम जैसा उचित समझो, कर सकते हो।" "अच्छा, भन्ते!" कहते हुए आयुष्मान् आनन्द वहाँ से उठे और उन्हें प्रणाम प्रदक्षिणा कर समीप ही किसी वृक्ष के नीचे साधनाहेतु जा बैठे।

पापी मार का भगवान् से संवाद—आयुष्मान् आनन्द के भगवान् के सामने से

परिनिब्बातु दानि सुगतो! परिनिब्बानकालो दानि, भन्ते, भगवतो। भासिता खो पनेसा, भन्ते, भगवता वाचा—'न तावाहं, पापिम, परिनिब्बायिस्सामि याव मे भिक्खू [R.261] न सावका भविस्सन्ति वियत्ता विनीता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामीचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनो, सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञापेस्सन्ति पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानीकरिस्सन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ती' ति। सन्ति खो पन, भन्ते, एतरहि भिक्खू भगवतो सावका वियत्ता विनीता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामीचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनो, सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खन्ति देसेन्ति पञ्ञापेन्ति पट्ठपेन्ति विवरन्ति विभजन्ति उत्तानीकरोन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेन्ति। परिनिब्बातु दानि, भन्ते, भगवा, परिनिब्बातु दानि सुगतो! परिनिब्बानकालो दानि, भन्ते, भगवतो।

"भासिता खो पनेसा, भन्ते, भगवता वाचा—'न तावाहं, पापिम, परिनिब्बायिस्सामि याव मे भिक्खुनियो न साविका भविस्सन्ति वियत्ता विनीता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामीचिप्पटिपन्ना अनुधम्म- [B.229] चारिनियो, सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञापेस्सन्ति

चले जाने के बाद पापी मार भगवान् के पास आया, तथा यों कहने लगा—"भन्ते! भगवान् परिनिर्वाण प्राप्त करें, सुगत! आप परिनिर्वाण प्राप्त करें। आप के परिनिर्वाण का यही समय उचित है; क्यों कि पहले कभी आपने कहा था—'पापिन्! मैं तब तक परिनिर्वृत न होऊँगा जब तक मेरे **भिक्षु शिष्य** धर्मविनय में चतुर, अनुशिष्ट, कुशल, योगक्षेमप्राप्त, बहुश्रुत, धर्मधर, धर्मानुधर्मप्रतिपन्न, सन्मार्ग (आर्यमार्ग पर आरूढ), धर्मानुकूल आचरण करने वाले, आचार्य से शिक्षा प्राप्त कर ही धर्मोपदेशक बनने वाले, धर्म के बताने वाले, धर्मसिद्धान्तों के स्थापक, धर्म की आचार्यमुष्टियाँ खोलने वाले, उन का विश्लेषण करने वाले, धर्म का स्पष्टीकरण करने वाले न हो जायँ, तथा सङ्घ में उत्पन्न किसी विवाद के शमनहेतु एक स्थान पर बैठ कर कोई उचित एवं बुद्धिमत्तापूर्ण निर्णय लेने की स्थिति में न आ जायँ। भन्ते! अब आप के शिष्य आप के बताये धर्म की साधना करते करते उन सब गुणों एवं विशेषताओं को प्राप्त कर चुके जो आप को उन के लिये अभीष्ट थे। अतः भन्ते! अब आप परिनिर्वाण ले ही लें। आप के परिनिर्वाण का यह समय उचित ही है।

"भन्ते! आप ने यह भी कहा था—'पापिन् मार! मैं तब तक परिनिवृत नहीं होऊँगा जब तक मेरी **भिक्षुणी शिष्याएँ**...पूर्ववत्...**मेरे उपासक**...पूर्ववत्...**मेरी उपासिकाएँ**

पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानीकरिस्सन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ती' ति। सन्ति खो पन, भन्ते, एतरहि भिक्खुनियो भगवतो साविका वियत्ता विनीता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानु- [N.224] धम्मप्पटिपन्ना सामीचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनियो, सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खन्ति देसेन्ति पञ्ञापेन्ति पट्ठपेन्ति विवरन्ति विभजन्ति उत्तानीकरोन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेन्ति। परिनिब्बातु दानि, भन्ते, भगवा, परिनिब्बातु दानि सुगतो! परिनिब्बानकालो दानि, भन्ते, भगवतो।

"भासिता खो पनेसा, भन्ते, भगवता वाचा—'न तावाहं, पापिम, परिनिब्बायिस्सामि याव मे उपासका...पे०...याव मे उपासिका न साविका भविस्सन्ति वियत्ता विनीता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामीचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनियो, सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञापेस्सन्ति पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानीकरिस्सन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ती' ति। सन्ति खो पन, भन्ते, एतरहि [R.262] उपासका...उपासिका भगवतो साविका वियत्ता विनीता विसारदा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामीचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनियो, सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खन्ति देसेन्ति पञ्ञापेन्ति पट्ठपेन्ति विवरन्ति विभजन्ति उत्तानीकरोन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेन्ति। परिनिब्बातु दानि, भन्ते, भगवा, परिनिब्बातु दानि सुगतो! परिनिब्बानकालो दानि, भन्ते, भगवतो।

"भासिता खो पनेसा, भन्ते, भगवता वाचा—'न तावाहं, पापिम, परिनिब्बायिस्सामि याव मे इदं ब्रह्मचरियं न इद्धं चेव भविस्सति फीतं च वित्थारितं बाहुजञ्ञं पुथुभूतं याव देवमनुस्सेहि सुप्पकासितं' ति। तयिदं, भन्ते, भगवतो ब्रह्मचरियं [B.230] इद्धं चेव फीतं च वित्थारितं बाहुजञ्ञं पुथुभूतं याव देवमनुस्सेहि सुप्पकासितं।

धर्मविनय में चतुर...पूर्ववत्...। अब ये सब वे विशेषताएँ एवं गुण प्राप्त कर चुकीं जो उन के लिये आप को अभीष्ट थे। अतः अब परिनिर्वृत हो ही जायँ; क्यों कि आप के लिये परिनिर्वाण लेने का यह समय उचित ही है।

"भन्ते! आप ने यह भी कहा था—'पापिन्! मैं तब तक परिनिवृत नहीं होऊँगा जब तक मेरे द्वारा सञ्चालित यह **धर्म** सर्वथा आध्यात्मिक शक्तिसम्पन्न, साधना द्वारा समृद्ध, लोकविस्तृत, सार्वभौम, सब के समझ में आने योग्य (सुबोध) न हो जाय, यहाँ तक कि देवता एवं मनुष्य—सब समान रूप से जान सकें, समझ सकें'। भन्ते! आप का धर्म उन्नति

परिनिब्बातु दानि, भन्ते, भगवा, परिनिब्बातु दानि सुगतो! परिनिब्बानकालो दानि, भन्ते, भगवतो'' ति।

एवं वुत्ते भगवा मारं पापिमन्तं एतदवोच—''अप्पोस्सुक्को त्वं, पापिम, होहि। न चिरं तथागतस्स परिनिब्बानं भविस्सति। इतो तिण्णं मासानं अच्चयेन तथागतो परिनिब्बायिस्सती'' ति। अथ खो भगवा चापाले चेतिये सतो सम्पजानो [N.225] आयुसङ्खारं ओस्सजि। ओस्सट्ठे च भगवता आयुसङ्खारे महाभूमिचालो अहोसि भिंसनको लोमहंसो, देवदुन्दुभियो च फलिंसु। अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

''तुलमतुलं च सम्भवं, भवसङ्खारमवस्सजि मुनि। [R.263]
अज्झत्तरतो समाहितो, अभिन्दि कवचमिवत्तसम्भवं'' ति॥ •

चापालवग्गो पठमो॥

तस्सुद्दानं

अपारा पि विरद्धो च, अरिया निब्बिदा पि च।
पदेसं समत्तं भिक्खु, बुद्धं ञाणं च चेतियं ति॥ •

की इस परा काष्ठा तक पहुँच चुका है। इस लिये भी आप परिनिर्वाण ले ही लें, परिनिर्वाणहेतु यह समय आप के लिये उचित है।''

पापी मार द्वारा ऐसा कहे जाने पर, भगवान् ने उस को यों फटकारा—''अरे पापिन्! अभी मेरे परिनिर्वाण की आशा छोड़ दे। परन्तु तूँ घबरा भी नहीं; आज से तीन मास बाद ही मैं परिनिर्वाण प्राप्त करूँगा।''

तब भगवान् ने स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ हो कर अपने आयु:संस्कार का परित्याग कर दिया। भगवान् द्वारा इस प्रकार आयु:संस्कार का त्याग करने पर उसी समय भीषण भूकम्प हुआ, जिस से जनता भयाक्रान्त हो गयी। देवताओं ने दुन्दुभि बजायी। तब भगवान् ने यह स्थिति जान कर समझ कर यह उदान कहा—

''निर्वाण (अतुल) तथा भव (संसार में रहना)—दोनों का समीक्षण करते हुए मुनि (भगवान् बुद्ध) ने भव (आयु:) संस्कार का त्याग कर दिया। वे अध्यात्मरत एवं समाहित चित्त हो कर आत्मसम्भव कवच (अपने जीवन) को उतार फेंकने को सन्नद्ध हो गये''॥ •

चापालवर्ग प्रथम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. अपारसूत्र, २. विरद्धसूत्र, ३. आर्यसूत्र, ४. निर्विदासूत्र, ५. ऋद्धिप्रदेशसूत्र, ६. समस्तसूत्र, ७. भिक्षुसूत्र, ८. बुद्धसूत्र, ९. ज्ञानसूत्र एवं १०. चैत्यसूत्र॥ •

२. पासादकम्पनवग्गो दुतियो

११. पुब्बसुत्तं

११. सावत्थिनिदानं। "पुब्बेव मे, भिक्खवे, सम्बोधा अनभिसम्बुद्धस्स बोधिसत्तस्सेव सतो एतदहोसि—'को नु खो हेतु को पच्चयो इद्धिपादभावनाया' ति? तस्स मय्हं, भिक्खवे, एतदहोसि—'इध भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति'—इति मे छन्दो न च अतिलीनो भविस्सति, न च अतिप्पग्गहितो भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्तो भविस्सति, न च बहिद्धा विक्खित्तो भविस्सति। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथा [B.231] अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति। [R.264]

"विरियसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—इति मे विरियं न च अतिलीनं भविस्सति, न च अतिप्पग्गहितं भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्तं भविस्सति, न च बहिद्धा विक्खित्तं भविस्सति। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं [N.226] भावेति। चित्तसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—इति मे चित्तं न च अतिलीनं भविस्सति, न च अतिप्पग्गहितं भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्तं भविस्सति,

---

२. प्रासादकम्पनवर्ग द्वितीय

११. पूर्वसूत्र : : ऋद्धिपाद की भावना

११. ...**श्रावस्ती में ही**...। "भिक्षुओ! सम्बोधिप्राप्ति से पूर्व, बोधिसत्त्वावस्था में ही, मेरे मन में यह विचार उठा—'ऋद्धिपाद भावना का क्या हेतु एवं प्रत्यय है?' तब मुझ को यह समझ में आया—'यहाँ कोई भिक्षु छन्दसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की यह सोच कर भावना करता है कि इस तरह मेरा छन्द न तो बहुत दुर्बल होगा, न बहुत सबल, न बहुत स्तब्ध रहेगा, न अतिप्रगृहीत, न वह अपने भीतर ही भीतर बन्द रहेगा, न बाहर आ कर बहुत फैल जायगा, पीछे और आगे का ध्यान रखता हुआ पीछे और आगे समान स्तर पर साधना करेगा, ऊपर नीचे का भी सर्वथा ध्यान रखेगा—जैसा ऊपर ऐसा नीचे। जैसे दिन में वैसी ही रात्रि में या जैसे रात्रि में वैसे ही दिन में साधना करेगा। इस तरह खुले एवं स्वतन्त्र चित्त से प्रभा (आलोक) मय साधना करता है।'

'वीर्यसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है...पूर्ववत्...।

न च बहिद्धा विक्खित्तं भविस्सति। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति। वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—इति मे वीमंसा न च अतिलीना भविस्सति, न च अतिप्पग्गहिता भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्ता भविस्सति, न च बहिद्धा विक्खित्ता भविस्सति। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति।

''एवं भावितेसु खो, भिक्खु, चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु, अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति, बहुधा पि हुत्वा एको होति; आविभावं, तिरोभावं; तिरोकुट्टं तिरोपाकारं तिरोपब्बतं असज्जमानो गच्छति, सेय्यथापि [B.232] आकासे; पठविया पि उम्मुज्जनिमुज्जं करोति, सेय्यथापि उदके; उदके पि [R.265] अभिज्जमाने गच्छति, सेय्यथापि पठवियं; आकासे पि पल्लङ्केन कमति, सेय्यथापि पक्खी सकुणो; इमे पि चन्दिमसुरिये एवंमहिद्धिके एवंमहानुभावे पाणिना परिमसति परिमज्जति; याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति।

''एवं भावितेसु खो, भिक्खु, चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु, दिब्बाय सोतधातुया विसुद्धाय अतिक्कन्तमानुसिकाय उभो सद्दे सुणाति—दिब्बे च मानुसे च, दूरे सन्तिके चा ति।

'चित्तसमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है...पूर्ववत्...।

'मीमांसासमाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है...पूर्ववत्...।

''इस प्रकार, इन चारों ऋद्धिपादों के भली भाँति भावित एवं अभ्यस्त होने पर वह साधक भिक्षु विविध दिव्य चमत्कारों (ऋद्धियों) का लाभ करता है; जैसे—वह एक हो कर बहुत हो जाता है, या बहुत हो कर एक हो जाता है; कभी प्रकट होता है, कभी अन्तर्हित, कभी दीवार के बीच से निकल जाता है, बन्द दुर्ग के बीच से निकल जाता है, पर्वत के बीच से निकल जाता है; कहीं भी विना अवरुद्ध हुए चला जाता है, जैसे—आकाश में। पृथ्वी में गोता (डुबकी) लगाता है; जैसे—जल में। जल पर मग्न हुए विना ही पृथ्वी के समान चलता है। आकाश में पद्मासन लगा कर पक्षी के तुल्य घूमता रहता है। अतिप्रखर तेज वाले सूर्य एवं अतिशीतल चन्द्रमा को हाथ से स्पर्श कर लेता है। अपने शरीर से ब्रह्मलोकपर्यन्त सब को वश में रखता है।

''इस तरह, इन चारों ऋद्धिपादों के भली भाँति भावित एवं अभ्यस्त होने पर वह

''एवं भावितेसु खो, भिक्खु, चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु, परसत्तानं परपुग्गलानं चेतसा चेतो परिच्च पजानाति। सरागं वा चित्तं 'सरागं चित्तं' ति पजानाति; वीतरागं वा चित्तं 'वीतरागं चित्तं' ति पजानाति; सदोसं वा चित्तं 'सदोसं चित्तं' [N.227] ति पजानाति; वीतदोसं वा चित्तं 'वीतदोसं चित्तं' ति पजानाति; समोहं वा चित्तं 'समोहं चित्तं' ति पजानाति; वीतमोहं वा चित्तं 'वीतमोहं चित्तं' ति पजानाति; सङ्खित्तं वा चित्तं 'सङ्खित्तं चित्तं' ति पजानाति; विक्खित्तं वा चित्तं 'विक्खित्तं चित्तं' ति पजानाति; महग्गतं वा चित्तं 'महग्गतं चित्तं' ति पजानाति; अमहग्गतं वा चित्तं 'अमहग्गतं चित्तं' ति पजानाति; सउत्तरं वा चित्तं 'सउत्तरं चित्तं' ति पजानाति; अनुत्तरं वा चित्तं 'अनुत्तरं चित्तं' ति पजानाति; समाहितं वा चित्तं 'समाहितं चित्तं' ति पजानाति; असमाहितं वा चित्तं 'असमाहितं चित्तं' ति पजानाति; विमुत्तं वा चित्तं 'विमुत्तं चित्तं' ति पजानाति; अविमुत्तं वा चित्तं 'अविमुत्तं चित्तं' ति पजानाति।

''एवं भावितेसु खो, भिक्खु, चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु, अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो तिस्सो पि जातियो चतस्सो पि जातियो पञ्च पि जातियो दस पि जातियो वीसं पि जातियो तिंसं पि जातियो चत्तालीसं पि जातियो पञ्ञासं पि जातियो जातिसतं पि जातिसहस्सं पि [R.266] जातिसतसहस्सं पि अनेके पि संवट्टकप्पे अनेके पि विवट्टकप्पे अनेके पि संवट्टविवट्टकप्पे—'अमुत्रासिं एवंनामो एवंगोत्तो एवंवण्णो एवमाहारो एवंसुखदुक्खप्पटिसंवेदी

भिक्षु दिव्य, अलौकिक एवं विशुद्ध श्रोत्रेन्द्रिय से दोनों प्रकार के शब्द सुनता है—देवताओं के भी मनुष्यों के भी; या जो दूर से बोले जाते हैं या जो समीप से बोले जाते हैं—उन को भी।

''इस तरह, इन चारों...पूर्ववत्...वह भिक्षु दूसरे के मन की बात को अपने मन से जान लेता है। सरागचित्त को 'सराग चित्त', वीतराग चित्त को 'वीतराग'; द्वेषयुक्त चित्त को द्वेषयुक्त एवं द्वेषरहित चित्त को 'द्वेषरहित'; मोहयुक्त चित्त को 'मोहयुक्त' एवं वीतमोह चित्त को 'वीतमोह' जान लेता है। संक्षिप्त (दबे हुए) चित्त को, विक्षिप्त (विखरे हुए) चित्त को, लोकोत्तर (महद्गत) चित्त को, लौकिक (अमहद्गत) चित्त को, साधारण (सोत्तर) चित्त को, असाधारण (अनुत्तर) चित्त को, असमाहित चित्त को, समाहित चित्त को, अविमुक्त चित्त को, तथा विमुक्त चित्त को उसी रूप में जान लेता है।

''इस तरह, इन चारों...पूर्ववत्...वह भिक्षु अपने अनेक पूर्वजन्मों की घटनाएँ स्मरण करता है; जैसे—एक जन्म, दो, तीन, चार, पाँच, दश, बीस, तीस, चालीस, पचास, सौ, हजार, लाख जन्मों की। अनेक संवर्त (प्रलय) कल्प, अनेक विवर्त (वर्तमान

[B.233] एवमायुपरियन्तो, सो ततो चुतो अमुत्र उदपादिं; तत्रापासिं एवंनामो एवंगोत्तो एवंवण्णो एवमाहारो एवंसुखदुक्खप्पटिसंवेदी एवमायुपरियन्तो, सो ततो चुतो इधूपपन्नो ति। इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति।

''एवं भावितेसु खो, भिक्खु, चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु, दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सति चवमाने उप्पज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति—'इमे वत, भोन्तो, सत्ता कायदुच्चरितेन समन्नागता वचीदुच्चरितेन समन्नागता मनोदुच्चरितेन समन्नागता अरियानं उपवादका मिच्छादिट्ठिका मिच्छादिट्ठिकम्मसमादाना; ते कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपन्ना। इमे वा पन, भोन्तो, सत्ता कायसुचरितेन समन्नागता [N.228] वचीसुचरितेन समन्नागता मनोसुचरितेन समन्नागता अरियानं अनुपवादका सम्मादिट्ठिका सम्मादिट्ठिकम्मसमादाना; ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपन्ना' ति। इति दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सति चवमाने उप्पज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति।

''एवं भावितेसु खो, भिक्खु, चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु, आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती'' ति॥ ●

संसार) कल्प, अनेक संवर्तविवर्त कल्पों में 'मैं इस नाम से, इस गोत्र से, इस वर्ण वाला, इस तरह का भोजन करने वाला, इस तरह के सुख या दुःख भोगने वाला तथा इतनी आयु तक वहाँ था; वहाँ से च्युत (मृत) हो कर वहाँ उत्पन्न हुआ। वहाँ भी मैं इस नाम का, इस वर्ण का...पूर्ववत्...वहाँ था; वहाँ से च्युत हो कर यहाँ उत्पन्न हुआ हूँ।' इस प्रकार के आकारप्रकार से वह अपने अनेक जन्मों की घटनाएँ स्मरण करता है।

''इस तरह, इन चारों...पूर्ववत्...वह भिक्षु दूसरे लोगों को दिव्य, विशुद्ध एवं अलौकिक चक्षु से देखता है। मरते, जीते, रोगी, स्वस्थ, दुर्बल, सबल, सुन्दर (सुरूप), असुन्दर (कुरूप), सुगति या दुर्गतिप्राप्त, तथा स्वकर्मानुसार अवस्थाप्राप्त जीवों (प्राणियों) को देखता है। तथा 'ये जीव मनसा वाचा कर्मणा दुराचार करते हुए, सत्पुरुषों के निन्दक होने के कारण मिथ्यादृष्टि वाले, मिथ्यादृष्टि के कारण देहपात के बाद नरक में उत्पन्न हो कर दुर्गति प्राप्त होंगे'; दूसरी तरफ, 'ये जीव मनसा वाचा कर्मणा सुकृत करने के कारण सत्पुरुषों के प्रशंसक, सम्यग्दृष्टि तथा अपनी सम्यग्दृष्टि के कारण मरणानन्तर स्वर्ग में उत्पन्न हो कर सुगति प्राप्त करेंगे'—अपने दिव्य चक्षुओं से इस प्रकार देखता है।

''भिक्षुओ! इस प्रकार चारों ऋद्धिपादों की भावना तथा अभ्यास के पूर्ण हो जाने

१२. महप्फलसुत्तं

१२. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, इद्धिपादा भाविता बहुलीकता महप्फला [R.267] होन्ति महानिसंसा। कथं भाविता च, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा कथं बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खार-समन्नागतं इद्धिपादं भावेति—'इति मे छन्दो न च अतिलीनो भविस्सति, न च अतिप्पग्गहितो भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्तो भविस्सति, न च बहिद्धा विक्खित्तो भविस्सति'। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा [B.234] दिवा। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति।

''विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—'इति मे वीमंसा न च अतिलीना भविस्सति, न च अतिप्पग्गहिता भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्ता भविस्सति, न च बहिद्धा विक्खित्ता भविस्सति'। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति। एवं भाविता खो, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा एवं बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा।

''एवं भावितेसु खो, भिक्खु, चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु, [N.229] अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति...पे०...।

पर वह भिक्षु अपने आश्रवों के क्षय से अनाश्रव चित्तविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जान कर, साक्षात्कार कर साधना करता है''॥ •

१२. महाफलसूत्र : : ऋद्धिपादभावना के विशिष्ट फल

१२. ...''भिक्षुओ! इन चार ऋद्धिपादों की भावना तथा अभ्यास पूर्ण होने से इन के महान् एवं विशिष्ट फल अधिगत होते हैं। वह भावना कैसे की जाती है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु छन्दसमाधिप्रधान संस्कारों से युक्त ऋद्धिपाद की भावना, यह सोच कर, करता है...पूर्वसूत्रवत्...खुले एवं स्वतन्त्र चित्त से प्रभामय साधना करता है।

''वीर्यसमाधिप्रधान संस्कारों से युक्त ऋद्धिपाद की भावना यह सोच कर करता है ...पूर्वसूत्रवत्...चित्तसमाधि...पूर्वसूत्रवत्...मीमांसासमाधिप्रधान संस्कारों से युक्त ऋद्धिपाद की भावना यह सोच कर करता है...पूर्वसूत्रवत्...।

[R.268] "एवं भावितेसु खो, भिक्खु, चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु, आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती" ति॥ •

१३. छन्दसमाधिसुत्तं

१३. "छन्दं चे, भिक्खवे, भिक्खु निस्साय लभति समाधिं, लभति चित्तस्स एकग्गतं—अयं वुच्चति छन्दसमाधि। सो अनुप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं अनुप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। उप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। अनुप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं उप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति। इमे वुच्चन्ति 'पधानसङ्खारा' ति। इति अयं च छन्दो अयं च छन्दसमाधि इमे च पधानसङ्खारा—अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'छन्दसमाधिप्पधान-सङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो'।

[B.235] "विरियं चे, भिक्खवे, भिक्खु निस्साय लभति समाधिं, लभति चित्तस्स

"भिक्षुओ! इस प्रकार चारों ऋद्धिपादों की भावना तथा अभ्यास के पूर्ण हो जाने पर आश्रवों के क्षय से अनाश्रव चित्तविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जान कर साक्षात्कार कर आगे साधना करता है"॥ •

१३. छन्दसमाधिसूत्र : : चार ऋद्धिपादों की भावना

१३. ..."भिक्षुओ! कोई भिक्षु छन्द (इच्छा) के आधार पर समाधि एवं चित्त की एकाग्रता प्राप्त करता है, इसे कहते हैं—'**छन्दसमाधि**'। वह अनुत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों के अनुत्पाद के लिये इच्छा करता है, तदर्थ प्रयत्न करता है, उद्योग करता है, चित्त को एकाग्र एवं निगृहीत करता है। तथा उत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों के प्रहाण की इच्छा करता है, तदर्थ प्रयत्न करता है, उद्योग करता है, चित्त को एकाग्र एवं निगृहीत करता है। अनुत्पन्न कुशल धर्मों के उत्पाद की इच्छा करता है..., उत्पन्न कुशल धर्मों की वृद्धि एवं विपुलता आदि की इच्छा करता है, तदर्थ प्रयत्न करता है, उद्योग करता है, चित्त को एकाग्र तथा निगृहीत करता है, भिक्षुओ! इसे कहते हैं—**प्रधानसंस्कार**। इस तरह, भिक्षुओ! यह छन्द, यह छन्दसमाधि एवं यह प्रधानसंस्कार—ये तीनों मिल कर '**छन्दसमाधिप्रधान-संस्कारयुक्त ऋद्धिपाद**' कहलाता है। (१)

"कोई भिक्षु, भिक्षुओ! वीर्य के आधार पर समाधि एवं चित्त की एकाग्रता प्राप्त

एकग्गतं—अयं वुच्चति 'विरियसमाधि'। सो अनुप्पन्नानं...पे०...उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति—इमे वुच्चन्ति 'पधानसङ्खारा' ति। इति इदं च विरियं अयं च विरियसमाधि इमे च पधानसङ्खारा—अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'विरियसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो'।

''चित्तं चे, भिक्खवे, भिक्खु निस्साय लभति समाधिं, लभति चित्तस्स [R.269] एकग्गतं—अयं वुच्चति 'चित्तसमाधि'। सो अनुप्पन्नानं पापकानं...पे०...उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति—इमे वुच्चन्ति [N.230] 'पधानसङ्खारा' ति। इति इदं च चित्तं अयं च चित्तसमाधि इमे च पधानसङ्खारा—अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'चित्तसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो'।

''वीमंसा चे, भिक्खवे, भिक्खु निस्साय लभति समाधिं, लभति चित्तस्स एकग्गतं—अयं वुच्चति 'वीमंसासमाधि'। सो अनुप्पन्नानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं अनुप्पादाय छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति...पे०... उप्पन्नानं कुसलानं धम्मानं ठितिया असम्मोसाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया छन्दं जनेति वायमति विरियं आरभति चित्तं पग्गण्हाति पदहति—इमे वुच्चन्ति 'पधानसङ्खारा' ति। इति अयं च वीमंसा अयं च वीमंसासमाधि इमे च पधानसङ्खारा—अयं वुच्चति, भिक्खवे, 'वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतो इद्धिपादो''' ति॥ ●

१४. मोग्गल्लानसुत्तं

१४. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति पुब्बारामे मिगारमातु-

---

करता है, इसे कहते हैं—**वीर्यसमाधि**। ...पूर्ववत्...। *(छन्द के समान ही विस्तार कर लें।)* इसे कहते हैं—**वीर्यसमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद**। (२)

''भिक्षुओ! कोई भिक्षु चित्त के आधार पर समाधि एवं चित्त की एकाग्रता प्राप्त करता है, इसे कहते हैं—**चित्तसमाधि**। ...पूर्ववत्...। *(छन्द के समान ही विस्तार कर लें।)* इसे कहते हैं—**चित्तसमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद**। (३)

''भिक्षुओ! कोई भिक्षु मीमांसा (विमर्श) के आधार पर समाधि एवं चित्त की एकाग्रता प्राप्त करता है, इसे कहते हैं—**मीमांसासमाधि**। ...पूर्ववत्...। *(छन्द के समान ही विस्तार कर लें।)* इसे कहते हैं—**मीमांसासमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद**''॥ (४) ●

१४. मोग्गल्लानसूत्र : : आयुष्मान् महामोग्गल्लान की ऋद्धि

१४. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **श्रावस्ती** स्थित पूर्वाराम के

पासादे। तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू हेट्ठामिगारमातुपासादे विहरन्ति उद्धता उन्नळा चपला मुखरा विकिण्णवाचा मुट्ठस्सतिनो असम्पजाना असमाहिता विब्भन्तचित्ता पाकतिन्द्रिया।

[B.236] अथ खो भगवा आयस्मन्तं महामोग्गल्लानं आमन्तेसि—"एते खो, मोग्गल्लान, [R.270] सब्रह्मचारिनो हेट्ठामिगारमातुपासादे विहरन्ति उद्धता उन्नळा चपला मुखरा विकिण्णवाचा मुट्ठस्सतिनो असम्पजाना असमाहिता विब्भन्तचित्ता पाकतिन्द्रिया। गच्छ, मोग्गल्लान, ते भिक्खू संवेजेही" ति।

"एवं, भन्ते" ति खो आयस्मा महामोग्गल्लानो भगवतो पटिस्सुत्वा तथारूपं इद्धाभिसङ्खारं अभिसङ्खारेसि यथा पादङ्गुट्ठकेन मिगारमातुपासादं सङ्कम्पेसि सम्पकम्पेसि सम्पचालेसि। अथ खो ते भिक्खू संविग्गा लोमहट्ठजाता एकमन्तं अट्ठंसु—"अच्छरियं वत, भो, अब्भुतं वत, भो! निवातं च वत अयं च मिगारमातुपासादो गम्भीरनेमो सुनिखातो अचलो असम्पकम्पी, अथ च पन सङ्कम्पितो सम्पकम्पितो सम्पचालितो" ति!

[N.231] अथ खो भगवा येन ते भिक्खू तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा ते भिक्खू भगवा एतदवोच—"किं नु तुम्हे, भिक्खवे, संविग्गा लोमहट्ठजाता एकमन्तं ठिता" ति?

"अच्छरियं, भन्ते, अब्भुतं भन्ते! निवातं च वत अयं च मिगारमातुपासादो

मृगारमातृप्रासाद में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय बहुत से भिक्षु इस मृगारमातृप्रासाद के नीचे उद्धत, नीच, चपल, मुखर, अशिष्ट व्यवहार वाले, मूढमति, असम्प्रज्ञ, असमाहित, असंयतेन्द्रिय एवं भ्रान्तचित्त हो कर इधर उधर घूम रहे थे।

उस समय भगवान् ने आयुष्मान् महामोग्गल्लान को बुलाया, तथा उन्हें आदेश दिया—"मृगारमातृप्रासाद के नीचे उपद्रव एवं कोलाहल करते हुए इन उद्धत भिक्षुओं को शान्त करो, तथा इन्हें उचित साधना में लगाओ।"

"आप की आज्ञा शिरोधार्य है, भन्ते"—कह कर आयुष्मान् महामोग्गल्लान ने अपना ऐसा ऋद्धिप्रभाव दिखाया कि उन्होंने अपने पैर के अंगूठे से दबा कर सम्पूर्ण मृगारमातृप्रासाद कँपा दिया। इस अकस्मात् कम्पन को देख कर वे उद्धत भिक्षु भयभीत हो गये, तथा तत्काल खड़े हो गये, और परस्पर एक दूसरे से यों पूछने लगे—"आश्चर्य है, आयुष्मानो! यह तो बहुत अद्भुत बात हुई! यह प्रासाद बहुत गम्भीर, दृढ, अकम्प्य एवं पुष्ट है, फिर इस में यह अकस्मात् कम्पन कैसा!"

उसी समय भगवान् उन भिक्षुओं के पास गये और पूछने लगे—"भिक्षुओ! तुम किस कारण से इतने संविग्न, स्तब्ध एवं रोमाञ्चित खड़े हो?" भिक्षु बोले—

गम्भीरनेमो सुनिखातो अचलो असम्पकम्पी, अथ च पन सङ्कम्पितो सम्पकम्पितो सम्पचालितो'' ति!

''तुम्हे व खो, भिक्खवे, संवेजेतुकामेन मोग्गल्लानेन भिक्खुना पादङ्गुट्ठकेन मिगारमातुपासादो सङ्कम्पितो सम्पकम्पितो सम्पचालितो। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमेसं धम्मानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता मोग्गल्लानो भिक्खु एवंमहिद्धिको एवं-महानुभावो'' ति?

''भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा, भगवन्नेत्तिका भगवम्पटिसरणा। साधु वत, भन्ते, भगवन्तं येव पटिभातु एतस्स भासितस्स अत्थो। भगवतो सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती'' ति। [R.271]

''तेन हि, भिक्खवे, सुणाथ। चतुन्नं खो, भिक्खवे, इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता मोग्गल्लानो भिक्खु एवंमहिद्धिको एवंमहानुभावो। कतमेसं चतुन्नं? इध, भिक्खवे, मोग्गल्लानो भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—'इति मे वीमंसा न च अतिलीना भविस्सति, न च अतिप्पग्गहिता [B.237] भविस्सति; न च अज्झत्तं सङ्खित्ता भविस्सति, न च बहिद्धा विक्खित्ता भविस्सति'। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा। इति विवटेन

''भन्ते! यह आश्चर्य है, अद्भुत है कि मृगारमातृप्रासाद इतना गम्भीर, दृढ, अकम्प्य एवं पुष्ट होने पर भी आज यह थर थर काँप रहा है!''

''भिक्षुओ! प्रासाद का यह प्रकम्पन, तुम्हें शान्त एवं प्रमाद से निवृत्त करने हेतु मोग्गल्लान भिक्षु ने अपने पैर के अंगूठे से कर दिया है। तो तुम यह बताओ, भिक्षुओ! यह मोग्गल्लान भिक्षु किन धर्मों की प्रबलसाधना से इतना प्रभावशाली, ऋद्धिमान् एवं महानुभाव (महाप्रतापी) हुआ है?''

''भन्ते! धर्म के विषय में तो हम लोग आप को ही प्रमाण मानते हैं। आप ही इस बात को स्पष्ट करें!'' ...

''तो, भिक्षुओ! सुनो! चार ऋद्धिपादों की भावना से अभ्यास से यह मोग्गल्लान भिक्षु ऐसा प्रभावशाली, ऋद्धिमान् एवं महानुभाव हो पाया है। कौन से चार? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु छन्दसमाधिप्रधान...वीर्यसमाधिप्रधान...चित्तसमाधिप्रधान...मीमांसा-समाधिप्रधान संस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना यह सोचता हुआ करता है—इस तरह मेरी यह मीमांसा...पूर्ववत्...। इस तरह खुले एवं स्वतन्त्र चित्त से प्रभामय साधना करता

चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता मोग्गल्लानो भिक्खु एवंमहिद्धिको एवंमहानुभावो। इमेसं च पन, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता मोग्गल्लानो भिक्खु अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति...पे०...इमेसं च पन, [N.232] भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता मोग्गल्लानो भिक्खु आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती'' ति॥ •

१५. उण्णाभब्राह्मणसुत्तं

१५. एवं मे सुतं। एकं समयं आयस्मा आनन्दो कोसम्बियं विहरति घोसितारामे। [R.272] अथ खो उण्णाभो ब्राह्मणो येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मता आनन्देन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो उण्णाभो ब्राह्मणो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच— ''किमत्थियं नु खो, भो आनन्द, समणे गोतमे ब्रह्मचरियं वुस्सती'' ति?

''छन्दप्पहानत्थं खो, ब्राह्मण, भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सती'' ति।

''अत्थि पन, भो आनन्द, मग्गो अत्थि पटिपदा एतस्स छन्दस्स पहानाया'' ति?

''अत्थि खो, ब्राह्मण, मग्गो अत्थि पटिपदा एतस्स छन्दस्स पहानाया'' ति।

है। इन चारों ऋद्धिपादों की यों साधना एवं अभ्यास करने से यह मोग्गल्लान भिक्षु इतना ऋद्धिमान्, ऐसा प्रभावशाली एवं इतना विशिष्ट महानुभाव बन गया है। इन चारों ऋद्धिपादों की पुष्ट भावना एवं दृढ अभ्यास से यह विविध दिव्य चमत्कारों का लाभ करता है...पूर्ववत्...। ...चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को जान कर साक्षात्कार कर साधना करता है''॥ •

१५. ऊर्णाभब्राह्मणसूत्र : : छन्द प्रहाण का मार्ग

१५. ऐसा मैने सुना है। एक समय आयुष्मान् आनन्द **कौशाम्बी** के घोषिताराम में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। उसी समय ऊर्णाभ नामक कोई ब्राह्मण आयुष्मान् आनन्द के पास आया तथा कुशलमङ्गल पूछ कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे इस ब्राह्मण ने आयुष्मान् आनन्द से यों पूछा—''आयुष्मन् आनन्द! आप भगवान् के अनुशासन में यह धर्मसाधना किस प्रयोजन से करते हैं?''

''ब्राह्मण! मैं यह धर्मसाधना भगवान् के अनुशासन में छन्द (इच्छा) के प्रहाणहेतु करता हूँ।''

''क्या आयुष्मन्! छन्द के प्रहाण का भी कोई मार्ग एवं उपाय है?''

''कतमो पन, भो आनन्द, मग्गो कतमा पटिपदा एतस्स छन्दस्स पहानाया'' ति?

''इध, ब्राह्मण, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—अयं खो, ब्राह्मण, मग्गो अयं पटिपदा एतस्स छन्दस्स पहानाया'' ति।

''एवं सन्ते, भो आनन्द, सन्तकं होति नो असन्तकं। छन्देनेव छन्दं [B.238] पजहिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति''।

''तेन हि, ब्राह्मण, तञ्ञेवेत्थ पटिपुच्छिस्सामि। यथा ते खमेय्य तथा तं ब्याकरेय्यासि। तं किं मञ्ञसि, ब्राह्मण, अहोसि ते पुब्बे छन्दो 'आरामं गमिस्सामी' ति? तस्स ते आरामगतस्स यो तज्जो छन्दो सो पटिप्पस्सद्धो'' ति?

''एवं, भो''। [N.233, R.273]

''अहोसि ते पुब्बे विरियं 'आरामं गमिस्सामी' ति? तस्स ते आरामगतस्स यं तज्जं विरियं तं पटिप्पस्सद्धं'' ति?

''एवं, भो''।

''अहोसि ते पुब्बे चित्तं 'आरामं गमिस्सामी' ति? तस्स ते आरामगतस्स यं तज्जं चित्तं तं पटिप्पस्सद्धं'' ति?

''हाँ, ब्राह्मण! इस का भी मार्ग एवं उपाय है।''

''वह कौन सा?''

''ब्राह्मण! यहाँ, कोई भिक्षु छन्दसमाधिप्रधान...वीर्यसमाधिप्रधान...चित्तसमाधि-प्रधान...मीमांसासमाधिप्रधान संस्कारों से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है—ब्राह्मण! यही उस छन्दप्रहाण का मार्ग एवं उपाय है।

''ऐसा करने से तो वह (छन्द) पहले की अपेक्षा अधिक समीप आ जायगा, दूर नहीं होगा। छन्द ही छन्द के प्रहाण का उपाय कैसे हो सकता है?''

''तो, ब्राह्मण! मैं तुम ही से पूछता हूँ, तुम अपनी ही समझ से उत्तर दो। तो क्या मानते हो, ब्राह्मण! क्या तुम्हें यह कभी इच्छा हुई थी कि विहार में जाऊँगा? क्या इस इच्छा से विहार में जाने पर, वह इच्छा दब गयी?''

''हाँ, भन्ते!''

''तो, ब्राह्मण! तुम्हें कभी यह उत्साह (वीर्य) हुआ था कि विहार में जाऊँगा? इस उत्साह से विहार में जाने पर क्या तुम्हारा वह पूर्व उत्साह दब गया?''

''हाँ, भन्ते!''

"एवं, भो"।

"अहोसि ते पुब्बे वीमंसा 'आरामं गमिस्सामी' ति? तस्स ते आरामगतस्स या तज्जा वीमंसा सा पटिप्पस्सद्धा" ति?

"एवं, भो"।

"एवमेव खो, ब्राह्मण, यो सो भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञा विमुत्तो, तस्स यो पुब्बे छन्दो अहोसि अरहत्तप्पत्तिया, अरहत्तप्पत्ते यो तज्जो छन्दो सो पटिप्पस्सद्धो; यं पुब्बे विरियं अहोसि अरहत्तप्पत्तिया, अरहत्तप्पत्ते यं तज्जं विरियं तं पटिप्पस्सद्धं; यं पुब्बे चित्तं अहोसि अरहत्तप्पत्तिया, अरहत्तप्पत्ते यं तज्जं चित्तं तं पटिप्पस्सद्धं; या पुब्बे वीमंसा अहोसि अरहत्तप्पत्तिया, अरहत्तप्पत्ते या तज्जा वीमंसा सा पटिप्पस्सद्धा। तं किं मञ्ञसि, ब्राह्मण, इति एवं सन्ते, सन्तकं वा होति नो असन्तकं वा" ति?

"अद्धा, भो आनन्द, एवं सन्ते, सन्तकं होति नो असन्तकं। अभिक्कन्तं, भो आनन्द, अभिक्कन्तं, भो आनन्द! सेय्यथापि, भो आनन्द, निक्कुज्जितं वा उक्कुज्जेय्य, पटिच्छन्नं वा विवरेय्य, मूळ्हस्स वा मग्गं आचिक्खेय्य, अन्धकारे वा तेलपज्जोतं

"क्या तुम्हें कभी यह चित्त हुआ था कि विहार में जाऊँ? इस चित्त से विहार में जाने पर क्या पूर्व चित्त दब नहीं गया?"

"हाँ, भन्ते!"

"क्या तुम्हें कभी यह मीमांसा हुई थी कि विहार में जाऊँगा? इस मीमांसा के पूर्ण होने से क्या वह तुम्हारी मीमांसा दब नहीं गयी?"

"हाँ, भन्ते!"

"इसी तरह, ब्राह्मण! वह अर्हत् क्षीणाश्रव भिक्षु धर्मसाधक बन कर स्वकर्तव्य पूर्ण कर, संसारभारमुक्त हो कर, सदर्थ प्राप्त कर भवसंयोजनों को क्षीण कर सम्यग्ज्ञान द्वारा विमुक्ति पद पा चुका है, उस को जो पहले 'अर्हत्' पद पाने का छन्द उत्पन्न हुआ था वह छन्द यह अर्हत् पद पाने से दब गया कि नहीं? वह उत्साह, वह चित्त, वह मीमांसा दब गयी कि नहीं? तो क्या मानते हो ब्राह्मण! ऐसा होने से वह दूर हो गया या समीप आ गया?"

"निश्चय ही, भो आनन्द! ऐसा होने पर वह छन्द समीप ही आ गया, दूर नहीं हुआ। आप ने विषय (वर्तमान प्रसङ्ग) को बहुत अच्छी तरह समझाया! जैसे, भो आनन्द! कोई उल्टे हुए पात्र को सीधा कर दे, ढके हुए को खोल दे, यात्री को मार्ग बता दे, अन्धकार में तैलदीपक जला कर रख दे कि देखने वाले मार्ग देख लें; इसी तरह, भो

धारेय्य—चक्खुमन्तो रूपानि दक्खन्ती ति; एवमेवं भोता आनन्देन अनेकपरियायेन धम्मो पकासितो। एसाहं, भो आनन्द, तं भवन्तं गोतमं सरणं गच्छामि धम्मं च भिक्खुसङ्घं च। उपासकं मं भवं आनन्दो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं'' ति॥ ●

१६. पठमसमणब्राह्मणसुत्तं

१६. ''ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा [B.239] महिद्धिका अहेसुं महानुभावा, सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहु-[N.234] लीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा महिद्धिका भविस्सन्ति महानुभावा, सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि समणा वा ब्राह्मणा वा महिद्धिका महानुभावा, सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। [R.274]

कतमेसं चतुन्नं? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...पे०...वीमंसासमाधिप्पधान-सङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा महिद्धिका अहेसुं महानुभावा, सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा महिद्धिका भविस्सन्ति महानुभावा, सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि समणा वा ब्राह्मणा वा महिद्धिका महानुभावा, सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता'' ति॥ ●

आनन्द! आप ने विविध रीति से धर्म को स्पष्ट कर दिया। अत: मैं आज से उन भगवान् गौतम, उन के धर्म एवं सङ्घ की शरण में जाता हूँ। आज से आप मुझे अपना शरणागत उपासक समझें''॥ ●

१६. प्रथम श्रमणब्राह्मणसूत्र : : चार ऋद्धिपाद

१६. ...''भिक्षुओ! जो भी कोई श्रमण ब्राह्मण अतीत काल में महान् ऋद्धिसम्पन्न एवं महानुभाव हुए हैं, वे सब इन्हीं चार ऋद्धिपादों की साधना एवं अभ्यास की दृढता से ही हो पाये थे; आगे भविष्य में भी जो ऐसे होंगे वे भी इन्हीं ऋद्धिपादों की दृढ साधना एवं अभ्यास से ही होंगे तथा वर्तमान में जो ऐसे श्रमण ब्राह्मण हैं वे भी इन्हीं ऋद्धिपादों की दृढ भावना एवं अभ्यास से इतने समर्थ हो पायेंगे।

''कौन से चार? भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु छन्दसमाधि...वीर्यसमाधि...चित्त-समाधि...मीमांसासमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद की साधना एवं अभ्यास करता है।

१७. दुतियसमणब्राह्मणसुत्तं

१७. ''ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोसुं—एको पि हुत्वा बहुधा अहेसुं, बहुधा पि हुत्वा एको अहेसुं; आविभावं, तिरोभावं; तिरोकुड्डं तिरोपाकारं तिरोपब्बतं असज्जमाना अगमंसु, सेय्यथापि आकासे; पठविया पि उम्मुज्जनिमुज्जं अकंसु, सेय्यथापि उदके; उदके पि अभिज्जमाने अगमंसु, सेय्यथापि पठवियं; आकासे पि पल्लङ्केन कमिंसु, सेय्यथापि पक्खी सकुणो; इमे पि चन्दिमसुरिये एवंमहिद्धिके एवंमहानुभावे पाणिना परिमसिंसु परिमज्जिंसु; याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेसुं, सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता।

[B.240] ''ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा अनेकविहितं [N.235] इद्धिविधं पच्चनुभोस्सन्ति—एको पि हुत्वा बहुधा भविस्सन्ति, बहुधा पि हुत्वा एको भविस्सन्ति; आविभावं, तिरोभावं; तिरोकुड्डं तिरोपाकारं तिरोपब्बतं असज्जमाना [R.275] गमिस्सन्ति, सेय्यथापि आकासे; पठविया पि उम्मुज्जनिमुज्जं करिस्सन्ति, सेय्यथापि उदके; उदके पि अभिज्जमाने गमिस्सन्ति, सेय्यथापि पठवियं; आकासे पि पल्लङ्केन कमिस्सन्ति, सेय्यथापि पक्खी सकुणो; इमे पि चन्दिमसुरिये एवंमहिद्धिके एवंमहानुभावे पाणिना परिमसिस्सन्ति परिमज्जिस्सन्ति; याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तिस्सन्ति, सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता।

''ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि समणा वा ब्राह्मणा वा अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोन्ति—एको पि हुत्वा बहुधा होन्ति, बहुधा पि हुत्वा एको होन्ति; आविभावं, तिरोभावं; तिरोकुड्डं तिरोपाकारं तिरोपब्बतं असज्जमाना गच्छन्ति, सेय्यथापि आकासे; पठविया पि उम्मुज्जनिमुज्जं करोन्ति, सेय्यथापि उदके; उदके पि अभिज्जमाने गच्छन्ति, सेय्यथापि पठवियं; आकासे पि पल्लङ्केन कमन्ति, सेय्यथापि पक्खी सकुणो; इमे पि

इस तरह, भिक्षुओ! जो अतीत काल में...पूर्ववत्...अनागत काल में...वर्तमान में...इन्हीं ऋद्धिपादों की भावना एवं अभ्यास से ऐसे समर्थ हो पाये हैं''॥

: : चार ऋद्धिपाद

१७. द्वितीय श्रमणब्राह्मणसूत्र

१७. ...''भिक्षुओ! जिन भी किसी श्रमण ब्राह्मणों ने अतीत काल में अनेकविध ऋद्धियों का चमत्कार देखा या दिखाया है, जैसे—एक होकर बहुत होना...पूर्ववत्...इन्हीं ऋद्धिपादों की साधना एवं अभ्यास से।

''...अनागत काल में...वर्तमान काल में...इन्हीं ऋद्धिपादों की साधना एवं अभ्यास से।

चन्दिमसुरिये एवंमहिद्धिके एवंमहानुभावे पाणिना परिमसन्ति परिमज्जन्ति; याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेन्ति, सब्बे ते चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता।

"कतमेसं चतुन्नं? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खार-समन्नागतं इद्धिपादं भावेति। ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोसुं—एको पि हुत्वा बहुधा अहेसुं...पे०...याव ब्रह्म-लोका पि कायेन वसं वत्तेसुं, सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता।

"ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोस्सन्ति—एको पि हुत्वा बहुधा भविस्सन्ति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तिस्सन्ति, सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुली-कतत्ता। [N.236, B.241]

"ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि समणा वा ब्राह्मणा वा अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोन्ति—एको पि हुत्वा बहुधा होन्ति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेन्ति, सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता" ति॥ •

१८. भिक्खुसुत्तं

१८. "चतुन्नं, भिक्खवे, इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता भिक्खु आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति।

"किन चारों की? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु (१) छन्दसमाधिप्रधान... (२) वीर्यसमाधिप्रधान... (३) चित्तसमाधिप्रधान... (४) मीमांसासमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है। भिक्षुओ! जो भी कोई श्रमण ब्राह्मण अतीत काल में ...अनागत काल में...वर्तमान काल में ऋद्धिमान् एवं महानुभाव हैं वे सब...पूर्ववत्...। इन्हीं चारों ऋद्धिपादों की दृढ साधना एवं अभ्यास से ही...पूर्ववत्...स्वकाया से ब्रह्मलोक तक अपने वश में रखते हैं"॥ •

१८. भिक्षुसूत्र : : चार ऋद्धिपाद

१८. ..."भिक्षुओ! समर्थ साधक भिक्षु इन चारों ऋद्धिपादों की साधना एवं दृढ अभ्यास के कारण आश्रवक्षय होने से अनाश्रव चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में जान कर साक्षात्कार कर उपसम्पन्न हो कर साधना करता है।

"कतमेसं चतुन्नं? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खार-समन्नागतं इद्धिपादं भावेति। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता [R.276] बहुलीकतत्ता भिक्खु आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती" ति॥

१९. इद्धादिदेसनासुत्तं

१९. "इद्धिं वो, भिक्खवे, देसेस्सामि इद्धिपादं च इद्धिपादभावनं च इद्धि-पादभावनागामिनिं च पटिपदं। तं सुणाथ।

"कतमा च, भिक्खवे, इद्धि? इध, भिक्खवे, भिक्खु अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति, बहुधा पि हुत्वा एको होति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेन्ति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धि।

"कतमो च, भिक्खवे, इद्धिपादो? यो सो, भिक्खवे, मग्गो या पटिपदा इद्धिलाभाय इद्धिपटिलाभाय संवत्तति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धिपादो।

[N.237] "कतमा च, भिक्खवे, इद्धिपादभावना? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्द-समाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि ...पे०...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धिपादभावना।

"किन चारों की? छन्दसमाधि...वीर्यसमाधि...चित्तसमाधि...मीमांसासमाधि ...पूर्ववत्...साधना करता है"॥

१९. ऋद्ध्यादिदेशनासूत्र : : ऋद्धि एवं ऋद्धिपाद

१९. ..."भिक्षुओ! मैं तुम्हें ऋद्धि, ऋद्धिपाद एवं ऋद्धिपादभावना तथा ऋद्धिपादभावनागामी मार्ग की देशना करूँगा, उसे ध्यानपूर्वक सुनो।

"भिक्षुओ! यह **ऋद्धि** क्या है? भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु अनेक प्रकार की ऋद्धियों का प्रत्यनुभव (साधना) करता है; जैसे—एक हो कर बहुत हो जाना...पूर्ववत्... स्वकाय से ब्रह्मलोक तक अपने वश में कर लेता है। इसे ही भिक्षुओ! 'ऋद्धि' कहते हैं।

"भिक्षुओ! यह **ऋद्धिपाद** क्या है? भिक्षुओ! इन ऋद्धियों को सिद्ध करने का, प्राप्त करने का मार्ग ही 'ऋद्धिपाद' है। यही 'ऋद्धिपाद' कहलाता है।

"भिक्षुओ! यह **ऋद्धिपादभावना** क्या है? भिक्षुओ! भिक्षु छन्दसमाधि...वीर्य-समाधि... चित्तसमाधि...मीमांसासमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है—भिक्षुओ! यही 'ऋद्धिपाद की भावना' कहलाती है।

"कतमा च, भिक्खवे, इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा? अयमेव [B.242] अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि, सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा, सम्माकम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मावायामो, सम्मासति, सम्मासमाधि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा" ति॥ •

२०. विभङ्गसुत्तं

२०. "चत्तारोमे, भिक्खवे, इद्धिपादा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा।

"कथं भाविता च, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा कथं बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—'इति मे छन्दो न च अतिलीनो भविस्सति, न च अतिप्पग्गहितो [R.277] भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्तो भविस्सति, न च बहिद्धा विक्खित्तो भविस्सति। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा'। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति। विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि... वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति...इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति।

"कतमो च, भिक्खवे, अतिलीनो छन्दो? यो, भिक्खवे, छन्दो कोसज्जसहगतो कोसज्जसम्पयुत्तो—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अतिलीनो छन्दो।

"भिक्षुओ! **ऋद्धिपादभावनामार्ग** क्या है? यही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग; जैसे—सम्यग्दृष्टि, सम्यक्सङ्कल्प, सम्यग्वाक्, सम्यक्कर्मान्त, सम्यगाजीव, सम्यग्व्यायाम, सम्यक्स्मृति एवं सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! यही 'ऋद्धिपादभावना मार्ग' कहलाता है"॥ •

२०. विभङ्गसूत्र : : चार ऋद्धिपादों की भावना

२०. ..."भिक्षुओ! इन चारों ऋद्धिपादों की साधना एवं दृढ अभ्यास से ये ऋद्धिपाद बहुत शुभ फल देते हैं तथा इन का परिणाम बहुत अच्छा होता है।

"भिक्षुओ! कैसी साधना करने से ये चारों ऋद्धिपाद सत्फलदायी तथा सुफल वाले होते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! साधक भिक्षु छन्दसमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद की भावना यह सोच कर करता है कि मेरा यह छन्द (इच्छा)...पूर्ववत्...। वीर्यसमाधि... चित्तसमाधि...मीमांसासमाधिप्रधानसंस्कारयुक्त ऋद्धिपाद की भावना यह सोच कर करता हैं कि मेरी यह मीमांसा...पूर्ववत्...खुले एवं स्वतन्त्र चित्त से प्रभामय चित्त की भावना करता है।

"कतमो च, भिक्खवे, अतिप्पग्गहितो छन्दो? यो, भिक्खवे, छन्दो उद्धच्च-सहगतो उद्धच्चसम्पयुत्तो—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अतिप्पग्गहितो छन्दो।

[B.243] "कतमो च, भिक्खवे, अज्झत्तं सङ्खित्तो छन्दो? यो, भिक्खवे, छन्दो थीनमिद्धसहगतो थीनमिद्धसम्पयुत्तो—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अज्झत्तं सङ्खित्तो छन्दो।

[N.238] "कतमो च, भिक्खवे, बहिद्धा विक्खित्तो छन्दो? यो, भिक्खवे, छन्दो बहिद्धा पञ्च कामगुणे आरब्भ अनुविक्खित्तो अनुविसटो—अयं वुच्चति, भिक्खवे, बहिद्धा विक्खित्तो छन्दो।

[R.278] "कथं च, भिक्खवे, भिक्खु पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो पच्छापुरेसञ्ञा सुग्गहिता होति सुमनसिकता सूपधारिता सुप्पटिविद्धा पञ्ञाय। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु पच्छा-पुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे।

"कथं च, भिक्खवे, भिक्खु यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो विहरति? इध, भिक्खवे, भिक्खु इममेव कायं उद्धं पादतला अधो केसमत्थका तचपरियन्तं पूरं नानप्पकारस्स असुचिनो पच्चवेक्खति—'अत्थि इमस्मिं काये केसा

विशिष्ट शब्दों की व्याख्या—"भिक्षुओ! इन में चित्त का अतिलीन (अतिदुर्बल) छन्द कौन है? चित्त का कुशीदभाव (आलस्य) से युक्त छन्द ही 'अतिलीन छन्द' है।

"भिक्षुओ! चित्त का अतिप्रगृहीत (बहुत तीव्र) छन्द कौन है? चित्त का औद्धत्ययुक्त छन्द ही 'अतिप्रगृहीत छन्द' है।

"भिक्षुओ! अध्यात्म संक्षिप्त (दबा हुआ) छन्द क्या है? भिक्षुओ! चित्त का स्त्यानमृद्ध (जड़ता एवं आलस्य) से युक्त छन्द ही 'अध्यात्म एवं संक्षिप्त छन्द' होता है।

"भिक्षुओ! चित्त का बाह्य विक्षिप्त छन्द क्या होता है? भिक्षुओ! चित्त का बाह्य पञ्च कामभोगों में व्यापृत छन्द ही 'बाह्य विक्षिप्त छन्द' कहलाता है।

"भिक्षुओ! कैसे वह भिक्षु पीछे और पहले का ध्यान करता हुआ (पच्छापुरेसञ्ञी) जैसा पहले वैसा पीछे या जैसा पीछे वैसा पहले साधना करता है? यहाँ, भिक्षुओ! पहले या पीछे, या पीछे या पहले की संज्ञाओं को मन में करता हुआ भिक्षु उन्हें प्रज्ञा द्वारा सुनिश्चित कर लेता है। इस तरह, भिक्षुओ! वह भिक्षु 'पच्छापुरेसञ्ञी' हो कर साधना करता है।

"कैसे, भिक्षुओ! वह भिक्षु 'जैसा नीचे वैसा ऊपर' या 'जैसे ऊपर वैसा नीचे' साधना करता है? भिक्षुओ! वह भिक्षु तलवे (पादतल) से ऊपर तक तथा शिर के बालों से नीचे तक, चर्म (त्वचा) से लिप्त अपने शरीर को नानाविध अशुचियों (गन्दगी=मल)

लोमा नखा दन्ता तचो मंसं न्हारु अट्ठि अट्ठिमिञ्जं वक्कं हदयं यकनं किलोमकं पिहकं पप्फासं अन्तं अन्तगुणं उदरियं करीसं पित्तं सेम्हं पुब्बो लोहितं सेदो मेदो अस्सु वसा खेळो सिङ्घाणिका लसिका मुत्तं' ति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो विहरति।

''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा विहरति? इध, भिक्खवे, भिक्खु येहि आकारेहि येहि लिङ्गेहि येहि निमित्तेहि दिवा छन्द-समाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, सो तेहि आकारेहि तेहि लिङ्गेहि तेहि निमित्तेहि रत्तिं छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति; येहि वा पन आकारेहि येहि लिङ्गेहि येहि निमित्तेहि रत्तिं छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, सो तेहि आकारेहि तेहि लिङ्गेहि तेहि निमित्तेहि दिवा छन्दसमाधिप्पधान-सङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा विहरति।

''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं [B.244] चित्तं भावेति? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो आलोकसञ्ञा सुग्गहिता होति [N.239]

से भरा हुआ समझ कर उस का यों प्रत्यवेक्षण करता है—'इस शरीर में केश, लोम, नख, दाँत, त्वचा, माँस, धमनियाँ, अस्थियाँ, मज्जा, वृक्क, हृदय, यकृत्, क्लोम, प्लीहा, फुप्फुस, छोटी अन्त्र, बड़ी अन्त्र, उदरस्थ मल, पित्त, श्लेष्मा, पूय, रक्त, स्वेद, मेद, अश्रु, वसा, क्ष्वेड (गाढा कफ=खँखार), सिङ्घाणक (नाक का मल=सिणक), लसीका एवं मूत्र भरे पड़े हैं। भिक्षुओ! यह प्रत्यवेक्षण ही—'जैसे ऊपर वैसे नीचे तथा जैसे नीचे वैसे ऊपर' साधना कहलाती है।

''कैसे, भिक्षुओ! 'जैसे दिन में वैसे रात्रि में' या 'जैसे रात्रि में वैसे दिन में' साधना करता है? यहाँ, भिक्षुओ! वह भिक्षु जिन आकारों से, जिन चिह्नों से, जिन निमित्तों से दिन में छन्दसमाधिप्रधानसंस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना करता है उन्हीं आकारों से, उन्हीं चिह्नों से, उन्हीं निमित्तों से रात्रि में भी इस ऋद्धिपाद की भावना करता है; अथवा जिन आकारों, जिन चिह्नों, जिन निमित्तों से रात्रि में इस ऋद्धिपाद की भावना करता है उन्हीं आकारों, चिह्नों तथा निमित्तों से दिन में भी इस ऋद्धिपाद की भावना करता है। इस प्रकार, भिक्षुओ! वह भिक्षु जैसे दिन में वैसे ही रात्रि में या जैसे रात्रि में वैसे ही दिन में साधना करता है।

''कैसे, भिक्षुओ! वह भिक्षु खुले एवं स्वतन्त्र चित्त से प्रभा वाले चित्त की भावना करता है? भिक्षुओ! भिक्षु को आलोकसंज्ञा तथा दिवासंज्ञा भली भाँति गृहीत एवं अधिष्ठित

दिवासञ्ञा स्वाधिट्ठिता। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति।

[R.279] "कतमं च, भिक्खवे, अतिलीनं विरियं? यं, भिक्खवे, विरियं कोसज्जसहगतं कोसज्जसम्पयुत्तं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, अतिलीनं विरियं।

"कतमं च, भिक्खवे, अतिप्पग्गहितं विरियं? यं, भिक्खवे, विरियं उद्धच्चसहगतं उद्धच्चसम्पयुत्तं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, अतिप्पग्गहितं विरियं।

"कतमं च, भिक्खवे, अज्झत्तं सङ्खित्तं विरियं? यं, भिक्खवे, विरियं थीनमिद्धसहगतं थीनमिद्धसम्पयुत्तं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, अज्झत्तं सङ्खित्तं विरियं।

"कतमं च, भिक्खवे, बहिद्धा विक्खित्तं विरियं? यं, भिक्खवे, विरियं बहिद्धा पञ्च कामगुणे आरब्भ अनुविक्खित्तं अनुविसटं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, बहिद्धा विक्खित्तं विरियं...पे०...।

"कथं च, भिक्खवे, भिक्खु विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो आलोकसञ्ञा सुग्गहिता होति दिवासञ्ञा स्वाधिट्ठिता। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति।

"कतमं च, भिक्खवे, अतिलीनं चित्तं? यं, भिक्खवे, चित्तं कोसज्जसहगतं कोसज्जसम्पयुत्तं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, अतिलीनं चित्तं।

"कतमं च, भिक्खवे, अतिप्पग्गहितं चित्तं? यं, भिक्खवे, चित्तं उद्धच्चसहगतं उद्धच्चसम्पयुत्तं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, अतिप्पग्गहितं चित्तं।

"कतमं च, भिक्खवे, अज्झत्तं सङ्खित्तं चित्तं? यं, भिक्खवे, चित्तं थीनमिद्धसहगतं थीनमिद्धसम्पयुत्तं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, अज्झत्तं सङ्खित्तं चित्तं।

[R.280] "कतमं च, भिक्खवे, बहिद्धा विक्खित्तं चित्तं? यं, भिक्खवे, चित्तं बहिद्धा

होती है। भिक्षुओ! इस प्रकार वह भिक्षु खुले एवं स्वतन्त्र चित्त से प्रभा वाले चित्त की भावना करता है। (१)

"भिक्षुओ! अतिलीन वीर्य...अतिप्रगृहीत वीर्य...अध्यात्म संक्षिप्त...बाह्य संक्षिप्त वीर्य ...पूर्ववत्...*(ऊपर व्याख्यात 'छन्द' की तरह ही विस्तार कर लें।)* (२)

"भिक्षुओ! अतिलीन चित्त...अतिप्रगृहीत चित्त...अध्यात्म संक्षिप्त चित्त...बाह्य संक्षिप्त चित्त...पूर्ववत्...*(ऊपर व्याख्यात 'छन्द' की तरह ही विस्तार कर लें।)* (३)

पञ्चकामगुणे आरब्भ अनुविक्खित्तं अनुविसटं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, बहिद्धा विक्खित्तं चित्तं ...पे०...एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति।

"कतमा च, भिक्खवे, अतिलीना वीमंसा? या, भिक्खवे, वीमंसा [N.240] कोसज्जसहगता कोसज्जसम्पयुत्ता—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अतिलीना वीमंसा।

"कतमा च, भिक्खवे, अतिप्पग्गहिता वीमंसा? या, भिक्खवे, वीमंस [B.245] उद्धच्चसहगता उद्धच्चसम्पयुत्ता—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अतिप्पग्गहिता वीमंसा।

"कतमा च, भिक्खवे, अज्झत्तं सङ्खित्ता वीमंसा? या, भिक्खवे, वीमंसा थीनमिद्धसहगता थीनमिद्धसम्पयुत्ता—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अज्झत्तं सङ्खित्ता वीमंसा।

"कतमा च, भिक्खवे, बहिद्धा विक्खित्ता वीमंसा? या, भिक्खवे, वीमंसा बहिद्धा पञ्च कामगुणे आरब्भ अनुविक्खित्ता अनुविसटा—अयं वुच्चति, भिक्खवे, बहिद्धा विक्खित्ता वीमंसा...पे०...एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति। एवं भाविता खो, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा एवं बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा।

"एवं भावितेसु खो, भिक्खवे, भिक्खु चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु, अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति, बहुधा पि हुत्वा एको होति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति। एवं भावितेसु खो, भिक्खवे, भिक्खु चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु, आसवानं खया अनासवं [R.281] चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती" ति॥ ●

पासादकम्पनवग्गो दुतियो॥

"भिक्षुओ! अतिलीन मीमांसा...अतिप्रगृहीत मीमांसा...अध्यात्म संक्षिप्त मीमांसा... बाह्य संक्षिप्त मीमांसा...पूर्ववत्...*(ऊपर व्याख्यात 'छन्द' के समान ही विस्तार कर लें।)* (४)

"भिक्षुओ! इस प्रकार भावित एवं अभ्यस्त ये चारों ऋद्धिपाद बहुत महत्त्वशाली एवं विशिष्ट फलप्रद होते हैं। इन ऋद्धिपादों की साधना पूर्ण करने पर वह भिक्षु विविध चमत्कार देखता दिखाता है; जैसे—एक होते हुए भी बहुत हो जाना—आदि...पूर्ववत्... ॥●

प्रासादकम्पनवर्ग सम्पन्न॥

तस्सुद्दानं

पुब्बं महप्फलं छन्दं, मोग्गल्लानं च उण्णाभं।
द्वे समणब्राह्मणा भिक्खु, देसना विभङ्गेन चा ति॥

इस वर्ग में व्याख्यात वर्गों की सूची—१. पूर्वसूत्र, २. महाफलसूत्र, ३. छन्द-समाधिसूत्र, ४. मोग्गल्लानसूत्र, ५. ऊर्णाभब्राह्मणसूत्र, ६. प्रथम श्रमणब्राह्मणसूत्र, ७. द्वितीय श्रमणब्राह्मणसूत्र, ८. भिक्षुसूत्र, ९. ऋद्ध्यादिदेशनासूत्र एवं १०. विभङ्गसूत्र॥

३. अयोगुळवग्गो ततियो

२१. मग्गसुत्तं

२१. सावत्थिनिदानं। "पुब्बेव मे, भिक्खवे, सम्बोधा अनभिसम्बुद्धस्स [N.241] बोधिसत्तस्सेव सतो एतदहोसि—'को नु खो मग्गो, का पटिपदा इद्धिपादभावनाया' ति? तस्स मय्हं, भिक्खवे, एतदहोसि—'इध भिक्खु छन्दसमाधिप्पधान-[B.246] सङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—इति मे छन्दो न च अतिलीनो भविस्सति, न च अतिप्पग्गहितो भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्तो भविस्सति, न च बहिद्धा विक्खित्तो भविस्सति। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति। विरियसमाधि...पे०... चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—इति मे वीमंसा न च अतिलीना भविस्सति, न च अतिप्पग्गहिता भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्ता भविस्सति, न च बहिद्धा विक्खित्ता भविस्सति। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा'। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति।

एवं भावितेसु खो, भिक्खवे, भिक्खु चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु,[R.282] अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति, बहुधा पि हुत्वा एको होति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति। एवं भावितेसु खो, भिक्खवे,

---

३. अयोगुलवर्ग तृतीय

२१. मार्गसूत्र : : ऋद्धिपाद भावना का मार्ग

२१. ...**श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! बोधिप्राप्ति से पूर्व, जब मैं बोधिसत्त्वावस्था में ही था, मेरे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ—'इस ऋद्धिपादसाधना का मार्ग क्या है?' तब मुझ को यह ध्यान में आया—'यहाँ कोई भिक्षु छन्दसमाधिप्रधानसंस्कार से युक्त ऋद्धिपाद की भावना यह सोच कर करता है—...पूर्ववत्...खुले एवं स्वतन्त्र चित्त से प्रभामय चित्त की भावना करता है ...वीर्यसमाधि...चित्तसमाधि...मीमांसासमाधि...चित्त की भावना करता है'।

"भिक्षुओ! यों वह भिक्षु चारों ऋद्धिपादों की भावना एवं अभ्यास से विविध ऋद्धिविधों का अनुभव करता है; जैसे—एक होते हुए भी बहुत हो जाना...पूर्ववत्...ब्रह्मलोक

भिक्खु चतूसु इद्धिपादेसु एवं बहुलीकतेसु, आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती'' ति॥ •

(छ पि अभिञ्ञायो वित्थारेतब्बा।)

२२. अयोगुळसुत्तं

२२. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मा येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो [N.242] भगवन्तं एतदवोच—''अभिजानाति नु खो, भन्ते, भगवा इद्धिया मनोमयेन कायेन ब्रह्मलोकं उपसङ्कमिता'' ति?

''अभिजानामि ख्वाहं, आनन्द, इद्धिया मनोमयेन कायेन ब्रह्मलोकं उपसङ्कमिता'' ति।

''अभिजानाति पन, भन्ते, भगवा इमिना चातुम्महाभूतिकेन कायेन इद्धिया [B.247] ब्रह्मलोकं उपसङ्कमिता'' ति?

''अभिजानामि ख्वाहं, आनन्द, इमिना चातुम्महाभूतिकेन कायेन इद्धिया ब्रह्मलोकं उपसङ्कमिता'' ति।

''यं च खो ओमाति भन्ते, भगवा इद्धिया मनोमयेन कायेन ब्रह्मलोकं [R.283] उपसङ्कमितुं, यं च खो अभिजानाति, भन्ते, भगवा इमिना चातुम्महाभूतिकेन

तक काया के वश में कर लेता है। इस तरह वह भिक्षु चारों ऋद्धिपादों की भावना कर लेने पर आश्रवों के क्षय से अनाश्रव चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में जान कर साक्षात् कर साधना करता है''॥ •

(छह अभिज्ञाओं का भी विस्तार कर लेना चाहिये।)

२२. अयोगुलसूत्र : : शरीर से ब्रह्मलोक जाना

२२. ...**श्रावस्ती में** ही...। तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् की सेवा में गये। वहाँ जा कर उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से अपनी यह जिज्ञासा प्रकट की—''भन्ते! क्या भगवान् मनोमय काय से ऋद्धि द्वारा ब्रह्मलोक तक जा सकते हैं?''

''हाँ, आनन्द! जा सकता हूँ।''

''भन्ते! क्या भगवान् इन चार महाभूतों से बने काय से भी ब्रह्मलोक तक जा सकते हैं?''

''हाँ, आनन्द! जा सकता हूँ।''

कायेन इद्धिया ब्रह्मलोकं उपसङ्कमिता, तयिदं, भन्ते, भगवतो अच्छरियं चेव अब्भुतं चा'' ति।

''अच्छरिया चेव, आनन्द, तथागता अच्छरियधम्मसमन्नागता च, अब्भुता चेव, आनन्द, तथागता अब्भुतधम्मसमन्नागता च।

''यस्मिं, आनन्द, समये तथागतो कायं पि चित्ते समोदहति चित्तं पि काये समोदहति, सुखसञ्ञं च लहुसञ्ञं च काये ओक्कमित्वा विहरति; तस्मिं, आनन्द, समये तथागतस्स कायो लहुतरो चेव होति मुदुतरो च कम्मनियतरो च पभस्सरतरो च। सेय्यथापि, आनन्द, अयोगुळो दिवसं सन्तत्तो लहुतरो चेव होति मुदुतरो च कम्मनियतरो च पभस्सरतरो च; एवमेव खो, आनन्द, यस्मिं समये तथागतो कायं पि चित्ते समोदहति, चित्तं पि काये समोदहति, सुखसञ्ञं च लहुसञ्ञं च काये ओक्कमित्वा विहरति; तस्मिं, आनन्द, समये तथागतस्स कायो लहुतरो चेव होति मुदुतरो च कम्मनियतरो च पभस्सरतरो च।

''यस्मिं, आनन्द, समये तथागतो कायं पि चित्ते समोदहति, चित्तं पि काये समोदहति, सुखसञ्ञं च लहुसञ्ञं च काये ओक्कमित्वा विहरति; तस्मिं, आनन्द, समये तथागतस्स कायो अप्पकसिरेनेव पठविया वेहासं अब्भुग्गच्छति, सो अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति, बहुधा पि हुत्वा एको होति

''भन्ते! आप मनोमय काय तथा चार महाभूतों से बने इस काय से ब्रह्मलोक तक जा सकते हैं—यह बहुत आश्चर्यजनक बात है!।''

''आनन्द! तथागत के सभी कार्य आश्चर्यजनक एवं अपूर्व (अद्भुत) धर्मों से युक्त होते ही हैं।''

''आनन्द! जिस समय तथागत चित्त को काया में या काया को चित्त में समन्वित (एकत्र) करते हैं तब वे काया में सुखसंज्ञा एवं लघुसंज्ञा का अवक्रमण (प्रवेश) कर साधना करते हैं। उस समय तथागत का शरीर बहुत लघु (हल्का) एवं मृदु, सुखद एवं देखने में सुन्दर तथा कान्तिमय हो जाता है। जैसे, आनन्द! कोई लोहे का गोला दिन भर धूप में तप कर हल्का, मृदु, सुखद, दर्शनीय एवं कान्तिमय हो जाता है; वैसे ही, आनन्द! तथागत का काय भी जब चित्त से एकीकृत होता है, तब वे अपने काय एवं चित्त को एकीकृत कर सुख एवं लाघव प्राप्त करते हुए साधना करते हैं। यों, आनन्द! उस समय तथागत का काय अपेक्षाकृत लघु एवं मृदु, दर्शनीय एवं कान्तिमय हो जाता है।

''आनन्द! ऐसी साधना करने पर, तथागत का काय, किसी कठिनाई के विना ही, पृथ्वी से आकाश की ओर उठता है, तथा उस समय वह शरीर विविध ऋद्धियाँ अनुभव

[N.243, R.284] ...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति। सेय्यथापि, आनन्द, तूलपिचु वा कप्पासपिचु वा लहुको वातूपादानो अप्पकसिरेनेव पठविया वेहासं अब्भुग्गच्छति; एवमेव खो, आनन्द, यस्मिं समये तथागतो कायं पि चित्ते समोदहति, [B.248] चित्तं पि काये समोदहति, सुखसञ्ञं च लहुसञ्ञं च काये ओक्कमित्वा विहरति; तस्मिं, आनन्द, समये तथागतस्स कायो अप्पकसिरेनेव पठविया वेहासं अब्भुग्गच्छति, सो अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति ...पे०... याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेती'' ति॥ ●

२३. भिक्खुसुत्तं

२३. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, इद्धिपादा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्त-समाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता भिक्खु आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती'' ति॥ ●

२४. सुद्धिकसुत्तं

२४. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, इद्धिपादा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्त-

---

करता है; जैसे—एक होते हुए भी बहुत हो जाना...पूर्ववत्...काया से ब्रह्मलोक तक पहुँच जाना। जैसे, आनन्द! रूई या कपास का कोई लघुखण्ड (फाहा) बहुत सरलता से आकाश में उड़ जाता है; वैसे ही, आनन्द! तथागत का शरीर विना किसी कठिनाई के पृथ्वी से आकाश की ओर उठ जाता है, तथा उस समय वह नानाविध ऋद्धियों का अनुभव करता है; जैसे—एक हो कर भी बहुत हो जाना...इसी काया से ब्रह्मलोक तक पहुँच जाना''॥ ●

२३. भिक्षुसूत्र : : चार ऋद्धिपाद

२३. ...''भिक्षुओ! ऋद्धिपाद चार हैं। कौन से चार? छन्दसमाधि...वीर्यसमाधि... चित्तसमाधि...मीमांसासमाधि...। भिक्षुओ! ये चार ऋद्धिपाद हैं। भिक्षुओ! इन चारों ऋद्धिपादों की भावना एवं अभ्यास करने से साधक भिक्षु आश्रवों के क्षीण हो जाने के कारण निराश्रव हो कर चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में जान कर, देख कर, प्राप्त कर साधना करता है''॥ ●

समाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा''ति॥ •

२५. पठमफलसुत्तं

२५. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, इद्धिपादा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, [R.285] भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०... चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता [N.244] बहुलीकतत्ता भिक्खुना द्विन्नं फलानं अञ्ञतरं फलं पाटिकङ्खं—दिट्ठेव धम्मे अञ्ञा, सति वा उपादिसेसे अनागामिता'' ति॥ •

२६. दुतियफलसुत्तं

२६. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, इद्धिपादा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, [B.249] भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०... चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो इद्धिपादा। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता सत्त फला सत्तानिसंसा पाटिकङ्खा।

''कतमे सत्त फला सत्तानिसंसा? दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति नो चे दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति; अथ मरणकाले अञ्ञं आराधेति, नो चे दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति, नो चे मरणकाले अञ्ञं आराधेति; अथ पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति, उपहच्चपरिनिब्बायी होति, असङ्खारपरिनिब्बायी होति, ससङ्खारपरिनिब्बायी होति, उद्धंसोतो होति

---

२४. शुद्धिकसूत्र : : चार ऋद्धिपाद

२४. ...''भिक्षुओ! ऋद्धिपाद चार हैं। कौन से चार? ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! ये चार ऋद्धिपाद होते हैं''॥ •

२५. प्रथम फलसूत्र : : चार ऋद्धिपादों का फल

२५. ...''भिक्षुओ! ऋद्धिपाद चार हैं। ...पूर्ववत्...। इन चारों ऋद्धिपादों की भावना एवं अभ्यास से साधक भिक्षु को इन दो में से एक फल अवश्य प्राप्त होता है— १. इसी जन्म में परम ज्ञान (निर्वाण) या फिर, प्रारब्धवश यह न हो पाय तो, अनागामिता''॥•

२६. द्वितीय फलसूत्र : : ऋद्धिपादों की साधना के सात फल

२६. ...''भिक्षुओ! ऋद्धिपाद चार होते हैं। ...पूर्ववत्...। इन चारों ऋद्धिपादों की

अकनिट्ठगामी। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता इमे सत्त फला सत्तानिसंसा पाटिकङ्खा'' ति॥ •

२७. पठमआनन्दसुत्तं

२७. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा [R.286] आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—''कतमा नु खो, भन्ते, इद्धि, कतमो इद्धिपादो, कतमा इद्धिपादभावना, कतमा इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा'' ति?

''इधानन्द, भिक्खु अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति, बहुधा पि हुत्वा एको होति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति—अयं वुच्चतानन्द, इद्धि।

''कतमो चानन्द, इद्धिपादो? यो, आनन्द, मग्गो या पटिपदा इद्धिलाभाय इद्धि-पटिलाभाय संवत्तति—अयं वुच्चतानन्द, इद्धिपादो।

[N.245, B.250] ''कतमा चानन्द, इद्धिपादभावना? इधानन्द, भिक्खु छन्दसमाधिप्प-धानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...वीमंसा-समाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—अयं वुच्चतानन्द, इद्धिपादभावना।

साधना पूर्ण कर लेने पर साधक भिक्षु को सात विशेष फल प्राप्त होते हैं। कौन से सात? ...पूर्ववत्... ॥ •

२७. प्रथम आनन्दसूत्र : : ऋद्धि एवं ऋद्धिपाद

२७. ...**श्रावस्ती में** ही...। ...तब आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यों पूछा—''भन्ते! यह ऋद्धि क्या है? ऋद्धिपाद क्या है? इस ऋद्धिपाद की साधना क्या है? तथा इस ऋद्धिपाद की साधना को प्राप्त करने का मार्ग क्या है?

(१) ''यहाँ, आनन्द! वह साधक भिक्षु, साधना पूर्ण करने के बाद विविध ऋद्ध्यनुभावों को अनुभव करता है; जैसे—एक हो कर बहुत हो जाना...ब्रह्मलोक तक काया से वश में करना—भिक्षुओ! इसी को कहते हैं—'ऋद्धि'।

(२) ''आनन्द! 'ऋद्धिपाद' क्या है? आनन्द! जिस मार्ग या उपाय से ऋद्धि प्राप्त होती हो वही कहलाता है 'ऋद्धिपाद'।

(३) ''आनन्द! 'ऋद्धिपादभावना' क्या है? यहाँ, आनन्द! (क) छन्दसमाधि... (ख) वीर्यसमाधि...(ग) चित्तसमाधि...एवं (घ) मीमांसासमाधि...। आनन्द! इन चारों की भावना ही 'ऋद्धिपादभावना' कहलाती है।

''कतमा चानन्द, इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि—अयं वुच्चतानन्द, इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा'' ति॥ ●

२८. दुतियआनन्दसुत्तं

२८. एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं आनन्दं भगवा एतदवोच—''कतमा नु खो, आनन्द, इद्धि, कतमो इद्धिपादो, कतमा इद्धिपादभावना, कतमा इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा'' ति?

भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा भगवंनेत्तिका...पे०...।

''इधानन्द, भिक्खु अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति—अयं वुच्चतानन्द, इद्धि।

''कतमो चानन्द, इद्धिपादो? यो, आनन्द, मग्गो या पटिपदा इद्धिलाभाय इद्धिपटिलाभाय संवत्तति—अयं वुच्चतानन्द, इद्धिपादो।

''कतमा चानन्द, इद्धिपादभावना? इधानन्द, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—अयं वुच्चतानन्द, इद्धिपादभावना।

---

(४) ''तथा, आनन्द! इस ऋद्धिपादभावना का मार्ग क्या है? यही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग। जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। इसे कहते हैं—'ऋद्धिपादभावना मार्ग'॥ ●

२८. द्वितीय आनन्दसूत्र : : ऋद्धि एवं ऋद्धिपाद

२८. ...एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द को भगवान् ने यह पूछा—''आनन्द! 'ऋद्धि' क्या है? 'ऋद्धिपाद' क्या है? 'ऋद्धिपादभावना' क्या है? एवं 'ऋद्धिपादभावनागामी मार्ग' क्या है?

''भन्ते! धर्मनिर्णय में तो हम भिक्षु लोग आप को ही प्रमाण मानते हैं...अत: आप ही हम लोगों के लिये इस का स्पष्ट व्याख्यान करें।''

''यहाँ, आनन्द! साधक भिक्षु अनेक प्रकार के ऋद्ध्यनुभाव अनुभव करता है; जैसे—एक हो कर बहुत हो जाना...इसी काया से ब्रह्मलोक तक वश में कर लेना। इसी अनुभव को, आनन्द 'ऋद्धि' कहते हैं।

''आनन्द! 'ऋद्धिपाद' किसे कहते हैं? आनन्द! साधक भिक्षु द्वारा जो मार्ग या उपाय ऋद्धिप्राप्ति के लिये स्वीकार किया जाता है, वही 'ऋद्धिपाद' कहलाता है।

''आनन्द! यह 'ऋद्धिपादभावना' क्या है? यहाँ, आनन्द! भिक्षु छन्दसमाधि... वीर्यसमाधि...चित्तसमाधि...मीमांसासमाधि...—इन चारों ऋद्धिपादों की भावना ही 'ऋद्धिपादभावना' कहलाती है।

"कतमा चानन्द, इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि—अयं वुच्चतानन्द, इद्धिपाद-भावनागामिनी पटिपदा" ति॥

२९. पठमभिक्खुसुत्तं

[R.287] २९. अथ खो सम्बहुला भिक्खू येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्नो खो ते भिक्खू भगवन्तं [B.251] एतदवोचुं—"कतमा नु खो, भन्ते, इद्धि, कतमो इद्धिपादो, कतमा इद्धिपादभावना, कतमा इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा" ति?

[N.246] "इध, भिक्खवे, भिक्खु अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धि।

"कतमो च, भिक्खवे, इद्धिपादो? यो, भिक्खवे, मग्गो, या पटिपदा इद्धि-लाभाय इद्धिपटिलाभाय संवत्तति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धिपादो।

"कतमा च, भिक्खवे, इद्धिपादभावना? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्प-धानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...वीमंसा-समाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धिपाद-भावना।

"कतमा च, भिक्खवे, इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा" ति॥

३०. दुतियभिक्खुसुत्तं

३०. अथ खो सम्बहुला भिक्खू येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु...पे०...एकमन्तं

"आनन्द! यह 'ऋद्धिपादभावनागामी मार्ग' क्या है? यही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग; जैसे—सम्यग्दृष्टि...सम्यक्समाधि। आनन्द! इसी को कहते हैं—ऋद्धिपादभावना की ओर ले जाने वाला मार्ग (उपाय)"॥

२९. प्रथम भिक्षुसूत्र : : ऋद्धि एवं ऋद्धिपाद

२९. ...तब कभी बहुत से भिक्षु भगवान् के सम्मुख गये, उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ कर उन्होंने भगवान् से पूछा—"भन्ते! यह ऋद्धि क्या है? ...पूर्ववत्... ऋद्धिपाद-भावनागामी मार्ग क्या है? ...पूर्वसूत्रवत्... ॥ *(विस्तार कर लें।)*

निसिन्ने खो ते भिक्खू भगवा एतदवोच—"कतमा नु खो, भिक्खवे, इद्धि, कतमो इद्धिपादो, कतमा इद्धिपादभावना, कतमा इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा" ति?

"भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा भगवन्नेत्तिका...पे०..."।

"कतमा च, भिक्खवे, इद्धि? इध, भिक्खवे, भिक्खु अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धि।

"कतमो च, भिक्खवे, इद्धिपादो? यो, भिक्खवे, मग्गो, या पटिपदा इद्धिलाभाय इद्धिपटिलाभाय संवत्तति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धिपादो।

"कतमा च, भिक्खवे, इद्धिपादभावना? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्द-[B.252] समाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि... वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धिपादभावना।

"कतमा च, भिक्खवे, इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा? [N.247, R.288] अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि—अयं वुच्चति, भिक्खवे, इद्धिपादभावनागामिनी पटिपदा" ति॥ ●

३१. मोग्गल्लानसुत्तं

३१. तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमेसं धम्मानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता मोग्गल्लानो भिक्खु एवंमहिद्धिको एवंमहानुभावो" ति?

"भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा भगवन्नेत्तिका...पे०..."।

"चतुन्नं खो, भिक्खवे, इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता मोग्गल्लानो भिक्खु एवंमहिद्धिको एवंमहानुभावो। कतमेसं चतुन्नं? इध, भिक्खवे, मोग्गल्लानो भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—'इति मे छन्दो न च अतिलीनो भविस्सति, न च अतिप्पग्गहितो भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्तो भविस्सति, न च

---

३०. द्वितीय भिक्षुसूत्र : : ऋद्धि एवं ऋद्धिपाद

३०. ...तब अपने पास आये बहुत से भिक्षुओं को भगवान् ने पूछा—"भिक्षुओ! 'ऋद्धि' क्या है? ...पूर्ववत्...'ऋद्धिपादभावनागामी मार्ग' क्या है?"

...पूर्वसूत्रवत्... ॥ *(ऊपर आनन्दसूत्र का व्याख्यान यहाँ भी दोहरा लें।)* ●

३१. मोग्गल्लानसूत्र : :

३१. ...वहाँ भगवान् ने वहाँ उपस्थित भिक्षुओं से पूछा—"तो क्या मानते हो,

बहिद्धा विक्खित्तो भविस्सति'। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथ अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति। विरिय-समाधि...पे०...चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—'इति मे वीमंसा न च अतिलीना भविस्सति, न च अतिप्पग्गहिता भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्ता भविस्सति, न च बहिद्धा विक्खित्ता भविस्सति'...पे०...इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता मोग्गल्लानो भिक्खु एवंमहिद्धिको एवंमहानुभावो।

''इमेसं च पन, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता मोग्गल्लानो [B.253] भिक्खु एवं अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति, [R.289] बहुधा पि हुत्वा एको होति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति। इमेसं च पन, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता मोग्गल्लानो भिक्खु आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती'' ति॥ •

३२. तथागतसुत्तं

[N.248] ३२. तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमेसं धम्मानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता तथागतो एवंमहिद्धिको एवंमहानुभावो'' ति?

''भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा...पे०...''।

''चतुन्नं खो, भिक्खवे, इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता तथागतो एवं-महिद्धिको एवंमहानुभावो। कतमेसं चतुन्नं? इध, भिक्खवे, तथागतो छन्दसमाधिप्प-धानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति—'इति मे छन्दो न च अतिलीनो भविस्सति, न च

भिक्षुओ! यह मोग्गल्लान भिक्षु किन धर्मों की साधना एवं अभ्यास से इतना विशिष्ट ऋद्धिसम्पन्न एवं प्रतापी हो गया? ...पूर्ववत्... ॥

[पूर्ववर्णित मोग्गल्लानसूत्र का यहाँ भी विस्तार कर लें।] •

३२. तथागतसूत्र : : तथागत की ऋद्धिमत्ता

३२. ...''तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! किन धर्मों की साधना एवं अभ्यास से तथागत इतने ऋद्धिमान् एवं इतने महानुभाव हो पाये?''

''भन्ते! धर्म के विषय में हम भिक्षुओं के लिये आप ही सर्वोच्च प्रमाण हैं...पूर्ववत्..।''

अतिप्पग्गहितो भविस्सति, न च अज्झत्तं सङ्खित्तो भविस्सति, न च बहिद्धा विक्खित्तो भविस्सति'। पच्छापुरेसञ्ञी च विहरति—यथा पुरे तथा पच्छा, यथा पच्छा तथा पुरे; यथा अधो तथा उद्धं, यथा उद्धं तथा अधो; यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेति। विरियसमाधि...पे०... चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति...इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता तथागतो एवंमहिद्धिको एवंमहानुभावो।

"इमेसं च पन, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता [R.290] तथागतो अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति। इमेसं च पन, भिक्खवे, चतुन्नं इद्धिपादानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता तथागतो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं [B.254] दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती" ति॥ •

(छ पि अभिञ्ञायो वित्थारेतब्बा।)

अयोगुळवग्गो ततियो॥

तस्सुद्दानं

मग्गो अयोगुळो भिक्खु, सुद्धिकं चापि द्वे फला।
द्वे चानन्द दुवे भिक्खू, मोग्गल्लानो तथागतो ति॥ •

"भिक्षुओ! इन चार ऋद्धिपादों की साङ्गोपाङ्ग साधना एवं दृढ अभ्यास से तथागत ...पूर्ववत्... ॥

(पूर्ववर्णित **पुरासूत्र** का यहाँ भी विस्तार कर लें।)

(यहाँ छह अभिज्ञाओं का भी विस्तार कर लेना चाहिये।) •

अयोगुलवर्ग तृतीय सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. मार्गसूत्र, २. अयोगुलसूत्र, ३. भिक्षुसूत्र, ४. शुद्धिकसूत्र, ५. प्रथम फलसूत्र, ६. द्वितीय फलसूत्र, ७. प्रथम आनन्दसूत्र, ८. द्वितीय आनन्दसूत्र, ९. प्रथम भिक्षुसूत्र, १०. द्वितीय भिक्षुसूत्र, ११. मोग्गल्लानसूत्र एवं १२. तथागतसूत्र॥ •

४. गङ्गापेय्यालवग्गो चतुत्थो

३३-४४. गङ्गानदीआदिसुत्तं

[N.249] ३३-४४. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो इद्धिपादे भावेन्तो चत्तारो इद्धिपादे बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो इद्धिपादे भावेन्तो चत्तारो इद्धिपादे बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खार-समन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधान-[R.291] सङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो इद्धिपादे भावेन्तो चत्तारो इद्धिपादे बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बान-पब्भारो'' ति॥ ●

गङ्गापेय्यालवग्गो चतुत्थो॥

तस्सुद्दानं

छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो।
द्वेते छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥ ●

---

४. गङ्गापेय्यालवर्ग चतुर्थ

३३-४४. गङ्गानदीआदिसूत्र : : निर्वाण की ओर प्रगति

३३-४४. ...''जैसे, भिक्षुओ! गङ्गा नदी पूर्वाभिमुख हो कर ही बहती है, तथा पूर्व की ओर बढती है; उसी तरह, इन चारों ऋद्धिपादों की भावना तथा अभ्यास करने वाला भिक्षु भी निर्वाण की ओर ही बढता है। ...पूर्ववत्...''॥

(पूर्ववर्णित गङ्गापेय्यालवर्ग का विस्तार यहाँ भी कर लें।) ●

गङ्गापेय्यालवर्ग चतुर्थ सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—छह पूर्वाभिमुख बहने वाली तथा छह समुद्राभिमुख बहने वाली नदियों के दृष्टान्त से इस वर्ग में बारह सूत्रों का व्याख्यान हुआ है॥ ●

५. अप्पमादवग्गो पञ्चमो

(अप्पमादवग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

तथागतं पदं कूटं, मूलं सारेन वस्सिकं। [B.255]
राजा चन्दिमसुरिया, वत्थेन दसमं पदं ति॥ •

६. बलकरणीयवग्गो छट्ठो

(बलकरणीयवग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

बलं बीजं च नागो च, रुक्खो कुम्भेन सूकिया।
आकासेन च द्वे मेघा, नावा आगन्तुका नदी ति॥ •

---

५. अप्रमादवर्ग पञ्चम

(पूर्ववर्णित अप्रमादवर्ग का यहाँ भी विस्तार कर लेना चाहिये।)

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. तथागतसूत्र, २. पदसूत्र, ३. कूटसूत्र, ४. मूलसूत्र, ५. सारसूत्र, ६. वर्षिकसूत्र, ७. राजासूत्र, ८. चन्द्रमासूत्र, ९. सूर्यसूत्र एवं १०. काशिकेयवस्त्रसूत्र॥ •

६. बलकरणीयवर्ग षष्ठ

(इस वर्ग का भी पूर्ववर्णित बलकरणीयवर्ग की तरह ही विस्तार कर लें।)

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. बलसूत्र, २. बीजसूत्र, ३. नागसूत्र, ४. वृक्षसूत्र, ५. कुम्भसूत्र, ६. शूकसूत्र, ७. प्रथमआकाशसूत्र, ८. प्रथममेघसूत्र, ९. द्वितीयमेघ-सूत्र, १०. नौसूत्र, ११. आगन्तुकसूत्र एवं १२. नदीसूत्र॥ •

७. एसनावग्गो सत्तमो

(एसनावग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

[N.250, R.292] एसना विधा आसवो, भवो च दुक्खता तिस्सो।
खिलं मलं च नीघो च, वेदना तण्हा तसिना चा ति॥ •

८. ओघवग्गो अट्ठमो

७८-८९. ओघादिसुत्तं

७८-८९. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि खो, भिक्खवे, पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय चत्तारो इद्धिपादा भावेतब्बा। कतमे चत्तारो? इध, [B.256] भिक्खवे, भिक्खु छन्दसमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति, विरियसमाधि...पे०...चित्तसमाधि...वीमंसासमाधिप्पधानसङ्खारसमन्नागतं इद्धिपादं भावेति। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय इमे चत्तारो इद्धिपादा भावेतब्बा" ति॥ •

(यथा मग्गसंयुत्तं तथा वित्थारेतब्बं।)

ओघवग्गो अट्ठमो॥

---

७. एषणावर्ग सप्तम

(इस एषणावर्ग का भी पूर्ववत् विस्तार कर लेना चाहिये।)

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. एषणासूत्र, २. विधासूत्र, ३. आश्रवसूत्र, ४. भवसूत्र, ५. दुःखतासूत्र, ६. खिलसूत्र, ७. मलसूत्र, ८. नीघसूत्र, ९. वेदनासूत्र, १०. तृष्णासूत्र एवं ११. तर्षणसूत्र॥ •

८. औघवर्ग अष्टम

७८-८९. औघादिसूत्र : : औघ

७८-८९. ..."भिक्षुओ! ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। कौन से पाँच? रूपराग, अरूपराग, मान, औद्धत्य एवं अविद्या। भिक्षुओ! ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। भिक्षुओ! इन पाँचों ऊर्ध्वभागीय संयोजनों को जानने के लिये, स्थिर ज्ञान के लिये, परिक्षय के लिये, प्रहाण के लिये, भावित एवं अभ्यास करना चाहिये। कौन से चार? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु छन्दसमाधि... वीर्यसमाधि...चित्तसमाधि...मीमांसासमाधि...। इन

तस्सुद्दानं

ओघो योगो उपादानं, गन्था अनुसयेन च। [R.293]
कामगुणा नीवरणा, खन्धा ओरुद्धम्भागिया ति॥ ●

इद्धिपादसंयुत्तं समत्तं॥

—— ※ ——

पाँचों ऊर्ध्वभागीय संयोजनों को जानने के लिये...चारों ऋद्धिपादों को...अभ्यस्त करना चाहिये''॥

(मार्गसंयुक्त में वर्णित औघवर्ग के समान इस का भी विस्तार कर लें।) ●

औघवर्ग अष्टम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. औघसूत्र, २. योगसूत्र, ३. उपादानसूत्र, ४. ग्रन्थसूत्र, ५. अनुशयसूत्र, ६. कामगुणसूत्र, ७. नीवरणसूत्र, ८. स्कन्धसूत्र, ९. अवर-भागीयसूत्र एवं १०. ऊर्ध्वभागीयसूत्र॥ ●

ऋद्धिपादसंयुक्त समाप्त॥

—— ※ ——

५२. अनुरुद्धसंयुत्तं

१. रहोगतवग्गो पठमो

१. पठमरहोगतसुत्तं

[N.251, B.257, R.294] १. एवं मे सुतं। एकं समयं आयस्मा अनुरुद्धो सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो आयस्मतो अनुरुद्धस्स रहोगतस्स पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को उदपादि—"येसं केसञ्चि चत्तारो सतिपट्ठाना विरद्धा, विरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी। येसं केसञ्चि चत्तारो सतिपट्ठाना आरद्धा, आरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी" ति।

अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो आयस्मतो अनुरुद्धस्स चेतसा चेतोपरिवितक्कमञ्ञाय—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—आयस्मतो अनुरुद्धस्स सम्मुखे पातुरहोसि। अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोच—"कित्तावता नु खो, आवुसो अनुरुद्ध, भिक्खुनो चत्तारो सतिपट्ठाना आरद्धा होन्ती" ति?

"इधावुसो, भिक्खु अज्झत्तं काये समुदयधम्मानुपस्सी विहरति, अज्झत्तं काये

---

५२. अनुरुद्धसंयुक्त

१. रहोगतवर्ग प्रथम

१. रहोगतसूत्र : : **स्मृतिप्रस्थानभावना**

१. ऐसा मैंने सुना है। एक समय आयुष्मान् अनुरुद्ध **श्रावस्ती के** जेतवन में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब कभी आयुष्मान् अनुरुद्ध को एकान्त में ध्यानभावना करते हुए यह विचार उठा—"जिन किन्हीं साधकों के स्मृतिप्रस्थान की साधना में कोई बाधा पड़ गयी तो समझ लो कि उन का दुःखक्षय की ओर ले जाने वाला आर्यमार्ग भी अवरुद्ध हो गया। तथा जिन के स्मृतिप्रस्थानों की भावना निर्विघ्न पूर्ण होती जा रही हो तो मान लीजिये कि उन का दुःखक्षयगामी आर्यमार्ग भी खुला हुआ है।"

तब आयुष्मान् महामोग्गल्लान, आयुष्मान् अनुरुद्ध के मन से विचारित तर्क को अपने मन से जान कर, जैसे बलवान् पुरुष समेटी भुजा को फैला देता है या फैली हुई भुजा को समेट लेता है, वैसे ही आयुष्मान् अनुरुद्ध के पास तत्काल पहुँचे तथा उन्होंने आयुष्मान् अनुरुद्ध से यह पूछा—"आयुष्मन् अनुरुद्ध! किसी भिक्षु के चार स्मृतिप्रस्थान कैसे पूर्ण होते हैं?"

वयधम्मानुपस्सी विहरति, अज्झत्तं काये समुदयवयधम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। बहिद्धा काये समुदय-[R.295] धम्मानुपस्सी विहरति, बहिद्धा काये वयधम्मानुपस्सी विहरति, बहिद्धा काये समुदयवयधम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झा-दोमनस्सं। अज्झत्तबहिद्धा काये समुदयधम्मानुपस्सी विहरति, अज्झत्तबहिद्धा काये वयधम्मानुपस्सी विहरति, अज्झत्तबहिद्धा काये समुदयवयधम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

"सो सचे आकङ्खति—'अप्पटिकूले पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, [B.258] पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति; सचे आकङ्खति—'पटिकूले अप्पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अप्पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति; सचे आकङ्खति—'अप्पटिकूले च पटिकूले च पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति; सचे आकङ्खति—'पटिकूले च अप्पटिकूले च अप्पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अप्पटिकूलसञ्ञी तत्थ [N.252] विहरति; सचे आकङ्खति—'अप्पटिकूलं च पटिकूलं च तदुभयं अभिनिवज्जेत्वा उपेक्खको विहरेय्यं सतो सम्पजानो' ति, उपेक्खको तत्थ विहरति सतो सम्पजानो।

"अज्झत्तं वेदनासु समुदयधम्मानुपस्सी विहरति, अज्झत्तं वेदनासु वयधम्मानु-पस्सी विहरति, अज्झत्तं वेदनासु समुदयवयधम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। बहिद्धा वेदनासु समुदयधम्मानुपस्सी विहरति, बहिद्धा वेदनासु वयधम्मानुपस्सी विहरति, बहिद्धा वेदनासु समुदयवय-

---

"आयुष्मन्! यहाँ कोई साधक भिक्षु, उद्योगी, स्मृतिमान्, सम्प्रज्ञ, सांसारिक लोभ द्वेष को त्याग कर, आध्यात्मिक काय में समुदयधर्मानुपश्यी हो कर साधना करता है, ...व्ययधर्मानुपश्यी हो कर...समुदयव्ययधर्मानुपश्यी हो कर साधना करता है।

"वह यदि चाहता है—'अप्रतिकूल में प्रतिकूल की संज्ञा से साधना करूँ', तो वह वैसी साधना करता है। यदि वह चाहता है—'प्रतिकूल में अप्रतिकूल की संज्ञा से साधना करूँ', तो वह वैसी साधना करता है। यदि वह चाहता है—'अप्रतिकूल एवं प्रतिकूल में प्रतिकूल की संज्ञा से साधना करूँ', तो वह वैसी साधना करता है। यदि वह चाहता है—'प्रतिकूल एवं अप्रतिकूल में अप्रतिकूल की संज्ञा से साधना करूँ', तो वह वैसी साधना करता है। यदि वह चाहता है—'अप्रतिकूल एवं प्रतिकूल में उभयविध साधना करूँ', तो वह स्मृतिमान् एवं सम्प्रज्ञ हो कर उभयत्र उपेक्षाविहार से उभयविध साधना करता है।

"इसी तरह, वह आध्यात्मिक वेदनाओं में...बाह्य वेदनाओं में..., आध्यात्मिक

धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। [R.296] अज्झत्तबहिद्धा वेदनासु समुदयधम्मानुपस्सी विहरति, अज्झत्तबहिद्धा वेदनासु वयधम्मानुपस्सी विहरति, अज्झत्तबहिद्धा वेदनासु समुदयवयधम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

"सो सचे आकङ्खति—'अप्पटिकूले पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति; सचे आकङ्खति—'पटिकूले अप्पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अप्पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति; सचे आकङ्खति—'अप्पटिकूले च पटिकूले च पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति; सचे आकङ्खति—'पटिकूले च अप्पटिकूले च अप्पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अप्पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति; सचे आकङ्खति—'अप्पटिकूलं च पटिकूलं च तदुभयं अभिनिवज्जेत्वा उपेक्खको विहरेय्यं सतो सम्पजानो' ति, उपेक्खको तत्थ विहरति सतो सम्पजानो।

"अज्झत्तं चित्ते...पे०...बहिद्धा चित्ते...पे०...अज्झत्तबहिद्धा चित्ते समुदयधम्मानुपस्सी विहरति, अज्झत्तबहिद्धा चित्ते वयधम्मानुपस्सी विहरति, अज्झत्तबहिद्धा [B.259] चित्ते समुदयवयधम्मानुपस्सी विहरति आतापी...पे०...अभिज्झादोमनस्सं।

"सो सचे आकङ्खति—'अप्पटिकूले पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति...पे०...उपेक्खको तत्थ विहरति सतो सम्पजानो।

[N.253] "अज्झत्तं धम्मेसु...पे०...बहिद्धा धम्मेसु...पे०...अज्झत्तबहिद्धा धम्मेसु समुदयधम्मानुपस्सी विहरति, अज्झत्तबहिद्धा धम्मेसु वयधम्मानुपस्सी विहरति, अज्झत्तबहिद्धा धम्मेसु समुदयवयधम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

"सो सचे आकङ्खति—'अप्पटिकूले पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, पटिकूलसञ्ञी तत्थ विहरति...पे०...उपेक्खको तत्थ विहरति सतो सम्पजानो।

बाह्य वेदनाओं में...समुदयधर्मानुपश्यी...व्ययधर्मानुपश्यी...या समुदयव्ययधर्मानुपश्यी हो कर साधना करता है।

यदि वह चाहता है—अप्रतिकूल में प्रतिकूल संज्ञा से...प्रतिकूल में अप्रतिकूल संज्ञा से ...अप्रतिकूल प्रतिकूल में प्रतिकूल संज्ञा से...'अप्रतिकूल एवं प्रतिकूल दोनों संज्ञाओं को छोड़ कर उपेक्षाव्यवहार से साधना करूँ' तो वह वैसी ही साधना करता है।

आध्यात्मिक चित्त में...पूर्ववत्...वैसी ही साधना करता है।

आध्यात्मिक धर्मों में...पूर्ववत्...वैसी ही साधना करता है।

"एत्तावता खो, आवुसो, भिक्खुनो चत्तारो सतिपट्ठाना आरद्धा होन्ती" ति॥ •

२. दुतियरहोगतसुत्तं

२. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मतो अनुरुद्धस्स रहोगतस्स पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को उदपादि—"येसं केसञ्चि चत्तारो सतिपट्ठाना विरद्धा, विरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी; येसं केसञ्चि चत्तारो सतिपट्ठाना आरद्धा, आरद्धो तेसं अरियो मग्गो सम्मा दुक्खक्खयगामी" ति।

अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो आयस्मतो अनुरुद्धस्स चेतसा चेतो-[R.297] परिवितक्कमञ्ञाय—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—आयस्मतो अनुरुद्धस्स सम्मुखे पातुरहोसि। अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोच—"कित्तावता नु खो, आवुसो अनुरुद्ध, भिक्खुनो चत्तारो सतिपट्ठाना आरद्धा होन्ती" ति?

"इधावुसो, भिक्खु अज्झत्तं काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। बहिद्धा काये कायानुपस्सी विहरति ...पे०...अज्झत्तबहिद्धा काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

"अज्झत्तं वेदनासु वेदनानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। बहिद्धा वेदनासु वेदनानुपस्सी विहरति आतापी [B.260] सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। अज्झत्तबहिद्धा वेदनासु वेदनानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

"अज्झत्तं चित्ते...पे०...बहिद्धा चित्ते...पे०...अज्झत्तबहिद्धा चित्ते चित्तानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

"अज्झत्तं धम्मेसु...पे०...बहिद्धा धम्मेसु...पे०...अज्झत्तबहिद्धा धम्मेसु [N.254] धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एत्तावता खो, आवुसो, भिक्खुनो चत्तारो सतिपट्ठाना आरद्धा होन्ती" ति॥ •

वह चाहता है—अप्रतिकूल में प्रतिकूल संज्ञा हो कर...पूर्ववत्...। इस तरह, आयुष्मन्! उस साधक भिक्षु के ये चारों प्रतिष्ठान पूर्ण होते हैं॥ •

२. द्वितीय रहोगतसूत्र : : चार स्मृतिप्रस्थान

२. ...**श्रावस्ती में** ही...। तब कभी आयुष्मान् अनुरुद्ध को एकान्त में ध्यानभावना करते हुए यह विचार उठा—...पूर्ववत्...(*पूर्वसूत्र का पूर्णतः अविकल विस्तार कर लें।*)॥•

३. सुतनुसुत्तं

३. एकं समयं आयस्मा अनुरुद्धो सावत्थियं विहरति सुतनुतीरे। अथ खो सम्बहुला भिक्खू येनायस्मा अनुरुद्धो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मता [R.298] अनुरुद्धेन सद्धिं सम्मोदिंसु। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोचुं—"कतमेसं आयस्मा अनुरुद्धो धम्मानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं पत्तो" ति?

"चतुन्नं ख्वाहं, आवुसो, सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं पत्तो। कतमेसं चतुन्नं? इधाहं, आवुसो, काये कायानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं—इमेसं ख्वाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं पत्तो। इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता हीनं धम्मं हीनतो अब्भञ्ञासिं, मज्झिमं धम्मं मज्झिमतो अब्भञ्ञासिं, पणीतं धम्मं पणीततो अब्भञ्ञासिं" ति॥ •

४. पठमकण्डकीसुत्तं

[B.261] ४. एकं समयं आयस्मा च अनुरुद्धो आयस्मा च सारिपुत्तो आयस्मा च महामोग्गल्लानो साकेते विहरन्ति कण्डकीवने। अथ खो आयस्मा च सारिपुत्तो आयस्मा

---

३. सुतनुसूत्र : : स्मृतिप्रस्थानसाधना से अभिज्ञाप्राप्ति

३. एक समय आयुष्मान् अनुरुद्ध **श्रावस्ती में** सुतनु नदी के तट पर साधनाहेतु बैठे हुए थे। उस समय बहुत से भिक्षु आयुष्मान् अनुरुद्ध के पास आये तथा कुशलप्रश्नानन्तर यों पूछा—"आप किन धर्मों की साधना कर इस महाभिज्ञता (अतिविशिष्ट ज्ञान) को प्राप्त कर पाये हैं?"

"आयुष्मानो! मैने चार स्मृतिप्रस्थानों की पूर्ण साधना एवं दृढ अभ्यास करने के बाद ही यह महाभिज्ञता प्राप्त की है। किन चार की? यहाँ मैने, आयुष्मानो! प्रयासरत, सम्प्रज्ञ, स्मृतिमान् हो कर, सांसारिक लोभ एवं द्वेष का सर्वथा परित्याग कर काया में कायानुपश्यना...वेदनाओं में वेदनानुपश्यना...चित्त में चित्तानुपश्यना...धर्मों में धर्मानुपश्यना—इन चार स्मृतिप्रस्थानों की पूर्ण साधना एवं दृढ अभ्यास कर यह महाभिज्ञता प्राप्त की। इन चार स्मृतिप्रस्थानों की साधना एवं अभ्यास से मैने हीन धर्म को हीन धर्म के रूप में जाना, मध्यम धर्म को मध्यम धर्म के रूप में जाना तथा प्रणीत (श्रेष्ठ) धर्म को श्रेष्ठ (=प्रणीत) धर्म के रूप में जाना"॥ •

च महामोग्गल्लानो सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठिता येनायस्मा अनुरुद्धो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मता अनुरुद्धेन सद्धिं सम्मोदिंसु। सम्मोदनीयं कथं [N.255] सारणीय वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोच—"सेखेनावुसो अनुरुद्ध, भिक्खुना कतमे धम्मा उपसम्पज्ज विहातब्बा" ति?

"सेखेनावुसो सारिपुत्त, भिक्खुना चत्तारो सतिपट्ठाना उपसम्पज्ज विहातब्बा। कतमे चत्तारो? इधावुसो, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०...धम्मेसु [R.299] धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं—सेखेनावुसो सारिपुत्त, भिक्खुना इमे चत्तारो सतिपट्ठाना उपसम्पज्ज विहातब्बा" ति॥●

५. दुतियकण्डकीसुत्तं

५. साकेतनिदानं। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोच—"असेखेनावुसो अनुरुद्ध, भिक्खुना कतमे धम्मा उपसम्पज्ज विहातब्बा" ति?

---

४. प्रथम कण्डकीसूत्र : : चार स्मृतिप्रस्थान की साधना

४. एक समय आयुष्मान् अनुरुद्ध, आयुष्मान् सारिपुत्र एवं आयुष्मान् महामोग्गल्लान—तीनों ही **साकेत के कण्डकीवन** में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब आयुष्मान् सारिपुत्र एवं आयुष्मान् महामोग्गल्लान—ये दोनों किसी दिन सायङ्काल ध्यानभावना से उठ कर आयुष्मान् अनुरुद्ध के पास गये। जा कर आयुष्मान् अनुरुद्ध से कुशलप्रश्नानन्तर यह पूछा—"आयुष्मन् अनुरुद्ध! शैक्ष्य भिक्षु द्वारा किन धर्मों की साधना करनी चाहिये?"

"आयुष्मन् सारिपुत्र! शैक्ष्य भिक्षु द्वारा चार स्मृतिप्रस्थानों की साधना करनी चाहिये। कौन से चार? यहाँ कोई भिक्षु काय में कायानुपश्यी हो कर...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी हो कर ...चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर...धर्मों में धर्मानुपश्यी हो कर प्रयासरत, सम्प्रज्ञ, स्मृतिमान् तथा लौकिक लोभ एवं दौर्मनस्य का परित्याग करता हुआ साधना करता है—आयुष्मन् सारिपुत्र! यों शैक्ष्य भिक्षु द्वारा इन चार स्मृतिप्रस्थानों की साधना करनी चाहिये"॥ ●

५. द्वितीय कण्डकीसूत्र : : चार स्मृतिप्रस्थानों की साधना

५. ...**साकेत में** ही...। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सारिपुत्र ने आयुष्मान् अनुरुद्ध से पूछा—"आयुष्मन् अनुरुद्ध! अशैक्ष्य भिक्षु द्वारा किन धर्मों को प्राप्त कर उन की आराधना करनी चाहिये?"

"असेखेनावुसो सारिपुत्त, भिक्खुना चत्तारो सतिपट्ठाना उपसम्पज्ज विहातब्बा। कतमे चत्तारो? इधावुसो, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं— असेखेनावुसो सारिपुत्त, भिक्खुना इमे चत्तारो सतिपट्ठाना उपसम्पज्ज विहातब्बा" ति ॥●

६. ततियकण्डकीसुत्तं

६. साकेतनिदानं। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोच—"कतमेसं आयस्मा अनुरुद्धो धम्मानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं पत्तो" ति?

"चतुन्नं ख्वाहं, आवुसो, सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं पत्तो। [N.256, B.262] कतमेसं चतुन्नं? इधाहं, आवुसो, काये कायानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०... धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं—इमेसं ख्वाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं पत्तो। इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता सहस्सं लोकं अभिजानामी" ति ॥ ●

७. तण्हक्खयसुत्तं

[R.300] ७. सावत्थिनिदानं। तत्र खो आयस्मा अनुरुद्धो भिक्खू आमन्तेसि—"आवुसो भिक्खवो" ति। "आवुसो" ति खो ते भिक्खू आयस्मतो अनुरुद्धस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा अनुरुद्धो एतदवोच—

"आयुष्मन् सारिपुत्र! अशैक्ष्य भिक्षु द्वारा भी इन्हीं चार स्मृतिप्रस्थानों को प्राप्त कर उन की आराधना करनी चाहिये। कौन से चार? ...पूर्ववत्..."॥ ●

६. तृतीय कण्डकीसूत्र : : सहस्र लोकधातु का ज्ञान

६. ...**साकेत में** ही...। आयुष्मान् सारिपुत्र—"आयुष्मन् अनुरुद्ध! आप किन धर्मों की दृढता से साधना तथा अभ्यास करने पर इस महाभिज्ञता को प्राप्त हुए हैं?"

"आयुष्मन् सारिपुत्र! चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करने से। किन चार की? काय... वेदना...चित्त...धर्मों में धर्मानुपश्यी...। आयुष्मन्! इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करने से तथा इन के दृढ अभ्यास से ही मैं सहस्र लोकधातु को जानता हूँ"॥●

७. तृष्णाक्षयसूत्र : : स्मृतिप्रस्थानसाधना से तृष्णाक्षय

७. ...**श्रावस्ती में** ही...। वहाँ आयुष्मान् अनुरुद्ध ने भिक्षुओं को धर्मचर्चाहेतु अपने पास बुलाया, वे उन के पास आये। तब आयुष्मान् अनुरुद्ध ने उन से यों कहा—

''चत्तारोमे, आवुसो, सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता तण्हक्खयाय संवत्तन्ति। कतमे चत्तारो? इधावुसो, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति...पे०...वेदनासु...पे०... चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं—इमे खो, आवुसो, चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता तण्हक्खयाय संवत्तन्ती'' ति॥ •

८. सलळागारसुत्तं

८. एकं समयं आयस्मा अनुरुद्धो सावत्थियं विहरति सलळागारे। तत्र खो आयस्मा अनुरुद्धो भिक्खू आमन्तेसि...पे०...एतदवोच—

''सेय्यथापि, आवुसो, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा। अथ महाजनकायो आगच्छेय्य कुदालपिटकं आदाय—'मयं इमं गङ्गानदिं पच्छानिन्नं करिस्साम पच्छापोणं पच्छापब्भारं' ति। तं किं मञ्ञथावुसो, अपि नु सो महाजनकायो गङ्गानदिं पच्छानिन्नं करेय्य पच्छापोणं पच्छापब्भारं'' ति?

''नो हेतं, आवुसो''।

''तं किस्स हेतु''? [N.257]

''गङ्गा, आवुसो, नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा। सा न सुकरा

''आयुष्मान् भिक्षुओ! इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की भावना तथा अभ्यास करने पर ये तृष्णा का क्षय करने में समर्थ होते हैं। कौन से चार? काय में...वेदनाओं में...चित्त में...धर्मों में धर्मानुपश्यी...। भिक्षुओ! ये चार स्मृतिप्रस्थान साधना तथा अभ्यास किये जाने पर तृष्णाक्षय में समर्थ हैं''॥ •

८. सललागारसूत्र : :साधक का पुन: गृहस्थ होना सम्भव नहीं

८. एक समय आयुष्मान् अनुरुद्ध **श्रावस्ती**स्थित जेतवन के सललागार में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। वहाँ उन्होंने एक समय भिक्षुओं को बुलाया, तथा उन से यों धर्मचर्चा की। वे बोले—

''आयुष्मानो! जैसे गङ्गानदी पूर्वाभिमुख ही बहती है, उधर ही बढती है। वहाँ कोई विशाल जनसमूह, हाथों में फावड़ा तथा छावड़ी ले कर आवे और कहे—'हम इस गङ्गा का मुख मोड़ कर इसे पश्चिमाभिमुख बहने वाली बना देंगे।' तो क्या मानते हो, आयुष्मानो! वे लोग अपने इस कार्य में सफल होंगे?''

''नहीं, भन्ते!''

''वह किस लिये?''

''गङ्गा तो प्राचीनमुख बहती ही रहेगी। उस को पश्चिमाभिमुख बनाना बहुत

पच्छानिन्नं कातुं पच्छापोणं पच्छापब्भारं। यावदेव च पन सो महाजनकायो किलमथस्स विघातस्स भागी अस्सा'' ति।

[B.263] ''एवमेव खो, आवुसो, भिक्खुं चत्तारो सतिपट्ठाने भावेन्तं चत्तारो सतिपट्ठाने बहुलीकरोन्तं राजानो वा राजमहामत्ता वा मित्ता वा अमच्चा वा ञाती वा सालोहिता वा भोगेहि अभिहट्ठुं पवारेय्युं—'एहम्भो पुरिस, किं ते इमे कासावा अनुदहन्ति? किं मुण्डो [R.301] कपालमनुसञ्चरसि? एहि हीनायावत्तित्वा भोगे च भुञ्जस्सु पुञ्ञानि च करोही' ति। सो वत, आवुसो, भिक्खु चत्तारो सतिपट्ठाने भावेन्तो चत्तारो सतिपट्ठाने बहुलीकरोन्तो सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति। तं किस्स हेतु? यं हि तं, आवुसो, चित्तं दीघरत्तं विवेकनिन्नं विवेकपोणं विवेकपब्भारं तं वत हीनायावत्तिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति।

''कथञ्चावुसो, भिक्खु चत्तारो सतिपट्ठाने भावेति, चत्तारो सतिपट्ठाने बहुलीकरोती ति? इधावुसो, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति...पे०...वेदनासु...पे०... चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। एवं खो, आवुसो, भिक्खु चत्तारो सतिपट्ठाने भावेति, चत्तारो सतिपट्ठाने बहुलीकरोती'' ति॥ ●

दुष्कर कार्य है। हो सकता है, इस असम्भव कार्य से उस विशाल जनसमूह को कष्ट या कोई शारीरिक आघात ही लगे।

इसी तरह, भिक्षुओ! यदि किसी स्मृतिप्रस्थानों की पूर्ण साधना वाले भिक्षु को कोई राजा या राजमहामात्य या उस का कोई मित्र या सम्बन्धी जन यह प्रलोभन दे—'अरे भले आदमी! ये काषाय वस्त्र पहन कर क्या घूम रहे हो! यह शिर मुँडा कर कपाल हाथ में ले कर क्यों फिर रहे हो! चलो, हमारे साथ गृहस्थ में पुन: मिल जाओ! वहाँ सम्पत्ति का उपभोग करते हुए कुछ पुण्य कार्य भी करते रहना!' परन्तु वह स्मृतिप्रस्थानों की साधना करने वाला भिक्षु धर्मशिक्षा की उपेक्षा कर पुन: गृहस्थ धर्म में लौट जायगा—यह सम्भव नहीं; क्यों कि उस का चित्त दीर्घकाल से विवेकाभिमुख रहा है। उस विवेक के रहते हुए वह गृहस्थ में लौटने जैसा निकृष्ट कार्य करेगा—यह कैसे सम्भव होगा!

''आयुष्मानो! वह भिक्षु इन स्मृतिप्ररथानों की भावना कैसे करता है? यहाँ, आयुष्मानो! वह भिक्षु काया में...वेदनाओं में...चित्त में...धर्मों में धर्मानुपश्यी होता हुआ, प्रयासरत, सम्प्रज्ञ, स्मृतिमान् एवं लौकिक द्वेष एवं दौर्मनस्य का परित्याग कर साधना करता है। यों, आयुष्मानो! वह भिक्षु चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना करता है''॥ ●

९. अम्बपालिवनसुत्तं

९. एकं समयं आयस्मा च अनुरुद्धो आयस्मा च सारिपुत्तो वेसालियं विहरन्ति अम्बपालिवने। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो...पे०... एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोच—"विप्पसन्नानि खो ते, आवुसो अनुरुद्ध, इन्द्रियानि, परिसुद्धो मुखवण्णो परियोदातो। कतमेनायस्मा अनुरुद्धो विहारेन एतरहि बहुलं विहरती" ति?

"चतूसु ख्वाहं, आवुसो, सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्तो एतरहि बहुलं [N.258] विहरामि। कतमेसु चतूसु? इधाहं, आवुसो, काये कायानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं; वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०... धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य [B.264, R.302] लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसु ख्वाहं, आवुसो, चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्तो एतरहि बहुलं विहरामि। यो सो, आवुसो, भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञा विमुत्तो, सो इमेसु चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्तो बहुलं विहरती" ति।

"लाभा वत नो, आवुसो, सुलद्धं वत नो, आवुसो! ये मयं आयस्मतो अनुरुद्धस्स सम्मुखा व अस्सुम्ह आसभिं वाचं भासमानस्सा" ति॥ •

---

९. आम्रपालिवनसूत्र : :

९. एक समय आयुष्मान् अनुरुद्ध एवं आयुष्मान् सारिपुत्र—दोनों ही **वैशाली के** आम्रपालिवन में साधना कर रहे थे। तब कभी आयुष्मान् सारिपुत्र सायङ्काल समाधिभावना से उठ कर आयुष्मान् अनुरुद्ध के पास गये, तथा उन से यों बोले—"आयुष्मन् अनुरुद्ध! आप की इन्द्रियाँ चमक रही हैं, मुखमण्डल भी आभा से देदीप्यमान है। आयुष्मन्! आजकल आप किन धर्मों की अधिक साधना कर रहे हैं?"

"आयुष्मन्! आजकल मैं चार स्मृतिप्रस्थानों में भली भाँति मन लगा कर उन्हीं की साधना कर रहा हूँ। कौन से चार? यहाँ मैं, आयुष्मन्! काय में कायानुपश्यी...वेदनाओं में वेदनानुपश्यी...चित्त में चित्तानुपश्यी...धर्मों में धर्मानुपश्यी हो कर...पूर्ववत्...साधना कर रहा हूँ। आयुष्मन्! जो भी कोई भिक्षु अर्हत् क्षीणाश्रव, पूर्ण धर्मसाधक, कृतकृत्य, भारमुक्त, निर्वाणप्राप्त, भवबन्धनरहित, भली भाँति जान कर विमुक्त हो चुका है वह इन चार प्रस्थानां में सुप्रतिष्ठितचित्त हो कर प्रायः साधना करता है"।

"आयुष्मन्! हमें लाभ हुआ, अत्यधिक लाभ हुआ कि हम ने आप जैसे पहुँचे हुए सिद्ध सन्त के श्रीमुख से ये श्रेष्ठ धर्मवचन सुने"॥ •

१०. बाळ्हगिलानसुत्तं

१०. एकं समयं आयस्मा अनुरुद्धो सावत्थियं विहरति अन्धवनस्मिं आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो सम्बहुला भिक्खू येनायस्मा अनुरुद्धो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोच—"कतमेनायस्मतो अनुरुद्धस्स विहारेन विहरतो उप्पन्ना सारीरिका दुक्खा वेदना चित्तं न परियादाय तिट्ठन्ती" ति?

"चतूसु खो मे, आवुसो, सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्तस्स विहरतो उप्पन्ना सारीरिका दुक्खा वेदना चित्तं न परियादाय तिट्ठन्ति। कतमेसु चतूसु? इधाहं, आवुसो, काये कायानुपस्सी विहरामि...पे०...वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। इमेसु खो मे, आवुसो, चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्तस्स विहरतो उप्पन्ना सारीरिका दुक्खा वेदना चित्तं न परियादाय तिट्ठन्ती" ति॥ •

रहोगतवग्गो पठमो॥

तस्सुद्दानं

[R.303] रहोगतेन द्वे वुत्ता, सुतनु कण्डकी तयो।
तण्हक्खयसलळागारं, अम्बपालि च गिलानं ति॥ •

—※—

---

१०. बाढग्लानसूत्र : : आयुष्मान् अनुरुद्ध रोगाक्रान्त

१०. एक समय आयुष्मान् अनुरुद्ध **श्रावस्ती** के अन्धवन में अत्यधिक रुग्ण हो गये। तब बहुत से भिक्षु उन के पास आये, तथा उन से पूछने लगे—"आयुष्मन् अनुरुद्ध! किस साधना का आश्रयण कर रोग से उत्पन्न वेदनाओं का अपने चित्त पर प्रभाव नहीं पड़ने देते?"

"आयुष्मानो! मैं चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना का आश्रयण कर इन शारीरिक वेदनाओं का स्वचित्त पर प्रभाव नहीं पड़ने देता। किन चार को? काय में...वेदनाओं में...चित्त में...धर्म में धर्मानुपश्यना का आश्रयण कर साधना करता हूँ। इसी साधना के बल पर मैं अपनी शारीरिक वेदनाओं का स्वचित्त पर प्रभाव नहीं पड़ने देता"॥ •

रहोगतवर्ग प्रथम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. प्रथम रहोगतसूत्र, २. द्वितीय रहोगतसूत्र, ३. सुतनुसूत्र, ४. प्रथम कण्डकीसूत्र, ५. द्वितीय कण्डकीसूत्र, ६. तृतीय कण्डकीसूत्र, ७. तृणाक्षयसूत्र, ८. सललागारसूत्र, ९. आम्रपालिवनसूत्र एवं १०. बाढग्लानसूत्र॥ •

२. दुतियो वग्गो

११. कप्पसहस्ससुत्तं

११. एकं समयं आयस्मा अनुरुद्धो सावत्थियं विहरति जेतवने [N.259, B.265] अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो सम्बहुला भिक्खू येनायस्मा अनुरुद्धो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मता अनुरुद्धेन सद्धिं...पे०...एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोचुं—"कतमेसं आयस्मा अनुरुद्धो धम्मानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं पत्तो" ति?

"चतुन्नं ख्वाहं, आवुसो, सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं पत्तो। कतमेसं चतुन्नं? इधाहं, आवुसो, काये कायानुपस्सी विहरामि...पे०...वेदनासु ...पे०...चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं—इमेसं ख्वाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता महाभिञ्ञतं पत्तो। इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता कप्पसहस्सं अनुस्सरामी" ति॥ ●

१२. इद्धिविधसुत्तं

१२. "इमेस च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोमि—एको पि हुत्वा बहुधा होति...पे०...याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेमी" ति॥ ●

---

२. द्वितीय वर्ग

११. कल्पसहस्रसूत्र : : सहस्र कल्पों की स्मृति

११. एक समय आयुष्मान् अनुरुद्ध **श्रावस्ती के** अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवनाराम में साधना कर रहे थे। उस समय बहुत से भिक्षु आयुष्मान् अनुरुद्ध के पास आये तथा पूछने लगे—"आयुष्मन् अनुरुद्ध! आप किन धर्मों की साधना एवं अभ्यास के कारण महाभिज्ञता को प्राप्त हुए हैं?"

"आयुष्मानो! मैं चार स्मृतिप्रस्थानों की कठोर साधना एवं दृढ अभ्यास के कारण इस महाभिज्ञता को प्राप्त कर पाया हूँ। कौन से चार? काय में...वेदनाओं में...चित्त में...धर्मों में धर्मानुपश्यना की सम्प्रज्ञ एवं स्मृतिमान् हो कर लौकिक द्वेष एवं दौर्मनस्य का सर्वथा परित्याग कर साधना करता हूँ। इसी के आश्रय से मैं यह महाभिज्ञता प्राप्त कर पाया हूँ। इस के फलस्वरूप, मैं सहस्र कल्पों का अनुस्मरण कर सकता हूँ"॥ ●

१२. ऋद्धिविधसूत्र : : ऋद्धि

१२. ..."आयुष्मानो! मैं इन्हीं चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना एवं अभ्यास के

१३. दिब्बसोतसुत्तं

[R.304] १३. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता दिब्बाय सोतधातुया विसुद्धाय अतिक्कन्तमानुसिकाय उभो सद्दे सुणामि दिब्बे च मानुसे च ये दूरे सन्तिके चा'' ति॥ ●

१४. चेतोपरियसुत्तं

१४. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता [B.266] परसत्तानं परपुग्गलानं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—सरागं वा चित्तं 'सरागं चित्तं' ति पजानामि...पे०...अविमुत्तं वा चित्तं 'अविमुत्तं चित्तं' ति पजानामी'' ति॥ ●

१५. ठानसुत्तं

[N.260] १५. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता ठानं च ठानतो अट्ठानं च अट्ठानतो यथाभूतं पजानामी'' ति॥ ●

१६. कम्मसमादानसुत्तं

१६. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता

कारण नाना प्रकार की ऋद्धियों का अनुभव करता हूँ; जैसे—एक हो कर भी बहुत हो जाना,...काया से ब्रह्मलोक तक को वश में कर लेना''॥ ●

१३. दिव्यश्रोत्रसूत्र : : दिव्य श्रवण

१३. ...''आयुष्मानो! मैं इन्हीं चारों स्मृतिप्रस्थानों की भावना से, अभ्यास से, दिव्य, विशुद्ध एवं लोकातीत श्रोत्र धातु से दोनों ही प्रकार के शब्द सुनने का सामर्थ्य रखता हूँ, फिर भले ही ये देवताओं के हों या मनुष्यों के, दूर के हों या समीप के''॥●

१४. चेत:परीत्यसूत्र : : परचित्त ज्ञान

१४. ...''तथा भिक्षुओ! इन्हीं चारों स्मृतिप्रस्थानों की भावना एवं अभ्यास आश्रयण से मैं स्वचित्त से अपर पुरुषों के चित्त के चिन्तन को जानने का सामर्थ्य रखता हूँ। दूसरों के सराग चित्त को 'सराग चित्त है'—ऐसा जानता हूँ, दूसरों के अविमुक्त चित्त को 'अविमुक्त चित्त है'—ऐसा जानता हूँ''॥ ●

१५. स्थानसूत्र : : स्थान का ज्ञान

१५. ...''आयुष्मानो! इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना तथा अभ्यास से मैं स्थान (उचित) को स्थान के रूप में अस्थान (अनुचित) को अस्थान के रूप में यथार्थत: जान लेता हूँ''॥ ●

१६. कर्मसमादानसूत्र : : कर्मफल का ज्ञान

१६. ...''आयुष्मानो! इन चार स्मृतिप्रस्थानों की भावना एवं अभ्यास के बल पर

अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं कम्मसमादानानं ठानसो हेतुसो विपाकं यथाभूतं पजानामी'' ति ॥ •

१७. सब्बत्थगामिनिसुत्तं

१७. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता सब्बत्थगामिनिप्पटिपदं यथाभूतं पजानामी'' ति ॥ •

१८. नानाधातुसुत्तं

१८. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता अनेकधातुनानाधातुलोकं यथाभूतं पजानामी'' ति ॥ •

१९. नानाधिमुत्तिसुत्तं

१९. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता [R.305] बहुलीकतत्ता सत्तानं नानाधिमुत्तिकतं यथाभूतं पजानामी'' ति ॥ •

२०. इन्द्रियपरोपरियत्तसुत्तं

२०. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता परसत्तानं परपुग्गलानं इन्द्रियपरोपरियत्तं यथाभूतं पजानामी'' ति ॥ •

२१. झानादिसुत्तं

२१. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता [N.261, B.267]

मैं स्थान (उचित) को स्थान के रूप में, अस्थान (अनुचित) को अस्थान के रूप में यथार्थतः जान लेता हूँ'' ॥ •

१७. सर्वत्रगामिसूत्र : : मार्गज्ञान

१७. ...''आयुष्मानो! इन चार स्मृतिप्रस्थानों की साधना एवं अभ्यास से सर्वत्रगामिनी प्रतिपद् (मार्ग) को यथार्थतः जानता हूँ'' ॥ •

१८. नानाधातुसूत्र : : लोकज्ञान

१८. ...''आयुष्मानो! इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना एवं अभ्यास से अनेक लोकधातुओं तथा नानालोकधातुओं को यथार्थतः जानता हूँ'' ॥ •

१९. नानाधिमुक्तिसूत्र : : धारणाज्ञान

१९. ...''आयुष्मानो! इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना एवं अभ्यास से प्राणियों की विभिन्न धारणाओं को भी यथार्थतः जानता हूँ'' ॥ •

२०. इन्द्रिपरावरीयसूत्र : : इन्द्रियज्ञान

२०. ...''आयुष्मानो! इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना एवं अभ्यास से मैं प्राणियों की इन्द्रियविभिन्नता को भी यथार्थतः जान लेता हूँ'' ॥ •

बहुलीकतत्ता झानविमोक्खसमाधिसमापत्तीनं सङ्किलेसं वोदानं वुट्ठानं यथाभूतं पजानामी'' ति॥ •

२२. पुब्बेनिवाससुत्त

२२. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरामि, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०...इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरामी'' ति॥ •

२३. दिब्बचक्खुसुत्तं

२३. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सामि चवमाने उपपज्जमाने ...पे०...इति दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन यथाकम्मूपगे सत्ते पजानामी'' ति॥ •

२४. आसवक्खयसुत्तं

[R.306] २४. ''इमेसं च पनाहं, आवुसो, चतुन्नं सतिपट्ठानानं भावितत्ता बहुलीकतत्ता आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरामी'' ति॥ •

दुतियो वग्गो॥

---

२१. ध्यानादिसूत्र : : ध्यानादिसमापत्तिज्ञान

२१. ...''आयुष्मानो! इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना एवं अभ्यास से मैं ध्यान, विमोक्ष समापत्ति (प्राप्ति) के संक्लेश, परिशुद्धि, व्यवदान, एवं उत्थान को जानता हूँ''॥•

२२. पूर्वनिवाससूत्र : : पूर्वजन्म का ज्ञान

२२. ...''आयुष्मानो! इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना एवं अभ्यास से मैं अनेक पूर्वजन्मों का स्मरण कर लेता हूँ। जैसे—एक जन्म, दो जन्म ...इत्यादि। इस तरह, आकार, प्रकार (उद्देश) के साथ मैं अनेक पूर्वजन्मों का स्मरण करता हूँ''॥ •

२३. दिव्यचक्षुःसूत्र : : दिव्यचक्षुर्ज्ञान

२३. ...''आयुष्मानो! इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की भावना एवं अभ्यास से मैं दिव्य, विशुद्ध एवं लोकातीत चक्षु से अपने अपने कर्म से प्राप्त योनियों में गये प्राणियों को देख लेता हूँ''॥ •

२४. आश्रवक्षयसूत्र : : आश्रवक्षयज्ञान

२४. ...''आयुष्मानो! इन चारों स्मृतिप्रस्थानों की साधना एवं अभ्यास से मैं

तस्सुद्दानं

महाभिञ्ञं इद्धि दिब्बं, चेतोपरियं ठानं कम्मं।
सब्बत्थधातुधिमुत्ति, इन्द्रियं झानं तिस्सो विज्जा ति॥ •

अनुरुद्धसंयुत्तं समत्तं॥

आश्रवों के क्षय से अनाश्रव चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जान कर साक्षात्कार कर प्राप्त कर साधना करता हूँ''॥ •

द्वितीयवर्ग (सहस्त्रवर्ग) सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. कल्पसहस्रसूत्र, २. ऋद्धिविधसूत्र, ३. दिव्यश्रोत्रसूत्र, ४. चेत:परीत्यसूत्र, ५. स्थानसूत्र, ६. कर्मसमादानसूत्र, ७. सर्वत्रगामिसूत्र, ८. नानाधातुसूत्र, ९. नानाधिमुक्तिसूत्र, १०. इन्द्रियपरावरीयसूत्र, ११. ध्यानादिसूत्र, १२. पूर्वनिवाससूत्र, १३. दिव्यचक्षु:सूत्र एवं १४. आश्रवक्षयसूत्र॥ •

अनुरुद्धसंयुक्त सम्पन्न॥

५३. झानसंयुत्तं

१. गङ्गापेय्यालवग्गो पठमो

१-१२. झानादिसुत्तं

[N.262, B.268, R.307] १-१२. सावत्थिनिदानं। ''तत्र खो...पे०...''चत्तारो मे, भिक्खवे, झाना। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। पीतिया च विरागा उपेक्खको च विहरति सतो च सम्पजानो सुखं च कायेन पटिसंवेदेति, यं तं अरिया आचिक्खन्ति—'उपेक्खको सतिमा सुखविहारी' ति ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो झाना ति।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, गङ्गा नदी पाचीननिन्ना पाचीनपोणा पाचीनपब्भारा;

---

५३. ध्यानसंयुक्त

१. गङ्गापेय्यालवर्ग प्रथम

१-१२. ध्यानादिसूत्र : : **चार ध्यान**

१-१२. ...**श्रावस्ती में** ही...।''वहाँ भिक्षुओ...पूर्ववत्...''भिक्षुओ! ये ध्यान चार होते हैं। कौन से चार? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु कामभोग एवं अकुशल धर्मों से पृथक् हो कर वितर्क विचारसहित विवेकजन्य प्रीतिसुखमय **प्रथम ध्यान** को प्राप्त कर साधना करता है। (२) उन वितर्कविचारों के भी शान्त हो जाने से आध्यात्मिक प्रसाद एवं चित्त की एकाग्रता से अवितर्कअविचारमय समाधिजन्य प्रीतिसुख वाले **द्वितीय ध्यान** को प्राप्त कर साधना करता है। (३) उस प्रीति एवं विराग से भी उपेक्षायुक्त हो कर, स्मृति एवं सम्प्रजन्य के साथ काय से सुखपूर्वक **तृतीय ध्यान** की साधना करता है, जिस की प्रशंसा में आर्यजन कहते हैं—'यह तो उपेक्षापूर्वक एवं स्मृतिमान् हो कर काया से सुखसाधना करता है'। (४) तथा अन्त में, सुख एवं दुःख के प्रहाण से एवं सौमनस्य या दौर्मनस्य के पहले ही नष्ट हो जाने से अदुःखअसुखमय उपेक्षास्मृतिपरिशुद्धियुक्त **चतुर्थ ध्यान** की साधना करता है। भिक्षुओ! यों ध्यान चार हैं।

एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो झाने भावेन्तो चत्तारो झाने बहुलीकरोन्तो [R.308] निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कथं च, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो झाने भावेन्तो चत्तारो झाने बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बान-पब्भारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। वितक्कविचारानं वूपसमा...पे०...दुतियं झानं...ततियं झानं...चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खु चत्तारो झाने भावेन्तो चत्तारो झाने बहुलीकरोन्तो निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो'' ति॥ ●

गङ्गापेय्यालवग्गो पठमो॥

तस्सुद्दानं

छ पाचीनतो निन्ना, छ निन्ना च समुद्दतो। [B.269]
द्वेते छ द्वादस होन्ति, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥ ●

''भिक्षुओ! जैसे गङ्गा नदी पूर्वाभिमुख ही बहती है तथा पूर्व की ओर ही बढती है; इसी तरह, भिक्षुओ! वह भिक्षु चारों ध्यानों की साधना करता हुआ निर्वाण की ओर ही बढता है, उधर ही अग्रसर होता है। भिक्षुओ! कैसे चारों ध्यानों की साधना करता हुआ निर्वाण की ओर बढता हैं? ...पूर्ववत्...चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। इस प्रकार, भिक्षुओ! वह भिक्षु चारों ध्यानों की साधना करता हुआ निर्वाण की ओर बढता है''॥ *(पूर्ववत् विस्तार कर लें।)* ●

गङ्गापेय्यालवर्ग प्रथम सम्पन्न॥

इस वर्ग में समागत सूत्रों की सूची—छह पूर्वाभिमुख बहने वाली तथा छह समुद्राभिमुख बहने वाली नदियों के दृष्टान्त से यहाँ बारह सूत्रों का व्याख्यान हुआ है॥●

२. अप्पमादवग्गो दुतियो

(अप्पमादवग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

[N.263] तथागतं पदं कूटं, मूलं सारो च वस्सिकं।
राजा चन्दिमसुरिया, वत्थेन दसमं पदं ति॥

३. बलकरणीयवग्गो ततियो

(बलकरणीयवग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

[R.309] बलं बीजं च नागो च, रुक्खो कुम्भेन सूकिया।
आकासेन च द्वे मेघा, नावा आगन्तुका नदी ति॥

---

२. अप्रमादवर्ग द्वितीय

(अप्रमादवर्ग का पूर्ववत् विस्तार कर लेना चाहिये।)

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. तथागतसूत्र, २. पदसूत्र, ३. कूटसूत्र, ४. मूलसूत्र, ५. सारसूत्र, ६. वर्षिकसूत्र, ७. राजासूत्र, ८. चन्द्रमासूत्र, ९. सूर्यसूत्र एवं १०. काशिकेयवस्त्रसूत्र॥

३. बलकरणीयवर्ग तृतीय

(इस वर्ग का भी पूर्ववत् विस्तार कर लेना चाहिये।)

१. बलसूत्र, २. बीजसूत्र, ३. नागसूत्र, ४. वृक्षसूत्र, ५. कुम्भसूत्र, ६. शूकसूत्र, ७. आकाशसूत्र, ८. प्रथम मेघसूत्र, ९. द्वितीय मेघसूत्र, १०. नौसूत्र, ११. आगन्तुकसूत्र एवं १२. नदीसूत्र॥

४. एसनावग्गो चतुत्थो

(एसनावग्गो वित्थारेतब्बो।)

तस्सुद्दानं

एसना विधा आसवो, भवो च दुक्खता तिस्सो।
खिलं मलं च नीघो च, वेदना तण्हा तसिना चा ति॥ •

५. ओघवग्गो पञ्चमो

४६-५५. ओघादिसुत्तं

४६-५५. ''पञ्चिमानि, भिक्खवे, उद्धम्भागियानि संयोजनानि। कतमानि पञ्च? रूपरागो, अरूपरागो, मानो, उद्धच्चं, अविज्जा—इमानि खो, भिक्खवे, [B.270] पञ्चुद्धम्भागियानि संयोजनानि। इमेसं खो, भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय चत्तारो झाना भावेतब्बा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, भिक्खु विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं...पे०...ततियं झानं...पे०...चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। इमेसं खो, [R.310] भिक्खवे, पञ्चन्नं उद्धम्भागियानं संयोजनानं अभिञ्ञाय परिञ्ञाय परिक्खयाय पहानाय चत्तारो झाना भावेतब्बा'' ति *(वित्थारेतब्बं)*॥ •

---

४. एषणावर्ग चतुर्थ

(इस वर्ग का भी पूर्ववत् विस्तार कर लेना चाहिये।)

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. एषणासूत्र, २. विधासूत्र, ३. आश्रवसूत्र, ४. भवसूत्र, ५. दुःखतासूत्र, ६. खिलसूत्र, ७. मलसूत्र, ८. नीघसूत्र, ९. वेदनासूत्र, १०. तृष्णासूत्र एवं ११. तर्षणसूत्र॥ •

५. औघवर्ग पञ्चम

४६-५५. औघादिसूत्र : : औघ (बाढ)

४६-५५. ...''भिक्षुओ! ये पाँच ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। कौन से पाँच? १. रूपराग, २. अरूपराग, ३. मान, ४. औद्धत्य एवं ५. अविद्या—ये ऊर्ध्वभागीय संयोजन हैं। इन पाँचों ऊर्ध्वभागीय संयोजनों के अभिज्ञान, परिज्ञान, परिक्षय एवं प्रहाण के लिये चार ध्यानों की साधना करना चाहिये। कौन से चार? ...पूर्ववत्...। इन चार ध्यानों की साधना करनी चाहिये''। *(पूर्ववत् विस्तार कर लें)*॥ •

(यथा मग्गसंयुत्तं तथा वित्थारेतब्बं।)

ओघवग्गो पञ्चमो॥

तस्सुद्दानं

[N.264] ओघो योगो उपादानं, गन्था अनुसयेन च।
कामगुणा नीवरणा, खन्धा ओरुद्धम्भागिया ति॥ ●

झानसंयुत्तं समत्तं॥

(इस समस्त औघवर्ग का भी मार्गसंयुक्त के औघवर्ग की तरह विस्तार कर लेना चाहिये।)

पञ्चम औघवर्ग सम्पन्न॥

इस वर्ग में आगत सूत्रों की सूची—१. ओघसूत्र, २. योगसूत्र, ३. उपादानसूत्र, ४. ग्रन्थसूत्र, ५. अनुशयसूत्र, ६. कामगुणसूत्र, ७. नीवरणसूत्र, ८. स्कन्धसूत्र, ९. अवरभागीयसूत्र एवं १०. ऊर्ध्वभागीयसूत्र॥ ●

ध्यानसंयुक्त सम्पन्न॥

५४. आनापानसंयुत्तं

१. एकधम्मवग्गो पठमो

१. एकधम्मसुत्तं

१. सावत्थिनिदानं। तत्र खो...पे०...एतदवोच—"एक-[N.265, B.271, R.311] धम्मो, भिक्खवे, भावितो बहुलीकतो महप्फलो होति महानिसंसो। कतमो एकधम्मो? आनापानस्सति। कथं भाविता च, भिक्खवे, आनापानस्सति कथं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा? इध, भिक्खवे, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व अस्ससति, सतो व पस्ससति। दीघं वा अस्ससन्तो 'दीघं अस्ससामी' ति पजानाति, दीघं वा पस्ससन्तो 'दीघं पस्ससामी' ति पजानाति; रस्सं वा अस्ससन्तो 'रस्सं अस्ससामी' ति पजानाति, रस्सं वा पस्ससन्तो 'रस्सं पस्ससामी' ति पजानाति; 'सब्बकायप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'सब्बकायप्पटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'पस्सम्भयं कायसङ्खारं अस्ससिस्सामी' ति [R.312]

---

५४. आनापानसंयुक्त

१. एकधर्मवर्ग प्रथम

१. एकधर्मसूत्र : : **आनापानस्मृति**

१. ...**श्रावस्ती में**...। उस समय वहाँ...पूर्ववत्..."भिक्षुओ! एक धर्म के भावित एवं अभ्यस्त होने पर अच्छा फल एवं सुपरिणाम मिलता है। किस एक धर्म के? आनापानस्मृति के।

भिक्षुओ! कैसे आनापानस्मृति के भावित एवं अभ्यस्त होने से बहुत अच्छा फल और सुपरिणाम मिलता है?

यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अरण्य में जा कर, या किसी वृक्ष के नीचे, या किसी एकान्त भवन में पद्मासन लगा कर, शरीर को सरल एवं सीधा रख कर सावधान हो कर बैठता है। तब वह ध्यानपूर्वक श्वास लेता है, ध्यानपूर्वक श्वास छोड़ता है। वह लम्बा श्वास छोड़ते हुए जानता है—'मैं लम्बा श्वास ले रहा हूँ'। या लम्बा श्वास छोड़ता हुआ जानता है—'मैं लम्बा श्वास छोड़ रहा हूँ'। या छोटा श्वास लेता हुआ जानता है—'मैं छोटा श्वास ले रहा हूँ', तथा छोटा श्वास छोड़ता हुआ जानता है—'मैं छोटा श्वास छोड़ रहा हूँ'।

"वह 'समस्त शरीर पर ध्यान रखते हुए मैं श्वास लूँगा'—ऐसा सीखता है, 'समस्त शरीर पर ध्यान रखते हुए मैं श्वास छोडूँगा'—ऐसा सीखता है। 'आश्वासप्रश्वास की प्रक्रिया

सिक्खति, 'पस्सम्भयं कायसङ्खारं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'पीतिप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पीतिप्पटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'सुखप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'सुखप्पटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'चित्तसङ्खारप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'चित्तसङ्खारप्पटि-संवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'पस्सम्भयं चित्तसङ्खारं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पस्सम्भयं चित्तसङ्खारं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'चित्तप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'चित्तप्पटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'अभिप्पमोदयं चित्तं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'अभिप्पमोदयं चित्तं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'समादहं चित्तं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'समादहं [B.272] चित्तं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'विमोचयं चित्तं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'विमोचयं चित्तं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'अनिच्चानुपस्सी अस्स-[N.266] सिस्सामी' ति सिक्खति, 'अनिच्चानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'विरागानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'विरागानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'निरोधानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'निरोधानुपस्सी पस्स-सिस्सामी' ति सिक्खति; 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। एवं भाविता खो, भिक्खवे, आनापानस्सति एवं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा'' ति॥ ●

२. बोज्झङ्गसुत्तं

२. ''आनापानस्सति, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति

को शान्त करते हुए श्वास लूँगा'—ऐसा सीखता है, तथा 'इस कायसंस्कार को शान्त करते हुए श्वास छोड़ूँगा'—ऐसा सीखता है। प्रीति का अनुभव करते हुए...पूर्ववत्...। सुख का अनुभव करते हुए...।

''वह 'अनेकविध चित्तोत्पत्ति (चित्तसंस्कार) का अनुभव करते हुए श्वास छोड़ूँगा'—ऐसा सीखता है...तथा 'अनेकविध चित्तसंस्कार को शान्त करते हुए श्वास लूँगा'...। 'चित्त का अनुभव करते हुए श्वास लूँगा'...'...श्वास छोड़ूँगा'...। 'चित्त को सर्वथा प्रमुदित करते हुए...। 'चित्त को एकाग्र करते हुए...। 'चित्त को विमुक्त करते हुए...। 'अनित्यता का चिन्तन करते हुए...। विराग का चिन्तन करते हुए...। निरोध का चिन्तन करते हुए...। त्याग का चिन्तन करते हुए...।

''भिक्षुओ! इस प्रकार, आनापानस्मृति की भावना एवं अभ्यास करने से साधक को बहुत अच्छा फल एवं सुपरिणाम मिलता है''॥ ●

महानिसंसा। कथं भाविता च, भिक्खवे, आनापानस्सति कथं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा? इध, भिक्खवे, भिक्खु आनापानस्सतिसहगतं सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं, [R.313] आनापानस्सतिसहगतं धम्मविचयसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०...आनापानस्सतिसहगतं उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्ग-परिणामिं। एवं भाविता खो, भिक्खवे, आनापानस्सति एवं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा'' ति॥ ●

३. सुद्धिकसुत्तं

३. ''आनापानस्सति, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा। कथं भाविता च, भिक्खवे, आनापानस्सति कथं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा? इध, भिक्खवे, भिक्खु अरञ्‍ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्‍ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व अस्ससति, सतो व पस्ससति ...पे०...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। एवं भाविता खो, भिक्खवे, आनापानस्सति एवं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा'' ति॥ ●

---

२. बोध्यङ्गसूत्र : : आनापानस्मृति

२. ...''भिक्षुओ! आनापानस्मृति की भावना एवं अभ्यास बहुत फलप्रद एवं सुपरिणामदाता होते हैं। वह कैसे? भिक्षुओ! कोई भिक्षु यदि आनापानस्मृतिसहित विवेक, वैराग्य, निरोध एवं त्यागयुक्त स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की...धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग की...वीर्य-सम्बोध्यङ्ग की...प्रीतिसम्बोध्यङ्ग की...प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग की...समाधिसम्बोध्यङ्ग की... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की साधना एवं अभ्यास करता है तो यह सुफलदायी एवं विशेष परिणाम की देने वाली होती है। तथा इस से मुक्ति (व्यवसर्ग) सिद्ध होती है''॥ ●

३. शुद्धिकसूत्र : : आनापानस्मृति की भावना का फल

३. ...''भिक्षुओ! इस आनापानस्मृति की भावना एवं अभ्यास करने पर सुफल एवं विशेष परिणाम मिलता है। वह कैसे? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अरण्य में जा कर, या किसी वृक्ष के नीचे, या किसी एकान्त भवन में पद्मासन लगा कर बैठे शरीर को सीधा एवं सरल रखते हुए तथा स्मृति को व्यवस्थित रखते हुए...। वह स्मृतिपूर्वक ही श्वास ले, स्मृतिपूर्वक ही श्वास छोड़े ...पूर्ववत्...'त्याग का ध्यान रखता हुआ श्वास छोड़ूँगा'—ऐसा

४. पठमफलसुत्तं

[B.273] ४. ''आनापानस्सति, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महा-[N.267] निसंसा। कथं भाविता च, भिक्खवे, आनापानस्सति कथं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा? इध, भिक्खवे, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व अस्ससति, सतो व पस्ससति...पे०...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। [R.314] एवं भाविता खो, भिक्खवे, आनापानस्सति एवं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा। एवं भाविताय खो, भिक्खवे, आनापानस्सतिया एवं बहुलीकताय द्विन्नं फलानं अञ्ञतरं फलं पाटिकङ्खं—दिट्ठेव धम्मे अञ्ञा, सति वा उपादिसेसे अनागामिता'' ति॥ •

५. दुतियफलसुत्तं

५. ''आनापानस्सति, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महा-निसंसा। कथं भाविता च, भिक्खवे, आनापानस्सति कथं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा? इध, भिक्खवे, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व

सीखता है। यों, इस आनापानस्मृति की साधना एवं अभ्यास करने से यह विशेष फलदायी एवं सुपरिणामप्रद होती है''॥ •

४. प्रथम फलसूत्र : : आनापानस्मृति की भावना का फल

४. ...''भिक्षुओ! इस आनापानस्मृति की भावना एवं अभ्यास करने पर, यह विशेष फलप्रद एवं सुपरिणामदायी होती है। वह कैसे? भिक्षुओ! कोई भिक्षु अरण्य में जा कर, या किसी वृक्ष के नीचे...पूर्ववत्...'त्याग का ध्यान रखता हुआ श्वास छोड़ूँगा'—ऐसा सीखता है। यों, इस आनापानस्मृतिसाधना के दो फलों में से एक फल उस साधक भिक्षु को अवश्य मिलता है; या तो उस को इसी जीवन में निर्वाण मिल जाता है, या फिर यदि वह प्रारब्धवश न अधिगत हो तो उस की इस संसार में अनागामिता निश्चित ही है''॥

५. द्वितीय फलसूत्र : : आनापानस्मृतिसाधना का फल

५. ...''भिक्षुओ! आनापानस्मृति की भावना सुपरिणामदायी एवं सात फल देने वाली होती है। कैसे साधना की गयी आनापानस्मृति सुपरिणामदायी होती है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अरण्य में जा कर, या किसी वृक्ष के नीचे...पूर्ववत्...। इस तरह

अस्ससति, सतो व पस्ससति...पे०...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। एवं भाविता खो, भिक्खवे, आनापानस्सति एवं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा।

"एवं भाविताय खो, भिक्खवे, आनापानस्सतिया एवं बहुलीकताय सत्त फला सत्तानिसंसा पाटिकङ्खा। कतमे सत्त फला सत्तानिसंसा? दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति; नो चे दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति; अथ मरणकाले अञ्ञं आराधेति; नो चे दिट्ठेव धम्मे पटिकच्च अञ्ञं आराधेति, नो चे मरणकाले अञ्ञं आराधेति, अथ पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति... उपहच्चपरिनिब्बायी होति... असङ्खारपरिनिब्बायी होति...ससङ्खारपरिनिब्बायी होति... उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी—एवं भाविताय खो, भिक्खवे, आनापानस्स-[B.274] तिया एवं बहुलीकताय इमे सत्त फला सत्तानिसंसा पाटिकङ्खा" ति॥ ●

६. अरिट्ठसुत्तं

६. सावत्थिनिदानं। तत्र खो भगवा...पे०...एतदवोच—"भावेथ नो [N.268] तुम्हे, भिक्खवे, आनापानस्सतिं" ति? एवं वुत्ते आयस्मा अरिट्ठो भगवन्तं एतदवोच—"अहं, भन्ते, भावेमि आनापानस्सतिं" ति।

"यथा कथं पन त्वं, अरिट्ठ, भावेसि आनापानस्सतिं" ति? [R.315]

"अतीतेसु मे, भन्ते, कामेसु कामच्छन्दो पहीनो, अनागतेसु मे कामेसु कामच्छन्दो विगतो, अज्झत्तबहिद्धा च मे धम्मेसु पटिघसञ्ञा सुप्पटिविनीता। सो सतो व अस्ससिस्सामि, सतो व पस्ससिस्सामि। एवं ख्वाहं, भन्ते, भावेमि आनापानस्सतिं" ति।

भावित एवं अभ्यस्त इस आनापानस्मृति के सात शुभ फल अवश्यम्भावी हैं। कौन से सात फल? इसी जन्म में परम ज्ञान की प्राप्ति...पूर्ववत्...॥ *(द्र० पीछे पृ० ३२०)* ●

६. अरिष्टसूत्र : : भावनाविधि

६. ...**श्रावस्ती में** ही...। वहाँ भगवान् ने...पूर्ववत्...यों पूछा—"क्या भिक्षुओ! तुम आनापानस्मृति की भावना करते हो?" ऐसा पूछा जाने पर, आयुष्मान् अरिष्ट ने उत्तर दिया—"हाँ, भन्ते! मैं आनापानस्मृति की भावना करता हूँ"।

"भन्ते! अतीत कामभोगों में मेरा कामच्छन्द प्रहीण हो चुका है, अनागत कामभोगों में कोई कामच्छन्द मैं करूँगा नहीं, तथा आध्यात्मिक बाह्य धर्मों में मेरे द्वेष के सभी भाव सर्वथा दब गये, अतः मैं 'स्मृतिमान् हो कर श्वास लूँगा, तथा स्मृतिमान् हो कर ही श्वास छोड़ूँगा'—ऐसा सोचता हुआ इस आनापानस्मृति की साधना करता हूँ।"

"'अत्थेसा, अरिट्ठ, आनापानस्सति, नेसा नत्थी' ति वदामि। अपि च, अरिट्ठ, यथा आनापानस्सति वित्थारेन परिपुण्णा होति तं सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो आयस्मा अरिट्ठो भगवतो पच्चस्सोसि। भगवा एतदवोच—

"कथं च, अरिट्ठ, आनापानस्सति वित्थारेन परिपुण्णा होति? इध, अरिट्ठ, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व अस्ससति, सतो व पस्ससति। दीघं वा अस्ससन्तो 'दीघं अस्ससामी' ति पजानाति...पे०...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। एवं खो, अरिट्ठ, आनापानस्सति वित्थारेन परिपुण्णा होती" ति॥ ●

७. महाकप्पिनसुत्तं

७. सावत्थिनिदानं। तेन खो पन समयेन आयस्मा महाकप्पिनो भगवतो अविदूरे निसिन्नो होति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। अद्दसा खो भगवा आयस्मन्तं महाकप्पिनं अविदूरे निसिन्नं पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं [B.275] पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। दिस्वान भिक्खू आमन्तेसि—"पस्सथ नो तुम्हे, भिक्खवे, एतस्स भिक्खुनो कायस्स इञ्जितत्तं वा फन्दितत्तं वा" ति?

[N.269] "यदा पि मयं, भन्ते, तं आयस्मन्तं पस्साम सङ्घमज्झे वा निसिन्नं एकं वा रहो

"अरिष्ट! यह भी आनापानस्मृति की एक साधनाविधि है। 'नहीं है'—मैं ऐसा नहीं कहता; परन्तु यह आनापानस्मृति विस्तृत रूप से परिपूर्ण हो सके—ऐसी विधि तुम्हें बताता हूँ। तुम ध्यानपूर्वक उसे सुनो।"

"अच्छा, भन्ते!"

भगवान् बोले—"कैसे अरिष्ट! यह आनापानस्मृति विस्तृत रूप से पूर्ण होती है? यहाँ कोई भिक्षु अरण्य में, किसी वृक्ष के नीचे...पूर्ववत्...—ऐसा सीखता है। इस तरह, अरिष्ट! यह आनापानस्मृति परिपूर्ण होती है"॥ ●

७. महाकप्पिनसूत्र : : अचञ्चल होना

७. ...**श्रावस्ती में** ही...। उस समय आयुष्मान् महाकप्पिन भगवान् के समीप ही...पूर्ववत्... ध्यानभावना में बैठे थे। भगवान् ने आयुष्मान् महाकप्पिन को इस स्थिति में देखा। देख कर, भगवान् ने अन्य भिक्षुओं को संकेत किया—"भिक्षुओ! तुम इस भिक्षु की काया में कोई चञ्चलता या चपलता देख रहे हो?"

निसिन्नं तदा पि मयं तस्स आयस्मतो न पस्साम कायस्स इञ्जितत्तं वा [R.316] फन्दितत्तं वा'' ति।

''यस्स, भिक्खवे, समाधिस्स भावितत्ता बहुलीकतत्ता नेव कायस्स इञ्जितत्तं वा होति फन्दितत्तं वा, न चित्तस्स इञ्जितत्तं वा होति फन्दितत्तं वा तस्स, सो, भिक्खवे, भिक्खु समाधिस्स निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। कतमस्स च, भिक्खवे, समाधिस्स भावितत्ता बहुलीकतत्ता नेव कायस्स इञ्जितत्तं वा होति फन्दितत्तं वा, न चित्तस्स इञ्जितत्तं वा होति फन्दितत्तं वा?

''आनापानस्सतिसमाधिस्स, भिक्खवे, भावितत्ता बहुलीकतत्ता नेव कायस्स इञ्जितत्तं वा होति फन्दितत्तं वा, न चित्तस्स इञ्जितत्तं वा होति फन्दितत्तं वा। कथं भाविते च, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधिम्हि कथं बहुलीकते नेव कायस्स इञ्जितत्तं वा होति फन्दितत्तं वा, न चित्तस्स इञ्जितत्तं वा होति फन्दितत्तं वा?

''इध, भिक्खवे, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व अस्ससति, सतो व पस्ससति...पे०...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। एवं भाविते च खो, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधिम्हि एवं बहुलीकते नेव कायस्स इञ्जितत्तं वा होति फन्दितत्तं वा, न चित्तस्स इञ्जितत्तं वा होति फन्दितत्तं वा'' ति॥ ●

८. पदीपोपमसुत्तं

८. ''आनापानस्सतिसमाधि, भिक्खवे, भावितो बहुलीकतो महप्फलो होति

''भन्ते! इस समय की तो बात ही क्या, जब यह सभा में, या एकान्त में अकेला बैठा रहता है, तब भी हम इस के शरीर में किसी प्रकार की चञ्चलता या चपलता नहीं देखते।''

''भिक्षुओ! इस प्रकार जिस किसी भिक्षु द्वारा समाधि की भली भाँति साधना पूर्ण करने के बाद उस के शरीर में या चित्त में किसी प्रकार की चञ्चलता या चपलता नहीं होती, वही भिक्षु इस समाधिभावना का पूर्ण लाभ उठा सकता है। कैसी समाधि की भावना से शरीर या चित्त में किसी प्रकार की चञ्चलता या चपलता नहीं रहती?

''भिक्षुओ! कोई भिक्षु अरण्य में, या किसी वृक्ष के नीचे...पूर्ववत्...—ऐसा सीखता है। आनापानस्मृति की ऐसी साधना करने पर न उस की काया में किसी प्रकार की चपलता रहती है, न उस के चित्त में''॥ ●

महानिसंसो। कथं भावितो च, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि कथं बहुलीकतो महप्फलो होति महानिसंसो?

[R.317] "इध, भिक्खवे, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा [B.276] निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व अस्ससति, सतो व पस्ससति। दीघं वा अस्ससन्तो 'दीघं अस्ससामी' ति [N.270] पजानाति...पे०...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। एवं भावितो खो, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि एवं बहुलीकतो महप्फलो होति महानिसंसो।

"अहं पि सुदं, भिक्खवे, पुब्बेव सम्बोधा अनभिसम्बुद्धो बोधिसत्तो व समानो इमिना विहारेन बहुलं विहरामि। तस्स मय्हं, भिक्खवे, इमिना विहारेन बहुलं विहरतो नेव कायो किलमति, न चक्खूनि; अनुपादाय च मे आसवेहि चित्तं विमुच्चि।

"तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'नेव मे कायो किलमेय्य न चक्खूनि, अनुपादाय च मे आसवेहि चित्तं विमुच्चेय्या' ति, अयमेव आनापानस्सति-समाधि साधुकं मनसि कातब्बो। तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'ये मे गेहसिता सरसङ्कप्पा ते पहीयेय्युं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'अप्पटिकूले पटिकूल-

---

८. प्रदीपोपमसूत्र : : आनापानसमाधिभावना

८. ..."भिक्षुओ! आनापानस्मृतिसमाधि की भावना तथा अभ्यास अत्यधिक लाभप्रद एवं फलदायक होता है। वह कैसे? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु अरण्य में, किसी वृक्ष के नीचे...पूर्ववत्... —सीखता है। यों, इस की साधना तथा अभ्यास करने पर यह आनापानस्मृति लाभप्रद एवं विशेष फलदायक होती है।

"मैं स्वयं भी, भिक्षुओ! सम्बोधिप्राप्ति के पूर्व से ही, जब मैं बोधिसत्त्वावस्था में था, इस साधना का प्राय: अभ्यास करता रहता था। इस साधना का लाभ मुझे यह मिला कि न तो मेरा शरीर कोई श्रान्ति (थकावट) मानता था, न चक्षु आदि इन्द्रियाँ ही। अपि तु एक दिन वह आया कि इस साधना के बल पर मेरा चित्त उपादानरहित हो कर आश्रवों से विमुक्त हो गया।

"इसलिये, भिक्षुओ! यदि कोई भिक्षु अपने शरीर, इन्द्रियों एवं चित्त की ऐसी स्थिति चाहता हो तो वह इस आनापानस्मृति की भली भाँति साधना करे। यदि कोई भिक्षु यह चाहता हो कि उस के मन में घर बना कर बैठे हुए वृथा सांसारिक सङ्कल्प प्रहीण हो जायँ तो उसे भी इस की साधना करनी चाहिये।

सञ्ञी विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो।... तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'पटिकूले अप्पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'पटिकूले च अप्पटिकूले च पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, [R.318] भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'पटिकूले च अप्पटिकूले च अप्पटिकूलसञ्ञी विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'अप्पटिकूलं च पटिकूलं च तदुभयं अभिनिवज्जेत्वा उपेक्खको विहरेय्यं सतो सम्पजानो' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'वितक्कविचारानं वूपसमा [B.277] अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि [N.271] कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'पीतिया च विरागा उपेक्खको च विहरेय्यं सतो च सम्पजानो, सुखं च कायेन पटिसंवेदेय्यं, यं तं अरिया आचिक्खन्ति—उपेक्खको सतिमा सुखविहारी ति ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा अनन्तो आकासो ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु

...अप्रतिकूल में प्रतिकूलसंज्ञी हो कर साधना करूँ...प्रतिकूल में अप्रतिकूलसंज्ञी हो कर साधना करूँ...प्रतिकूल एवं अप्रतिकूल में प्रतिकूलसंज्ञी हो कर साधना करूँ...प्रतिकूल एवं अप्रतिकूल में अप्रतिकूलसंज्ञी हो कर साधना करूँ...अप्रतिकूल एवं प्रतिकूल—दोनों को छोड़ कर या इन के प्रति उपेक्षक हो कर साधना करूँ...प्रथम ध्यान...द्वितीय ध्यान...तृतीय

[R.319] चे पि आकङ्खेय्य—'सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म अनन्तं विञ्ञाणं ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म नत्थि किञ्ची ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो। ...तस्मातिह, भिक्खवे, भिक्खु चे पि आकङ्खेय्य—'सब्बसो नेवसञ्ञा-नासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति, अयमेव आनापानस्सतिसमाधि साधुकं मनसि कातब्बो।

''एवं भाविते खो, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधिम्हि एवं बहुलीकते, सुखं चे वेदनं वेदयति, 'सा अनिच्चा' ति पजानाति, 'अनज्झोसिता' ति पजानाति, 'अनभि-नन्दिता' ति पजानाति; दुक्खं चे वेदनं वेदयति, 'सा अनिच्चा' ति पजानाति, [B.278] 'अनज्झोसिता' ति पजानाति, 'अनभिनन्दिता' ति पजानाति; अदुक्खमसुखं चे [N.272] वेदनं वेदयति, 'सा अनिच्चा' ति पजानाति, 'अनज्झोसिता' ति पजानाति, 'अनभिनन्दिता' ति पजानाति।

''सुखं चे वेदनं वेदयति, विसंयुत्तो नं वेदयति; दुक्खं चे वेदनं वेदयति, विसंयुत्तो नं वेदयति; अदुक्खमसुखं चे वेदनं वेदयति, विसंयुत्तो नं वेदयति। सो कायपरियन्तिकं वेदनं वेदयमानो 'कायपरियन्तिकं वेदनं वेदयामी' ति पजानाति, जीवितपरियन्तिकं वेदनं वेदयमानो 'जीवितपरियन्तिकं वेदनं वेदयामी' ति पजानाति, 'कायस्स भेदा उद्धं

ध्यान...चतुर्थ ध्यान की साधना करूँ...आकाशानन्त्यायतन...विज्ञानानन्त्यायतन... आकिञ्चन्यायतन...नैवसंज्ञानासंज्ञायतन...संज्ञावेदयितनिरोध की साधना करूँ तो, भिक्षुओ! इस भिक्षु को इस आनापानस्मृतिसमाधि की साधना पूर्ण करनी चाहिये।

''इस प्रकार, भिक्षुओ! इस की साधना पूर्ण करने पर यदि वह भिक्षु सुखावेदना का ...दुःखावेदना का...अदुःखा असुखावेदना का अनुभव करता है तो वह उसे 'वह अनित्य है'—ऐसा जानता है, 'वह अनभिनन्दनीय है'—ऐसा जानता है, 'वह अग्राह्य है'—ऐसा जानता है।

''तथा वह भिक्षु सुखावेदना को ...दुःखावेदना को...अदुःखा असुखावेदना को, उस से पृथक् रहते हुए ही, उस का अनुभव (उपभोग) करता है। वह प्राणान्तक वेदना

जीवितपरियादाना इधेव सब्बवेदयितानि अनभिनन्दितानि सीतीभविस्सन्ती' ति पजानाति।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, तेलं च पटिच्च वट्टिं च पटिच्च तेलप्पदीपो [R.320] झायेय्य, तस्सेव तेलस्स च वट्टिया च परियादाना अनाहारो निब्बायेय्य; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु कायपरियन्तिकं वेदनं वेदयमानो 'कायपरियन्तिकं वेदनं वेदयामी' ति पजानाति, जीवितपरियन्तिकं वेदनं वेदयमानो 'जीवितपरियन्तिकं वेदनं वेदयामी' ति पजानाति, 'कायस्स भेदा उद्धं जीवितपरियादाना इधेव सब्बवेदयितानि अनभिनन्दितानि सीतीभविस्सन्ती' ति पजानाती'' ति॥ •

९. वेसालीसुत्तं

९. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागारसालायं। तेन खो पन समयेन भगवा भिक्खूनं अनेकपरियायेन असुभकथं कथेति, असुभाय वण्णं भासति, असुभभावनाय वण्णं भासति।

अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''इच्छामहं, भिक्खवे, अड्डमासं पटिसल्लीयितुं। नाम्हि केनचि उपसङ्कमितब्बो, अञ्ञत्र एकेन पिण्डपातनीहारकेना'' ति।

को...जीवितपर्यन्त वेदना को...उसी रूप में देखता है। तथा उन के विषय में जानता है—'ये सभी सुखदु:खानुभव जीवन रहने तक भोग में आ सकते हैं; मरणानन्तर, ये सभी भोग स्वत: शान्त हो जायँगे'।

दीपोपमा—''भिक्षुओ! जैसे कोई दीपक, तैल एवं बत्ती का साथ रहने तक ही, प्रज्वलित रहता है; तैल एवं बत्ती के समाप्त होने से निराहार हो जाने पर वह दीपक स्वत: ही बुझ जाता है; उसी प्रकार 'मैं अपने जीवनपर्यन्त ही इन सुखदु:खवेदनाओं को अनुभूत कर सकूँगा; जीवनक्षयानन्तर मेरे ये सुखानुभव स्वत: समाप्त (क्षीण) हो जायँगें। अत: यहीं (इस शरीर) तक साथ रहने वाले ये सुखदु:खानुभव अनभिनन्दनीय हैं'—ऐसा वह जानता है''॥ •

९. वैशालीसूत्र : : सुखसाधना

९. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **वैशाली के** महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय भगवान् भिक्षुओं को, शरीर की अनेक अशुभ कथाओं के सहारे से, धर्मोपदेश करते थे, उस प्रसङ्ग में वार वार 'अशुभ' की ही प्रशंसा करते थे, 'अशुभसाधना' का महत्त्व बताते थे।

तब भगवान् ने भिक्षुओं को बुला कर यों आदेश दिया—''भिक्षुओ! अव मैं

"एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पटिस्सुत्वा नास्सुध कोचि भगवन्तं उपसङ्कमति, अञ्ञत्र एकेन पिण्डपातनीहारकेन।

[B.279] अथ खो ते भिक्खू—"भगवा अनेकपरियायेन असुभकथं कथेति, असुभाय [N.273] वण्णं भासति, असुभभावनाय वण्णं भासती" ति अनेकाकारवोकारं असुभ-भावनानुयोगमनुयुत्ता विहरन्ति। ते इमिना कायेन अट्टीयमाना हरायमाना जिगुच्छमाना सत्थहारकं परियेसन्ति। दस पि भिक्खू एकाहेन सत्थं आहरन्ति, वीसं पि...पे०...तिंसं पि भिक्खू एकाहेन सत्थं आहरन्ति।

अथ खो भगवा तस्स अड्ढमासस्स अच्चयेन पटिसल्लाना वुट्ठितो आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—"किं नु खो, आनन्द, तनुभूतो विय भिक्खुसङ्घो" ति ?

[R.321] "तथा हि पन, भन्ते, 'भगवा भिक्खूनं अनेकपरियायेन असुभकथं कथेति, असुभाय वण्णं भासति, असुभभावनाय वण्णं भासती' ति अनेकाकारवोकारं असुभ-भावनानुयोगमनुयुत्ता विहरन्ति। ते इमिना कायेन अट्टीयमाना हरायमाना जिगुच्छमाना सत्थहारकं परियेसन्ति। दस पि भिक्खू एकाहेन सत्थं आहरन्ति, वीसं पि भिक्खू...तिंसं पि भिक्खू एकाहेन सत्थं आहरन्ति। साधु, भन्ते, भगवा अञ्ञं परियायं आचिक्खतु यथायं भिक्खुसङ्घो अञ्ञाय सण्ठहेय्या" ति।

अर्धमास (पन्द्रह दिन=एक पक्ष) तक एकान्त साधना करना चाहता हूँ। इस अन्तराल में मेरे पास भोजन लाने वाले के अतिरिक्त, कोई न आवे।"

इसी बीच, वे भिक्षु यह सोच कर—"भगवान् ने अशुभ की बहुत बातें बतायीं, 'अशुभ' तथा 'अशुभसाधना' की भी भगवान् ने प्रशंसा की है', अशुभसाधना में लगते गये। यह साधना करते करते, उन को अपने शरीर के प्रति इतनी लज्जा, ग्लानि एवं घृणा हो गयी कि वे इस को नष्ट करने हेतु वधक (शरीर काटने वाला) खोजने लगे। इस तरह उन भिक्षुओं में से प्रतिदिन दश, बीस ...तीस भिक्षु मरने लगे।

तब भगवान् ने, पन्द्रह दिन बाद एकान्तवास से बाहर आ कर (भिक्षुसङ्घ पर दृष्टि डाली, वहाँ भिक्षुओं की अल्पता देख कर) आयुष्मान् आनन्द को बुलाया तथा उस से पूछा—"आनन्द! आज भिक्षुसङ्घ सङ्ख्या में कुछ अल्प दिखायी पड़ रहा है ?"

"भन्ते! क्यों कि आप ने एकान्तवास में जाने से पूर्व अशुभभावना का प्रशंसनीय शब्दों में उपदेश किया था, उसी से प्रभावित हो कर कुछ भिक्षुजन उस अशुभभावना की अतिशय साधना करने लगे। फलस्वरूप, उन्हें अपने शरीर के प्रति इतनी लज्जा, ग्लानि एवं घृणा हो गयी कि वे अपने इस घृणित शरीर को नष्ट करने के लिये वधक खोजने लगे। इस तरह, इनमें से प्रतिदिन दश, बीस, तीस भिक्षु अपने शरीर को शस्त्रों से कटवाने लगे।

"तेन हानन्द, यावतिका भिक्खू वेसालिं उपनिस्साय विहरन्ति ते सब्बे उपट्ठानसालायं सन्निपातेही" ति। "एवं, भन्ते" ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा यावतिका भिक्खू वेसालिं उपनिस्साय विहरन्ति ते सब्बे उपट्ठानसालायं सन्निपातेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं एतदवोच—"सन्निपतितो, भन्ते, भिक्खुसङ्घो। यस्स दानि, भन्ते, भगवा कालं मञ्ञती" ति।

अथ खो भगवा येन उपट्ठानसाला तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"अयं पि खो, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि भावितो बहुलीकतो सन्तो चेव पणीतो च असेचनको च सुखो च विहारो उप्पन्नुप्पन्ने च पापके अकुसले धम्मे ठानसो अन्तरधापेति वूपसमेति।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, गिम्हानं पच्छिमे मासे ऊहतं रजोजल्लं, तमेनं [B.280] महाअकालमेघो ठानसो अन्तरधापेति वूपसमेति; एवमेव खो, [N.274, R.322] भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि भावितो बहुलीकतो सन्तो चेव पणीतो च असेचनको च सुखो च विहारो उप्पन्नुप्पन्ने च पापके अकुसले धम्मे ठानसो अन्तरधापेति वूपसमेति। कथं भावितो च, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि कथं बहुलीकतो सन्तो चेव पणीतो च असेचनको च सुखो च विहारो उप्पन्नुप्पन्ने च पापके अकुसले धम्मे ठानसो अन्तरधापेति वूपसमेति?

अत: भगवान् भिक्षुओं को किसी अन्य साधनाप्रकार का उपदेश करें जिस से भिक्षुसङ्घ स्थिर रहें"। (सङ्ख्या में कम न हो।)

"आनन्द! वैशाली में साधनारत सभी भिक्षुओं को उपस्थानशाला (सभाभवन) में एकत्र करो।" भगवान् की यह आज्ञा शिरोधार्य कर आयुष्मान् आनन्द ने वैशाली में साधनारत सभी भिक्षुओं को उपस्थानशाला में एकत्र किया। तथा भगवान् को भिक्षुओं के वहाँ एकत्र होने की सूचना दी।

तब भगवान् उपस्थानशाला में जा कर प्रज्ञप्त आसन पर विराजे, तथा भिक्षुओं को यों देशना की—"भिक्षुओ! यह आनापानस्मृतिसमाधि यदि भावित एवं अभ्यस्त की जाय तो शान्त, सुन्दर एवं सुख (सहज) साधना का रूप ले लेती है। साधक के चित्त में उत्पन्न होने वाले पापमय अकुशल धर्म इस साधना द्वारा निगृहीत किये जा सकते हैं, शान्त किये जा सकते हैं।

"भिक्षुओ! जैसे ग्रीष्म ऋतु के पश्चिम मास में आकाश में उड़ती हुई धूल अकस्मात् हुई वर्षा से नीचे दब जाती है; उसी प्रकार, भिक्षुओ! इस आनापानस्मृतिसमाधिभावना से

"इध, भिक्खवे, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व अस्ससति, सतो व पस्ससति...पे०...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। एवं भावितो खो, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि एवं बहुलीकतो सन्तो चेव पणीतो च असेचनको च सुखो च विहारो उप्पन्नुप्पन्ने च पापके अकुसले धम्मे ठानसो अन्तरधापेति वूपसमेती" ति॥

१०. किमिलसुत्तं

१०. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा किमिलायं विहरति वेळुवने। तत्र खो भगवा आयस्मन्तं किमिलं आमन्तेसि—"कथं भावितो नु खो, किमिल, आनापानस्सति-समाधि कथं बहुलीकतो महप्फलो होति महानिसंसो" ति?

एवं वुत्ते आयस्मा किमिलो तुण्ही अहोसि। दुतियं पि खो भगवा...पे०...ततियं पि खो भगवा आयस्मन्तं किमिलं आमन्तेसि—"कथं भावितो नु खो, किमिल, आनापानस्सतिसमाधि कथं बहुलीकतो महप्फलो होति महानिसंसो" ति? ततियं पि खो आयस्मा किमिलो तुण्ही अहोसि।

[R.323] एवं वुत्ते आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"एतस्स, भगवा, कालो; [B.281] एतस्स, सुगत, कालो! यं भगवा आनापानस्सतिसमाधिं भासेय्य। भगवतो सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती" ति।

शान्त, सुन्दर एवं सुखमय साधना हो सकती है। भिक्षुओ! इस समाधि की साधनाविधि क्या है, जो पापधर्मों को शान्त कर देती है, निगृहीत कर देती है?

"यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अरण्य में, या किसी वृक्ष के नीचे...पूर्ववत्...यह सहज साधना उत्पन्न अकुशल पापमय धर्मों को शान्त कर देती है, निगृहीत कर देती है"॥

१०. किमिलसूत्र : : आनापानस्मृतिसमाधि

१०. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **किमिला के** वेणुवन में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने आयुष्मान् किमिल से पूछा—"किमिल! आनापानस्मृतिसमाधि की भावना कैसे की जाती हुई महान् फलदायक होती है?"

ऐसा पूछे जाने पर, आयुष्मान् किमिल चुप रह गये। दूसरी बार...तीसरी बार भी भगवान् द्वारा यह पूछे जाने पर वे चुप ही रहे। तब आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यह निवेदन किया—"भगवन्! इस का अवसर है! सुगत! इस का प्रसङ्ग है कि आप ही इस

"तेन हानन्द, सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि। भगवा एतदवोच— [N.275]

"कथं भावितो च, आनन्द, आनापानस्सतिसमाधि कथं बहुलीकतो महप्फलो होति महानिसंसो? इधानन्द, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व अस्ससति, सतो व पस्ससति...पे०...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति। एवं भावितो खो, आनन्द, आनापानस्सतिसमाधि एवं बहुलीकतो महप्फलो होति महानिसंसो।

"यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु दीघं वा अस्ससन्तो 'दीघं अस्ससामी' ति पजानाति, दीघं वा पस्ससन्तो 'दीघं पस्ससामी' ति पजानाति; रस्सं वा अस्ससन्तो 'रस्सं अस्ससामी' ति पजानाति, रस्सं वा पस्ससन्तो 'रस्सं पस्ससामी' ति पजानाति; 'सब्बकायप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'सब्बकायप्पटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'पस्सम्भयं कायसङ्खारं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पस्सम्भयं कायसङ्खारं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति—काये कायानुपस्सी, आनन्द, भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झा-दोमनस्सं। तं किस्स हेतु? कायञ्ञतराहं, आनन्द, एतं वदामि यदिदं—अस्सास-पस्सासं। तस्मातिहानन्द, काये कायानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

आनापानस्मृतिसमाधि का उपदेश करें। आप जैसा बतायँगें, भिक्षु वैसा ही अपने मन में धारण कर लेंगे।"

"तो, आनन्द! सुनो! ठीक से मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ।"

"अच्छा, भन्ते!" आनन्द ने यह उत्तर दिया। भगवान् बोले—

"...पूर्ववत्...यहाँ, आनन्द! कोई भिक्षु अरण्य में, किसी वृक्ष के नीचे, या किसी शून्यागार में पद्मासन लगा कर, शरीर को सीधा एवं सरल कर, स्मृति के साथ बैठे। वहाँ वह स्मरण करता हुआ श्वास ले...पूर्ववत्...सीखता है। आनन्द! इस आनापानस्मृति की साधना करने से यह महान् फलदायक होती है।

"जिस समय, आनन्द! भिक्षु लम्बी श्वास लेता हुआ 'लम्बी श्वास ले रहा हूँ'—यह जानता है, दीर्घ श्वास छोड़ता हुआ 'दीर्घ श्वास छोड़ता हूँ'—यह जानता है...पूर्ववत्...*(द्र० एकधर्मसूत्र पृ. २०२३)*। उस समय वह काया में कायानुपश्यी हो कर साधना करता है। वह

''यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु 'पीतिप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पीतिप्पटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'सुखप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति [R.324] सिक्खति, 'सुखप्पटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'चित्तसङ्खारप्पटि-संवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'चित्तसङ्खारप्पटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'पस्सम्भयं चित्तसङ्खारं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति—वेदनासु वेदना-[B.282] नुपस्सी, आनन्द, भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तं किस्स हेतु? वेदनाञ्ञतराहं, आनन्द, एतं वदामि [N.276] यदिदं—अस्सासपस्सासानं साधुकं मनसिकारं। तस्मातिहानन्द, वेदनासु वेदनानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

''यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु 'चित्तप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'चित्तप्पटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'अभिप्पमोदयं चित्तं...पे०...समादहं चित्तं... 'विमोचयं चित्तं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'विमोचयं चित्तं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति—चित्ते चित्तानुपस्सी, आनन्द, भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तं किस्स हेतु? नाहं, आनन्द, मुट्ठस्सतिस्स असम्पजानस्स आनापानस्सतिसमाधिभावनं वदामि। तस्मातिहानन्द, चित्ते चित्तानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

किस लिये? आनन्द! क्यों कि मैं आश्वास प्रश्वास को एक ही काया बताता हूँ, इसलिये। ...।

''जिस समय, आनन्द! भिक्षु 'प्रीतिप्रतिसंवेदी हो कर श्वास लूँगा'—ऐसा सीखता है...सुख का अनुभव करते हुए..., चित्तसंस्कार का अनुभव करते हुए..., चित्त को प्रमुदित करते हुए..., चित्त को एकाग्र करते हुए..., आनन्द! उस समय, भिक्षु वेदना में वेदनानुपश्यी हो कर साधना करता है...। वह किस लिये? आनन्द! क्यों कि आश्वास प्रश्वास का जो अच्छी तरह मनन करता है उसे मैं एक वेदना ही बताता हूँ, इसलिये।...।

''जिस समय, आनन्द! वह भिक्षु 'चित्त का अनुभव करते श्वास लूँगा'—ऐसा सीखता है, चित्त को प्रमुदित करते...चित्त को एकाग्र करते...चित्त को विमुक्त करते..., आनन्द! उस समय, वह भिक्षु चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर साधना करता है। वह क्यों? वह, आनन्द! मूढस्मृति वाला तथा असम्प्रज्ञ पुरुष आनापानस्मृति का अभ्यास कर लेगा—ऐसा मैं नहीं कहता, आनन्द! इसलिये...।

''यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु 'अनिच्चानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति ...पे०...विरागानुपस्सी...निरोधानुपस्सी...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति—धम्मेसु धम्मानुपस्सी, आनन्द, भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। सो यं तं होति अभिज्झादोमनस्सानं पहानं तं पञ्ञाय दिस्वा साधुकं अज्झुपेक्खिता होति। तस्मातिहानन्द, धम्मेसु धम्मानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

''सेय्यथापि, आनन्द, चतुम्महापथे महापंसुपुञ्जो। पुरत्थिमाय चे पि [R.325] दिसायं आगच्छेय्य सकटं वा रथो वा, उपहनतेव तं पंसुपुञ्जं; पच्छिमाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य... उत्तराय चे पि दिसाय...दक्खिणाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य सकटं वा रथो वा, उपहनतेव तं पंसुपुञ्जं। एवमेव खो, आनन्द, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरन्तो ति उपहनतेव पापके अकुसले धम्मे; वेदनासु...पे०...चित्ते...धम्मेसु [B.283] धम्मानुपस्सी विहरन्तो पि उपहनतेव पापके अकुसले धम्मे'' ति॥ •

एकधम्मवग्गो पठमो॥

तस्सुद्दानं

एकधम्मो च बोज्झङ्गो, सुद्धिकं च दुवे फला। [N.277]
अरिट्ठो कप्पिनो दीपो, वेसाली किमिलेन चा ति॥ •

''जिस समय, आनन्द! वह भिक्षु 'अनित्यता का चिन्तन करते हुए श्वास लूँगा'— ऐसा सीखता है..., विराग का चिन्तन करते...निरोध का चिन्तन करते...त्याग का चिन्तन करते..., आनन्द! उस समय, भिक्षु 'धर्मों में धर्मानुपश्यी हो कर साधना करता है। वह किस लिये? वह लोभ एवं दौर्मनस्य के प्रहाण को प्रज्ञा से अच्छी तरह देखने वाला होता है, आनन्द! इसलिये...।

''आनन्द! जैसे किसी चौराहे पर धूल की एक बड़ी राशि पड़ी हो। वहाँ पूर्व दिशा से, पश्चिम दिशा से, उत्तर दिशा से, दक्षिण दिशा से कोई बैलगाड़ी या रथ आवे और वह उस धूल की राशि को कुचलता हुआ आगे निकल जाय; उसी तरह, आनन्द! भिक्षु काया में कायानुपश्यी हो कर, या वेदना में वेदनानुपश्यी हो कर, या चित्त में चित्तानुपश्यी हो कर या धर्म में धर्मानुपश्यी हो कर—किसी भी तरह साधना करे वह वैसी साधना करता हुआ अपने अकुशल धर्मों को तो नष्ट कर ही लेगा''॥ •

एकधर्मवर्ग सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. एकधर्मसूत्र, २. बोध्यङ्गसूत्र, ३. शुद्धिकसूत्र, ४. प्रथम फलसूत्र, ५. द्वितीय फलसूत्र, ६. अरिष्टसूत्र, ७. महाकप्पिनसूत्र, ८. प्रदीपोपमसूत्र, ९. वैशालीसूत्र एवं १०. किमिलसूत्र ॥ ●

२. दुतियो वग्गो

११. इच्छानङ्गलसुत्तं

११. एकं समयं भगवा इच्छानङ्गले विहरति इच्छानङ्गलवनसण्डे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''इच्छामहं, भिक्खवे, तेमासं पटिसल्लीयितुं। नाम्हि केनचि उपसङ्कमितब्बो, अञ्ञत्र एकेन पिण्डपातनीहारकेना'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खू भगवतो पटिस्सुत्वा नास्सुध कोचि भगवन्तं उपसङ्कमति, अञ्ञत्र एकेन पिण्डपातनीहारकेन।

अथ खो भगवा तस्स तेमासस्स अच्चयेन पटिसल्लाना वुट्ठितो भिक्खू [R.326] आमन्तेसि—''सचे खो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—'कतमे-नावुसो, विहारेन समणो गोतमो वस्सावासं बहुलं विहासी' ति, एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथ—'आनापानस्सतिसमाधिना खो, आवुसो, भगवा वस्सावासं बहुलं विहासी' ति। इधाहं, भिक्खवे, सतो अस्ससामि, सतो पस्ससामि। दीघं अस्ससन्तो 'दीघं अस्ससामी' ति पजानामि, दीघं पस्ससन्तो 'दीघं पस्ससामी' ति पजानामि; रस्सं अस्ससन्तो 'रस्सं अस्ससामी' ति पजानामि, रस्सं पस्ससन्तो 'रस्सं पस्ससामी' ति पजानामि; 'सब्बकायप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति

---

२. द्वितीय वर्ग

११. इच्छानङ्गलसूत्र : : भगवान् की साधना

११. एक समय भगवान् (बुद्ध) **इच्छानङ्गलप्रदेश के** इच्छानङ्गल वनप्रान्त में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को बताया—''भिक्षुओ! मैं अब तीन मास तक एकान्त साधना करना चाहता हूँ। इस समय के अन्तराल में मेरे पास एक भोजन लाने वाले के अतिरिक्त कोई भी न आवे।'''' अच्छा, भन्ते''—यों कह कर सभी भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। और उन के पास भोजन देने वाले को छोड़ कर कोई भी इस बीच नहीं गया।

तब भगवान् ने तीन मास के एकान्तवास बाद समाधि से उठ कर भिक्षुओं को अपने पास बुलाया, तथा यों समझाया—''भिक्षुओ! यदि तुम से दूसरे सम्प्रदायों वाले यह पूछें कि तुम्हारे शास्ता श्रमण गौतम ने समग्र वर्षावास किस साधना में बिताया? तो तुम्हें उन को यों बताना चाहिये—'आयुष्मानो! हमारे शास्ता ने समग्र वर्षावास एकान्ततः आनापानस्मृतिसमाधि की साधना के साथ बिताया। मैं स्मृतिपूर्वक श्वास लेता हूँ, स्मृतिपूर्वक श्वास छोड़ता हूँ। लम्बा (दीर्घ) श्वास लेता हुआ 'मैं लम्बा श्वास ले रहा हूँ'—ऐसा जानता

पजानामि...पे०...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति पजानामि, 'पटि-निस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति पजानामि।

[B.284] ''यं हि तं, भिक्खवे, सम्मा वदमानो वदेय्य—'अरियविहारो' इति पि, 'ब्रह्मविहारो' इति पि, 'तथागतविहारो' इति पि; आनापानस्सतिसमाधिं सम्मा वदमानो वदेय्य—'अरियविहारो' इति पि, 'ब्रह्मविहारो' इति पि, 'तथागतविहारो' इति पि। ये ते, भिक्खवे, भिक्खू सेखा अप्पत्तमानसा अनुत्तरं योगक्खेमं पत्थयमाना विहरन्ति तेसं आनापानस्सतिसमाधि भावितो बहुलीकतो आसवानं खयाय संवत्तति। ये च खो ते, [N.278] भिक्खवे, भिक्खू अरहन्तो खीणासवा वुसितवन्तो कतकरणीया ओहितभारा अनुप्पत्तसदत्था परिक्खीणभवसंयोजना सम्मदञ्ञा विमुत्ता तेसं आनापानस्सतिसमाधि भावितो बहुलीकतो दिट्ठधम्मसुखविहाराय चेव संवत्तति सतिसम्पजञ्ञाय च।

''यं हि तं, भिक्खवे, सम्मा वदमानो वदेय्य—'अरियविहारो' इति पि, 'ब्रह्मविहारो' इति पि, 'तथागतविहारो' इति पि। आनापानस्सतिसमाधिं सम्मा वदमानो वदेय्य—'अरियविहारो' इति पि, 'ब्रह्मविहारो' इति पि, 'तथागतविहारो' इति पि'' ति॥ •

हूँ, तथा छोटा (ह्रस्व) श्वास लेता हुआ 'मैं छोटा श्वास ले रहा हूँ'—यह जानता हूँ। 'सर्व कायसुख का अनुभव करता हुआ श्वास ले रहा हूँ'—ऐसा जानता हूँ...पूर्ववत्...।

''वस्तुत:, भिक्षुओ! यदि कोई 'आर्यविहार', 'ब्रह्मविहार' या 'तथागतविहार'—इन नामों से किसी साधना को परिभाषित करना चाहे तो वह इस 'आनापानस्मृतिसमाधि' को ही उन उक्त नामों से ही परिभाषित कर सकता है।

''भिक्षुओ! जो भिक्षु अभी शैक्ष्य हैं, जिन्होंने धर्मसाधना का अपना उद्देश्य पूर्ण नहीं किया है, जो अभी अनुत्तर योगक्षेम (निर्वाण) प्राप्तिहेतु प्रयत्नवान् हैं, उन के आश्रव (चित्तविकार) इस आनापानस्मृतिसमाधि की भावना से ही पूर्णत: क्षीण हो सकते हैं।

''परन्तु, भिक्षुओ! जो भिक्षु अर्हत् एवं क्षीणाश्रव हो चुके हैं, जिन की धर्मसाधना पूर्ण हो चुकी है, जो कृतकृत्य एवं भारमुक्त हो चुके हैं, जिन्होंने परमार्थ अधिगत कर लिया है, जिन का भवसंयोजन क्षीण हो चुका है, तथा जो परम ज्ञान प्राप्त कर मुक्त हो चुके हैं, उन के लिये भी यह आनापानस्मृतिसमाधि उन के द्वारा साधना तथा अभ्यास की जाती हुई उन के इस अवशिष्ट जीवन में सुखविहार एवं स्मृतिसम्प्रजन्य के लिये फलवती ही होती है॥

अत: भिक्षुओ! इस आनापानस्मृतिसमाधि को 'आर्यविहार', 'ब्रह्मविहार' या 'तथागतविहार' शब्दों से परिभाषित करने वाला विद्वान् उचित ही कर रहा है''॥ •

१२. कङ्ख्येय्यसुत्तं

१२. एकं समयं आयस्मा लोमसकंभियो सक्केसु विहरति कपिल-[R.327] वत्थुस्मिं निग्रोधारामे। अथ खो महानामो सक्को येनायस्मा लोमसकंभियो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं लोमसकंभियं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो महानामो सक्को आयस्मन्तं लोमसकंभियं एतदवोच—''सो एव नु खो सेखो विहारो सो तथागतविहारो, उदाहु अञ्ञो व सेखो विहारो अञ्ञो तथागतविहारो'' ति?

''न खो, आवुसो महानाम, स्वेव सेखो विहारो सो तथागतविहारो। अञ्ञो खो, आवुसो महानाम, सेखो विहारो, अञ्ञो तथागतविहारो। ये ते, आवुसो महानाम, भिक्खू सेखा अप्पत्तमानसा अनुत्तरं योगक्खेमं पत्थयमाना विहरन्ति, ते पञ्च नीवरणे पहाय विहरन्ति। कतमे पञ्च? कामच्छन्दनीवरणं पहाय विहरन्ति, ब्यापाद-[B.285] नीवरणं...पे०...थीनमिद्धनीवरणं...उद्धच्चकुक्कुच्चनीवरणं...विचिकिच्छानीवरणं पहाय विहरन्ति। ये पि ते, आवुसो महानाम, भिक्खू सेखा अप्पत्तमानसा अनुत्तरं योगक्खेमं पत्थयमाना विहरन्ति, ते इमे पञ्च नीवरणे पहाय विहरन्ति।

''ये च खो ते, आवुसो महानाम, भिक्खू अरहन्तो खीणासवा वुसितवन्तो

---

१२. कांक्ष्यसूत्र : : शैक्ष्य एवं तथागत की साधना

१२. एक समय आयुष्मान् लोमसकम्भिय (लोमश वङ्गीश) शाक्यप्रदेश के **कपिलवस्तु के** न्यग्रोधाराम में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब महानाम शाक्य आयुष्मान् लोमसकम्भिय के पास आया तथा उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस ने आयुष्मान् लोमसकम्भिय से यों पूछा—''क्या, शैक्ष्य भिक्षुओं तथा भगवान् का साधनाप्रकार भिन्न भिन्न है? या एक (समान) है?

''नहीं, आयुष्मन् महानाम! शैक्ष्य भिक्षु तथा भगवान् की साधना एक (समान) नहीं है, शैक्ष्य दूसरे प्रकार से साधना करते हैं, और तथागत दूसरे प्रकार से। जो भिक्षु अभी शैक्ष्य हैं, जिन्होंने धर्मसाधना का अपना उद्देश्य अभी पूर्ण नहीं किया है, जो अभी अनुत्तर योगक्षेम (निर्वाण) प्राप्तिहेतु प्रयत्नवान् हैं वे अपने पाँच नीवरणों के प्रहाण के लिये साधना करते हैं। कौन से पाँच नीवरण? कामच्छन्द...व्यापाद...स्त्यानमृद्ध... औद्धत्यकौकृत्य...एवं विचिकित्सा...। आयुष्मन् महानाम! जितने भी शैक्ष्य भिक्षु हैं वे अपना उद्देश्य पूर्ण करने में सन्नद्ध हो कर अपने लिये अनुत्तर योगक्षेम की प्राप्तिहेतु साधना करते हैं। अत: वे इन पाँच नीवरणों के प्रहाणहेतु साधना करते हैं।

''तथा जो, महानाम! भिक्षु क्षीणाश्रव हो चुके हैं...पूर्ववत्...उन के पाँचों नीवरण

कतकरणीया ओहितभारा अनुप्पत्तसदत्था परिक्खीणभवसंयोजना सम्मदञ्ञा विमुत्ता, [N.279] तेसं पञ्च नीवरणा पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा। कतमे पञ्च? कामच्छन्दनीवरणं पहीनं उच्छिन्नमूलं तालावत्थुकतं अनभावङ्कतं आयतिं अनुप्पादधम्मं; ब्यापादनीवरणं पहीनं...पे०...थीनमिद्धनीवरणं... [R.328] उद्धच्चकुक्कुच्चनीवरणं...विचिकिच्छानीवरणं पहीनं उच्छिन्नमूलं तालावत्थुकतं अनभावङ्कतं आयतिं अनुप्पादधम्मं।

''ये ते, आवुसो महानाम, भिक्खू अरहन्तो खीणासवा वुसितवन्तो कतकरणीया ओहितभारा अनुप्पत्तसदत्था परिक्खीणभवसंयोजना सम्मदञ्ञा विमुत्ता, तेसं इमे पञ्च नीवरणा पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा। तदमिनापेतं, आवुसो महानाम, परियायेन वेदितब्बं यथा—अञ्ञो व सेखो विहारो, अञ्ञो तथागतविहारो।

''एकमिदं, आवुसो महानाम, समयं भगवा इच्छानङ्गले विहरति इच्छानङ्गलवनसण्डे। तत्र खो, आवुसो महानाम, भगवा भिक्खू आमन्तेसि—'इच्छामहं, भिक्खवे, तेमासं पटिसल्लीयितुं। नाम्हि केनचि उपसङ्कमितब्बो, अञ्ञत्र एकेन पिण्डपातनीहारकेना' ति। 'एवं, भन्ते' ति खो, आवुसो महानाम, ते भिक्खू भगवतो पटिस्सुत्वा नास्सुध कोचि भगवन्तं उपसङ्कमति, अञ्ञत्र एकेन पिण्डपातनीहारकेन।

''अथ खो, आवुसो महानाम, भगवा तस्स तेमासस्स अच्चयेन पटिसल्लाना वुट्ठितो भिक्खू आमन्तेसि—'सचे खो, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं [B.286] पुच्छेय्युं—कतमेनावुसो, विहारेन समणो गोतमो वस्सावासं बहुलं विहासी ति, एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथ—आनापानस्सतिसमाधिना खो, आवुसो, भगवा वस्सावासं बहुलं विहासी ति। इधाहं, भिक्खवे, सतो अस्ससामि, सतो पस्ससामि। दीघं अस्ससन्तो दीघं अस्ससामी ति

प्रहीण हो चुके हैं... । कौन से पाँच प्रहीण नीवरण? कामच्छन्द नीवरण प्रहीण, व्यापाद... स्त्यानमृद्ध ...औद्धत्यकौकृत्य...एवं विचिकित्सा नीवरण प्रहीण... ।

''तो, महानाम! शैक्ष्यों के नीवरण प्रहीण नहीं हुए हैं, उन के प्रहाणहेतु उन की साधना है तथा अर्हतों के नीवरण प्रहीण हो चुके हैं अत: वे इस के आगे की साधना करते हैं—इस भेद से भी, महानाम! शैक्ष्यों की साधना भिन्न है, तथा तथागत की साधना भिन्न है। (१)

''एक समय, आयुष्मन् महानाम! भगवान् (बुद्ध) इच्छानङ्गल वनषण्ड में साधनाहेतु

पजानामि, दीघं पस्ससन्तो दीघं पस्ससामी ति पजानामि...पे०...पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी ति पजानामि, पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी ति पजानामि।

'यं हि तं, भिक्खवे, सम्मा वदमानो वदेय्य—अरियविहारो इति पि, [N.280] ब्रह्मविहारो इति पि, तथागतविहारो इति पि। आनापानस्सतिसमाधिं सम्मा वदमानो वदेय्य—अरियविहारो इति पि, ब्रह्मविहारो इति पि, तथागतविहारो इति पि।

'ये ते, भिक्खवे, भिक्खू सेखा अप्पत्तमानसा अनुत्तरं योगक्खेमं पत्थयमाना विहरन्ति, तेसं आनापानस्सतिसमाधि भावितो बहुलीकतो आसवानं खयाय संवत्तति।

'ये च खो ते, भिक्खवे, भिक्खू अरहन्तो खीणासवा वुसितवन्तो कतकरणीया ओहितभारा अनुप्पत्तसदत्था परिक्खीणभवसंयोजना सम्मदञ्ञा विमुत्ता, तेसं आनापानस्सतिसमाधि भावितो बहुलीकतो दिट्ठेव धम्मे सुखविहाराय चेव संवत्तति सतिसम्पजञ्ञाय च।

'यं हि तं, भिक्खवे, सम्मा वदमानो वदेय्य—अरियविहारो इति पि, ब्रह्मविहारो इति पि, तथागतविहारो इति पि। आनापानस्सतिसमाधिं सम्मा वदमानो वदेय्य—अरियविहारो इति पि, ब्रह्मविहारो इति पि, तथागतविहारो इति पी' ति।

"इमिना खो एतं, आवुसो महानाम, परियायेन वेदितब्बं, यथा—अञ्ञो व सेखो विहारो, अञ्ञो तथागतविहारो" ति॥

१३. पठमआनन्दसुत्तं

१३. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा [R.329] तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"अत्थि नु खो, भन्ते, एकधम्मो [B.287] भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे परिपूरेति, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ती" ति?

विराजमान थे। ...पूर्ववत्...। *(अनुपद में प्रोक्त समस्त इच्छानङ्गलसूत्र यहाँ विस्तार कर लें।)* इस व्याख्यान से तुम्हें यही समझना चाहिये कि शैक्ष्यों की साधना दूसरी (भिन्न) है तथा तथागत की साधना दूसरी"॥ (२)

१३. प्रथम आनन्दसूत्र : : आनापानस्मृतिसाधना से मुक्ति

१३. ...**श्रावस्ती में** ही...। तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सम्मुख गये। जा कर उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठ कर उन्होंने भगवान् से अपनी यह जिज्ञासा प्रकट की—"भन्ते! क्या (आप के धर्मविनय में) ऐसा भी है कि एक धर्म की साधना से चार धर्म पूर्ण हो जाते हैं तथा चार धर्मों की साधना से सात धर्म पूर्ण हो जाते हैं?"

"अत्थि खो, आनन्द, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे परिपूरेति, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ती" ति।

[N.281] "कतमो पन, भन्ते, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे परिपूरेति, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ती" ति ?

"आनापानस्सतिसमाधि खो, आनन्द, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेति, चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ति।

"कथं भावितो आनन्द, आनापानस्सतिसमाधि कथं बहुलीकतो चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेति ? इधानन्द, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व अस्ससति, सतो व पस्ससति। दीघं वा अस्ससन्तो 'दीघं अस्ससामी' ति पजानाति, दीघं वा पस्ससन्तो 'दीघं पस्ससामी' ति पजानाति...पे०...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति।

"यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु दीघं वा अस्ससन्तो 'दीघं अस्ससामी' ति पजानाति, दीघं वा पस्ससन्तो 'दीघं पस्ससामी' ति पजानाति; रस्सं वा ...पे०... 'पस्सम्भयं कायसङ्खारं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पस्सम्भयं कायसङ्खारं

"हाँ, आनन्द ! ऐसा ही है।"

"तो, भन्ते ! किस एक धर्म की साधना से कौन चार धर्म पूर्ण होते हैं ? तथा किन चार धर्मों की साधना से सात धर्म पूर्ण हो जाते हैं ? तथा किन सात धर्मों की साधना करने से आगे के कौन दो धर्म पूर्ण हो जाते हैं ?"

"आनन्द ! आनापानस्मृतिसमाधि—यह एक धर्म भावित एवं अभ्यस्त करने पर चार स्मृतिप्रस्थानों को पूर्ण कर देता है। तथा ये चार स्मृतिप्रस्थान भावित एवं अभ्यस्त होने पर सात बोध्यङ्गों को पूर्ण कर देते हैं। इसी तरह ये सात बोध्यङ्ग भावित एवं अभ्यस्त होने पर विद्या एवं विमुक्ति नामक दो धर्मों को पूर्ण कर देते हैं।

"आनन्द ! यह आनापानस्मृति की भावना कैसे की जाने पर चारों स्मृतिप्रस्थानों को पूर्ण कर देती है ? यहाँ, आनन्द ! कोई भिक्षु अरण्य में, या किसी वृक्ष के नीचे, या किसी शून्यागार में जा कर, पद्मासन लगा कर, शरीर को सीधा तथा सरल स्थिति में रख

पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति—काये कायानुपस्सी, आनन्द, भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तं किस्स हेतु? कायञ्ञतराहं, आनन्द, एतं वदामि, यदिदं—अस्सासपस्सासं। तस्माति-[R.330] हानन्द, काये कायानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

''यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु 'पीतिप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति [B.288] सिक्खति...पे०...सुखप्पटिसंवेदी...चित्तसङ्खारप्पटिसंवेदी...'पस्सम्भयं चित्तसङ्खारं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पस्सम्भयं चित्तसङ्खारं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति—वेदनासु वेदनानुपस्सी, आनन्द, भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तं किस्स हेतु? वेदनाञ्ञतराहं, आनन्द, एतं वदामि, यदिदं—अस्सासपस्सासानं साधुकं मनसिकारं। तस्मातिहानन्द, [N.282] वेदनासु वेदनानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

''यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु 'चित्तप्पटिसंवेदी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'चित्तप्पटिसंवेदी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'अभिप्पमोदयं चित्तं...पे०...समादहं चित्तं...'विमोचयं चित्तं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'विमोचयं चित्तं पस्ससिस्सामी' तिं सिक्खति—चित्ते चित्तानुपस्सी, आनन्द, भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तं किस्स हेतु? नाहं, आनन्द, मुट्ठस्सतिस्स असम्पजानस्स आनापानस्सतिसमाधिभावनं वदामि। तस्मातिहानन्द, चित्ते चित्तानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

''यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु 'अनिच्चानुपस्सी...पे०...विरागानुपस्सी... निरोधानुपस्सी...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गा-नुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति—धम्मेसु धम्मानुपस्सी, आनन्द, भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। सो यं तं होति अभिज्झादोमनस्सानं पहानं तं पञ्ञाय दिस्वा साधुकं अज्झुपेक्खिता [R.331]

कर बैठता है। ...पूर्ववत्... अच्छा फल तथा सुपरिणाम मिलता है। *(समस्त एकधर्मसूत्र (पृ० ४१५) का यहाँ भी विस्तार कर लें।)* (क)

होति। तस्मातिहानन्द, धम्मेसु धम्मानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

''एवं भावितो खो, आनन्द, आनापानस्सतिसमाधि एवं बहुलीकतो चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेति। (क)

[B.289] ''कथं भाविता चानन्द, चत्तारो सतिपट्ठाना कथं बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति? यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति—उपट्ठितास्स तस्मिं समये भिक्खुनो सति होति असम्मुट्ठा। यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खुनो उपट्ठिता सति होति असम्मुट्ठा—सतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति, सतिसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति, सतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (१)

''सो तथा सतो विहरन्तो तं धम्मं पञ्ञाय पविचिनति पविचरति परिवीमं-[N.283] समापज्जति। यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु तथा सतो विहरन्तो तं धम्मं पञ्ञाय पविचिनति पविचरति परिवीमंसमापज्जति—धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति, धम्मविचयसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति, धम्म-विचयसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (२)

[R.332] ''तस्स तं धम्मं पञ्ञाय पविचिनतो पविचरतो परिवीमंसमापज्जतो आरद्धं होति विरियं असल्लीनं। यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खुनो तं धम्मं पञ्ञाय पविचिनतो पविचरतो परिवीमंसमापज्जतो आरद्धं होति विरियं असल्लीनं—विरियसम्बोज्झङ्गो तस्मिं

''आनन्द! कैसे चार स्मृतिप्रस्थान के भावित एवं अभ्यस्त होने से सात बोध्यङ्ग पूर्ण हो जाते हैं? जिस समय, आनन्द! भिक्षु सावधान (उपस्थितस्मृति) हो कर काया में कायानुपश्यना की साधना करता है, उस समय भिक्षु की स्मृति सम्मूढ नहीं होती। आनन्द! जिस समय भिक्षु की उपस्थित स्मृति असम्मूढ रहती है उस समय उस भिक्षु के स्मृतिसम्बोध्यङ्ग का उदय आरम्भ होता है। आनन्द! उस समय भिक्षु स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। तथा उसे पूर्ण कर लेता है। (१)

वह स्मृतिमान् हो कर, उस धर्म को जान कर प्रज्ञापूर्वक उस धर्म का चिन्तन करता है, मीमांसा करता है। आनन्द! जिस समय भिक्षु ऐसा करता है, उस समय उस के धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग का आरम्भ होता है। उस समय भिक्षु धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है और उसे पूर्ण कर लेता है। (२)

प्रज्ञापूर्वक धर्म का चिन्तन करते हुए उस को वीर्य (उत्साह) होता है। जिस समय

समये भिक्खुनो आरद्धो होति, विरियसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति, विरियसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (३)

"आरद्धविरियस्स उप्पज्जति पीति निरामिसा। यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खुनो आरद्धविरियस्स उप्पज्जति पीति निरामिसा—पीतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति, पीतिसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति, पीतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (४)

"पीतिमनस्स कायो पि पस्सम्भति, चित्तं पि पस्सम्भति। यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खुनो पीतिमनस्स कायो पि पस्सम्भति, चित्तं पि पस्सम्भति—पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति, पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति, पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (५)

"पस्सद्धकायस्स सुखिनो चित्तं समाधियति। यस्मिं समये, आनन्द, [B.290] भिक्खुनो पस्सद्धकायस्स सुखिनो चित्तं समाधियति—समाधिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति, समाधिसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति, समाधि-सम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (६)

"सो तथासमाहितं चित्तं साधुकं अज्झुपेक्खिता होति। यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु तथासमाहितं चित्तं साधुकं अज्झुपेक्खिता होति—उपेक्खासम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति, उपेक्खासम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति, उपेक्खासम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (७) (ख)

भिक्षु को ऐसा होता है, उस समय उस के वीर्यसम्बोध्यङ्ग का आरम्भ होता है। उस समय भिक्षु वीर्यसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है। तथा उसे पूर्ण कर लेता है। (३)

वीर्यवान् होने से उस भिक्षु को निरामिष प्रीति उत्पन्न होती है। आनन्द! ऐसा जिस समय होता है तब वह भिक्षु प्रीतिसम्बोध्यङ्ग की भावना आरम्भ करता है। तथा उस को वह यथासमय साधना करते हुए पूर्ण कर लेता है। (४)

मन के प्रीतियुक्त होने से उस भिक्षु का शरीर भी शान्त हो जाता है तथा चित्त भी। आनन्द! उस भिक्षु को जिस समय ऐसा होता है तब उस के प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग का आरम्भ होता है। तथा वह उसे भी यथासमय साधना करते हुए पूर्ण कर लेता है। (५)

शरीर के शान्त होने से उस का चित्त भी सुख (सरलता) से समाहित हो जाता है। आनन्द! जिस समय उस भिक्षु को ऐसा होता है तब उस का समाधिसम्बोध्यङ्ग आरम्भ होता है और वह साधना करता हुआ इसे भी धीरे धीरे पूर्ण कर लेता है। (६)

चित्त के समाहित होने पर वह भिक्षु सब ओर से उपेक्षक (उदासीन) हो जाता है।

[N.284] ''यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरति—उपट्ठितास्स तस्मिं समये भिक्खुनो सति होति असम्मुट्ठा। यस्मिं [R.333] समये, आनन्द, भिक्खुनो उपट्ठिता सति होति असम्मुट्ठा—सतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति, सतिसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति, सतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति।

(यथा पठमं सतिपट्ठानं एवं वित्थारेतब्बं।)

''सो तथासमाहितं चित्तं साधुकं अज्झुपेक्खिता होति। यस्मिं समये, आनन्द, भिक्खु तथासमाहितं चित्तं साधुकं अज्झुपेक्खिता होति—उपेक्खासम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति, उपेक्खासम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति, उपेक्खासम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। एवं भाविता खो, आनन्द, चत्तारो सतिपट्ठाना एवं बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति। (ग)

''कथं भाविता, आनन्द, सत्त बोज्झङ्गा कथं बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ति? इधानन्द, भिक्खु सतिबोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं [B.291] निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं, धम्मविचयसम्बोज्झङ्गं भावेति...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं।

एवं भाविता खो, आनन्द, सत्त बोज्झङ्गा एवं बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ती'' ति॥ (घ) •

आनन्द! जिस समय उस को ऐसा होने लगता है उस समय उस का उपेक्षासम्बोध्यङ्ग आरम्भ होता है। और वह उस की साधना आरम्भ कर धीरे धीरे उस को पूर्ण भी कर लेता है। (७)

आनन्द! इस प्रकार चार स्मृतिप्रस्थान अभ्यस्त होने से उस के सात बोध्यङ्ग भी पूर्ण हो जाते हैं॥ (ख)

[इसी तरह वेदना... चित्त... एवं धर्मानुपश्यना स्मृतिप्रस्थान का भी विस्तार कर लें।]

''आनन्द! कैसे सात बोध्यङ्ग भावित एवं अभ्यस्त होने पर विद्या एवं विमुक्ति पूर्ण हो जाती है? यहाँ, आनन्द! भिक्षु विवेक, वैराग्य एवं निरोध की ओर ले जाने वाले स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है...धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग की...उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करता है इस तरह सातों बोध्यङ्गों की भावना करने से विद्या एवं विमुक्ति की पूर्णता हो जाती है''॥ (ग) •

१४. दुतियआनन्दसुत्तं

१४. अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं आनन्दं भगवा एतदवोच—"अत्थि नु खो, आनन्द, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे परिपूरेति, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता, सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ती" ति?

भगम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा...पे०...।

"अत्थानन्द, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे परिपूरेति, [R.334] चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ति।

"कतमो चानन्द, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे परिपूरेति, [N.285] चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ति? आनापानस्सतिसमाधि, आनन्द, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेति, चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ती ति।

"कथं भावितो चानन्द, आनापानस्सतिसमाधि कथं बहुलीकतो चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेति? इधानन्द, भिक्खु अरञ्ञगतो वा...पे०...एवं भाविता खो, आनन्द, सत्त बोज्झङ्गा एवं बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ती" ति॥ •

१५. पठमभिक्खुसुत्तं

१५. अथ खो सम्बहुला भिक्खू येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा

---

१४. द्वितीय आनन्दसूत्र : : एक धर्म सब की पूर्णता

१४. ...पूर्ववत्...एक ओर वैठे हुए आनन्द से भगवान् ने पूछा—"क्या, आनन्द! एक धर्म की भावना तथा अभ्यास से चार धर्म पूर्ण हो जाते हैं, तथा इन चारों धर्मों की पूर्णता से सात धर्म भी पूर्ण हो जाते हैं तथा इन सातों धर्मों के पूर्ण होने से दो धर्म पूर्ण हो जाते हैं?

"भन्ते! धर्म के विषय में तो हम आप को ही प्रमाण मानते हैं...पूर्ववत्...।

"हाँ, आनन्द! आनापानस्मृतिसमाधि—ऐसा एक धर्म है...पूर्ववत्...॥

(यहाँ समस्त प्रथम आनन्दसूत्र का ही पुनः विस्तार कर लें।) •

१५. प्रथम भिक्षुसूत्र : : एक धर्म से सात धर्मों की पूर्ति

१५. ...तब बहुत से भिक्षु भगवान् के पास आये तथा उन्हें प्रणाम कर एक ओर

भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं [B.292] एतदवोचुं–"अत्थि नु खो, भन्ते, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे परिपूरेति, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता, सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ती" ति?

[R.335] "अत्थि खो, भिक्खवे, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे परिपूरेति, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ती" ति।

"कतमो पन, भन्ते, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे परिपूरेति, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ती" ति?

"आनापानस्सतिसमाधि खो, भिक्खवे, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेति, चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ती ति।

[N.286] "कथं भावितो च, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि कथं बहुलीकतो चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेति? इध, भिक्खवे, भिक्खु अरञ्ञगतो वा...पे०...एवं भाविता खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा एवं बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ती" ति॥ •

१६. दुतियभिक्खुसुत्तं

१६. अथ खो सम्बहुला भिक्खू येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ने खो ते भिक्खू भगवा एतदवोच–"अत्थि नु खो, भिक्खवे, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे

बैठ गये। एक ओर बैठे उन भिक्षुओं ने भगवान् से यों पूछा–"क्या, भन्ते! ऐसा कोई एक धर्म है, जिस की भावना एवं अभ्यास करने पर चार धर्म पूर्ण हो जाते हों, तथा उन चार धर्मों की भावना एवं अभ्यास करने पर सात धर्म पूर्ण हो जाते हों। इस प्रकार इन सात धर्मों के पूर्ण होने से दो धर्मों की पूर्ति हो जाती हो?

"हाँ, भिक्षुओ! आनापानस्मृतिसमाधि ही ऐसा एक धर्म है...पूर्ववत्... ॥

(प्रथम आनन्दसूत्र का अविकल विस्तार कर लें।) •

१६. द्वितीय भिक्षुसूत्र : : एक धर्म की साधना से सात धर्मों की पूर्णता

१६. ...तब बहुत से भिक्षु भगवान् के पास आये...पूर्ववत्...। उन से भगवान् ने

परिपूरेति, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ती'' ति?

''भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा...पे०...भगवतो सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती'' ति।

''अत्थि, भिक्खवे, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे परिपूरेति, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ति।

''कतमो च, भिक्खवे, एकधम्मो भावितो बहुलीकतो चत्तारो धम्मे परिपूरेति, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता सत्त धम्मे परिपूरेन्ति, सत्त धम्मा भाविता बहुलीकता द्वे धम्मे परिपूरेन्ति? आनापानस्सतिसमाधि, भिक्खवे, एकधम्मो भावितो [B.293] बहुलीकतो चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेति, चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति, सत्त बोज्झङ्गा भाविता बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ती ति।

''कथं भावितो च, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि कथं बहुलीकतो [R.336] चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेति? इध, भिक्खवे, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा सुञ्ञागारगतो वा निसीदति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा। सो सतो व अस्ससति, सतो व पस्ससति...पे...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति।

''यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खु दीघं वा अस्ससन्तो 'दीघं [N.287] अस्ससामी' ति पजानाति, दीघं वा पस्ससन्तो 'दीघं पस्ससामी' ति पजानाति; रस्सं वा अस्ससन्तो 'रस्सं अस्ससामी' ति पजानाति...पे०...सब्बकायप्पटिसंवेदी...पे०... 'पस्सम्भयं कायसङ्खारं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पस्सम्भयं कायसङ्खारं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति—काये कायानुपस्सी, भिक्खवे, भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तं किस्स हेतु? कायञ्ञतराहं, भिक्खवे, एतं वदामि, यदिदं—अस्सासपस्सासं। तस्मातिह, भिक्खवे, काये कायानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

''यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खु पीतिप्पटिसंवेदी...पे०...सुखप्पटिसंवेदी...

यह प्रश्न किया—''क्या, भिक्षुओ! ऐसा कोई एक धर्म है, जिस की साधना तथा अभ्यास...पूर्ववत्...पूर्ति हो जाती हो?''

''भन्ते! हम भिक्षुजन तो धर्म के विषय में भगवान् को ही प्रमाण मानते हैं...पूर्ववत्...।

चित्तसङ्खारप्पटिसंवेदी...'पस्सम्भयं कायसङ्खारं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पस्सम्भयं चित्तसङ्खारं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति—वेदनासु वेदनानुपस्सी, भिक्खवे, भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तं किस्स हेतु? वेदनाञ्ञतराहं, भिक्खवे, एतं वदामि, यदिदं— [R.337] अस्सासपस्सासानं साधुकं मनसिकारं। तस्मातिह, भिक्खवे, वेदनासु वेदनानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

[B.294] "यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खु 'चित्तप्पटिसंवेदी...पे०...अभिप्पमोदयं चित्तं ...पे०...'समादहं चित्तं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'समादहं चित्तं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति; 'विमोचयं चित्तं अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'विमोचयं चित्तं पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति—चित्ते चित्तानुपस्सी, भिक्खवे, भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। तं किस्स हेतु? नाहं, आनन्द, मुट्ठस्सतिस्स असम्पजानस्स आनापानस्सतिसमाधिभावनं वदामि। तस्मातिह, भिक्खवे, चित्ते चित्तानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

"यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खु अनिच्चानुपस्सी...पे०...विरागानुपस्सी... निरोधानुपस्सी...'पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी' ति सिक्खति, 'पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी' ति सिक्खति—धम्मेसु धम्मानुपस्सी, भिक्खवे, भिक्खु तस्मिं [N.288] समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं। सो यं तं होति अभिज्झादोमनस्सानं पहानं तं पञ्ञाय दिस्वा साधुकं अज्झुपेक्खिता होति। तस्मातिह, भिक्खवे, धम्मेसु धम्मानुपस्सी भिक्खु तस्मिं समये विहरति आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं।

"एवं भावितो खो, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि एवं बहुलीकतो चत्तारो सतिपट्ठाने परिपूरेति। (क)

"कथं भाविता च, भिक्खवे, चत्तारो सतिपट्ठाना कथं बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति? यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खु काये कायानुपस्सी विहरति—उपट्ठितास्स

"भिक्षुओ! एक धर्म ऐसा भी है, जिस की भावना से...पूर्ववत्... ॥

(यहाँ भी प्रथम आनन्दसूत्र का विस्तार कर लें।)

तस्मि समये भिक्खुनो सति होति असम्मुट्ठा। यस्मिं समये, भिक्खुवे, भिक्खुनो [R.338] उपट्ठिता सति होति असम्मुट्ठा—सतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति, सतिसम्बोज्झङ्गं तस्मि समये भिक्खु भावेति, सतिसम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति।

"सो तथासतो विहरन्तो तं धम्मं पञ्ञाय पविचिनति पविचरति परिवीमं-समापज्जति। यस्मि समये, भिक्खवे, भिक्खु तथा सतो विहरन्तो तं धम्मं पविचिनति पविचरति परिवीमंसमापज्जति—धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो आरद्धो होति, धम्मविचयसम्बोज्झङ्गं तस्मि समये भिक्खु भावेति, धम्मविचयसम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (२) [B.295]

"तस्स तं धम्मं पञ्ञाय पविचिनतो पविचरतो परिवीमंसमापज्जतो आरद्धं होति विरियं असल्लीनं। यस्मि समये, भिक्खवे, भिक्खुनो तं धम्मं पञ्ञाय पविचिनतो पविचरतो परिवीमंसमापज्जतो आरद्धं होति विरियं असल्लीनं—विरियसम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो आरद्धो होति, विरियसम्बोज्झङ्गं तस्मि समये भिक्खु भावेति, विरियसम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (३)

"आरद्धविरियस्स उप्पज्जति पीति निरामिसा। यस्मि समये, भिक्खे, भिक्खुनो आरद्धविरियस्स उप्पज्जति पीति निरामिसा—पीतिसम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो आरद्धो होति, पीतिसम्बोज्झङ्गं तस्मि समये भिक्खु भावेति, पीतिसम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (४)

"पीतिमनस्स कायो पि पस्सम्भति, चित्तं पि पस्सम्भति। यस्मि समये, [N.289] भिक्खवे, भिक्खुनो पीतिमनस्स कायो पि पस्सम्भति, चित्तं पि पस्सम्भति—पस्सद्धि-सम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो आरद्धो होति, पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गं तस्मि [R.339] समये भिक्खु भावेति, पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (५)

"पस्सद्धकायस्स सुखिनो चित्तं समाधियति। यस्मि समये, भिक्खवे, भिक्खुनो पस्सद्धकायस्स सुखिनो चित्तं समाधियति—समाधिसम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो आरद्धो होति, समाधिसम्बोज्झङ्गं तस्मि समये भिक्खु भावेति, समाधिसम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (६)

"सो तथासमाहितं चित्तं साधुकं अज्झुपेक्खिता होति। यस्मि समये, भिक्खवे, भिक्खु तथासमाहितं चित्तं साधुकं अज्झुपेक्खिता होति—उपेक्खासम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो आरद्धो होति, उपेक्खासम्बोज्झङ्गं तस्मि समये भिक्खु भावेति, उपेक्खासम्बोज्झङ्गो तस्मि समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। (७)

''यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खु वेदनासु...पे०...चित्ते...पे०...धम्मेसु धम्मानु-
[B.296] पस्सी विहरति—उपट्ठितास्स तस्मिं समये भिक्खुनो सति होति असम्मुट्ठा। यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खुनो उपट्ठिता सति होति असम्मुट्ठा—सतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति, सतिसम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति—सतिसम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति...पे०...सो तथा-समाहितं चित्तं साधुकं अज्झुपेक्खिता होति। यस्मिं समये, भिक्खवे, भिक्खु तथा-समाहितं चित्तं साधुकं अज्झुपेक्खिता होति—उपेक्खासम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो आरद्धो होति, उपेक्खासम्बोज्झङ्गं तस्मिं समये भिक्खु भावेति, उपेक्खा-सम्बोज्झङ्गो तस्मिं समये भिक्खुनो भावनापारिपूरिं गच्छति। एवं भाविता खो, भिक्खवे, चत्तारो सतिपट्ठाना एवं बहुलीकता सत्त बोज्झङ्गे परिपूरेन्ति। (ख)
[R.340] ''कथं भाविता च, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा कथं बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिबोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं; धम्मविचयसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं
[N.290] विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं...पे०...उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। एवं भाविता खो, भिक्खवे, सत्त बोज्झङ्गा एवं बहुलीकता विज्जाविमुत्तिं परिपूरेन्ती'' ति॥ (ग) ●

१७. संयोजनप्पहानसुत्तं

१७. आनापानस्सतिसमाधि, भिक्खवे, भावितो बहुलीकतो संयोजनप्पहानाय संवत्तति...पे०... ॥ ●

१८. अनुसयसमुग्घातसुत्तं

१८. ...अनुसयसमुग्घाताय संवत्तति... ॥ ●

१९. अद्धानपरिञ्ञासुत्तं

१९. ...अद्धानपरिञ्ञाय संवत्तति... ॥ ●

---

१७. संयोजनप्रहाणसूत्र : : आनापानस्मृतिसमाधि

१७. ...''भिक्षुओ! आनापानस्मृतिसमाधि की भावना तथा अभ्यास संयोजनों के प्रहाण में पूर्ण समर्थ है। ...पूर्ववत्... ॥ ●

१८. अनुशयसमुद्घातसूत्र : : अनुशय-प्रहाण

१८. ...''भिक्षुओ! आनापानस्मृतिसमाधि की भावना तथा अभ्यास अनुशय (चित्त की कुपथगामी प्रवृत्ति) को नष्ट करने में पूर्ण समर्थ है। ...पूर्ववत्... ॥ ●

२०. आसवक्खयसुत्तं

२०. ...आसवानं खयाय संवत्तति। कथं भावितो च, भिक्खवे, आना-[B.297] पानस्सतिसमाधि कथं बहुलीकतो संयोजनप्पहानाय संवत्तति...अनुसयसमुग्घाताय संवत्तति...अद्धानपरिञ्ञाय संवत्तति...आसवानं खयाय संवत्तति। इध, [R.341] भिक्खवे, भिक्खु अरञ्ञगतो वा रुक्खमूलगतो वा...पे०...पटिनिस्सग्गानुपस्सी अस्ससिस्सामी ति सिक्खति, पटिनिस्सग्गानुपस्सी पस्ससिस्सामी ति सिक्खति। एवं भावितो खो, भिक्खवे, आनापानस्सतिसमाधि एवं बहुलीकतो संयोजनप्पहानाय संवत्तति...पे०...अनुसयसमुग्घाताय संवत्तति ...पे०...अद्धानपरिञ्ञाय संवत्तति...पे०... आसवानं खयाय संवत्तती ति॥ •

दुतियो वग्गो॥

तस्सुद्दानं

इच्छानङ्गलं कङ्खेय्यं, आनन्दा अपरे दुवे।
भिक्खू संयोजनानुसया, अद्धानं आसवक्खयं ति॥ •

आनापानसंयुत्तं समत्तं॥

---

१९. अध्वपरिज्ञासूत्र : : **मार्ग ज्ञान**

१९. ...''भिक्षुओ! आनापानस्मृतिसमाधि की साधना तथा अभ्यास अध्वपरिज्ञा (मार्ग के स्थिर ज्ञान) को पूर्ण करने में सर्वथा समर्थ है। ...पूर्ववत्...॥

(यहाँ भी प्रथम आनन्दसूत्र का अविकल विस्तार कर लें।) •

२०. आश्रवक्षयसूत्र : : **आश्रवक्षय**

२०. ...''भिक्षुओ! आनापानस्मृतिसमाधि की भावना तथा अभ्यास आश्रवक्षय के लिये किया जाता है। भिक्षुओ! कैसे यह अभ्यास संयोजनप्रहाण के लिये...अनुशयसमुद्घात के लिये ...अध्वपरिज्ञान के लिये...आश्रवों के क्षय के लिये होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अरण्य में, किसी वृक्ष के नीचे, या किसी शून्य आगार में शरीर को सीधा तथा सरल कर पद्मासन लगा कर बैठता है...पूर्ववत्...। आश्रवों के क्षय में समर्थ होता है॥ •

द्वितीय वर्ग सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची— १. इच्छानङ्गलसूत्र, २. कांक्ष्यसूत्र, ३. प्रथम आनन्दसूत्र, ४. द्वितीय आनन्दसूत्र, ५. भिक्षुसूत्र, ६. द्वितीय भिक्षुसूत्र, ७. संयोजनप्रहाणसूत्र, ८. अनुशयसमुद्घातसूत्र, ९. अध्वपरिज्ञानसूत्र एवं १०. आश्रवक्षयसूत्र॥ •

आनापानसंयुक्त समाप्त॥

५५. सोतापत्तिसंयुत्तं

१. वेळुद्वारवग्गो पठमो

१. चक्कवत्तिराजसुत्तं

[N.291, B.298, R.342] १. सावत्थिनिदानं। तत्र खो भगवा...पे०...एतदवोच— "किञ्चापि, भिक्खवे, राजा चक्कवत्ती चतुन्नं दीपानं इस्सरियाधिपच्चं रज्जं कारेत्वा कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जति देवानं तावतिंसानं सहब्यतं। सो तत्थ नन्दने वने अच्छरासङ्घपरिवुतो दिब्बेहि च पञ्चहि कामगुणेहि समप्पितो समङ्गीभूतो परिचारेति, सो चतूहि धम्मेहि असमन्नागतो, अथ खो सो अपरिमुत्तो व निरया अपरिमुत्तो तिरच्छानयोनिया अपरिमुत्तो पेत्तिविसया अपरिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता। किञ्चापि, भिक्खवे, अरियसावको पिण्डियालोपेन यापेति, नन्तकानि च धारेति, सो चतूहि धम्मेहि समन्नागतो, अथ खो सो परिमुखो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

[R.343] "कतमेहि चतूहि? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो

---

५५. स्रोतआपत्तिसंयुक्त

१. वेणुद्वारवर्ग प्रथम

१. चक्रवर्त्तिराजसूत्र : : चार धर्मों से रहित की दुर्गति

१. ...**श्रावस्ती में** ही...। वहाँ भगवान् ने...पूर्ववत्...यों कहा—"भले ही कोई चक्रवर्ती राजा चारों द्वीपों पर अपना ऐश्वर्य एवं आधिपत्य एवं राज्य स्थापित कर, इस देहपात के बाद, मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न हो कर त्रायस्त्रिंश देवों के साथ रहने लगे। वह वहाँ नन्दन वन में अप्सरासमूह से घिरा हुआ, दिव्य (स्वर्ग के) पाँचों कामगुणों में लिप्त एवं एकीभूत हो कर सुखोपभोग करे। परन्तु यदि वह चार धर्मों से सम्पन्न नहीं है तो वह नरकपात से, पशुयोनि से, प्रेतयोनि से, अपाय एवं दुर्गति से मुक्त न हो सकेगा, अपि तु एक न एक दिन इन में से किसी एक योनि में जा कर गिरेगा ही। (उधर—) भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक चार धर्मों से युक्त हो कर भिक्षामात्र एवं शास्त्रनिर्दिष्ट चीवरधारण से जीवनयापन करता है, तो समझो कि वह निरय (नरक) से, पशुयोनि से, प्रेतयोनि से, एवं अपाय-दुर्गति में पतन से मुक्त ही है।

"किन चार धर्मों से?

(१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक भगवान् बुद्ध में दृढ श्रद्धा से इस प्रकार

लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'स्वाक्खातो भगवता धम्मो सन्दिट्ठिको अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही' ति; सङ्घे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, उजुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, ञायप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, सामीचिप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, यदिदं—चत्तारि पुरिसयुगानि अट्ठ पुरिसपुग्गला, एस भगवतो सावकसङ्घो आहुनेय्यो पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा' [N.292, B.299] ति; अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि अच्छिद्देहि असबलेहि अकम्मासेहि भुजिस्सेहि विञ्ञूप्पसत्थेहि अपरामट्ठेहि समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि चतूहि धम्मेहि समन्नागतो होति। यो च, भिक्खवे, चतुन्नं दीपानं पटिलाभो, यो चतुन्नं धम्मानं पटिलाभो चतुन्नं दीपानं पटिलाभो चतुन्नं धम्मानं पटिलाभस्स कलं नाग्घति सोळसिं'' ति॥ ●

२. ब्रह्मचरियोगधसुत्तं

२. ''चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो।

युक्त होता है—'ऐसे हैं वे भगवान् अर्हत्...पूर्ववत्...देवताओं एवं मनुष्यों के गुरु बुद्ध भगवान्'।

(२) धर्म में इस प्रकार दृढ श्रद्धा से युक्त होता है—'भगवान् का यह धर्म स्वाख्यात है, प्रत्यक्षफलप्रद (सान्दृष्टिक) है, कुछ ही समय की साधना से सफलता देने वाला (अकालिक), जिस की सत्यता लोगों को आग्रहपूर्वक बुला कर दिखायी जा सकती है (एहिपश्यिक), साधक को निर्वाण की ओर बढाने वाला तथा विद्वानों द्वारा मन ही मन में समझ लेने योग्य है'।

(३) सङ्घ के प्रति यों दृढ श्रद्धायुक्त होता है—'भगवान् का यह श्रावक (शिष्य) सङ्घ (समूह) सन्मार्गारूढ है, यह सरल मार्गारूढ है, सत्यमार्ग पर आरूढ है। इस में पुरुषों को चार युगल तथा आठ पुरुष पुद्गल हैं—यही भगवान् का शिष्यसमूह है। यह शिष्यसमूह स्वागत करने योग्य, सत्कारयोग्य, पूजा करने योग्य, प्रणाम करने योग्य, एवं संसार के लिये अपूर्व पुण्यक्षेत्र है।

(४) वह आर्यश्रावक श्रेष्ठ एवं उत्तम, अखण्ड, अछिद्र, निर्मल, शुद्ध, निर्बाध, विज्ञों द्वारा प्रशस्त, अमिश्रित, समाधि के अनुकूल शील (सदाचार) से युक्त होता है।

चार द्वीपों का समग्र ऐश्वर्य भी इन चार धर्मों की सोलहवीं कला (अंश) की समानता नहीं कर सकता''॥ ●

"कतमेहि चतूहि? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे ...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो" ति॥ ●

३. इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—

"येसं सद्धा च सीलं च, पसादो धम्मदस्सनं।
ते वे कालेन पच्चेन्ति, ब्रह्मचरियोगधं सुखं" ति॥ ●

३. दीघावुउपासकसुत्तं

४. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति वेळुवने कलन्दकनिवापे। तेन खो पन समयेन दीघावु उपासको आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो दीघावु उपासको पितरं जोतिकं गहपतिं आमन्तेसि—"एहि त्वं, गहपति, येन भगवा तेनुप- [N.293, B.300] सङ्कम; उपसङ्कमित्वा मम वचनेन भगवतो पादे सिरसा वन्द—

---

२. ब्रह्मचर्योगधसूत्र　: :　चार धर्मों स्रोतआपन्न

२. ..."भिक्षुओ! चार धर्मों से युक्त कोई आर्यश्रावक ही स्रोतआपन्न होता है। वह मार्गभ्रष्ट (मार्गच्युत) नहीं होता, परमार्थ तक पहुँचना उस का अवश्यम्भावी है। तथा समय आने पर, परम ज्ञान की प्राप्ति भी उसे अवश्य होती है।

"किन चार धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! वह आर्यश्रावक (१) बुद्ध के प्रति, (२) धर्म के प्रति, (३) सङ्घ के प्रति, एवं (४) सदाचार के प्रति दृढ श्रद्धा रखता है। *(पूर्वसूत्रवत् विस्तार कर लें।)* भिक्षुओ! इन्हीं चार धर्मों से युक्त होने पर कोई आर्यश्रावक 'स्रोतआपन्न' कहलाता है"।

३. भगवान् ने यह कहा। पुनः इस गाथा के माध्यम से यह भी बोले—

"जिन (जिज्ञासुओं) में ये धर्म विद्यमान हैं—श्रद्धा, शील, प्रेम एवं स्पष्ट धर्मदर्शन का सामर्थ्य; उन की अकालमृत्यु नहीं होती। वे इस धर्मसाधना के अन्तिम फल परमपद (निर्वाण) को अवश्य प्राप्त कर ही लेते हैं"॥ ●

३. दीर्घायुउपासकसूत्र　: :　दीर्घायु उपासक का रुग्ण होना

४. एक समय भगवान् (बुद्ध) **राजगृह के** वेणुवनस्थित कलन्दकनिवाप में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय, दीर्घायु उपासक किसी गम्भीर रोग से पीड़ित था। तब उस ने अपने पिता ज्यौतिक गृहपति को बुलाया तथा उन से यह कहा—"गृहपति! मेरे लिये

'दीघावु, भन्ते, उपासको आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। सो भगवतो पादे सिरसा वन्दती' ति। एवं च वदेहि—'साधु किर, भन्ते, भगवा येन दीघावुस्स उपासकस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया''' ति। ''एवं, ताता'' ति खो जोतिको गहपति दीघावुस्स उपासकस्स पटिस्सुत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो जोतिको गहपति भगवन्तं एतदवोच—''दीघावु, भन्ते, उपासको आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। सो भगवतो पादे सिरसा वन्दति। एवं च वदेति—'साधु किर, भन्ते, भगवा येन दीघावुस्स उपासकस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया''' ति। अधिवासेसि भगवा तुण्हीभावेन।

अथ खो भगवा निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन दीघावुस्स उपासकस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा दीघावुं [R.345] उपासकं एतदवोच—''कच्चि ते, दीघावु, खमनीयं कच्चि यापनीयं? कच्चि दुक्खा वेदना पटिक्कमन्ति, नो अभिक्कमन्ति; पटिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो अभिक्कमो'' ति?

''न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो'' ति।

''तस्मातिह ते, दीघावु, एवं सिक्खितब्बं—'बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो भविस्सामि—इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०...

आप भगवान् के पास जाइये, जा कर भगवान् को प्रणाम कर उन से निवेदन करिये—'दीर्घायु उपासक गम्भीर रोग से ग्रस्त है, वह आप के श्रीचरणों में प्रणाम करता है तथा निवेदन करता है कि यदि भगवान् कृपा कर उस के घर पधारें तो बहुत अच्छा हो।' ज्यौतिक गृहपति ने उस की बात मान ली, तथा वह गृहपति भगवान् के पास गया तथा उन से उक्त निवेदन किया। भगवान् ने मौन भाव से यह निवेदन स्वीकार कर लिया।

तब भगवान्, वस्त्र सुव्यवस्थित कर, पात्रचीवर ले कर, दीर्घायु उपासक के घर गये। जा कर प्रज्ञप्त आसन पर बैठते हुए उस उपासक से यों बोले—''क्या दीर्घायु! तुम्हारा रोग कुछ कम है? तज्जन्य पीड़ा कुछ कम हुई? ये वेदनाएँ कम ही हो रही हैं, बढ़ तो नहीं रही?''

''भन्ते! रोग कम नहीं हो रहा है, उस से उत्पन्न पीड़ाएँ भी कम नहीं हो रहीं, बढ़ ही रही हैं।''

''दीर्घायु! तुम्हें यह सीखना चाहिये—१. भगवान् बुद्ध के प्रति श्रद्धा रखना...,

सङ्घे...पे०... अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो भविस्सामि अखण्डेहि...पे०...समाधि-संवत्तनिकेहि'। एवं हि ते, दीघावु, सिक्खितब्बं'' ति।

''यानिमानि, भन्ते, भगवता चत्तारि सोतापत्तियङ्गानि देसितानि, संविज्जन्ते ते धम्मा मयि, अहं च तेसु धम्मेसु सन्दिस्सामि। अहं हि, भन्ते, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे ...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो अखण्डेहि...पे०...समाधि-संवत्तनिकेहि'' ति।

[N.294] ''तस्मातिह त्वं, दीघावु, इमेसु चतूसु सोतापत्तियङ्गेसु पतिट्ठाय छ विज्जा-
[B.301] भागिये धम्मे उत्तरि भावेय्यासि। इध त्वं, दीघावु, सब्बसङ्खारेसु अनिच्चानुपस्सी विहराहि, अनिच्चे दुक्खसञ्ञी, दुक्खे अनत्तसञ्ञी पहानसञ्ञी विरागसञ्ञी निरोध-सञ्ञी ति। एवं हि ते, दीघावु, सिक्खितब्बं'' ति।

''येमे, भन्ते, भगवता छ विज्जाभागिया धम्मा देसिता, संविज्जन्ते ते धम्मा मयि, अहं च तेसु धम्मेसु सन्दिस्सामि। अहं हि, भन्ते, सब्बसङ्खारेसु अनिच्चानुपस्सी विहरामि, अनिच्चे दुक्खसञ्ञी, दुक्खे अनत्तसञ्ञी पहानसञ्ञी विरागसञ्ञी निरोध-सञ्ञी। अपि च मे, भन्ते, एवं होति—'मा हेवायं जोतिको गहपति ममच्चयेन विघातं आपज्जी''' ति।

[R.346] ''मा त्वं, तात दीघावु, एवं मनसाकासि। इङ्घ त्वं, तात दीघावु, यदेव ते भगवा आह तदेव त्वं साधुकं मनसि करोही'' ति।

---

२. धर्म के प्रति श्रद्धा रखना..., ३. सङ्घ के प्रति श्रद्धा रखना...तथा शीलपालन के प्रति उत्साह रखना।''

''भन्ते! आप ने जिन स्रोतआपत्ति के चार अङ्गों का उपदेश किया है वे धर्म मुझ में पहले से ही हैं, उन का मैं पालन करता हूँ।''

''तो दीर्घायु! तुम स्रोतापत्ति के चार अङ्गों में प्रतिष्ठित अङ्गों में प्रतिष्ठित हो कर छह विद्याभागीय धर्मों की साधना करो। दीर्घायु! तुम सभी धर्मों में अनित्यता का चिन्तन करते हुए साधना करो। अनित्य में दुःख, और दुःख में अनात्म, प्रहाण, विराग, निरोध को समझो। दीर्घायु! ऐसा तुम्हें सीखना चाहिये।''

''भन्ते! भगवान् ने ये जो धर्म बताये हैं, ये भी मुझ में पहले से ही विद्यमान हैं। मैं, भन्ते! सभी संस्कारों में अनित्यता देखता हुआ, अनित्य में दुःख देखता हुआ, तथा दुःख में अनात्म, प्रहाण एवं निरोध को देखता हूँ। अपि तु, भन्ते! मुझे ऐसा लगता है कि यह ज्यौतिक गृहपति (मेरा पिता) मेरे मरने के बाद बहुत व्यग्र न हो जाय!''

अथ खो भगवा दीघावुं उपासकं इमिना ओवादेन ओवदित्वा उट्ठायासना पक्कामि। अथ खो दीघावु उपासको अचिरपक्कन्तस्स भगवतो कालमकासि। अथ खो सम्बहुला भिक्खू येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं—''यो सो, भन्ते, दीघावु नाम उपासको भगवता सङ्खित्तेन ओवादेन ओवदितो सो कालङ्कतो। तस्स का गति, को अभिसम्परायो'' ति?

''पण्डितो, भिक्खवे, दीघावु उपासको, पच्चपादि धम्मस्सानुधम्मं, न च मं धम्माधिकरणं विहेठेसि। दीघावु, भिक्खवे, उपासको पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका'' ति॥ •

४. पठमसारिपुत्तसुत्तं

५. एकं समयं आयस्मा च सारिपुत्तो आयस्मा च आनन्दो सावत्थियं विहरन्ति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो आयस्मा आनन्दो सायन्हसमयं [N.295] पटिसल्लाना वुट्ठितो...पे०...एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो आयस्मन्तं सारिपुत्तं एतदवोच—''कतिनं नु खो, आवुसो सारिपुत्त, धम्मानं समन्नागमनहेतु एवमयं पजा भगवता ब्याकता सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा'' ति? [B.302]

''तात दीर्घायु! तुम इस की चिन्ता न करो। बस, मैंने अभी जो शिक्षा तुम को दी है, उसी का यथार्थतः मनन करो।''

इस तरह, भगवान् उस दीर्घायु को उपदेश कर आसन से उठ कर पुनः विहार में लौट आये। तब वह दीर्घायु उपासक, भगवान् के जाने के कुछ ही समय बाद देह छोड़ गया। तब बहुत से भिक्षु भगवान् के पास आये...तथा पूछने लगे—''भन्ते! वह दीर्घायु उपासक, आप के द्वारा कृत संक्षिप्त उपदेश के श्रवणानन्तर ही देहपात कर गया। भन्ते! उस की क्या गति होगी? तथा उस का पुनर्जन्म कहाँ होगा?''

''भिक्षुओ! दीर्घायु उपासक पण्डित था। वह धर्ममार्ग पर आरूढ था। उस ने धर्म को विफल नहीं होने दिया। भिक्षुओ! दीर्घायु उपासक पाँच अधोभागीय संयोजनों को क्षीण कर औपपातिक (अयोनिज) हुआ है। वह इस लोक में लौटे विना ही निर्वाण को अधिगत कर लेगा''॥ •

४. प्रथम सारिपुत्रसूत्र : : चतुरङ्गयुक्त स्रोतआपन्न

५. एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र, तथा आयुष्मान् आनन्द **श्रावस्ती के** जेतवन में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब आयुष्मान् आनन्द सायङ्काल समाधिभावना से उठ कर...पूर्ववत्...। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द ने आयुष्मान् सारिपुत्र से यह कहा—

[R.347] ''चतुन्नं खो, आवुसो, धम्मानं समन्नागमनहेतु एवमयं पजा भगवता ब्याकता सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा।

''कतमेसं चतुन्नं? इधावुसो, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०... सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेसं खो, आवुसो, चतुन्नं धम्मानं समन्नागमनहेतु एवमयं पजा भगवता ब्याकता सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा'' ति॥ ●

५. दुतियसारिपुत्तसुत्तं

६. अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं सारिपुत्तं भगवा एतदवोच—'''सोतापत्तियङ्गं, सोतापत्तियङ्गं' ति हिदं, सारिपुत्त, वुच्चति। कतमं नु खो सारिपुत्त, सोतापत्तियङ्गं'' ति?

''सप्पुरिससंसेवो हि, भन्ते, सोतापत्तियङ्गं, सद्धम्मस्सवनं सोतापत्तियङ्गं, योनिसोमनसिकारो सोतापत्तियङ्गं, धम्मानुधम्मप्पटिपत्ति सोतापत्तियङ्गं'' ति।

''साधु साधु, सारिपुत्त! सप्पुरिससंसेवो हि, सारिपुत्त, सोतापत्तियङ्गं,

---

''आयुष्मन् सारिपुत्र! कितने धर्मों से युक्त होने पर, भगवान् ने किसी स्रोतआपन्न अवस्था में पहुँचना बताया है? जो मार्ग से च्युत नहीं होता, परमपद तक निश्चित पहुँचता है, तथा जिसे परमज्ञान की प्राप्ति अवश्यम्भावी है?''

''आयुष्मन्! चार धर्मों से युक्त प्रजा को भगवान् ने 'स्रोतआपन्न' बताया है, जो कि ...पूर्ववत्...अवश्यम्भावी है।

''कौन से चार? आयुष्मन्! यहाँ कोई आर्यश्रावक बुद्ध में...धर्म में...सङ्घ में...समाधि तक पहुँचाने वाले शीलपालन में श्रद्धा रखता है—आयुष्मन्! इन चार धर्मों से युक्त प्रजा को भगवान् ने 'स्रोतआपन्न' बताया है...सम्बोधि तक निश्चित पहुँचते हैं''॥ ●

५. द्वितीय सारिपुत्रसूत्र : : स्रोतापत्तिअङ्ग

६. तब आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् के सम्मुख गये...भगवान् ने उन से यह पूछा—''सारिपुत्र! लोग 'स्रोतआपत्तिअङ्ग, स्रोतआपत्तिअङ्ग' कहते रहते हैं, यह 'स्रोतआपत्तिअङ्ग' क्या है?''

''भन्ते! सत्सङ्ग (सत्पुरुषसंसेवा) स्रोतआपत्तिअङ्ग है, सद्धर्म का श्रवण...धर्म का सूक्ष्म चिन्तन...एवं धर्मानुसार आचरण एवं साधना—यही सब, भन्ते! 'स्रोतआपत्तिअङ्ग' कहलाता है।''

सद्धम्मस्सवनं सोतापत्तियङ्गं, योनिसोमनसिकारो सोतापत्तियङ्गं, धम्मानुधम्मप्पटिपत्ति सोतापत्तियङ्गं।

"'सोतो, सोतो' ति हिदं, सारिपुत्त, वुच्चति। कतमो नु खो, सारिपुत्त, सोतो" ति?

"अयमेव हि, भन्ते, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो सोतो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि, सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा, सम्माकम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मावायामो, सम्मासति, सम्मासमाधी" ति।

"साधु साधु, सारिपुत्त! अयमेव हि, सारिपुत्त, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो [N.296] सोतो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि। 'सोतापन्नो, सोतापन्नो' ति [R.348] हिदं, सारिपुत्त, वुच्चति। कतमो नु खो, सारिपुत्त, सोतापन्नो" ति?

"यो हि, भन्ते, इमिना अरियेन अट्ठङ्गिकेन मग्गेन समन्नागतो अयं [B.303] वुच्चति सोतापन्नो, स्वायं आयस्मा एवंनामो एवंगोत्तो" ति।

"साधु साधु, सारिपुत्त! यो हि, सारिपुत्त, इमिना अरियेन अट्ठङ्गिकेन मग्गेन समन्नागतो अयं वुच्चति सोतापन्नो, स्वायं आयस्मा एवंनामो एवंगोत्तो" ति॥ ●

६. थपतिसुत्तं

७. सावत्थिनिदानं। तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं

"बहुत उचित कहा, सारिपुत्र! बहुत उचित कहा। 'सत्सङ्ग' ही, सारिपुत्र! स्रोतआपत्तिअङ्ग है...पूर्ववत्...।

"फिर, सारिपुत्र! 'स्रोत, स्रोत' लोग कहते रहते हैं, सारिपुत्र! यह 'स्रोत' क्या है?"

"भन्ते! यह आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग ही 'स्रोत' कहलाता है। जैसे—सम्यग्दृष्टि... सम्यक्समाधि।"

"ठीक है, सारिपुत्र! ठीक है। यह अष्टाङ्गिक मार्ग ही 'स्रोत' कहलाता है...पूर्ववत्...।

"सारिपुत्र! यह 'स्रोतआपन्न' कौन कहलाता है?"

"भन्ते! उक्त आर्यमार्ग से युक्त साधक ही 'स्रोतआपन्न' कहलाता है। जो आयुष्मान् इस नाम तथा इस गोत्र का है।"

"ठीक है, सारिपुत्र! ठीक है, सारिपुत्र! जो इस मार्ग से साधना आरम्भ करता है वही 'स्रोतआपन्न' कहलाता है। इस नाम एवं इस गोत्र वाला"॥ ●

६. स्थपतिसूत्र : : गृह एक सांसारिक जञ्जाल

७. ...**श्रावस्ती में** ही...। उस समय बहुत से भिक्षु भगवान् का चीवर बना रहे थे

करोन्ति—"निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती" ति। तेन खो पन समयेन इसिदत्तपुराणा थपतयो साधुके पटिवसन्ति केनचिदेव करणीयेन। अस्सोसुं खो इसिदत्तपुराणा थपतयो—"सम्बहुला किर भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति—'निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती'" ति।

अथ खो इसिदत्तपुराणा थपतयो मग्गे पुरिसं ठपेसुं—"यदा त्वं, अम्भो पुरिस, पस्सेय्यासि भगवन्तं आगच्छन्तं अरहन्तं सम्मासम्बुद्धं, अथ अम्हाकं आरोचेय्यासी" ति। द्वीहतीहं ठितो खो सो पुरिसो अद्दस भगवन्तं दूरतो व आगच्छन्तं। दिस्वान येन इसिदत्तपुराणा थपतयो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा इसिदत्तपुराणे थपतयो एतदवोच—"अयं सो, भन्ते, भगवा आगच्छति अरहं सम्मासम्बुद्धो। यस्स दानि कालं मञ्ञथा" ति।

अथ खो इसिदत्तपुराणा थपतयो येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा भगवन्तं पिट्ठितो पिट्ठितो अनुबन्धिंसु। अथ खो भगवा मग्गा [R.349] ओक्कम्म येन अञ्ञतरं रुक्खमूलं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने [N.297] निसीदि। इसिदत्तपुराणा थपतयो भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते इसिदत्तपुराणा थपतयो भगवन्तं एतदवोचुं—

"यदा मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'सावत्थिया कोसलेसु चारिकं

कि भगवान् चतुर्मास व्रत पूर्ण कर इसे ले कर चारिका करेंगे। उस समय ऋषिदत्तपुराण शिल्पी (स्थपति=बढई) किसी कार्य से सुखपूर्वक (१) रह रहे थे। जब ऋषिदत्तपुराणों ने सुना—"भिक्षुजन भगवान् के चीवर का निर्माण कर रहे हैं कि यह चीवर ले कर ही भगवान् वर्षावास के बाद चारिका पर निकलेंगे।" तब उन ऋषिदत्तपुराणों ने एक पुरुष को मार्ग पर बैठा दिया, और कहा—"अरे पुरुष! जब तुम भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध को इस मार्ग पर आते देखो तो हम को तत्काल उन के आगमन की सूचना देना।" दो तीन दिन प्रतीक्षा करने के बाद उस पुरुष ने भगवान् को उस मार्ग पर आते हुए दूर से ही देख लिया। उन्हें देख कर वह उन ऋषिदत्तपुराणों को सूचित करने लगा, तथा यह बोला—"शिल्पियो! भगवान् पधार रहे हैं। अब जैसा आप लोग उचित समझें।"

स्थपतियों से संवाद—तब वे ऋषिदत्तपुराण भगवान् के सम्मुख गये तथा उन्हें प्रणाम कर उन के पीछे पीछे चलने लगे। तब भगवान् कुछ समय बाद, मार्ग से हट कर, एक वृक्ष के नीचे गये तथा वहाँ प्रज्ञप्त आसन पर विराजे। वे ऋषिदत्तपुराण भी भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। तथा वे भगवान् से यों बोले—

"भन्ते! जब हम आप के विषय में यह सुनते हैं—'भगवान् श्रावस्ती से कौशल

पक्कमिस्सती' ति, होति नो तस्मि समये अनत्तमनता होति दोमनस्सं—'दूरे नो भगवा भविस्सती' ति। यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'सावत्थिया कोसलेसु चारिकं पक्कन्तो' ति, होति नो तस्मि समये अनत्तमनता होति दोमनस्सं—'दूरे नो [B.304] भगवा' ति।

"यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'कोसलेहि मल्लेसु चारिकं पक्कमिस्सती' ति, होति नो तस्मि समये अनत्तमनता होति दोमनस्सं—'दूरे नो भगवा भविस्सती' ति। यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'कोसलेहि मल्लेसु चारिकं पक्कन्तो' ति, होति नो तस्मि समये अनत्तमनता होति दोमनस्सं—'दूरे नो भगवा' ति।

"यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'मल्लेहि वज्जीसु चारिकं पक्कमिस्सती' ति, होति नो तस्मि समये अनत्तमनता होति दोमनस्सं—'दूरे नो भगवा भविस्सती' ति। यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'मल्लेहि वज्जीसु चारिकं पक्कन्तो' ति, होति नो तस्मि समये अनत्तमनता होति दोमनस्सं—'दूरे नो भगवा' ति।

"यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'वज्जीहि कासीसु चारिकं पक्कमिस्सती' ति, होति नो तस्मि समये अनत्तमनता होति दोमनस्सं—'दूरे नो भगवा भविस्सती' ति। यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'वज्जीहि कासीसु चारिकं पक्कन्तो' ति, होति नो तस्मि समये अनत्तमनता होति दोमनस्सं—'दूरे नो भगवा' ति। [R.350]

"यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'कासीहि मागधे चारिकं पक्कमिस्सती' ति, होति नो तस्मि समये अनत्तमनता होति दोमनस्सं—'दूरे नो भगवा भविस्सती' ति।

देश में चारिका करेंगे, तो उस समय हम को यह सोच कर उदासी एवं दुःख होता है—'भगवान् हम से दूर हो जायँगें'। तथा भन्ते! जब हम आप के विषय में सुनते हैं—'भगवान् चारिका करते हुए श्रावस्ती से कौशल देश में चल दिये', तब भी हमें यह सोच कर उदासी एवं कष्ट होता है—'भगवान् हम से दूर हो गये।'

"भन्ते! जब हम आप के विषय में यह सुनते हैं—'भगवान् कौशल देश से मल्ल देश में चारिका करेंगे' तो उस समय हम को यह सोच कर कष्ट होता है—'भगवान् हम से दूर हो जायँगें'। तथा जब हम यह सुनते हैं—'भगवान् कौशल से मल्ल देश में चल दिये हैं', तब भी हमें यह सोच कर कष्ट होता है—'भगवान् हम से दूर हो गये।'

'मल्लों से वज्जी की ओर जायँगें'...पूर्ववत्...।

'मल्लों से वज्जी की ओर चल दिये'...पूर्ववत्...।

'वज्जी से काशी की ओर जायँगें'...पूर्ववत्...।

'वज्जी से काशी की ओर चल दिये'...पूर्नवत्...।

यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'कासीहि मागधे चारिकं पक्कन्तो' ति, होति अनप्पका नो तस्मिं समये अनत्तमनता होति अनप्पकं दोमनस्सं—'दूरे नो भगवा' ति। [N.298] "यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'मागधेहि कासीसु चारिकं पक्कमिस्सती' ति, होति नो तस्मिं समये अत्तमनता होति सोमनस्सं—'आसन्ने नो भगवा भविस्सती' ति। यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'मागधेहि कासीसु चारिकं [B.305] पक्कन्तो' ति, होति नो तस्मिं समये अत्तमनता होति सोमनस्सं—'आसन्ने नो भगवा' ति।

"यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'कासीहि वज्जीसु चारिकं पक्कमिस्सती' ति, होति नो तस्मिं समये अत्तमनता होति सोमनस्सं—'आसन्ने नो भगवा भविस्सती' ति। यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'कासीहि वज्जीसु चारिकं पक्कन्तो' ति, होति नो तस्मिं समये अत्तमनता होति सोमनस्सं—'आसन्ने नो भगवा' ति।

"यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'वज्जीहि मल्लेसु चारिकं पक्कमिस्सती' ति, होति नो तस्मिं समये अत्तमनता होति सोमनस्सं—'आसन्ने नो भगवा भविस्सती' ति। यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'वज्जीहि मल्लेसु चारिकं पक्कन्तो' ति, होति नो तस्मिं समये अत्तमनता होति सोमनस्सं—'आसन्ने नो भगवा' ति।

"यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'मल्लेहि कोसले चारिकं पक्कमिस्सती' ति, होति नो तस्मिं समये अत्तमनता होति सोमनस्सं—'आसन्ने नो भगवा भविस्सती' ति। यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'मल्लेहि कोसले चारिकं पक्कन्तो' ति, होति नो तस्मिं समये अत्तमनता होति सोमनस्सं—'आसन्ने नो भगवा' ति।

...जब हम सुनते हैं—'भगवान् काशी से मगध की ओर चारिका करेंगे'...पूर्ववत्...

'काशी से मगध की ओर चारिकाहेतु चल दिये'...पूर्ववत्... ॥

परन्तु जब हम आप के विषय में सुनते हैं—'आप मगध से काशी की ओर चारिका करेंगे' तो हमें प्रसन्नता एवं सौमनस्य (हर्ष) होता है—'भगवान् हमारे समीप आ जायँगें।' तथा जब आप मगध से काशी की ओर चल देते हैं तो हमें प्रसन्नता एवं सौमनस्य होता है—'भगवान् हमारे समीप आ रहे हैं।'

'काशी से वज्जी की ओर चारिका करेंगे'...पूर्ववत्...

'काशी से वज्जी की ओर चल दिये'...पूर्ववत्...

'वज्जी से मल्लों की ओर चारिका करेंगे'...पूर्ववत्...

'वज्जी से मल्लों की ओर चल दिये'...पूर्ववत्...

'मल्लों से कौशल की ओर चारिका करेंगे'...पूर्ववत्...

"यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'कोसलेहि सावत्थिं चारिकं पक्कमिस्सती' ति, होति नो तस्मिं समये अत्तमनता होति सोमनस्सं—'आसन्ने नो भगवा भविस्सती' ति। यदा पन मयं, भन्ते, भगवन्तं सुणाम—'सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे' ति, होति अनप्पका नो तस्मिं समये अत्तमनता होति अनप्पकं सोमनस्सं—'आसन्ने नो भगवा''' ति।

"तस्मातिह, थपतयो, सम्बाधो घरावासो रजापथो, अब्भोकासो पब्बज्जा। अलं च पन वो, थपतयो, अप्पमादाया'' ति।

"अत्थि खो नो, भन्ते, एतम्हा सम्बाधा अञ्ञो सम्बाधो सम्बाधतरो चेव सम्बाधसङ्खाततरो चा'' ति।

"कतमो पन वो, थपतयो, एतम्हा सम्बाधा अञ्ञो सम्बाधो [N.299, R.351] सम्बाधतरो चेव सम्बाधसङ्खाततरो चा'' ति?

"इध मयं, भन्ते, यदा राजा पसेनदि कोसलो उय्यानभूमिं निय्यातुकामो होति, ये ते रञ्ञो पसेनदिस्स कोसलस्स नागा ओपवय्हा ते कप्पेत्वा या ता रञ्ञो पसेनदिस्स कोसलस्स पजापतियो पिया मनापा ता एकं पुरतो एकं पच्छतो निसीदापेम। [B.306] तासं खो पन, भन्ते, भगिनीनं एवरूपो गन्धो होति, सेय्यथापि नाम गन्धकरण्डकस्स तावदेव विवरियमानस्स, यथा तं राजकञ्ञानं गन्धेन विभूसितानं। तासं खो पन, भन्ते,

---

'मल्लों से कौशल की ओर चल दिये'...पूर्ववत्...

'कौशल से श्रावस्ती की ओर चारिका करेंगे'...पूर्ववत्...

'कौशल से श्रावस्ती की ओर चल दिये'...पूर्ववत्...

तथा जब हम सुनते हैं—'भगवान् श्रावस्ती में जेतवन महाविहार में विराज रहे हैं' तो हमें बहुत प्रसन्नता एवं हर्ष होता है।''

"शिल्पियो! इसी लिये सन्तजन कहते हैं—'घर में रहना जञ्जालों से भरा है, राग का मार्ग है। (इस के विपरीत) प्रव्रज्या खुले आकाश के समान है। शिल्पियो! तुम अप्रमत्त बनो।''

"भन्ते! हम परं तो इस से भी बड़ा एक अन्य सङ्कट है।''

"शिल्पियो! इस से बढ़ कर तुम पर क्या सङ्कट है?''

"भन्ते! जब कौशलराज प्रसेनजित् बाहरी वायु-सेवन के लिये उद्यान जाते हैं, तब हम राजा की सवारी के हाथियों को सजा कर उन पर राजवल्लभा रानियों को एक को आगे तथा एक को पीछे बैठा देते हैं। उस समय उन रानियों के शरीर से ऐसी गन्ध निकलती है मानों कोई फूलों की सुगन्धमय पिटारी खोल दी हो। उन रानियों का

भगिनीनं एवरूपो कायसम्फस्सो होति, सेय्यथापि नाम तूलपिचुनो वा कप्पासपिचुनो वा, यथा तं राजकञ्ञानं सुखेधितानं। तस्मिं खो पन, भन्ते, समये नागो पि रक्खितब्बो होति, ता पि भगिनियो रक्खितब्बा होन्ति, अत्ता पि रक्खितब्बो होति। न खो पन मयं, भन्ते, अभिजानाम तासु भगिनीसु पापकं चित्तं उप्पादेता। अयं खो नो, भन्ते, एतम्हा सम्बाधा अञ्ञो सम्बाधो सम्बाधतरो चेव सम्बाधसङ्खाततरो चा'' ति।

''तस्मातिह, थपतयो, सम्बाधो घरावासो रजापथो, अब्भोकासो पब्बज्जा। अलं च पन वो, थपतयो, अप्पमादाय। चतूहि खो, थपतयो, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो। कतमेहि चतूहि? इध, थपतयो, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०... विगतमलमच्छेरेन चेतसा अज्झागारं वसति मुत्तचागो पयतपाणि वोस्सग्गरतो याचयोगो [R.352] दानसंविभागरतो। इमेहि खो, थपतयो, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो।

''तुम्हे खो, थपतयो, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागता—इति पि सो भगवा ...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...यं खो पन [N.300] किञ्चि कुले देय्यधम्मं सब्बं तं अप्पटिविभत्तं सीलवन्तेहि कल्याणधम्मेहि। तं किं मञ्ञथ, थपतयो, कतिविधा ते कोसलेसु मनुस्सा ये तुम्हाकं समसमा, यदिदं—दानसंविभागे'' ति?

शरीरस्पर्श इतना मृदु एवं श्लक्ष्ण होता है, जैसे रूई या कपास का फाहा हो। उस समय एक तरफ जनसम्मर्द को बचाने के लिये हाथी को सम्हालना पड़ता है तो दूसरी तरफ वे रानियाँ हाथियों से नीचे न गिर जायँ—इस लिये उन की रक्षा करनी पड़ती है। साथ ही अपनी भी रक्षा करनी होती है। ऐसी स्थिति में भी हम ऐसे किसी आदमी को नहीं जानते जो उन में पापयुक्त रागमय दृष्टि उत्पन्न कर सका हो। भन्ते! यह हम पर उस गृहावास की अपेक्षा कष्टकर सङ्कट है।''

''स्थपतियो! इसी लिये तो कहता हूँ कि गृहावास जञ्जाल है तथा प्रव्रज्या खुले आकाश की तरह स्वच्छ तथा निर्मल है। स्थपतियो! तुम्हें इस विषय में अप्रमत्त रहना चाहिये। स्थपतियो! चार धर्मों से युक्त आर्यश्रावक ही 'स्रोतआपन्न' कहलाता है, यह धर्ममार्ग से च्युत नहीं होता, परमपद तक निश्चित पहुँचता है, तथा उसे परमज्ञान अवश्य प्राप्त होता है। कौन से चार धर्म? बुद्ध में...धर्म में...सङ्घ में...शीलपालन में अपूर्व श्रद्धा

''लाभा नो, भन्ते, सुलद्धं नो, भन्ते! येसं नो भगवा एवं पजानाती'' ति॥ ●

७. वेळुद्वारेय्यसुत्तं

८. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा कोसलेसु चारिकं चरमानो महता [B.307] भिक्खुसङ्घेन सद्धिं येन वेळुद्वारं नाम कोसलानं ब्राह्मणगामो तदवसरि। अस्सोसुं खो ते वेळुद्वारेय्यका ब्राह्मणगहपतिका—''समणो खलु, भो, गोतमो सक्यपुत्तो सक्यकुला पब्बजितो कोसलेसु चारिकं चरमानो महता भिक्खुसङ्घेन सद्धिं वेळुद्वारं अनुप्पत्तो। तं खो पन भवन्तं गोतमं एवं कल्याणो कित्तिसद्दो अब्भुग्गतो—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा। सो इमं लोकं सदेवकं समारकं सब्रह्मकं सस्समणब्राह्मणिं पजं सदेवमनुस्सं सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेति। सो धम्मं देसेति आदिकल्याणं मज्झेकल्याणं परियोसानकल्याणं सात्थं सब्यञ्जनं, केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेति'। साधु खो पन तथारूपानं अरहतं दस्सनं होती'' ति। [R.353]

अथ खो ते वेळुद्वारेय्यका ब्राह्मणगहपतिका येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा अप्पेकच्चे भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। अप्पेकच्चे भगवता

रखना। ...पूर्ववत्...। स्थपतियो! तुम ही बताओ—इस कौशल प्रदेश में दानसंविभाजन में लगे हुए तुम्हारे समान कितने लोग और हैं!''

''भन्ते! हमारा बहुत लाभ हुआ! हम ने बहुत कुछ पा लिया कि आप जैसे सन्त हमारे विषय में ऐसे उदात्त विचार रखते हैं!'' ●

७. वेणुद्वारीयसूत्र : : गृहस्थधर्म

८. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) कौशलप्रदेश में चारिका करते हुए विशाल भिक्षुसङ्घ के साथ कौशलप्रदेश के **वेणुद्वार** नामक ब्राह्मणग्राम में पधारे। जब वेणुद्वार के सम्पन्न ब्राह्मणगृहस्थों ने सुना—''श्रमण गौतम शाक्यपुत्र, शाक्यकुल से प्रव्रजित हो कर कौशलप्रदेश में चारिका करते हुए इस वेणुद्वार ग्राम में पधारे हैं। उन पूज्य गौतम का ऐसा यश:शब्द देश में फैला हुआ है—'वे भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध...पूर्ववत्... देवमनुष्यों के शास्ता बुद्ध भगवान् हैं।' वे इस मार, देवता, ब्रह्मा सहित समस्त श्रमण ब्राह्मण एवं देवमनुष्यों सहित प्रंजा को स्वयं जान कर साक्षात् कर धर्म-प्रवचन करते हैं। वे आदि अन्त मध्य—सर्वत्र कल्याणकारी, सार्थक, सरल पदों वाले, सर्वथा परिपूर्ण एवं परिशुद्ध धर्म का उपदेश करते हैं। ऐसे ज्ञानी सन्तों के दर्शन पुण्यप्रद ही हुआ करते हैं।''

तब वे वेणुद्वार के ब्राह्मण, जहाँ भगवान् थे वहाँ, गये। वहाँ जा कर, उन्हें प्रणाम कर कुछ लोग एक ओर बैठ गये। कुछ लोगों ने भगवान् से कुशलमङ्गल भी पूछा। कुछ

सद्धिं सम्मोदिंसु; सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। अप्पेकच्चे येन भगवा तेनञ्जलिं पणामेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। अप्पेकच्चे भगवतो सन्तिके नामगोत्तं सावेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। अप्पेकच्चे तुण्हीभूता एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते वेळुद्वारेय्यका ब्राह्मणगहपतिका भगवन्तं एतदवोचुं—"मयं, भो गोतम, एवंकामा एवंछन्दा एवंअधिप्पाया—पुत्तसम्बाधसयनं [N.301] अज्झावसेय्याम, कासिकचन्दनं पच्चनुभवेय्याम, मालागन्धविलेपनं धारेय्याम, जातरूपरजतं सादियेय्याम, कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जेय्याम। तेसं नो भवं गोतमो अम्हाकं एवंकामानं एवंछन्दानं एवंअधिप्पायानं तथा धम्मं देसेतु यथा मयं पुत्तसम्बाधसयनं अज्झावसेय्याम...पे०...सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जेय्यामा" ति।

"अत्तूपनायिकं वो, गहपतयो, धम्मपरियायं देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति। "एवं, भो" ति खो ते वेळुद्वारेय्यका ब्राह्मणगहपतिका भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

[B.308] "कतमो च, गहपतयो, अत्तूपनायिको धम्मपरियायो ? इध, गहपतयो, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'अहं खोस्मि जीवितुकामो अमरितुकामो सुखकामो दुक्खप्पटिकूलो। यो खो मं जीवितुकामं अमरितुकामं सुखकामं दुक्खप्पटिकूलं जीविता

लोग भगवान् की ओर हाथ जोड़ कर एक ओर बैठ गये। कुछ लोगों ने भगवान् को अपना नामगोत्र भी सुनाया। तथा कुछ लोग वहाँ चुपचाप (मौन भाव से) बैठ गये। एक ओर बैठे हुए वे ब्राह्मण भगवान् से यों बोले—"भो गौतम! हमारी यह कामना एवं अभिप्राय है कि हम बालबच्चों वाले, गृहस्थ के जञ्जाल में फँसे रहते हैं। काशी के चन्दन का लेप तथा अन्य माला-गन्ध विलेपन आदि धारण करते हैं, सोने चान्दी का भी लेन देन करते हैं। तो भी हम देहपात के बाद, मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न हों। अत: आप गौतम हम लोगों को ऐसे धर्म का उपदेश करें कि हम उपर्युक्त गृहस्थ कृत्यों में फँसे रह कर भी...पूर्ववत्...सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न हों।"

आत्मोपनायक धर्म—"गृहपतियो! मैं तुम्हें आत्मोपनायक (अपने को ऊपर उठाने वाला) धर्म का उपदेश करूँगा। इसे सुनो, तथा सुन कर मन में भली भाँति बैठा लो।" "अच्छा, जी!" कहते हुए वे वेणुद्वार के ब्राह्मण भगवान् का प्रवचन सुनने के लिये सावधान हुए। उन्हें भगवान् यों बोले—

"गृहपतियो! यह आत्मोपनायक धर्म क्या है ? गृहपतियो! यहाँ कोई आर्यश्रावक यों चिन्तन करता है—'मैं यहाँ जीवित रहना चाहता हूँ, मैं मरना नहीं चाहता। मैं सुख

वोरोपेय्य, न मेतं अस्स पियं मनापं। अहं चेव खो पन परं जीवितुकामं अमरितुकामं सुखकामं दुक्खप्पटिकूलं जीविता वोरोपेय्यं, परस्स पि तं अस्स अप्पियं अमनापं। यो खो म्यायं धम्मो अप्पियो अमनापो, परस्स पेसो धम्मो अप्पियो अमनापो। यो [R.354] खो म्यायं धम्मो अप्पियो अमनापो, कथाहं परं तेन संयोजेय्यं' ति! सो इति पटिसङ्खाय अत्तना च पाणातिपाता पटिविरतो होति, परं च पाणातिपाता वेरमणिया समादपेति, पाणातिपाता वेरमणिया च वण्णं भासति। एवमस्सायं कायसमाचारो तिकोटिपरिसुद्धो होति। (१)

"पुन च परं, गहपतयो, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'यो खो मे अदिन्नं थेय्यसङ्खातं आदियेय्य, न मेतं अस्स पियं मनापं। अहं चेव खो पन परस्स अदिन्नं थेय्यसङ्खातं आदियेय्यं, परस्स पि तं अस्स अप्पियं अमनापं। यो खो म्यायं धम्मो अप्पियो अमनापो, परस्स पेसो धम्मो अप्पियो अमनापो। यो खो म्यायं धम्मो अप्पियो अमनापो, कथाहं परं तेन संयोजेय्यं' ति! सो इति पटिसङ्खाय अत्तना च अदिन्नादाना पटिविरतो होति, परं च अदिन्नादाना वेरमणिया समादपेति, अदिन्नादाना वेरमणिया च वण्णं भासति। एवमस्सायं कायसमाचारो तिकोटिपरिसुद्धो होति। (२)

चाहता हूँ, दुःख से मेरा विरोध है। यदि मुझ ऐसे विचार वाले की कोई हत्या कर दे—यह मुझे अच्छा नहीं लगेगा : या मैं किसी अन्य ऐसे ही विचारों वाले पुरुष की हत्या कर दूँ तो यह उस दूसरे पुरुष को भी प्रिय नहीं लगेगा। जो बात मुझे प्रिय नहीं लगती, वह दूसरे को भी प्रिय नहीं होगी! तब जो बात मुझे प्रिय नहीं है, उसी बात को मैं दूसरे पर कैसे थोप दूँ!'—वह ऐसा सोच कर, स्वयं भी हिंसा से दूर रहता है, दूसरों को भी ऐसी हिंसा से विरत रहने के लिये प्रोत्साहित करता है। तथा उस के सम्मुख अहिंसा की प्रशंसा करता है। इस तरह, इस का यह कायसमाचार (कायिक आचार) त्रिकोटिपरिशुद्ध (तीन ओर से शुद्ध) होता है। (१)

"फिर, गृहपतियो! कोई आर्यश्रावक यों सोचता है—'यदि कोई मेरी विना दी हुई वस्तु मुझ से हठात् छीन ले या चुरा ले तो यह बात मुझे प्रिय नहीं लगेगी। इसी तरह यदि किसी की प्रिय वस्तु को उस से मैं हठात् छीन लूँ या चुरा लूँ तो यह बात उस को भी प्रिय न लगेगी; क्यों कि जो बात मुझे प्रिय नहीं लग रही है, वह दूसरे को भी प्रिय नहीं होगी। तो जो मुझे प्रिय नहीं है, उसे मैं दूसरों पर कैसे थोप दूँ!'—वह ऐसा सोच कर स्वयं को अदत्त के आदान (ग्रहण) से दूर रखता है, तथा दूसरों को भी इस अदत्तादान से विरत रहनेहेतु प्रोत्साहित करता है, एवं दूसरों के सम्मुख इस अदत्तादान (चौरी) से विरत रहने की प्रशंसा करता है। इस तरह, इस का यह कायिक आचार भी त्रिकोटिपरिशुद्ध होता है। (२)

[N.302] ''पुन च परं, गहपतयो, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'यो खो मे दारेसु चारित्तं आपज्जेय्य, न मेतं अस्स पियं मनापं। अहं चेव खो पन परस्स दारेसु चारित्तं आपज्जेय्यं, परस्स पि तं अस्स अप्पियं अमनापं। यो खो म्यायं अप्पियो अमनापो, परस्स पेसो धम्मो अप्पियो अमनापो। यो खो म्यायं धम्मो अप्पियो अमनापो, कथाहं परं तेन संयोजेय्यं' ति! सो इति पटिसङ्खाय अत्तना च कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो [B.309] होति, परं च कामेसुमिच्छाचारा वेरमणिया समादपेति, कामेसुमिच्छाचारा वेरमणिया च वण्णं भासति। एवमस्सायं कायसमाचारो तिकोटिपरिसुद्धो होति। (३)

''पुन च परं, गहपतयो, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'यो खो मे मुसावादेन अत्थं भञ्जेय्य, न मेतं अस्स पियं मनापं। अहं चेव खो पन परस्स मुसावादेन अत्थं भञ्जेय्यं, परस्स पि तं अस्स अप्पियं अमनापं। यो खो म्यायं धम्मो अप्पियो [R.355] अमनापो, परस्स पेसो धम्मो अप्पियो अमनापो। यो खो म्यायं धम्मो अप्पियो अमनापो, कथाहं परं तेन संयोजेय्यं' ति! सो इति पटिसङ्खाय अत्तना च मुसावादा पटिविरतो होति, परं च मुसावादा वेरमणिया समादपेति, मुसावादा वेरमणिया च वण्णं भासति। एवमस्सायं वचीसमाचारो तिकोटिपरिसुद्धो होति। (४)

''फिर, गृहपतियो! कोई आर्यश्रावक यों चिन्तन करता है—'यदि कोई मेरी स्त्री के साथ कामरतिविषयक अनुचित सङ्केत करे तो यह मुझे अच्छा नहीं लगेगा। तथा मैं किसी अन्य की स्त्री के साथ ऐसे सङ्केत करूँ तो यह उसे भी अच्छा न लगेगा। क्यों कि जो मुझ को प्रिय नहीं है वह दूसरों को भी अप्रिय होगा ही। अतः यह उचित नहीं है कि मैं अपने को अप्रिय लगने वाली बात दूसरों पर हठात् थोप दूँ।'—यह सोच कर वह स्वयं स्त्रियों के साथ व्यभिचार से दूर रहता है, तथा दूसरों को भी इस पाप से विरत रहनेहेतु प्रोत्साहित करता है, एवं प्रसङ्ग आने पर दूसरों के सामने इस व्यभिचार की निन्दा करने में आगे रहता है—इस तरह, इस का यह कायिक आचार भी त्रिकोटिपरिशुद्ध ही कहलाता है। (३)

''फिर, गृहपतियो! वह आर्यश्रावक यों चिन्तन करता है—'जो कोई पुरुष असत्यभाषण कर मेरे धन को ठग ले—यह मुझे अच्छा नहीं लगेगा। इसी तरह, मैं असत्यभाषण कर किसी दूसरे का धन ठग लूँ—यह उस (दूसरे) को अच्छा नहीं लगेगा; क्यों कि जो मुझे अच्छा नहीं लगता वह दूसरे को भी अच्छा नहीं लगेगा। तब यह उचित नहीं है कि जिसे मैं अप्रिय समझता हूँ उसे मैं दूसरों पर हठात् थोप दूँ।'—वह ऐसा चिन्तन कर स्वयं असत्यभाषण से दूर रहता है, तथा दूसरों को भी इस असत्यभाषण से दूर रहनेहेतु प्रोत्साहित करता है, एवं समय समय पर प्रसङ्ग उपस्थित होने पर, इस असत्यभाषण

"पुन च परं, गहपतयो, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'यो खो मं पिसुणाय वाचाय मित्ते भिन्देय्य, न मेतं अस्स पियं मनापं। अहं चेव खो पन परं पिसुणाय वाचाय मित्ते भिन्देय्यं, परस्स पि तं अस्स अप्पियं अमनापं...पे०...एवमस्सायं वचीसमाचारो तिकोटिपरिसुद्धो होति। (५)

"पुन च परं, गहपतयो, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'यो खो मं फरुसाय वाचाय समुदाचरेय्य, न मेतं अस्स पियं मनापं। अहं चेव खो पन परं फरुसाय वाचाय समुदाचरेय्यं, परस्स पि तं अस्स अप्पियं अमनापं। यो खो म्यायं धम्मो ...पे०...एवमस्सायं वचीसमाचारो तिकोटिपरिसुद्धो होति। (६)

"पुन च परं, गहपतयो, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'यो खो [N.303] मं सम्फभासेन सम्फप्पलापभासेन समुदाचरेय्य, न मेतं अस्स पियं मनापं। अहं चेव खो पन परं सम्फभासेन सम्फप्पलापभासेन समुदाचरेय्यं, परस्स पि तं अस्स अप्पियं अमनापं। यो खो म्यायं धम्मो अप्पियो अमनापो, परस्स पेसो धम्मो अप्पियो अमनापो। यो खो म्यायं धम्मो अप्पियो अमनापो, कथाहं परं तेन संयोजेय्यं' [B.310] ति! सो इति पटिसङ्खाय अत्तना च सम्फप्पलापा पटिविरतो होति, परं च सम्फप्पलापा

की निन्दा भी करता है—इस तरह, इस का यह वाचिक आचार भी त्रिकोटिपरिशुद्ध ही होता है। (४)

"फिर, गृहपतियो! वह आर्यश्रावक यों चिन्तन करता है—'जो कोई पिशुन वाणी (चुगली) द्वारा मुझ से मेरे मित्रों को दूर कर दे, हम में फूट डाल दे—यह मुझ को प्रिय नहीं लगेगा। या मैं किसी को पिशुन वाणी द्वारा उस के मित्रों से पृथक् कर दूँ—यह उस को प्रिय नहीं लगेगा।' ...पूर्ववत्...इस तरह, इस का यह वाचिक आचार त्रिकोटिपरिशुद्ध होगा। (५)

"फिर, गृहपतियो! वह आर्यश्रावक यों सोचता है—'यदि मुझे कोई कठोर वाणी कहे तो मुझे वह अप्रिय लगती है। इसी प्रकार, किसी को कठोर वाणी कहूँ तो उस को अप्रिय लगेगी। जो बात मुझे प्रिय नहीं लगती...पूर्ववत्...। इस तरह, इस का यह वाचिक आचार त्रिकोटिपरिशुद्ध होगा। (६)

"फिर, गृहपतियो! वह आर्यश्रावक यों सोचता है—'जो कोई पुरुष मुझ को सम्प्रलाप (बकवाद=व्यर्थ बातचीत) से उद्विग्न करे—यह मुझे प्रिय नहीं लगेगा, या फिर मैं किसी अपने सम्प्रलाप द्वारा किसी अन्य को उद्विग्न करूँ—यह उस को प्रिय नहीं लगेगा। तो यह क्या उचित होगा कि जो मुझे प्रिय नहीं लगता उसे मैं हठात् दूसरे पर

वेरमणिया समादपेति, सम्फप्पलापा वेरमणिया च वण्णं भासति। एवमस्सायं वचीसमाचारो तिकोटिपरिसुद्धो होति। (७)

[R.356] "सो बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०...सङ्घे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो...पे०...अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा ति; अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। यतो खो, गहपतयो, अरियसावको इमेहि सत्तहि सद्धम्मेहि समन्नागतो होति इमेहि चतूहि आकङ्खियेहि ठानेहि, सो आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो, सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो''' ति। (८-११)

एवं वुत्ते वेळुद्वारेय्यका ब्राह्मणगहपतिका भगवन्तं एतदवोचुं—"अभिक्कन्तं, भो गोतम ...पे०...एते मयं भवन्तं गोतमं सरणं गच्छाम धम्मं च भिक्खुसङ्घं च। उपासके नो भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गते" ति॥ •

८. पठमगिञ्जकावसथसुत्तं

९. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा ञातिके विहरति गिञ्जकावसथे। अथ खो

थोपने लगूँ!' यह सोच कर वह स्वयं सम्प्रलाप से दूर हो जाता है, तथा दूसरों को भी उस सम्प्रलाप से दूर रहने के लिये प्रोत्साहित करता है तथा सम्प्रलाप से दूर रहने की प्रशंसा भी करता रहता है। (७)

वह बुद्ध में...धर्म में...सङ्घ में...पूर्ववत्...श्रद्धासम्पन्न होता है, आर्यजनों को प्रिय शीलों से युक्त रहता है, जो...समाधि तक पहुँचाने वाले हैं। क्यों कि, गृहपतियो! वह आर्यश्रावक सात धर्मों से समन्वित रहता है इन चार आकांक्षणीय से भी। वह चाहे तो अपने विषय में ऐसा कह सकता है—'मेरा नरकपात क्षीण हो गया, मेरा तिरश्चीनयोनि में जाना रुक गया, मेरे लिये अब प्रेतयोनि असम्भव है, मैं धर्म से च्युत नहीं हो सकता, मैं स्रोतआपन्न हो चुका हूँ। मुझे अब, समय पा कर, सम्बोधि (परम ज्ञान) प्राप्त होना निश्चित है'।" (८-११)

भगवान् द्वारा ऐसा उपदेश किये जाने पर, वे वेणुद्वार ग्रामवासी ब्राह्मण भगवान् से यों बोले—"बहुत उचित कहा, भन्ते! बहुत ही उचित। आज से हम सब वेणुग्रामवासी ब्राह्मण आप की, धर्म की तथा सङ्घ की शरण में आते हैं। आज के बाद, प्राण रहने तक हम लोगों को आप अपना उपासक समझें"॥ •

आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

"साळ्हो नाम, भन्ते, भिक्खु कालङ्कतो; तस्स का गति को अभिसम्परायो? नन्दा नाम, भन्ते, भिक्खुनी कालङ्कता; तस्सा का गति को अभिसम्परायो? [N.304] सुदत्तो नाम, भन्ते, उपासको कालङ्कतो; तस्स का गति को अभिसम्परायो? सुजाता नाम, भन्ते, उपासिका कालङ्कता; तस्सा का गति को अभिसम्परायो" ति?

"साळ्हो, आनन्द, भिक्खु कालङ्कतो आसवानं खया अनासवं [B.311] चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहासि। नन्दा, आनन्द, भिक्खुनी कालङ्कता पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं [R.357] परिक्खया ओपपातिका तत्थ परिनिब्बायिनी अनावत्तिधम्मा तस्मा लोका। सुदत्तो, आनन्द, उपासको कालङ्कतो तिण्णं संयोजनानं परिक्खया रागदोसमोहानं तनुत्ता सकदागामी; सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्तं करिस्सति। सुजाता, आनन्द, उपासिका कालङ्कता तिण्णं संयोजनानं परिक्खया सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा।

---

८. प्रथम गिञ्जकावसथसूत्र : : धर्मादर्श नामक उपदेश

९. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) **नातिका के** गिञ्जकावसथ में साधनाहेतु विराजमान थे। तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के पास आये तथा उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यों निवेदन किया—

"भन्ते! **साढ** नामक भिक्षु का देहपात हो गया है, उस की अब कौन गति होगी तथा अब उस का जन्म कहाँ होगा? भन्ते! **नन्दा** भिक्षुणी का भी देहपात हो गया है...? भन्ते! **सुदत्त** उपासक...**सुजाता** उपासिका का देहपात हो गया है, उस की गति तथा जन्म कहाँ होगा?"

"आनन्द! **साढ** नामक भिक्षु, जिस का देहपात हो चुका है, आश्रवों के क्षीण हो जाने से अनाश्रव चित्त एवं प्रज्ञाविमुक्ति को स्वयं जान कर साक्षात् कर इसी जन्म में निर्वाण प्राप्त कर साधना कर रहा था। आनन्द! **नन्दा** नामक भिक्षुणी, जिस का देहपात हो चुका है, पाँच अधोभागीय संयोजनों के क्षय हो जाने से औपपातिक (अयोनिज) हो कर, उस लोक से लौटे विना, वहीं परिनिर्वृत हो जायगी। आनन्द! **सुदत्त** नामक उपासक, जो मर चुका है, वह तीन संयोजनों के क्षय हो जाने से तथा राग द्वेष मोह के अतीव दुर्बल हो जाने से सकृदागामी हो कर, केवल एक बार इस संसार में जन्म ले कर, दुःखों का अन्त

"अनच्छरियं खो पनेतं, आनन्द, यं मनुस्सभूतो कालं करेय्य; तस्मिं तस्मिं चे मं कालङ्कते उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छिस्सथ। विहेसा पेसा, आनन्द, अस्स तथागतस्स। तस्मातिहानन्द, धम्मादासं नाम धम्मपरियायं देसेस्सामि; येन समन्नागतो अरियसावको आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीण-तिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो, सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो'।

"कतमो च सो, आनन्द, धम्मादासो धम्मपरियायो; येन समन्नागतो अरिय-सावको आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छान-योनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो, सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो'?

"इध, आनन्द, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०... अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। अयं [N.305] खो सो, आनन्द, धम्मादासो धम्मपरियायो; येन समन्नागतो अरियसावको आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो, सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो''' ति॥

(तीणि पि सुत्तन्तानि एकनिदानानि।)

कर लेगा। आनन्द! **सुजाता** नामक उपासिका, जिस का कि देहपात हो चुका है, वह तीन संयोजनों के क्षीण हो जाने से स्रोतआपन्न हो चुकी है।

"आनन्द! यह (तुम लोगों के लिये) उचित नहीं कि जिस किसी का देहपात होने पर उस की गति तथा सम्पराय तथागत के पास आ कर पूछे जायँ। इस के लिये मैं तुम्हें **धर्मादर्श** नामक धर्म का उपदेश करूँगा, जिस के आश्रय से कोई भी आर्यश्रावक अपने विषय में यह घोषणा कर सकता है—'मेरा नरकगमन क्षीण हो गया, मैं अब पशु या प्रेतयोनि में जाने वाला नहीं, न मेरी अब कोई दुर्गति ही होगी; क्योंकि मैं स्रोतआपन्न हो चुका हूँ। अब निश्चित है कि मैं कभी न कभी सम्बोधि (परम ज्ञान) प्राप्त करूँगा ही'।

"आनन्द! वह धर्मादर्श नामक धर्मोपदेश क्या है? जिस के सहारे से कोई भी आर्यश्रावक ...पूर्ववत्...।

"यहाँ, आनन्द! आर्यश्रावक भगवान् बुद्ध में...उन के धर्म में...उन के सङ्घ में दृढ श्रद्धा रखता है...पूर्ववत्...। आनन्द! यह धर्मादर्श (धर्मदर्पण) नामक धर्मपर्याय है जिस

९. दुतियगिञ्जकावसथसुत्तं

१०. एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं [B.312, R.358] एतदवोच—"असोको नाम, भन्ते, भिक्खु कालङ्कतो; तस्स का गति को अभिसम्परायो? असोका नाम, भन्ते, भिक्खुनी कालङ्कता...पे०...असोको नाम, भन्ते, उपासको कालङ्कतो ...पे०...असोका नाम, भन्ते, उपासिका कालङ्कता; तस्सा का गति को अभिसम्परायो" ति?

"असोको, आनन्द, भिक्खु कालङ्कतो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहासि...पे०...।

(पुरिमवेय्याकरणेन एकनिदानं।)

"अयं खो सो, आनन्द, धम्मादासो धम्मपरियायो; येन समन्नागतो अरियसावको आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो, सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो''' ति॥ •

१०. ततियगिञ्जकावसथसुत्तं

११. एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"कक्कटो नाम, भन्ते, ञातिके उपासको कालङ्कतो; तस्स का गति को अभिसम्परायो? कळिभो नाम, भन्ते, ञातिके उपासको...पे०...निकतो नाम, भन्ते, ञातिके उपासको...कटिस्सहो नाम, भन्ते, ञातिके उपासको...तुट्ठो नाम, भन्ते, ञातिके उपासको...सन्तुट्ठो नाम, भन्ते,

---

से युक्त कोई भी आर्यश्रावक यदि चाहे तो अपने विषय में यह जान सकता है, तथा कह सकता है—'मैं क्षीणनिरय हो चुका हूँ...स्रोतापन्न हो चुका हूँ, सम्बोधि की ओर जाने का मेरा मार्ग खुल गया है'''॥ •

(यह तथा आगे के दो—इस तरह ये तीनों सूत्र एक ही स्थान पर एक ही पुद्गल को उपदिष्ट हुए हैं।)

९. द्वितीय गिञ्जकावसथसूत्र : : धर्मादर्श

१०. ...आनन्द ने भगवान् से पूछा—"भन्ते! **अशोक** भिक्षु...**अशोका** नाम की भिक्षुणी... **अशोक** नामक उपासक...**अशोका** नाम की उपासिका...उन की क्या गति एवं सम्पराय है?

...पूर्वसूत्रवत्...*(उपरिवर्णित सूत्र के समान ही विस्तार कर लें।)*॥ •

१०. तृतीय गिञ्जकावसथसूत्र : : धर्मादर्श

११. ...पूर्ववत्...।"भन्ते! नातिक में **कर्कट** नामक उपासक, **कडिभ**...**निकत**...

[N.306] ञातिके उपासको...भद्दो नाम, भन्ते, ञातिके उपासको...सुभद्दो नाम, भन्ते, ञातिके उपासको कालङ्कतो; तस्स का गति को अभिसम्परायो'' ति ?

[R.359] ''कक्कटो, आनन्द, उपासको कालङ्कतो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। कळिभो, [B.313] आनन्द...पे०...निकतो, आनन्द...कटिस्सहो, आनन्द...तुट्ठो, आनन्द...सन्तुट्ठो, आनन्द...भद्दो, आनन्द...सुभद्दो, आनन्द, उपासको कालङ्कतो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका।

(सब्बे एकगतिका कातब्बा।)

''परोपञ्ञास, आनन्द, ञातिके उपासका कालङ्कता पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिका तत्थ परिनिब्बायिनो अनावत्तिधम्मा तस्मा लोका। साधिकनवुति, आनन्द, ञातिके उपासका कालङ्कता तिण्णं संयोजनानं परिक्खया राग-दोसमोहानं तनुत्ता सकदागामिनो; सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्तं करिस्सन्ति। छातिरेकानि खो, आनन्द, पञ्चसतानि ञातिके उपासिका कालङ्कता तिण्णं संयोजनानं परिक्खया सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा।

''अनच्छरियं खो पनेतं, आनन्द, यं मनुस्सभूतो कालं करेय्य; तस्मिं तस्मिं चे मं

कटिस्सह...**तुष्ट**...**सन्तुष्ट**...**भद्र**...**सुभद्र** नामक उपासक का देहपात हो गया है, उस की क्या गति एवं सम्पराय है ?''

''कर्कट उपासक पाँच अवरभागीय संयोजनों के क्षय से अयोनिज देह में उत्पन्न हो कर वहीं परिनिर्वृत हो जायगा, उस लोक से वह पुनः नहीं लौटेगा। आनन्द! कडिभ, निकत, कटिसह, तुष्ट, सन्तुष्ट, भद्र...। सुभद्र उपासक देहपात के बाद पाँच अवरभागीय संयोजनों के क्षय से अयोनिज देह में उत्पन्न हो कर वहीं परिनिर्वृत हो जायगा, वह पुनः इस लोक में नहीं आयगा। *[इन सभी की एक (=समान) गति का विस्तार कर लें।]*

''आनन्द! नातिक में, पचास (५०) से ऊपर की संख्या में, उपासक, देहावसान के बाद, पाँच अवरभागीय संयोजनों के क्षय से अयोनिज उत्पन्न हो कर...। नब्बे (९०) से अधिक उपासक नातिक में देहपात के बाद, तीन संयोजनों के क्षय से तथा राग, द्वेष, मोह के तनु (कम) हो जाने के कारण सकृदागामी होते हुए, एक बार इस लोक में पुनः आ कर साधनाद्वारा अपने दुःखों का अन्त (नाश) कर लेंगे। आनन्द! तथा पाँच सौ छह (५०६) उपासक, नातिक में देहावसान के बाद, तीन संयोजनों का क्षय हो जाने से स्रोतआपन्न होंगे। वे धर्म से च्युत न हो पायँगे, तथा निश्चय ही सम्बोधि प्राप्त करेंगे।

''आनन्द! इस में क्या आश्चर्य है कि कोई मनुष्य देह धारण करे तथा उस का

कालङ्कते उपसङ्कमित्वा एतमत्थं पटिपुच्छिस्सथ। विहेसा पेसा, आनन्द, अस्स तथागतस्स। तस्मातिहानन्द, धम्मादासं नाम धम्मपरियायं देसेस्सामि; येन समन्नागतो अरियसावको आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीण-तिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो, सोतापन्नोहमस्मि अविनि-पातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो'।

''कतमो च सो, आनन्द, धम्मादासो धम्मपरियायो; येन समन्नागतो अरिय-सावको आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छान-योनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो, सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो'।

''इधानन्द, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो [N.307, R.360] होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०... सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्त-निकेहि। अयं खो सो, आनन्द, धम्मादासो धम्मपरियायो येन समन्नागतो अरियसावको आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छान-[B.314] योनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो, सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो''' ति॥ •

वेळुद्वारवग्गो पठमो॥

तस्सुद्दानं

राजा ओगधदीघावु, सारिपुत्तापरे दुवे।
थपती वेळुद्वारेय्या, गिञ्जकावसथे तयो ति॥ •

कभी देहपात हो जाय। उन में से प्रत्येक की गति या सम्पराय पूछने के लिये तुम मेरे पास आओ—यह अनुचित है। इस बार बार पूछने वाली क्रिया से मेरी भी उद्विग्नता (विहेसा=परेशानी) बढ़ जाती है। अतः मैं इस के लिये तुम्हें एक धर्मादर्श (धर्मदर्पण) बता देता हूँ, जिस के सहारे से किसी भी मृत पुरुष की गति एवं सम्पराय को तुम लोग स्वयं जान लोगे। तथा दूसरों को भी उस के बारे में...पूर्ववत्...बता सकोगे।

''आनन्द! वह धर्मादर्श क्या है...पूर्ववत्...सम्बोधि प्राप्त कर लूँगा''॥ •

वेणुद्वारवर्ग प्रथम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. चक्रवर्त्तिराजसूत्र, २. ब्रह्मचर्योगधसूत्र, ३. दीर्घायुउपासकसूत्र, ४. प्रथम सारिपुत्रसूत्र, ५. द्वितीय सारिपुत्रसूत्र, ६. स्थपतिसूत्र, ७. वेणुद्वारसूत्र, ८. प्रथम गिञ्झकावसथसूत्र, ९. द्वितीय गिञ्झकावसथसूत्र, एवं १०. तृतीय गिञ्झकावसथसूत्र॥ •

२. राजकारामवग्गो दुतियो

११. सहस्सभिक्खुनिसङ्घसुत्तं

१२. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति राजकारामे। अथ खो सहस्सभिक्खुनिसङ्घो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो ता भिक्खुनियो भगवा एतदवोच—

''चतूहि खो, भिक्खुनियो, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो। कतमेहि चतूहि? इध, भिक्खुनियो, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि [R.361] समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि खो, भिक्खुनियो, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो'' ति॥ •

१२. ब्राह्मणसुत्तं

१३. सावत्थिनिदानं। ''ब्राह्मणा, भिक्खवे, उदयगामिनिं नाम पटिपदं [N.308] पञ्ञापेन्ति। ते सावकं एवं समादपेन्ति—'एहि त्वं, अम्भो पुरिस, कालस्सेव उट्ठाय पाचीनमुखो याहि। सो त्वं मा सोब्भं परिवज्जेहि मा पपातं मा खाणुं मा [B.315]

---

२. राजकारामवर्ग द्वितीय

११. सहस्रभिक्षुणीसङ्घसूत्र : : चार धर्मों से स्रोतआपन्न

१२. एक समय भगवान् **श्रावस्ती**स्थित राजकाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। उसी समय एक हजार भिक्षुणियों का सङ्घ भगवान् के सम्मुख आया, तथा उन्हें प्रणाम कर एक ओर खड़ा हो गया। एक ओर खड़ी हुई उन भिक्षुणियों से भगवान् ने यह कहा—

''भिक्षुणियो! चार धर्मों से युक्त आर्यश्रावक स्रोतआपन्न कहलाता है। वह धर्मच्युत नहीं होता, वह निश्चय ही समय पा कर सम्बोधि प्राप्त कर लेता है। किन चार धर्मों से? बुद्ध के प्रति...। धर्म के प्रति...। सङ्घ के प्रति श्रद्धायुक्त, तथा शीलसम्पन्न होता है। ...पूर्ववत्... भिक्षुणियो! इन चार धर्मों से युक्त आर्यश्रावक 'स्रोतआपन्न' हो जाता है...पूर्ववत्...॥ •

१२. ब्राह्मणसूत्र : : उदयगामी मार्ग

१३. **श्रावस्ती में** ही...।...''भिक्षुओ! ब्राह्मण लोग अपने शिष्यों को उपदेश करते हैं—'अरे पुरुष! तुम प्रातःकाल ही उठ कर पूर्वाभिमुख हो कर चलो, वहाँ तुम मार्ग में पड़ने वाले प्रपात (झरना), किसी छोटी तलैया (गड्ढा), स्थाणु (सूखे वृक्ष का स्कन्ध)

कण्डकट्ठानं मा चन्दनियं मा ओळिगल्लं। यत्थ पपतेय्यासि तत्थेव मरणं आगमेय्यासि। एवं त्वं, अम्भो पुरिस, कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जिस्ससी' ति।

"तं खो पनेतं, भिक्खवे, ब्राह्मणानं बालगमनमेतं मूळ्हगमनमेतं न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तति। अहं च खो, भिक्खवे, अरियस्स विनये उदयगामिनिं पटिपदं पञ्ञापेमि; या एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति।

[R.362] "कतमा च सा, भिक्खवे, उदयगामिनी पटिपदा; या एकन्तनिब्बिदाय...पे०... निब्बानाय संवत्तति? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि ...पे०...समाधि संवत्तनिकेहि। अयं खो सा, भिक्खवे, उदयगामिनी पटिपदा एकन्तनिब्बिदाय...निब्बानाय संवत्तती" ति॥

१३. आनन्दत्थेरसुत्तं

१४. एकं समयं आयस्मा च आनन्दो आयस्मा च सारिपुत्तो सावत्थियं विहरन्ति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो सायन्हसमयं

या कण्टकाकीर्ण स्थान या नाली और गन्दे नाले (ओळिगल्ल) से अपने को न बचाना। इस के फलस्वरूप तुम जहाँ गिरोगे वहीं तुम्हारी मृत्यु हो जायगी। इस स्थिति में तुम मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में पहुँच जाओगे'!"

"भिक्षुओ! ब्राह्मणों का यह उपदेश मूर्खता एवं बचपन भरा उपदेश है। यह किसी को निर्विदा, वैराग्य, निरोध, शान्ति, अभिज्ञान, सम्बोधि या निर्वाण की ओर पहुँचाने वाला नहीं है। यह उन्नतिबोधक (उन्नति की ओर ले जाने वाला) मार्ग नहीं है। परन्तु मैं तुम्हें जिस आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग का उपदेश करता रहता हूँ वह एकान्तत: निर्विदा...निर्वाण की ओर पहुँचाने वाला मार्ग है।

"भिक्षुओ! ऐसा उदयगामी मार्ग क्या है, जो...निर्वाण की ओर पहुँचाने वाला है?

"यहाँ, भिक्षुओ! जो आर्यश्रावक बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति... आर्यजनों को प्रिय शील से युक्त होता है, यह मार्ग एकान्तत: वैराग्य...निर्वाण तक पहुँचाने वाला है"॥

१३. आनन्दस्थविरसूत्र : : चार धर्मों से युक्त स्रोतआपन्न

१४. एक समय आयुष्मान् आनन्द एवं आयुष्मान् सारिपुत्र **श्रावस्ती के** जेतवनाराम

पटिसल्लाना वुट्ठितो येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मता आनन्देन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—"कतिनं खो, आवुसो आनन्द, धम्मानं पहाना कतिनं धम्मानं समन्नागमनहेतु एवमयं पजा भगवता [N.309] ब्याकता सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा" ति?

"चतुन्नं खो, आवुसो, धम्मानं पहाना चतुन्नं धम्मानं समन्नागमनहेतु [B.316] एवमयं पजा भगवता ब्याकता सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा ति। कतमेसं चतुन्नं? [R.363]

"यथारूपेन खो, आवुसो, बुद्धे अप्पसादेन समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपस्स बुद्धे अप्पसादो न होति। यथारूपेन च खो, आवुसो, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो सुतवा अरियसावको कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जति तथारूपस्स बुद्धे अवेच्चप्पसादो होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति।

"यथारूपेन च खो, आवुसो, धम्मे अप्पसादेन समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपस्स धम्मे अप्पसादो न होति। यथारूपेन च खो, आवुसो, धम्मे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो सुतवा अरियसावको कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जति तथारूपस्स धम्मे अवेच्चप्पसादो होति—'स्वाक्खातो भगवता धम्मो...पे०...विञ्ञूही ति।

में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब कभी आयुष्मान् सारिपुत्र सायङ्काल ध्यानभावना से उठ कर आयुष्मान् आनन्द के पास गये तथा उन से यों पूछा—"आयुष्मन् आनन्द! भगवान् ने किन धर्मों के प्रहाण से तथा किन धर्मों से युक्त होने के कारण, किसी साधक को 'स्रोतआपन्न' होना बताया है?"

"आयुष्मन्! भगवान् ने चार धर्मों के प्रहाण से, तथा चार धर्मों से युक्त होने के कारण किसी साधक को 'स्रोतआपन्न' घोषित किया है जो धर्म से च्युत नहीं होता...सम्बोधि प्राप्त होना अवश्यम्भावी है। कौन से चार?

(१) "आयुष्मन्! जिस साधक की भगवान् बुद्ध के प्रति वैसी अश्रद्धा नहीं होती, जिस (अश्रद्धा) के कारण कोई मूर्ख पृथग्जन मरणानन्तर दुर्गतिमय नरक में जा गिरता है; अपि तु उस की बुद्ध में ऐसी श्रद्धा होती है जिसे रखता हुआ कोई आर्यश्रावक मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में जा पहुँचता है।

(२) "आयुष्मन्! जिस साधक की धर्म के प्रति...पूर्ववत्...।

"यथारूपेन च खो, आवुसो, सङ्घे अप्पसादेन समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपस्स सङ्घे अप्पसादो न होति। यथारूपेन च खो, आवुसो, सङ्घे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो सुतवा अरियसावको कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जति तथारूपस्स सङ्घे अवेच्चप्पसादो होति—सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो...पे०...अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा ति।

"यथारूपेन च खो, आवुसो, दुस्सील्येन समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपस्स दुस्सील्यं न होति। यथारूपेहि च खो, आवुसो, अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो सुतवा [N.310] अरियसावको कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जति तथारूपानि [R.364] अरियकन्तानि सीलानि होन्ति अखण्डानि...पे०...समाधिसंवत्तनिकानि। इमेसं [B.317] खो, आवुसो, चतुन्नं धम्मानं पहाना इमेसं चतुन्नं धम्मानं समन्नागमनहेतु एवमयं पजा भगवता ब्याकता सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा" ति॥ •

१४. दुग्गतिभयसुत्तं

१५. "चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सब्बदुग्गतिभयं समतिक्कन्तो होति। कतमेहि चतूहि? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे ...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०... समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सब्बदुग्गतिभयं समतिक्कन्तो होती" ति॥ •

---

(३) "आयुष्मन्! जिस साधक की सङ्घ के प्रति...पूर्ववत्...।

(४) "आयुष्मन्! कोई मूर्ख पृथग्जन जिस दु:शील से युक्त होने के कारण मरणानन्तर दुर्गतिमय नरकलोक में पहुँच जाता है, वैसा दु:शील जिस साधक का नहीं होता; अपि तु जो विद्वान् आर्यश्रावक आर्यों को प्रिय लगने वाले शील को धारण करने के कारण मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में पहुँचता है, उस के समान इन आर्यशीलों को धारण करता है...पूर्ववत्...। ...'स्रोतआपन्न' घोषित किया है"॥ •

१४. दुर्गतिभयसूत्र : : दुर्गतिभयनाशक चार धर्म

१५. ..."भिक्षुओ! चार धर्मों से युक्त आर्यश्रावक सभी प्रकार के नरकपात आदि दुर्गतिभयों को पार कर जाता है। किन चार धर्मो से? बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति... शीलों से युक्त...दुर्गतिभयों को पार कर जाता है"॥ •

१५. दुग्गतिविनिपातभयसुत्तं

१६. "चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सब्बदुग्गति-विनिपातभयं समतिक्कन्तो होति। कतमेहि चतूहि? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०... सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि ...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सब्बदुग्गतिविनिपातभयं समतिक्कन्तो होती" ति॥ ●

१६. पठममित्तामच्चसुत्तं

१७. "ये ते, भिक्खवे, अनुकम्पेय्याथ, ये च सोतब्बं मञ्ञेय्युं—मित्ता वा अमच्चा वा ञाती वा सालोहिता वा—ते, भिक्खवे, चतूसु सोतापत्तियङ्गेसु समाद-पेतब्बा, निवेसेतब्बा, पतिट्ठापेतब्बा। कतमेसु चतूसु? बुद्धे अवेच्चप्पसादे [R.365] समादपेतब्बा, निवेसेतब्बा, पतिट्ठापेतब्बा—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था [N.311] देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे ...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेसु सीलेसु समाद-पेतब्बा, निवेसेतब्बा, पतिट्ठापेतब्बा अखण्डेसु...पे०...समाधिसंवत्तनिकेसु। ये [B.318] ते, भिक्खवे, अनुकम्पेय्याथ, ये च सोतब्बं मञ्ञेय्युं—मित्ता वा अमच्चा वा ञाती वा सालोहिता वा—ते, भिक्खवे, इमेसु चतूसु सोतापत्तियङ्गेसु समादपेतब्बा, निवेसेतब्बा, पतिट्ठापेतब्बा" ति॥ ●

१७. दुतियमित्तामच्चसुत्तं

१८. "ये ते, भिक्खवे, अनुकम्पेय्याथ, ये च सोतब्बं मञ्ञेय्युं—मित्ता वा

---

१५. दुर्गतिविनिपातभयसूत्र : : दुर्गतिविनिपातभयनिवारक धर्म

१६. ..."भिक्षुओ! चार धर्मों से युक्त आर्यश्रावक सभी प्रकार के दुर्गति में पतन के भय को समतिक्रान्त (पार) कर जाता है। कौन से चार? भगवान् बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति श्रद्धा से युक्त...आर्यों को प्रिय शील से युक्त...पार कर जाता है"॥

१६. प्रथम मित्रामात्यसूत्र : : मित्र एवं साथियों को परामर्श

१७. ..."भिक्षुओ! तुम जिन आर्यजनों को अपनी अनुकम्पा योग्य समझते हो, फिर भले ही वे तुम्हारे मित्र हों, साथी हो, परिवारजन हों, या जिन के साथ तुम्हारा रक्तसम्बन्ध रहा हो उन्हें तुम चार स्रोतआपत्तिअङ्गों की साधना में लगाओ, उन की साधना के लिये उन्हें प्रोत्साहित करो, उन में प्रतिष्ठित करो। ...पूर्ववत्...। उन की साधना में प्रतिष्ठित करो"॥ ●

अमच्चा वा ञाती वा सालोहिता वा—ते, भिक्खवे, चतूसु सोतापत्तियङ्गेसु समादपेतब्बा, निवेसेतब्बा, पतिट्ठापेतब्बा। कतमेसु चतूसु?

"बुद्धे अवेच्चप्पसादे समादपेतब्बा, निवेसेतब्बा, पतिट्ठापेतब्बा—इति पि सो भगवा ...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति। सिया, भिक्खवे, चतुन्नं महाभूतानं अञ्ञथत्तं—पठवीधातुया, आपोधातुया, तेजोधातुया, वायोधातुया—न त्वेव बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतस्स अरियसावकस्स सिया अञ्ञथत्तं। तत्रिदं अञ्ञथत्तं—सो वत बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो अरियसावको निरयं वा तिरच्छानयोनिं वा पेत्तिविसयं वा उपपज्जिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति।

"धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेसु सीलेसु समादपेतब्बा, निवेसेतब्बा, पतिट्ठापेतब्बा अखण्डेसु...पे०...समाधिसंवत्तनिकेसु। सिया, भिक्खवे, चतुन्नं महाभूतानं [R.366] अञ्ञथत्तं—पठवीधातुया, आपोधातुया, तेजोधातुया, वायोधातुया—न त्वेव अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतस्स अरियसावकस्स सिया अञ्ञथत्तं। तत्रिदं अञ्ञथत्तं—सो वत अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो अरियसावको निरयं वा तिरच्छानयोनिं वा पेत्तिविसयं वा उपपज्जिस्सती ति—नेतं ठानं विज्जति। ये ते, भिक्खवे, अनुकम्पेय्याथ, ये च सोतब्बं मञ्ञेय्युं—मित्ता वा अमच्चा वा ञाती वा सालोहिता वा—ते, भिक्खवे, इमेसु चतूसु सोतापत्तियङ्गेसु समादपेतब्बा, निवेसेतब्बा, पतिट्ठापेतब्बा" ति॥ ●

---

१७. द्वितीय मित्रामात्यसूत्र : : मित्र एवं साथियों को शिक्षा

१८. ..."भिक्षुओ! तुम जिन आर्यजनों को...पूर्ववत्...चार स्रोतापत्तिअङ्गों की साधनाहेतु शिक्षा दो, उन्हें तदर्थ प्रोत्साहित करो, तथा उनकी साधना में प्रतिष्ठित करो। किन चार की साधना में?

(१) "भगवान् बुद्ध में श्रद्धा रखने के लिये प्रोत्साहित करो...पूर्ववत्...। जैसे, भिक्षुओ! पृथ्वी, जल, तेज, वायु—इन चार महाभूतों में समय समय पर अन्यथात्व (विकार) आ जाता है, वैसा विकार बुद्ध के प्रति श्रद्धालु आर्यश्रावक में नहीं आता। वह **अन्यथात्व** क्या है? उस भगवान् बुद्ध के प्रति श्रद्धालु आर्यश्रावक का नरकपात, तिरश्चीनयोनिगमन, प्रेतयोनि में उत्पाद—यह अन्यथात्व सम्भव नहीं होता।

(२) भगवदुक्त धर्म में श्रद्धा...(३) भगवदुक्त सङ्घ में श्रद्धा...पूर्ववत्... (४) भगवदुपदिष्ट एवं आर्यप्रिय शील से युक्त...पूर्ववत्...यह अन्यथात्व सम्भव नहीं होता। अत: भिक्षुओ! तुम जिन आर्यजनों को अपनी अनुकम्पा के योग्य समझते हो...पूर्ववत्...उन्हें इन चार धर्मों की साधनाहेतु प्रोत्साहित करो। ...प्रतिष्ठित करो"॥●

१८. पठमदेवचारिकसुत्तं

१९. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो—सेय्यथापि [N.312] नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, [B.319] एवमेव—जेतवने अन्तरहितो देवेसु तावतिंसेसु पातुरहोसि। अथ खो सम्बहुला तावतिंसकायिका देवतायो येनायस्मा महामोग्गल्लानो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं महामोग्गल्लानं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठंसु। एकमन्तं ठिता खो ता देवतायो आयस्मा महामोग्गल्लानो एतदवोच—

''साधु खो, आवुसो, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनं होति—'इति पि सो भगवा ...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनहेतु खो, आवुसो, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति। साधु खो, आवुसो, धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...साधु खो, आवुसो, अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागमनं होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। [R.367] अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागमनहेतु खो, आवुसो, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ती'' ति।

''साधु खो, मारिस मोग्गल्लान, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनं होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनहेतु खो, मारिस मोग्गल्लान, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ति। साधु खो, मारिस मोग्गल्लान, धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०... अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागमनं होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि।

---

१८. प्रथम देवचारिकासूत्र : : रत्नत्रय में श्रद्धा से देवत्वप्राप्ति

१९. **श्रावस्ती में** ही...। तब आयुष्मान् महामोग्गल्लान, जैसे कोई बलवान् पुरुष ...पूर्ववत्...जेतवन में अन्तर्हित हो कर त्रायस्त्रिंश देवलोक में अवतरित हुए। उस समय वहाँ के बहुत से निवासी देवता आयुष्मान् महामोग्गल्लान के पास आये, तथा उन्हें प्रणाम कर एक ओर खड़े हो गये। एक ओर खड़े हुए उन देवताओं को आयुष्मान् महामोग्गल्लान यों बोले—

''आयुष्मानो! भगवान् बुद्ध में श्रद्धा रखना मङ्गलप्रद होता है...धर्म में...सङ्घ में...आर्यों को प्रिय शीलों से युक्त होना मङ्गलप्रद होता है। इस के कारण बहुत से प्राणी, देहपातानन्तर, सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न होते हैं।''

अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागमनहेतु खो, मारिस मोग्गल्लान, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जन्ती'' ति॥ •

१९. दुतियदेवचारिकसुत्तं

२०. सावत्थिनिदानं। अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो—सेय्यथापि नाम बलवा [N.313] पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—जेतवने अन्तरहितो देवेसु तावतिंसेसु पातुरहोसि। अथ खो सम्बहुला तावतिंसकायिका देवतायो येनायस्मा महामोग्गल्लानो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं [B.320] महामोग्गल्लानं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठंसु। एकमन्तं ठिता खो ता देवतायो आयस्मा महामोग्गल्लानो एतदवोच—

''साधु खो, आवुसो, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनं होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनहेतु खो, आवुसो, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपन्ना। साधु खो, आवुसो, धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागमनं होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागमनहेतु खो, आवुसो, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपन्ना'' ति।

''साधु खो, मारिस मोग्गल्लान, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनं होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनहेतु खो, मारिस मोग्गल्लान, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपन्ना। साधु खो, मारिस मोग्गल्लान, धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०... अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागमनं होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागमनहेतु खो, मारिस मोग्गल्लान, एवमिधेकच्चे सत्ता कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपन्ना'' ति॥ •

(देवताओं ने भी कहा—) ''हाँ, मार्ष मोग्गल्लान! भगवान् बुद्ध में श्रद्धा रखना मङ्गलप्रद होता है...पूर्ववत्...स्वर्गलोक में उत्पन्न होते हैं''॥ •

१९. द्वितीय देवचारिकासूत्र : : रत्नत्रय में श्रद्धा से देवत्वप्राप्ति

२०. **श्रावस्ती में** ही...। तब आयुष्मान् महामोग्गल्लान...पूर्ववत्...।

(ऊपर के सूत्र के समान ही इस का भी विस्तार कर लें।) •

२०. ततियदेवचारिकसुत्तं

२१. अथ खो भगवा—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—जेतवने अन्तरहितो देवेसु तावतिंसेसु पातुरहोसि। अथ खो सम्बहुला तावतिंसकायिका देवतायो येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठंसु। एकमन्तं ठिता खो ता [R.368] देवतायो भगवा एतदवोच—

"साधु खो, आवुसो, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनं होति—'इति पि [N.314] सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनहेतु खो, आवुसो, एवमिधेकच्चे सत्ता सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा। साधु खो, आवुसो, धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि [B.321] सीलेहि समन्नागमनं होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। .अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागमनहेतु खो, आवुसो, एवमिधेकच्चे सत्ता सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा" ति।

"साधु खो, मारिस, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनं होति—'इति पि सो भगवा ...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागमनहेतु खो, मारिस, एवमयं पजा सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा। साधु खो, मारिस मोग्गल्लान, धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागमनं होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागमनहेतु खो, मारिस, एवमयं पजा सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा" ति॥ •

राजकारामवग्गो दुतियो॥

---

२०. तृतीय देवचारिकासूत्र : : रत्नत्रय में श्रद्धा से देवत्वप्राप्ति

२१. तब भगवान् बुद्ध, जैसे कोई बलवान् पुरुष...पूर्ववत्...त्रायस्त्रिंश देवलोक में अवतरित हुए। ...देवताओं को भगवान् ने यह उपदेश किया—

"आयुष्मानो! तथागत के प्रति श्रद्धा रखना...धर्म के प्रति श्रद्धा रखना...सङ्घ के प्रति श्रद्धा रखना...आर्यों को प्रिय शीलाचार से युक्त होना मङ्गलप्रद होता है। इस से युक्त होने के कारण बहुत से प्राणी, देहपातानन्तर, सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न होते हैं।"

(देवताओं ने भी कहा—) "हाँ, मार्ष! तथागत के प्रति...पूर्ववत्...सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न होते हैं"॥ •

राजकारामवर्ग द्वितीय॥

तस्सुद्दानं

सहस्सब्राह्मणानन्द, दुग्गति अपरे दुवे।
मित्तामच्चा दुवे वुत्ता, तयो च देवचारिका ति॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. सहस्रभिक्षुणीसङ्घसूत्र, २. ब्राह्मणसूत्र, ३. आनन्दस्थविरसूत्र, ४. दुर्गतिभयसूत्र, ५. दुर्गतिविनिपातसूत्र, ६. प्रथम मित्रामात्यसूत्र, ७. द्वितीय मित्रामात्यसूत्र, ८. प्रथम देवचारिकसूत्र, ९. द्वितीय देवचारिकसूत्र एवं १०. तृतीय देवचारिकसूत्र॥

३. सरणानिवग्गो ततियो

२१. पठममहानामसुत्तं

२२. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं [R.369] निग्रोधारामे। अथ खो महानामो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो महानामो सक्को भगवन्तं एतदवोच—"इदं, भन्ते, कपिलवत्थु इद्धं चेव फीतं च बाहुजञ्ञं आकिण्णमनुस्सं सम्बाधब्यूहं। सो ख्वाहं, भन्ते, भगवन्तं वा पयिरुपासित्वा मनोभावनीये वा भिक्खू सायन्हसमयं कपिलवत्थुं पविसन्तो; भन्ते, न पि हत्थिना समागच्छामि; [N.315, B.322] भन्ते, न पि अस्सेन समागच्छामि; भन्ते, न पि रथेन समागच्छामि; भन्ते, न पि सकटेन समागच्छामि; भन्ते, न पि पुरिसेन समागच्छामि। तस्स मय्हं, भन्ते, तस्मिं समये मुस्सतेव भगवन्तं आरब्भ सति, मुस्सति धम्मं आरब्भ सति, मुस्सति सङ्घं आरब्भ सति। तस्स मय्हं, भन्ते, एवं होति—'इमम्हि चाहं समये कालं करेय्यं, का मय्हं गति को अभिसम्परायो'" ति?

"मा भायि, महानाम, मा भायि, महानाम! अपापकं ते मरणं भविस्सति अपापिका कालङ्किरिया। यस्स कस्सचि, महानाम, दीघरत्तं सद्धापरिभावितं चित्तं

---

३. शरणानिवर्ग तृतीय

२१. प्रथम महानामसूत्र : : भावितचित्त साधक की निष्पाप मृत्यु

२२. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्यप्रदेश के **कपिलवस्तु** स्थित न्यग्रोधाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। तब वहाँ महानाम शाक्य भगवान् के पास आया। भगवान् को प्रणाम कर वह एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे महानाम शाक्य ने भगवान् से यों निवेदन किया—"भन्ते! यह कपिलवस्तु नगरी समृद्ध, सम्पन्न तथा सभी तरह के लोगों का प्रयोजन सिद्ध करने वाली, एवं जनसम्मर्द (भीड़) वाली है। यहाँ मूर्ख, विद्वान्, व्यापारी, निर्धन, श्रमिक एवं श्रेष्ठी आदि सभी प्रकार के लोग रहते हैं। ऐसे में मैं भगवान् या किसी श्रेष्ठ भिक्षु से धर्मचर्चा कर जब पुनः कपिलवस्तु लौटता हूँ, तब मार्ग में मुझे न कोई हाथी मिलता है, न कोई घोड़ा, न कोई रथ या न कोई बैलगाड़ी या न कोई (बलवान्) पुरुष कि जिससे मुझे भय हो। तो भी उस समय, भन्ते! न आप स्मरण रहते हैं, न धर्म, न सङ्घ—सब कुछ भूल जाता हूँ। केवल यही बार बार स्मरण आता है—'यदि इस समय मेरी मृत्यु हो जाय तो मेरी क्या गति होगी? या पुनः कहाँ जन्म होगा'?".

"ऐसा भय न मानो, महानाम! ऐसा भय न मानो! तुम्हारा देहपात या मरण निष्पाप ही होगा; क्यों कि महानाम! जिस का चित्त श्रद्धा एवं शील, धर्मश्रवण, त्याग एवं प्रज्ञा से

सीलपरिभावितं चित्तं सुतपरिभावितं चित्तं चागपरिभावितं चित्तं पञ्ञापरिभावितं चित्तं, [R.370] तस्स यो हि ख्वायं कायो रूपी चातुम्महाभूतिको मातापेत्तिकसम्भवो ओदनकुम्मासूपचयो अनिच्चुच्छादनपरिमद्दनभेदनविद्धंसनधम्मो तं इधेव काका वा खादन्ति गिज्झा वा खादन्ति कुलला वा खादन्ति सुनखा वा खादन्ति सिङ्गाला वा खादन्ति विविधा वा पाणकजाता खादन्ति; यं च ख्वस्स चित्तं दीघरत्तं सद्धा-परिभावितं...पे०...पञ्ञापरिभावितं तं उद्धगामि होति विसेसगामि।

''सेय्यथापि, महानाम, पुरिसो सप्पिकुम्भं वा तेलकुम्भं वा गम्भीरं उदकरहदं ओगाहित्वा भिन्देय्य। तत्र या अस्स सक्खरा वा कठला वा सा अधोगामी अस्स, यं च ख्वस्स तत्र सप्पि वा तेलं वा तं उद्धगामि अस्स विसेसगामि। एवमेव खो, महानाम, यस्स कस्सचि दीघरत्तं सद्धापरिभावितं चित्तं...पे०...पञ्ञापरिभावितं चित्तं तस्स यो हि ख्वायं कायो रूपी चातुम्महाभूतिको मातापेत्तिकसम्भवो ओदनकुम्मासूपचयो अनिच्चुच्छादनपरिमद्दनभेदनविद्धंसनधम्मो तं इधेव काका वा खादन्ति गिज्झा वा खादन्ति कुलला वा खादन्ति सुनखा वा खादन्ति सिङ्गाला वा खादन्ति विविधा वा पाणकजाता खादन्ति; यं च ख्वस्स चित्तं दीघरत्तं सद्धापरिभावितं...पे०...पञ्ञा-[R.371] परिभावितं तं उद्धगामि होति विसेसगामि। तुय्हं खो पन, महानाम, दीघरत्तं [N.316, B.323] सद्धापरिभावितं चित्तं...पे०...पञ्ञापरिभावितं चित्तं। मा भायि,

---

परिभावित है, शुद्ध है, उस को भय किस बात का! उस का यह शरीर अवश्य चार महाभूतों का सम्मिश्रण है, मातापिता के संयोग से उत्पन्न हुआ है, दाल-भात खाने से वृद्धिङ्गत हुआ है; यह नित्य सम्भोग, मर्दन (दबाना), कलह या हिंसा के स्वभाव वाला है; इस को अन्त में मरणानन्तर, कौए गृध्र चील आदि मांसभोजी पक्षी खा जायँगे; या फिर कुत्ते, शृगाल या अन्य प्रकार के प्राणी खा जायँगे—किसी भी तरह इस को नष्ट होना ही है। परन्तु जिस का चित्त श्रद्धा...प्रज्ञा आदि धर्मों से परिभावित अतएव शुद्ध है वह मरणानन्तर ऊर्ध्वगामी ही होता है, विशेषगामी ही होता है।

''जैसे, महानाम! कोई पुरुष घी या तैल से भरा हुआ पात्र (मिट्टी का घड़ा) किसी गहरे सरोवर के मध्य में ले जा कर फोड़ दे। तब उस पात्र में जो मिट्टी या कंकड़-पत्थर होंगे वे नीचे (जल में) बैठ जायँगे तथा घी या तैल जल पर तैरने लगेगा; इसी प्रकार जिस साधक ने अपना चित्त श्रद्धा...प्रज्ञा आदि धर्मों से सुभावित एवं सुविशुद्ध कर रखा है, उस के शरीर को...भले ही कौए, गृध्र...खा जायँ; परन्तु उस का चित्त तो ऊर्ध्वगामी एवं विशेषगामी ही होगा। तुम ने भी, महानाभ! अपने चित्त को उन धर्मों की साधना द्वारा सुभावित कर रखा है, अतः वह ऊर्ध्वगामी एवं विशेषगामी ही होगा। अतः, महानाम!

महानाम, मा भायि, महानाम! अपापकं ते मरणं भविस्सति अपापिका कालङ्किरिया'' ति॥ •

२२. दुतियमहानामसुत्तं

२३. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं निग्रोधारामे। अथ खो महानामो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो महानामो सक्को भगवन्तं एतदवोच—''इदं, भन्ते, कपिलवत्थु इद्धं चेव फीतं च बाहुजञ्ञं आकिण्णमनुस्सं सम्बाधब्यूहं। सो ख्वाहं, भन्ते, भगवन्तं वा पयिरुपासित्वा मनोभावनीये वा भिक्खू सायन्हसमयं कपिलवत्थुं पविसन्तो; भन्ते, न पि हत्थिना समागच्छामि; भन्ते, न पि अस्सेन समागच्छामि; भन्ते, न पि रथेन समागच्छामि; भन्ते, न पि सकटेन समागच्छामि; भन्ते, न पि पुरिसेन समागच्छामि। तस्स मय्हं, भन्ते, तस्मिं समये मुस्सतेव भगवन्तं आरब्भ सति, मुस्सति धम्मं आरब्भ सति, मुस्सति सङ्घं आरब्भ सति। तस्स मय्हं, भन्ते, एवं होति—'इमम्हि चाहं समये कालं करेय्यं, का मय्हं गति को अभिसम्परायो''' ति?

''मा भायि, महानाम, मा भायि, महानाम! अपापकं ते मरणं भविस्सति अपापिका कालङ्किरिया। चतूहि खो, महानाम, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो। कतमेहि चतूहि? इध, महानाम, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि।

तुम इस विषय में किसी प्रकार का भय न मानो। मरणानन्तर तुम्हारी गति तो ऊर्ध्वगामी एवं विशेषगामी ही होगी''॥ •

२२. द्वितीय महानामसूत्र : : निर्वाणाभिमुख प्रवृत्ति

२३. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्यप्रदेश स्थित **कपिलवस्तु** नगरी के न्यग्रोधाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। तब महानाम ने...भगवान् से यों निवेदन किया—''भन्ते! यह कपिलवस्तु नगरी...पूर्ववत्...मेरा कहाँ जन्म होगा?''

''न डरो, महानाम! न डरो! तुम्हारी मरणक्रिया निष्पाप ही होगी। महानाम! चार धर्मों की साधना से युक्त आर्यश्रावक निर्वाण की ओर बढ़ता है, निर्वाणाभिमुख ही प्रवृत्त होता है। कौन से चार धर्म? बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति श्रद्धा से युक्त होता है तथा आर्यजनों को प्रिय शीलमय आचार से युक्त होता है। ...पूर्ववत्...।

"सेय्यथापि, महानाम, रुक्खो पाचीननिन्नो पाचीनपोणो पाचीनपब्भारो, सो मूलच्छिन्नो कतमेन पपतेय्या" ति?

"येन, भन्ते, निन्नो, येन पोणो, येन पब्भारो" ति।

"एवमेव खो, महानाम, इमेहि चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको निब्बाननिन्नो होति निब्बानपोणो निब्बानपब्भारो" ति॥ •

२३. गोधसक्कसुत्तं

[N.317, B.324] २४. कपिलवत्थुनिदानं। अथ खो महानामो सक्को येन गोधा सक्को [R.372] तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा गोधं सक्कं एतदवोच—"कतीहि त्वं, गोधे, धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानासि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधिपरायणं" ति?

"तीहि ख्वाहं, महानाम, धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानामि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधिपरायणं। कतमेहि तीहि? इध, महानाम, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो...पे०...अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा' ति। इमेहि ख्वाहं, महानाम, तीहि धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानामि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधि-परायणं। त्वं पन, महानाम, कतीहि धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानासि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधिपरायणं" ति?

"जैसे, महानाम! कोई वृक्ष पूर्व दिशा की ओर झुका हुआ हो, पूर्व दिशा की ओर ही उस का अधिक भाग झुका हुआ हो, उस को यदि मूल से काट दिया जाय तो वह किधर गिरेगा?"

"जिधर वह झुका हुआ है, भन्ते! या जिधर उस का बड़ा भाग झुका है।"

"इसी तरह, ऐसे सुभावित चित्त वाला साधक निर्वाण की ओर ही बढ़ता है। निर्वाणाभिमुख ही होता है"॥ •

२३. गोधशाक्यसूत्र : : गोध उपासक की बुद्ध के प्रति श्रद्धा

२४. कपिलवस्तु में ही...। तब महानाम शाक्य गोधा शाक्य के पास गया, वहाँ जा कर उस को यों बोला—"गोधा! तुम कितने धर्मों से युक्त साधक को 'स्रोतआपन्न' मानते हो? ..."

"महानाम! मैं तीन धर्मों से युक्त साधक को 'स्रोतआपन्न' मानता हूँ...। किन तीन धर्मों से? यहाँ, महानाम! कोई साधक भगवान् बुद्ध के प्रति...उन के धर्म के प्रति...सङ्घ

"चतूहि ख्वाहं, गोधे, धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानामि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधिपरायणं। कतमेहि चतूहि? इध, गोधे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि ख्वाहं, गोधे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानामि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधिपरायणं" ति।

"आगमेहि त्वं, महानाम, आगमेहि त्वं, महानाम! भगवा व एतं जानेय्य एतेहि धम्मेहि समन्नागतं वा असमन्नागतं वा" ति।

"आयाम, गोधे, येन भगवा तेनुपसङ्कमेय्याम; उपसङ्कमित्वा भगवतो एतमत्थं आरोचेस्सामा" ति।

अथ खो महानामो सक्को गोधा च सक्को येन भगवा [R.373, N.318, B.325] तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्नो खो महानामो सक्को भगवन्तं एतदवोच—"इधाहं, भन्ते, येन गोधा सक्को तेनुपसङ्कमिं; उपसङ्कमित्वा गोधं सक्कं एतदवोचं—'कतीहि त्वं, गोधे, धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानासि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधिपरायणं'? एवं वुत्ते, भन्ते, गोधा सक्को मं एतदवोच—'तीहि ख्वाहं, महानाम, धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानामि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधिपरायणं। कतमेहि तीहि? इध, महानाम, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो...पे०...अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं

के प्रति जो श्रद्धासम्पन्न है। इन तीन धर्मों से युक्त को मैं 'स्रोतआपन्न' मानता हूँ। अच्छा, महानाम! तुम कितने धर्मों से युक्त को 'स्रोतआपन्न' मानते हो?"

"गोधा! मैं तो चार धर्मों से युक्त साधक को...पूर्ववत्...सम्बोधिप्राप्त होना अवश्यम्भावी है।"

"ठहरो, महानाम! ठहरो। अब तो भगवान् ही बता सकते हैं कि कितने धर्मों से युक्त साधक को 'स्रोतआपन्न' मानना चाहिये, कितनों से युक्त को नहीं।"

"तो चलो, गोधे! भगवान् के पास चला जाय उन्हीं से इस का निर्णय करा लिया जाय।"

तब महानाम शाक्य एवं गोधा शाक्य—दोनों भगवान् के पास गये। उन्हें प्रणाम

लोकस्सा' ति। इमेहि ख्वाहं, महानाम, तीहि धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानामि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधिपरायणं। त्वं पन, महानाम, कतीहि धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानासि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधिपरायणं' ति?

"एवं वुत्ताहं, भन्ते, गोधं सक्कं एतदवोचं—'चतूहि ख्वाहं, गोधे, धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानामि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधिपरायणं। कतमेहि चतूहि? इध, गोधे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०... सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि ख्वाहं, गोधे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतं सोतापन्नपुग्गलं आजानामि अविनिपातधम्मं नियतं सम्बोधिपरायणं' ति।

"एवं वुत्ते, भन्ते, गोधा सक्को मं एतदवोच—'आगमेहि त्वं, महानाम, आगमेहि त्वं, महानाम! भगवा व एतं जानेय्य एतेहि धम्मेहि समन्नागतं वा असमन्नागतं वा''' ति।

[R.374] "इध, भन्ते, कोचिदेव धम्मो समुप्पादो उप्पज्जेय्य, एकतो अस्स भगवा एकतो भिक्खुसङ्घो च। येनेव भगवा तेनेवाहं अस्सं। एवं पसन्नं मं, भन्ते, भगवा धारेतु। इध, भन्ते, कोचिदेव धम्मो समुप्पादो उप्पज्जेय्य, एकतो अस्स भगवा एकतो भिक्खुसङ्घो भिक्खुनिसङ्घो च। येनेव भगवा तेनेवाहं अस्सं। एवं पसन्नं मं, भन्ते, भगवा धारेतु। इध, [N.319] भन्ते, कोचिदेव धम्मो समुप्पादो उप्पज्जेय्य, एकतो अस्स भगवा एकतो [B.326] भिक्खुसङ्घो भिक्खुनिसङ्घो च उपासका च। येनेव भगवा तेनेवाहं अस्सं। एवं पसन्नं मं, भन्ते, भगवा धारेतु। इध, भन्ते, कोचिदेव धम्मो समुप्पादो उप्पज्जेय्य, एकतो अस्स भगवा एकतो भिक्खुसङ्घो भिक्खुनिसङ्घो उपासका उपासिकायो च। येनेव भगवा तेनेवाहं अस्सं। एवं पसन्नं मं, भन्ते, भगवा धारेतु। इध, भन्ते, कोचिदेव धम्मो समुप्पादो उप्पज्जेय्य, एकतो अस्स भगवा एकतो भिक्खुसङ्घो भिक्खुनिसङ्घो उपासका

कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे महानाम शाक्य ने भगवान् से यों निवेदन किया—"भन्ते! मैने गोधा शाक्य से यह पूछा था कि कितने धर्मों से युक्त साधक को ...पूर्ववत्...भगवान् ही बतायँगे कि कितने धर्मों से युक्त 'स्रोतआपन्न' कहलाता है, कितनों से नहीं।

"भन्ते! यहाँ कोई धर्म की बात उठे तथा उस में भगवान् एक ओर हो जायँ तथा भिक्षुसङ्घ एक ओर, तो मैं भगवान् का ही पक्ष लूँगा, मैं भगवान् के प्रति इतना श्रद्धालु हूँ। ऐसा आप मानें। ...एक ओर भिक्षुसङ्घ एवं भिक्षुणीसङ्घ...भिक्षुसङ्घ, भिक्षुणीसङ्घ एवं

उपासिकायो सदेवको च लोको समारको सब्रह्मको सस्समणब्राह्मणी पजा सदेवमनुस्सा। येनेव भगवा तेनेवाहं अस्सं। एवं पसन्नं मं, भन्ते, भगवा धारेतु'' ति।

''एवंवादी त्वं, गोधे, महानामं सक्कं किं वदेसी'' ति?

''एवंवादाहं, भन्ते, महानामं सक्कं न किञ्चि वदामि, अञ्ञत्र कल्याणा अञ्ञत्र कुसला'' ति॥ •

२४. पठमसरणानिसक्कसुत्तं

२५. कपिलवत्थुनिदानं। तेन खो पन समयेन सरणानि सक्को कालङ्कतो [R.375] होति। सो भगवता ब्याकतो—''सोतापन्नो अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो'' ति। तत्र सुदं सम्बहुला सक्का सङ्गम्म समागम्म उज्झायन्ति खीयन्ति विपाचेन्ति—''अच्छरियं वत, भो, अब्भुतं वत, भो! एत्थ दानि को न सोतापन्नो भविस्सति! यत्र हि नाम सरणानि सक्को कालङ्कतो; सो भगवता ब्याकतो—'सोतापन्नो अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो' ति। सरणानि सक्को सिक्खादुब्बल्यमापादि, मज्जपानं अपायी'' ति।

अथ खो महानामो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो महानामो सक्को भगवन्तं

उपासक...भिक्षुसङ्घ, भिक्षुणीसङ्घ, उपासक एवं उपासिकाएँ...। अधिक क्या कहूँ! यदि कोई धर्म की बात उठे तब एक ओर भगवान् हों और दूसरी ओर देवताओं सहित मार, ब्रह्मा तथा देवमनुष्यों सहित समस्त श्रमण ब्राह्मण, तो भी मैं भगवान् के पक्ष में ही रहूँगा। मैं भगवान् के प्रति इतना श्रद्धालु हूँ—ऐसा आप मानें।''

''अब, गोधे! तूँ ऐसा कहने वाले महानाम शाक्य को क्या उत्तर देना चाहेगा?''

''भन्ते! 'इन का कल्याण हो, इन का कुशल हो!'—इस के अतिरिक्त मैं इन को अब अन्य कुछ क्या कह सकता हूँ!''॥ •

२४. प्रथम शरणानिशाक्यसूत्र : : स्रोतआपन्न शरणानि शाक्य

२५. **कपिलवस्तु में** ही...। उस समय शरणानि शाक्य का देहावसान हो गया। उस के लिये भगवान् ने यह बताया था—''यह धर्म से च्युत न होने वाला कभी न कभी सम्बोधि प्राप्त कर लेने वाला स्रोतआपन्न साधक होगा।'' यह सुन कर बहुत से शाक्य चिढ गये, दुःखी हुए और कहने लगे—''आश्चर्य है, भगवान् ने इस को 'स्रोतआपन्न' कैसे बता दिया; यह तो धर्मपालन में भी दुर्बल था, तथा मद्यपायी भी था। ऐसे लोग भी स्रोतआपन्न होने लगे तो अब सभी 'स्रोतआपन्न' हो जायँगें।''

तब महानाम शाक्य ने भगवान् के पास जा कर यह समस्त घटना अक्षरशः सुना

एतदवोच—''इध, भन्ते, सरणानि सक्को कालङ्कतो। सो भगवता ब्याकतो—'सोतापन्नो अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो' ति। तत्र सुदं, भन्ते, सम्बहुला सक्का सङ्गम्म [B.327] समागम्म उज्झायन्ति खीयन्ति विपाचेन्ति...सरणानि सक्को सिक्खादुब्बल्यमापादि, मज्जपानं अपायी''' ति।

[N.320] ''यो सो, महानाम, दीघरत्तं उपासको बुद्धं सरणं गतो धम्मं सरणं गतो सङ्घं सरणं गतो, सो कथं विनिपातं गच्छेय्य! यं हि तं, महानाम, सम्मा वदमानो वदेय्य—'दीघरत्तं उपासको बुद्धं सरणं गतो धम्मं सरणं गतो सङ्घं सरणं गतो' ति, सरणानिं सक्कं [R.376] सम्मा वदमानो वदेय्य। सरणानि, महानाम, सक्को दीघरत्तं उपासको बुद्धं सरणं गतो धम्मं सरणं गतो सङ्घं सरणं गतो। सो कथं विनिपातं गच्छेय्य! इध, महानाम, एकच्चो पुग्गलो बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा ...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...हासपञ्ञो जवनपञ्ञो विमुत्तिया च समन्नागतो। सो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो परिमुत्तो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

''इध पन, महानाम, एकच्चो पुग्गलो बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे ...पे०...हासपञ्ञो जवनपञ्ञो न च विमुत्तिया समन्नागतो। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो परिमुत्तो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

दी। भगवान् ने महानाम शाक्य को यों समझाया—''महानाम! जो पुरुष दीर्घकाल तक उपासक भाव से भगवान् बुद्ध की शरण में, धर्म तथा सङ्घ की शरण में रहा है उस की दुर्गति कैसे हो सकती है! महानाम! यदि किसी को यथार्थतः रत्नत्रय की शरण में जाने वाला कहा जाय तो शरणानि शाक्य को ही ऐसा कहा जा सकता है; क्यों कि शरणानि शाक्य दीर्घकाल से रत्नत्रय का शरणागत रहा है, उस की दुर्गति (विनिपात) कैसे हो सकती है! ...पूर्ववत्...।

''महानाम! कोई पुरुष भगवान् बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति...श्रेष्ठ **प्रज्ञा और विमुक्ति से युक्त होता है**; वह आश्रवक्षय के कारण, अनाश्रव चित्त एवं प्रज्ञा की विमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जान कर एवं साक्षात् कर तथा प्राप्त कर साधना करता है,

"इध पन, महानाम, एकच्चो पुग्गलो बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति— 'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे ...पे०...न हासपञ्ञो न जवनपञ्ञो न च विमुत्तिया समन्नागतो। सो तिण्णं संयोजनानं परिक्खया रागदोसमोहानं तनुत्ता सकदागामी होति, सकिदेव इमं लोकं [B.328] आगन्त्वा दुक्खस्सन्तं करोति। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो परिमुत्तो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

"इध पन, महानाम, एकच्चो पुग्गलो बुद्धे अवेच्चप्पसादेन [R.377, N.321] समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०... सङ्घे...पे०...न हासपञ्ञो न जवनपञ्ञो न च विमुत्तिया समन्नागतो। सो तिण्णं संयोजनानं परिक्खया सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो ति। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो परिमुत्तो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

"इध पन, महानाम, एकच्चो पुग्गलो न हेव खो बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो

महानाम! वह ऐसा पुरुष नरकपात से मुक्त हो जाता है, पशुयोनि में गिरने से मुक्त हो जाता है, प्रेत...।

"महानाम! कोई पुरुष भगवान् बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति...। श्रेष्ठ प्रज्ञा से तो युक्त होता है, परन्तु **विमुक्ति से युक्त नहीं होता**, वह पाँच अवरभागीय संयोजनों के क्षय के कारण 'अयोनिज' उत्पन्न होता है तथा वहीं परिनिर्वृत हो जाता है। उस लोक से इस संसार में नहीं लौटता। महानाम! ऐसा पुरुष भी नरकपात से मुक्त होता है...।

"महानाम! कोई पुद्गल भगवान् बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति...। किन्तु न तो वह **श्रेष्ठ प्रज्ञा और न विमुक्ति से युक्त होता है**, वह तीन संयोजनों के क्षय के कारण तथा राग, द्वेष एवं मोह के अत्यधिक दुर्बल हो जाने से 'सकृदागामी' होता है। वह एक बार इस संसार में जन्म ले कर स्वदुःखों का अन्त कर लेता है। महानाम! ऐसा पुरुष भी नरक से मुक्त होता है...।

"महानाम! यहाँ कोई पुद्गल भगवान् बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति...। परन्तु वह न श्रेष्ठ प्रज्ञा से और न विमुक्ति से ही युक्त होता है। वह तीन संयोजनों के सर्वथा क्षय के कारण 'स्रोतआपन्न' हो जाता है। वह पुरुष भी, महानाम! नरकपात से मुक्त होता है...।

"महानाम! यहाँ कोई पुद्गल न भगवान् बुद्ध के प्रति...न धर्म के प्रति...न सङ्घ के

होति...न धम्मे...न सङ्घे...न हासपञ्ञो न जवनपञ्ञो न च विमुत्तिया समन्नागतो। अपि चस्स इमे धम्मा होन्ति—सद्धिन्द्रियं विरियिन्द्रियं सतिन्द्रियं समाधिन्द्रियं पञ्ञिन्द्रियं। तथागतप्पवेदिता चस्स धम्मा पञ्ञाय मत्तसो निज्झानं खमन्ति। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो अगन्ता निरयं अगन्ता तिरच्छानयोनिं अगन्ता पेत्तिविसयं अगन्ता अपायं दुग्गतिं विनिपातं।

"इध पन, महानाम, एकच्चो पुग्गलो न हेव खो बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति...न धम्मे...पे०...न सङ्घे...पे०...न हासपञ्ञो न जवनपञ्ञो न च विमुत्तिया समन्नागतो, अपि चस्स इमे धम्मा होन्ति सद्धिन्द्रियं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं। तथागते चस्स सद्धामत्तं होति पेममत्तं। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो अगन्ता निरयं अगन्ता तिरच्छानयोनिं अगन्ता पेत्तिविसयं अगन्ता अपायं दुग्गतिं विनिपातं। इमे चे पि, महानाम, महासाला सुभासितं दुब्भासितं आजानेय्युं, इमे चाहं महासाले ब्याकरेय्यं—'सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा' ति; किमङ्गं पन सरणानिं सक्कं। सरणानि, महानाम, सक्को मरणकाले सिक्खं समादियी" ति॥ •

२५. दुतियसरणानिसक्कसुत्तं

[B.329, R.378] २६. कपिलवत्थुनिदानं। तेन खो पन समयेन सरणानि सक्को कालङ्कतो होति। सो भगवता ब्याकतो—"सोतापन्नो अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो" ति। तत्र सुदं सम्बहुला सक्का सङ्गम्म समागम्म उज्झायन्ति खीयन्ति विपाचेन्ति—

प्रति दृढ श्रद्धा रखता है, न श्रेष्ठ प्रज्ञा एवं विमुक्ति से युक्त है; परन्तु इस को भी ये पाँच धर्म होते हैं—श्रद्धेन्द्रिय, वीर्येन्द्रिय, स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय एवं प्रज्ञेन्द्रिय। वह तथागत द्वारा उपदिष्ट इन धर्मों को प्रज्ञा से कुछ (अल्प अंश में) समझता है। महानाम! यह पुद्गल भी नरक में नहीं जाता, पशुयोनि या प्रेतयोनि में नहीं जाता, या किसी तरह की दुर्गति में नहीं पड़ता।

"महानाम! यहाँ कोई पुद्गल न भगवान् बुद्ध में, न उन के धर्म में, न उन के सङ्घ में किसी प्रकार की श्रद्धा रखता है, परन्तु उस में ये धर्म होते हैं—श्रद्धेन्द्रिय, वीर्येन्द्रिय, स्मृतीन्द्रिय, समाधीन्द्रिय एवं प्रज्ञेन्द्रिय; तथा वह भगवान् बुद्ध के प्रति कुछ श्रद्धा, या प्रेममात्र होता, ऐसा पुद्गल भी, महानाम! न नरक में, न पशुयोनि में...गिरता है।

"महानाम! यदि ये महावृक्ष भी सुभाषित या दुर्भाषित समझने का सामर्थ्य रखते तो मैं इन्हें भी 'स्रोतआपन्न' कह देता। फिर शरणानि शाक्य की तो बात ही क्या है! क्यों कि शरणानि शाक्य ने मृत्यु के समय मेरी शिक्षा (धर्म) को ग्रहण किया था"॥ •

"अच्छरियं वत, भो, अब्भुतं वत, भो! एत्थ दानि को न सोतापन्नो भविस्सति! यत्र हि नाम सरणानि सक्को कालङ्कतो; सो भगवता ब्याकतो—'सोतापन्नो अवि-[N.322] निपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो' ति। सरणानि सक्को सिक्खाय अपरिपूरकारी अहोसी" ति।

अथ खो महानामो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो महानामो सक्को भगवन्तं एतदवोच—"इध, भन्ते, सरणानि सक्को कालङ्कतो। सो भगवता ब्याकतो—'सोतापन्नो अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो' ति। तत्र सुदं, भन्ते, सम्बहुला सक्का सङ्गम्म समागम्म उज्झायन्ति खीयन्ति विपाचेन्ति—'अच्छरियं वत, भो, अब्भुतं वत, भो! एत्थ दानि को न सोतापन्नो भविस्सति! यत्र हि नाम सरणानि सक्को कालङ्कतो; सो भगवता ब्याकतो—सोतापन्नो अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो' ति। सरणानि सक्को सिक्खाय अपरिपूरकारी अहोसी'" ति।

"यो सो, महानाम, दीघरत्तं उपासको बुद्धं सरणं गतो धम्मं सरणं गतो सङ्घं सरणं गतो, सो कथं विनिपातं गच्छेय्य! यं हि तं, महानाम, सम्मा वदमानो वदेय्य—'दीघरत्तं उपासको बुद्धं सरणं गतो धम्मं सरणं गतो सङ्घं सरणं गतो', सरणानिं सक्कं सम्मा वदमानो वदेय्य। सरणानि, महानाम, सक्को दीघरत्तं उपासको बुद्धं सरणं गतो धम्मं सरणं गतो सङ्घं सरणं गतो। सो कथं विनिपातं गच्छेय्य!

"इध, महानाम, एकच्चो पुग्गलो बुद्धे एकन्तगतो होति अभिप्पसन्नो—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०... हासपञ्ञो जवनपञ्ञो विमुत्तिया च समन्नागतो। सो आसवानं खया अनासवं [B.330] चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो परिमुत्तो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

"इध पन, महानाम, एकच्चो पुग्गलो बुद्धे एकन्तगतो होति अभिप्पसन्नो—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...

---

२५. द्वितीय शरणानिशाक्यसूत्र : : नरक में न गिरने वाले पुरुष

२६. **कपिलवस्तु में** ही...।...पूर्वसूत्रवत्...। *(पिछले सूत्र के आदि के चार अनुबन्धों (पैराग्राफों) का विस्तार कर लें।)*

"महानाम! कोई पुरुष बुद्ध के प्रति अत्यधिक श्रद्धालु होता है...धर्म के प्रति...सङ्घ

[N.323] हासपञ्ञो जवनपञ्ञो न च विमुत्तिया समन्नागतो। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति, उपहच्चपरिनिब्बायी होति, असङ्खार-परिनिब्बायी होति, ससङ्खारपरिनिब्बायी होति, उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो परिमुत्तो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

"इध पन, महानाम, एकच्चो पुग्गलो बुद्धे एकन्तगतो होति अभिप्पसन्नो—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...न हासपञ्ञो न जवनपञ्ञो न च विमुत्तिया समन्नागतो। सो तिण्णं संयोजनानं परिक्खया [R.379] रागदोसमोहानं तनुत्ता सकदागामी होति, सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्तं करोति। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो परिमुत्तो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

"इध पन, महानाम, एकच्चो पुग्गलो बुद्धे एकन्तगतो होति अभिप्पसन्नो—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०... सङ्घे...पे०...न हासपञ्ञो न जवनपञ्ञो न च विमुत्तिया समन्नागतो। सो तिण्णं संयोजनानं परिक्खया सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो परिमुत्तो निरया परिमुत्तो तिरच्छानयोनिया परिमुत्तो पेत्तिविसया परिमुत्तो अपायदुग्गतिविनिपाता।

"इध पन, महानाम, एकच्चो पुग्गलो न हेव खो बुद्धे एकन्तगतो होति अभिप्पसन्नो...पे०...न धम्मे...पे०...न सङ्घे...पे०...न हासपञ्ञो न जवनपञ्ञो न च [B.331] विमुत्तिया समन्नागतो; अपि चस्स इमे धम्मा होन्ति—सद्धिन्द्रियं...पे०... पञ्ञिन्द्रियं। तथागतप्पवेदिता चस्स धम्मा पञ्ञाय मत्तसो निज्झानं खमन्ति। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो अगन्ता निरयं अगन्ता तिरच्छानयोनिं अगन्ता पेत्तिविसयं अगन्ता अपायं दुग्गतिं विनिपातं।

के प्रति...। श्रेष्ठ प्रज्ञा से युक्त होता है, परन्तु विमुक्ति से युक्त नहीं होता। वह पाँच अवरभागीय संयोजनों के क्षीण हो जाने से अन्तरापरिनिर्वायी[१] (बीच में ही निर्वाण पा लेने वाला) होता है, उपहत्यपरिनिर्वायी[२] होता है, संस्कारपरिनिर्वायी[३] होता है, असंस्कारपरिनिर्वायी[४] होता है। ऊर्ध्वस्रोत अकनिष्ठगामी[५] होता है। महानाम! ऐसा पुरुष भी नरक से मुक्त होता है। ...पूर्वसूत्रवत्...। *(इस से आगे पूर्वसूत्र का विस्तार करें।)*

१-४. इन सब के व्याख्यान के लिये पीछे पृ० १८७९ की टिप्पणी देखें।

''इध पन, महानाम, एकच्चो पुग्गलो न हेव खो बुद्धे एकन्तगतो होति अभिप्पसन्नो...न धम्मे...पे०...न सङ्घे...पे०...न हासपञ्ञो न जवनपञ्ञो न च विमुत्तिया समन्नागतो; अपि चस्स इमे धम्मा होन्ति—सद्धिन्द्रियं...पे०...पञ्ञिन्द्रियं। [N.324] तथागते चस्स सद्धामत्तं होति पेममत्तं। अयं पि खो, महानाम, पुग्गलो अगन्ता निरयं अगन्ता तिरच्छानयोनिं अगन्ता पेत्तिविसयं अगन्ता अपायं दुग्गतिं विनिपातं।

''सेय्यथापि, महानाम, दुक्खेत्तं दुब्भूमिं अविहतखाणुकं, बीजानि चस्सु खण्डानि पूतीनि वातातपहतानि असारादानि असुखसयितानि, देवो च न सम्मा धारं अनुप्पवेच्छेय्य। अपि नु तानि बीजानि वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जेय्युं'' ति?

''नो हेतं, भन्ते''।

''एवमेव खो, महानाम, इध धम्मो दुरक्खातो होति दुप्पवेदितो अनिय्यानिको अनुपसमसंवत्तनिको असम्मासम्बुद्धप्पवेदितो—इदमहं दुक्खेत्तस्मिं वदामि। [R.380] तस्मिं च धम्मे सावको विहरति धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो सामीचिप्पटिपन्नो अनुधम्मचारी—इदमहं दुब्बीजस्मिं वदामि।

''सेय्यथापि, महानाम, सुखेत्तं सुभूमिं सुविहतखाणुकं, बीजानि चस्सु अखण्डानि अपूतीनि अवातातपहतानि सारादानि सुखसयितानि; देवो च सम्मा धारं अनुप्पवेच्छेय्य। अपि नु तानि बीजानि वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जेय्युं'' ति?

''एवं, भन्ते''।

''क्या, महानाम! कोई कम उत्पत्ति वाली (उपजाऊ) ऊसर, या घास पौधों से भरी हुई भूमि वाला खेत हो; उस में डाले जाने वाले बीज भी सड़े गले हों, हवा या धूप में अधिक सूख गये हों, निस्तत्त्व हों, ठीक से रोपे न जा सके हों; वर्षा भी भली भाँति न हो तो क्या ऐसे में वे बीज भली भाँति वृद्धि तथा विपुलता प्राप्त कर सकते हैं?''

''नहीं, भन्ते!''

''उसी तरह, महानाम! जो धर्म दुराख्यात है, दुष्प्रवेदित है, निर्वाणाभिमुख पहुँचाने वाला न हो, मन को शान्तिदायक न हो, सम्यक्सम्बुद्ध द्वारा उपदिष्ट न हो—इस दृष्टि से मैं इस धर्म को 'दुःक्षेत्र' मानता हूँ।

''(इसके विपरीत—) महानाम! किसी अच्छी भूमि वाले, जिस में हल ठीक तरह से जोता गया हो, घास तृण आदि से रहित हो; बीज भी स्वस्थ, विना छिद्र वाले, हवा या धूप की मार न खाये हुए, सार वाले तथा भली भाँति रोपे गये हों, वर्षा भी समय से हो जाय, क्या ऐसे वायुमण्डल में वे बीज वृद्धि एवं विपुलता नहीं प्राप्त करेंगे?''

''अवश्य प्राप्त करेंगे, भन्ते!''

"एवमेव खो, महानाम, इध धम्मो स्वाक्खातो होति सुप्पवेदितो निय्यानिको उपसमसंवत्तनिको सम्मासम्बुद्धप्पवेदितो—इदमहं सुखेत्तस्मिं वदामि। तस्मिं च धम्मे सावको विहरति धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो सामीचिप्पटिपन्नो अनुधम्मचारी—इदमहं सुबीजस्मिं वदामि। किमङ्गं पन सरणानिं सक्कं! सरणानि, महानाम, सक्को मरणकाले सिक्खाय परिपूरकारी अहोसी" ति॥ •

२६. पठमअनाथपिण्डिकसुत्तं

[B.332] २७. सावत्थिनिदानं। तेन खो पन समयेन अनाथपिण्डिको गहपति आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति अञ्ञतरं पुरिसं आमन्तेसि—"एहि त्वं, अम्भो पुरिस, येनायस्मा सारिपुत्तो तेनुपसङ्कम; उपसङ्कमित्वा [N.325] मम वचनेन आयस्मतो सारिपुत्तस्स पादे सिरसा वन्द—'अनाथपिण्डिको, भन्ते, गहपति आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। सो आयस्मतो सारिपुत्तस्स पादे सिरसा वन्दती' ति। एवं च वदेहि—'साधु किर, भन्ते, आयस्मा सारिपुत्तो येन अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया" ति। [R.381] "एवं, भन्ते" ति खो सो पुरिसो अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स पटिस्सुत्वा येनायस्मा सारिपुत्तो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं सारिपुत्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो पुरिसो आयस्मन्तं सारिपुत्तं एतदवोच—"अनाथपिण्डिको, भन्ते, गहपति आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। सो आयस्मतो

"इसी तरह, महानाम! जो कोई धर्म स्वाख्यात एवं सुप्रवेदित हों, निर्वाणाभिमुख प्रवृत्त करने वाला हो, मन को शान्तिदायक हो, सम्यक्सम्बुद्ध द्वारा उपदिष्ट हो—ऐसे धर्म को मैं, महानाम! 'सुक्षेत्र' की संज्ञा देता हूँ। ऐसे धर्म की धर्म-अनुधर्म साधना करने वाले, सदाचारसम्पन्न श्रावक को मैं 'सुबीज' कहता हूँ। फिर शरणानि की तो बात ही क्या है! क्यों कि, महानाम! शरणानि शाक्य ने मृत्यु के समय धर्म को पूर्ण कर लिया था"॥ •

२६. प्रथम अनाथपिण्डिकसूत्र : : अनाथपिण्डिक गृहपति की विशेषता

२७. **श्रावस्ती में** ही...।...उस समय अनाथपिण्डिक गृहपति अत्यधिक रुग्ण था। उस रोग से उस को बहुत कष्ट हो रहा था। तब अनाथपिण्डिक गृहपति ने अपने किसी अनुचर को बुलाया, तथा उस से कहा—"अरे पुरुष! तुम मेरे कहने से आयुष्मान् सारिपुत्र के पास जाओ, तथा मेरी ओर से उन्हें शिर से प्रणाम करना तथा निवेदन करना कि भन्ते! अनाथपिण्डिक गृहपति गम्भीर व्याधि से ग्रस्त है, उस के कारण उसे बहुत अधिक पीड़ा हो रही है। वह आप को प्रणाम करता है, तथा उस ने यह निवेदन किया है—'अच्छा हो, भन्ते! आप कृपा कर, गृहपति के आवास पर पधारें।"

सारिपुत्तस्स पादे सिरसा वन्दति। एवं च वदति--'साधु किर, भन्ते, आयस्मा सारिपुत्तो येन अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया''' ति। अधिवासेसि खो आयस्मा सारिपुत्तो तुण्हीभावेन।

अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय आयस्मता आनन्देन पच्छासमणेन येन अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो आयस्मा सारिपुत्तो अनाथपिण्डिकं गहपतिं एतदवोच—"कच्चि ते, गहपति, खमनीयं कच्चि यापनीयं? कच्चि दुक्खा वेदना पटिक्कमन्ति, नो अभिक्कमन्ति; पटिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो अभिक्कमो" ति?

"न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो" ति।

"यथारूपेन खो, गहपति, बुद्धे अप्पसादेन समन्नागतो अस्सुतवा [B.333] पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपो ते बुद्धे अप्पसादो नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, बुद्धे अवेच्चप्पसादो—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति। तं च पन ते बुद्धे अवेच्चप्पसादं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

"यथारूपेन खो, गहपति, धम्मे अप्पसादेन समन्नागतो [R.382, N.326]

"ठीक है, श्रीमन्" कह कर वह पुरुष आयुष्मान् सारिपुत्र की सेवा में पहुँचा, तथा उन को प्रणाम कर गृहपति का उक्त सन्देश सुना दिया। आयुष्मान् सारिपुत्र ने मौन भाव से, गृहपति के घर आना स्वीकार कर लिया।

तब आयुष्मान् सारिपुत्र पूर्वाह्ण में वस्त्र व्यवस्थित कर, पात्रचीवर लेकर, तथा साथ में एक श्रमण के रूप में आयुष्मान् आनन्द को ले कर गृहपति के आवास पर पहुँचे। वहाँ जा कर प्रज्ञप्त आसन पर बैठे। वहाँ बैठ कर उन्होंने गृहपति से पूछा—"गृहपति! तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है? तुम्हारा रोग तुम्हें अधिक कष्ट तो नहीं दे रहा है? यह कष्ट कम हो रहा है कि नहीं?"

"नहीं, भन्ते! यह कष्ट कम नहीं हो रहा है। अपि तु, आगे से आगे बढ़ ही रहा है।"

"जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन भगवान् में अश्रद्धा के कारण देहपात के बाद, मरणानन्तर, दुर्गति प्राप्त कर नरकगामी होता है, वैसी अश्रद्धा भगवान् में तुम्हारी नहीं है। तुम्हारी तो, गृहपति! भगवान् में दृढ श्रद्धा है, उस श्रद्धा के बल पर तुम इस असह्य कष्ट को भी सहन करने की सामर्थ्य रखो।

अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपो ते धम्मे अप्पसादो नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, धम्मे अवेच्चप्पसादो— 'स्वाक्खातो भगवता धम्मो ...पे०...पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही' ति। तं च पन ते धम्मे अवेच्चप्पसादं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

''यथारूपेन खो, गहपति, सङ्घे अप्पसादेन समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपो ते सङ्घे अप्पसादो नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, सङ्घे अवेच्चप्पसादो—सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा ति। तं च पन ते सङ्घे अवेच्चप्पसादं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

''यथारूपेन खो, गहपति, दुस्सील्येन समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपं ते दुस्सील्यं नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, अरियकन्तानि सीलानि...पे०...समाधिसंवत्तनिकानि। तानि च पन ते अरियकन्तानि सीलानि अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

''यथारूपाय खो, गहपति, मिच्छादिट्ठिया समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपा ते मिच्छादिट्ठि नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, सम्मादिट्ठि। तं च पन ते सम्मादिट्ठिं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

[B.334] ''यथारूपेन खो, गहपति, मिच्छासङ्कप्पेन समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपो ते मिच्छासङ्कप्पो नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, सम्मासङ्कप्पो। तं च पन ते सम्मा-सङ्कप्पं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

[R.383] ''यथारूपाय खो, गहपति, मिच्छावाचाय समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपा ते

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन धर्म में अश्रद्धा के कारण...पूर्ववत्...।

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन सङ्घ में अश्रद्धा के कारण...पूर्ववत्...।

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन दुःशील से युक्त होने के कारण...पूर्ववत्...।

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन मिथ्यादृष्टि से युक्त होने के कारण...पूर्ववत्...।

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन मिथ्यासङ्कल्प से युक्त होने के कारण ...पूर्ववत्...।

मिच्छावाचा नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, सम्मावाचा। तं च पन ते [N.327] सम्मावाचं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

''यथारूपेन खो, गहपति, मिच्छाकम्मन्तेन समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपा ते मिच्छाकम्मन्तो नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, सम्माकम्मन्तो। तं च पन ते सम्माकम्मन्तं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

''यथारूपेन खो, गहपति, मिच्छाआजीवेन समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपा ते मिच्छाआजीवो नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, सम्माआजीवो। तं च पन ते सम्माआजीवं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

''यथारूपेन खो, गहपति, मिच्छावायामेन समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपा ते मिच्छावायामो नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, सम्मावायामो। तं च पन ते सम्मावायामं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

''यथारूपाय खो, गहपति, मिच्छासतिया समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपा ते मिच्छासति नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, सम्मासति। तं च पन ते सम्मासतिं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

''यथारूपेन खो, गहपति, मिच्छासमाधिना समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपो ते मिच्छासमाधि नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, सम्मासमाधि। तं च पन ते [B.335] सम्मासमाधिं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन मिथ्यावाक् से युक्त होने के कारण...पूर्ववत्...।

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन मिथ्याकर्मान्त से युक्त होने के कारण...पूर्ववत्...।

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन मिथ्याआजीव से युक्त होने के कारण... पूर्ववत्...।

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन मिथ्याव्यायाम से युक्त होने के कारण... पूर्ववत्...।

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन मिथ्यास्मृति से युक्त होने के कारण...पूर्ववत्...।

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन मिथ्यासमाधि से युक्त होने के कारण...पूर्ववत्...।

[R.384] ''यथारूपेन खो, गहपति, मिच्छाञाणेन समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपं ते मिच्छाञाणं नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, सम्माञाणं। तं च पन ते सम्माञाणं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्य।

[N.328] ''यथारूपाय खो, गहपति, मिच्छाविमुत्तिया समन्नागतो अस्सुतवा पुथुज्जनो कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति तथारूपा ते मिच्छाविमुत्ति नत्थि। अत्थि च खो ते, गहपति, सम्माविमुत्ति। तं च पन ते सम्माविमुत्तिं अत्तनि समनुपस्सतो ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भेय्या'' ति।

अथ खो अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स ठानसो वेदना पटिप्पस्सम्भिंसु। अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति आयस्मन्तं च सारिपुत्तं आयस्मन्तं च आनन्दं सकेनेव थालिपाकेन परिविसि। अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति आयस्मन्तं सारिपुत्तं भुत्ताविं ओनीतपत्तपाणिं अञ्ञतरं नीचासनं गहेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो अनाथपिण्डिकं गहपतिं आयस्मा सारिपुत्तो इमाहि गाथाहि अनुमोदि—

''यस्स सद्धा तथागते, अचला सुप्पतिट्ठिता।
सीलं च यस्स कल्याणं, अरियकन्तं पसंसितं॥
''सङ्घे पसादो यस्सत्थि, उजुभूतं च दस्सनं।
अदलिद्दो ति तं आहु, अमोघं तस्स जीवितं॥

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन मिथ्याज्ञान से युक्त होने के कारण...पूर्ववत्...।

''जैसे, गृहपति! कोई मूर्ख पृथग्जन मिथ्याविमुक्ति से युक्त होने के कारण इस देहपात के बाद मरणानन्तर दुर्गति प्राप्त कर नरकगामी होता है, वैसी मिथ्याविमुक्ति तुम में नहीं है; तुम तो सम्यग्विमुक्ति रखते हो। उस समय सम्यग्विमुक्ति के बल पर तुम इस असह्य कष्ट को भी सहन करने की सामर्थ्य रखो।''

इस उपदेशानुसार गृहपतिद्वारा साधना करने पर उस का वह असह्य कष्ट समाप्त हो गया। तब अनाथपिण्डिक गृहपति ने आयुष्मान् सारिपुत्र एवं आयुष्मान् आनन्द को अपने हाथ से थाली परोस कर ससम्मान भोजन कराया। आयुष्मान् सारिपुत्र को भोजनानन्तर पात्र से हाथ हटाया हुआ देख कर, दूसरे नीचे आसन पर बैठ गया। बैठे हुए उस गृहपति को आयुष्मान् सारिपुत्त ने इन गाथाओं से भक्तानुमोदन किया—

''जिस की भगवान् तथागत में अचल एवं सुप्रतिष्ठित श्रद्धा है, तथा जिस का शील आर्यों द्वारा प्रशंसित एवं मङ्गलमय है।

"तस्मा सद्धं च सीलं च, पसादं धम्मदस्सनं।
अनुयुञ्जेथ मेधावी, सरं बुद्धानसासनं" ति॥

अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो अनाथपिण्डिकं गहपतिं इमाहि गाथाहि अनुमोदित्वा उट्ठायासना पक्कामि। [B.336, R.385]

अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं आनन्दं भगवा एतदवोच—"हन्द! कुतो नु त्वं, आनन्द, आगच्छसि दिवादिवस्सा" ति?

"आयस्मता, भन्ते, सारिपुत्तेन अनाथपिण्डिको गहपति इमिना च इमिना च ओवादेन ओवदितो" ति।

"पण्डितो, आनन्द, सारिपुत्तो; महापञ्ञो, आनन्द, सारिपुत्तो, यत्र हि नाम चत्तारि सोतापत्तियङ्गानि दसहाकारेहि विभजिस्सती" ति॥ •

२७. दुतियअनाथपिण्डिकसुत्तं

२८. सावत्थिनिदानं। तेन खो पन समयेन अनाथपिण्डिको गहपति [N.329] आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति अञ्ञतरं पुरिसं आमन्तेसि—"एहि त्वं, अम्भो पुरिस, येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कम; उपसङ्कमित्वा मम वचनेन आयस्मतो आनन्दस्स पादे सिरसा वन्द—'अनाथपिण्डिको, भन्ते, गहपति आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। सो आयस्मतो आनन्दस्स पादे

"जिस की सङ्घ में श्रद्धा है, जिस की धारणाएँ (निश्चय) सरल हैं, उसे विद्वान् लोग 'अदरिद्र' कहते हैं तथा उस का जीवन सफल है॥

"अतः बुद्धिमान् पुरुष भगवान् की शिक्षा को स्मरण रखता हुआ अपने श्रद्धा, शील एवं स्पष्ट धर्मज्ञान की रक्षा करता हुआ उस से सम्पन्न रहे"॥

तब आयुष्मान् सारिपुत्र, अनाथपिण्डिक गृहपति को इन गाथाओं के माध्यम से धर्मपालनहेतु प्रोत्साहित कर, आसन से उठ कर (अपने साधनास्थल पर) चले आये।

तदनन्तर, आयुष्मान् आनन्द भगवान् के पास आये, तथा उन्हें प्रणाम कर उन को आयुष्मान् सारिपुत्र एवं अनाथपिण्डिक में हुआ उक्त धार्मिक संवाद सुनाया। भगवान् बोले—"आनन्द! सारिपुत्र तो बुद्धिमान् एवं महाप्राज्ञ है। उस ने चार स्रोतआपत्तिअङ्गों को दश भागों में विभक्त कर सुनाया है"॥ •

२७. द्वितीय अनाथपिण्डिकसूत्र : : चार धर्मों के पालन से निर्भयताप्राप्ति

२८. **श्रावस्ती में** ही...। उस समय अनाथपिण्डिक गृहपति किसी गम्भीर रोग से पीड़ित था। तब उस ने अपने किसी अनुचर को बुला कर कहा—'ओ पुरुष! तुम मेरे

सिरसा वन्दती' ति। एवं च वदेहि—'साधु किर, भन्ते, आयस्मा आनन्दो येन अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया''' ति।

''एवं, भन्ते'' ति खो सो पुरिसो अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स पटिस्सुत्वा येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो पुरिसो आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच— ''अनाथपिण्डिको, भन्ते, गहपति आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। सो आयस्मतो आनन्दस्स पादे सिरसा वन्दति। एवं च वदति—'साधु किर, भन्ते, आयस्मा आनन्दो येन अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया''' ति। अधिवासेसि खो आयस्मा आनन्दो तुण्हीभावेन।

अथ खो आयस्मा आनन्दो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने [B.337] निसीदि। निसज्ज खो आयस्मा आनन्दो अनाथपिण्डिकं गहपतिं एतदवोच— ''कच्चि ते, गहपति, खमनीयं कच्चि यापनीयं? कच्चि दुक्खा वेदना पटिक्कमन्ति, नो अभिक्कमन्ति; पटिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो अभिक्कमो'' ति?

''न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो'' ति।

[R.386] ''चतूहि खो, गहपति, धम्मेहि समन्नागतस्स अस्सुतवतो पुथुज्जनस्स होति उत्तासो, होति छम्भितत्तं, होति सम्परायिकं मरणभयं। कतमेहि चतूहि? इध, गहपति, [N.330] अस्सुतवा पुथुज्जनो बुद्धे अप्पसादेन समन्नागतो होति। तं च पनस्स बुद्धे अप्पसादं अत्तनि समनुपस्सतो होति उत्तासो, होति छम्भितत्तं, होति सम्परायिकं मरणभयं।

''पुन च परं, गहपति, अस्सुतवा पुथुज्जनो धम्मे अप्पसादेन समन्नागतो होति। तं

कहने से...पूर्ववत्...। आयुष्मान् आनन्द ने गृहपति आवास पर आना, मौन भाव से, स्वीकार कर लिया।

तब आयुष्मान् आनन्द पूर्वाह्ण में...पूर्ववत्...।

''गृहपति! इन चार धर्मों से युक्त होने के कारण, अज्ञ पृथग्जन को उद्विग्नता (घबराहट), शरीर में कम्पन तथा मृत्यु से भय होने लगता है। किन चार धर्मों से? उस की भगवान् तथागत में अश्रद्धा होती है। इस अश्रद्धा के कारण, उस को उद्विग्नता, शरीर में कम्पन एवं मरणभय होने लगता है।

च पनस्स धम्मे अप्पसादं अत्तनि समनुपस्सतो होति उत्तासो, होति छम्भितत्तं, होति सम्परायिकं मरणभयं।

''पुन च परं, गहपति, अस्सुतवा पुथुज्जनो सङ्घे अप्पसादेन समन्नागतो होति। तं च पनस्स सङ्घे अप्पसादं अत्तनि समनुपस्सतो होति उत्तासो, होति छम्भितत्तं, होति सम्परायिकं मरणभयं।

''पुन च परं, गहपति, अस्सुतवा पुथुज्जनो दुस्सील्येन समन्नागतो होति। तं च पनस्स दुस्सील्यं अत्तनि समनुपस्सतो होति उत्तासो, होति छम्भितत्तं, होति सम्परायिकं मरणभयं। इमेहि खो, गहपति, चतूहि धम्मेहि समन्नागतस्स अस्सुतवतो पुथुज्जनस्स होति उत्तासो, होति छम्भितत्तं, होति सम्परायिकं मरणभयं।

''चतूहि खो, गहपति, धम्मेहि समन्नागतस्स सुतवतो अरियसावकस्स न होति उत्तासो, न होति छम्भितत्तं, न होति सम्परायिकं मरणभयं। कतमेहि चतूहि? इध, गहपति, सुतवा अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। तं च पनस्स बुद्धे अवेच्चप्पसादं अत्तनि समनुपस्सतो न होति उत्तासो, न होति छम्भितत्तं, न होति सम्परायिकं मरणभयं। ''पुन च परं, गहपति, सुतवा अरियसावको धम्मे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो [B.338] होति—'स्वाक्खातो भगवता धम्मो...पे०...पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही ति। तं च पनस्स धम्मे अवेच्चप्पसादं अत्तनि समनुपस्सतो न होति उत्तासो, न होति छम्भितत्तं, न होति सम्परायिकं मरणभयं।

''पुन च परं, गहपति, सुतवा अरियसावको सङ्घे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो...पे०...अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा' ति। तं

...धर्म में अश्रद्धा होने के कारण...पूर्ववत्...।

...सङ्घ में अश्रद्धा होने के कारण...पूर्ववत्...।

...अपनी दु:शीलता के कारण...पूर्ववत्...।

(इस के विपरीत—) ''गृहपति! इन चार धर्मों से युक्त होने के कारण विद्वान् आर्यश्रावक को न कहीं उद्विग्नता होती है, न शरीर में कम्पन तथा न किसी प्रकार की मृत्यु का भय! किन चार धर्मों से? यहाँ, गृहपति! वह विद्वान् आर्यश्रावक भगवान् तथागत में श्रद्धा रखता है इस श्रद्धा के बल से न उस में किसी प्रकार की उद्विग्नता होती है न किसी भय से शरीर में कम्पन, तथा न किसी प्रकार का मृत्युभय।

...धर्म में श्रद्धा रखता है, इस श्रद्धा के बल पर...पूर्ववत्...।

च पनस्स सङ्घे अवेच्चप्पसादं अत्तनि समनुपस्सतो न होति उत्तासो, न होति छम्भितत्तं, न होति सम्परायिकं मरणभयं।

[N.331, R.387] "पुन च परं, गहपति, सुतवा अरियसावको अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। तानि च पनस्स अरियकन्तानि सीलानि अत्तनि समनुपस्सतो न होति उत्तासो, न होति छम्भितत्तं, न होति सम्परायिकं मरणभयं। इमेहि खो, गहपति, चतूहि धम्मेहि समन्नागतस्स सुतवतो अरियसावकस्स न होति उत्तासो, न होति छम्भितत्तं, न होति सम्परायिकं मरणभयं" ति।

"नाहं, भन्ते आनन्द, भायामि। क्याहं भायिस्सामि! अहं हि, भन्ते, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होमि—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होमि—'सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा' ति। यानि चिमानि, भन्ते, भगवता गिहिसामीचिकानि सिक्खापदानि देसितानि, नाहं तेसं किञ्चि अत्तनि खण्डं समनुपस्सामी" ति।

"लाभा ते, गहपति, सुलद्धं ते, गहपति! सोतापत्तिफलं तया, गहपति, ब्याकतं" ति॥ •

२८. पठमभयवेरूपसन्तसुत्तं

२९. सावत्थिनिदानं। एकमन्तं निसिन्नं खो अनाथपिण्डिकं गहपतिं भगवा एतदवोच—"यतो खो, गहपति, अरियसावकस्स पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि च

...सङ्घ में श्रद्धा रखता है, इस श्रद्धा के बल पर...पूर्ववत्...।

...शुद्ध शीलाचार के कारण जो...समाधि तक पहुँचाने वाले हैं, उन के बल पर न उस को कोई उद्विग्रता या न कोई शरीरकम्पन तथा न कोई मरणभय कष्ट देता है।"

"भन्ते! आनन्द! मुझे किसी से कोई भय नहीं है। फिर मैं किसी से क्यों डरूँ! मैं तो बहुत पहले से भगवान् में...धर्म में...सङ्घ में असीम श्रद्धा रखता हूँ जो लोक के लिये अद्वितीय पुण्यभूमि है। इन के अतिरिक्त भगवान् ने जो गृहस्थों के लिये पालनीय धर्म बताये हैं उन के पालन में मैं कहीं कोई प्रमाद नहीं करता।"

"तब तो, गृहपति! तुम्हें बहुत लाभ हुआ। तुम ने बहुत कुछ पा लिया। तुम ने तो अपने इस कथन में स्रोतआपत्तिफल का ही विवरण दे दिया"॥ •

२८. प्रथम वैरभयोपशान्तसूत्र : : आर्यश्रावक वैर एवं भय से दूर

२९. **श्रावस्ती में ही...**। एक ओर बैठे अनाथपिण्डिक गृहपति को भगवान् ने यों

होन्ति, चतूहि च सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति, अरियो चस्स ञायो पञ्ञाय सुदिट्ठो होति सुप्पटिविद्धो, सो आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—[B.339] 'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो; सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो'।

"कतमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति? यं, गहपति, पाणातिपाती पाणातिपातप्पच्चया दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति, सम्परायिकं पि भयं वेरं [R.388] पसवति, चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदियति। पाणातिपाता पटिविरतस्स एवं तं भयं वेरं वूपसन्तं होति। यं, गहपति, अदिन्नादायी...पे०...यं, गहपति, कामेसु-मिच्छाचारी...पे०...यं, गहपति, मुसावादी...पे०...यं, गहपति, सुरामेरयमज्जप्पमादट्ठायी [N.332] सुरामेरयमज्जप्पमादट्ठानप्पच्चया दिट्ठधम्मिकं पि भयं वेरं पसवति, सम्परायिकं पि भयं वेरं पसवति, चेतसिकं पि दुक्खं दोमनस्सं पटिसंवेदियति। सुरामेरय-मज्जप्पमादट्ठाना पटिविरतस्स एवं तं भयं वेरं वूपसन्तं होति। इमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति।

"कतमेहि चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति? इध, गहपति, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था

उपदेश किया—"गृहपति! जिस आर्यश्रावक के पाँच भय तथा वैर शान्त हो जाते हैं, वह चार स्रोतआपत्तिअङ्गों से युक्त हो जाता है, तथा आर्यज्ञान को जिस ने अपनी प्रज्ञाद्वारा भली भाँति देख लिया, सुप्रतिष्ठित कर लिया, वह यदि चाहे तो अपने विषय में यह घोषणा कर सकता है—'मेरा नरकपात नहीं होगा, न मैं पशुयोनि या प्रेतयोनि में जाऊँगा, मेरे लिये सभी तरह के दुर्गति के मार्ग क्षीण हो चुके हैं, मैं स्रोतआपन्न हो चुका हूँ, मैं धर्म से च्युत नहीं हो सकता, मुझे अवश्य ही सम्बोधि प्राप्त होगी।'

"कौन पाँच वैर तथा भय शान्त हो गये हैं? प्राणातिपाती (हिंसक) को ही, प्राणातिपात के कारण, इस लोक तथा परलोक में भय तथा वैर हुआ करते हैं; वह मानसिक क्लेश भी भोगता रहता है। प्राणातिपात से विरत (जीवहिंसा न करने वाले) के ये पाँचों वैर या भय शान्त हुए रहते हैं, वह किसी प्रकार का मानसिक क्लेश भी नहीं पाता। अदत्तादायी (चौर) को...कामभागों में मिथ्याचारी (व्यभिचारी) को...मृषावादी (असत्यभाषी) को...मद्य आदि पीने वाले को...पूर्ववत्... ये पाँच वैर तथा भय शान्त रहते हैं।

"किन चार स्रोतआपत्ति के अङ्गभूत धर्मों से युक्त होता है? भगवान् बुद्ध में

देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०.. समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति।

"कतमो चस्स अरियो ञायो पञ्ञाय सुदिट्ठो होति सुप्पटिविद्धो ? इध, गहपति, अरियसावको पटिच्चसमुप्पादञ्ञेव साधुकं योनिसो मनसि करोति—इति इमस्मिं सति इदं होति, इमस्सुप्पादा इदं उप्पज्जति; इति इमस्मिं असति इदं न होति, इमस्स निरोधा इदं निरुज्झति; यदिदं अविज्जापच्चया सङ्खारा, सङ्खारपच्चया विञ्ञाणं...पे०...एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स समुदयो होति। अविज्जाय त्वेव असेसविरागनिरोधा [R.389] सङ्खारनिरोधो...पे०...एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स निरोधो होति। अयमस्स अरियो ञायो पञ्ञाय सुदिट्ठो होति सुप्पटिविद्धो।

[B.340] "यतो खो, गहपति, अरियसावकस्स इमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति, इमेहि चतूहि सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति, अयं चस्स अरियो ञायो पञ्ञाय सुदिट्ठो होति सुप्पटिविद्धो। सो आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणापायदुग्गतिविनिपातो; सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो''' ति॥

२९. दुतियभयवेरूपसन्तसुत्तं

३०. सावत्थिनिदानं। "यतो खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स इमानि पञ्च भयानि वेरानि वूपसन्तानि होन्ति, इमेहि चतूहि च सोतापत्तियङ्गेहि समन्नागतो होति, अयं चस्स

श्रद्धा...धर्म में श्रद्धा...सङ्घ में श्रद्धा...आर्यजनों द्वारा प्रशंसित शीलाचार की सम्पन्नता—इन चार धर्मों से युक्त होता है।

"किस आर्यज्ञान को प्रज्ञा द्वारा यथार्थतः देख लेता है ? गृहपति! यहाँ कोई आर्यश्रावक प्रतीत्यसमुत्पाद का साधुतया मनन करता है—'इस के होने पर यह होता है', 'इस की उत्पत्ति से यह उत्पन्न होता है', तथा 'इस के न होने पर यह नहीं होता', 'इस के निरोध से यह निरुद्ध हो जाता है'; जैसे—अविद्या के कारण संस्कार, संस्कार के कारण विज्ञान...पूर्ववत्...यों, इस समस्त दुःखस्कन्ध का समुदय होता है। इसी तरह, अविद्या के निरोध से संस्कारों का निरोध ...पूर्ववत्...यों, इस समस्त दुःखस्कन्ध का निरोध हो जाता है। इस प्रज्ञाद्वारा इस आर्यज्ञान का यथार्थतः ज्ञान (साक्षात्कार) होता है।

क्यों कि, गृहपति! उस आर्यश्रावक के ये पाँच भय तथा वैर शान्त हो जाते हैं...पूर्ववत्... वह यह घोषणा कर सकता है—...पूर्ववत्...मुझे अवश्य ही सम्बोधि प्राप्त होगी"॥

अरियो ञायो पञ्ञाय सुदिट्ठो होति सुप्पटिविद्धो। सो आकङ्खमानो अत्तना व अत्तानं ब्याकरेय्य—'खीणनिरयोम्हि खीणतिरच्छानयोनि खीणपेत्तिविसयो खीणा- [N.333] पायदुग्गतिविनिपातो; सोतापन्नोहमस्मि अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो''' ति॥ •

३०. नन्दकलिच्छविसुत्तं

३१. एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागारसालायं। अथ खो नन्दको लिच्छविमहामत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो नन्दकं लिच्छविमहामत्तं भगवा एतदवोच—

''चतूहि खो, नन्दक, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो। कतमेहि चतूहि? इध, नन्दक, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति ×अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि खो, नन्दक, चतूहि धम्मेहि [N.333] समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो।

''इमेहि च पन, नन्दक, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको आयुना संयुत्तो होति दिब्बेन पि मानुसेन पि; वण्णेन संयुत्तो होति दिब्बेन पि मानुसेन पि; सुखेन संयुत्तो

---

२९. द्वितीय भयवैरोपशमसूत्र : : वैर-भयरहित पुद्गल

३०. **श्रावस्ती में** ही...। ...पूर्वसूत्रवत्...॥

(ऊपर वाले सूत्र के समान इस समस्त सूत्र का विस्तार कर लें।) •

३०. नन्दकलिच्छविसूत्र : : आध्यात्मिक स्नान

३१. एक समय भगवान् (बुद्ध) **वैशाली**स्थित महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजमान थे। तब लिच्छवियों का महामात्य नन्दक भगवान् के पास आया, तथा उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उस महामात्य नन्दक से भगवान् ने पूछा—

''नन्दक! चार धर्मों से युक्त कोई आर्यश्रावक 'स्रोतआपन्न' कहलाता है...ये चार धर्म कौन से हैं? यहाँ कोई आर्यश्रावक भगवान् तथागत में श्रद्धालु होता है...धर्म में...सङ्घ में श्रद्धालु होता है, उन के द्वारा प्रतिपादित शील से युक्त होता है...उस को सम्बोधि प्राप्त होना अवश्यम्भावी है।

''नन्दक! इन चार धर्मों से युक्त होने पर वह आर्यश्रावक दिव्य एवं मानुष आयु

होति दिब्बेन पि मानुसेन पि; यसेन संयुत्तो होति दिब्बेन पि मानुसेन पि; आधिपतेय्येन संयुत्तो होति दिब्बेन पि मानुसेन पि। तं खो पनाहं, नन्दक, नाञ्ञस्स समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा सुत्वा वदामि। अपि च यदेव मया सामं ञातं सामं दिट्ठं सामं विदितं तदेवाहं वदामी'' ति।

एवं वुत्ते अञ्ञतरो पुरिसो नन्दकं लिच्छविमहामत्तं एतदवोच—''नहानकालो, भन्ते'' ति।

''अलं दानि, भणे, एतेन बाहिरेन नहानेन। अलमिदं अज्झत्तं नहानं भविस्सति, यदिदं—भगवति पसादो'' ति॥

सरणानिवग्गो ततियो॥

तस्सुद्दानं

महानामेन द्वे वुत्ता, गोधा च सरणा दुवे।
दुवे अनाथपिण्डिका, दुवे वेरभयेन च।
लिच्छवी दसमो वुत्तो, वग्गो तेन पवुच्चती ति॥

से...वर्ण से..सुख से...यश से...ऐश्वर्य से सम्पन्न होता है। नन्दक! यह बात मैं तुम्हें किसी अन्य श्रमण या ब्राह्मण से सुन कर नहीं बता रहा हूँ, अपि तु जो मैंने स्वयं जाना, साक्षात्कार किया, उस को ही बता रहा हूँ।''

इसी समय उस के किसी अनुचर पुरुष ने वहाँ आ कर उस (नन्दक) महामात्य को यह कहा—''श्रीमन्! आप के स्नान का समय हो गया है।

''अरे! अब छोड़ो इस बाह्य स्नान की बात! मैं तो (भगवान् से उपदेश सुन कर) आध्यात्मिक स्नान से सुस्नात हूँ। भगवान् के प्रति श्रद्धा ही मेरे लिये आध्यात्मिक स्नान है''॥

शरणानिवर्ग तृतीय सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. प्रथम महानामसूत्र, २. द्वितीय महानामसूत्र, ३. गोधशाक्यसूत्र, ४. प्रथम शरणानिशाक्यसूत्र, ५. द्वितीय शरणानिशाक्यसूत्र, ६. प्रथम अनाथपिण्डिकसूत्र, ७. द्वितीय अनाथपिण्डिकसूत्र, ८. प्रथम भयवैरोपशान्तसूत्र, ९. द्वितीय भयवैरोपशान्तसूत्र एवं १०. नन्दकलिच्छविसूत्र॥

४. पुञ्ञाभिसन्दवग्गो चतुत्थो

३१. पठमपुञ्ञाभिसन्दसुत्तं

३२. सावत्थिनिदानं। "चत्तारोमे, भिक्खवे, पुञ्ञाभिसन्दा [N.334, R.391] कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। अयं पठमो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो।

"पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको धम्मे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'स्वाक्खातो भगवता धम्मो...पे०...पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही' ति। अयं दुतियो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो।

"पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको सङ्घे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो...पे०...अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा' ति। अयं ततियो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो।

"पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो [B.342] होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। अयं चतुत्थो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा" ति॥ ●

३२. दुतियपुञ्ञाभिसन्दसुत्तं

३३. "चत्तारोमे, भिक्खवे, पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा। कतमे

---

४. पुण्याभिष्यन्दवर्ग चतुर्थ

३१. प्रथम पुण्याभिष्यन्दसूत्र : : पुण्य के चार स्रोत

३२. **श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! ये चार पुण्य तथा कुशल के स्रोत प्राणियों के लिये सुखवर्धक हैं। कौन से चार? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक—

१. "भगवान् बुद्ध के प्रति असीम श्रद्धा रखता है...पूर्ववत्...।

२. "उन के द्वारा बताये गये धर्म के प्रति असीम श्रद्धा रखता है...पूर्ववत्...।

३. "उन के द्वारा स्थापित भिक्षुसङ्घ के प्रति असीम श्रद्धा रखता है...पूर्ववत्...।

४. "उन के द्वारा उपदिष्ट शील (सदाचार) से युक्त रहता है...पूर्ववत्...।

"भिक्षुओ! ये चार पुण्य एवं कुशल के स्रोत प्राणियों के सुखवर्धक हैं"॥ ●

३२. द्वितीय पुण्याभिष्यन्दसूत्र : : पुण्य के चार स्रोत

३३. ..."भिक्षुओ! ये चार पुण्य एवं कुशल के स्रोत प्राणियों के लिये सुखवर्धक

चत्तारो ? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि [R.392] सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। अयं पठमो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो।

''पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति मुत्तचागो पयतपाणि वोस्सग्गरतो याचयोगो दानसंविभागरतो। अयं चतुत्थो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा'' ति॥ •

३३. ततियपुञ्ञाभिसन्दसुत्तं

[N.335] ३४. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा। कतमे चत्तारो ? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। अयं पठमो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो।

''पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। अयं चतुत्थो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा'' ति॥ •

हैं। कौन से चार ? यहाँ, भिक्षुओ ! कोई आर्यश्रावक भगवान् बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति...श्रद्धा रखता है...। फिर, भिक्षुओ ! कोई आर्यश्रावक मल (विकार) एवं मात्सर्यरहित चित्त से गृहावास (गृहस्थधर्म का पालन) करता है; दानी, दानशील, त्याग में लगा हुआ, याचनायोग्य एवं दानक्रिया में चतुर है। यह चतुर्थ पुण्यस्रोत, कुशलस्रोत सुखवर्धक ही हैं। भिक्षुओ ! यही चार पुण्य के स्रोत हैं''॥ •

३३. तृतीय पुण्याभिष्यन्दसूत्र : : पुण्य के चार स्रोत

३४. ...पूर्ववत्...''यहाँ कोई आर्यश्रावक तथागत बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति असीम श्रद्धालु होता है...पूर्ववत्...प्रज्ञावान् होता है। 'सभी धर्म उत्पाद एवं विनाश वाले हैं'—इस प्रज्ञा से युक्त होता है। वह ऐसी श्रेष्ठ एवं तीक्ष्ण प्रज्ञा से युक्त होता है जिस से सभी दुःखों का क्षय हो जाय—यह चतुर्थ पुण्यस्रोत है जो कुशल का स्रोत एवं सुखवर्धक है''॥ •

३४. पठमदेवपदसुत्तं

३५. सावत्थिनिदानं। चत्तारिमानि, भिक्खवे, देवानं देवपदानि अवि- [B.343] सुद्धानं सत्तानं विसुद्धिया अपरियोदातानं सत्तानं परियोदपनाय। कतमानि चत्तारि? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। इदं पठमं देवानं देवपदं अविसुद्धानं सत्तानं विसुद्धिया अपरियोदातानं सत्तानं परियोदपनाय।

"पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...पुन च [R.393] परं, भिक्खवे, अरियसावको अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि ...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। इदं चतुत्थं देवानं देवपदं अविसुद्धानं सत्तानं विसुद्धिया अपरियोदातानं सत्तानं परियोदपनाय। इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि देवानं देवपदानि अविसुद्धानं सत्तानं विसुद्धिया अपरियोदातानं सत्तानं परियोदपनाया" ति॥ •

३५. दुतियदेवपदसुत्तं

३६. "चत्तारिमानि, भिक्खवे, देवानं देवपदानि अविसुद्धानं सत्तानं विसुद्धिया अपरियोदातानं सत्तानं परियोदपनाय। कतमानि चत्तारि? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था [N.336] देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। सो इति पटिसञ्चिक्खति—'किं नु खो देवानं देवपदं' ति? सो एवं पजानाति—'अब्यापज्झपरमे ख्वाहं एतरहि देवे सुणामि। न च खो पनाहं

---

३४. प्रथम देवपदसूत्र : : चार देवपद

३५. **श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! ये चार देवताओं के देवपद हैं, जो मलिन चित्तवृत्ति वाले प्राणियों को उदारचित्त बनाते हैं तथा जो दुर्बुद्धि पुरुषों को सद्बुद्धि प्रदान करते हैं। कौन से चार? **प्रथम**— भगवान् बुद्ध के प्रति अगाध श्रद्धा...। **द्वितीय**—धर्म के प्रति...। **तृतीय**—सङ्घ के प्रति अगाध श्रद्धा एवं **चतुर्थ**—आर्यजनोचित सदाचार से सम्पृक्त होना—ये चार देवपद (देवचरित्र से प्राप्त शिक्षा) हैं जो व्यवहार में लाये जाने पर, मलिनचित्त को शुद्धचित्त बनाने में समर्थ हैं"॥ •

३५. द्वितीय देवपदसूत्र : : चार देवपद

३६. ..."भिक्षुओ! मलिनचित्त प्राणियों की चित्तविशुद्धि के लिये देवताओं के ये चार देवपद हैं। कौन से चार? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक भगवान् बुद्ध के प्रति यों अगाध श्रद्धा रखता है...पूर्ववत्...। वह यों विचारता है—यह देवताओं का देवपद क्या है?' मैं देवताओं को विहिंसाविरत सुनता हूँ। मैं भी अब किसी जलचर या स्थलचर प्राणी को किसी प्रकार कष्ट नहीं पहुँचाता। अत: मैं भी अवश्य उस देवताओं द्वारा आचरित धर्म

किञ्चि ब्याबाधेमि तसं वा थावरं वा। अद्धाहं देवपदधम्मसमन्नागतो विहरामी' ति। इदं पठमं देवानं देवपदं अविसुद्धानं सत्तानं विसुद्धिया अपरियोदातानं सत्तानं परियोदपनाय।

"पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि ...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। सो इति पटिसञ्चिक्खति—'किं नु खो देवानं देवपदं' [B.344] ति? सो एवं पजानाति—'अब्यापज्झपरमे ख्वाहं एतरहि देवे सुणामि। न खो [R.394] पनाहं किञ्चि ब्याबाधेमि तसं वा थावरं वा। अद्धाहं देवपदधम्मसमन्नागतो विहरामी' ति। इदं चतुत्थं देवानं देवपदं अविसुद्धानं सत्तानं विसुद्धिया अपरियोदातानं सत्तानं परियोदपनाय। इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि देवानं देवपदानि अविसुद्धानं सत्तानं विसुद्धिया अपरियोदातानं सत्तानं परियोदपनाया" ति॥ •

३६. देवसभागतसुत्तं

३७. "चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतं अत्तमना देवा सभागतं कथेन्ति। कतमेहि चत्तारि? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। या ता देवता बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागता इतो चुता तत्रूपपन्ना तासं एवं होति—'यथारूपेन खो मयं बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागता ततो चुता इधूपपन्ना, अरियसावको पि तथारूपेन बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो एहिति देवानं सन्तिके' ति।

"पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। या ता देवता

का आचरण कर रहा हूँ। यह देवताओं का प्रथम देवपद है, जो मलिनचित्त प्राणियों की चित्तविशुद्धि के लिये सर्वोत्तम है।

"फिर, भिक्षुओ! वही आर्यश्रावक धर्म में...सङ्घ में...शीलाचार में...पूर्ववत्...। यह चतुर्थ देवपद है जो..."॥ •

३६. देवसभागतसूत्र : : देवता भी स्वागत करते हैं

३७. ..."भिक्षुओ! चार धर्मों से युक्त मनुष्य के लिये देवता भी 'स्वागत' शब्द कहते हैं। कौन से चार? यहाँ कोई आर्यश्रावक तथागत बुद्ध में असीम श्रद्धा...। उस के विषय में वे देवता सोचते हैं—'हम जिस भगवान् के प्रति श्रद्धा रखने के प्रभाव से यहाँ उत्पन्न हुए हैं उसी श्रद्धा के प्रभाव से यह आर्यश्रावक भी सम्पन्न है, अत: यह भी हमारी सभा नें स्वागतयोग्य है।'

अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागता इतो चुता तत्रूपपन्ना तासं एवं होति—'यथारूपेहि खो मयं अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागता ततो चुता इधूपपन्ना, अरियसावको पि [N.337] तथारूपेहि अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो एहिति देवानं सन्तिके' ति। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतं अत्तमना देवा सभागतं कथेन्ती'' ति॥ •

३७. महानामसुत्तं

३८. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं निग्रोधारामे। [R.395] अथ खो महानामो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो महानामो सक्को भगवन्तं एतदवोच— ''कित्तावता नु खो, भन्ते, उपासको होती'' ति?

''यतो खो, महानाम, बुद्धं सरणं गतो होति, धम्मं सरणं गतो होति, सङ्घं सरणं गतो होति—एत्तावता खो, महानाम, उपासको होती'' ति। [B.345]

''कित्तावता पन, भन्ते, उपासको सीलसम्पन्नो होती'' ति?

''यतो खो, महानाम, उपासको पाणातिपाता पटिविरतो होति, अदिन्नादाना पटिविरतो होति, कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति, मुसावादा पटिविरतो होति, सुरामेरयमज्जप्पमादट्ठाना पटिविरतो होति—एत्तावता खो, महानाम, उपासको सीलसम्पन्नो होती'' ति।

''कित्तावता पन, भन्ते, उपासको सद्धासम्पन्नो होती'' ति?

''पुनः, भिक्षुओ! वह आर्यश्रावक धर्म में...सङ्घ में...शीलाचरण में असीम श्रद्धा रखता है। उस के विषय में वे देवता तब यह सोचते हैं—...पूर्ववत्...स्वागतयोग्य है''॥•

३७. महानामसूत्र : : वास्तविक उपासक की विशेषता

३८. एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्य प्रदेश की **कपिलवस्तु** नगरी के न्यग्रोधाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय शाक्य महानाम भगवान् के पास आये, तथा उन्हें प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठ कर उन्होंने भगवान् से पूछा—''भन्ते! किन विशेषताओं से कोई 'उपासक' कहलाता है?''

''जब, महानाम! कोई आर्यश्रावक बुद्ध की शरण में, धर्म की शरण में, सङ्घ की शरण में आ जाता है, तब वह 'उपासक' कहलाता है।''

''भन्ते! कैसे कोई उपासक शीलसम्पन्न कहलाता है?''

''कोई उपासक जब प्राणातिपात, अदत्तादान (चौरी), मृपावाद (असत्यभाषण), व्यभिचार एवं मद्यपान आदि से विरत हो जाता है—तब उस को 'शीलसम्पन्न' कहते हैं।''

"इध, महानाम, उपासको सद्धो होति, सद्दहात तथागतस्स बोधिं—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। एत्तावता खो, महानाम, उपासको सद्धासम्पन्नो होती" ति।

"कित्तावता पन, भन्ते, उपासको चागसम्पन्नो होती" ति ?

"इध, महानाम, उपासको विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति मुत्तचागो पयतपाणि वोस्सग्गरतो याचयोगो दानसंविभागरतो—एत्तावता खो, महानाम, उपासको चागसम्पन्नो होती" ति।

"कित्तावता पन, भन्ते, उपासको पञ्ञासम्पन्नो होती" ति ?

"इध, महानाम, उपासको पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया—एत्तावता खो, महानाम, उपासको पञ्ञासम्पन्नो होती" ति॥ •

३८. वस्सुत्तं

[N.338, R.396] ३९. "सेय्यथापि, भिक्खवे, उपरिपब्बते थुल्लफुसितके देवे वस्सन्ते तं उदकं यथानिन्नं पवत्तमानं पब्बतकन्दरपदरसाखा परिपूरेति, पब्बतकन्दरपदरसाखा

"भन्ते! किस गुण से वह उपासक 'श्रद्धासम्पन्न' कहलाता है ?"

"यहाँ, महानाम! कोई उपासक भगवान् बुद्ध के प्रति श्रद्धालु होता है, उन के द्वारा उपदिष्ट ज्ञान के प्रति श्रद्धा रखता है...पूर्ववत्...। ऐसा वह 'श्रद्धासम्पन्न' कहलाता है।"

"भन्ते! वह 'त्यागसम्पन्न' कैसे कहलाता है ?"

"यहाँ, महानाम! कोई उपासक 'त्यागसम्पन्न' तब कहलाता है जब वह निर्मल चित्त एवं मात्सर्यविरहित हो कर गृहस्थ के कार्यों में व्यापृत रहता है, मुक्त हस्त से दान करता है, दान में उत्साह रखता है, त्याग की मनोवृत्ति वाला होता है, दान के विभाजन में निरन्तर लगा रहता है, ऐसा पुरुष 'त्यागसम्पन्न' कहलाता है।"

"भन्ते! वह उपासक 'प्रज्ञासम्पन्न' कैसे कहलाता है ?"

"यहाँ, महानाम! कोई उपासक प्रज्ञावान् होता है, उत्पाद-विनाश को प्रज्ञापूर्वक जानता है, आर्यनिर्वाण तक पहुँचाने वाली तथा दुःखक्षय का सम्यग् ज्ञान कराने वाली प्रज्ञा से युक्त है, ऐसा उपासक 'प्रज्ञासम्पन्न' कहलाता है।" •

३८. वर्षासूत्र : : आश्रवक्षय के साधक धर्म

३९. ..."जैसे, भिक्षुओ! किसी पर्वत पर मोटी मोटी बूँदों वाली वर्षा हो, उस वर्षा का जल पर्वत से नीचे बहता हुआ उस पर्वत की कन्दराओं को, खोलों को, नालियों को

परिपूरा कुसोब्भे परिपूरेन्ति, कुसोब्भा परिपूरा महासोब्भे परिपूरेन्ति, महासोब्भा परिपूरा कुन्नदियो परिपूरेन्ति, कुन्नदियो परिपूरा महानदियो परिपूरेन्ति, महानदियो परिपूरा महासमुद्दं परिपूरेन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स यो च बुद्धे [B.346] अवेच्चप्पसादो यो च धम्मे अवेच्चप्पसादो यो च सङ्घे अवेच्चप्पसादो यानि च अरियकन्तानि सीलानि—इमे धम्मा सन्दमाना पारं गन्त्वा आसवानं खयाय संवत्तन्ती'' ति॥ •

३९. काळिगोधसुत्तं

४०. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं निग्रोधारामे। अथ खो भगवा पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन काळिगोधाय साकियानिया निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। अथ खो काळिगोधा साकियानी येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो काळिगोधं साकियानिं भगवा एतदवोच—''चतूहि खो, गोधे, धम्मेहि समन्नागता अरियसाविका सोतापन्ना होति अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा। कतमेहि चतूहि? इधं, गोधे, अरियसाविका बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागता होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो [R.397] भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति

भरता हुआ नीचे छोटी तलैयाओं को भरता है, बड़े सरोवरों को पूर्ण करता है, छोटी नदियों को भरता है, बड़ी नदियों को भरता है; इस तरह, वह महानदियों को पूर्ण करता हुआ महासमुद्र में मिल कर उसे भी पूर्ण कर देता है। उसी तरह, भिक्षुओ! आर्यश्रावक की भगवान् बुद्ध में श्रद्धा, धर्म तथा सङ्घ में श्रद्धा, तथा आर्यजनोचित शील—ये धर्म बहते हुए, आगे बढ़ते हुए उस के चित्तविकारों को क्षीण करने में समर्थ हो जाते हैं''॥ •

३९. कालिगोधसूत्र : : स्रोतआपन्न के चार धर्म

४०. एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्य प्रदेश की **कपिलवस्तु** नगरी के न्यग्रोधाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। तब भगवान् (किसी दिन) पूर्वाह्ण में, वस्त्र व्यवस्थित कर, पात्रचीवर ले कर, कालिगोधा शाकियानी के घर गये। वहाँ प्रज्ञप्त आसन पर विराजे। तब कालिगोधा शाकियानी भगवान् के सम्मुख आयी, तथा भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गयी। तब उस को भगवान् ने यह बताया—''गोधे! चार धर्मों से युक्त ही कोई आर्य-श्राविका 'स्रोतआपन्न' कहला सकती है। किन चार धर्मों से? गोधे! यहाँ कोई आर्यश्राविका भगवान् बुद्ध में यथा प्रगाढ़ श्रद्धा रखती हुई...धर्म में...सङ्घ में...तथा निर्मलचित्त होकर

मुत्तचागा पयतपाणिनी वोस्सग्गरता याचयोगा दानसंविभागरता। इमेहि खो, गोधे, चतूहि धम्मेहि समन्नागता अरियसाविका सोतापन्ना होति अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा'' ति।

''यानिमानि, भन्ते, भगवता चत्तारि सोतापत्तियङ्गानि देसितानि, संविज्जन्ते ते धम्मा मयि, अहं च तेसु धम्मेसु सन्दिस्सामि। अहं हि, भन्ते, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागता—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...यं खो पन किञ्चि कुले देय्यधम्मं सब्बं तं अप्पटिविभत्तं सीलवन्तेहि कल्याणधम्मेही'' ति।

''लाभा ते, गोधे, सुलद्धं ते, गोधे! सोतापत्तिफलं तया, गोधे, ब्याकतं'' ति॥●

४०. नन्दियसक्कसुत्तं

४१. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं निग्रोधारामे। अथ खो नन्दियो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं [B.347] निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो नन्दियो सक्को भगवन्तं एतदवोच—''यस्सेव नु खो, भन्ते, अरियसावकस्स चत्तारि सोतापत्तियङ्गानि सब्बेन सब्बं सब्बथा सब्बं नत्थि, स्वेव नु खो, भन्ते, अरियसावको पमादविहारी'' ति।

'''यस्स खो, नन्दिय, चत्तारि सोतापत्तियङ्गानि सब्बेन सब्बं सब्बथा सब्बं नत्थि तमहं बाहिरो पुथुज्जनपक्खे ठितो' ति वदामि। अपि च, नन्दिय, यथा अरियसावको पमादविहारी चेव होति अप्पमादविहारी च तं सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि;

गृहस्थधर्म का पालन त्यागपूर्वक...दान करने में लगी रहती है। गोधे! इन चार धर्मों से युक्त आर्यश्राविका ही 'स्रोतआपन्न' कहलाती है। ...सम्बोधि प्राप्त हो जाती है।''

''भन्ते! आप ने जिन चार धर्मों का उपदेश किया, इन चारों ही धर्मों के पालन में मैं उत्साहित रहती हूँ। ...''

''गोधे! तब तो तुम बहुत लाभ में हो। तुम ने बहुत कुछ पा लिया। तुम जिन धर्मों की साधना स्वीकार कर रही हो, ये सब 'स्रोतआपन्न' साधक के धर्म हैं''॥ •

४०. नन्दियशाक्यसूत्र : : प्रमादयुक्त तथा अप्रमादयुक्त साधना

४१. एक समय...पूर्वसूत्रवत्...। तब नन्दिय शाक्य वहाँ आया...उस ने भगवान् से पूछा—''जिस साधक ने चार स्रोतआपत्ति धर्मों की किसी भी तरह कुछ भी साधना नहीं की, वह 'प्रमादविहारी साधक' कहलाता है ना?''

''हाँ, नन्दिय! ...ऐसे साधक को मैं 'बाह्य प्रमादविहारी' कहता हूँ। नन्दिय! अब

भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो नन्दियो सक्को भगवतो पच्चस्सोसि। [R.398] भगवा एतदवोच—

''कथं च, नन्दिय, अरियसावको पमादविहारी होति? इध नन्दिय, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। सो तेन बुद्धे अवेच्चप्पसादेन सन्तुट्ठो न उत्तरि वायमति दिवा पविवेकाय रत्तिं पटिसल्लानाय। तस्स एवं पमत्तस्स विहरतो पामोज्जं न होति। पामोज्जे असति, पीति न होति। पीतिया असति, पस्सद्धि न होति। पस्सद्धिया असति, दुक्खं विहरति। दुक्खिनो चित्तं न समाधियति। असमाहिते चित्ते धम्मा न पातुभवन्ति। धम्मानं अपातुभावा 'पमादविहारी' त्वेव सङ्खं गच्छति।

''पुन च परं, नन्दिय, अरियसावको धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरिय-[N.340] कन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। सो तेहि अरियकन्तेहि सीलेहि सन्तुट्ठो न उत्तरि वायमति दिवा पविवेकाय रत्तिं पटिसल्लानाय। तस्स एवं पमत्तस्स विहरतो पामोज्जं न होति। पामोज्जे असति, पीति न होति। पीतिया असति, पस्सद्धि न होति। पस्सद्धिया असति, दुक्खं विहरति। दुक्खिनो चित्तं न समाधियति। असमाहिते चित्ते धम्मा न पातुभवन्ति। धम्मानं अपातुभावा पमादविहारी त्वेव सङ्खं गच्छति। एवं खो, नन्दिय, अरियसावको पमादविहारी होति।

मैं तुम्हें 'प्रमादविहारी' एवं 'अप्रमादविहारी' साधक का भेद बताता हूँ, उसे ध्यानपूर्वक सुनो। ठीक से मन में बैठा लो।''

''अच्छा, भन्ते!''

भगवान् बोले—''नन्दिय! कैसे कोई साधक कैसे 'प्रमादविहारी' होता है? यहाँ, नन्दिय! कोई साधक भगवान् में ऐसे दृढ श्रद्धा तो रखता है...; परन्तु वह इस से आगे की साधना पर विचार नहीं करता और दिन में एकान्त तथा रात्रि में ध्यानाभ्यास की अपने लिये अपेक्षा नहीं समझता। इस प्रकार, प्रमादपूर्वक साधना करने से प्रमोद (हर्ष) नहीं होता, इस कारण उसे प्रीति भी उत्पन्न नहीं होती। प्रीति न होने से उस की काया शान्त नहीं होती। यह शान्ति न मिलने से उस की वह साधना उस के लिये दुःखदायी ही रह जाती है। यों, उस दुःखी पुरुष का चित्त समाहित नहीं होता। चित्त के समाहित न होने से उस में धर्म भी प्रकट नहीं होते। धर्मों के प्रकट न होने से वह 'प्रमादविहारी' कहलाता है।

''धर्म में दृढ श्रद्धा...सङ्घ में दृढ श्रद्धा...पूर्ववत्...श्रेष्ठ शीलों से युक्त...पूर्ववत्...। वह 'प्रमादविहारी' कहलाता है।

"कथं च, नन्दिय, अरियसावको अप्पमादविहारी होति? इध नन्दिय, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। सो तेन बुद्धे अवेच्चप्पसादेन असन्तुट्ठो उत्तरि वायमति [B.348] दिवा पविवेकाय रत्तिं पटिसल्लानाय। तस्स एवं अप्पमत्तस्स विहरतो पामोज्जं जायति। पमुदितस्स पीति जायति। पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति। पस्सद्धकायो सुखं [R.399] वेदियति। सुखिनो चित्तं समाधियति। समाहिते चित्ते धम्मा पातुभवन्ति। धम्मानं पातुभावा 'अप्पमादविहारी' त्वेव सङ्ख्यं गच्छति।

"पुन च परं, नन्दिय, अरियसावको धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। सो तेहि अरियकन्तेहि सीलेहि असन्तुट्ठो उत्तरि वायमति दिवा पविवेकाय रत्तिं पटिसल्लानाय। तस्स एवं अप्पमत्तस्स विहरतो पामोज्जं जायति। पमुदितस्स पीति जायति। पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति। पस्सद्धकायो सुखं वेदियति। सुखिनो चित्तं समाधियति। समाहिते चित्ते धम्मा पातुभवन्ति। धम्मानं पातुभावा 'अप्पमादविहारी' त्वेव सङ्ख्यं गच्छति। एवं खो, नन्दिय, अरियसावको 'अप्पपमादविहारी' होती" ति॥ •

पुञ्ञाभिसन्दवग्गो चतुत्थो॥

तस्सुद्दानं

अभिसन्दा तयो वुत्ता, दुवे देवपदानि च।
सभागतं महानामो, वस्सं काळी च नन्दिया॥ ति॥ •

"नन्दिय! कैसा आर्यश्रावक 'अप्रमादविहारी' कहलाता है?"

"यहाँ, नन्दिय! आर्यश्रावक तथागत बुद्ध में इस तरह अपार श्रद्धा रखता हुआ...पूर्ववत्...। वह उस श्रद्धा से ही सन्तुष्ट न हो कर आगे साधनाहेतु प्रयास करता है— दिन में एकान्तवास तथा रात्रि में ध्यानाभ्यास करता है। यों उस के, अप्रमादपूर्वक साधना करने से उसे अपूर्व प्रमोद होता है। प्रमोद से प्रीति एवं प्रीति से कायिक शान्ति मिलती है। इस शान्ति से वह सुखी होता है। सुख से उस का चित्त समाहित होता है। समाहित चित्त में धर्म प्रादुर्भूत होते हैं। धर्मों के प्रादुर्भाव से वह साधक 'अप्रमादविहारी' कहलाता है। इस तरह, नन्दिय! साधक को 'अप्रमादविहारी' कहा जाना चाहिये"॥ •

पुण्याभिष्यन्दवर्ग चतुर्थ सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची— १. प्रथम पुण्याभिष्यन्दसूत्र, २. द्वितीय पुण्याभिष्यन्दसूत्र, ३. तृतीय पुण्याभिष्यन्दसूत्र, ४. प्रथम देवपदसूत्र, ५. द्वितीय देवपदसूत्र, ६. देवसभागतसूत्र, ७. महानामसूत्र, ८. वर्षासूत्र, ९. कालिगोधसूत्र एवं १०. नन्दियसूत्र॥•

५. सगाथकपुञ्ञाभिसन्दवग्गो पञ्चमो

४१. पठमअभिसन्दसुत्तं

४२. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्सा-[N.341] हारा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। अयं पठमो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो।

''पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...पुन च [B.349] परं, भिक्खवे, अरियसावको अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०... समाधिसंवत्तनिकेहि। अयं चतुत्थो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्सा-[R.400] हारो। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा।

''इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि पुञ्ञाभिसन्देहि कुसलाभिसन्देहि समन्नागतस्स अरियसावकस्स न सुकरं पुञ्ञस्स पमाणं गणेतुं—'एत्तको पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो' ति। अथ खो असङ्ख्येय्यो अप्पमेय्यो महापुञ्ञक्खन्धो त्वेव सङ्ख्यं गच्छति।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, महासमुद्दे न सुकरं उदकस्स पमाणं गणेतुं—'एत्तकानि उदकाळ्हकानी' ति वा 'एत्तकानि उदकाळ्हकसतानी' ति वा 'एत्तकानि उदकाळ्हकसहस्सानी' ति वा 'एत्तकानि उदकाळ्हकसतसहस्सानी' ति वा ति। अथ खो

---

५. सगाथकपुण्याभिष्यन्दवर्ग पञ्चम

४१. प्रथम पुण्याभिष्यन्दसूत्र : : पुण्य के चार स्रोत

४२. ...''भिक्षुओ! ये चार पुण्य एवं कुशल धर्मों के स्रोत सुखवर्धक हैं। कौन से चार? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक भगवान् बुद्ध में...। यह प्रथम पुण्यस्रोत...है। फिर, भिक्षुओ! धर्म में...सङ्घ में...समाधि तक पहुँचाने वाले, अखण्ड, अछिद्र शीलों से युक्त होता है—यह चतुर्थ पुण्यस्रोत...है।

''भिक्षुओ! इन चारों पुण्यस्रोतों से युक्त आर्यश्रावक के पुण्यों की गणना असम्भव है कि उस ने इतना पुण्य प्राप्त किया या इतना कुशल किया या वे इतने सुखवर्धक हुए। यों, उस के पुण्य एवं कुशल असङ्ख्य (अगणनीय), अपरिमेय, महापुण्याभिष्यन्द एवं कुशलाभिष्यन्द की गणना में ही आते हैं।

''भिक्षुओ! जैसे महासमुद्र के जल की संख्या या परिमाण को ज्ञात नहीं किया जा सकता कि इस में इतने आढक जल है या इतने हजार लाख आढक जल है। उस जल को

असङ्ख्येय्यो अप्पमेय्यो महाउदकक्खन्धो त्वेव सङ्ख्यं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, इमेहि चतूहि पुञ्ञाभिसन्देहि कुसलाभिसन्देहि समन्नागतस्स अरियसावकस्स न सुकरं पुञ्ञस्स पमाणं गणेतुं—'एत्तको पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो' ति। अथ खो असङ्ख्येय्यो अप्पमेय्यो महापुञ्ञक्खन्धो त्वेव सङ्ख्यं गच्छती'' ति।

४३. इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—

''महोदधिं अपरिमितं महासरं, बहुभेरवं रतनगणानमालयं।
नज्जो यथा नरगणसङ्घसेविता, पुथू सवन्ती उपयन्ति सागरं॥

[N.342]''एवं नरं अन्नपानवत्थददं, सेय्यानिपच्चत्थरणस्स दायकं।
पुञ्ञस्स धारा उपयन्ति पण्डितं, नज्जो यथा वारिवहा व सागरं'' ति॥ •

४२. दुतियअभिसन्दसुत्तं

[B.350, R.401] ४४. ''चत्तारोमे, भिक्खवे, पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा। कतमे चत्तारो? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति। अयं पठमो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो।

''पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति मुत्तचागो पयतपाणि वोस्सग्गरतो याचयोगो दानसंविभागरतो। अयं चतुत्थो पुञ्ञाभिसन्दो

असङ्ख्य एवं अपरिमेय जल ही कहा जाता है। उसी तरह, इन चारों पुण्याभिष्यन्दों एवं कुशलाभिष्यन्दों का परिमाण...असङ्ख्य तथा अपरिमेय जल ही कहा जा सकता है।

४३. भगवान् यह बोले। इस के साथ ही गाथाओं के माध्यम से उन्होंने यह भी कहा—

''जैसे, मनुष्यों के विविध उपयोग में आने वाली नदियाँ सरलता से बहती हुई अगाध महासरोवरतुल्य, भयङ्कर गर्जना वाले, रत्नों के आकर (खजाना) रूप महासमुद्र में आ कर मिल जाती हैं॥

''वैसे ही, अन्न पान वस्त्र के दाता, बिछौना सहित शय्या एवं चादर का दान करने वाले बुद्धिमान् पुरुष में ये पुण्यधाराएँ एवं कुशलधाराएँ उसी तरह आ कर गिरती हैं, जैसे महानदियाँ महासमुद्र में सरलता से जा गिरती हैं''॥ •

४२. द्वितीय अभिष्यन्दसूत्र : : पुण्य के चार स्रोत

४४. ...''भिक्षुओ! ये चार पुण्यस्रोत एवं कुशलस्रोत सुखवर्धक होते हैं। कौन से

कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा।

''इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि पुञ्ञाभिसन्देहि कुसलाभिसन्देहि समन्नागतस्स अरियसावकस्स न सुकरं पुञ्ञस्स पमाणं गणेतुं—'एत्तको पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो' ति। अथ खो असङ्ख्येय्यो अप्पमेय्यो महापुञ्ञक्खन्धो त्वेव सङ्ख्यं गच्छति।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, यत्थिमा महानदियो संसन्दन्ति समेन्ति, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही, तत्थ न सुकरं उदकस्स पमाणं गणेतुं—'एत्तकानि उदकाळ्हकानी' ति वा 'एत्तकानि उदकाळ्हकसतानी' ति वा 'एत्तकानि उदकाळ्हकसहस्सानी' ति वा 'एत्तकानि उदकाळ्हकसतसहस्सानी' ति वा ति। अथ खो असङ्ख्येय्यो अप्पमेय्यो महाउदकक्खन्धो त्वेव सङ्ख्यं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, इमेहि चतूहि पुञ्ञाभिसन्देहि कुसलाभिसन्देहि समन्नागतस्स अरियसावकस्स न सुकरं पुञ्ञस्स पमाणं गणेतुं—'एत्तको पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो [N.343] सुखस्साहारो' ति। अथ खो असङ्ख्येय्यो अप्पमेय्यो महापुञ्ञक्खन्धो त्वेव सङ्ख्यं गच्छती'' ति।

४५. इदमवोच भगवा...पे०...सत्था—

''महोदधिं अपरिमितं महासरं, बहुभेरवं रतनगणानमालयं।
नज्जो यथा नरगणसङ्घसेविता, पुथू सवन्ती उपयन्ति सागरं॥

''एवं नरं अन्नपानवत्थददं, सेय्यानिपच्चत्थरणस्स दायकं। [B.351]
पुञ्ञस्स धारा उपयन्ति पण्डितं, नज्जो यथा वारिवहा व सागरं'' ति॥ •

चार ? यहाँ, भिक्षुओ ! कोई आर्यश्रावक बुद्ध में...धर्म में...सङ्घ में...त्यागयुक्त शील धारण करता है—इस तरह, ये चार पुण्यस्रोत एवं कुशलस्रोत सुखवर्धक होते हैं।

''इन चार धर्मों से युक्त आर्यश्रावकों का पुण्य गणना या परिमाण में नहीं मापा जा सकता। जैसे, भिक्षुओ ! गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू एवं मही—इन पाँचों नदियों का जल परिमाण में मापा नहीं जा सकता...उसी तरह आर्यश्रावक का पुण्य...नहीं मापा जा सकता।''

४५. भगवान् यों बोले। अथ च, उन्होंने गाथाओं के माध्यम से यह कहा—
...पूर्वसूत्रवत्...॥ •

४३. ततियअभिसन्दसुत्तं

४६. "चत्तारोमे, भिक्खवे, पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा। कतमे चत्तारो ? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। अयं पठमो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो।

[R.402] "पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। अयं चतुत्थो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो। इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा।

"इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि पुञ्ञाभिसन्देहि कुसलाभिसन्देहि समन्नागतस्स अरियसावकस्स न सुकरं पुञ्ञस्स पमाणं गणेतुं—'एत्तको पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो' ति। अथ खो असङ्ख्येय्यो अप्पमेय्यो महापुञ्ञक्खन्धो त्वेव सङ्ख्यं गच्छती" ति।

४७. इदमवोच भगवा...पे०...सत्था—

"यो पुञ्ञकामो कुसले पतिट्ठितो, भावेति मग्गं अमतस्स पत्तिया।
[N.344] सो धम्मसाराधिगमो खये रतो, न वेधति मच्चुराजागमनस्मिं"॥ ति॥ •

४४. पठममहद्धनसुत्तं

[B.352] ४८. "चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको 'अड्ढो महद्धनो महाभोगो' ति वुच्चति।

"कतमेहि चतूहि ? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्ना-

---

४३. तृतीय अभिष्यन्दसूत्र : : पुण्य के चार स्रोत

४६. ..."भिक्षुओ ! ये चार पुण्यस्रोत बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति... प्रज्ञावान् होता है।

"भिक्षुओ ! इन चार पुण्यों से युक्त आर्यश्रावक के विषय में यह कहना कठिन है...। उस का वह महापुण्य अपरिमेय तथा असङ्ख्य कहलाता हैं।"

४७. भगवान् यों बोले। पुन: गाथाओं के माध्यम से उन्होंने यह भी कहा—

"जो पुण्याभिकांक्षी है, कुशल धर्मों में प्रतिष्ठित है, अमृत (निर्वाण) की प्राप्तिहेतु जिस ने आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग की साधना पूर्ण कर ली है, जिस ने धर्मसार (धर्मतत्त्व) अधिगत कर लिया है, उस को, मृत्यु सामने आने पर भी, कोई भय नहीं लगता"॥ •

गतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे ...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०... समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको 'अड्ढो महद्धनो महाभोगो' ति वुच्चती'' ति॥ •

४५. दुतियमहद्धनसुत्तं

४९. ''चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको 'अड्ढो महद्धनो महाभोगो महायसो' ति वुच्चति।

''कतमेहि चतूहि? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०... समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको 'अड्ढो महद्धनो महाभोगो महायसो' ति वुच्चती'' ति॥ •

४६. सुद्धकसुत्तं

५०. ''चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो [R.403] होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो।

''कतमेहि चतूहि? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे ...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०... समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो [N.345] अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो'' ति॥ •

---

४४. प्रथम महाधनसूत्र : : महाधनी आर्यश्रावक

४८. ...''भिक्षुओ! चार धर्मों से युक्त आर्यश्रावक महान् धनी, तथा महान् ऐश्वर्यसम्पन्न कहलाता है। कौन से चार? बुद्ध के प्रति...पूर्ववत्...ऐश्वर्यसम्पन्न कहलाता है''॥ •

४५. द्वितीय महाधनसूत्र : : महाधनी आर्यश्रावक

४९. ...''भिक्षुओ! चार धर्मों से युक्त...पूर्ववत्...*(पिछले सूत्र का ही विस्तार कर लें।)*॥ •

४६. शुद्धकसूत्र : : चार धर्मों से 'स्रोतआपन्न'

५०. ...''भिक्षुओ! चार धर्मों से युक्त होने से ही कोई आर्यश्रावक 'स्रोतआपन्न' कहलाता है। किन चार से? बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति...शील से युक्त... कहलाता है''॥ •

४७. नन्दियसुत्तं

[B.353] ५१. कपिलवत्थुनिदानं। एकमन्तं निसिन्नं खो नन्दियं सक्कं भगवा एतदवोच— "चतूहि खो, नन्दिय, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो।

"कतमेहि चतूहि? इध, नन्दिय, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०... सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि खो, नन्दिय, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो" ति॥ ●

४८. भद्दियसुत्तं

५२. कपिलवत्थुनिदानं। एकमन्तं निसिन्नं खो भद्दियं सक्कं भगवा एतदवोच— "चतूहि खो, भद्दिय, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो।

"कतमेहि चतूहि? इध, भद्दिय, अरियसावको बुद्धे...पे०...धम्मे...पे०...सङ्घे ...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि खो, भद्दिय, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो" ति॥ ●

४९. महानामसुत्तं

[R.404] ५३. कपिलवत्थुनिदानं। एकमन्तं निसिन्नं खो महानामं सक्कं भगवा एतदवोच—"चतूहि खो, महानाम, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति...पे०... सम्बोधिपरायणो।

---

४७. नन्दियसूत्र : : **चार धर्मों से 'स्रोतआपन्न'**

५१. **कपिलवस्तु में** ही...। ...नन्दिय शाक्य को यों कहा—"नन्दिय! चार धर्मों से युक्त आर्यश्रावक...पूर्ववत्...'स्रोतआपन्न' कहलाता है"॥ ●

४८. भद्दियसूत्र : : **चार धर्मों से 'स्रोतआपन्न'**

५२. **कपिलवस्तु में** ही...। ...भद्दिय शाक्य को भगवान् ने यह उपदेश किया— "भद्दिय! चार धर्मों से युक्त आर्यश्रावक...पूर्ववत्...'स्रोतआपन्न' कहलाता हैं"॥ ●

४९. महानामसूत्र : : **चार धर्मों से स्रोतआपन्न**

५३. **कपिलवस्तु में** ही...। ...महानाम शाक्य को...यों उपदेश किया—"महानाम!

"कतमेहि चतूहि? इध, महानाम, अरियसावको बुद्धे...पे०...धम्मे...पे०...सङ्घे ...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधि-[N.346] संवत्तनिकेहि। इमेहि खो, महानाम, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो" ति॥ •

५०. अङ्गसुत्तं

५४. "चत्तारिमानि, भिक्खवे, सोतापत्तियङ्गानि। कतमानि चत्तारि? [B.354] सप्पुरिससंसेवो, सद्धम्मस्सवनं, योनिसोमनसिकारो, धम्मानुधम्मप्पटिपत्ति—इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि सोतापत्तियङ्गानी" ति॥ •

सगाथकपुञ्ञाभिसन्दवग्गो पञ्चमो॥

तस्सुद्दानं

अभिसन्दा तयो वुत्ता, दुवे महद्धनेन च।
सुद्धं नन्दियं भद्दियं, महानामङ्गेन ते दसा ति॥ •

———

बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति...शील से युक्त साधक 'स्रोतआपन्न' कहलाता है"॥ •

५०. अङ्गसूत्र : : स्रोतआपन्न के चार धर्म

५४. ..."भिक्षुओ! स्रोतआपन्न के ये चार अङ्ग होते हैं। कौन से चार? (१) सत्पुरुष की सेवा, (२) उस से धर्मश्रवण, (३) धर्म का सूक्ष्म चिन्तन, एवं (४) धर्मानुकूल आचरण ...पूर्ववत्...होते हैं"॥ •

सगाथकपुण्याभिष्यन्दवर्ग पञ्चम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. प्रथम पुण्याभिष्यन्दसूत्र, २. द्वितीय पुण्याभिष्यन्दसूत्र, ३. तृतीय पुण्याभिष्यन्दसूत्र, ४. प्रथम महाधनसूत्र, ५. द्वितीय महाधनसूत्र, ६. शुद्धकसूत्र, ७. नन्दियसूत्र, ८. भद्दियसूत्र, ९. महानामसूत्र एवं १०. अङ्गसूत्र॥ •

६. सप्पञ्ञवग्गो छट्ठो

५१. सगाथकसुत्तं

[R.405] ५५. "चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो। कतमेहि चतूहि? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो होति—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागतो होति अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो अरियसावको सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो" ति॥

५६. इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—

"यस्स सद्धा तथागते, अचला सुप्पतिट्ठिता।
सीलं च यस्स कल्याणं, अरियकन्तं पसंसितं॥
"सङ्घे पसादो यस्सत्थि, उजुभूतं च दस्सनं।
अदलिद्दो ति तं आहु, अमोघं तस्स जीवितं॥
[N.347] "तस्मा सद्धं च सीलं च, पसादं धम्मदस्सनं।
अनुयुञ्जेथ मेधावी, सरं बुद्धान सासनं" ति॥ •

---

६. सप्रज्ञवर्ग षष्ठ

५१. सगाथकसूत्र : : चार धर्मों से स्रोतआपन्न

५५. ..."भिक्षुओ! चार धर्मों से युक्त आर्यश्रावक 'स्रोतआपन्न' कहलाता है, वह धर्म से च्युत नहीं होता, उस को सम्बोधि अवश्य मिलती है। किन चार धर्मों से? ...बुद्ध के प्रति...धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति...एवं आर्यजनोचित शीलाचार से युक्त...होता है।

५६. भगवान् ने यह कहा। इस के साथ ही तथागत ने गाथाओं के माध्यम से यह भी कहा—

"जिस की तथागत में अचल एवं सुप्रतिष्ठित श्रद्धा है। जिस का आर्यजनोचित, प्रशस्त शील कल्याणप्रद है॥

"जिस की सङ्घ में श्रद्धा है तथा जिस का धर्मदर्शन सरल हो गया है। उस को 'अदरिद्र' (महान् धनवान्) कहा जाता है। उस का जीवन सफल है।

"अतः बुद्धों की शिक्षा को स्मरण रखता हुआ बुद्धिमान् साधक बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ के प्रति दृढ श्रद्धा रखे"॥ •

५२. वस्संवुत्थसुत्तं

५७. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स [B.355] आरामे। तेन खो पन समयेन अञ्ञतरो भिक्खु सावत्थियं वस्संवुत्थो कपिलवत्थुं अनुप्पत्तो होति केनचिदेव करणीयेन। अस्सोसुं खो कापिलवत्थवा सक्या— "अञ्ञतरो किर भिक्खु सावत्थियं वस्संवुत्थो कपिलवत्थुं अनुप्पत्तो" ति।

अथ खो कापिलवत्थवा सक्या येन सो भिक्खु तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा तं भिक्खुं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो कापिलवत्थवा सक्या तं भिक्खुं एतदवोचुं—"कच्चि, भन्ते, भगवा अरोगो चेव बलवा चा" ति?

"अरोगो चावुसो, भगवा बलवा चा" ति।

"कच्चि पन, भन्ते, सारिपुत्तमोग्गल्लाना अरोगा चेव बलवन्तो चा" ति? [R.406]

"सारिपुत्तमोग्गल्लाना पि खो, आवुसो, अरोगा चेव बलवन्तो चा" ति।

"कच्चि पन, भन्ते, भिक्खुसङ्घो अरोगो च बलवा चा" ति?

"भिक्खुसङ्घो पि खो, आवुसो, अरोगो च बलवा चा" ति।

"अत्थि पन ते, भन्ते, किञ्चि इमिना अन्तरवस्सेन भगवतो सम्मुखा सुतं सम्मुखा पटिग्गहितं" ति?

"सम्मुखा मेतं, आवुसो, भगवतो सुतं सम्मुखा पटिग्गहितं—'अप्पका ते,

---

५२. वर्षावाससूत्र : : अर्हत् अल्प, शैक्ष्य अधिक

५७. एक समय भगवान् (बुद्ध) **श्रावस्ती के** जेतवनविहार में साधनाहेतु विराजमांन थे। उस समय कोई भिक्षु श्रावस्ती में वर्षावास पूर्ण कर किसी कार्य से कपिलवस्तु गया। वहाँ कपिलवस्तुवासी शाक्यों ने जब सुना कि कोई भिक्षु श्रावस्ती में वर्षावास पूर्ण कर कपिलवस्तु आया है तो वे उस भिक्षु के पास गये, तथा प्रणाम वन्दना कर उस से पूछने लगे—"भन्ते! भगवान् शरीर से स्वस्थ तथा समृद्ध हैं?

भिक्षु—"हाँ, भगवान् शरीर से स्वस्थ तथा समृद्ध हैं।"

शाक्य—"क्या आयुष्मन्! सारिपुत्र एवं मौद्गल्यायन भी शरीर से स्वस्थ एवं समृद्ध हैं?"

भिक्षु—"हाँ, वे दोनों भी शरीर से स्वस्थ एवं नीरोग हैं।"

शाक्य—"क्या समस्त सङ्घ शरीर से स्वस्थ एवं बलवान् है?"

भिक्षु—"हाँ, समस्त सङ्घ भी शरीर से स्वस्थ एवं सबल है।"

शाक्य—"आयुष्मन्! क्या आप ने इस वर्षावासकाल में भगवान् के श्रीमुख से कुछ धर्मशिक्षा ग्रहण की?"

भिक्खवे, भिक्खू ये आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति। अथ खो एतेव बहुतरा भिक्खू ये पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिका तत्थ परिनिब्बायिनो अनावत्तिधम्मा तस्मा लोका' ति।

"अपरं पि खो मे, आवुसो, भगवतो सम्मुखा सुतं सम्मुखा पटिग्गहितं— [N.348] 'अप्पका ते, भिक्खवे, भिक्खू ये पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिका तत्थ परिनिब्बायिनो अनावत्तिधम्मा तस्मा लोका। अथ खो एतेव बहुतरा भिक्खू ते तिण्णं संयोजनानं परिक्खया रागदोसमोहानं तनुत्ता सकदागामिनो, सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्तं करिस्सन्ती' ति।

"अपरं पि खो मे, आवुसो, भगवतो सम्मुखा सुतं सम्मुखा पटिग्गहितं— 'अप्पका ते, भिक्खवे, भिक्खू ये तिण्णं संयोजनानं परिक्खया रागदोसमोहानं तनुत्ता [B.356] सकदागामिनो, सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्तं करिस्सन्ति। अथ खो एतेव बहुतरा भिक्खू ये तिण्णं संयोजनानं परिक्खया सोतापन्ना अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा''' ति॥ •

५३. धम्मदिन्नसुत्तं

५८. एकं समयं भगवा बाराणसियं विहरति इसिपतने मिगदाये। अथ खो

भिक्षु—"आयुष्मानो! मैंने भगवान् के श्रीमुख से यही सुना—'भिक्षुओ! ऐसे भिक्षु बहुत अल्प हैं जो आश्रवक्षय के कारण अनाश्रव चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति प्राप्त कर इसी जन्म में धर्मज्ञान प्राप्त कर उस का साक्षात्कार कर साधना करते हैं। हाँ, ऐसे ही भिक्षु अधिक दिखायी देते हैं जो पाँचों अधोभागीय संयोजनों के परिक्षय से अयोनिज हो कर, वहाँ जन्म ले कर उस लोक से पुनः न लौट कर उसी लोक में परिनिर्वृत हो जाते हैं।

"आयुष्मानो! मैंने भगवान् के श्रीमुख से एक बात और सुनी थी, वह यह है— 'वे भिक्षु अल्प ही हैं, जो पाँचों अवरभागीय संयोजनों के परिक्षय से अयोनिज उत्पन्न हो कर वहीं परिनिर्वृत हो जाते हैं, तथा इस लोक में पुनः कभी नहीं लौटते।

"एक बात मैंने भगवान् के श्रीमुख से और सुनी थी, वह यह है—ऐसे भिक्षु भी अल्प हैं जो तीन संयोजनों के परिक्षय से, राग द्वेष मोह के दुर्बल हो जाने के कारण 'सकृदागामी' होंगे, जो एक बार ही इस लोक में आ कर स्वकीय समस्त दुःखों का क्षय कर लेंगे। अपि तु वे ही भिक्षु अधिक हैं जो तीन संयोजनों के परिक्षय से 'स्रोतआपन्न' हो कर, धर्म से च्युत हुए विना स्थिर रूप से साधना करते हुए सम्बोधि प्राप्त कर लेंगे"॥•

धम्मदिन्नो उपासको पञ्चहि उपासकसतेहि सद्धिं येन भगवा तेनुपसङ्कमि; [R.407] उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो धम्मदिन्नो उपासको भगवन्तं एतदवोच—"ओवदतु नो, भन्ते, भगवा; अनुसासतु नो, भन्ते, भगवा यं अम्हाकं अस्स दीघरत्तं हिताय सुखाया" ति।

"तस्मातिह वो, धम्मदिन्न, एवं सिक्खितब्बं—'ये ते सुत्तन्ता तथागतभासिता गम्भीरा गम्भीरत्था लोकुत्तरा सुञ्ञतपटिसंयुत्ता ते कालेन कालं उपसम्पज्ज विहरिस्सामा' ति। एवं हि वो, धम्मदिन्न, सिक्खितब्बं" ति।

"न खो नेतं, भन्ते, सुकरं अम्हेहि पुत्तसम्बाधसयनं अज्झावसन्तेहि कासिकचन्दनं पच्चनुभोन्तेहि मालागन्धविलेपनं धारयन्तेहि जातरूपरजतं सादियन्तेहि—ये ते सुत्तन्ता तथागतभासिता गम्भीरा गम्भीरत्था लोकुत्तरा सुञ्ञतपटिसंयुत्ता ते कालेन कालं उपसम्पज्ज विहरितुं। तेसं नो, भन्ते, भगवा अम्हाकं पञ्चसु सिक्खापदेसु ठितानं उत्तरिधम्मं देसेतू" ति।

"तस्मातिह वो, धम्मदिन्न, एवं सिक्खितब्बं—'बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागता

---

५३. धम्मदिन्नसूत्र : : गृहस्थधर्म

५८. एक समय भगवान् (बुद्ध) **वाराणसी के** ऋषिपतन मृगदाव में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय धम्मदिन्न (धर्मदत्त) उपासक, पाँच सौ उपासकों के साथ, भगवान् के पास आया, तथा भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठते हुए उस ने भगवान् से निवेदन किया—"भन्ते! हमें कुछ धर्म का उपदेश करें, आदेश करें जो हमारे लिये चिरकाल तक हित कर एवं सुखप्रद हो।"

"तो, धम्मदिन्न! तुम्हें यों सीखना चाहिये—'जो भी बुद्धोपदिष्ट, गम्भीर पद, गम्भीर अर्थ वाले, लोकोत्तर शून्यता के बोधक सूत्र हैं उन को समय समय पर स्मरण करते हुए तदनुसार साधना करनी चाहिये'।"

"भन्ते! यह हमारे लिये कहाँ सुलभ एवं सुकर होगा; क्यों कि हम लोग पुत्र-पुत्रियों आदि परिवार के व्यामोह में पड़े हुए, काशी का सुगन्धित चन्दन शरीर पर लगा कर, माला-गन्धविलेपन आदि धारण कर, पाँच कामगुणों को भोगते हुए सोना चाँदी का ग्रहण करने वाले हैं; हमारे लिये उन गम्भीर पद, गम्भीर अर्थ वाले, लोकोत्तर शून्यता के बोधक सूत्रों को स्मरण करते हुए साधना करना बहुत ही दुष्कर है। अतः हम पाँच शिक्षापदों का पालन करने वालों को उन (पाँच शिक्षापदों) से कुछ उत्कृष्ट धर्मों का ही उपदेश करें; जिन का हम अपेक्षाकृत सरलता से पालन कर सकें।"

"तो, धम्मदिन्न! तुम लोगों को यों सीखना चाहिये—'हम भगवान् बुद्ध के प्रति...

भविस्साम—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; [N.349] धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागता भविस्साम अखण्डेहि...पे०...समाधिसंवत्तनिकेहि' ति। एवं हि वो, धम्मदिन्न, सिक्खितब्बं'' ति।

''यानिमानि, भन्ते, भगवता चत्तारि सोतापत्तियङ्गानि देसितानि, संविज्जन्ते ते धम्मा अम्हेसु, मयं च तेसु धम्मेसु सन्दिस्साम। मयं हि भन्ते, बुद्धे अवेच्चप्पसादेन [R.408] समन्नागता—'इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति; धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागता अखण्डेहि...पे०... समाधिसंवत्तनिकेही'' ति।

[B.357] ''लाभा वो, धम्मदिन्न, सुलद्धं वो, धम्मदिन्न! सोतापत्तिफलं तुम्हेहि ब्याकतं'' ति॥ •

५४. गिलानसुत्तं

५९. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं निग्रोधारामे। तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति—''निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती'' ति। अस्सोसि खो महानामो सक्को—''सम्बहुला किर भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति—'निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती''' ति। अथ खो महानामो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो महानामो सक्को भगवन्तं

धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति दृढ श्रद्धा रखेंगे। इस के अतिरिक्त हम आर्यजनोचित प्रशस्त, अखण्ड, अच्छिद्र एवं समाधि तक पहुँचाने वाले शीलाचार का पालन करेंगे'—ऐसा तुम्हें सीखना चाहिये।''

''भन्ते! आप ने अभी जिन स्रोतआपत्तिअङ्गों का उपदेश किया है, उन का पालन हम बहुत पहले से करते आ रहे हैं, वे धर्म हमारे चित्त में हैं। ...पूर्ववत्...।

''धम्मदिन्न! तब तो बहुत कुछ प्राप्त कर रखा है, तुम्हारी यह बहुत अच्छी उपलब्धि है। तुम तो 'स्रोतआपन्न' अवस्था में पहुँचे हुए हो।'' •

५४. ग्लानसूत्र : : विमुक्त गृहस्थ एवं भिक्षु में कोई भेद नहीं

५९. एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्य प्रदेश की राजधानी **कपिलवस्तु** नगरी के न्यग्रोधाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय बहुत से भिक्षु एक नया चीवर यह सोच कर बना रहे थे—'भगवान् तीन मास बीतने पर, चारिकाहेतु निकलेंगे'। यह बात महानाम शाक्य ने भी सुनी! तब महानाम शाक्य भगवान् के पास आया, तथा उन्हें प्रणाम

एतदवोच—''सुतमेतं, भन्ते—'सम्बहुला किर भिक्खू भगवतो चीवरकम्मं करोन्ति—निट्ठितचीवरो भगवा तेमासच्चयेन चारिकं पक्कमिस्सती' ति। न खो पनेतं, भन्ते, भगवतो सम्मुखा सुतं सम्मुखा पटिग्गहितं सप्पञ्ञेन उपासकेन सप्पञ्ञो उपासको आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो ओवदितब्बो'' ति।

''सप्पञ्ञेन महानाम, उपासकेन सप्पञ्ञो उपासको आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो चतूहि अस्सासनीयेहि धम्मेहि अस्सासेतब्बो—'अस्सासतायस्मा—अत्थायस्मतो बुद्धे अवेच्चप्पसादो इति पि सो भगवा...पे०...सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा ति। अस्सासतायस्मा—अत्थायस्मतो धम्मे...पे०...सङ्घे...पे०...[N.350] अरियकन्तानि सीलानि अखण्डानि...पे०...समाधिसंवत्तनिकानी' ति। [R.409]

''सप्पञ्ञेन, महानाम, उपासकेन सप्पञ्ञो उपासको आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो इमेहि चतूहि अस्सासनीयेहि धम्मेहि अस्सासेत्वा एवमस्स वचनीयो—'अत्थायस्मतो मातापितूसु अपेक्खा' ति? सो चे एवं वदेय्य—'अत्थि मे मातापितूसु अपेक्खा' ति, सो एवमस्स वचनीयो—'आयस्मा खो मारिसो मरणधम्मो। सचे पायस्मा मातापितूसु [B.358] अपेक्खं करिस्सति, मरिस्सतेव; नो चे पायस्मा मातापितूसु अपेक्खं करिस्सति, मरिस्सतेव। साधायस्मा, या ते मातापितूसु अपेक्खा तं पजहा' ति।

कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस ने भगवान् से यों निवेदन किया—''मैंने सुना है, भन्ते! कि बहुत से भिक्षु ...पूर्ववत्...चारिकाहेतु निकलेंगे। आप चारिका पर निकल रहे हैं, परन्तु भन्ते! जो सप्रज्ञ उपासक से कुछ सीख कर सप्रज्ञ उपासक बने हैं, उन के लिये भगवान् के श्रीमुख से अभी तक कुछ नहीं निकला है। भगवान् जो सप्रज्ञ उपासक रोगाक्रान्त है उस के लिये भी आप को कुछ उपदेश करना चाहिये, जिस से उस को भी कुछ आश्वासन मिले।''

''महानाम! सप्रज्ञ उपासक द्वारा रोगी सप्रज्ञ उपासक को इस तरह चार धर्मों का उपदेश दे कर आश्वस्त करना चाहिये—'आयुष्मन्! आश्वस्त हों कि आप भगवान् बुद्ध के प्रति श्रद्धालु हैं...। आश्वस्त हों कि धर्म के प्रति...सङ्घ के प्रति...शील से युक्त हैं जो समाधि तक पहुँचाने वाले हैं।'

''महानाम! उस सप्रज्ञ उपासक को इस तरह इन चार धर्मों का आश्वासन दे कर यों पूछना चाहिये—'क्या आप को अपने मातापिता के प्रति कोई व्यामोह है?', यदि वह कहे—'हाँ, ऐसा व्यामोह है', तो उस को समझाना चाहिये—'आप तो मरणधर्मा (विनाशशील) हैं; यदि आप मातापिता के प्रति व्यामोह करेंगे तो भी आप मरेंगे ही, व्यामोह नहीं करेंगे तो भी आप को मरना है; अतः अच्छा हो कि आप मातापिता में व्यामोह न करें।'

"सो चे एवं वदेय्य—'या मे मातापितूसु अपेक्खा सा पहीना' ति, सो एवमस्स वचनीयो—'अत्थि पनायस्मतो पुत्तदारेसु अपेक्खा' ति ? सो चे एवं वदेय्य—'अत्थि मे पुत्तदारेसु अपेक्खा' ति, सो एवमस्स वचनीयो—'आयस्मा खो मारिसो मरणधम्मो। सचे पायस्मा पुत्तदारेसु अपेक्खं करिस्सति, मरिस्सतेव; नो चे पायस्मा पुत्तदारेसु अपेक्खं करिस्सति, मरिस्सतेव। साधायस्मा, या ते पुत्तदारेसु अपेक्खा तं पजहा' ति।

"सो चे एवं वदेय्य—'या मे पुत्तदारेसु अपेक्खा सा पहीना' ति, सो एवमस्स वचनीयो—'अत्थि पनायस्मतो मानुसकेसु पञ्चसु कामगुणेसु अपेक्खा' ति ? सो चे एवं वदेय्य—'अत्थि मे मानुसकेसु पञ्चसु कामगुणेसु अपेक्खा' ति, सो एवमस्स वचनीयो—'मानुसकेहि खो, आवुसो, कामेहि दिब्बा कामा अभिक्कन्ततरा च पणीततरा च। साधायस्मा, मानुसकेहि कामेहि चित्तं वुट्ठापेत्वा चातुम्महाराजिकेसु देवेसु चित्तं अधिमोचेही' ति।

[R.410] "सो चे एवं वदेय्य—'मानुसकेहि मे कामेहि चित्तं वुट्ठितं, चातुम्महाराजिकेसु देवेसु चित्तं अधिमोचितं' ति, सो एवमस्स वचनीयो—'चातुम्महाराजिकेहि खो, आवुसो, देवेहि तावतिंसा देवा अभिक्कन्ततरा च पणीततरा च। साधायस्मा, चातुम्महाराजिकेहि देवेहि चित्तं वुट्ठापेत्वा तावतिंसेसु देवेसु चित्तं अधिमोचेही' ति।

[N.351] "सो चे एवं वदेय्य—'चातुम्महाराजिकेहि मे देवेहि चित्तं वुट्ठितं, तावतिंसेसु देवेसु चित्तं अधिमोचितं' ति, सो एवमस्स वचनीयो—'तावतिंसेहि खो, आवुसो, देवेहि यामा देवा...पे०...तुसिता देवा...पे०...निम्मानरती देवा...पे०...परनिम्मित-वसवत्ती देवा...पे०...परनिम्मितवसवत्तीहि खो, आवुसो, देवेहि ब्रह्मलोको अभिक्कन्ततरो च पणीततरो च। साधायस्मा, परिनिम्मितवसवत्तीहि देवेहि चित्तं [B.359] वुट्ठापेत्वा ब्रह्मलोके चित्तं अधिमोचेही' ति। सो चे एवं वदेय्य—'परनिम्मित-वसवत्तीहि मे देवेहि चित्तं वुट्ठितं, ब्रह्मलोके चित्तं अधिमोचितं' ति, सो एवमस्स

"जब वह यह कहे—'मेरा मातापिता में व्यामोह नष्ट हो गया है', तब उस से यह पूछना चाहिये—'आप को अपनी स्त्री तथा बाल-बच्चों में कोई व्यामोह है ?' ...पूर्ववत्... 'क्या आप को मनुष्यों द्वारा भोगे जाने योग्य पाँच कामभोगों के प्रति कोई मोह है ?' ...तो उस को यों कहना चाहिये—'मनुष्यों द्वारा भोगने योग्य कामभोगों से चतुर्महाराज देवताओं के भोग विशिष्ट हैं ...पूर्ववत्...त्रायस्त्रिंश देवों के कामभोगों में...निर्माणरतिदेवों के कामभोगों में...परनिर्मितवशवर्ती देवों के कामभोगों में...ब्रह्मलोक के कामभोगों में मन लगाओ !' तब उस से कहो—'आयुष्मन् ! ब्रह्मलोक भी अनित्य है, अध्रुव है, सत्कायदृष्टि से युक्त

वचनीयो—'ब्रह्मलोको पि खो, आवुसो, अनिच्चो अद्धुवो सक्कायपरियापन्नो। साधायस्मा, ब्रह्मलोका चित्तं वुट्ठापेत्वा सक्कायनिरोधे चित्तं उपसंहराही' ति।

"सो चे एवं वदेय्य—'ब्रह्मलोका मे चित्तं वुट्ठितं, सक्कायनिरोधे चित्तं उपसंहरामी' ति; एवं विमुत्तचित्तस्स खो, महानाम, उपासकस्स आसवा विमुत्तचित्तेन भिक्खुना न किञ्चि नानाकरणं वदामि, यदिदं—विमुत्तिया विमुत्तं" ति॥ ●

५५. सोतापत्तिफलसुत्तं

६०. "चत्तारोमे, भिक्खवे, धम्मा भाविता बहुलीकता सोतापत्तिफल-[R.411] सच्छिकिरियाय संवत्तन्ति। कतमे चत्तारो? सप्पुरिससंसेवो, सद्धम्मस्सवनं, योनिसोमनसिकारो, धम्मानुधम्मप्पटिपत्ति—इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता सोतापत्तिफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ती" ति॥ ●

५६. सकदागामिफलसुत्तं

६१. "चत्तारोमे, भिक्खवे, धम्मा भाविता बहुलीकता सकदागामिफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ति। कतमे चत्तारो...पे०...संवत्तन्ती" ति॥ ●

५७. अनागामिफलसुत्तं

६२. ...अनागामिफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ती ति॥ [N.352] ●

है। अच्छा हो कि आप ब्रह्मलोक से अपना व्यामोह हटा कर सत्कायदृष्टिनिरोध में लगाओ।'

"तब वह यदि यह कहे—'मेरा अब ब्रह्मलोक के व्यामोह से भी चित्त हट गया है, मैं अब सत्कायदृष्टिनिरोधहेतु प्रयत्न कर रहा हूँ।' तो ऐसे विमुक्तचित्त उपासक का, महानाम! मैं विमुक्तचित्त भिक्षु से कोई भेद या विशेषता नहीं मानता; क्यों कि विमुक्ति तो विमुक्ति ही है, उस में भेद कैसा!"॥ ●

५५. स्रोतआपत्तिफलसूत्र : : धर्मचतुष्टयसाधना से स्रोतआपत्तिफल

६०. ..."भिक्षुओ! इन चारों धर्मों की साधना तथा अभ्यास करने पर ये धर्म स्रोतआपत्तिफल का साक्षात्कार करा देते हैं। कौन से चार? (१) सत्पुरुषों की सेवा, (२) उन के मुख से धर्मश्रवण, (३) उस धर्म का सूक्ष्म चिन्तन एवं (४) धर्मानुसार साधना। यों, ये धर्म...पूर्ववत्... साक्षात्कार करा देते हैं"॥ ●

५६. सकृदागामिफलसूत्र : : ...सकृदागामिफल

६१. ...पूर्ववत्...ये धर्म सकृदागामिफल का साक्षात्कार करा देते हैं। ...पूर्ववत्... ॥●

५७. अनागामिफलसूत्र : : ...अनागामिफल

६२. ...पूर्ववत्...ये धर्म अनागामिफल का साक्षात्कार करा देते हैं। ...पूर्ववत्... ॥●

५८. अरहत्तफलसुत्तं

६३. ...अरहत्तफलसच्छिकिरियाय संवत्तन्ती ति॥

५९. पञ्ञापटिलाभसुत्तं

६४. ...पञ्ञापटिलाभाय संवत्तन्ती ति॥

६०. पञ्ञावुड्ढिसुत्तं

[B.360] ६५. ...पञ्ञावुड्ढिया संवत्तन्ती ति॥

६१. पञ्ञावेपुल्लसुत्तं

६६. ...पञ्ञावेपुल्लाय संवत्तन्ती ति॥

सप्पञ्ञवग्गो छट्ठो॥

तस्सुद्दानं

सगाथकं वस्संवुत्थं, धम्मदिन्नं च गिलानं।
चतुरो फला पटिलाभो, वुड्ढि वेपुल्लताय चा ति॥

---

५८. अर्हत्त्वफलसूत्र : : ...अर्हत्त्वफल

६३. ...पूर्ववत्...ये धर्म अर्हत्त्वफल का साक्षात्कार करा देते हैं। ...पूर्ववत्... ॥

५९. प्रज्ञाप्रतिलाभसूत्र : : ...प्रज्ञालाभ

६४. ...पूर्ववत्...ये धर्म प्रज्ञा का लाभ करा देते हैं। ...पूर्ववत्... ॥

६०. प्रज्ञावृद्धिसूत्र : : ...प्रज्ञावृद्धि

६५. ...पूर्ववत्...ये धर्म प्रज्ञा की वृद्धि करा देते हैं। ...पूर्ववत्... ॥

६१. प्रज्ञावैपुल्यसूत्र : : ...प्रज्ञावैपुल्य

६६. ...पूर्ववत्...ये धर्म प्रज्ञा में विपुलता (अधिकता) करा देतें हैं। ...पूर्ववत्... ॥

सप्रज्ञवर्ग षष्ठ सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. सगाथकसूत्र, २. वर्षावाससूत्र, ३. धम्मदिन्नसूत्र, ४. ग्लानसूत्र, ५. स्रोतआपत्तिफलसूत्र, ६. सकृदागामिफलसूत्र, ७. अनागामिफलसूत्र, ८. अर्हत्त्वफलसूत्र, ९. प्रज्ञाप्रतिलाभसूत्र, १०. प्रज्ञावृद्धिसूत्र एवं ११. प्रज्ञावैपुल्यसूत्र॥

७. महापञ्ञवग्गो सत्तमो

६२. महापञ्ञासुत्तं

६७. "चत्तारोमे, भिक्खवे, धम्मा भाविता बहुलीकता महापञ्ञताय [R.412] संवत्तन्ति। कतमे चत्तारो? सप्पुरिससंसेवो, सद्धम्मस्सवनं, योनिसोमनसिकारो, धम्मानुधम्मप्पटिपत्ति—इमे खो, भिक्खवे, चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता महापञ्ञताय संवत्तन्ती" ति॥ •

६३. पुथुपञ्ञासुत्तं

६८. ...पुथुपञ्ञताय संवत्तन्ती" ति॥ •

६४. विपुलपञ्ञासुत्तं

६९. ...विपुलपञ्ञताय संवत्तन्ती ति॥ [N.353] •

६५. गम्भीरपञ्ञासुत्तं

७०. ...गम्भीरपञ्ञताय संवत्तन्ती ति॥ •

६६. अप्पमत्तपञ्ञासुत्तं

७१. ...अप्पमत्तपञ्ञताय संवत्तन्ती ति॥ [B.361] •

६७. भूरिपञ्ञासुत्तं

७२. ...भूरिपञ्ञताय संवत्तन्ती ति॥ •

---

७. महाप्राज्ञवर्ग सप्तम

६२. महाप्रज्ञासूत्र : : महाप्रज्ञा

६७. ..."भिक्षुओ! ये चार धर्मसाधना तथा अभ्यास के बल पर साधक में महाप्रज्ञता उत्पन्न करते हैं। कौन से चार? सत्पुरुष सेवा, उन के द्वारा उपदिष्ट धर्म का श्रवण, उस का सूक्ष्म चिन्तन, एवं धर्मानुकूल साधना। ये चार धर्म...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं"॥ •

६३. पृथुप्रज्ञासूत्र : : पृथुल प्रज्ञा

६८. ...ये धर्म...पृथुल (प्रशस्त या विस्तृत) प्रज्ञा...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं"॥ •

६४. विपुलप्रज्ञासूत्र : : अधिक प्रज्ञा

६९. ...ये धर्म...विपुल (अधिक) प्रज्ञा...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं"॥ •

६५. गम्भीरप्रज्ञासूत्र : : गम्भीर प्रज्ञा

७०. ...ये धर्म...गम्भीर (गहरी) प्रज्ञा...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं"॥ •

६६. अप्रमत्तप्रज्ञासूत्र : : अप्रमत्त प्रज्ञा

७१. ...ये धर्म...अप्रमत्त (सावधान) प्रज्ञा...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं"॥ •

६८. पञ्ञाबाहुल्लसुत्तं

७३. ...पञ्ञाबाहुल्लाय संवत्तन्ती ति॥ •

६९. सीघपञ्ञासुत्तं

७४. ...सीघपञ्ञताय संवत्तन्ती ति॥ •

७०. लहुपञ्ञासुत्तं

७५. ...लहुपञ्ञताय संवत्तन्ती ति॥ •

७१. हासपञ्ञासुत्तं

७६. ...हासपञ्ञताय संवत्तन्ती ति॥ •

७२. जवनपञ्ञासुत्तं

[R.413] ७७. ...जवनपञ्ञताय संवत्तन्ती ति॥ •

७३. तिक्खपञ्ञासुत्तं

७८. ...तिक्खपञ्ञताय संवत्तन्ती ति॥ •

७४. निब्बेधिकपञ्ञासुत्तं

[N.354] ७९. ...निब्बेधिकपञ्ञताय संवत्तन्ति। कतमे चत्तारो? सप्पुरिससंसेवो,

---

६७. भूरिप्रज्ञासूत्र : : भूरि प्रज्ञा

७२. ...ये धर्म...भूरि (अत्यधिक) प्रज्ञा...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं''॥ •

६८. प्रज्ञाबाहुल्यसूत्र : : प्रज्ञा की बहुलता

७३. ...ये धर्म...प्रज्ञा में बाहुल्य (अधिकता) ...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं''॥ •

६९. शीघ्रप्रज्ञासूत्र : : प्रज्ञा में शीघ्रता

७४. ...ये धर्म...प्रज्ञा में शीघ्रता (तेजी, फुर्ती) ...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं''॥ •

७०. लघुप्रज्ञासूत्र : : प्रज्ञा की लाघव

७५. ...ये धर्म...प्रज्ञा में लाघव (सूक्ष्मता) ...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं''॥ •

७१. हासप्रज्ञासूत्र : : प्रज्ञा की चमक (दीप्ति)

७६. ...ये धर्म...प्रज्ञा में कान्ति (चमक, दीप्ति) ...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं''॥ •

७२. जवनप्रज्ञासूत्र : : प्रज्ञा की जवनता

७७. ...ये धर्म...प्रज्ञा में जवन (वेग) ...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं''॥ •

७३. तीक्ष्णप्रज्ञासूत्र : : प्रज्ञा की तीक्ष्णता

७८. ...ये धर्म...प्रज्ञा में तीक्ष्णता (तीखापन) ...पूर्ववत्...उत्पन्न करते हैं''॥ •

७४. निर्वेधिकप्रज्ञासूत्र : : अन्तस्तल तक प्रविष्ट होने वाली प्रज्ञा

७९. ...ये चार धर्म निर्वेधिक (अन्तस्तल तक प्रविष्ट होने वाली) प्रज्ञा उत्पन्न

सद्धम्मस्सवनं, योनिसोमनसिकारो, धम्मानुधम्मप्पटिपत्ति—इमे खो, भिक्खवे, [B.362] चत्तारो धम्मा भाविता बहुलीकता निब्बेधिकपञ्ञताय संवत्तन्ती ति॥ •

महापञ्ञवग्गो सत्तमो॥

तस्सुद्दानं

महा, पुथु विपुल गम्भीरं, अप्पमत्त भूरि बाहुल्लं।
सीघ लघु हास जवन, तिक्ख निब्बेधिकाय चा ति॥ •

सोतापत्तिसंयुत्तं समत्तं॥

करते हैं। कौन से चार? सत्पुरुष सेवा, उन के द्वारा उपदिष्ट धर्म का श्रवण, उस का सूक्ष्म चिन्तन, एवं धर्मानुकूल साधना। भिक्षुओ! ये चार धर्म साधना तथा अभ्यास करने पर निर्वेधिक प्रज्ञा उत्पन्न करते हैं''॥ •

महाप्रज्ञवर्ग सप्तम निष्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. महाप्रज्ञासूत्र, २. पृथुप्रज्ञासूत्र, ३. विपुलप्रज्ञासूत्र, ४. गम्भीरप्रज्ञासूत्र, ५. अप्रमत्तप्रज्ञासूत्र, ६. भूरिप्रज्ञासूत्र, ७. प्रज्ञाबाहुल्य-सूत्र, ८. शीघ्रप्रज्ञासूत्र, ९. लघुप्रज्ञासूत्र, १०. हासप्रज्ञासूत्र, ११. जवनप्रज्ञासूत्र, १२. तीक्ष्ण-प्रज्ञासूत्र एवं १३. निर्वेधिकप्रज्ञासूत्र॥ •

स्रोतआपत्तिसंयुक्त समाप्त॥

५६. सच्चसंयुत्तं

१. समाधिवग्गो पठमो

१. समाधिसुत्तं

[N.355, B.363, R.414] १. सावत्थिनिदानं। "समाधिं, भिक्खवे, भावेथ। समाहितो, भिक्खवे, भिक्खु यथाभूतं पजानाति। किञ्च यथाभूतं पजानाति? 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति। समाधिं, भिक्खवे, भावेथ। समाहितो, भिक्खवे, भिक्खु यथाभूतं पजानाति।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति योगो करणीयो, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति योगो करणीयो, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ ●

२. पटिसल्लानसुत्तं

२. "पटिसल्लाने, भिक्खवे, योगमापज्जथ। पटिसल्लीनो, भिक्खवे, भिक्खु यथाभूतं पजानाति। किञ्च यथाभूतं पजानाति? 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं

---

५६. सत्यसंयुक्त

१. समाधिवर्ग प्रथम

१. समाधिसूत्र : : **समाधि का अभ्यास**

१. **श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! 'समाधि' का अभ्यास करो; क्यों कि, भिक्षुओ! समाधिस्थ भिक्षु (धर्मों को) यथार्थतः जान लेता है। क्या यथार्थतः जान लेता है? 'यह दुःख है'—इस बात को यथार्थतः जान लेता है, 'यह दुःखसमुदय है'...'यह दुःखनिरोध है'...'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—इस को यथार्थतः जान लेता है। अतः, भिक्षुओ! तुम्हें समाधिभावना का अभ्यास करना चाहिये। समाधिनिष्ठ भिक्षु ही धर्मों के विषय में यथार्थ ज्ञान कर पाता है।

"इस लिये, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'—इस पर चित्त लगाना चाहिये, 'यह दुःखसमुदय है' ...'यह दुःखनिरोध है'...'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—इस पर चित्त लगाना चाहिये"॥ ●

२. प्रतिसल्लानसूत्र : : **आत्मचिन्तन**

२. ..."भिक्षुओ! प्रतिसल्लान (आत्मचिन्तन) पर ध्यान दो; क्यों कि प्रतिसल्लान पर ध्यान देने वाला साधक भिक्षु ही यथार्थतः जान पाता है। क्या यथार्थतः जान पाता है?

दुक्खसमुदयो' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति यथाभूतं पजानाति, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति। पटिसल्लाने, भिक्खवे, [R.415] योगमापज्जथ। पटिसल्लीनो, भिक्खवे, भिक्खु यथाभूतं पजानाति।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति योगो करणीयो, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति योगो करणीयो, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

३. पठमकुलपुत्तसुत्तं

३. "ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं कुलपुत्ता सम्मा अगारस्मा [B.364] अनगारियं पब्बजिंसु, सब्बे ते चतुन्नं अरियसच्चानं यथाभूतं अभिसमयाय। ये [N.356] हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं कुलपुत्ता सम्मा अगारस्मा अनगारियं पब्बजिस्सन्ति, सब्बे ते चतुन्नं अरियसच्चानं यथाभूतं अभिसमयाय। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि कुलपुत्ता सम्मा अगारस्मा अनगारियं पब्बजन्ति, सब्बे ते चतुन्नं अरियसच्चानं यथाभूतं अभिसमयाय।

"कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स अरियसच्चस्स, दुक्खसमुदयस्स अरियसच्चस्स, दुक्खनिरोधस्स अरियसच्चस्स, दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स। ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं कुलपुत्ता सम्मा अगारस्मा अनगारियं पब्बजिंसु

'यह दुःख है'—इस बात को यथार्थतः जान पाता है, 'यह दुःखसमुदय है'..., 'यह दुःखनिरोध है'..., 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—इस बात को यथार्थतः जान पाता है। अतः, भिक्षुओ! प्रतिसल्लान में मन लगाओ; क्योंकि प्रतिसल्लान में मन लगाने वाला साधक भिक्षु ही यथार्थ को जान पाता है।

"इस लिये, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'—इस पर चित्त लगाना चाहिये...पूर्ववत्...मार्ग है—इस पर चिन्तनहेतु चित्त लगाना चाहिये"॥ •

३. प्रथम कुलपुत्रसूत्र : : चार आर्यसत्य

३. ..."भिक्षुओ! अतीत काल में जितने भी कुलपुत्र घर को भली भाँति छोड़ कर प्रव्रजित हुए थे, वे सब 'आर्यसत्यचतुष्टय' के यथार्थ ज्ञानहेतु प्रव्रजित हुए थे। अनागत (भविष्य) में भी जो कुलपुत्र...प्रव्रजित होंगे वे भी सब आर्यसत्यचतुष्टय के यथार्थ ज्ञानहेतु ही प्रव्रजित होंगे। वर्तमान में जो कुलपुत्र...प्रव्रजित हैं वे भी आर्यसत्यचतुष्टय के यथार्थ ज्ञानहेतु ही प्रव्रजित हैं। कौन सा आर्यसत्यचतुष्टय? दुःखआर्यसत्य, दुःखसमुदयआर्यसत्य, दुःखनिरोधआर्यसत्य एवं दुःखनिरोधगामी मार्ग आर्यसत्य।

...पे०...पब्बजिस्सन्ति...पे०...पब्बजन्ति, सब्बे ते इमेसं येव चतुन्नं अरियसच्चानं यथाभूतं अभिसमयाय।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति योगो करणीयो, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति योगो करणीयो, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

४. दुतियकुलपुत्तसुत्तं

४. "ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं कुलपुत्ता सम्मा अगारस्मा अनगारियं पब्बजिता यथाभूतं अभिसमेसुं, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसमेसुं। ये [R.416] हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं कुलपुत्ता सम्मा अगारस्मा अनगारियं पब्बजिता यथाभूतं अभिसमेस्सन्ति, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसमेस्सन्ति। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि कुलपुत्ता सम्मा अगारस्मा अनगारियं पब्बजिता यथाभूतं अभिसमेन्ति, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसमेन्ति।

"कतमानि चत्तारि? दुक्खं अरियसच्चं, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं। ये हि केचि, भिक्खवे, [B.365] अतीतमद्धानं कुलपुत्ता सम्मा अगारस्मा अनगारियं पब्बजिता यथाभूतं अभिसमेसुं...पे०...अभिसमेस्सन्ति...पे०...अभिसमेन्ति, सब्बे ते इमानि चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसमेन्ति।

[N.357] "तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

५. पठमसमणब्राह्मणसुत्तं

५. "ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा यथाभूतं

"इस लिये, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'...'यह दुःखसमुदय है'...'यह दुःखनिरोध है'...'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये"॥ •

४. द्वितीय कुलपुत्रसूत्र : : चार आर्यसत्य

४. ..."भिक्षुओ! अतीत काल में जो भी कुलपुत्र...पूर्ववत्...उन्होंने आर्यसत्यों को यथार्थतः जाना; अनागत काल में...पूर्ववत्...वे भी इन चार आर्यसत्यों को ही यथार्थतः जानेंगे; तथा वर्तमान में जो कुलपुत्र घर से बेघर हो प्रव्रजित हुए हैं वे भी इन आर्यसत्यों को यथार्थतः जानने हेतु ही साधना कर रहे हैं। कौन से चार? ...पूर्ववत्...। इस लिये, भिक्षुओ! 'यह दुःख है' ...'यह दुःखसमुदय है'...'यह दुःखनिरोध है'...'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—इस का चिन्तन करना चाहिये"॥ •

अभिसम्बोज्झिसु, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बोज्झिसु। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा यथाभूतं अभिसम्बोज्झिस्सन्ति, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बोज्झिस्सन्ति। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि समणा वा ब्राह्मणा वा यथाभूतं अभिसम्बोज्झन्ति, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बोज्झन्ति।

''कतमानि चत्तारि? दुक्खं अरियसच्चं...पे०...दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं। ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा यथाभूतं अभिसम्बोज्झिसु...पे०...अभिसम्बोज्झिस्सन्ति...पे०...अभिसम्बोज्झन्ति, सब्बे ते इमानि चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बोज्झन्ति। [R.417]

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ •

६. दुतियसमणब्राह्मणसुत्तं

६. ''ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा यथाभूतं अभिसम्बुद्धं पकासेसुं, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बुद्धं पकासेसुं। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा यथाभूतं अभिसम्बुद्धं पकासेस्सन्ति, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बुद्धं पकासेस्सन्ति। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि समणा वा ब्राह्मणा वा यथाभूतं अभिसम्बुद्धं पकासेन्ति, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बुद्धं पकासेन्ति।

''कतमानि चत्तारि? दुक्खं अरियसच्चं...पे०...दुक्खनिरोधगामिनी [B.366]

---

५. प्रथम श्रमणब्राह्मणसूत्र : : चार आर्यसत्य

५. ...''भिक्षुओ! अतीत काल में...अनागत काल में...वर्तमान काल में जो भी श्रमणब्राह्मण घर छोड़ कर प्रव्रजित हुए हैं वे सब जो यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर रहे है वे वस्तुतः इन चार आर्यसत्यों का ही यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं।

''कौन से चार? ...पूर्ववत्...। इस लिये, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'...पूर्ववत्...'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—यह चिन्तन करना चाहिये''॥ •

६. द्वितीय श्रमणब्राह्मणसूत्र : : चार आर्यसत्य

६. ...''भिक्षुओ! अतीत काल में जिन श्रमण ब्राह्मणों ने यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर उपदेश किया है या अनागत काल में...जो उपदेश करेंगे या वर्तमान में...जो उपदेश कर रहे हैं वे सब इन चार आर्यसत्यों को यथार्थतः जान कर इन्हीं का उपदेश कर रहे हैं।

[N.358] पटिपदा अरियसच्चं। ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं समणा वा ब्राह्मणा वा यथाभूतं अभिसम्बुद्धं पकासेसुं...पे०...पकासेस्सन्ति...पे०...पकासेन्ति, सब्बे ते इमानि चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बुद्धं पकासेन्ति।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ ●

७. वितक्कसुत्तं

[R.418] ७. ''मा, भिक्खवे, पापके अकुसले वितक्के वितक्केय्याथ; सेय्यथीदं—कामवितक्कं, ब्यापादवितक्कं, विहिंसावितक्कं। तं किस्स हेतु? नेते, भिक्खवे, वितक्का अत्थसंहिता नादिब्रह्मचरियका न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तन्ति।

''वितक्केन्ता च खो तुम्हे, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति वितक्केय्याथ, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति वितक्केय्याथ, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति वितक्केय्याथ, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति वितक्केय्याथ। तं किस्स हेतु? एते, भिक्खवे, वितक्का अत्थसंहिता एते आदिब्रह्मचरियका एते निब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ति।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ ●

कौन से चार? ...पूर्वसूत्रवत्... ॥ ●

७. वितर्कसूत्र : : पापमय वितर्क का निषेध

७. ...''भिक्षुओ! पापमय अकुशल वितर्क मन में नहीं आने देने चाहिये। जैसे—कामवितर्क, व्यापादवितर्क एवं विहिंसावितर्क। वह किस लिये? क्यों कि, भिक्षुओ! ये पापमय वितर्क न किसी अर्थ के साधक हैं, न धर्मसाधना में उपयोगी हैं, न संसार के प्रति विरक्ति निरोध उपशम अभिज्ञान सम्बोधि या निर्वाण का ही प्रयोजन सिद्ध करने वाले हैं।

''यदि तुम्हें वितर्क ही करना है तो 'यह दुःख है', 'यह दुःखसमुदय है', 'यह दुःखनिरोध है', 'यह दुःखनिरोधगामिनी प्रतिपदा है'—इस पर वितर्क विचार कीजिये। ऐसे वितर्क-विचार अर्थसाधक, धर्मसाधक एवं निर्वेद...निर्वाणप्राप्ति में सहायक सिद्ध होते हैं।

इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'...आदि पर अपना मन लगाना चाहिये'' ॥●

८. चिन्तसुत्तं

८. ''मा, भिक्खवे, पापकं अकुसलं चित्तं चिन्तेय्याथ—'सस्सतो लोको' ति वा 'असस्सतो लोको' ति वा, 'अन्तवा लोको' ति वा 'अनन्तवा लोको' ति वा, 'तं जीवं तं सरीरं' ति वा 'अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं' ति वा, 'होति तथागतो परं मरणा' ति वा 'न होति तथागतो परं मरणा' ति वा, 'होति च न च होति तथागतो परं मरणा' ति [B.367] वा, 'नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा' ति वा। तं किस्स हेतु? नेसा, [N.359] भिक्खवे, चिन्ता अत्थसंहिता नादिब्रह्मचरियका न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तन्ति।

''चिन्तेन्ता च खो तुम्हे, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति चिन्तेय्याथ, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति चिन्तेय्याथ, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति चिन्तेय्याथ, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति चिन्तेय्याथ। तं किस्स हेतु? एसा, भिक्खवे, चिन्ता अत्थसंहिता, एसा आदिब्रह्मचरियका, एसा निब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय [R.419] सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥

•

९. विग्गाहिककथासुत्तं

९. ''मा, भिक्खवे, विग्गाहिककथं कथेय्याथ—'न त्वं इमं धम्मविनयं आजानासि, अहं इमं धम्मविनयं आजानामि। किं त्वं इमं धम्मविनयं आजानिस्ससि!

---

८. चिन्तसूत्र : : पापमय चिन्तन न करना

८. ...''भिक्षुओ! पापमय अकुशल चिन्तन नहीं करना चाहिये; जैसे—'यह लोक शाश्वत है', 'यह लोक अशाश्वत है', 'यह लोक अन्तवान् है', 'यह लोक अन्तवान् नहीं है', 'वही जीव है वही शरीर है', 'जीव दूसरा है, शरीर दूसरा है', 'तथागत मरणानन्तर भी होते हैं', 'तथागत मरणानन्तर नहीं होते', 'तथागत मरणानन्तर होते भी हैं, नहीं भी होते' या 'तथागत मरणानन्तर नहीं होते, न नहीं ही होते'। वह किस लिये? ऐसा चिन्तन किसी भी अर्थ का साधक नहीं है...निर्वाणप्राप्ति का कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं करते।

''भिक्षुओ! यदि तुम्हें चिन्तन ही करना है इस का चिन्तन करो; जैसे—'यह दुःख है' ...पूर्ववत्...''॥

•

९. विग्रहकथासूत्र : : विग्रह की बातों के चिन्तन का निषेध

९. ...''भिक्षुओ! विग्रह (लड़ाई-झगड़ा=कलह) बातें न करो; जैसे—'तुम क्या

मिच्छापटिपन्नो त्वमसि, अहमस्मि सम्मापटिपन्नो। सहितं मे, असहितं ते। पुरेवचनीयं पच्छा अवच, पच्छावचनीयं पुरे अवच। अधिचिण्णं ते विपरावत्तं। आरोपितो ते वादो, चर वादप्पमोक्खाय। निग्गहितोसि, निब्बेठेहि वा सचे पहोसी' ति। तं किस्स हेतु? नेसा, भिक्खवे, कथा अत्थसंहिता नादिब्रह्मचरियका न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तति।

''कथेन्ता च खो तुम्हे, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति कथेय्याथ, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति कथेय्याथ, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति कथेय्याथ, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति कथेय्याथ...पे०...योगो करणीयो'' ति॥ ●

१०. तिरच्छानकथासुत्तं

[B.368] १०. ''मा, भिक्खवे, अनेकविहितं तिरच्छानकथं कथेय्याथ, सेय्यथीदं— [N.360] राजकथं चोरकथं महामत्तकथं सेनाकथं भयकथं युद्धकथं अन्नकथं पानकथं वत्थकथं सयनकथं मालाकथं गन्धकथं ञातिकथं यानकथं गामकथं निगमकथं [R.420] नगरकथं जनपदकथं इत्थिकथं सूरकथं विसिखाकथं कुम्भट्ठानकथं पुब्बपेतकथं नानत्तकथं लोकक्खायिकं समुद्दक्खायिकं इतिभवाभवकथं इति वा। तं

इस धर्मविनय के विषय में जानोगे, मैं ही इसे जानता हूँ', 'तूँ मिथ्याज्ञानयुक्त है, सम्यक्प्रतिपन्न (यथाविधि पठित) तो मैं ही हूँ', 'मेरा कथन ही शास्त्रानुकूल है, तेरा कथन शास्त्रविपरीत है', 'तुझे जो पहले कहना चाहिये था, तूँ उसे बाद में कह रहा है', 'तूँ अपने स्वीकृत सिद्धान्त से विरुद्ध जा रहा है', 'मैने तुझ से जो प्रश्न किया है तूँ उस का उत्तर, जानता हो तो, दे', 'अब तूँ वाद में निगृहीत हो चुका है, साहस है तो अपने को मुक्त कर!'—आदि। वह किस लिये? क्यों कि ऐसी बातों से धर्मसाधना में कोई प्रयोजन सिद्ध होने वाला नहीं हैं। न ये बातें सार्थक ही हैं। फिर ये कलहकारी बातें विराग, निरोध, निर्वाण आदि में भी सहायक नहीं हैं। इन से तुम्हारा कोई उद्देश्य पूर्ण नहीं होता।

''यदि कथा (चर्चा) करनी ही है तो 'यह दुःख है', 'यह दुःखसमुदय है', 'यह दुःखनिरोध है', 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—इन पर चर्चा करो। ...पूर्ववत्...॥ ●

१०. तिरश्चीनकथासूत्र : :पशु आदि की निरर्थक कथा का निषेध

१०. ...''भिक्षुओ! भिक्षु नाना प्रकार की परस्पर निरर्थक बातें न करें। जैसे— राजकथा, चौरकथा, महामात्यकथा, सेनाकथा, भयोत्पदककथा, युद्धकथा, अन्नकथा, पानकथा, वस्त्रकथा, शयनकथा, मालाकथा, गन्धकथा, ज्ञाति (परिवार) कथा, यानकथा, ग्रामकथा, निगमकथा, नगरकथा, जनपदकथा, स्त्रीविषयककथा, शूरवीरता की कहानियाँ, बाजार (आपण) की कथा, पनघट की कथा, भूतप्रेतकथा, नानात्वकथा, लोककथा,

किस्स हेतु? नेसा, भिक्खवे, कथा अत्थसंहिता नादिब्रह्मचरियका न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तति।

"कथेन्ता च खो तुम्हे, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति कथेय्याथ, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति कथेय्याथ, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति कथेय्याथ, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति कथेय्याथ। तं किस्स हेतु? एसा, भिक्खवे, कथा अत्थसंहिता, एसा आदिब्रह्मचरियका, एसा निब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

समाधिवग्गो पठमो॥

तस्सुद्दानं

समाधि पटिसल्लाना, कुलपुत्ता अपरे दुवे।
समणब्राह्मणा वितक्कं, चिन्ता विग्गाहिका कथा ति॥ •

समुद्रयात्राकथा, 'मैने यह सुना, मैने यह सुना' आदि कथा। वह क्यों? वह इस लिये कि भिक्षुओ! ये कथाएँ न तुम्हारे हित में हैं, न तुम्हारी धर्मसाधना के हित में, न वैराग्य, निरोध, उपशम, ज्ञान, निर्वाण आदि के प्रयोजन को ही सिद्ध करने वाली हैं।

"यदि तुम्हें किसी विषय में बातें करनी ही हैं तो 'यह दुःख है'...पूर्ववत्...इस विषय में बातें करो; क्यों कि ऐसी शुभ कथाएँ ही तुम्हारे हित में, तुम्हारी धर्मसाधना के हित में ...पूर्ववत्...निर्वाण आदि की सिद्धि में कार्यसाधिका हैं।

"इस लिये, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'...पूर्ववत्...चिन्तन करना चाहिये"॥ •

समाधिवर्ग प्रथम समाप्त॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. समाधिसूत्र, २. प्रतिसल्लानसूत्र, ३. प्रथम कुलपुत्रसूत्र, ४. द्वितीय कुलपुत्रसूत्र, ५. प्रथम श्रमणब्राह्मणसूत्र, ६. द्वितीय श्रमणब्राह्मणसूत्र, ७. वितर्कसूत्र, ८. चिन्तसूत्र, ९. विग्रहकथासूत्र एवं १०. तिरश्चीनकथासूत्र॥ •

२. धम्मचक्कप्पवत्तनवग्गो दुतियो

११. धम्मचक्कप्पवत्तनसुत्तं

११. एकं समयं भगवा बाराणसियं विहरति इसिपतने मिगदाये। तत्र खो भगवा [R.421, B.369] पञ्चवग्गिये भिक्खू आमन्तेसि—"द्वेमे, भिक्खवे, अन्ता पब्बजितेन न सेवितब्बा। कतमे द्वे? यो चायं कामेसु कामसुखल्लिकानुयोगो हीनो गम्मो पोथुज्जनिको अनरियो अनत्थसंहितो, यो चायं अत्तकिलमथानुयोगो दुक्खो अनरियो अनत्थसंहितो। एते खो, भिक्खवे, उभो अन्ते अनुपगम्म मज्झिमा पटिपदा तथागतेन अभिसम्बुद्धा चक्खुकरणी ञाणकरणी उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति।

[N.361] "कतमा च सा, भिक्खवे, मज्झिमा पटिपदा तथागतेन अभिसम्बुद्धा चक्खुकरणी ञाणकरणी उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय सवत्तति? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि, सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा, सम्मा-

---

२. धर्मचक्रप्रवर्तनवर्ग द्वितीय

११. धर्मचक्रप्रवर्तनसूत्र[1] : : भगवान् बुद्ध का प्रथम उपदेश

११. एक समय भगवान् (बुद्ध) **वाराणसी के** ऋषिपतन मृगदाव में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने पञ्चवर्गीय भिक्षुओं को (१. आज्ञातकौण्डिन्य, २. वप्र, ३. भद्दिय, ४. महानाम एवं ५. अश्वजित्) यों समझाया—"भिक्षुओ! किसी भी प्रव्रजित (संन्यासी) को इन दो अन्तों (सीमाओं=अतियों) का बहुत अधिक उपयोग नहीं करना चाहिये। कौन से दो? (१) प्रथम यह है कि हीन (निकृष्ट), ग्राम्य (अलक्ष्मीकर), मूर्खों द्वारा ही करणीय तथा अनार्यजनों द्वारा सेवित कामवासनाओं में अत्यधिक लिप्त रहना (=कामसुखल्लिकानुयोग); (२) द्वितीय यह कि जो दुःखमय, अपने लिये कष्ट कर, मूर्खों द्वारा ही करणीय, अनार्यजनों द्वारा सेवित तथा अत्यधिक अनर्थकारी क्लिष्ट तपश्चर्याओं में लगे रहना (=आत्मक्लमथानुयोग)। इन दोनों ही प्रकार की अतियों (पराकाष्ठाओं) की उपेक्षा कर तथागत (मैं) ने मध्यम मार्ग की गवेषणा की है, जो कि आँखें खोल देने वाला एवं विशिष्ट ज्ञानदायक है; तथा शान्ति, अभिज्ञा, बुद्धत्व एवं निर्वाण की ओर प्रवृत्त करने वाला है।

"भिक्षुओ! वह मध्यम मार्ग कौन सा है जो कि तथागत ने अभिसम्बुद्ध किया है ...पूर्ववत्... ? यही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग; जैसे—१. सम्यग्दृष्टि, २. सम्यक्सङ्कल्प, ३.

---

१. यह सूत्र **महावग्ग** (विनयपिटक) पालि में भी अक्षरशः ऐसा ही वर्णित है। वहाँ भी देखें (बौ.भा.सं., पृ. १७)

कम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मावायामो, सम्मासति, सम्मासमाधि। अयं खो सा, भिक्खवे, मज्झिमा पटिपदा तथागतेन अभिसम्बुद्धा चक्खुकरणी ञाणकरणी उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति।

''इदं खो पन, भिक्खवे, दुक्खं अरियसच्चं—जाति पि दुक्खा, जरा पि दुक्खा, ब्याधि पि दुक्खो, मरणं पि दुक्खं, अप्पियेहि सम्पयोगो दुक्खो, पियेहि विप्पयोगो दुक्खो, यम्पिच्छं न लभति तं पि दुक्खं—सङ्खित्तेन पञ्चुपादानक्खन्धा दुक्खा। इदं खो पन, भिक्खवे, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं—यायं तण्हा पोनोब्भविका नन्दिरागसहगता तत्रतत्राभिनन्दिनी, सेय्यथीदं—कामतण्हा, भवतण्हा, विभवतण्हा। इदं खो पन, भिक्खवे, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं—यो तस्सा येव तण्हाय असेसविरागनिरोधो चागो पटिनिस्सग्गो मुत्ति अनालयो। इदं खो पन, भिक्खवे, दुक्खनिरोधगामिनी [R.422] पटिपदा अरियसच्चं—अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि ...पे०...सम्मासमाधि।

सम्यग्वाक्, ४. सम्यक्कर्मान्त, ५. सम्यगाजीव, ६. सम्यग्व्यायाम, ७. सम्यक्स्मृति एवं ८. सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! यही वह मध्यम मार्ग है जो तथागत ने अभिसम्बुद्ध किया है तथा जो आँखें खोल देने वाला...पूर्ववत्...निर्वाण की ओर बढ़ाने वाला है।

''भिक्षुओ! (१) यह 'दु:ख' आर्यसत्य है। इस संसार में उत्पन्न होना, जन्म लेना 'दु:ख' है; जरा (वृद्धावस्था) 'दु:ख' है, मरण भी 'दु:ख' है; शोक (प्रिय वस्तु के वियोग से होने वाली मानसिक व्यथा), रोना-कलपना, दु:खी होना, चिन्तित एवं उदास होना भी 'दु:ख' है; अप्रिय विषयों से संयोग भी 'दु:ख' है, प्रिय विषयों से वियोग भी 'दु:ख' है; तथा जिस किसी प्रिय वस्तु का, चाहते हुए भी, न मिलना 'दु:ख' है। संक्षेप में यों कहा जा सकता है कि ये पाँचों (रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार एवं विज्ञान) उपादानस्कन्ध ही 'दु:ख' हैं। फिर, (२) भिक्षुओ! यह 'दु:खसमुदय' (दु:खोत्पत्ति का कारण) भी आर्यसत्य है। यह जो संसार में वारम्वार जन्म दिलाने वाली, उस में आसक्ति एवं राग की उत्पादिका, तथा जहाँ तहाँ आनन्द (सुख) का अनुभव कराने वाली तृष्णा है यही 'दु:खसमुदय' है। यह तृष्णा तीन प्रकार की है—१. कामतृष्णा, २. भव (जन्म) तृष्णा, ३. विभव (नाश) की तृष्णा। (३) भिक्षुओ! यह 'दु:खनिरोध' आर्यसत्य है। जो उपर्युक्त तृष्णा के नि:शेषत: वैराग्य, निरोध, त्याग, परित्याग, मुक्ति एवं अनासक्ति (के रूप में प्रकट होता) है। (४) और, भिक्षुओ! इस दु:खनिरोध की ओर ले जाने वाला 'मार्ग' भी आर्यसत्य है। इसे 'आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग' कहते हैं; जैसे—१. सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्...८. सम्यक्समाधि।

"'इदं दुक्खं अरियसच्चं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खं अरियसच्चं परिञ्ञेय्यं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे...पे०...उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खं अरियसच्चं परिञ्ञातं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।

[B.370] "'इदं दुक्खसमुदयं अरियसच्चं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खसमुदयं अरियसच्चं पहातब्बं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे...पे०...उदपादि। [N.362] 'तं खो पनिदं दुक्खसमुदयं अरियसच्चं पहीनं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।

"'इदं दुक्खनिरोधं अरियसच्चं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खनिरोधं अरियसच्चं सच्छिकातब्बं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे...पे०... उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खनिरोधं अरियसच्चं सच्छिकतं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे

"भिक्षुओ! १. (क) 'यह दुःख आर्यसत्य है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) पहले न सुने गये धर्मों के प्रति मेरी आँखें खुल गयीं, ज्ञान उत्पन्न हो गया, प्रज्ञा उत्पन्न हो गयी, विद्या उत्पन्न हो गयी, मेरे सम्मुख आलोक (प्रकाश) फैल गया। (ख) भिक्षुओ! 'यह दुःख आर्यसत्य परिज्ञेय है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) पहले न सुने गये धर्मों के प्रति...(प्रकाश) फैल गया। (ग) भिक्षुओ! 'यह दुःख आर्यसत्य मेरे द्वारा परिज्ञात है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) पहले न सुने गये धर्मों के प्रति...(प्रकाश) फैल गया।

"भिक्षुओ! २. (क) 'यह दुःखसमुदय आर्यसत्य है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) ...पूर्ववत्...।

(ख) 'यह दुःखसमुदय आर्यसत्य परिज्ञेय है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) ...पूर्ववत्...।

(ग) 'यह दुःखसमुदय मुझे परिज्ञात है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) ...पूर्ववत्...।

३. (क) "भिक्षुओ! 'यह दुःखनिरोध आर्यसत्य है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) ...पूर्ववत्...।

(ख) 'यह दुःखनिरोध आर्यसत्य साक्षात्करणीय है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) ...पूर्ववत्...।

अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।

'''इदं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं भावेतब्बं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे...पे०...उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं भावितं' ति मे, भिक्खवे, पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।

''यावकीवञ्च मे, भिक्खवे, इमेसु चतूसु अरियसच्चेसु एवं तिपरिवट्टं द्वादसाकारं यथाभूतं ञाणदस्सनं न सुविसुद्धं अहोसि, नेव तावाहं, भिक्खवे, सदेवके लोके [R.423] समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय 'अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो' ति पच्चञ्ञासिं।

''यतो च खो मे, भिक्खवे, इमेसु चतूसु अरियसच्चेसु एवं तिपरिवट्टं द्वादसाकारं यथाभूतं ञाणदस्सनं सुविसुद्धं अहोसि, अथाहं, भिक्खवे, सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय 'अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं

(ग) 'यह दुःखनिरोध आर्यसत्य मैंने साक्षात् कर लिया है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) ...पूर्ववत्...।

४. (क) ''भिक्षुओ! 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग आर्यसत्य है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) ...पूर्ववत्...।

(ख) 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग साक्षात्करणीय है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) ...पूर्ववत्...।

(ग) 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग मेरे द्वारा साक्षात्कृत है' (—ऐसा ज्ञान होने पर) ...पूर्ववत्...।

''भिक्षुओ! जब तक मुझे इन चार आर्यसत्यों के विषय में इस प्रकार त्रिगुण कर यह बारह आकार वाला यथार्थ (शुद्ध) ज्ञान नहीं हुआ, तब तक, भिक्षुओ! मैंने देवता, मार, ब्रह्मा सहित इस लोक में श्रमण ब्राह्मण सहित किसी भी पुरुष को यह नहीं कहा कि मैंने सम्यक्सम्बोधि का साक्षात्कार कर लिया है; परन्तु, भिक्षुओ! जब मुझे इन चार आर्यसत्यों के विषय में उपर्युक्त प्रकार से द्वादशाकार ज्ञान हो गया तब मैंने...इस लोक में श्रमण ब्राह्मणसहित समस्त जनता को बताया कि मैंने सम्यक्सम्बोधि का साक्षात्कार कर

[B.371] अभिसम्बुद्धो' ति पच्चञ्ञासिं। ञाणं च पन मे दस्सनं उदपादि—'अकुप्पा मे विमुत्ति, अयमन्तिमा जाति, नत्थिदानि पुनब्भवो''' ति।

१२. इदमवोच भगवा। अत्तमना पञ्चवग्गिया भिक्खू भगवतो भासितं अभिनन्दुं ति।

[N.363] इमस्मिं च पन वेय्याकरणस्मिं भञ्ञमाने आयस्मतो कोण्डञ्ञस्स विरजं वीतमलं धम्मचक्खुं उदपादि—''यं किञ्चि समुदयधम्मं, सब्बं तं निरोधधम्मं'' ति।

पवत्तिते च पन भगवता धम्मचक्के भुम्मा देवा सद्दमनुस्सावेसुं—''एतं भगवता बाराणसियं इसिपतने मिगदाये अनुत्तरं धम्मचक्कं पवत्तितं अप्पटिवत्तियं समणेन वा ब्राह्मणेन वा देवेन वा मारेन वा ब्रह्मुना वा केनचि वा लोकस्मिं'' ति। चातुम्महाराजिकानं देवानं सद्दं सुत्वा तावतिंसा देवा...पे०...यामा देवा...पे०...तुसिता देवा...पे०... निम्मानरती देवा...पे०...परनिम्मितवसवत्ती देवा...पे०...ब्रह्मकायिका देवा सद्दमनुस्सा-[R.424] वेसुं—''एतं भगवता बाराणसियं इसिपतने मिगदाये अनुत्तरं धम्मचक्कं पवत्तितं अप्पटिवत्तियं समणेन वा ब्राह्मणेन वा देवेन वा मारेन वा ब्रह्मुना वा केनचि वा लोकस्मिं'' ति।

इति ह तेन खणेन तेन लयेन तेन मुहुत्तेन याव ब्रह्मलोका सद्दो अब्भुग्गच्छि। अयं

लिया है। मेरी यह मुक्ति अचल है। मेरा इस संसार में यह जन्म अन्तिम है। अब मेरा यहाँ कभी जन्म नहीं होगा।''

१२. भगवान् ने यों उपदेश किया। उन पञ्चवर्गीय भिक्षुओं ने भगवान् के इस भाषण से सन्तुष्ट हो कर इस (भाषण) का अभिनन्दन किया।

आयुष्मान् कौण्डिन्य को धर्मज्ञान—(भगवान् द्वारा आर्यसत्यचतुष्टयविषयक) यह प्रवचन किये जाने के बाद ही आयुष्मान् कौण्डिन्य को यह निर्मल, निर्विकार धर्मचक्षु उत्पन्न हुआ—''जो कुछ भी यहाँ उत्पादस्वभाव पदार्थ है वह सब नाशवान् है।''

भगवान् द्वारा उपर्युक्त धर्मचक्र घुमाये (धर्मोपदेश का क्रम आरम्भ किये) जाने पर भूलोकवासी देवताओं ने हर्षध्वनि की—''भगवान् ने आज वाराणसी के ऋषिपतन मृगदाव में ऐसा अनुपम धर्मचक्र घुमाया कि अब यह किसी भी श्रमण ब्राह्मण, देवता, मार, ब्रह्मा या लोक में किसी भी अन्य पुरुष द्वारा रोकने पर भी नहीं रुक सकता। भूलोकवासी देवताओं का यह हर्षनिनाद सुन कर चातुर्महाराजिक देवों ने भी ऐसी ही हर्षध्वनि की। उन की यह हर्षध्वनि सुन कर त्रायस्त्रिंश लोकवासी देवों ने...यामदेवों ने...तुषित देवों ने...निर्माणरति देवों ने...परनिर्मितवशवर्ती देवों ने...ब्रह्मकायिक देवों ने भी यही हर्षध्वनि की...पूर्ववत्...।

च दससहस्सिलोकधातु सङ्कम्पि सम्पकम्पि सम्पवेधि, अप्पमाणो च उळारो ओभासो लोके पातुरहोसि अतिक्कम्म देवानं देवानुभावं ति।

अथ खो भगवा इदं उदानं उदानेसि—"अञ्ञासि वत, भो, कोण्डञ्ञो, अञ्ञासि वत, भो, कोण्डञ्ञो" ति! इति हिदं आयस्मतो कोण्डञ्ञस्स 'अञ्ञा-कोण्डञ्ञो' त्वेव नामं अहोसी ति॥ •

१२. तथागतसुत्तं

१३. "'इदं दुक्खं अरियसच्चं' ति, भिक्खवे, तथागतानं पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खं अरियसच्चं परिञ्ञेय्यं' ति, भिक्खवे, तथागतानं [B.372] पुब्बे...पे०...उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खं अरियसच्चं परिञ्ञातं' ति, [N.364] भिक्खवे, तथागतानं पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।

"'इदं दुक्खसमुदयं अरियसच्चं' ति भिक्खवे, तथागतानं अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खसमुदयं अरियसच्चं पहातब्बं' ति, भिक्खवे, तथागतानं [R.425] पुब्बे...पे०...उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खसमुदयं अरियसच्चं पहीनं' ति, भिक्खवे, तथागतानं पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।

इस तरह उसी क्षण उसी पल एवं उसी मुहूर्त में यह हर्षोल्लासमय निनाद (ध्वनि) ब्रह्मलोक तक पहुँच गया। तथा दश हजार लोकधातुओं वाला यह समस्त ब्रह्माण्ड कम्पित, सम्प्रकम्पित एवं सम्प्रवेधित हुआ तथा देवताओं की स्वाभाविक आभा से भी अधिक दीप्तिमय प्रकाश उस समय समस्त लोक में फैल गया।

तब भगवान् ने उस समय यह हृदयोद्गार सहर्ष प्रकट किया—"अरे! यह कौण्डिन्य तो इस धर्म के विषय में सब ओर से सब कुछ जान गया।" तभी से लोक में आयुष्मान् कौण्डिन्य 'आज्ञातकौण्डिन्य' कहलाने लगे॥ •

१२. तथागतसूत्र : : चार आर्यसत्यों का ज्ञान

१३. ..."भिक्षुओ! 'यह दुःख आर्यसत्य है'—यह तथागत को पहले कभी न सुने गये धर्मों में चक्षु उत्पन्न हुआ...। ...परिज्ञेय है...। परिज्ञात हो गया...।

"भिक्षुओ! 'यह दुःखसमुदय आर्यसत्य है'—यह तथागत को पहले कभी न सुने गये धर्मों में चक्षु उत्पन्न हुआ...। ...का प्रहाण करना चाहिये...। ...का प्रहाण हो गया...।

"'इदं दुक्खनिरोधं अरियसच्चं' ति, भिक्खवे, तथागतानं पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खनिरोधं अरियसच्चं सच्छिकातब्बं' ति, भिक्खवे, तथागतानं पुब्बे...पे०...उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खनिरोधं अरियसच्चं सच्छिकतं' ति, भिक्खवे, तथागतानं पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि।

"'इदं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं' ति, भिक्खवे, तथागतानं पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं भावेतब्बं' ति, भिक्खवे, तथागतानं पुब्बे...पे०...उदपादि। 'तं खो पनिदं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं भावितं' ति, भिक्खवे, तथागतानं पुब्बे अननुस्सुतेसु धम्मेसु चक्खुं उदपादि, ञाणं उदपादि, पञ्ञा उदपादि, विज्जा उदपादि, आलोको उदपादी'' ति॥ ●

१३. खन्धसुत्तं

१४. "चत्तारिमानि, भिक्खवे, अरियसच्चानि। कतमानि चत्तारि? दुक्खं अरियसच्चं, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं।

[N.365, B.373] "कतमं च, भिक्खवे, दुक्खं अरियसच्चं? 'पञ्चुपादानक्खन्धा' तिस्स वचनीयं, सेय्यथीदं—रूपुपादानक्खन्धो...पे०...विञ्ञाणुपादानक्खन्धो। इदं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खं अरियसच्चं।

"भिक्षुओ! 'दुःखनिरोध आर्यसत्य है'—यह तथागत को पहले कभी न सुने गये धर्मों में चक्षु उत्पन्न हुआ... ।...का साक्षात्कार करना चाहिये... । साक्षात्कार कर लिया... ।

"भिक्षुओ! 'दुःखनिरोधगामी मार्ग आर्यसत्य है'—यह तथागत को कभी पहले न सुने गये धर्मों में चक्षु उत्पन्न हुआ... ।...का अभ्यास करना चाहिये... ।...का अभ्यास कर लिया ...पूर्ववत्... ॥ ●

: :

चार आर्यसत्य

१३. स्कन्धसूत्र

१४. ..."भिक्षुओ! चार आर्यसत्य हैं। कौन से चार? दुःख आर्यसत्य, दुःखसमुदय आर्यसत्य, दुःखनिरोध आर्यसत्य, दुःखनिरोधगामी मार्ग आर्यसत्य।

"भिक्षुओ! इन में यह 'दुःख आर्यसत्य' क्या है? ये पाँच उपादानस्कन्ध ही दुःख आर्यसत्य है। जैसे—१. रूपोपादानस्कन्ध, २. वेदनोपादानस्कन्ध, ३. संज्ञोपादानस्कन्ध,

"कतमं च, भिक्खवे, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं? यायं तण्हा पोनोब्भविका नन्दिरागसहगता तत्रतत्राभिनन्दिनी, सेय्यथीदं—कामतण्हा, भवतण्हा, विभवतण्हा। इदं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं।

"कतमं च, भिक्खवे, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं? यो तस्सा येव तण्हाय असेसविरागनिरोधो चागो पटिनिस्सग्गो मुत्ति अनालयो—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं।

"कतमं च, भिक्खवे, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं। इमानि खो, भिक्खवे, [R.426] चत्तारि अरियसच्चानि।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ ●

१४. अज्झत्तिकायतनसुत्तं

१५. "चत्तारिमानि, भिक्खवे, अरियसच्चानि। कतमानि चत्तारि? दुक्खं अरियसच्चं, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं।

---

४. संस्कारोपादानस्कन्ध, एवं ५. विज्ञानोपादानस्कन्ध। यही 'दुःख आर्यसत्य' कहलाता है।

"भिक्षुओ! यह 'दुःखसमुदय आर्यसत्य' क्या है? जो यह पुनः पुनः जन्म दिलाने वाली, आसक्ति एवं राग से युक्त एवं वहाँ वहाँ का अभिनन्दन करने वाली तृष्णा; जैसे—कामतृष्णा, भवतृष्णा, विभवतृष्णा। यही 'दुःखसमुदय आर्यसत्य' कहलाता है।

"और, भिक्षुओ! यह 'दुःखनिरोध आर्यसत्य' क्या है? उसी तृष्णा का पूर्णतः निरोध, त्याग, प्रतिनिसर्ग (सर्वथा त्याग), मुक्ति एवं अनासक्ति। यही 'दुःखनिरोध...' है।

"तथा, भिक्षुओ! यह 'दुःखनिरोधगामी मार्ग' क्या है? यही आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग; जैसे—सम्यग्दृष्टि...पूर्ववत्...सम्यक्समाधि। भिक्षुओ! यह 'दुःखनिरोधगामी मार्ग आर्यसत्य' है।

"भिक्षुओ! ये चार आर्यसत्य कहलाते हैं। अतः, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'—इस पर चिन्तन करना चाहिये।'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—इस पर चिन्तन करना चाहिये"॥

१४. आध्यात्मिकायतनसूत्र : : चार आर्यसत्य

१५. "भिक्षुओ! आर्यसत्य चार हैं।...पूर्ववत्...।

"कतमं च, भिक्खवे, दुक्खं अरियसच्चं? 'छ अज्झत्तिकानि आयतनानी' तिस्स वचनीयं। कतमानि छ? चक्खायतनं...पे०...मनायतनं—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खं अरियसच्चं।

"कतमं च, भिक्खवे, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं? यायं तण्हा पोनोब्भविका नन्दिरागसहगता तत्रतत्राभिनन्दिनी, सेय्यथीदं—कामतण्हा, भवतण्हा, विभवतण्हा—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं।

[B.374] "कतमं च, भिक्खवे, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं? यो तस्सा येव तण्हाय असेसविरागनिरोधो चागो पटिनिस्सग्गो मुत्ति अनालयो—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं।

[N.366] "कतमं च, भिक्खवे, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं? अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि...पे०...सम्मासमाधि—इदं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं। इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि अरियसच्चानि।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

१५. पठमधारणसुत्तं

[R.427] १६. "धारेथ नो तुम्हे, भिक्खवे, मया चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी" ति? एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"अहं खो, भन्ते, धारेमि भगवता चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी" ति।

"यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, धारेसि मया चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी" ति?

"भिक्षुओ! यह दुःख आर्यसत्य क्या है? ये छह आध्यात्मिक आयतन ही 'दुःख आर्यसत्य' हैं। कौन से छह? चक्षुआयतन, श्रोतायतन, घ्राणायतन, जिह्वायतन, कायायतन एवं मनआयतन। भिक्षुओ! इस कहते हैं—'दुःख आर्यसत्य'।

"भिक्षुओ! यह 'दुःखसमुदय आर्यसत्य' क्या है? ...पूर्वसूत्रवत्... *(विस्तार कर लें)*॥ •

१५. प्रथम धारणसूत्र : : चार आर्यसत्यों की धारणा

१६. "भिक्षुओ! मेरे द्वारा उपदिष्ट चार आर्यसत्यों को मन में धारण कर लो।"

भगवान् द्वारा यह कहे जाने पर कोई भिक्षु भगवान् से निवेदन करने लगा-"भन्ते! आप के द्वारा निर्दिष्ट चार आर्यसत्यों को मैने धारण कर रखा है।"

"भिक्षु! तुम ने ये चार आर्यसत्य किस प्रकार धारण किये हैं?"

"दुक्खं ख्वाहं, भन्ते, भगवता पठमं अरियसच्चं देसितं धारेमि; दुक्खसमुदयं ख्वाहं, भन्ते, भगवता दुतियं अरियसच्चं देसितं धारेमि; दुक्खनिरोधं ख्वाहं, भन्ते, भगवता ततियं अरियसच्चं देसितं धारेमि; दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं ख्वाहं, भन्ते, भगवता चतुत्थं अरियसच्चं देसितं धारेमि। एवं ख्वाहं, भन्ते, धारेमि भगवता चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी" ति।

"साधु साधु, भिक्खु! साधु खो त्वं, भिक्खु, धारेसि मया चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी ति। दुक्खं खो, भिक्खु, मया पठमं अरियसच्चं देसितं, तथा नं धारेहि; दुक्खसमुदयं खो, भिक्खु, मया दुतियं अरियसच्चं देसितं, तथा नं धारेहि; दुक्खनिरोधं खो, भिक्खु, मया ततियं अरियसच्चं देसितं, तथा नं धारेहि; दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा खो, भिक्खु, मया चतुत्थं अरियसच्चं देसितं, तथा नं धारेहि। एवं खो, भिक्खु, धारेहि मया चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी ति।

"तस्मातिह, भिक्खु, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं [B.375] दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ ●

१६. दुतियधारणसुत्तं

१७. "धारेथ नो तुम्हे, भिक्खवे, मया चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी" [N.367] ति? एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"अहं खो, भन्ते, धारेमि भगवता चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी" ति।

"यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, धारेसि मया चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी" ति?

"भन्ते! 'यह दुःख है'—यह प्रथम आर्यसत्य आप के द्वारा उपदिष्ट है। 'यह दुःखसमुदय है'—यह द्वितीय आर्यसत्य...है। 'यह दुःखनिरोध है'—यह तृतीय आर्यसत्य...है। तथा 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—यह चतुर्थ आर्यसत्य...है। इस तरह आप के द्वारा उपदिष्ट चार आर्यसत्यों को मैने धारण कर रखा है।"

"साधु, भिक्षु! साधु। तुमने बहुत उचित रीति मेरे द्वारा उपदिष्ट इन चारों आर्यसत्यों को धारण कर रखा है। ...पूर्ववत्...। इसी तरह, भिक्षुओ! मेरे द्वारा उपदिष्ट चार आर्यसत्यों को धारण करना चाहिये।

"अतः, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये..."॥ ●

१६. द्वितीय धारणसूत्र : : चार आर्यसत्यों की धारणा

१७. "भिक्षुओ! मेरे द्वारा उपदिष्ट चार आर्यसत्यों को...पूर्ववत्...धारण कर रखा है।

"भिक्षु! तुम ने ये चारों आर्यसत्य कैसे धारण कर रखे हैं?"

[R.428] ''दुक्खं ख्वाहं, भन्ते, भगवता पठमं अरियसच्चं देसितं धारेमि। यो हि कोचि, भन्ते, समणो वा ब्राह्मणो वा एवं वदेय्य—'नेतं दुक्खं पठमं अरियसच्चं यं समणेन गोतमेन देसितं। अहमेतं दुक्खं पठमं अरियसच्चं पच्चक्खाय अञ्ञं दुक्खं पठमं अरियसच्चं पञ्ञापेस्सामी' ति—नेतं ठानं विज्जति। दुक्खसमुदयं ख्वाहं, भन्ते, भगवता ...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं ख्वाहं, भन्ते, भगवता चतुत्थं अरियसच्चं देसितं धारेमि। यो हि कोचि, भन्ते, समणो वा ब्राह्मणो वा एवं वदेय्य—'नेतं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा चतुत्थं अरियसच्चं यं समणेन गोतमेन देसितं। अहमेतं दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं चतुत्थं अरियसच्चं पच्चक्खाय अञ्ञं दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं चतुत्थं अरियसच्चं पञ्ञापेस्सामी' ति—नेतं ठानं विज्जति। एवं ख्वाहं, भन्ते, धारेमि भगवता चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी'' ति।

''साधु साधु, भिक्खु! साधु खो त्वं, भिक्खु, धारेसि मया चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी ति। दुक्खं खो, भिक्खु, मया पठमं अरियसच्चं देसितं, तथा नं धारेहि। यो हि कोचि, भिक्खु, समणो वा ब्राह्मणो वा एवं वदेय्य—'नेतं दुक्खं पठमं अरियसच्चं यं समणेन गोतमेन देसितं। अहमेतं दुक्खं पठमं अरियसच्चं पच्चक्खाय अञ्ञं दुक्खं पठमं अरियसच्चं पञ्ञापेस्सामी' ति—नेतं ठानं विज्जति। दुक्खसमुदयं खो, भिक्खु...पे०... दुक्खनिरोधं खो, भिक्खु ...पे०...दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा खो, भिक्खु, मया चतुत्थं
[R.429] अरियसच्चं देसितं, तथा नं धारेहि। यो हि कोचि, भिक्खु, समणो वा ब्राह्मणो
[B.376] वा एवं वदेय्य—'नेतं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा चतुत्थं अरियसच्चं यं समणेन गोतमेन देसितं। अहमेतं दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं चतुत्थं अरियसच्चं
[N.368] पच्चक्खाय अञ्ञं दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं चतुत्थं अरियसच्चं पञ्ञा-

---

''भन्ते! भगवान् ने दुःख को प्रथम आर्यसत्य बताया है, उस को मैंने प्रथम रूप से धारण कर रखा है। भन्ते! यह सम्भव नहीं है कि कोई श्रमण या ब्राह्मण यह कहे—'श्रमण गौतम द्वारा बोधित दुःख प्रथम आर्यसत्य नहीं है, मैं दुःख के अतिरिक्त अन्य प्रथम आर्यसत्य बताऊँगा'।...दुःखसमुदय के अतिरिक्त दूसरा द्वितीय आर्यसत्य...।...दुःखनिरोध के अतिरिक्त अन्य ही तृतीय आर्यसत्य...। ...दुःखनिरोधगामी मार्ग के अतिरिक्त चतुर्थ आर्यसत्य बताऊँगा। भन्ते! भगवान् के द्वारा उपदिष्ट चार आर्यसत्यों को मैं इसी प्रकार धारण करता हूँ।''

''भिक्षु! बहुत ठीक कह रहे हो। तुम इन चारों आर्यसत्यों को उचित रीति से ही धारण किये हुए हो। ...पूर्ववत्...।

पेस्सामी' ति—नेतं ठानं विज्जति। एवं खो त्वं, भिक्खु, धारेहि मया चत्तारि अरियसच्चानि देसितानी ति।

''तस्मातिह, भिक्खु, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ ●

१७. अविज्जासुत्तं

१८. एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—'''अविज्जा, अविज्जा' ति भन्ते, वुच्चति। कतमा नु खो, भन्ते, अविज्जा; कित्तावता च अविज्जागतो होती'' ति?

''यं खो, भिक्खु, दुक्खे अञ्ञाणं, दुक्खसमुदये अञ्ञाणं, दुक्खनिरोधे अञ्ञाणं, दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अञ्ञाणं—अयं वुच्चति, भिक्खु, अविज्जा; एत्तावता च अविज्जागतो होती ति।

''तस्मातिह, भिक्खु, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ ●

१८. विज्जासुत्तं

१९. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—'''विज्जा, विज्जा' ति भन्ते, वुच्चति। कतमा नु खो, भन्ते, विज्जा; कित्तावता च विज्जागतो होती'' ति?

''अतः, भिक्षु! 'यह दुःख है'—इस का मनन करना चाहिये। ...पूर्ववत्...''॥●

१७. अविद्यासूत्र : : अविद्या क्या है?

१८. ...एक ओर बैठा हुआ कोई भिक्षु भगवान् से यों पूछने लगा—''भन्ते! लोग 'अविद्या, अविद्या'—ऐसा कहते रहते हैं, भन्ते! यह 'अविद्या' क्या है? तथा कैसे कोई अविद्याग्रस्त हो जाता है?''

''भिक्षु! 'दुःख', 'दुःखसमुदय', 'दुःखनिरोध' एवं 'दुःखनिरोधगामी मार्ग'—इन का अज्ञान ही 'अविद्या' है। इसी से, अज्ञ पुरुष अविद्याग्रस्त हो जाता है।

''अतः, भिक्षु! 'यह दुःख है'—ऐसा मनन-चिन्तन करना चाहिये। ...पूर्ववत्...''॥●

१८. विद्यासूत्र : : विद्या क्या है?

१९. ...कोई भिक्षु भगवान् के सम्मुख आया...तथा यों पूछने लगा—''भन्ते! लोग 'विद्या, विद्या'—ऐसा कहते रहते हैं, भन्ते! यह 'विद्या' क्या है?''

[R.430] ''यं खो, भिक्खु, दुक्खे ञाणं, दुक्खसमुदये ञाणं, दुक्खनिरोधे ञाणं, दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय ञाणं—अयं वुच्चति, भिक्खु, विज्जा; एत्तावता च विज्जागतो होती ति।

''तस्मातिह, भिक्खु, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ •

१९. सङ्कासनसुत्तं

२०. '''इदं दुक्खं अरियसच्चं' ति भिक्खवे, मया पञ्ञत्तं। तत्थ अपरिमाणा [N.369, B.377] वण्णा अपरिमाणा ब्यञ्जना अपरिमाणा सङ्कासना—'इति पिदं दुक्खं अरियसच्चं' ति; इदं दुक्खसमुदयं...पे०...इदं दुक्खनिरोधं...पे०...'इदं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं' ति, भिक्खवे, मया पञ्ञत्तं। तत्थ अपरिमाणा वण्णा अपरिमाणा ब्यञ्जना अपरिमाणा सङ्कासना—'इति पिदं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं' ति।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ •

२०. तथसुत्तं

२१. ''चत्तारिमानि, भिक्खवे, तथानि अवितथानि अनञ्ञथानि। कतमानि

''भिक्षु! 'दुःख', 'दुःखसमुदय', 'दुःखनिरोध' एवं 'दुःखनिरोधगामी मार्ग'—इन सब का यथार्थ ज्ञान ही 'विद्या' कहलाता है, तथा इसी से ज्ञानी पुरुष 'विद्या' का लाभ करता है।

''अतः, भिक्षु! 'यह दुःख है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये। ...पूर्ववत्...''॥ •

१९. सङ्कासनसूत्र : : आर्यसत्यों को प्रकट करना

२०. ''भिक्षुओ! 'यह दुःख आर्यसत्य है'—ऐसा मैंने बताया है। उस दुःख को प्रकट करने हेतु अनेक वर्ण एवं अनेक व्यञ्जन हैं, अनेक व्याख्याएँ (=सङ्कासना) हैं—इसी को दुःख आर्यसत्य कहते हैं; यह दुःखसमुदय..., 'यह दुःखनिरोध आर्यसत्य है', 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग आर्यसत्य है'; इस मार्ग को प्रकट करने हेतु अनेक वर्ण, व्यञ्जन एवं व्याख्याएँ हैं—यही 'दुःखनिरोधगामी मार्ग' कहलाता है।

''अतः, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'—इस का चिन्तन करना चाहिये...''॥ •

२०. तथसूत्र : : चार यथार्थ बातें

२१. ''भिक्षुओ! ये चार तथ्य, अवितथ (असत्यरहित) तथा यथार्थ ही हैं,

चत्तारि? 'इदं दुक्खं' ति, भिक्खवे, तथमेतं अवितथमेतं अनञ्ञथमेतं; 'अयं दुक्खसमुदयो' ति तथमेतं अवितथमेतं अनञ्ञथमेतं; 'अयं दुक्खनिरोधो' ति तथमेतं अवितथमेतं अनञ्ञथमेतं; 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति तथमेतं [R.431] अवितथमेतं अनञ्ञथमेतं—इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि तथानि अवितथानि अनञ्ञथानि।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

धम्मचक्कप्पवत्तनवग्गो दुतियो॥

तस्सुद्दानं

धम्मचक्कं तथागतं, खन्धा आयतनेन च।
धारणा च द्वे अविज्जा, विज्जा सङ्कासना तथा ति॥ •

—※—

अन्यथा नहीं हैं। कौन चार? 'यह दुःख है', 'यह दुःखसमुदय है', 'यह दुःखनिरोध है', 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—यही तथ्य है, अवितथ है, तथा यथार्थ भी है, अन्यथा नहीं है। ...।

"अतः, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये...पूर्ववत्...॥ •

धर्मचक्रप्रवर्तनवर्ग द्वितीय सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. धर्मचक्रप्रवर्तनसूत्र, २. तथागतसूत्र, ३. स्कन्धसूत्र, ४. आध्यात्मिकायतनसूत्र, ५. प्रथम धारणसूत्र, ६. द्वितीय धारणसूत्र, ७. अविद्यासूत्र, ८. विद्यासूत्र, ९. सङ्कासनसूत्र एवं १०. तथसूत्र॥ •

—※—

३. कोटिगामवग्गो ततियो

२१. पठमकोटिगामसुत्तं

२२. एकं समयं भगवा वज्जीसु विहरति कोटिगामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"चतुन्नं, भिक्खवे, अरियसच्चानं अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममं चेव तुम्हाकं च।

[B.378] "कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स, भिक्खवे, अरियसच्चस्स अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममं चेव तुम्हाकं च। दुक्खसमुदयस्स [N.370] अरियसच्चस्स...पे०...दुक्खनिरोधस्स अरियसच्चस्स...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिया [R.432] पटिपदाय अरियसच्चस्स अननुबोधा अप्पटिवेधा एवमिदं दीघमद्धानं सन्धावितं संसरितं ममं चेव तुम्हाकं च। तयिदं, भिक्खवे, दुक्खं अरियसच्चं अनुबुद्धं पटिविद्धं, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं अनुबुद्धं पटिविद्धं, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं अनुबुद्धं पटिविद्धं, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं अनुबुद्धं पटिविद्धं; उच्छिन्ना भवतण्हा, खीणा भवनेत्ति; नत्थिदानि पुनब्भवो" ति।

२३. इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—

"चतुन्नं अरियसच्चानं, यथाभूतं अदस्सना।
संसितं दीघमद्धानं, तासु तास्वेव जातिसु॥

---

३. कोटिग्रामवर्ग तृतीय

२१. प्रथम कोटिग्रामसूत्र : : आर्यसत्यों के ज्ञानाभाव से ही पुनर्जन्म

२२. एक समय भगवान् (बुद्ध) वज्जिप्रदेश के **कोटिग्राम में** साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को यों सम्बोधित किया—"भिक्षुओ! चार आर्यसत्यों के अज्ञान तथा इन पर सूक्ष्म विचार न करने के कारण ही तुम्हें और मुझे संसार में इस जन्म से उस जन्म में उत्पन्न हो हो कर इतने दीर्घकाल तक भटकना पड़ा।

किन चार का? दुःख आर्यसत्य, दुःखसमुदय आर्यसत्य, दुःखनिरोध आर्यसत्य तथा दुःनिरोधगामी मार्ग आर्यसत्य के अज्ञान तथा अचिन्तन के कारण ही तुम को तथा मुझे इस संसार में इतने दीर्घकाल तक इधर उधर भटकना पड़ा। परन्तु, भिक्षुओ! जब से हम ने इस दुःख आर्यसत्य...पूर्ववत्...का ज्ञान तथा योनिशःमनस्कार कर लिया, तब से हमारी भवतृष्णा उच्छिन्न हो गयी, भव की ओर प्रवृत्त करने वाली आसक्ति (राग) का नाश हो गया, तब से हमारे इस संसार में पुनर्भव का प्रश्न भी समाप्त हो गया।"

२३. भगवान् यों बोले। तथा उन्होंने पुनः इन दो गाथाओं के माध्यम से यह भी कहा—

तानि एतानि दिट्ठानि, भवनेत्ति समूहता।
उच्छिन्नं मूलं दुक्खस्स, नत्थिदानि पुनब्भवो'' ति॥ •

२२. दुतियकोटिगामसुत्तं

२४. ''ये हि केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति, न मेते, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु वा समणसम्मता ब्राह्मणेसु वा ब्राह्मणसम्मता, न च पनेते आयस्मन्तो सामञ्ञत्थं वा ब्रह्मञ्ञत्थं वा दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति।

''ये च खो केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानन्ति, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति यथाभूतं पजानन्ति, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति यथाभूतं पजानन्ति, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानन्ति, ते खो मे, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा समणेसु चेव समणसम्मता ब्राह्मणेसु च [B.379, R.433] ब्राह्मणसम्मता, ते च पनायस्मन्तो सामञ्ञत्थं च ब्रह्मञ्ञत्थं च दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ती'' ति।

२५. इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—[N.371]

''चार आर्यसत्यों का यथार्थ ज्ञान न होने के कारण, (हमें) दीर्घकाल तक उन उन जन्मों में उत्पन्न हो हो कर भटकना पड़ा।

''अब उन आर्यसत्यों का हम ने साक्षात्कार कर लिया है, भव (संसार) की ओर प्रवृत्त करने वाली अपनी तृष्णा भी नष्ट कर डाली है। दु:खों को समूल नष्ट कर दिया, अत: अब (हमारा) पुनर्जन्म हों—यह सम्भव ही नहीं रह गया!''॥ •

२२. द्वितीय कोटिग्रामसूत्र : : वे वास्तविक श्रमण ब्राह्मण नहीं

२४. ''भिक्षुओ! जो श्रमण या ब्राह्मण 'यह दु:ख है', 'यह दु:खसमुदय है', 'यह दु:खनिरोध है', 'यह दु:खनिरोधगामी मार्ग है'—इन बातों को नहीं जानते, वे न तो श्रमणों में श्रमण हैं और न ब्राह्मणों में ब्राह्मण। तथा न वे परमार्थ को इसी जन्म में स्वयं जान कर एवं साक्षात्कार कर, प्राप्त कर साधना ही कर सकते हैं।

(परन्तु) ''भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण 'यह दु:ख है'...पूर्ववत्...इन बातों को जानते हैं, वे ही श्रमणों में 'श्रमण' एवं ब्राह्मणों में 'ब्राह्मण' कहलाने योग्य हैं। तथा वे ही परमार्थ (निर्वाण) को इसी जन्म में जान कर साक्षात्कार कर, प्राप्त कर साधना करते हैं।''

"ये दुक्खं नप्पजानन्ति, अथो दुक्खस्स सम्भवं।
यत्थ च सब्बसो दुक्खं, असेसं उपरुज्झति॥
"तं च मग्गं न जानन्ति, दुक्खूपसमगामिनं।
चेतोविमुत्तिहीना ते, अथो पञ्ञाविमुत्तिया।
अभब्बा ते अन्तकिरियाय, ते वे जातिजरूपगा॥
"ये च दुक्खं पजानन्ति, अथो दुक्खस्स सम्भवं।
यत्थ च सब्बसो दुक्खं, असेसं उपरुज्झति॥
"तं च मग्गं पजानन्ति, दुक्खूपसमगामिनं।
चेतोविमुत्तिसम्पन्ना, अथो पञ्ञाविमुत्तिया।
सब्बा ते अन्तकिरियाय, न ते जातिजरूपगा" ति॥ •

२३. सम्मासम्बुद्धसुत्तं

२६. सावत्थिनिदानं। चत्तारिमानि, भिक्खवे, अरियसच्चानि। कतमानि चत्तारि? दुक्खं अरियसच्चं...पे०...दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं—इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि अरियसच्चानि। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं अरियसच्चानं यथाभूतं अभिसम्बुद्धत्ता तथागतो 'अरहं सम्मासम्बुद्धो' ति वुच्चति।

---

२५. भगवान् यह बोले। तथा साथ ही, इन गाथाओं के माध्यम से उन्होंने यह भी कहा—

"जो 'दुःख' को नहीं जानते, तथा दुःखोत्पत्ति कारण को भी नहीं जानते; तथा जहाँ दुःख सर्वथा निरुद्ध हो जाता है॥

"एवं उस दुःख के नाशक मार्ग को भी नहीं जानते, जो चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति से हीन हैं; वे जन्म एवं जरा के जञ्जाल में फँसे हुए अपने इस दुःख का अन्त करने में समर्थ नहीं हो सकते॥

(इस के विपरीत—) "जो दुःख, दुःखसमुदय, दुःखनिरोध एवं दुःखनिरोधगामी मार्ग को जानते हैं, तथा चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति से युक्त हैं वे यहाँ पुनः पुनः जन्म न ले कर अपने दुःखों का सर्वथा अन्त करने में समर्थ हो जाते हैं॥" •

२३. सम्यक्सम्बुद्धसूत्र : : चतुरार्यसत्यज्ञान से बुद्धत्वप्राप्ति

२६. **श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! चार आर्यसत्य हैं। कौन से चार? दुःख... दुःखनिरोधगामी मार्ग—ये चार आर्यसत्य हैं। भिक्षुओ! इन चारों आर्यसत्यों का यथार्थतः ज्ञान कर लेने के कारण, तथागत 'ज्ञानी, सम्यक्सम्बुद्ध' कहलाते हैं।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्ख-निरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ ●

२४. अरहन्तसुत्तं

२७. सावत्थिनिदानं। ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं अरहन्तो [B.380] सम्मासम्बुद्धा यथाभूतं अभिसम्बुज्झिसु, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बुज्झिसु। ये हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं अरहन्तो सम्मा-[R.434] सम्बुद्धा यथाभूतं अभिसम्बुज्झिस्सन्ति, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बुज्झिस्सन्ति। ये हि केचि, भिक्खवे, एतरहि अरहन्तो सम्मासम्बुद्धा [N.372] यथाभूतं अभिसम्बुज्झन्ति, सब्बे ते चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बुज्झन्ति।

"कतमानि चत्तारि? दुक्खं अरियसच्चं, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं। ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं अरहन्तो सम्मासम्बुद्धा यथाभूतं अभिसम्बुज्झिसु...पे०...अभि-सम्बुज्झिस्सन्ति...अभिसम्बुज्झन्ति, सब्बे ते इमानि चत्तारि अरियसच्चानि यथाभूतं अभिसम्बुज्झन्ति।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्ख-निरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ ●

२५. आसवक्खयसुत्तं

२८. "जानतोहं, भिक्खवे, पस्सतो आसवानं खयं वदामि, नो अजानतो

"अतः, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'—इस का मनन करना चाहिये। ...पूर्ववत्..."॥●

२४. अर्हत्सूत्र : : चार आर्यसत्य

२७. **श्रावस्ती में** ही...। "भिक्षुओ! अतीत काल में जिन अर्हत्सम्यक्सम्बुद्धों ने ...अनागत काल में...वर्तमान काल में जो सम्यक्सम्बुद्ध हुए हैं, उन सब ने चार आर्यसत्यों को जान कर ही अभिसम्बोधि प्राप्त की है।

"कौन से चार? दुःख आर्यसत्य...पूर्ववत्...दुःखनिरोधगामी मार्ग। इन चार आर्यसत्यों का उन सभी अर्हत् सम्यक्सम्बुद्धों ने यथार्थ ज्ञान प्राप्त किया है।

"इस लिये, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'—इस पर चिन्तन करना चाहिये। ...पूर्ववत्..."॥ ●

२५. आश्रवक्षयसूत्र : : आर्यसत्यचतुष्टयज्ञान से आश्रवक्षय

२८. "भिक्षुओ! मैने ज्ञान प्राप्त कर, साक्षात्कार कर के ही आश्रवों के क्षय का

अपस्सतो। किञ्च, भिक्खवे, जानतो पस्सतो आसवानं खयो होति? 'इदं दुक्खं' ति, भिक्खवे, जानतो पस्सतो आसवानं खयो होति, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति जानतो पस्सतो आसवानं खयो होति, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति जानतो पस्सतो आसवानं खयो होति, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति जानतो पस्सतो आसवानं खयो होति। एवं खो, भिक्खवे, जानतो एवं पस्सतो आसवानं खयो होति।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

६. मित्तसुत्तं

२९. "ये हि केचि, भिक्खवे, अनुकम्पेय्याथ, ये च सोतब्बं मञ्ञेय्युं—मित्ता वा [R.435] अमच्चा वा ञाती वा सालोहिता वा—ते वो, भिक्खवे, चतुन्नं अरियसच्चानं यथाभूतं अभिसमयाय समादपेतब्बा निवेसेतब्बा पतिट्ठापेतब्बा।

[B.381] "कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स अरियसच्चस्स, दुक्खसमुदयस्स अरियसच्चस्स, दुक्खनिरोधस्स अरियसच्चस्स, दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स। ये हि केचि, भिक्खवे, अनुकम्पेय्याथ, ये च सोतब्बं मञ्ञेय्युं—मित्ता वा अमच्चा वा ञाती वा [N.373] सालोहिता वा ते वो, भिक्खवे, इमेसं चतुन्नं अरियसच्चानं यथाभूतं अभिसमयाय समादपेतब्बा निवेसेतब्बा पतिट्ठापेतब्बा।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

उपदेश तुम लोगों को किया है, विना जाने या साक्षात्कार किये विना नहीं किया। भिक्षुओ! यह 'जान कर साक्षात्कार कर आश्रवों का क्षय' क्या होता है? 'यह दुःख है'—इस को, 'यह दुःखसमुदय है'—इस को, 'यह दुःखनिरोध है'—इस को, 'यह दुःखनिरोधगामिनी प्रतिपदा है'—इस को जान कर साक्षात्कार कर आश्रवों का क्षय होता है। ...।

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस पर चिन्तन करना चाहिये ...पूर्ववत्..."॥ •

२६. मित्रसूत्र : :मित्र आदि को आर्यचतुष्टय का उपदेश

२९. "भिक्षुओ! तुम जिन पर कृपालु हो, या जो तुम्हारी बात को आदर तथा श्रद्धा के साथ सुनना चाहते हों; फिर भले ही वे तुम्हारे मित्र हों, या अमात्य (साथी) हों, परिवारजन हों या रक्तसम्बन्धी हों—उन सभी को तुम चार आर्यसत्यों का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने के लिये प्रोत्साहित एवं प्रतिष्ठित करो।

२७. तथसुत्तं

३०. ''चत्तारिमानि, भिक्खवे, अरियसच्चानि। कतमानि चत्तारि? दुक्खं अरियसच्चं, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं—इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि अरियसच्चानि तथानि अवितथानि अनञ्ञथानि; तस्मा 'अरियसच्चानी' ति वुच्चन्ति।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ •

२८. लोकसुत्तं

३१. ''चत्तारिमानि, भिक्खवे, अरियसच्चानि। कतमानि चत्तारि? दुक्खं अरियसच्चं, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं। सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय तथागतो अरियो; तस्मा 'अरियसच्चानी' ति वुच्चन्ति।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ •

२९. परिञ्ञेय्यसुत्तं

३२. ''चत्तारिमानि, भिक्खवे, अरियसच्चानि। कतमानि चत्तारि? दुक्खं [R.436] अरियसच्चं, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं, दुक्खनिरोधगामिनी

''किन चारों का? दुःख आर्यसत्य का, दुःखसमुदय का, दुःखनिरोध का, दुःखनिरोधगामी मार्ग का। अतः, जिन पर तुम कृपालु हो...पूर्ववत्...''॥ •

२७. तथसूत्र : : आर्यसत्य यथार्थ हैं

३०. ''भिक्षुओ! आर्यसत्य चार हैं। कौन से चार? ...पूर्ववत्...। ये चारों आर्यसत्य तथ्य हैं, अवितथ हैं, एवं यथार्थ भी हैं, अन्यथा नहीं है।

''अतः, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये...''॥ •

२८. लोकसूत्र : : बुद्ध ही आर्य हैं

३१. ''भिक्षुओ! ये चार आर्यसत्य हैं। कौन से चार? ...पूर्ववत्...। देवता, मार, ब्रह्मासहित इस समस्त लोक में...तथागत बुद्ध ही 'आर्य' हैं, अतः उन के द्वारा उपदिष्ट सत्य 'आर्यसत्य' कहलाते हैं। ...पूर्ववत्...''॥ •

२९. परिज्ञेयसूत्र : : आर्यसत्य यथार्थतः जानने योग्य

३२. ''भिक्षुओ! चार आर्यसत्य हैं। कौन से चार? ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! इन

[B.382] पटिपदा अरियसच्चं—इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि अरियसच्चानि। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं अरियसच्चानं अत्थि अरियसच्चं परिञ्ञेय्यं, अत्थि अरियसच्चं पहातब्बं, अत्थि अरियसच्चं सच्छिकातब्बं, अत्थि अरियसच्चं भावेतब्बं।

[N.374] "कतमं च, भिक्खवे, अरियसच्चं परिञ्ञेय्यं? दुक्खं, भिक्खवे, अरियसच्चं परिञ्ञेय्यं, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं पहातब्बं, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं सच्छिकातब्बं, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा अरियसच्चं भावेतब्बं।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्ख-निरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ ●

३०. गवम्पतिसुत्तं

३३. एकं समयं सम्बहुला थेरा भिक्खू चेतेसु विहरन्ति सहञ्चनिके। तेन खो पन समयेन सम्बहुलानं थेरानं भिक्खूनं पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तानं मण्डलमाळे सन्निसिन्नानं सन्निपतितानं अयमन्तराकथा उदपादि—"यो नु खो, आवुसो, दुक्खं पस्सति दुक्खसमुदयं पि सो पस्सति, दुक्खनिरोधं पि पस्सति, दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं पि पस्सती" ति।

[R.437] एवं वुत्ते आयस्मा गवम्पति थेरो भिक्खु एतदवोच—"सम्मुखा मेतं, आवुसो, भगवतो सुतं, सम्मुखा पटिग्गहितं—"यो, भिक्खवे, दुक्खं पस्सति दुक्खसमुदयं पि सो

चारों में से कोई आर्यसत्य परिज्ञेय (यथार्थतः जानने योग्य) है, कोई प्रहातव्य (त्याग करने योग्य) है, कोई आर्यसत्य साक्षात्करणीय है और कोई भावनीय (साधना करने योग्य) है।

"भिक्षुओ! इन में कौन सा आर्यसत्य परिज्ञेय है? 'दुःख' आर्यसत्य परिज्ञेय है। 'दुःखसमुदय' आर्यसत्य प्रहाण करने योग्य है। 'दुःखनिरोध' आर्यसत्य साक्षात्करणीय है। तथा 'दुःखनिरोधगामिनी प्रतिपदा' (मार्ग) आर्यसत्य साधना करने योग्य है।

"इस लिये, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'—इस पर मनन-चिन्तन करना चाहिये"॥●

३०. गवाम्पतिसूत्र : : चार आर्यसत्यों का दर्शन

३३. एक समय बहुत से भिक्षु **चेत** जनपद के **सहञ्चनिक** ग्राम में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। उस समय भोजनकृत्य के बाद वृत्ताकार मण्डप में बैठे हुए भिक्षुओं में यह धर्मचर्चा होने लगी—"आयुष्मानो! जो 'दुःख' को जान लेता है वह 'दुःखसमुदय', 'दुःखनिरोध', 'दुःखनिरोधगामी मार्ग' को भी जान लेता है।"

यह सुन कर आयुष्मान् गवाम्पति स्थविर भिक्षु ने यह कहा—"आयुष्मानो! मैंने भगवान् के श्रीमुख से स्वयं सुना है, तथा उन से सुन कर ही सीखा है। उन का उपदेश यह

पस्सति, दुक्खनिरोधं पि पस्सति, दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं पि पस्सति। यो दुक्खसमुदयं पस्सति दुक्खं पि सो पस्सति, दुक्खनिरोधं पि पस्सति, दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं पि पस्सति। यो दुक्खनिरोधं पस्सति दुक्खं पि सो पस्सति, दुक्खसमुदयं पि पस्सति, दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं पि पस्सति। यो दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं पस्सति दुक्खं पि सो पस्सति, दुक्खसमुदयं पि पस्सति, दुक्खनिरोधं पि पस्सती''' ति॥

●

कोटिगामवग्गो ततियो॥

तस्सुद्दानं

द्वे वज्जी सम्मासम्बुद्धो, अरहं आसवक्खयो।
मित्तं तथा च लोको च, परिञ्ञेय्यं गवम्पती ति॥

●

है—'भिक्षुओ! जो 'दु:ख' को जानता है वह 'दु:खसमुदय', 'दु:खनिरोध' एवं 'दु:खनिरोधगामी मार्ग'—इन तीनों को भी जान लेता है। तथा जो 'दु:खसमुदय' को जानता है वह 'दु:ख' को भी जानता है, 'दु:खनिरोध' को एवं 'दु:खनिरोधगामी मार्ग' को भी जान लेता है। एवं जो 'दु:खनिरोध' को जानता है वह 'दु:ख', 'दु:खसमुदय' एवं 'दु:खनिरोधगामी मार्ग'—इन तीनों को भी जानता है। तथा जो 'दु:खनिरोधगामी मार्ग' को जानता है वह 'दु:ख', 'दु:खसमुदय' एवं 'दु:खनिरोध'—इन तीनों को भी जान लेता है'॥''

●

कोटिग्रामवर्ग तृतीय सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. प्रथम कोटिग्रामसूत्र, २. द्वितीय कोटिग्रामसूत्र, ३. सम्यक्सम्बुद्धसूत्र, ४. अर्हत्सूत्र, ५. आश्रवक्षयसूत्र, ६. मित्रसूत्र, ७. तथसूत्र, ८. लोकसूत्र, ९. परिज्ञेयसूत्र एवं १०. गवाम्पतिसूत्र॥

●

४. सींसपावनवग्गो चतुत्थो

३१. सीसपावनसुत्तं

[B.383] ३४. एकं समयं भगवा कोसम्बियं विहरति सीसपावने। अथ खो भगवा [N.375] परित्तानि सीसपापण्णानि पाणिना गहेत्वा भिक्खू आमन्तेसि—"तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यानि वा मया परित्तानि सीसपापण्णानि पाणिना गहितानि यदिदं उपरि सीसपावने" ति?

[R.438] "अप्पमत्तकानि, भन्ते, भगवता परित्तानि सीसपापण्णानि पाणिना गहितानि; अथ खो एतानेव बहुतरानि यदिदं उपरि सीसपावने" ति।

"एवमेव खो, भिक्खवे, एतदेव बहुतरं यं वो मया अभिञ्ञाय अनक्खातं। कस्मा चेतं, भिक्खवे, मया अनक्खातं? न हेतं, भिक्खवे, अत्थसंहितं नादिब्रह्मचरियकं न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तति; तस्मा तं मया अनक्खातं।

"किञ्च, भिक्खवे, मया अक्खातं? 'इदं दुक्खं' ति, भिक्खवे, मया अक्खातं, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति मया अक्खातं, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति मया अक्खातं, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति मया अक्खातं।

---

४. शिंशपावनवर्ग चतुर्थ

३१. शिंशपावनसूत्र : : कथित बातें अल्प हैं

३४. एक समय भगवान् (बुद्ध) कौशाम्बी के शिंशपावन में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय भगवान् ने (भिक्षुओं को उपदेश देने हेतु) हाथ में सीसम वृक्ष के कुछ पत्र ले कर भिक्षुओं से पूछा—"भिक्षुओ! ये मेरे हाथ में सीसम वृक्ष के पत्ते अधिक हैं या इस वन में खड़े इन वृक्षों के पत्र अधिक हैं?"

"भन्ते! भगवान् के हाथ वाले पत्र अल्प हैं, तथा इस वन के वृक्षों में लगे हुए पत्र ही अधिक हैं।"

"इसी तरह, भिक्षुओ! वही अधिक है जो मैंने (उपदेश के रूप में) कभी नहीं कहा है। तथा वह कम है जो मैंने तुम को (उपदेश के रूप में) कहा है। यह मैंने क्यों नहीं कहा? क्यों कि इस से तुम्हारा कोई प्रयोजन सिद्ध होने वाला नहीं है। न यह धर्म में वृद्धि करता है, न तुम्हें यह संसार के वैराग्य...निर्वाण की ओर ले जाने वाला ही है। इसी लिये मैंने तुम को यह सब नहीं कहा।

"फिर, भिक्षुओ! तुम से कहा क्या है? भिक्षुओ! 'यह दुःख है', 'यह दुःखसमुदय है', 'यह दुःखनिरोध है', 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—यही कहा है।

"कस्मा चेतं, भिक्खवे, मया अक्खातं? एतं हि, भिक्खवे, अत्थसंहितं एतं आदिब्रह्मचरियकं एतं निब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति; तस्मा तं मया अक्खातं।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥

३२. खदिरपत्तसुत्तं

३५. "यो, भिक्खवे, एवं वदेय्य—'अहं दुक्खं अरियसच्चं यथाभूतं अनभिसमेच्च, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं यथाभूतं अनभिसमेच्च, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं यथाभूतं अनभिसमेच्च, दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं अरियसच्चं यथाभूतं अनभिसमेच्च सम्मा दुक्खस्सन्तं करिस्सामी' ति—नेतं ठानं विज्जति।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, यो एवं वदेय्य—'अहं खदिरपत्तानं वा सरल- [B.384] पत्तानं वा आमलकपत्तानं वा पुटं करित्वा उदकं वा तेलं वा घतं वा [R.439, N.376] आहरिस्सामी' ति—नेतं ठानं विज्जति; एवमेव खो, भिक्खवे, यो एवं वदेय्य—'अहं दुक्खं अरियसच्चं यथाभूतं अनभिसमेच्च...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं अरियसच्चं यथाभूतं अनभिसमेच्च सम्मा दुक्खस्सन्तं करिस्सामी' ति—नेतं ठानं विज्जति।

"यह मैने क्यों कहा है? क्यों कि यह तुम्हारा प्रयोजन (निर्वाणप्राप्ति) सिद्ध करने वाला है। यह तुम्हें वैराग्य, निरोध, उपशम, अभिज्ञा, सम्बोधि एवं निर्वाण की ओर ले जाने वाला है।

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस पर चिन्तन-मनन करना चाहिये। ...पूर्ववत्..."॥

३२. खदिरपत्रसूत्र : : कथित उपदेश अल्प है

३५. "जो, भिक्षुओ! ऐसा कहे—'मैं 'दुःख आर्यसत्य' का यथार्थतः ज्ञान प्राप्त किये विना ही, 'दुःखसमुदय'...'दुःखनिरोध'...'दुःखनिरोधगामी मार्ग' का ज्ञान प्राप्त किये विना ही, अपने दुःखों का भली भाँति अन्त कर लूँगा' तो उस का यह कहना उचित नहीं है।

"जैसे, भिक्षुओ! कोई यह कहे—'मैं खदिर वृक्ष, सरल वृक्ष, या आमलक वृक्ष के पत्तों का दौना (सम्पुट) बना कर इस में जल, तैल या घृत ले आऊँगा', तो जैसे यह असम्भव है; उसी तरह, भिक्षुओ! जो यह कहे—'मैं दुःख आर्यसत्य को जाने विना...पूर्ववत्...दुःखनिरोधगामी मार्ग को जाने विना ही अपने दुःखों का अन्त कर लूँगा' यह भी असम्भव है।

"यो च खो, भिक्खवे, एवं वदेय्य—'अहं दुक्खं अरियसच्चं यथाभूतं अभिसमेच्च, दुक्खसमुदयं अरियसच्चं यथाभूतं अभिसमेच्च, दुक्खनिरोधं अरियसच्चं यथाभूतं अभिसमेच्च, दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं अरियसच्चं यथाभूतं अभिसमेच्च सम्मा दुक्खस्सन्तं करिस्सामी' ति—ठानमेतं विज्जति।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, यो एवं वदेय्य—'अहं पदुमपत्तानं वा पलासपत्तानं वा मालुवपपत्तानं वा पुटं करित्वा उदकं वा तेलं वा घतं[१] वा आहरिस्सामी' ति—ठानमेतं विज्जति; एवमेव खो, भिक्खवे, यो एवं वदेय्य—'अहं दुक्खं अरियसच्चं यथाभूतं अभिसमेच्च...पे०... दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं अरियसच्चं यथाभूतं अभिसमेच्च सम्मा दुक्खस्सन्तं करिस्सामी' ति—ठानमेतं विज्जति।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

३३. दण्डसुत्तं

३६. "सेय्यथापि, भिक्खवे, दण्डो उपरिवेहासं खित्तो सकिं पि मूलेन निपतति, सकिं पि अग्गेन निपतति; एवमेव खो, भिक्खवे, अविज्जानीवरणा सत्ता तण्हासंयोजना सन्धावन्ता संसरन्ता सकिं अस्मा लोका परं लोकं गच्छन्ति, सकिं पि परस्मा लोका इमं

(इस के विपरीत—) "भिक्षुओ! जो यह कहे—'मैं दुःख आर्यसत्य...दुःखसमुदेय आर्यसत्य...दुःखनिरोध आर्यसत्य...दुःखनिरोधगामी आर्यसत्य को यथार्थतः जान कर, समझ कर अपने दुःखों का अन्त कर लूँगा', तो इस का यह कथन उचित लगता है।

"जैसे, भिक्षुओ! कोई यह कहे—'मैं पद्मपत्र, मालुवालता के पत्र, या ढाक के पत्रों का दौना (पुटक) बना कर उस में जल, तैल या घृत ले आऊँगा', तो इस का यह कथन उचित लगता है; इसी तरह, भिक्षुओ! जो यह कहे—'मैं दुःख आर्यसत्य...पूर्ववत्... मार्ग आर्यसत्य को यथार्थतः जान कर, समझ कर अपने दुःखों का अन्त कर लूँगा'—उस का यह कहना उचित प्रतीत होता है।

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस पर चिन्तन-मनन करना चाहिये ...पूर्ववत्..."॥ •

३३. दण्डसूत्र : : आर्यसत्यचतुष्टय-ज्ञान का फल

३६. ..."जैसे, भिक्षुओ! कोई दण्ड आकाश में फेंका जाय तो वह नीचा गिरता हुआ कभी मूल की ओर से नीचे गिरेगा तो कभी अग्रभाग की ओर से; इसी तरह, भिक्षुओ! ये अविद्या एवं तृष्णा के बन्धन में बँधे हुए सांसारिक प्राणी इधर उधर जन्म

---

१. तालपत्तं—ति मु० पा०।

लोकं आगच्छन्ति। तं किस्स हेतु? अदिट्ठत्ता, भिक्खवे, चतुन्नं अरियसच्चानं। कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स अरियसच्चस्स...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं [R.440] दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥

●

३४. चेलसुत्तं

३७. "आदित्ते, भिक्खवे, चेले वा सीसे वा किमस्स करणीयं" ति? [N.377]

"आदित्ते, भन्ते, चेले वा सीसे वा, तस्सेव चेलस्स वा सीसस्स वा [B.385] निब्बापनाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं" ति।

"आदित्तं, भिक्खवे, चेलं वा सीसं वा अज्झुपेक्खित्वा अमनसिकरित्वा अनभिसमेतानं चतुन्नं अरियसच्चानं यथाभूतं अभिसमयाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं। कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स अरियसच्चस्स...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥

●

लेते हुए कभी इस लोक से परलोक में जाते हैं, कभी परलोक से यहाँ आते हैं। वह किस लिये? चार आर्यसत्यों का ज्ञान तथा साक्षात्कार न करने के कारण। किन चार का? दुःख, दुःखसमुदय, दुःखनिरोध एवं दुःखनिरोधगामी मार्ग आर्यसत्य।

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस आर्यसत्य का मनन-चिन्तन करना चाहिये...पूर्ववत्..."॥

●

३४. चैलसूत्र : :जलने से न डर कर आर्यसत्यों का ज्ञान

३७. ..."भिक्षुओ! वस्त्रों में या शिर में अग्नि लग जाने पर क्या करना चाहिये?"

"भन्ते! वस्त्रों में या शिर में अग्नि लग जाने पर उस को अत्यधिक मनोयोग (छन्द), व्यायाम, उत्साह, तत्परता, ध्यानपूर्वक एवं सावधानी से बुझाने का तत्काल प्रयास प्रारम्भ करना चाहिये। उसी तरह, भिक्षुओ! वस्त्रों में या शिर में अग्नि लग जाने पर उस की उपेक्षा कर, उस पर ध्यान न दे कर, अज्ञात चार आर्यसत्यों के ज्ञान के लिये अत्यधिक मनोयोग, व्यायाम (उद्योग), उत्साह, तत्परता, ध्यानपूर्वक एवं सावधानी से प्रयास करना चाहिये। कौन से चार? दुःख...पूर्ववत्...।

३५. सत्तिसतसुत्तं

३८. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो वस्ससतायुको वस्ससतजीवी। तमेनं एवं वदेय्य—'एहम्भो पुरिस, पुब्बण्हसमयं तं सत्तिसतेन हनिस्सन्ति, मज्झन्हिकसमयं सत्तिसतेन हनिस्सन्ति, सायन्हसमयं सत्तिसतेन हनिस्सन्ति। सो खो त्वं, अम्भो पुरिस, दिवसे दिवसे तीहि तीहि सत्तिसतेहि हञ्ञमानो वस्ससतायुको वस्ससतजीवी वस्स- [R.441] सतस्स अच्चयेन अनभिसमेतानि चत्तारि अरियसच्चानि अभिसमेस्ससी' ति।

''अत्थवसिकेन, भिक्खवे, कुलपुत्तेन अलं उपगन्तुं। तं किस्स हेतु? अनमतग्गोयं, भिक्खवे, संसारो; पुब्बा कोटि नप्पञ्ञायति सत्तिप्पहारानं असिप्पहारानं उसुप्पहारानं फरसुप्पहारानं। एवं चेतं, भिक्खवे, अस्स। न खो पनाहं, भिक्खवे, सह दुक्खेन सह दोमनस्सेन चतुन्नं अरियसच्चानं अभिसमयं वदामि; अपि चाहं, भिक्खवे, सहा व सुखेन सहा व सोमनस्सेन चतुन्नं अरियसच्चानं अभिसमयं वदामि। कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स अरियसच्चस्स...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स।

[N.378, B.386] ''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥

''इस लिये...भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस पर मनन करना चाहिये। ...पूर्ववत्...''॥

३५. शक्तिशतसूत्र : : सौ भालों से छेदा जाना

३८. ''जैसे, भिक्षुओ! किसी पुरुष की सौ वर्ष आयु हो, वह सौ वर्ष जीवित रहने वाला हो। कोई उस से आ कर यह कहे—'अरे पुरुष! तुम को प्रातः मध्याह्न एवं सायम्—तीनों समय सौ भाले भौंके जायँगे। इस तरह तुम प्रतिदिन तीन सौ भालों का आघात सहते हुए यदि साधना करते रहोगे तो सौ वर्ष जीवित रह कर, सौ वर्ष बाद, इन अज्ञात चार आर्यसत्यों को यथार्थतः जान सकोगे।'

''परमार्थप्राप्ति के इच्छुक साधक कुलपुत्र को यह भी स्वीकार कर लेना चाहिये। वह क्यों? वह इस लिये कि, भिक्षुओ! इस संसार के अन्त की सीमा नहीं जानी जाती। भाले, तलवार, या फरसे के प्रहार कब आरम्भ हुए—यह ज्ञात नहीं रहता। भिक्षुओ! इस लिये इतना कष्ट सह कर प्राप्त हुई चार आर्यसत्यों की ज्ञानप्राप्ति के बाद, मैं इसे 'कष्ट' नहीं कहता, अपि तु इसे बहुत सुख एवं सौमनस्य प्राप्त हुई साधना ही समझता हूँ। किन चार का? दुःख...दुःख-समुदय...दुःखनिरोध...एवं दुःखनिरोधगामी प्रतिप्रदा आर्यसत्य का।

३६. पाणसुत्तं

३९. "सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो यं इमस्मिं जम्बुदीपे तिणकट्ठसाखापलासं तच्छेत्वा एकज्झं संहरेय्य; एकज्झं संहरित्वा सूलं करेय्य; सूलं करित्वा ये महासमुद्दे महन्तका पाणा ते महन्तकेसु सूलेसु आवुनेय्य, ये महासमुद्दे मज्झिमका पाणा ते मज्झिमकेसु सूलेसु आवुनेय्य, ये महासमुद्दे सुखुमका पाणा ते सुखुमकेसु सूलेसु आवुनेय्य। अपरियादिन्ना च, भिक्खवे, महासमुद्दे ओळारिका पाणा अस्सु; अथ इमस्मिं जम्बुदीपे तिणकट्ठसाखापलासं परिक्खयं परियादानं गच्छेय्य। इतो बहुतरा खो, भिक्खवे, महासमुद्दे सुखुमका पाणा, ये न सुकरा सूलेसु आवुनितुं। तं किस्स [R.442] हेतु? सुखुमत्ता, भिक्खवे, अत्तभावस्स। एवं महा खो, भिक्खवे, अपायो। एवं महन्तस्मा खो, भिक्खवे, अपायस्मा परिमुत्तो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

३७. पठमसुरियसुत्तं

४०. "सुरियस्स, भिक्खवे, उदयतो एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दु:ख है'—इस आर्यसत्य का मनन करना चाहिये ...पूर्ववत्..."॥ •

३६. प्राणसूत्र : : दुर्गति से मुक्तिप्राप्ति

३९. जैसे कोई पुरुष इस जम्बूद्वीप के समस्त तृण, काष्ठ, शाखा एवं पत्र आदि को काट कर एक स्थान पर एकत्र करे, तथा उन से खूँटे (शूल) बनावे। फिर वह महासमुद्र के बड़े बड़े जीवों को बड़े खूटों से, मध्यम जीवों को मध्यवर्ती खूँटों से तथा छोटे जीवों को छोटे खूँटों से बाँधता जाय। तो भी, भिक्षुओ! महासमुद्र के समस्त जीव समाप्त नहीं होंगे; परन्तु जम्बूद्वीप के समस्त तृण, काष्ठ, शाखा, पलास समाप्त हो जायँगें। फिर, भिक्षुओ! महासमुद्र में इन से अधिक तो सूक्ष्म जीव हैं जो, सूक्ष्म शरीर होने के कारण, उन खूँटों से बाँधे ही नहीं जा सकते। इसी तरह, भिक्षुओ! अपाय (दुर्गतिमय हीनयोनि) भी बहुत बड़ा है। भिक्षुओ! सम्यक् दृष्टि से वह पुरुष इस अपाय से मुक्त हो सकता है। अर्थात् जो 'यह दु:ख है'—यह यथार्थत: जानता है...यह दु:खनिरोधगामी मार्ग है'—यह भली भाँति जानता है।

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दु:ख है'—इस आर्यसत्य का भली भाँति मनन चाहिये। ...पूर्ववत्..."॥ •

अरुणुग्गं। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो चतुन्नं अरियसच्चानं यथाभूतं अभिसमयाय एतं पुब्बङ्गमं एतं पुब्बनिमित्तं, यदिदं—सम्मादिट्ठि। तस्सेतं भिक्खवे, भिक्खुनो पाटिकङ्खं—'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानिस्सति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानिस्सति।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

३८. दुतियसुरियसुत्तं

[N.379, B.387] ४१. "यावकीवञ्च, भिक्खवे, चन्दिमसुरिया लोके नुप्पज्जन्ति, नेव ताव महतो आलोकस्स पातुभावो होति महतो ओभासस्स। अन्धतमं तदा होति अन्धकारतिमिसा। नेव ताव रत्तिन्दिवा पञ्ञायन्ति, न मासड्ढमासा पञ्ञायन्ति, न उतुसंवच्छरा पञ्ञायन्ति।

[R.443] "यतो च खो, भिक्खवे, चन्दिमसुरिया लोके उप्पज्जन्ति, अथ महतो आलोकस्स पातुभावो होति महतो ओभासस्स। नेव अन्धकारतमं तदा होति न अन्धकारतिमिसा। अथ रत्तिन्दिवा पञ्ञायन्ति, मासड्ढमासा पञ्ञायन्ति, उतुसंवच्छरा पञ्ञायन्ति। एवमेव खो, भिक्खवे, यावकीवञ्च तथागतो लोके नुप्पज्जति अरहं

---

३७. प्रथम सूर्यसूत्र : : ज्ञान का पूर्व लक्षण

४०. ..."भिक्षुओ! जैसे अरुणिमा (आकाश में ललाई का छा जाना) सूर्योदय का पूर्व लक्षण है; उसी तरह, भिक्षुओ! साधक भिक्षु का चार आर्यसत्यों के ज्ञान का सम्यग्दृष्टि होना पूर्वनिमित्त है। जिस ने सम्यग्दृष्टि प्राप्त कर ली है वह 'यह दुःख है'—इस को यथार्थतः जान सकता है। ...पूर्ववत्...।

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस का यथार्थतः मनन करना चाहिये...पूर्ववत्..."॥ •

३८. द्वितीय सूर्यसूत्र : : तथागत के अवतार से ही ज्ञानालोक

४१. ..."भिक्षुओ! जैसे लोक में जब तक चन्द्रमा तथा सूर्य का उदय नहीं होता तब तक यहाँ किसी तरह का अच्छा प्रकाश नहीं हो पाता। प्रगाढ अन्धकार ही रहता है मानो भयङ्कर कृष्णरात्रि हो। उस समय न रात्रि-दिन का विभाजन हो पाता है, न मास या पक्ष का, न ऋतुओं या संवतों का।

"जब, भिक्षुओ! लोक में चन्द्रमा एवं सूर्य का उदय होता है तभी इन विशाल लोकधातुओं में प्रकाश फैल पाता है। उस समय कृष्णरात्रि के समान अन्धकार नहीं रहता। तब रात्रि एवं दिन का विभाजन होने लगता है, मास एवं पक्ष का भी, तथा ऋतु एवं

सम्मासम्बुद्धो, नेव ताव महतो आलोकस्स पातुभावो होति महतो ओभासस्स। अन्धतमं तदा होति अन्धकारतिमिसा। नेव ताव चतुन्नं अरियसच्चानं आचिक्खणा होति देसना पञ्ञापना पट्ठपना विवरणा विभजना उत्तानीकम्मं।

''यतो च खो, भिक्खवे, तथागतो लोके उप्पज्जति अरहं सम्मासम्बुद्धो, अथ महतो आलोकस्स पातुभावो होति महतो ओभासस्स। नेव अन्धतमं तदा होति न अन्धकारतिमिसा। अथ खो चतुन्नं अरियसच्चानं आचिक्खणा होति देसना पञ्ञापना पट्ठपना विवरणा विभजना उत्तानीकम्मं। कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स अरियसच्चस्स ...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ ●

३९. इन्दखीलसुत्तं

४२. ''ये हि केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति ते अञ्ञस्स समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा मखं उल्लोकेन्ति—'अयं नून भवं जानं जानाति, पस्सं पस्सती' ति।

संवत्सरों का भी। इसी तरह, भिक्षुओ! जब तक लोक में तथागत का अवतार नहीं होता तब तक लोक में (ज्ञान का) प्रकाश नहीं फैलता। सर्वत्र (अज्ञानमय) कृष्णरात्रि के समान अन्धकार फैला रहता है। तथा तब इन चार आर्यसत्यों की न कोई बात (=आचिक्खणा) करता है, न कोई उपदेश करता है, न शिक्षा देता है, न कोई साधना करता है, न उन्हें स्पष्ट करता है, न विभाजन करता है, न इन पर कोई प्रकाश डालता है।

हाँ, जब लोक में तथागत का अवतार हो जाता है तब महान् आलोक प्रतिभासित होता है। कृष्णरात्रि की तरह अन्धकार नहीं रहता। तब इन चार आर्यसत्यों की भी चर्चा होने लगती है, उपदेश शिक्षा साधना होने लगती है, स्पष्टीकरण विभाजन भी किया जाता है। तथा विविध युक्ति एवं प्रमाणों से इन पर प्रकाश डाला जाता है। किन चार की? ...पूर्ववत्...।

''इस लिये, भिक्षुओ! 'यह दुःख है'—इस का मनन करना चाहिये...पूर्ववत्...''॥●

३९. इन्द्रकीलसूत्र : : आर्यसत्यज्ञान से स्थिरता

४२. ...''भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण 'यह दुःख है'—यह यथार्थतः नहीं जानते, ...पूर्ववत्...'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—यह नहीं जानते, वे दूसरे श्रमण ब्राह्मण का

[B.388] ''सेय्यथापि, भिक्खवे, तूलपिचु वा कप्पासपिचु वा लहुको वातूपादानो समे [N.380, R.444] भूमिभागे निक्खित्तो। तमेनं पुरत्थिमो वातो पच्छिमेन संहरेय्य, पच्छिमो वातो पुरत्थिमेन संहरेय्य, उत्तरो वातो दक्खिणेन संहरेय्य, दक्खिणो वातो उत्तरेन संहरेय्य। तं किस्स हेतु? लहुकत्ता, भिक्खवे, कप्पासपिचुनो। एवमेव खो, भिक्खवे, ये हि केचि समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति, ते अञ्ञस्स समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा मुखं उल्लोकेन्ति—'अयं नून भवं जानं जानाति, पस्सं पस्सती' ति। तं किस्स हेतु? अदिट्ठत्ता, भिक्खवे, चतुन्नं अरियसच्चानं।

''ये च खो केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानन्ति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानन्ति, ते न अञ्ञस्स समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा मुखं ओलोकेन्ति—'अयं नून भवं जानं जानाति, पस्सं पस्सती' ति।

''सेय्यथापि, भिक्खवे, अयोखीलो वा इन्दखीलो वा गम्भीरनेमो सुनिखातो अचलो असम्पकम्पी। पुरत्थिमाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि, नेव सङ्कम्पेय्य न सम्पकम्पेय्य न सम्पचालेय्य; पच्छिमाय चे पि दिसाय...पे०...उत्तराय चे पि दिसाय...पे०...दक्खिणाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि, नेव सङ्कम्पेय्य न

मुख देखते हैं—सम्भवत: यह संसार को जानता हुआ जानता होगा, देखता हुआ देखता होगा।

''भिक्षुओ! जैसे हवा से उड़ने योग्य कोई रूई या कपास का लघु खण्ड कहीं समतल भूमि पर रख दिया जाय, तब पूर्व की हवा उस को पश्चिम में उड़ा दे या पश्चिम की हवा पूर्व में उड़ा दे। इसी तरह उत्तर की हवा दक्षिण में उड़ा देती है तथा दक्षिण की हवा उस को उत्तर में उड़ा देती है। वह किस लिये? वह रूई या कपास का खण्ड लघु (हल्का) है। इसी तरह, भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण 'यह दु:ख है'—इस को यथार्थत: नहीं जानते...पूर्ववत्...दूसरे श्रमण ब्राह्मण का मुख देखते हैं कि सम्भवत: यह इसे जानता होगा! वह किस लिये? क्यों कि वे चार आर्यसत्यों के विषय में स्वयं कुछ नहीं जानते।

''तथा, भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण 'यह दु:ख है'—इस को यथार्थत: जानते हैं...पूर्ववत्...वे दूसरे श्रमण या ब्राह्मण का मुख नहीं देखते—'यह सम्भवत: जानता होगा, देखता होगा'।

''जैसे, भिक्षुओ! कोई लौह कील, जिसे 'इन्द्रकील' भी कहते हैं, भूमि में अचल, अकम्प्य, अत्यधिक गहरा गड़ा हुआ हो, तब यदि पूर्व, पश्चिम, उत्तर या दक्षिण से आँधी

सम्पकम्पेय्य न सम्पचालेय्य। तं किस्स हेतु? गम्भीरत्ता, भिक्खवे, नेमस्स सुनिखातत्ता इन्दखीलस्स। एवमेव खो, भिक्खवे, ये च खो केचि समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानन्ति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानन्ति, ते न अञ्ञस्स समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा मुखं ओलोकेन्ति—'अयं नून भवं जानं जानाति, पस्सं पस्सती' ति। तं किस्स हेतु? सुदिट्ठत्ता, भिक्खवे, चतुन्नं अरिय-[R.445] सच्चानं। कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स अरियसच्चस्स...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ •

४०. वादत्थिकसुत्तं

४३. ''यो हि कोचि, भिक्खवे, भिक्खु 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं [N.381, B.389] पजानाति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति, पुरत्थिमाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य समणो वा ब्राह्मणो वा वादत्थिको वादगवेसी—'वादमस्स आरोपेस्सामी' ति, तं वत सहधम्मेन सङ्कम्पेस्सति वा सम्पकम्पेस्सति वा सम्पचालेस्सति वा ति—नेतं ठानं विज्जति। पच्छिमाय चे पि दिसाय...पे०...उत्तराय चे पि दिसाय...पे०...दक्खिणाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य समणो वा ब्राह्मणो वा वादत्थिको वादगवेसी—'वादमस्स आरोपेस्सामी' ति, तं वत सहधम्मेन सङ्कम्पेस्सति वा सम्पकम्पेस्सति वा सम्पचालेस्सति वा ति—नेतं ठानं विज्जति।

या वर्षा आती रहे, उसे कँपा नहीं सकतीं, उस का उत्खनन नहीं कर सकतीं। वह क्यों? क्यों कि वह इन्द्रकील दृढ़ता से गड़ा हुआ है। इसी तरह, भिक्षुओ! जो कोई श्रमण या ब्राह्मण 'यह दुःख है'—इसे यथार्थतः जानता है...वे दूसरे का मुख नहीं देखते कि यह जानता होगा या देखता होगा! वह क्यों? वह इस लिये उन्होंने स्वयं इन चार आर्यसत्यों को जान लिया है। किन चार को? दुःख, दुःखसमुदय...पूर्ववत्...।

''इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस का यथार्थतः ज्ञान करना चाहिये ...पूर्ववत्...''॥ •

४०. वादार्थिकसूत्र : : आर्यसत्यचतुष्टयज्ञान से स्थिरता

४३. ...''भिक्षुओ! जो कोई भिक्षु 'यह दुःख है'—इसे यथार्थतः जानता है...पूर्ववत्...वहाँ कोई वाद (शास्त्रार्थ) करने वाला, वाद चाहने वाला पुरुष यह सोच कर उस के पास पूर्व दिशा से आवे कि इस से शास्त्रार्थ (वाद) करूँगा; पश्चिम दिशा

''सेय्यथापि, भिक्खवे, सिलायूपो सोळसकुक्कुको। तस्सस्सु अट्ठ कुक्कु हेट्ठा नेमङ्गमा अट्ठ कुक्कु उपरिनेमस्स। पुरत्थिमाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि, नेव सङ्कम्पेय्य न सम्पकम्पेय्य न सम्पचालेय्य; पच्छिमाय चे पि दिसाय...पे०...उत्तराय चे पि दिसाय...पे०...दक्खिणाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि, नेव सङ्कम्पेय्य न सम्पकम्पेय्य न सम्पचालेय्य। तं किस्स हेतु? गम्भीरत्ता, भिक्खवे, नेमस्स सुनिखातत्ता सिलायूपस्स। एवमेव खो, भिक्खवे, यो हि कोचि भिक्खु 'इदं दुक्खं' ति [R.446] यथाभूतं पजानाति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति; पुरत्थिमाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य समणो वा ब्राह्मणो वा वादत्थिको वादगवेसी 'वादमस्स आरोपेस्सामी' ति, तं वत सहधम्मेन सङ्कम्पेस्सति वा सम्पकम्पेस्सति वा सम्पचालेस्सति वा ति—नेतं ठानं विज्जति। पच्छिमाय चे पि दिसाय ...पे०...उत्तराय चे पि दिसाय...पे०...दक्खिणाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य समणो वा ब्राह्मणो वा वादत्थिको वादगवेसी—'वादमस्स आरोपेस्सामी' ति, तं वत सहधम्मेन सङ्कम्पेस्सति वा सम्पकम्पेस्सति वा सम्पचालेस्सति वा ति—नेतं ठानं विज्जति। तं किस्स हेतु? सुदिट्ठत्ता, भिक्खवे, चतुन्नं अरियसच्चानं। कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स अरियसच्चस्स...पे०... दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स।

[N.382] ''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥

सीसपावनवग्गो चतुत्थो॥

से...उत्तर दिशा से...दक्षिण दिशा से...। उसे वह वादार्थी धर्मानुकूल वाद में पराजित कर दे—यह सम्भव नहीं।

''भिक्षुओ! जैसे कोई सोलह कुक्कु परिमाण का पाषाणस्तम्भ, जो आठ कुक्कु (आठ हाथ परिमाण का एक 'कुक्कु' होता है) नीचे गहरे तक भूमि में गड़ा हुआ हो, तथा आठ कुक्कु भूमि से बाहर दिखायी दे रहा हो, उस को कितना भी प्रबल झञ्झावात या वृष्टि न हिला डुला सकती न बहा सकती है। वह किस लिये? क्यों कि वह पाषाणस्तम्भ भूमि में गहराई तक गड़ा हुआ है। ...पूर्ववत्...। इसी तरह, भिक्षुओ! जो कोई विद्वान् भिक्षु 'यह दुःख है'—इस को यथार्थतः जान चुका है...; उस से कोई वाद चाहने वाला श्रमण ब्राह्मण पूर्व दिशा से यह सोच कर उस के पास आवे—'मैं इस से वाद करूँगा', तो यह सम्भव नहीं है कि वह वादार्थी उस ज्ञानी भिक्षु को वाद में पराजित कर सके, या भयाकुल कर सके। ...पश्चिम दिशा से...उत्तर दिशा से...दक्षिण दिशा से...पूर्ववत्...। वह क्यों?

तस्सुद्दानं

सीसपा खदिरो दण्डो, चेला सत्तिसतेन च। [B.390]
पाणा सुरियूपमा द्वेधा, इन्दखीलो च वादिनो ति॥

क्यों कि वह भिक्षु चारों आर्यसत्यों का यथार्थतः ज्ञान रखता है। कौन से चार? दुःख आर्यसत्य...दुःखनिरोधगामी मार्ग आर्यसत्य।

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस पर मनन करना चाहिये ...पूर्ववत्..."॥

शिंशपावनवर्ग चतुर्थ सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. शिंशपावनसूत्र, २. खदिरपत्रसूत्र, ३. दण्डसूत्र, ४. चैलसूत्र, ५. शक्तिशतसूत्र, ६. प्राणसूत्र, ७. प्रथम सूर्यसूत्र, ८. द्वितीय सूर्यसूत्र, ९. इन्द्रकीलसूत्र एवं १०. वादार्थिकसूत्र॥

५. पपातवग्गो पञ्चमो

४१. लोकचिन्तासुत्तं

[R.447] ४४. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति वेळुवने कलन्दकनिवापे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"भूतपुब्बं, भिक्खवे, अञ्ञतरो पुरिसो राजगहा निक्खमित्वा 'लोकचिन्तं चिन्तेस्सामी' ति येन सुमागधा पोक्खरणी तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा सुमागधाय पोक्खरणिया तीरे निसीदि लोकचिन्तं चिन्तेन्तो। अद्दसा खो, भिक्खवे, सो पुरिसो सुमागधाय पोक्खरणिया तीरे चतुरङ्गिनिं सेनं भिसमुळालं पविसन्तं। दिस्वानस्स एतदहोसि—'उम्मत्तोस्मि नामाहं, विचेतोस्मि नामाहं! यं लोके नत्थि तं मया दिट्ठं' ति।

"अथ खो सो, भिक्खवे, पुरिसो नगरं पविसित्वा महाजनकायस्स आरोचेसि—'उम्मत्तोस्मि नामाहं, भन्ते, विचेतोस्मि नामाहं, भन्ते! यं लोके नत्थि तं मया दिट्ठं' ति।

"कथं पन त्वं, अम्भो पुरिस, उम्मत्तो कथं विचेतो ? किञ्च लोके नत्थि यं तया दिट्ठं" ति ?

"इधाहं, भन्ते, राजगहा निक्खमित्वा 'लोकचिन्तं चिन्तेस्सामी' ति येन सुमागधा पोक्खरणी तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा सुमागधाय पोक्खरणिया तीरे निसीदिं लोकचिन्तं चिन्तेन्तो। अद्दसं ख्वाहं, भन्ते, सुमागधाय पोक्खरणिया तीरे चतुरङ्गिनिं सेनं भिसमुळालं

---

५. प्रपातवर्ग पञ्चम

४१. लोकचिन्तासूत्र : : लौकिक बातों का चिन्तन न करें

४४. एक समय भगवान् (बुद्ध) **राजगृह के** वेणुवनस्थित कलन्दकनिवाप में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को अपने पास बुला कर यह दृष्टान्त सुनाया—"भिक्षुओ! बहुत पहले कोई पुरुष, राजगृह से निकल कर, 'लोकचिन्तन करूँगा'—यह सङ्कल्प कर, सुमागधा पुष्करणी के तट पर जा कर लोकचिन्तनहेतु बैठ गया। तब, भिक्षुओ! उस ने वहाँ किसी कमलनाल के नीचे चतुरङ्गिणी सेना दिखायी दी। उसे देख कर, उस ने अपने मन में यह विचार किया—'अरे! मैं उन्मत्त (पागल) हो गया हूँ। तभी तो मुझे इस कमलनाल के नीचे यह इतनी विशाल सेना दिखायी दे रही है। यह तो मुझे लोक में असम्भव बात लगती है!'

"तब वह पुरुष राजगृह में आ कर जनसमूह में खड़े हो कर बोला—'भाइयो! मैं उन्मत्त हो गया हूँ। इसी लिये मुझे यह असम्भव बात दिखायी दे रही है।' तब लोगों ने उस से पूछा—'तुम कैसे उन्मत्त हो गये, तुम्हें क्या असम्भव बात दिखायी दे रहा है ?' तब उस पुरुष ने सुमागधा पुष्करणी के तट पर किये गये अपने लोकचिन्तन का समस्त विवरण

पविसन्तं। एवं ख्वाहं, भन्ते, उम्मत्तो एवं विचेतो। इदं च लोके नत्थि यं मया दिट्ठं'' ति।

''तग्घ त्वं, अम्भो पुरिस, उम्मत्तो तग्घ विचेतो! इदं च लोके नत्थि यं तया दिट्ठं'' ति!

''तं खो पन, भिक्खवे, सो पुरिसो भूतं येव अद्दस, नो अभूतं। भूतपुब्बं, [N.383] भिक्खवे, देवासुरसङ्गामो समुपब्यूळ्हो अहोसि। तस्मिं खो पन, भिक्खवे, सङ्गामे देवा जिनिंसु, असुरा पराजिनिंसु। पराजिता च खो, भिक्खवे, असुरा भीता [B.391, R.448] भिसमुळालेन असुरपुरं पविसिंसु देवानं येव मोहयमाना।

''तस्मातिह, भिक्खवे, मा लोकचिन्तं चिन्तेथ—'सस्सतो लोको' ति वा असस्सतो लोको' ति वा, 'अन्तवा लोको' ति वा 'अनन्तवा लोको' ति वा, 'तं जीवं तं सरीरं' ति वा 'अञ्ञं जीवं अञ्ञं सरीरं' ति वा, 'होति तथागतो परं मरणा' ति वा 'न होति तथागतो परं मरणा' ति वा, 'होति च न च होति तथागतो परं मरणा' ति वा 'नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा' ति वा। तं किस्स हेतु? नेसा, भिक्खवे, चिन्ता अत्थसंहिता नादिब्रह्मचरियका न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तति।

''चिन्तेन्ता खो तुम्हे, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति चिन्तेय्याथ...पे०...'अयं

उन लोगों को सुना दिया। लोगों ने कहा—'तब तो तुम वस्तुत: प्रमत्त हो गये हो, तभी तुमने यह असम्भव घटना देखी।'

''भिक्षुओ! उस पुरुष ने भूत (यथार्थ=सत्य) को ही देखा था, अभूत (असत्य=न हुई घटना) को नहीं। भिक्षुओ! बहुत पहले कभी देवासुर संग्राम हुआ था, उस संग्राम में देवता जीते थे, एवं असुर पराजित। अत: देवताओं के पुन: आक्रमण के भय से वे असुर इस कमलनाल के नीचे से असुरपुर चले गये थे।

''अत:, भिक्षुओ! लोकचिन्तन न करो। यह लोकचिन्तन यह है—'लोक शाश्वत है', 'लोक शाश्वत नहीं है', 'लोक अन्तवान् है', 'लोक अन्तवान् नहीं है', 'जो जीव है वही शरीर है', 'शरीर अन्य है, जीव अन्य है', 'तथागत मरणानन्तर भी रहते हैं', 'तथागत मरणानन्तर नहीं रहते', 'तथागत मरणानन्तर रहते भी हैं, नहीं भी रहते' तथा 'तथागत मरणानन्तर नहीं होते, न नहीं ही होते'। यह लोकचिन्तन क्यों नहीं करना चाहिये? क्यों कि ऐसा चिन्तन करने से न कोई अर्थ सिद्ध होता है, न यह धर्मसाधना में ही किसी प्रयोजन को सिद्ध करने वाला हैऽ न यह वैराग्य, निरोध, चित्तशान्ति या निर्वाण तथा ज्ञान का ही साधक है।

दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति चिन्तेय्याथ। तं किस्स हेतु? एसा, भिक्खवे, चिन्ता अत्थसंहिता एसा आदिब्रह्मचरियका एसा निब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्ख-निरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥

४२. पपातसुत्तं

४५. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति गिज्झकूटे पब्बते। अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"आयाम, भिक्खवे, येन पटिभानकूटो तेनुपसङ्कमिस्साम [R.449] दिवाविहाराया" ति। "एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। अथ खो भगवा सम्बहुलेहि भिक्खूहि सद्धिं येन पटिभानकूटो तेनुपसङ्कमि। अद्दसा खो [N.384] अञ्ञतरो भिक्खु पटिभानकूटे महन्तं पपातं। दिस्वान भगवन्तं एतदवोच— "महा वतायं भन्ते, पपातो सुभयानको, भन्ते, पपातो। अत्थि नु खो, भन्ते, इमम्हा पपाता अञ्ञो पपातो महन्ततरो च भयानकतरो चा" ति?

"भिक्षुओ! यदि तुम्हें चिन्तन ही करना है तो 'यह दुःख है'—इस का चिन्तन करो, ...पूर्ववत्...मार्ग है—इस का चिन्तन करो। वह क्यों? वह इस लिये कि ऐसा चिन्तन सर्वथा अर्थसाधक होता है, धर्मसाधना में प्रयोजन का पूरक है, निर्विदा, वैराग्य, उपशम, निरोध, परमार्थ ज्ञान एवं निर्वाण की ओर प्रवृत्त कराने वाला है।

"अतः, भिक्षुओ! तुम 'यह दुःख है'—इस आर्यसत्य का चिन्तन करो ...पूर्ववत्..."॥

४२. प्रपातसूत्र : : भयङ्कर प्रपात

४५. एक समय भगवान् (बुद्ध) **राजगृह के** गृध्रकूट पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय भगवान् ने भिक्षुओं को बुलाया और कहा—"आओ, भिक्षुओ! **प्रतिभानकूट** पर चलें, वहाँ दिन में साधना करेंगे"। भिक्षुओं ने भगवान् का आमन्त्रण स्वीकार किया। तब भगवान् बहुत से भिक्षुओं के साथ प्रतिभानकूट पर गये। वहाँ किसी भिक्षु ने उस प्रतिभानकूट पर एक प्रपात[१] (समझाया) देखा। उसे देख कर वह भगवान् से यों बोला— "भन्ते! यह प्रपात बहुत भयङ्कर है। क्या इस से भी भयङ्कर या विशाल कोई अन्य भी प्रपात है?"

---

१. **प्रपात**=किसी पर्वत के एक ओर का वह भाग जो ऊपर से नीचे तक सपाट हो, बीच में पकड़ने या पैर टिकाने का कोई स्थान न हो; जिस से कोई पर्वत से गिरे तो सीधे हजारों फुट नीचे गिर कर खण्ड खण्ड हो जाय।

"अत्थि खो, भिक्खु, इमम्हा पपाता अञ्ञो पपातो महन्ततरो च भयानकतरो चा" ति।

"कतमो पन, भन्ते, इमम्हा पपाता अञ्ञो पपातो महन्ततरो च [B.392] भयानकतरो चा" ति?

"ये हि केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति ते जातिसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अभिरमन्ति, जरासंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अभिरमन्ति, मरणसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अभिरमन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायाससंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अभिरमन्ति। ते जातिसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अभिरता जरासंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अभिरता मरणसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अभिरता सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायास-संवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अभिरता जातिसंवत्तनिके पि सङ्खारे अभिसङ्खरोन्ति, जरा-संवत्तनिके पि सङ्खारे अभिसङ्खरोन्ति, मरणसंवत्तनिके पि सङ्खारे अभिसङ्खरोन्ति, सोक-परिदेवदुक्खदोमनस्सुपायाससंवत्तनिके पि सङ्खारे अभिसङ्खरोन्ति। ते जातिसंवत्तनिके पि सङ्खारे अभिसङ्खरित्वा जरासंवत्तनिके पि सङ्खारे अभिसङ्खरित्वा मरणसंवत्तनिके पि सङ्खारे अभिसङ्खरित्वा सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायाससंवत्तनिके पि सङ्खारे अभिसङ्खरित्वा जातिपपातं पि पपतन्ति, जरापपातं पि पपतन्ति, मरणपपातं पि पपतन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासपपातं पि पपतन्ति। ते न परिमुच्चन्ति जातिया [R.450] जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि। 'न परिमुच्चन्ति दुक्खस्मा' ति वदामि।

"हाँ, भिक्षुओ! है!"

"भन्ते! इस से भयङ्कर तथा विशाल प्रपात अन्य कौन सा है?"

"भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण 'यह दुःख है'—यह नहीं जानते, 'यह दुःखसमुदय है'—यह नहीं जानते, ...पूर्ववत्...इसे नहीं जानते; वे लोग जन्म देने वाले, बुढापा एवं मृत्यु देने वाले, शोक परिदेव दुःख दौर्मनस्य एवं उपायास देने वाले संस्कारों में पड़े रहते हैं...इस प्रकार इन संस्कारों में पड़े रह कर वे ऐसे ही अन्य संस्कारों को अपने चित्त में बढ़ा लेते हैं; वे ऐसे संस्कार बढ़ा कर जातिप्रपात, जराप्रपात, मरणप्रपात, शोक-परिदेव आदि प्रपातों में गिरते हैं। इस तरह वे जाति जरा मरण आदि से मुक्त नहीं हो पाते। इन को संक्षेप में मैं यही कह सकता हूँ—'वे दुःख से मुक्त नहीं होते'।

"ये च खो केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानन्ति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानन्ति ते जातिसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु नाभिरमन्ति, जरासंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु नाभिरमन्ति, मरणसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु नाभिरमन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायाससंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु [N.385] नाभिरमन्ति। ते जातिसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अनभिरता जरासंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अनभिरता मरणसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अनभिरता सोकपरिदेवदुक्ख- [B.393] दोमनस्सुपायाससंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अनभिरता जातिसंवत्तनिके पि सङ्खारे नाभिसङ्खरोन्ति, जरासंवत्तनिके पि सङ्खारे नाभिसङ्खरोन्ति, मरणसंवत्तनिके पि सङ्खारे नाभिसङ्खरोन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायाससंवत्तनिके पि सङ्खारे नाभिसङ्खरोन्ति। ते जातिसंवत्तनिके पि सङ्खारे अनभिसङ्खरित्वा जरासंवत्तनिके पि सङ्खारे अनभिसङ्खरित्वा मरणसंवत्तनिके पि सङ्खारे अनभिसङ्खरित्वा सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायाससंवत्तनिके पि सङ्खारे अनभिसङ्खरित्वा जातिपपातं पि नप्पपतन्ति, जरापपातं पि नप्पपतन्ति, मरणपपातं पि नप्पपतन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासपपातं पि नप्पपतन्ति। ते परिमुच्चन्ति जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि। 'परिमुच्चन्ति दुक्खस्मा' ति वदामि।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥

४३. महापरिळाहसुत्तं

[R.451] ४६. "अत्थि, भिक्खवे, महापरिळाहो नाम निरयो। तत्थ यं किञ्चि चक्खुना रूपं पस्सति, अनिट्ठरूपञ्ञेव पस्सति नो इट्ठरूपं; अकन्तरूपञ्ञेव पस्सति नो कन्तरूपं;

"तथा, भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण 'यह दुःख है'—ऐसा...'यह दुःखसमुदय है'—ऐसा ...पूर्ववत्...जानते हैं वे लोग जाति, जरा मरण आदि के संस्कारों में नहीं पड़ते, न इस कारण इन के अन्य संस्कार बढ़ते ही हैं। ऐसा होने से इन का जाति जरा मरण आदि प्रपातों में पतन नहीं होता। ऐसे लोगों के लिये मेरा अवश्य यह कहना है—'ये दुःख से मुक्त हो जाते हैं'।

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम लोगों को 'यह दुःख है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये। ...पूर्ववत्..."॥

४३. महापरिदाहसूत्र : : नरक ही परिदाह है

४६. ..."भिक्षुओ! एक 'महापरिदाह' नामक नरक है। जहाँ गिरा हुआ मनुष्य जो

अमनापरूपञ्ञेव पस्सति नो मनापरूपं। यं किञ्चि सोतेन सद्दं सुणाति...पे०...यं किञ्चि कायेन फोट्ठब्बं फुसति...पे०...यं किञ्चि मनसा धम्मं विजानाति, अनिट्ठरूपञ्ञेव विजानाति नो इट्ठरूपं; अकन्तरूपञ्ञेव विजानाति नो कन्तरूपं; अमनापरूपञ्ञेव विजानाति नो मनापरूपं'' ति।

एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''महा वत सो, भन्ते, परिळाहो, सुमहा वत सो, भन्ते, परिळाहो! अत्थि नु खो, भन्ते, एतम्हा परिळाहा अञ्ञो परिळाहो महन्ततरो चेव भयानकतरो चा'' ति?

''अत्थि खो, भिक्खु, एतम्हा परिळाहा अञ्ञो परिळाहो महन्ततरो च भयानकतरो चा'' ति।

''कतमो पन, भन्ते, एतम्हा परिळाहा अञ्ञो परिळाहो महन्ततरो च भयानकतरो चा'' ति?

''ये हि केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं [N.386] नप्पजानन्ति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति ते जातिसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अभिरमन्ति...पे०...अभिरता...पे०...अभिसङ्खरोन्ति...पे०... अभिसङ्खरित्वा जातिपरिळाहेन पि परिडय्हन्ति, जरापरिळाहेन पि परिडय्हन्ति, मरणपरिळाहेन पि परिडय्हन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासपरिळाहेन पि [B.394] परिडय्हन्ति। ते न परिमुच्चन्ति जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि। 'न परिमुच्चन्ति दुक्खस्मा' ति वदामि।

कुछ भी चक्षु से रूप देखता है, अनिष्ट रूप ही देखता है, इष्ट नहीं। अप्रिय रूप ही देखता है, प्रिय नहीं। दुःखदायी रूप देखता है, सुखदायी नहीं। इसी तरह श्रोत्र से जो भी शब्द सुनता है...पूर्ववत्... घ्राण से जो भी गन्ध सूँघता है...जिह्वा से जो भी रस चखता है...काया से जो भी स्पर्श करता है ...पूर्ववत्...सुखदायी नहीं।''

यह सुन कर कोई भिक्षु भगवान् से यों बोला—''भन्ते! यह परिदाह तो अत्यन्त कष्टदायी है। क्या, भन्ते! इस से भी अधिक कोई कष्टदायी तथा भयङ्कर पीड़ादायी है?''

''हाँ, भिक्षु! इस से भी अधिक तथा भयङ्कर कष्टदायी तथा पीड़ादायी एक अन्य परिदाह भी है।''

''भन्ते! वह कौन सा है?''

''भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण 'यह दुःख है'—ऐसा यथार्थतः नहीं जान पाये हैं...पूर्ववत्...। 'वे दुःख से मुक्त नहीं हैं'—ऐसा मैं कहता हूँ।

"ये च खो केचि, भिक्खवे, समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानन्ति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानन्ति। ते जातिसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु नाभिरमन्ति...पे०...अनभिरता...पे०...नाभिसङ्खरोन्ति...पे०...अनभिसङ्खरित्वा जातिपरिळाहेन पि न परिडय्हन्ति, जरापरिळाहेन पि न [R.452] परिडय्हन्ति, मरणपरिळाहेन पि न परिडय्हन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासपरिळाहेन पि न परिडय्हन्ति। ते परिमुच्चन्ति जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि। 'परिमुच्चन्ति दुक्खस्मा' ति वदामि।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

४४. कूटागारसुत्तं

४७. "यो च खो, भिक्खवे, एवं वदेय्य—'अहं दुक्खं अरियसच्चं यथाभूतं अनभिसमेच्च...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं अरियसच्चं यथाभूतं अनभिसमेच्च सम्मा दुक्खस्सन्तं करिस्सामी' ति—नेतं ठानं विज्जति।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, यो एवं वदेय्य—'अहं कूटागारस्स हेट्ठिमं घरं अकरित्वा उपरिमं घरं आरोपेस्सामी' ति—नेतं ठानं विज्जति; एवमेव खो, भिक्खवे, यो एवं वदेय्य—'अहं दुक्खं अरियसच्चं यथाभूतं अनभिसमेच्च...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिं

"परन्तु, भिक्षुओ! जो श्रमण ब्राह्मण 'यह दुःख है'—ऐसा यथार्थतः जानते हैं...पूर्वसूत्रवत्... 'वे दुःख से मुक्त हो जाते हैं'—ऐसा मैं कहता हूँ।[१]

"अतः, भिक्षुओ! तुम लोगों को 'यह दुःख है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये। ...पूर्ववत्..."॥ •

४४. कूटागारसूत्र : : कूटागार का दृष्टान्त

४७. ..."भिक्षुओ! जो ऐसा कहे—'मैं दुःख आर्यसत्य को यथार्थतः जाने विना ही अपने दुःखों का अन्त कर लूँगा' तो यह सम्भव नहीं है। ...पूर्ववत्...।

"जैसे, भिक्षुओ! कोई यह कहे—'मैं इस कूटागार का नीचे तल का घर बनाये विना ही पहले ऊपर (दूसरे तल) का घर बनाऊँगा' तो उस का ऐसा करना कथमपि

---

१. **परिळाह** (परिदाह)—यह शब्द पालि में दो अर्थों में प्रयुक्त होता है—१. तीव्र जलन एवं २. तीव्र राग। यहाँ भगवान् का पहला उपदेश साधारण 'परिदाह' अर्थ में है, परन्तु भिक्षु को दिया गया उत्तर 'तीव्र राग' के अर्थ में है—ऐसा समझना चाहिये। तभी भगवान् के स्वारस्यबोधन में विशेषता प्रतीत होगी।—अ०।

पटिपदं अरियसच्चं यथाभूतं अनभिसमेच्च सम्मा दुक्खस्सन्तं करिस्सामी' ति—नेतं ठानं विज्जति।

"यो च खो, भिक्खवे, एवं वदेय्य—'अहं दुक्खं अरियसच्चं यथाभूतं [N.387] अभिसमेच्च...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं अरियसच्चं यथाभूतं अभिसमेच्च सम्मा दुक्खस्सन्तं करिस्सामी' ति—ठानमेतं विज्जति।

"सेय्यथापि, भिक्खवे, यो एवं वदेय्य—'अहं कूटागारस्स हेट्ठिमं घरं [B.395] करित्वा उपरिमं घरं आरोपेस्सामी' ति—ठानमेतं विज्जति; एवमेव खो, भिक्खवे, यो एवं वदेय्य—'अहं दुक्खं अरियसच्चं यथाभूतं अभिसमेच्च...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं अरियसच्चं यथाभूतं अभिसमेच्च सम्मा दुक्खस्सन्तं करिस्सामी' ति—ठानमेतं विज्जति।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं [R.453] दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ ●

४५. वालसुत्तं

४८. एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागारसालायं। आयस्मा आनन्दो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय वेसालिं पिण्डाय पाविसि। अद्दसा खो आयस्मा आनन्दो सम्बहुले लिच्छविकुमारके सन्थागारे उपासनं करोन्ते, दूरतो व

सम्भव नहीं है, उसी तरह, भिक्षुओ! इन चारों आर्यसत्यों को जाने विना ही जो अपने दु:खों के अन्त की बात करता है, यह असम्भव ही है।

"हाँ, भिक्षुओ! जो साधक भिक्षु यह कहे—'मैं दु:ख आर्यसत्य को यथार्थत: जान कर ही अपने दु:खों का अन्त करूँगा' तो उस का यह कहना सम्भव है।

"जैसे कि, भिक्षुओ! कोई यह कहे—'मैं इस कूटागार का नीचे का घर बना कर ही दूसरे तल का घर बनाऊँगा' तो उस का यह कथन उचित हो सकता है; इसी तरह, भिक्षुओ! इन चार आर्यसत्यों को यथार्थत: जान कर ही दु:खों का अन्त किया जा सकता है—यही सम्भव है।

"अत:, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दु:ख है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये।...पूर्ववत्..."॥

४५. बालसूत्र : : कठिनतम लक्ष्य

४८. एक समय भगवान् वैशाली में महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजमान थे। आयुष्मान् आनन्द पूर्वाह्ण में वस्त्र व्यवस्थित कर, पात्र चीवर ले कर वैशाली में भिक्षाहेतु प्रविष्ट हुए। तब आयुष्मान् आनन्द ने बहुत से लिच्छविकुमारों को

सुखुमेन ताळच्छिग्गळेन असनं अतिपातेन्ते, पोङ्खानुपोङ्खं अविराधितं। दिस्वानस्स एतदहोसि—"सिक्खिता वतिमे लिच्छविकुमारका, सुसिक्खिता वतिमे लिच्छविकुमारका; यत्र हि नाम दूरतो व सुखुमेन ताळच्छिग्गळेन असनं अतिपातेस्सन्ति, पोङ्खानुपोङ्खं अविराधितं" ति।

अथ खो आयस्मा आनन्दो वेसालिं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"इधाहं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय वेसालिं पिण्डाय पाविसिं। अद्दसं ख्वाहं, भन्ते, सम्बहुले लिच्छविकुमारके सन्थागारे उपासनं करोन्ते दूरतो व सुखुमेन ताळच्छिग्गळेन असनं अतिपातेन्ते पोङ्खानुपोङ्खं अविराधितं। दिस्वान मे एतदहोसि—"सिक्खिता [N.388] वतिमे लिच्छविकुमारका, सुसिक्खिता वतिमे लिच्छविकुमारका; यत्र हि नाम दूरतो व सुखुमेन ताळच्छिग्गळेन असनं अतिपातेस्सन्ति पोङ्खानुपोङ्खं अविराधितं" ति।

[R.454] "तं किं मञ्ञसि, आनन्द, कतमं नु खो दुक्करतरं वा दुरभिसम्भवतरं वा—यो दूरतो व सुखुमेन ताळच्छिग्गळेन असनं अतिपातेय्य पोङ्खापोनुपोङ्खं अविराधितं, यो वा सत्तधा भिन्नस्स वालस्स कोटिया कोटिं पटिविज्झेय्या" ति?

[B.396] "एतदेव, भन्ते, दुक्करतरं चेव दुरभिसम्भवतरं च यो वा सत्तधा भिन्नस्स वालस्स कोटिया कोटिं पटिविज्झेय्या" ति।

संस्थागार में धनुर्विद्या का अभ्यास करते हुए देखा। वहाँ वे एक ताले के छिद्र को लक्ष्य बना कर तीर चलाने का अभ्यास कर रहे थे। उन्हें देख कर उन को यह विचार हुआ—"ये लिच्छविकुमार धनुर्विद्या में बहुत निपुण हैं कि एक ताले के छोटे से छिद्र पर तीर पर तीर चला रहे हैं।"

तब आयुष्मान् आनन्द भिक्षाकार्य सम्पन्न कर भगवान् के पास गये, तथा उन को लिच्छविकुमारों का वह कौशल सुनाते हुए बताया कि एक ताले के छिद्र पर तीर पर तीर चला रहे थे। उन्हें देख कर मुझे यह विचार हुआ—"ये लिच्छविकुमार धनुर्विद्या में कुशल हैं, शिक्षित हैं"।

भगवान् ने यह सुन कर आयुष्मान् आनन्द से पूछा—"तो क्या मानते हो, आनन्द! यह ताले के छिद्र पर तीर चलाना कठिन कार्य है या कटे हुए बाल के शतांश को तीर से भेद देना?"

"भन्ते! कटे हुए बाल के शतांश को भेद देना ही अपेक्षाकृत कठिन कार्य है।"

"अथ खो, आनन्द, दुप्पटिविज्झतरं पटिविज्झन्ति ये 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पटिविज्झन्ति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पटिविज्झन्ति।

"तस्मातिहानन्द, 'इदं दुक्खं' ति 'योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ ●

४६. अन्धकारसुत्तं

४९. "अत्थि, भिक्खवे, लोकन्तरिका अघा असंवुता अन्धकारा अन्धकारतिमिसा, यत्थमिमेसं चन्दिमसुरियानं एवंमहिद्धिकानं एवं महानुभावानं आभाय नानुभोन्ती" ति।

एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"महा वत सो, भन्ते, अन्धकारो, सुमहा वत सो, भन्ते, अन्धकारो! अत्थि नु खो, भन्ते, एतम्हा अन्धकारा अञ्ञो अन्धकारो महन्ततरो च भयानकतरो चा" ति?

"अत्थि खो, भिक्खु, एतम्हा अन्धकारा अञ्ञो अन्धकारो महन्ततरो च भयानकतरो चा" ति।

"कतमो पन, भन्ते, एतम्हा अन्धकारा अञ्ञो अन्धकारो महन्ततरो च भयानकतरो चा" ति?

"ये हि केचि, भिक्खु, समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं [R.455] नप्पजानन्ति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं नप्पजानन्ति, ते

"आनन्द! इस से भी कठिन कार्य वे साधक सम्पन्न कर चुके हैं, जो 'यह दुःख है'—ऐसा यथार्थतः जान चुके हैं...'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—यह जान चुके हैं।

"अतः, आनन्द! तुम लोगों को 'यह दुःख है'—इस पर चिन्तन करना चाहिये। ...पूर्ववत्...करना चाहिये"॥ ●

४६. अन्धकारसूत्र : : अधिकतम अन्धकार

४९. ..."भिक्षुओ! इस संसार में एक लोक ऐसा भी है जो गाढतम कृष्ण अन्धकार से आवृत है। वहाँ चन्द्रमा या सूर्य की एक किरण भी नहीं पहुँचती।"

भगवान् के ये वचन सुन कर एक भिक्षु बोला—"भन्ते! यह तो बहुत प्रगाढ अन्धकार है। क्या इस से भी प्रगाढ अन्धकार अन्य कोई है?"

"हाँ, भिक्षु! इस से भी प्रगाढ अन्धकार है। जो भयानक भी है एवं विशाल भी।"

"वह कौन सा अन्धकार है, भन्ते!"

"जो श्रमण ब्राह्मण 'यह दुःख है'—ऐसा यथार्थतः नहीं जानते; ...पूर्ववत्...'यह

जातिसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु अभिरमन्ति...पे०...अभिरता...पे०...अभिसङ्खरोन्ति...पे०... [N.389] अभिसङ्खरित्वा जातन्धकारं पि पपतन्ति, जरन्धकारं पि पपतन्ति, मरणन्धकारं पि पपतन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासन्धकारं पि पपतन्ति। ते न परिमुच्चन्ति जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि। 'न परिमुच्चन्ति दुक्खस्मा' ति वदामि।

"ये च खो केचि, भिक्खु, समणा वा ब्राह्मणा वा 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानन्ति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानन्ति, ते जातिसंवत्तनिकेसु सङ्खारेसु नाभिरमन्ति...पे०...अनभिरता...पे०...नाभिसङ्खरोन्ति [B.397] ...पे०...अनभिसङ्खरित्वा जातन्धकारं पि नप्पपतन्ति, जरन्धकारं पि नप्पपतन्ति, मरणन्धकारं पि नप्पपतन्ति, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासन्धकारं पि नप्पपतन्ति। ते परिमुच्चन्ति जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि। 'परिमुच्चन्ति दुक्खस्मा' ति वदामि।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ ●

४७. पठमछिग्गळयुगसुत्तं

५०. "सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो महासमुद्दे एकच्छिग्गळं युगं पक्खिपेय्य। तत्रापिस्स काणो कच्छपो। सो वस्ससतस्स वस्ससतस्स अच्चयेन सकिं सकिं उम्मुज्जेय्य। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, अपि नु खो काणो कच्छपो वस्ससतस्स वस्ससतस्स अच्चयेन सकिं सकिं उम्मुज्जन्तो अमुस्मिं एकच्छिग्गळे युगे गीवं पवेसेय्या" ति?

दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—ऐसा यथार्थतः नहीं जानते। वे जाति जरामरण...उपायास के संस्कारों से आवृत हुए उन अन्धकारों में स्थायी रूप से जा गिरते हैं। ऐसे श्रमण ब्राह्मण 'दुःख से परिमुक्त नहीं हैं'—ऐसा मैं कहता हूँ।

"तथा कुछ श्रमण ब्राह्मण...संस्कारों से आवृत न हो कर उन अन्धकारों में नहीं गिरते। वे 'दुःख से मुक्त हो चुके हैं'—ऐसा मैं कहता हूँ।

"अतः, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये। ...पूर्ववत्..."॥

४७. प्रथम छिग्गलयुगसूत्र : : काणकच्छप का दृष्टान्त

५०. ..."भिक्षुओ! जैसे कोई पुरुष एक छिद्र वाला एक धुर महासमुद्र में फेंक दे। वहाँ एक काना कछुआ हो, जो सौ वर्ष बाद एक बार समुद्र जल में से अपना मुख बाहर

"यदि नून, भन्ते, कदाचि करहचि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेना" ति। [R.456]

"खिप्पतरं खो सो, भिक्खवे, काणो कच्छपो वस्ससतस्स वस्ससतस्स अच्चयेन सकिं सकिं उम्मुज्जन्तो अमुस्मिं एकच्छिग्गळे युगे गीवं पवेसेय्य, न त्वेवाहं, भिक्खवे, सकिं विनिपातगतेन बालेन मनुस्सत्तं वदामि। तं किस्स हेतु? न हेत्थ, भिक्खवे, अत्थि धम्मचरिया समचरिया कुसलकिरिया पुञ्ञकिरिया। अञ्ञमञ्ञखादिका एत्थ, भिक्खवे, वत्तति दुब्बलखादिका। तं किस्स हेतु? अदिट्ठत्ता, भिक्खवे, चतुन्नं अरियसच्चानं। कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स अरियसच्चस्स...पे०...दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं [N.390] दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ [B.398] ●

४८. दुतियछिग्गळयुगसुत्तं

५१. "सेय्यथापि, भिक्खवे, अयं महापठवी एकोदका अस्स। तत्र पुरिसो एकच्छिग्गळं युगं पक्खिपेय्य। तमेनं पुरत्थिमो वातो पच्छिमेन संहरेय्य, पच्छिमो वातो पुरत्थिमेन संहरेय्य, उत्तरो वातो दक्खिणेन संहरेय्य, दक्खिणो वातो उत्तरेन संहरेय्य।

निकालता हो। भिक्षुओ! तुम क्या समझते हो, इस प्रकार यह कछुआ उस छिद्र (छिग्गल) में अपनी ग्रीवा नहीं फँसा लेगा?"

"भन्ते! सम्भवतः बहुत समय बाद ऐसा हो जाय।"

"भिक्षुओ! इस प्रकार भी वह कछुआ शीघ्र ही उस छिद्र में अपनी ग्रीवा फँसा लेगा। परन्तु ऐसे मूर्ख एक बार नीच गति प्राप्त कर पुनः चिरकाल तक मनुष्य योनि प्राप्त नहीं कर पाते। वह क्यों? वह इस लिये कि ऐसे हीनकर्मा प्राणियों में धर्मचर्या, समचर्या, कुशलचर्या नहीं हुआ करती। भिक्षुओ! इन हीन योनियों में पतित प्राणी एक दूसरे की हिंसा में ही सन्नद्ध रहते हैं। इसी को 'मात्स्य न्याय' कहते हैं। यहाँ सबल प्राणी दुर्बल को निरन्तर पीड़ित करता रहता है। भिक्षुओ! वह क्यों? वह इस लिये कि ये प्राणी चार आर्यसत्यों का साक्षात्कार नहीं कर पाते। किन चार का? दुःख...दुःखनिरोधगामी प्रतिपदा आर्यसत्य का।

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये। ...पूर्ववत्..."॥

●

४८. द्वितीय छिग्गलसूत्र : : काणकच्छप का दृष्टान्त

५१. ..."जैसे, भिक्षुओ! यह पृथ्वी अत्यधिक जलप्लावन के कारण कभी एकाकार (जलमय) हो जाय। तब कोई पुरुष एक छिद्र वाला धुर वहाँ फेंक दे। उसको पूर्वी हवा

तत्रस्स काणो कच्छपो। सो वस्ससतस्स वस्ससतस्स अच्चयेन सकिं सकिं उम्मुज्जेय्य। [R.457] तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, अपि नु खो काणो कच्छपो वस्ससतस्स वस्ससतस्स अच्चयेन सकिं सकिं उम्मुज्जन्तो अमुस्मिं एकच्छिग्गळे युगे गीवं पवेसेय्या'' ति?

''अधिच्चमिदं, भन्ते, यं सो काणो कच्छपो वस्ससतस्स वस्ससतस्स अच्चयेन सकिं सकिं उम्मुज्जन्तो अमुस्मिं एकच्छिग्गळे युगे गीवं पवेसेय्या'' ति।

''एवं अधिच्चमिदं, भिक्खवे, यं मनुस्सत्तं लभति। एवं अधिच्चमिदं, भिक्खवे, यं तथागतो लोके उप्पज्जति अरहं सम्मासम्बुद्धो। एवं अधिच्चमिदं, भिक्खवे, यं तथागतप्पवेदितो धम्मविनयो लोके दिब्बति। तस्सिदं, भिक्खवे, मनुस्सत्तं लद्धं, तथागतो लोके उप्पन्नो अरहं सम्मासम्बुद्धो, तथागतप्पवेदितो च धम्मविनयो लोके दिब्बति।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ •

४९. पठमसिनेरुपब्बतराजसुत्तं

५२. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो सिनेरुस्स पब्बतराजस्स सत्त मुग्गमत्तियो

कभी पश्चिम की ओर बहा दे, कभी पश्चिम हवा पूर्व की ओर बहा दे। इसी तरह कभी दक्षिणी हवा उसे उत्तर की तरफ बहा दे, या उत्तर की हवा दक्षिण की ओर बहा दे। वहाँ एक काणा कछुआ रहता हो। वह सौ सौ वर्ष बाद जल से ऊपर अपना मुख निकालता हो। तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! वह काणा कछुआ उस धुर में अपनी ग्रीवा नहीं फँसा देगा?''

''हो सकता है, भन्ते! वह काणा कछुआं संयोग से...उस धुर में अपनी ग्रीवा फँसा बैठे!''

''यह संयोग ही है भिक्षुओ! कि जिस के कारण कभी कोई प्राणी मनुष्यत्व प्राप्त कर ले, या ये तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध इस लोक में उत्पन्न हो जाँय। इसी तरह कभी उन तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध द्वारा लोक में सद्धर्म का उपदेश होने लगे। भिक्षुओ! आज तुम ने मनुष्यत्व लाभ किया है, अतः तुम्हारा यह सौभाग्य है कि तुम लोग अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध द्वारा उपदिष्ट इस सद्धर्म का श्रवण कर इस पर आचरण कर सकते हो।

''अतः, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस आर्यसत्य पर मनन करना चाहिये। ...पूर्ववत्...''॥ •

४९. प्रथम सुमेरुपर्वतराजसूत्र : : सुमेरुपर्वत का दृष्टान्त

५२. ...''भिक्षुओ! जैसे कोई पुरुष सुमेरु पर्वतराज से सात पाषाणखण्ड (कंकड़)

पासाणसक्खरा उपनिक्खिपेय्य। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—या वा सत्त मुग्गमत्तियो पासाणसक्खरा उपनिक्खित्ता, यो वा सिनेरुपब्बतराजा'' ति?

''एतदेव, भन्ते, बहुतरं, यदिदं—सिनेरुपब्बतराजा; अप्पमत्तिका सत्त [N.391] मुग्गमत्तियो पासाणसक्खरा उपनिक्खित्ता। सङ्खं पि न उपेन्ति, उपनिधं पि न उपेन्ति, कलभागं पि न उपेन्ति सिनेरुपब्बतराजानं उपनिधाय सत्त मुग्गमत्तियो पासाणसक्खरा उपनिक्खित्ता'' ति। [B.399, R.458]

''एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स दिट्ठिसम्पन्नस्स पुग्गलस्स अभिसमेताविनो एतदेव बहुतरं दुक्खं यदिदं परिक्खीणं परियादिन्नं; अप्पमत्तकं अवसिट्ठं। सङ्खं पि न उपेति, उपनिधं पि न उपेति, कलभागं पि न उपेति पुरिमं दुक्खक्खन्धं परिक्खीणं परियादिन्नं उपनिधाय यदिदं सत्तक्खत्तुपरमता; यो 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ •

५०. दुतियसिनेरुपब्बतराजसुत्तं

५३. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, सिनेरुपब्बतराजायं परिक्खयं परियादानं गच्छेय्य, ठपेत्वा सत्त मुग्गमत्तियो पासाणसक्खरा। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो

पृथक् कर दे। तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! इन दोनों में कौन अधिक माना जाय—यह पर्वतराज सुमेरु या उस से पृथक् किये गये ये पाँच सात पाषाणखण्ड?''

''भन्ते! इन में यह पर्वतराज सुमेरु ही उन पाषाणखण्डों की अपेक्षा अधिक है। ये पाषाणखण्ड तो इस के सामने बहुत ही कम हैं; क्यों कि ये एक अंश में भी उस के समान नहीं हैं।''

''इसी तरह, भिक्षुओ! जिस धर्मज्ञ एवं दृष्टिसम्पन्न आर्यश्रावक पुद्गल के दुःख अधिक अंश में क्षीण हो चुके हैं, वे बहुत ही कम अवशिष्ट रह गये हैं। वे उस दुःखसमूह की किसी अंश में भी समानता नहीं कर सकते, जो आगामी सात जन्मों में उस को भोगने हैं। वह 'यह दुःख है'—यह यथार्थतः जानता है...'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—यह यथार्थतः जानता है।

''इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस का मनन करना चाहिये। ...पूर्ववत्...''॥ •

५०. द्वितीय सुमेरुपर्वतराजसूत्र : : सुमेरुपर्वत का द्वितीय दृष्टान्त

५३. ...''भिक्षुओ! जैसे पर्वतराज सुमेरु कभी पूर्णतः नष्ट हो जाय, केवल इस का

बहुतरं—यं वा सिनेरुस्स पब्बतराजस्स परिक्खीणं परियादिन्नं, या वा सत्त मुग्गमत्तियो पासाणसक्खरा अवसिट्ठा'' ति ?

''एतदेव, भन्ते, बहुतरं सिनेरुस्स पब्बतराजस्स यदिदं परिक्खीणं परियादिन्नं; अप्पमत्तिका सत्त मुग्गमत्तियो पासाणसक्खरा अवसिट्ठा। सङ्खं पि न उपेन्ति, उपनिधं पि न उपेन्ति, कलभागं पि न उपेन्ति सिनेरुस्स पब्बतराजस्स परिक्खीणं परियादिन्नं उपनिधाय सत्त मुग्गमत्तियो पासाणसक्खरा अवसिट्ठा'' ति।

[R.459] ''एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स दिट्ठिसम्पन्नस्स पुग्गलस्स अभिसमेताविनो एतदेव बहुतरं दुक्खं यदिदं परिक्खीणं परियादिन्नं; अप्पमत्तकं अवसिट्ठं। सङ्खं पि न उपेति, उपनिधं पि न उपेति, कलभागं पि न उपेति, पुरिमं दुक्खक्खन्धं परिक्खीणं परियादिन्नं उपनिधाय यदिदं सत्तक्खत्तुपरमता; यो 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ •

पपातवग्गो पञ्चमो॥

तस्सुद्दानं

[N.392] चिन्ता पपातो परिळाहो, कूटं वालन्धकारो च।
छिग्गळेन च द्वे वुत्ता, सिनेरु अपरे दुवे॥ ति॥ •

सात मूँग प्रमाण जितना अंश अवशिष्ट रह जाय। तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! यह समस्त सुमेरुपर्वत अधिक था या यह सात मूँग जितने प्रमाणवाला अधिक है ?''

''भन्ते! इन में यह पर्वतराज सुमेरु ही...पूर्ववत्...''।

''इसी तरह, भिक्षुओ! दृष्टिसम्पन्न एवं धर्मज्ञ आर्यश्रावक पुद्गल का वह दुःखसमूह बहुत अंश में क्षीण हो चुका है...पूर्ववत्...।

''अतः, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—ऐसा मनन करना चाहिये।...पूर्ववत्...''॥•

प्रपातवर्ग पञ्चम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. लोकचिन्तासूत्र, २. प्रपातसूत्र, ३. महा-परिदाहसूत्र, ४. कूटागारसूत्र, ५. बालपूत्र, ६. अन्धकारसूत्र, ७. प्रथम छिग्गलसूत्र, ८. द्वितीय छिग्गलसूत्र, ९. प्रथम सुमेरुपर्वतराजसूत्र एवं १०. द्वितीय सुमेरुपर्वतराजसूत्र॥

६. अभिसमयवग्गो छट्ठो

५१. नखसिखसुत्तं

५४. अथ खो भगवा परित्तं नखसिखायं पंसुं आरोपेत्वा भिक्खू [B.400] आमन्तेसि—"तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यो वायं मया परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो, अयं वा महापठवी" ति?

"एतदेव, भन्ते, बहुतरं यदिदं—महापठवी; अप्पमत्तकायं भगवता परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो। सङ्खं पि न उपेति, उपनिधं पि न उपेति, कलभागं पि न उपेति महापठविं उपनिधाय भगवता परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो" ति।

"एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स दिट्ठिसम्पन्नस्स पुग्गलस्स [R.460] अभिसमेताविनो एतदेव बहुतरं यदिदं परिक्खीणं परियादिन्नं; अप्पमत्तकं अवसिट्ठं। सङ्खं पि न उपेति, उपनिधं पि न उपेति, कलभागं पि न उपेति पुरिमं दुक्खक्खन्धं परिक्खीणं परियादिन्नं उपनिधाय यदिदं सत्तक्खत्तुपरमता; यो 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति ...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

५२. पोक्खरणीसुत्तं

५५. "सेय्यथापि, भिक्खवे, पोक्खरणी पञ्ञासयोजनानि आयामेन, पञ्ञास-

---

६. अभिसमयवर्ग षष्ठ

५१. नखशिखसूत्र : : धूल तथा पृथ्वी का दृष्टान्त

५४. ...तब भगवान् ने अपने अँगूठे के नख के अग्रभाग पर कुछ मिट्टी (धूल) लगा कर भिक्षुओं से पूछा—"भिक्षुओ! इन दोनों में कौन अधिक है—यह विस्तृत विशाल महापृथ्वी या मेरे नख के अग्रभाग पर लगा हुआ यह धूलिकण?"

"भन्ते! यह महापृथ्वी ही अधिक है; नख के अग्रभाग पर लगा हुआ धूलिकण तो उस की कहीं से भी समानता नहीं करता। इस विशाल पृथ्वी के सम्मुख इस धूलिकण की क्या गणना!"

"भिक्षुओ! इसी तरह उस धर्मज्ञ, दृष्टिसम्पन्न आर्यश्रावक के दुःख का वह भाग ही जो क्षीण हो चुका है, अधिक है; जो अवशिष्ट है वह तो बहुत अल्प है; जो 'यह दुःख है'—यह यथार्थतः जानता है, ...पूर्ववत्...।

"अतः, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—यह मनन करना चाहिये। ...पूर्ववत्..."॥•

सयोजनानि वित्थारेन, पञ्ञासयोजनानि उब्बेधेन, पुण्णा उदकस्स समतित्तिका काकपेय्या। ततो पुरिसो कुसग्गेन उदकं उद्धरेय्य। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यं वा कुसग्गेन उब्भतं, यं वा पोक्खरणिया उदकं'' ति ?

''एतदेव, भन्ते, बहुतरं यदिदं—पोक्खरणिया उदकं; अप्पमत्तकं कुसग्गेन उदकं उब्भतं। सङ्खं पि न उपेति, उपनिधं पि न उपेति, कलभागं पि न उपेति पोक्खरणिया उदकं उपनिधाय कुसग्गेन उदकं उब्भतं'' ति।

[N.393] ''एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स...पे०...योगो करणीयो'' ति॥ •

५३. पठमसम्भेज्जसुत्तं

[B.401] ५६. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, यत्थिमा महानदियो संसन्दन्ति समेन्ति, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही, ततो पुरिसो द्वे वा तीणि वा [R.461] उदकफुसितानि उद्धरेय्य। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यानि द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि उब्भतानि, यं वा सम्भेज्जउदकं'' ति ?

''एतदेव, भन्ते, बहुतरं, यदिदं—सम्भेज्जउदकं; अप्पमत्तकानि द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि उब्भतानि। सङ्खं पि न उपेन्ति, उपनिधं पि न उपेन्ति, कलभागं पि न उपेन्ति सम्भेज्जउदकं उपनिधाय द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि उब्भतानी'' ति।

''एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स...पे०...योगो करणीयो'' ति॥ •

---

५२. पुष्करणीसूत्र : : पुष्करणी का दृष्टान्त

५५. ...''भिक्षुओ! जैसे पचास योजन लम्बी, पचास योजन चौड़ी तथा पचास योजन गहरी कोई पुष्करणी हो, जो जल से पूर्णतः इतनी भरी हो कि जिस के किनारे बैठ कर कौआ भी सरलता से जल पी सके। तब कोई पुरुष आवे और कुश के अग्रभाग से उठा उठा कर उस का जल उस से बाहर फेंकने लगे : तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! वह पुष्करणी का जल अधिक होगा या उस कुशाग्र से उठा कर फेंका गया जल अधिक होगा। ...पूर्ववत्...। *(विस्तार कर लें।)*॥ •

५३. प्रथम सम्भेद्यसूत्र : : जलकण का दृष्टान्त

५६. ..''भिक्षुओ! जैसे महानदियाँ—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरयू एवं मही—ये जहाँ मिलती हैं, एकत्र होती हैं, वहाँ कोई पुरुष आवे और उस में से दश पाँच बिन्दु निकाल कर बाहर फेंक दे। तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! इन में कौन सा जल अधिक है ? ...पूर्ववत्...॥ •

(पहले सूत्रों की तरह ही विस्तार कर लें।)

५४. दुतियसम्भेज्जसुत्तं

५७. "सेय्यथापि, भिक्खवे, यत्थिमा महानदियो संसन्दन्ति समेन्ति, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही, तं उदकं परिक्खयं परियादानं गच्छेय्य, ठपेत्वा द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यं वा सम्भेज्जउदकं परिक्खीणं परियादिन्नं, यानि द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि अवसिट्ठानी" ति?

"एतदेव, भन्ते, बहुतरं सम्भेज्जउदकं यदिदं परिक्खीणं परियादिन्नं; अप्पमत्तकानि द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि अवसिट्ठानि। सङ्खं पि न उपेन्ति, उपनिधं पि न उपेन्ति, कलभागं पि न उपेन्ति सम्भेज्जउदकं परिक्खीणं परियादिन्नं उपनिधाय द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि अवसिट्ठानि" ति।

"एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स...पे०...योगो करणीयो" ति॥ •

५५. पठममहापठवीसुत्तं

५८. "सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो महापठविया सत्त कोल-[N.394, R.462] ट्ठिमत्तियो गुळिका उपनिक्खिपेय्य। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—या वा सत्त कोलट्ठिमत्तियो गुळिका उपनिक्खित्ता, अयं वा महापठवी" ति?

"एतदेव, भन्ते, बहुतरं, यदिदं—महापठवी; अप्पमत्तिका सत्त कोलट्ठिमत्तियो गुळिका उपनिक्खित्ता। सङ्खं पि न उपेन्ति, उपनिधं पि न उपेन्ति, कलभागं पि न उपेन्ति महापठविं उपनिधाय सत्त कोलट्ठिमत्तियो गुळिका उपनिक्खित्ता" ति।

"एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स...पे०...योगो करणीयो" ति॥ •

---

५४. द्वितीय सम्भेदयसूत्र : : जलकण का द्वितीय दृष्टान्त

५७. ..."जैसे, भिक्षुओ! ये उपर्युक्त पाँचों महानदियाँ जहाँ आ कर मिलती हैं, एकत्र होती हैं, वहाँ का समस्त जल क्षीण हो जाय, दो चार बिन्दुओं को छोड़ कर...पूर्ववत्...॥ •

५५. प्रथम महापृथ्वीसूत्र : : महापृथ्वी का दृष्टान्त

५८. ..."जैसे, भिक्षुओ! कोई पुरुष इस महापृथ्वी से वेर के फल के समान सात ढेले (मृत्तिकाखण्ड) ले कर फेंक दे, तो यहाँ क्या मानते हो, भिक्षुओ! यह पृथ्वी बड़ी है, या वेर के समान वे सात ढेले?"

"भन्ते! वह पृथ्वी ही बड़ी (अधिक) है, वे सात ढेले तो इस को कहीं से भी समानता नहीं करते...पूर्ववत्...।

५६. दुतियमहापठवीसुत्तं

[B.402] ५९. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, महापठवी परिक्खयं परियादानं गच्छेय्य ठपेत्वा सत्त कोलट्ठिमत्तियो गुळिका। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यं वा महापठविया परिक्खीणं परियादिन्नं, या वा सत्त कोलट्ठिमत्तियो गुळिका अवसिट्ठा'' ति ?

''एतदेव, भन्ते, बहुतरं महापठविया यदिदं परिक्खीणं परियादिन्नं; अप्पमत्तिका सत्त कोलट्ठिमत्तियो गुळिका अवसिट्ठा। सङ्खं पि न उपेन्ति, उपनिधं पि न उपेन्ति, कलभागं पि न उपेन्ति महापठविया परिक्खीणं परियादिन्नं उपनिधाय सत्त कोलट्ठिमत्तियो गुळिका अवसिट्ठा'' ति।

''एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स...पे०...योगो करणीयो'' ति॥ •

५७. पठममहासमुद्दसुत्तं

[R.463] ६०. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो महासमुद्दतो द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि उद्धरेय्य। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यानि द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि उब्भतानि, यं वा महासमुद्दे उदकं'' ति ?

[N.395] ''एतदेव, भन्ते, बहुतरं, यदिदं—महासमुद्दे उदकं; अप्पमत्तकानि द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि उब्भतानि। सङ्खं पि न उपेन्ति, उपनिधं पि न उपेन्ति, कलभागं पि न उपेन्ति महासमुद्दे उदकं उपनिधाय द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि उब्भतानी'' ति।

''एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स...पे०...योगो करणीयो'' ति॥ •

५८. दुतियमहासमुद्दसुत्तं

६१. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, महासमुद्दे उदकं परिक्खयं परियादानं गच्छेय्य ठपेत्वा द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यं वा महासमुद्दे उदकं परिक्खीणं परियादिन्नं, यानि द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि अवसिट्ठानी'' ति ?

''इसी तरह, भिक्षुओ ! आर्यश्रावक के...पूर्ववत्...मनन करना चाहिये। ...॥ •

५६. द्वितीय महापृथ्वीसूत्र : : महापृथ्वी का द्वितीय दृष्टान्त

५९. ...''भिक्षुओ ! जैसे इस महापृथ्वी से कोई वेर के समान सात गुटिका (गोली) के समान मट्टी हटा दे तो...पूर्ववत्...। *(विस्तार कर लें।)*॥ •

५७. प्रथम महासमुद्रसूत्र : : महासमुद्र का दृष्टान्त

६०. ...''भिक्षुओ ! जैसे कोई पुरुष महासमुद्र से जल की दो चार बूँदें निकाल कर फेंक दे तो...पूर्ववत्...''॥ •

"एतदेव, भन्ते, बहुतरं महासमुद्दे उदकं यदिदं परिक्खीणं परियादिन्नं; अप्पमत्तकानि द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि अवसिट्ठानि। सङ्खं पि न उपेन्ति, उपनिधं पि न उपेन्ति, कलभागं पि न उपेन्ति महासमुद्दे उदकं परिक्खीणं परियादिन्नं [B.403] उपनिधाय द्वे वा तीणि वा उदकफुसितानि अवसिट्ठानी" ति।

"एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स...पे०...योगो करणीयो" ति॥[R.464]

५९. पठमपब्बतूपमसुत्तं

६२. "सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसो हिमवतो पब्बतराजस्स सत्त सास-पमत्तियो पासाणसक्खरा उपनिक्खिपेय्य। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—या वा सत्त सासपमत्तियो पासाणसक्खरा उपनिक्खित्ता, अयं वा हिमवा पब्बतराजा" ति?

"एतदेव, भन्ते, बहुतरं, यदिदं—हिमवा पब्बतराजा; अप्पमत्तिका सत्त सासप-मत्तियो पासाणसक्खरा उपनिक्खित्ता। सङ्खं पि न उपेन्ति, उपनिधं पि न उपेन्ति, कलभागं पि न उपेन्ति हिमवन्तं पब्बतराजानं उपनिधाय सत्त सासपमत्तियो पासाण-सक्खरा उपनिक्खित्ता" ति।

"एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स...पे०...योगो करणीयो" ति॥ ●

६०. दुतियपब्बतूपमसुत्तं

६३. "सेय्यथापि, भिक्खवे, हिमवा पब्बतराजा परिक्खयं परियादानं [N.396] गच्छेय्य, ठपेत्वा सत्त सासपमत्तियो पासाणसक्खरा। तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यं वा हिमवतो पब्बतराजस्स परिक्खीणं परियादिन्नं, या वा सत्त सासपमत्तियो पासाणसक्खरा अवसिट्ठा" ति?

---

५८. द्वितीय महासमुद्रसूत्र : : महासमुद्र का द्वितीय दृष्टान्त

६१. ..."जैसे, भिक्षुओ! महासमुद्र का समस्त जल किसी कारण सूख जाय, केवल दो चार बूँदें अवशिष्ट रह जायँ, तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! ...पूर्ववत्..."॥ ●

५९. प्रथम पर्वतोपमसूत्र : : हिमालय का दृष्टान्त

६२. ..."जैसे, भिक्षुओ! कोई पुरुष हिमालयपर्वत की सरसों के परिमाण की सात टुकडियाँ (खण्ड) तोड़ कर उस से पृथक् कर ले, तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! ...पूर्ववत्..."॥ ●

(प्रथम सुमेरुसूत्र के समान विस्तार कर लें।)

६०. द्वितीय पर्वतोपमसूत्र : : हिमालय का द्वितीय दृष्टान्त

६२. ..."भिक्षुओ! जैसे पर्वतराज हिमालय, किसी कारण से पूर्णतः नष्ट हो जाय, केवल उस के सरसों जितने सात खण्ड अवशिष्ट रह जायँ, तो क्या मानते हो, भिक्षुओ!

"एतदेव, भन्ते, बहुतरं हिमवतो पब्बतराजस्स यदिदं परिक्खीणं परियादिन्नं; अप्पमत्तिका सत्त सासपमत्तियो पासाणसक्खरा अवसिट्ठा। सङ्खं पि न उपेन्ति, उपनिधं पि न उपेन्ति, कलभागं पि न उपेन्ति हिमवतो पब्बतराजस्स परिक्खीणं परियादिन्नं उपनिधाय सत्त सासपमत्तियो पासाणसक्खरा अवसिट्ठा" ति।

[R.465] "एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स दिट्ठिसम्पन्नस्स पुग्गलस्स अभिसमेताविनो एतदेव बहुतरं दुक्खं यदिदं परिक्खीणं परियादिन्नं; अप्पमत्तकं अवसिट्ठं। सङ्खं पि न उपेति, उपनिधं पि न उपेति, कलभागं पि न उपेति पुरिमं दुक्खक्खन्धं परिक्खीणं परियादिन्नं उपनिधाय यदिदं सत्तक्खत्तुपरमता; यो 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं पजानाति ...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं पजानाति।

[B.404] "तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥

अभिसमयवग्गो छट्ठो॥

तस्सुद्दानं

नखसिखा पोक्खरणी, सम्भेज्ज अपरे दुवे।
पठवी द्वे समुद्दा द्वे, द्वेमा च पब्बतूपमा ति॥

इन दोनों में कौन अधिक परिमाण वाला है—यह हिमालय या उस के वे छोटे छोटे सात शिलाखण्ड?"

"भन्ते! यह नष्ट हुआ समस्त हिमालय ही अधिक है, वे सात खण्ड तो इस विनष्ट समस्त हिमालय के सामने कुछ भी नहीं हैं। ...पूर्ववत्...।

"इसी तरह, भिक्षुओ! धर्मज्ञ एवं दृष्टिसम्पन्न आर्यश्रावक पुद्गल के वे दुःख अधिक हैं जो नष्ट हो चुके हैं; वे अल्प हैं जो नष्ट होने हैं; वह 'यह दुःख है'—यह यथार्थतः जान चुका है ...पूर्ववत्...।

"अतः, भिक्षुओ! तुम्हें—'यह दुःख है'—यह मनन करना चाहिये...पूर्ववत्..."॥

अभिसमयवर्ग षष्ठ सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. नखशिखासूत्र, २. पुष्करणीसूत्र, ३. प्रथम सम्भेद्यसूत्र, ४. द्वितीय सम्भेद्यसूत्र, ५. प्रथम महापृथ्वीसूत्र, ६. द्वितीय महापृथ्वीसूत्र, ७. प्रथम महासमुद्रसूत्र, ८. द्वितीय महासमुद्रसूत्र, ९. प्रथम पर्वतोपमसूत्र एवं १०. द्वितीय पर्वतोपमसूत्र॥

७. पठमआमकधञ्ञपेय्यालवग्गो सत्तमो

६१. अञ्ञत्रसुत्तं

६४. अथ खो भगवा परित्तं नखसिखायं पंसुं आरोपेत्वा भिक्खू आमन्तेसि—"तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यो वायं मया परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो, अयं वा महापठवी" ति? [R.466]

"एतदेव, भन्ते, बहुतरं यदिदं—महापठवी; अप्पमत्तकायं भगवता [N.397] परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो। सङ्खं पि न उपेति, उपनिधं पि न उपेति, कलभागं पि न उपेति महापठविं उपनिधाय भगवता परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो" ति।

"एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पमत्तका ते सत्ता ये मनुस्सेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये अञ्ञत्र मनुस्सेहि पच्चाजायन्ति। तं किस्स हेतु? अदिट्ठत्ता, भिक्खवे, चतुन्नं अरियसच्चानं। कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स अरियसच्चस्स...पे०... दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति॥ •

६२. पच्चन्तसुत्तं

६५. अथ खो भगवा परित्तं नखसिखायं पंसुं आरोपेत्वा भिक्खू आमन्तेसि—"तं

---

७. प्रथम आमकधान्यपेय्यालवर्ग सप्तम

६१. अन्यत्रसूत्र : : धूल एवं पृथ्वी का दृष्टान्त

६४. तब भगवान् अपने नख के अग्रभाग पर कुछ धूल लगा कर भिक्षुओं से यह प्रश्न कर बैठे—"तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! इन में कौन अधिक है—यह नखशिखा पर लगी हुई धूल या विशाल महापृथ्वी?"

"भन्ते! यह महापृथ्वी ही अधिक है, तथा आप ने जो अपने नख के अग्रभाग पर जो धूल लगा रखी है वह इस विशाल पृथ्वी की अपेक्षा कुछ भी नहीं है। ..."

"इसी तरह, भिक्षुओ! वे प्राणी कम ही हैं जो मनुष्ययोनि में उत्पन्न होते हैं। वे ही प्राणी अधिक हैं जो मनुष्ययोनि से अतिरिक्त अन्य योनियों में उत्पन्न होते हैं। वह क्यों? वह इस लिये कि इन प्राणियों ने चार आर्यसत्यों का ज्ञान प्राप्त नहीं किया है। किन चार आर्यसत्यों का? दुःख आर्यसत्य...दुःखनिरोधगामी मार्ग आर्यसत्य का।

"अतः, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस आर्यसत्य का मनन करना चाहिये। ...पूर्ववत्..."॥ •

[B.405] किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यो वायं मया परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो, अयं वा महापठवी'' ति ?

''एतदेव, भन्ते, बहुतरं यदिदं—महापठवी; अप्पमत्तकायं भगवता परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो। सङ्खं पि न उपेति, उपनिधं पि न उपेति, कलभागं पि न उपेति महापठविं उपनिधाय भगवता परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो'' ति।

एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पमत्तका ते सत्ता ये मज्झिमेसु जनपदेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये पच्चन्तिमेसु जनपदेसु पच्चाजायन्ति अविञ्ञातारेसु मिलक्खेसु...पे०... ॥ •

६३. पञ्ञासुत्तं

[R.467] ६६. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये पन अरियेन पञ्ञाचक्खुना समन्नागता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये अविज्जागता सम्मुळ्हा...पे०... ॥ •

६४. सुरामेरयसुत्तं

[N.398] ६७. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये सुरामेरयमज्जप्पमादट्ठाना पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये सुरामेरयमज्जप्पमादट्ठाना अप्पटिविरता... ॥ •

६५. ओदकसुत्तं

६८. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये थलजा; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये उदकजा। तं किस्स हेतु...पे०... ॥ •

---

६२. प्रत्यन्तसूत्र : : सीमान्त जनपद का दृष्टान्त

६५. तब भगवान् ने अपने नख के अग्रभाग में...पूर्वसूत्रवत्...।

''भिक्षुओ ! इसी तरह वे ही अल्पसङ्ख्यक हैं जो मध्यम जनपदों में उत्पन्न होते हैं, तथा वे ही बहुसङ्ख्यक हैं जो प्रत्यन्त जनपदों के म्लेच्छ पुरुषों में उत्पन्न होते हैं...पूर्ववत्...'' ॥

६३. प्रज्ञासूत्र : : आर्य प्रज्ञा

६६. ...पूर्ववत्...इसी तरह, भिक्षुओ ! वे प्राणी भी बहुत कम हैं जो प्रज्ञा से युक्त हैं; तथा वे ही प्राणी अधिक हैं जो अविद्या के कारण संसार के प्रति मुग्ध हैं...पूर्ववत्... ॥•

६४. सुरामैरेयसूत्र : : मद्य से विरति

६७. ...पूर्ववत्...इसी तरह, भिक्षुओ ! वे प्राणी भी बहुत कम हैं जो मद्यपान से विरत हैं। वे ही अधिक हैं जो मद्यपान में कुछ भी अनुचित नहीं समझते। ...पूर्ववत्... ॥•

६५. औदकसूत्र : : स्थल एवं जल के प्राणी

६८. ...पूर्ववत्...वैसे ही, भिक्षुओ ! वे प्राणी कम हैं जो स्थल पर उत्पन्न होते हैं, वे ही प्राणी अधिक हैं जो जल में पैदा होते (औदक) हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

६६. मत्तेय्यसुत्तं

६९. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये मत्तेय्या; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये अमत्तेय्या... ॥ ●

६७. पेत्तेय्यसुत्तं

७०. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये पेत्तेय्या; अथ खो [B.406] एतेव बहुतरा सत्ता ये अपेत्तेय्या... ॥ ●

६८. सामञ्ञसुत्तं

७१. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये सामञ्ञा; अथ खो [R.468] एतेव बहुतरा सत्ता ये असामञ्ञा... ॥ ●

६९. ब्रह्मञ्ञसुत्तं

७२. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये ब्रह्मञ्ञा; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये अब्रह्मञ्ञा... ॥ ●

७०. पचायिकसुत्तं

७३. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये कुले जेट्ठापचायिनो; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये कुले अजेट्ठापचायिनो... ॥ ●

पठमआमकधञ्ञपेय्यालवग्गो सत्तमो ॥

---

६६. मातृसेवकसूत्र : : माता की सेवा करने वाले

६९. ...पूर्ववत्...ऐसे ही प्राणी बहुत हैं जो माता की सेवा करने वाले नहीं हैं; ऐसे प्राणी कम ही हैं जो माता की सेवा करने वाले हैं। ...पूर्ववत्... ॥ ●

६७. पितृसेवकसूत्र : : पिता की सेवा करने वाले

७०. ...इसी तरह, भिक्षुओ! यहाँ ऐसे ही प्राणी बहुत हैं जो पिता की सेवा करने वाले नहीं हैं; ऐसे प्राणी तो कम हैं जो पिता की सेवा करने वाले हैं। ...पूर्ववत्... ॥ ●

६८. श्रामण्यसूत्र : : श्रमण धर्म के पालनकर्ता

७१. ...''भिक्षुओ! ऐसे ही प्राणी कम हैं जो श्रमण धर्म का विधिवत् पालन करते हैं। हाँ, ऐसे प्राणी बहुत मिलेंगे जो श्रमण धर्म का पालन नहीं करते। ...पूर्ववत्... ॥ ●

६९. ब्राह्मण्यसूत्र : : ब्राह्मण धर्म के पालनकर्ता

७२. ...इसी तरह, भिक्षुओ! ब्राह्मण धर्म का पालन करने वाले पुद्गल बहुत कम हैं। ऐसे प्राणी बहुत हैं जो ब्राह्मण धर्म का पालन नहीं करते। ...पूर्ववत्... ॥ ●

तस्सुद्दानं

[N.399] अञ्ञत्र पच्चन्तं पञ्ञा, सुरामेरयओदका।
मत्तेय्य पेत्तेय्या चा पि, सामञ्ञं ब्रह्मपचायिकं ति॥ •

---

७०. अपचायिकसूत्र : : कुल में ज्येष्ठों का सम्मान करने वाले

७३. ...ऐसे बहुत कम हैं जो कुल में अपने से ज्येष्ठों का सम्मान करते हों। हाँ, ऐसे बहुत मिलेंगे जो कुल में ज्येष्ठों का सम्मान न करते हों। ...पूर्ववत्... ॥ •

प्रथम आमकधान्यपेय्यालवर्ग सप्तम सम्पन्न ॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. अन्यत्रसूत्र, २. प्रत्यन्तसूत्र, ३. प्रज्ञासूत्र, ४. सुरामैरेयसूत्र, ५. औदकसूत्र, ६. मातृसेविसूत्र, ७. पितृसेविसूत्र, ८. श्रामण्यसूत्र, ९. ब्राह्मण्यसूत्र एवं १०. अपचायिकसूत्र ॥ •

८. दुतियआमकधञ्ञपेय्यालवग्गो अट्ठमो

७१. पाणातिपातसुत्तं

७४. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये पाणातिपाता पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये पाणातिपाता अप्पटिविरता...पे०... ॥ •

७२. अदिन्नादानसुत्तं

७५. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये अदिन्नादाना [B.407, R.469] पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये अदिन्नादाना अप्पटिविरता... ॥ •

७३. कामेसुमिच्छाचारसुत्तं

७६. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये कामेसुमिच्छाचारा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये कामेसुमिच्छाचारा अप्पटिविरता... ॥ •

७४. मुसावादसुत्तं

७७. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये मुसावादा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये मुसावादा अप्पटिविरता... ॥ •

७५. पेसुञ्ञसुत्तं

७८. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये पिसुणाय वाचाय पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये पिसुणाय वाचाय अप्पटिविरता... ॥ •

---

८. द्वितीय आमकधान्यपेय्यालवर्ग अष्टम

७१. प्राणातिपातसूत्र : : हिंसा

७४. ...ऐसे प्राणी कम ही हैं जो प्राणातिपात से विरत रहते हैं; हाँ, ऐसे प्राणी बहुत मिलेंगे जो दिनरात जीवहिंसा में व्यापृत रहते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

७२. अदत्तादानसूत्र : : चौरी

७५. ...ऐसे लोग कम हैं जो चौरी नहीं करते। ऐसे प्राणी बहुत हैं जो दिनरात चौरी करते रहते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

७३. कामेषुमिथ्याचारसूत्र : : व्यभिचार

७६. ...''भिक्षुओ! ऐसे बहुत कम प्राणी हैं जो व्यभिचार से दूर रहते हैं, हाँ, ऐसे बहुत हैं जो व्यभिचार में रत रहते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

७४. मृषावादसूत्र : : असत्यभाषण

७७. ...''भिक्षुओ! वे प्राणी अल्प हैं जो सत्यवक्ता हैं। ऐसे ही अधिक हैं जो सत्य नहीं बोलते। ...पूर्ववत्... ॥ •

७६. फरुसवाचासुत्तं

[N.400] ७९. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये फरुसाय वाचाय पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये फरुसाय वाचाय अप्पटिविरता... ॥ •

७७. सम्फप्पलापसुत्तं

८०. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये सम्फप्पलापा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये सम्फप्पलापा अप्पटिविरता... ॥ •

७८. बीजगामसुत्तं

[B.408, R.470] ८१. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये बीजगामभूतगाम-समारम्भा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये बीजगामभूतगामसमारम्भा अप्पटिविरता... ॥ •

७९. विकालभोजनसुत्तं

८२. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये विकालभोजना पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये विकालभोजना अप्पटिविरता... ॥ •

८०. गन्धविलेपनसुत्तं

८३. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये मालागन्धविलेपनधारण-

---

७५. पैशुन्यसूत्र : : चुगलखोरी

७८. ...''भिक्षुओ! जो सुलह कराने वाले हैं, वे यहाँ अल्प हैं; हाँ, चुगलखोर बहुत मिलेंगे। ...पूर्ववत्... ॥ •

७६. परुषवाक्सूत्र : : कठोर वाणी

७९. ...''भिक्षुओ! यहाँ कोमल वाणी बोलने वाले बहुत कम हैं। कठोर वाणी बोलने वाले ही अधिक हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

७७. सम्प्रलापसूत्र : : प्रलाप

८०. ...''भिक्षुओ! प्रलापी (बकवादी) यहाँ बहुत मिलेंगे, परन्तु संयत बोलने वाले कम ही हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

७८. बीजग्रामसूत्र : : बीजसमूह का नाश

८१. ...बीज, वनस्पति आदि के नाशक यहाँ बहुत मिलेंगे, परन्तु इस कार्य से विरत रहने वाले कम ही हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

७९. विकालभोजनसूत्र : : असमय का भोजन

८२. ...असमय में भोजन करने वाले यहाँ बहुत हैं, परन्तु इस से विरत रहने वाले अल्प ही हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

मण्डनविभूसनट्ठाना पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये मालागन्धविलेपन-धारणमण्डनविभूसनट्ठाना अप्पटिविरता...पे०... ॥

दुतियआमकधञ्ञपेय्यालवग्गो अट्ठमो ॥

तस्सुद्दानं

पाणं अदिन्नं कामेसु, मुसावादं च पेसुञ्ञं।
फरुसं सम्फप्पलापं, बीजं च विकालं गन्धं ति ॥

---

८०. गन्धविलेपनसूत्र : : गन्ध आदि का लेपन

८३. ...यहाँ माला-गन्ध-विलेपन के व्यवहर्ता बहुत हैं, परन्तु इन से विरत रहने वालों की संख्या अल्प है। ...पूर्ववत्... ॥

द्वितीय आमकधान्यपेय्यालवर्ग अष्टम सम्पन्न ॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. प्राणातिपातसूत्र, २. अदत्तादानसूत्र, ३. कामेषुमिथ्याचारसूत्र, ४. मृषावादसूत्र, ५. पैशुन्यसूत्र, ६. परुषवाक्सूत्र, ७. सम्प्रलापसूत्र, ८. बीजग्रामसूत्र, ९. विकालभोजनसूत्र एवं १०. गन्धविलेपनसूत्र ॥

९. ततियआमकधञ्ञपेय्यालवग्गो नवमो

८१. नच्चगीतसुत्तं

[N.401] ८४. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये नच्चगीतवादितविसूक-[R.471] दस्सना पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये नच्चगीतवादितविसूकदस्सना अप्पटिविरता...पे०... ॥ ●

८२. उच्चासयनसुत्तं

[B.409] ८५. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये उच्चासयनमहासयना पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये उच्चासयनमहासयना अप्पटिविरता... ॥ ●

८३. जातरूपरजतसुत्तं

८६. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये जातरूपरजतपटिग्गहणा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये जातरूपरजतपटिग्गहणा अप्पटिविरता... ॥ ●

८४. आमकधञ्ञसुत्तं

८७. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये आमकधञ्ञपटिग्गहणा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये आमकधञ्ञपटिग्गहणा अप्पटिविरता... ॥ ●

८५. आमकमंससुत्तं

८८. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये आमकमंसपटिग्गहणा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये आमकमंसपटिग्गहणा अप्पटिविरता... ॥ ●

---

९. तृतीय आमकधान्यपेय्यालवर्ग नवम

८१. नृत्यगीतसूत्र : : नृत्य, गीत आदि से विरति

८४. ...इसी तरह, भिक्षुओ! वे प्राणी बहुत अल्प हैं जो नृत्य गीत, वाद्य से दूर रहते हैं, ऐसे लोग यहाँ बहुत मिलेंगे जो नृत्य गीत वाद्य आदि में ही निरन्तर लगे रहते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ ●

८२. उच्चासनसूत्र : : उच्च शयनासन से विरति

८५. ...ऐसे लोग कम ही हैं जो ऊँची शय्याओं पर नहीं सोते; परन्तु ऐसे बहुत अधिक हैं जो इन शय्या आदि का आसक्तिपूर्वक उपयोग करते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ ●

८३. जातरूपरजतसूत्र : : सोना चाँदी का न लेना

८६. ...जो सोना चाँदी का ग्रहण न करते हों ऐसे बहुत कम हैं। इन का ग्रहण करने वाले ही अधिक हैं। ...पूर्ववत्... ॥ ●

८४. आमकधान्यसूत्र : : कच्चा धान्य

८७. ...कच्चा धान ग्रहण करने से दूर रहने वाले अल्प ही हैं...पूर्ववत्... ॥ ●

८६. कुमारिकसुत्तं

८९. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये इत्थिकुमारिकपटिग्गहणा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये इत्थिकुमारिकपटिग्गहणा अप्पटिविरता... ॥●

८७. दासिदाससुत्तं

९०. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये दासिदासपटिग्गहणा [N.402,] पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये दासिदासपटिग्गहणा अप्पटिविरता... ॥[R.472]

८८. अजेळकसुत्तं

९१. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये अजेळकपटिग्गहणा [B.410] पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये अजेळकपटिग्गहणा अप्पटिविरता... ॥ ●

८९. कुक्कुटसूकरसुत्तं

९२. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये कुक्कुटसूकरपटिग्गहणा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये कुक्कुटसूकरपटिग्गहणा अप्पटिविरता... ॥●

९०. हत्थिगवस्ससुत्तं

९३. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये हत्थिगवस्सवळवपटिग्गहणा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये हत्थिगवस्सवळवपटिग्गहणा अप्पटिविरता... ॥

●

ततियआमकधञ्ञपेय्यालवग्गो नवमो ॥

---

८५. आमकमांससूत्र : : कच्चा मांस

८८. ...कच्चा मांस ग्रहण करने से दूर रहने वाले अल्प ही हैं...पूर्ववत्... ॥ ●

८६. कुमारिकासूत्र : : कुमारियाँ

८९. ...कुमारिकाओं के ग्रहण से दूर रहने वाले अल्प ही हैं...पूर्ववत्... ॥ ●

८७. दासिदाससूत्र : : दासी, दास

९०. ...दास, दासी आदि का ग्रहण करने से दूर रहने वाले अल्प ही हैं...पूर्ववत्... ॥●

८८. अजैड़कसूत्र : : बकरी, भेड़

९१. ...भेड़, बकरी आदि का ग्रहण करने से दूर रहने वाले अल्प ही हैं...पूर्ववत्... ॥●

८९. कुक्कुटशूकरसूत्र : : मुर्गा एवं सूअर

९२. ...मुर्गा, सूअर आदि का ग्रहण करने से दूर रहने वाले अल्प ही हैं...पूर्ववत्... ॥●

९०. हस्तिगवश्वसूत्र : : हाथी, बैल, घोड़े

९३. ...हाथी, बैल, घोड़े आदि के ग्रहण से दूर रहने वाले अल्प ही हैं...पूर्ववत्... ॥●

तृतीय आमकधान्यपेय्यालवर्ग नवम सम्पन्न ॥

तस्सुद्दानं

नच्चं सयनं रजतं, धञ्ञं मंसं कुमारिका।
दासी अजेळकं चेव, कुक्कुटसूकरहत्थी॥ ति॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. नृत्यगीतसूत्र, २. उच्चासनसूत्र, ३. जातरूपरजतसूत्र, ४. आमकधान्यसूत्र, ५. आमकमांससूत्र, ६. कुमारिकसूत्र, ७. दासि-दाससूत्र, ८. अजेडकसूत्र, ९. कुक्कुटशूकरसूत्र एवं १०. हस्तिगवश्वसूत्र॥

१०. चतुत्थआमकधञ्ञपेय्यालवग्गो दसमो

९१. खेत्तवत्थुसुत्तं

९४. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये खेत्तवत्थुपटिग्गहणा [R.473] पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये खेत्तवत्थुपटिग्गहणा अप्पटिविरता... ॥ •

९२. कयविक्कयसुत्तं

९५. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये कयविक्कया [N.403, B.411] पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये कयविक्कया अप्पटिविरता... ॥ •

९३. दूतेय्यसुत्तं

९६. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये दूतेय्यपहिनगमनानुयोगा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये दूतेय्यपहिनगमनानुयोगा अप्पटिविरता... ॥•

९४. तुलाकूटसुत्तं

९७. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये तुलाकूटकंसकूटमानकूटा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये तुलाकूटकंसकूटमानकूटा अप्पटिविरता... ॥•

---

१०. चतुर्थ आमकधान्यपेय्यालवर्ग दशम

९१. क्षेत्रवस्तुसूत्र : : क्षेत्र आदि

९४. ...इसी तरह, भिक्षुओ! वे प्राणी कम ही हैं जो क्षेत्र आदि का ग्रहण नहीं करते ...पूर्ववत्... ॥ •

९२. क्रयविक्रयसूत्र : : क्रयविक्रय

९५. ...भिक्षुओ! ऐसे लोग अल्प हैं जो वस्तुओं के क्रयविक्रय से विरत रहते हैं, अपि तु ऐसे ही लोग अधिक हैं जो दिनरात वस्तुओं के क्रयविक्रय में लगे रहते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

९३. दौत्यसूत्र : : दूत-कर्म

९६. ...इसी तरह, भिक्षुओ! ऐसे ही लोग अधिक हैं जो दूसरों की बातें इधर से उधर सूचित करने में लगे रहते हैं; ऐसे लोग अल्प ही हैं जो इस कर्म से विरत रहते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

९४. तुलाकूटसूत्र : : माप में वञ्चना

९७. ...भिक्षुओ! यहाँ ऐसे ही व्यापारी अधिक हैं जो व्यापार में दूसरों को ठगने के लिये तराजू के सहारे से ठगी करते रहते हैं; ऐसे कम ही हैं जो इस कर्म से दूर रहते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

९५. उक्कोटनसुत्तं

९८. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये उक्कोटनवञ्चननिकतिसाचियोगा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये उक्कोटनवञ्चननिकतिसाचियोगा अप्पटिविरता... ॥ •

९६-१०६. छेदनादिसुत्तं

[R.474] ९९-१०९. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये छेदनवधबन्धनविपरामोसआलोपसहसाकारा पटिविरता; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये छेदनवधबन्धनविपरामोसआलोपसहसाकारा अप्पटिविरता। तं किस्स हेतु? अदिट्ठत्ता, भिक्खवे, चतुन्नं अरियसच्चानं। कतमेसं चतुन्नं? दुक्खस्स अरियसच्चस्स...पे०... दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स।

''तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो...पे०...'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो'' ति॥ •

चतुत्थआमकधञ्ञपेय्यालवग्गो दसमो॥

तस्सुद्दानं

[N.404, B.412] खेत्तं कयं दूतेय्यं च, तूलाकूटं उक्कोटनं।
छेदनं वधबन्धनं, विपरालोपं साहसं॥ ति॥ •

---

९५. उत्कोटनसूत्र : : ठगी, धोखा, विश्वासघात

९८. ...भिक्षुओ! यहाँ ऐसे धूर्त लोग ही अधिक हैं जो दूसरों को किसी न किसी व्याज से ठगते या धोखा देते हैं; अपि तु इन की अपेक्षा ऐसे लोग अत्यल्प हैं जो ईमानदारी से कार्य करते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

९६-१०६. छेदनादिसूत्र : : काटना, मारना आदि

९९-१०९. ...इसी तरह, भिक्षुओ! वे लोग यहाँ अल्प ही हैं जो दूसरों को काटने, मारने, बाँधने, चौरी, डकैती, छीना-झपटी आदि दुष्कर्मो से दूर रहते हैं; अपि तु ऐसे ही लोग अधिक हैं जो इन दुष्कर्मों में निरन्तर व्यापृत रहते हैं। वह किस लिये? चार आर्यसत्यों का साक्षात् ज्ञान न होने के कारण। किन चार का? दुःख...दुःखनिरोधगामी मार्ग का।

''इसी तरह, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—इस का मनन-चिन्तन करना चाहिये। ...पूर्ववत्... ॥ •

चतुर्थ आमकधान्यपेय्यालवर्ग दशम सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची—१. क्षेत्रवस्तुसूत्र, २. क्रयविक्रयसूत्र, ३. दौत्यसूत्र, ४. तुलाकूटसूत्र, ५. उत्कोटनसूत्र, ६-१६. छेदनादिसूत्र॥ •

११. पञ्चगतिपेय्यालवग्गो एकादसमो

१०७. मनुस्सचुतिनिरयसुत्तं

११०. अथ खो भगवा परित्तं नखसिखायं पंसुं आरोपेत्वा भिक्खू आमन्तेसि— ''तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो बहुतरं—यो वायं मया परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो, अयं वा महापठवी'' ति?

''एतदेव, भन्ते, बहुतरं, यदिदं—महापठवी; अप्पमत्तकायं भगवता परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो। सङ्खं पि न उपेति, उपनिधं पि न उपेति, कलभागं पि न उपेति महापठविं उपनिधाय भगवता परित्तो नखसिखायं पंसु आरोपितो'' ति।

एवमेव खो, भिक्खुवे, अप्पका ते सत्ता ये मनुस्सा चुता मनुस्सेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये मनुस्सा चुता निरये पच्चाजायन्ति... ॥ •

१०८. मनुस्सचुतितिरच्छानसुत्तं

१११. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये मनुस्सा चुता मनुस्सेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये मनुस्सा चुता तिरच्छानयोनिया पच्चाजायन्ति... ॥ •

---

११. पञ्चगतिपेय्यालवर्ग एकादशम

१०७. मनुष्यच्युतिनिरयसूत्र : : नरकपात

११०. ...तब भगवान् नख के अग्रभाग में कुछ धूल लगा कर भिक्षुओं से पूछने लगे—''तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! इन में कौन सा अधिक है—यह मेरी नखशिखा पर लगी थोड़ी सी धूल या यह विशाल पृथ्वी?''

''भिक्षुओ! यहाँ यह विशाल पृथ्वी ही अधिक है, यह धूल तो...पूर्ववत्...।''

''इसी तरह, भिक्षुओ! वे प्राणी अल्प ही हैं जो मनुष्ययोनि से च्युत हो कर पुन: मनुष्ययोनि में ही उत्पन्न होते हैं। यहाँ तो ऐसे ही लोगों की सङ्ख्या अधिक है जो मनुष्ययोनि से च्युत हो कर (अपने दुष्कर्मों के कारण) नरक में जा गिरते हैं। ...पूर्ववत्... ॥•

१०८. मनुष्यच्युतितिरश्चीनयोनिसूत्र : : पशुयोनि

१११. ...इसी तरह, भिक्षुओ! ऐसे लोग बहुत कम हैं जो मनुष्ययोनि से च्युत हो कर पुन: मनुष्ययोनि में ही उत्पन्न होते हैं; अपि तु, ऐसे ही लोग अधिक हैं जो मनुष्ययोनि से च्युत हो कर (अपने पापों के कारण) पशु आदि की योनियों में उत्पन्न होते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

१०९. मनुस्सचुतिपेत्तिविसयसुत्तं

[R.475] ११२. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये मनुस्सा चुता मनुस्सेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये मनुस्सा चुता पेत्तिविसये पच्चाजायन्ति... ॥

११०-११२. मनुस्सचुतिदेवनिरयादिसुत्तं

[B.413, N.405] ११३-११५. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये मनुस्सा चुता देवेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये मनुस्सा चुता निरये पच्चाजायन्ति ...पे०...तिरच्छानयोनिया पच्चाजायन्ति...पे०...पेत्तिविसये पच्चाजायन्ति... ॥ ●

११३-११६. देवचुतिनिरयादिसुत्तं

११६-११९. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये देवा चुता देवेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये देवा चुता निरये पच्चाजायन्ति ...पे०...तिरच्छानयोनिया पच्चाजायन्ति...पे०...पेत्तिविसये पच्चाजायन्ति... ॥ ●

११७-११९. देवमनुस्सनिरयादिसुत्तं

१२०-१२१. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये देवा चुता मनुस्सेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये देवा चुता निरये पच्चाजायन्ति ...पे०...तिरच्छानयोनिया पच्चाजायन्ति...पे०...पेत्तिविसये पच्चाजायन्ति... ॥ ●

---

१०९. मनुष्यच्युतिप्रेतविषयसूत्र : : प्रेतयोनि

११२. ...इसी तरह, भिक्षुओ! वे मनुष्य भी अल्प ही हैं जो मनुष्ययोनि से च्युत हो कर पुनः मनुष्ययोनि में ही उत्पन्न होते हैं; अपि तु वे ही अधिक हैं जो मानव देहपात के बाद प्रेत बन जाते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ ●

११०-११२. मनुष्यच्युतिदेवनिरयादिसूत्रः : देवयोनि, नरकपात आदि

११३-११५. ...इसी तरह, भिक्षुओ! वे प्राणी कम ही हैं जो मनुष्ययोनि से च्युत हो कर देवताओं में उत्पन्न होते हैं; अपि तु वही अधिक हैं जो मनुष्यदेह से च्युत हो कर नरक में जा गिरते हैं, तिरश्चीनयोनि में जा गिरते हैं या प्रेतभाव (प्रेत शरीर) धारण कर लेते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ ●

११३-११६. देवच्युतिनिरयादिसूत्र : : देवयोनि से च्युति, नरकपात

११६-११९. ...इसी तरह, भिक्षुओ! वे ही प्राणी अधिक हैं जो देवशरीर त्यागने के बाद नरक में या प्रेत या पशुयोनि में उत्पन्न होते हैं; ऐसे तो कम ही मिलेंगे जो देव-देहपात के बाद देवताओं में ही उत्पन्न होते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ ●

११७-११९. देवमनुष्यनिरयादिसूत्र : : मनुष्ययोनि, नरकपात, पशु-प्रेतयोनि

१२०-१२१. ...इसी तरह, भिक्षुओ! वे प्राणी कम ही हैं जो देव-देहपात के बाद

१२०-१२२. निरयमनुस्सनिरयादिसुत्तं

१२२-१२५. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये निरया चुता मनुस्सेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये निरया चुता निरये पच्चाजायन्ति ...पे०...तिरच्छानयोनिया पच्चाजायन्ति...पे०...पेत्तिविसये पच्चाजायन्ति... ॥ •

१२३-१२५. निरयदेवनिरयादिसुत्तं

१२६-१२८. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये निरया चुता [R.476] देवेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये निरया चुता निरये पच्चाजायन्ति ...पे०...तिरच्छानयोनिया पच्चाजायन्ति...पे०...पेत्तिविसये पच्चाजायन्ति... ॥ •

१२६-१२८. तिरच्छानमनुस्सनिरयादिसुत्तं

१२९-१३१. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये [N.406, B.414] तिरच्छानयोनिया चुता मनुस्सेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये तिरच्छानयोनिया चुता निरये पच्चाजायन्ति...पे०...तिरच्छानयोनिया पच्चाजायन्ति ...पे०...पेत्तिविसये पच्चाजायन्ति... ॥ •

१२९-१३१. तिरच्छानदेवनिरयादिसुत्तं

१३२-१३४. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये तिरच्छानयोनिया चुता

मनुष्यदेह ग्रहण करते हैं; ऐसे प्राणी ही बहुत हैं जो देव-देहपात के बाद नरक में जा गिरते हैं, पशुयोनि में, या फिर वे प्रेत बन जाते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

१२०-१२२. निरयमनुष्यनिरयादिसूत्र : : देवयोनि, नरकपात, पशु एवं प्रेतयोनि

१२२-१२५. ...भिक्षुओ! ऐसे कम ही लोग हैं जो नरक से च्युत हो कर देवताओं में उत्पन्न होते हैं; ऐसे लोग ही अधिक हैं जो नरक से निकल कर पुनः नरक में ही...पशुयोनि में ...प्रेतयोनि में उत्पन्न होते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

१२३-१२५. निरयदेवनिरयादिसूत्र : : देव, नरक, पशु, प्रेतयोनि

१२६-१२८. ...भिक्षुओ! ऐसे ही लोग कम हैं जो नरक से निकल कर देवशरीर में जाते हों, परन्तु ऐसे बहुत हैं जो नरक से निकल कर पुनः नरक में ही जा गिरते हैं...पूर्ववत्...पशुयोनि में...या फिर प्रेतयोनि में चले जाते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

१२६-१२८. तिरश्चीनमनुष्यनिरयादिसूत्र : :मनुष्य, पशुयोनि, नरकपात, प्रेतयोनि

१२९-१३१. ..."भिक्षुओ! ऐसे ही लोग अल्प हैं जो पशुयोनि से च्युत हो कर मनुष्यशरीर में आते हों, हाँ, ऐसे लोग, भिक्षुओ! बहुत मिलेंगे जो पशुयोनि से च्युत हो कर नरक में या पशुयोनि में या प्रेतयोनि में जा गिरते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ •

देवेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये तिरच्छानयोनिया चुता निरये पच्चाजायन्ति...पे०...तिरच्छानयोनिया पच्चाजायन्ति...पे०...पेत्तिविसये पच्चाजायन्ति... ॥ ●

१३२-१३४. पेत्तिमनुस्सनिरयादिसुत्तं

१३५-१३७. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये पेत्तिविसया चुता मनुस्सेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये पेत्तिविसया चुता निरये पच्चाजायन्ति...पे०... तिरच्छानयोनिया पच्चाजायन्ति...पे०...पेत्तिविसये पच्चाजायन्ति... ॥●

१३५-१३६. पेत्तिदेवनिरयादिसुत्तं

[R.477] १३८-१३९. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये पेत्तिविसया चुता देवेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये पेत्तिविसया चुता निरये पच्चाजायन्ति ...पे०...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये पेत्तिविसया चुता देवेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये पेत्तिविसया चुता तिरच्छानयोनिया पच्चाजायन्ति... ॥●

१३७. पेत्तिदेवपेत्तिविसयसुत्तं

१४०. ...एवमेव खो, भिक्खवे, अप्पका ते सत्ता ये पेत्तिविसया चुता देवेसु पच्चाजायन्ति; अथ खो एतेव बहुतरा सत्ता ये पेत्तिविसया चुता पेत्तिविसये पच्चाजायन्ति। तं किस्स हेतु? अदिट्ठत्ता भिक्खवे, चतुन्नं अरियसच्चानं। कतमेसं चतुन्नं?

१२९-१३१. तिरश्चीनदेवनिरयादिसूत्र : : नरक, पशुयोनि, प्रेतयोनि

१३२-१३४. ...इसी तरह, भिक्षुओ! वे ही लोग कम हैं जो पशुयोनि से निकल कर देवताओं में जा मिलते हैं, परन्तु ऐसे बहुत मिलेंगे जो पशुयोनि से च्युत हो कर नरक में ही जा गिरते हैं, पशुयोनि में या प्रेतयोनि में जा गिरते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ ●

१३२-१३४. प्रेतमनुष्यनिरयादिसूत्र : : नरक, पशुयोनि, प्रेतयोनि

१३५-१३७. ...इसी तरह, भिक्षुओ! वे ही प्राणी कम हैं जो प्रेतयोनि से च्युत हो कर देवयोनि में चले जाते हों; हाँ, ऐसे लोग बहुत हैं जो प्रेतयोनि से च्युत हो कर नरक में...पशुयोनि में या प्रेतयोनि में चले जाते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ ●

१३५-१३६. प्रेतदेवनिरयादिसूत्र : : नरक, पशुयोनि

१३८-१३९. ...इसी तरह, भिक्षुओ! वे पुरुष अल्प ही हैं जो प्रेतयोनि से च्युत हो कर देवताओं में उत्पन्न होते हैं; वैसे लोग बहुत मिलेंगे जो प्रेतयोनि से निकल कर नरक में जा गिरते हैं...पशुयोनि में उत्पन्न होते हैं। ...पूर्ववत्... ॥ ●

१३७. प्रेतदेवप्रेतविषयसूत्र : :

१४०. ...इसी तरह, भिक्षुओ! ऐसे प्राणी बहुत कम हैं जो प्रेतयोनि से च्युत हो कर देवताओं में उत्पन्न होते हैं। हाँ, ऐसे बहुत मिलेंगे जो प्रेतयोनि से च्युत हो कर पुनः

दुक्खस्स अरियसच्चस्स, दुक्खसमुदयस्स अरियसच्चस्स, दुक्खनिरोधस्स अरियसच्चस्स, दुक्खनिरोधगामिनिया पटिपदाय अरियसच्चस्स।

"तस्मातिह, भिक्खवे, 'इदं दुक्खं' ति योगो करणीयो, 'अयं [N.407, B.415] दुक्खसमुदयो' ति योगो करणीयो, 'अयं दुक्खनिरोधो' ति योगो करणीयो, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति योगो करणीयो" ति।

१४१. इदमवोच भगवा। अत्तमना ते भिक्खू भगवतो भासितं अभिनन्दुं ति॥●

पञ्चगतिपेय्यालवग्गो एकादसमो॥

तस्सुद्दानं

मनुस्सतो चुता छा पि, देवा चुता निरयतो।
तिरच्छानपेत्तिविसया, तिंसमत्तो गतिवग्गो ति॥

सच्चसंयुत्तं समत्तं॥

महावग्गो पञ्चमो॥

तस्सुद्दानं

मग्गबोज्झङ्गं सतिया, इन्द्रियं सम्मप्पधानं। [R.478]
बलिद्धिपादानुरुद्धा, झानानापानसंयुतं।
सोतापत्ति सच्चं चा ति, महावग्गो ति वुच्चती ति॥ ●

॥ संयुत्तनिकायपालि निट्ठिता॥

प्रेतयोनि में ही जा गिरते हैं। यह किस कारण? उन्हें चार आर्यसत्यों का यथार्थ ज्ञान न होने के कारण। कौन से चार? दुःख आर्यसत्य...दुःखनिरोधगामी मार्ग आर्यसत्य का।...

"इस लिये, भिक्षुओ! तुम्हें 'यह दुःख है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये। ...'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—ऐसा चिन्तन करना चाहिये।"

१४१. भगवान् ने यह उपदेश किया। सन्तुष्ट हो कर उन भिक्षुओं ने भगवान् के भाषण का अभिनन्दन किया॥ ●

पञ्चगतिपेय्यालवर्ग एकादश सम्पन्न॥

इस वर्ग में व्याख्यात तीस सूत्रों की सूची—छह सूत्रों में मनुष्यलोक से च्युत, छह सूत्रों में देवलोक से च्युत, छह सूत्रों में निरय से च्युत, छह सूत्रों में पशुयोनि से च्युत एवं छह सूत्रों में प्रेतयोनि से च्युत—इस प्रकार ६×५=३० तीस प्राणियों का वर्णन है॥ ●

महावर्ग पञ्चम सम्पन्न॥

इस (महावर्ग) में व्याख्यात संयुक्तों की सूची—१. मार्गसंयुक्त, २. बोध्यङ्गसंयुक्त, ३. स्मृतिप्रस्थानसंयुक्त, ४. इन्द्रियसंयुक्त, ५. सम्यक्प्रधानसंयुक्त, ६. बलसंयुक्त, ७. ऋद्धिपादसंयुक्त, ८. अनुरुद्धसंयुक्त, ९. ध्यानसंयुक्त, १०. आनापानसंयुक्त, ११. स्रोत-आपत्तिसंयुक्त, १२. सत्यसंयुक्त ॥

॥ संयुक्तनिकायपालि सम्पन्न ॥

दसबलसेलप्पभवा, निब्बाणमहासमुद्दपरियन्ता।
अट्ठङ्गमग्गसलिला, जिनवचननदी चिरं वहतु॥

['बुद्ध' रूप महान् पर्वत से निःसृत, 'निर्वाण' रूप महासमुद्र तक जाने वाली, 'अष्टाङ्गिक मार्ग' रूप जल से पूर्ण यह 'बुद्धवाणी' रूप गङ्गा सदा बहती रहे।]